बृहन्निघण्टुरत्नाकर
भाषाटीका पंचमभाग
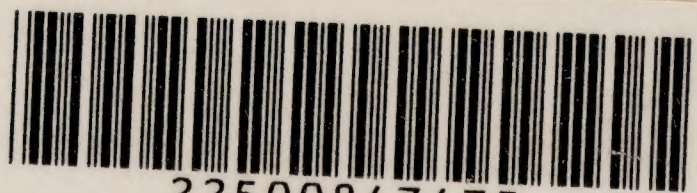
॥ श्रीः ॥

बृहन्निघंटुरत्नाकरः ।

हिंदीभाषानुवादसमेतः

पाठकज्ञातीयमाथुरश्रीकृष्णलालतनयदत्तरामेण

संकलितः स्वकृतभाषाटीकाविभूषितः ।

लक्ष्मीवेंकटेश्वरमुद्रणालयस्थशास्त्रिभिः संस्कृतः खंडित

ग्रंथ-भाषापूरणयोजनादिपूर्वकं संशोधितश्च ।

तस्यायम्

पञ्चमो भागः

स च

श्रीकृष्णदासात्मज-गंगाविष्णुना

स्वकीये "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

शकाब्दाः १८१९, संवत् १९५४.

कल्याण-मुंबई.

BṚHANNIGHANṬURATNĀKARA

part 5

सूचना.
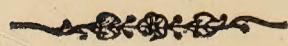
मैं अपने प्रियबांधव बृहन्निघंटुरत्नाकर ग्राहकोंके प्रति प्रार्थना करता हूं कि, आप लोग कृपाकर मेरे अपराधको क्षमा करेंगे. कारण कि, यह बृहन्निघंटुरत्नाकरका पंचम भाग बहुत जलदी छापकर आप लोगोंके प्रति समर्पण करना चाहता था. पर अनेक विघ्नवश होनेके कारण वह मेरी आशा शीघ्र नहीं पूर्ण होसकी इसीसे आपको आजतक वंचित करना पडा. अब यह पंचम भाग भगवानकी कृपासे शुद्धता और स्वछताके साथ छापकर तैयार किया गया है यह भाग पहिले चार भागोंसे बहुतही बृहत् हो गया है अर्थात् प्रथम तथा द्वितीय भागमें साठ २ फारिम हैं और तृतीय भागमें ७० फारिम हैं. एवं चतुर्थ भागमें ७३ फारिम हैं. इस पंचम भागमें तो१०९ फार्म है. यह बहुतही बडा होनेके कारण इसमें बहुत विषयोंका संग्रह हुआ है जिन विषयोंकी सूचीके फार्म ६ हो गये हैं. सब मिलके ११५ फार्म हो गये हैं. इसमें अजीर्ण रोगसे उदररोग तक सर्व रोग कर्मविपाक, ज्योतिःशास्त्राभिप्राय, निदान, चिकित्सा, प्रत्येक रोगपर क्वाथ, कल्क, आसव, अरिष्ट, चूर्ण, मात्रा, रसायन आदि छोटी बडी सर्वप्रकारकी दवासहित वर्णित हैं. बहुत लिखना आपलोगोंके आगे व्यर्थ है. अब तो यह पुस्तक आपके हस्तगत है जो कुछ भला बुराहै वह प्रत्यक्ष है। इसके आगेका छहवा भागभी छापना आरंभ हो गया है।

आपका अनुग्रहाकांक्षी

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास

लक्ष्मीवेंकटेश्वर छापाखाना,

कल्याण-मुंबई.

श्रीः ।

अथ बृहन्निघण्टुरत्नाकरपंचमभागविषयानुक्रमणिका ।

विषय.	पृष्ठ.

विषय.	पृष्ठ.
कामलाकर्मविपाकः	

क्षयकर्मविपाकः.

उरःक्षतक्षयनिदानम्.

कासकर्मविपाकः.

छर्दिरोगकर्मविपाकः

तृष्णाकर्मविपाकः.

मूर्च्छाभ्रमनिद्रासंन्यासनिदानम्.

विषय. पृष्ठ.

विषय. पृष्ठ.

पानात्ययपरमदपानाजीर्णपानविभ्रमनिदानम्.

विषय.	पृष्ठ.

इत्यनुक्रमणिका समाप्ता.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास
लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर छापाखाना
कल्याण—मुंबई.

अजीर्ण

मन्दाग्निहर

**मन्दोदराग्निर्भवति सति द्रव्येण वै यजेत् ।
प्राजापत्यत्रयं कृत्वा भोजयेत्स शतं द्विजान् ॥**

अर्थ–जो पुरुष धनवान होकर (बलि वैश्वदेवादि) यज्ञ नहीं करे उस के मंदाग्नि का रोग होता है । इस पाप के कारण इस का प्रायश्चित्त यह है कि वह तीन प्राजापत्य व्रत करे और सौ ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥

पाराशर

गोमांसभक्षको मन्दजठराग्निर्भवेन्नरः । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं तथैव च ॥ अग्निमन्त्रं जपेन्नित्यं श्रीसूक्तं च विचक्षणम् ॥

अर्थ–पाराशर संहिता में लिखा है कि जो प्राणी पूर्व जन्म में गोमांस भक्षण करता है उस के इस जन्म में मंदाग्नि का रोग होता है. इस पाप के दूर करने को कृच्छ्रातिकृच्छ्र प्राजापत्य व्रत करे और "अग्निरश्मि" इस मंत्र का तथा श्रीसूक्त का जप करे तो यह रोग नष्ट होवे ॥

कर्मविपाकसंग्रह

अकारणं गरं दत्त्वा प्रमारयति यः पुनः । स मन्दाग्निर्भवेदेव मृतकल्पश्च जायते ॥ याते रुद्रेण सूक्तेन चरुं च जुहुयाद्घृतम् । अष्टोत्तरयुतं सम्यक् तत्पापस्यापनुत्तये ॥ तामग्निवर्णामिति च जपेत्सूक्तं सहस्रकम् । भोजयेद्ब्राह्मणान् सम्यक् चत्वारिंशात्सुखी भवेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्म में विना कारण दूसरे को विष (जहर) देकर मार डालता है वो इस जन्म में मंदाग्निवाला होता है । उस का जीना मुर्दे के समान है । उस को इस का प्रायश्चित्त यह करना चाहिये कि "याते रुद्र" इस सूक्त से चरु और घृत का एक सौ आठ वार हवन करे तथा "तामग्निवर्णा" इस सूक्त का एक हजार जप करे । तथा ४० ब्राह्मणों को भोजन करावे तो इस प्राणी का मंदाग्नि रोग दूर होवे ॥

जठराग्निनिदान

मन्दस्तीक्ष्णोतिविषमः समश्चेति चतुर्विधः ।
कफपित्तानिलाधिक्यात्तत्साम्याज्जाठरोऽनलः ॥

अर्थ—मनुष्य के कफ की प्रकृति से **मंदाग्नि**, पित्त की प्रकृति से **तीक्ष्णाग्नि**, वात की प्रकृति से **विषमाग्नि**, तथा वात, पित्त, कफ इन के समान होने से **समाग्नि** होती है। ऐसे अग्नि चार प्रकार की है—इस में मन्दाग्नि को दुर्जय होने से प्रथम कही और (जाठर) शब्द कहने से धातु की अग्नि का त्याग जानना ॥

विषूच्यादिनिदान

अजीर्णमामं विष्टब्धं विदग्धं च यदीरितम् ।
विषूच्यलसकौ तस्माद्भवेच्चापि विलम्बिका ॥

अर्थ—आम, विष्टब्ध और विदग्ध ये जो अजीर्ण कहे हैं उन से विषूचिका (हैजा), अलस और विलंबिका पैदा होय हैं । इन में चौथे रस शेष अजीर्ण को विषूच्यादि उत्पादक नहीं लिखा है इस का कारण यह है कि उस रसाजीर्ण को अपरिणाममात्रत्व करके विषूचिका आदि के आरंभत्व स्वभावादिको के कहने से आम, विदग्ध और विष्टब्ध इन से क्रमपूर्वक विषूचिका, अलस, विलंबिका ये प्रगट होती हैं ऐसे कार्तिक-कुंड आचारी कहता है सो असत्य है क्योंकि विदग्धाजीर्ण को विलंबिका का प्रगट करना असम्भव है क्योंकि उस विलंबिका को आगे कफवात से प्रगट होना कहेंगे और विदग्धभाव को पित्तजन्यता है यासे ये मत मन्तव्य नहीं है । इसी कारण तीनों अजीर्ण मिलकर विषूचिका आदि को प्रगट करते हैं यह बकुल आचारी का मत है ॥

चतुर्विध अग्नि के कार्य

विषमो वातजान्रोगांस्तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान् ।
करोत्यग्निस्तथा मन्दो विकारान्कफसंभवान् ॥

अर्थ—विषमाग्नि वातजन्य८०रोगों में से किसी रोगको प्रगट करे और सामान्य ज्वरातिसारादिक को प्रगट करे। तीक्ष्णाग्नि पित्त के ४० रोगों में सें किसी रोगको प्रगट करे । उसी प्रकार मन्दाग्नि कफजन्य२०रोगों में से किसी रोग को पैदा करे और आलस्यादिक को उत्पन्न करे ॥

प्रकारांतर

समासमाग्नेराशिता मात्रा सम्यग्विपच्यते । स्वल्पापि नैव

मन्दाग्नेर्विषमाग्नेस्तु देहिनः ॥ कदाचित्पच्यते सम्यक्कदाचिन्न विपच्यते । मात्रातिमात्राप्यशिता सुखं यस्यविपच्यते ॥ तीक्ष्णाग्निरिति तं विद्यात्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ।

अर्थ–समाग्निवाले पुरुष के यथोचित आहार भले प्रकार पाचन होता है और मन्दाग्निवाले पुरुष के थोडा भी आहार यथार्थ नहीं पचता और विषमाग्निवाले मनुष्य के कभी अच्छी तरह से अन्न पचे और कभी नहीं पचे और बहुत भोजन करा भी जिस के सुखपूर्वक पच जावे उस को तीक्ष्ण अग्नि कहते हैं। इन चारों प्रकार की अग्नि में समाग्नि उत्तम है। तीक्ष्णाग्नि के कहने से भस्मक का ग्रहण नहीं करना चाहिये क्यौंकि अत्यंत तीक्ष्णाग्नि को भस्मक कहते हैं उस के लक्षण चरक में कहे हैं ॥

हिंग्वाष्टकचूर्ण

त्रिकटुकमजमोदा सैन्धवं जीरके द्वे समचरणधृतानामष्टमो हिङ्गुभागः। प्रथमकवलभुक्तं सर्पिषा चूर्णमेतज्जनयति जठराग्निं वातगुल्मं निहन्ति ॥

अर्थ–सोंठ, काली मिरच, छोटी पीपल, अजमोद[1] (अजमायन) सैंधानिमक, सफेद जीरा, काला जीरा और हींग ये सब औषध समान भाग लेवे । इस चूर्ण को भोजन के समय दालभात या खिचडी में डाल घी मिलाय के पहले इस का ग्रास (गस्सा) लेवे फिर यथेच्छ भोजन करे तो जठराग्नि प्रबल हो और वायगोला आदि अनेक रोग दूर हो । इस में हींग को घी में भून के डालनी चाहिये ॥

जीरकादिचूर्ण

जरणरुचकशुण्ठीपिप्पलीतीक्ष्णवेल्लं सलवणमजमोदाहिङ्गुपथ्येतिकर्षम् । पृथगथ पलमात्रा स्यात्रिवृच्चूर्णमेषां जननमुदरवह्नेः पाचनं रोचनं च ॥

अर्थ–जीरा, संचरनिमक, सोंठ, पीपल, काली मिरच, वायविडंग, सैंधानमक, अजमोद, हींग और हरड ये प्रत्येक औषधी एक २ तोले लेवे; तथा निसोथ ४ तोले लेवे । इन सब को कूटपीस चूर्ण करे । इस का सेवन करे तो जठराग्नि को दीपन करे, पाचक और रुचि को उत्पन्न करता है ॥

---

१ सर्वत्र भक्षण करने के चूर्ण आदि में जहां २ अजमोद लिखा है उस जगह अजमायन लेना चाहिये क्यौंकि अजमायन अंतःसंमार्जक है अजमोद नहीं है ।

विडंगादिचूर्ण

विडङ्गभल्लातकचित्रकाभयाः सनागरास्तुल्यगुडेन सर्पिषा ।
निहन्ति ते मन्दहुताशनान्नरान् भवन्ति ते वाडवतुल्यवह्नयः ॥

अर्थ-वायविडंग, भिलावा, चीते की छाल, हरड़ और सोंठ इन का चूर्ण और इस चूर्ण में गुड और घी मिलायके खाय तो मंदाग्नि का नाश होकर वाडवाग्नि के समान प्रचंड अग्नि होवे ॥

वडवानलचूर्ण

सैंधवं पिप्पलीमूलं पिप्पली चव्यचित्रकम् । शुण्ठी हरीतकी चेति क्रमवृद्धानि चूर्णयेत् ॥ वडवानलनामैतच्चूर्णं स्यादग्निदीपनम् ।

अर्थ-सैंधानिमक १ भाग, पीपरामूल २ भाग, पीपल छोटी ३ भाग, चव्य ४ भाग, चीते की छाल ५ भाग, सोंठ ६ भाग तथा जंगी हरड ७ भाग, लेवे सब का चूर्ण करे इस को (वडवानलचूर्ण) कहते हैं । इस चूर्ण के सेवन करने से अग्नि प्रदीप्त होती है ॥

वह्निनामक रस

जातीजातं त्रिकर्षं मरिचमपि पलं चार्धकर्षप्रमाणं ।
गन्धं सूतं लवङ्गं विषमिदमखिलं चिञ्चिणीसस्यतोये ॥
पिष्ट्वा माषैकमात्रं वितरति दहनं वह्निमान्द्ये च सद्यो ।
रोगाञ्छूलानिलादीन् दहति कृतगुणो वह्निनामा रसोयम् ॥

अर्थ-जावित्री डेढ तोला, जायफळ डेढ तोला, काली मिरच ४ तोला, गंधक, पारा, लौंग और वच्छनागविष प्रत्येक आधा २ तोला लेवे सब को बारीक पीस के पकी इमली के रस में खरल करे, फिर इस की उडद के समान गोली बनावे अनुपान के साथ सायंकाल और प्रातःकाल एक एक देवे तो अग्नि प्रदीप्त होवे तथा घोर शूल और वादी इत्यादि रोगों को नष्ट करे इस रस को (वह्निरस) कहते हैं ॥

कर्मविपाक

अन्नहर्त्ता त्वजीर्णाग्नो भवेदस्य तु निष्कृतिः । उपवासत्रयं कुर्यात्प्राजापत्यमथापि वा ॥ जुहुयाच्चरुसर्पिभ्र्यामग्निर-श्मीत्यृचामथ । अष्टोत्तरसहस्रं हि जुहुयाच्च जपेत्तथा ॥

अर्थ-जो प्राणी अन्न की चोरी करता है उस के अजीर्ण रोग होता है। इस पाप के दूर करने को वह तीन उपवास (व्रत) करे, तथा तीन प्राजापत्य व्रत करे तथा " अग्निरश्मि " इस मंत्र करके भात और घी की अष्टोत्तरसहस्र आहुती देवे तथा उसी मंत्र का नित्य जप किया करे तो मंदाग्नि रोग दूर होवे इस में संदेह नहीं है ॥

दूसरा प्रकार

परान्नविघ्नकरणादजीर्णमपि जायते ।
लक्षहोमं प्रकुर्वीत प्रायश्चित्तं विधीयते ॥

अर्थ-जो प्राणी दूसरे के अन्न में (पक्वान्न वा कच्चे अन्न में) विघ्न करता है उस के अजीर्ण रोग होता है । उस को प्रायश्चित्तपूर्वक एक लक्ष होम करना चाहिये । इस प्रकार करने से अजीर्ण रोग की शांति होती है ॥

भस्मकनिदान

नरे क्षीणकफे पित्तं कुपितं मारुतानुगम् । सोष्मणा पाचकस्थाने बलमग्नेः प्रयच्छति ॥ तदलब्धबलो देहं रूक्षयेत्सानिलोऽनलः । अभिभूय पचत्यन्नं तैक्ष्ण्यादाशु मुहुर्मुहुः ॥ पक्वान्नं सततो धातूञ्छोणितादीन्पचत्यपि । ततो दौर्बल्यमातङ्कं मृत्युं चोपानयेत्परम् ॥ भुक्तेऽन्ने लभते शान्तिं जीर्णमात्रे प्रताम्यति । तृट्कासदाहमोहाः स्युर्व्याधयोऽत्यग्निसंभवाः ॥

अर्थ-क्षीण कफवाले पुरुष के पित्त कुपित हो वायु से मिलकर उष्मा के साथ पाचकस्थान में जायकर अग्नि को बल देवे, तब जठराग्नि वात की सहायता पायकर प्रबल होकर देह को रूखा कर देवें और उस के जोर से वारंवार अन्न को पचावे । अन्न को पचाय पीछे रुधिर आदि धातुओं को पचावे, रुधिर आदि के पचने से देह में दुर्बलता का रोग और मृत्यु को मनुष्य प्राप्त होवे । जब अन्न को खाय तब तौ शांति हो जाय जब अन्न पचजाय तब मूर्च्छित होय-प्यास, खांसी, दाह, मोह (अर्थात् कुछ सुध न रहे) ये रोग अत्यंतअग्नि से होते हैं ॥

भस्मकलक्षण

कफे क्षीणे यदा पित्तं स्वस्थाने मारुतानुगम् । तीव्रं प्रवर्धयेद्वह्निं तदा तं भस्मकं वदेत् ॥ तृड्दाहश्वासमूर्छादीन्कृत्वैवात्य-

ग्निसंभवान् । पक्वान्नमाशु धात्वादीन्संक्षिप्तं नाशयेत्तनुम् ॥
क्षणाद्भुक्तं भवेद्भस्म स रोगो भस्मकः स्मृतः ।

अर्थ-इस प्राणीका कफ क्षीण होवे तब पित्त वातके साथ अपने स्थानमें प्राप्त हो जठराग्निको अत्यंत बढावे उसको भस्मकरोग कहते हैं । यह तृषा, दाह, श्वास, मूर्च्छा, आदि अति अग्निके रोगोंको करे है । यह अन्नको पचाय कै फिर रसरक्तादि धातुओंको पचाय देहको नष्ट करे । इस रोगमें भोजन कराहुआ पदार्थ क्षणमात्रमें पच जाता है इसीसे इसको भस्मकरोग कहा है ।

चिकित्साक्रम

तं भस्मकं गुरुस्निग्धसान्द्रमण्डहिमस्थिरैः ।
अन्नपानैर्नयेच्छान्तिं पित्तघ्नैश्च विरेचनैः ॥

अर्थ-भस्मक रोगवाले को भारी और चिकने ऐसे अन्न तथा कठोर पदार्थ, मंड, हिम, तथा बहुत देर में पचनेवाले अन्न और पान तथा पित्तनाशकारी यत्न इन से दूर करे तथा पित्तनाशक जुलाब देवे ॥

भस्मकचिकित्सा

कफे पूर्वं जिते पित्तं मारुते चानलः समः ।
समधातोः पचत्यन्नं पुष्ट्यायुर्बलवर्धनः ॥

अर्थ-कफ पित्त और वायुको प्रथम जीतनेपर समानधातु मनुष्य की अग्नि को समान कर देती हैं इसीसैं अन्न उत्तम प्रकारसैं पचाकर आयुष्य पुष्टी और बल को बढाने वाली होती है ॥

अजीर्ण का निदान

अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाच्च संधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ।
कालेपि सात्म्यं लघुचापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥
ईर्ष्याभयक्रोधपरिक्षितेन लुब्धेन शुग्दैन्यनिपीडितेन ।
प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक्परिपाकमेति ॥

अर्थ-बहुत जल पीने से, भोजन के समय को छोड़ पीछे भोजन करने सें, मल-मूत्र आदि वेगों के रोकने से, दिन में सोमने से, रात में जागने से-इन कारणों से भोजन के समय यदि लघु और हितकारी पदार्थ खाय तो भी अन्न अच्छीरीति से नहीं पचे ये देह के कारण कहे। अब अजीर्ण के कारण जो मन से सम्बंध रखते हैं उन को कहते हैं

ईर्ष्या कहिये परद्रव्य को न देख सकना, डरना, क्रोध करना इन कारणों से तथा लोभ शोक दीनता इन कारणों से और मत्सरता करना इन कारणों से मनुष्य के भोजन करा हुआ अन्न भले प्रकार पचता नहीं है ॥

आमाजीर्णलक्षण

तत्रामे गुरुतोत्क्लेदः शोथो गण्डाक्षिकूटगः ।
उद्गारश्च यथाभुक्तमविदग्धं प्रवर्तते ॥

अर्थ–उन चारों अजीर्णों में प्रथम आमाजीर्ण के लक्षण कहते हैं, पेट और अंग भारी होंय, वमन का होना ऐसा प्रतीत हो, कपोल और नेत्रों में सूजन होवे और इसी अजीर्ण के प्रभाव से जैसा मीठा आदि भोजन करा होय उसी प्रकार की ड़कार आवे है॥

वचादिवमन

वचालवणतोयेन वान्तिरामे प्रशस्यते । धान्यनागरसिद्धं वा तोयं दद्याद्विचक्षणः ॥ आमाजीर्णप्रशमनं शूलघ्नं बस्तिशोधनम् ।

अर्थ–आमाजीर्ण पर वच और सेंधानिमक इन के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे । यह वमन कराने में उत्तम है । फिर धनिया, और सोंठ इन का काढा देवे तो आमाजीर्ण का नाश होय तथा बस्ति का शोधन होवें ॥

लवंगादि क्वाथ

लवङ्गपथ्ययोः क्काथः सैन्धवेनावधूलितः ।
पीतः प्रशमयत्युग्रमजीर्णं रेचयत्यपि ॥

अर्थ–लौंग और हरड़ इन का काढा सेंधानिमक डालके देवे तो आमाजीर्ण का नाश करे तथा दस्त कराता है ॥

वैश्वानरक्षार

स्नुह्यर्कचित्रकैरण्डलवणं सपुनर्नवम् । तिलापामार्गकदलीपला शंतिन्तिणी तथा ॥ गृहीत्वा ज्वालयेदेतत्प्रस्थं भस्माखिलं च तत् । जलाढके विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् ॥ स प्रसन्नं विनिःश्राव्य लवणप्रस्थसंयुतम् । पक्कं निर्धूमकठिनं सूक्ष्मं चूर्णं कृतं पुनः ॥ यवानीजीरकव्योषस्थूलजीरकहिङ्गुभिः । पृथगर्धपलैरेभिश्चूर्णितैस्ताद्विमिश्रयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसेनापि

भावयेच्छोषयेत्पुनः । शीतोदकेन तच्चूर्णं पिबेत्प्रातर्हि मात्रया ॥ तस्मिन् जीर्णेऽन्नमश्नीयाद्यूषैर्जाङ्गलजै रसैः । ईषदम्लैः सलवणैः सुखोष्णैर्वह्निदीपनैः ॥ एतेनाग्निश्च वर्धेत बलमारोग्यमेव च । तत्रानुपानं शस्तं हि तक्रं वा भोजने हितम् ॥ मन्दाग्न्यर्शोविकारेषु वातश्लेष्मामयेषु च । सर्वाङ्गशोथरोगेषु शूलगुल्मोदरेषु च ॥ आमार्शःशर्करायां तु विण्मूत्रानिलरोगिषु ।

अर्थ–थूहर, आक, चीते की छाल, अरंड, निमक, पुनर्नवा (सांठ), तिल, औंगा, केला, पलास (ढाक) और इमली की छाल इन सब की भस्म करके २५६ तोले लेवे । इस को १०२४ तोले जल में डालके औटावे. जब चतुर्थांश काढा रहे तब उस को उतारके छान लेवे । इस में ६४ तोले निमक मिलाके और फिर औंटावे. तो निर्धूम और कठोर ऐसा क्षार बनके तयार होवे । उस को लेकर बारीक चूर्ण करे उसमें अजमायन, जीरा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, मगरेला और हींग ये प्रत्येक दो तोले मिलायके अदरख के रस की भावना देकर सुखाय ले । इस में से प्रातःकाल में बलाबल विचार शीतल जल के साथ देवे । फिर जब औषध पचजावे तब जंगली जीवों का मांसरस और यूष कुछ २ खट्टे और नमक मिलायके मंदोष्ण तथा अग्नि के प्रदीप्त करनेवाले ऐसे पदार्थ देवे तो अग्नि, बल, आरोग्य इन की वृद्धि करे । इस औषध पर पश्चात् छाछ पीवे अथवा भोजन के समय देवे । मंदाग्नि, बबासीर, वादी, कफ, सर्वांग की सूजन, शूल, गोला, उदररोग, आम, अर्श, शर्करा और मल तथा मूत्र संबंधी एवं वादी के रोग इन को दूर करे । यह वैश्वानर नामक क्षार परम चमत्कारी है ॥

सामुद्रादि चूर्ण

सामुद्रसौवर्चलसैन्धवानां क्षारो यवानां च तथाजमोदा । हरीतकीपिप्पलिशृङ्गवेरं हिङ्गुर्विडङ्गं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि भुञ्जीत ग्रासान्प्रथमं च पञ्च । अजीर्णवातं गुदगुल्मवातं वातप्रमेहं विषमं च वातम् ॥ विषूचिकाकामलपाण्डुरोगं श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥

अर्थ–समुद्रनमक, संचरनोन, सैंधानोन, जवाखार, अजमायन, हरड, पीपलछोटी, सोंठ घाड़ की, हींग और वायविडंग ये समान भाग लेवे । सब का चूर्ण करके घी में सान लेवे । इस को भोजन के समय पाहले पांच ग्रास (पांच गस्सों) में

मिलायके खाय तो अजीर्ण, वादी, गुदा की वादी, वायगोला, वातप्रमेह, विषमवात, विषूचिका, कामला, पांडुरोग, श्वास और खांसी इन का नाश करे ॥

हरीतक्यादि योग

हरीतकी तथा शुण्ठी भक्ष्यमाणा गुडेन वा ।
सैन्धवेन युता वा स्यात्सातत्येनाग्निदीपनी ॥

अर्थ–हरड अथवा सोंठ को गुड में मिलायके अथवा सैंधेनमक के साथ नित्य नेम से भक्षण करे तो अग्नि को दीपन करे ॥

गुडादि चतुष्क आमाजीर्णादि के ऊपर

गुडेन शुण्ठीमथवोपकुल्यां पथ्यां तृतीयामथ दाडिमं वा ।
आमेष्वजीर्णेषु गुदामयेषु वर्चोविबन्धेषु च नित्यमद्यात् ॥

अर्थ–गुड के साथ सोंठ अथवा पीपल अथवा हरड अथवा अनारदाना खाय यह आमाजीर्ण, बबासीर, मल की रुकावट इन पर परमोत्तम प्रयोग है ॥

आहारं पचति शिखी दोषानाहारवर्जितः पचति ।
दोषक्षये च धातून्धातुक्षैण्ये तथा प्राणान् ॥

अर्थ–जठराग्नि प्रथम आहार को पचाता है, जब आहार पचाने को नहीं रहे तब वातादि दोषों को पचावे, जब दोष भी पच जाते हैं तब वही अग्नि धातुओं का पाचन करे, जब धातु भी पच जाते हैं तब इस प्राणी के प्राणों का नाश करे है ।

मुहुर्मुहुरजीर्णेपि भोज्यान्यस्योपहारयेत् ।
निरिन्धनोन्तरं लब्ध्वा यथैनं न विपादयेत् ॥

अर्थ–वारंवार अजीर्ण होने पर भी वैद्य को उचित है कि इस प्राणी को थोडा बहुत भोजन कराता रहे इसका कारण यह है कि यदि जठराग्नि को भोजन न मिलने से कदाचित् शांति होकर इस प्राणी को न मार डाले । जैसे अग्नि में जबतक ईंधन गेरे जाओंगे तो बराबर अग्नि बनी रहेगी अन्यथा शांति हो जावेगी । इसी प्रकार इस जगे जानना परंतु यह आज्ञा मंदाग्नि में नहीं है भस्मकादिक में है ॥

शमन

अत्युद्धताग्निशान्त्यै माहिषदधिदुग्धसर्पींषि ।
संसेवेत यवागूं समधूच्छिष्टां ससर्पिष्काम् ॥

अर्थ–अत्यंत बढी हुई अग्नि को भैस के दही, दूध और घी आदि के सेवन से अथवा घी और मोम मिलायकर करी हुई कांजी का सेवन करने सें शांति करे ॥

विरेचन

असकृत्पित्तहरणं पायसं प्रतिभोजनम् ।
श्यामात्रिवृद्विपक्कं च पयो दद्याद्विरेचनम् ॥

अर्थ–वारंवार पित्तनाशकारी औषध देवे, पायस (खीर) का भोजन करावे काली और सपेद निसोथ को गेरके ओंटा हुआ दूध दस्त कराने को देवे तो भस्मक रोग शांति होवे ॥

सामान्ययत्न

यत्किंचिन्मधुरं मेध्यं श्लेष्मलं गुरु भोजनम् ।
सर्वं तदत्यग्निहितं भुक्त्वा प्रस्वपनं दिवा ॥

अर्थ–यावन्मात्र मधुर (मीठी) कफकारी, और भारी भोजन है वो सब बढी हुई अग्निवाले को हितकारी है तथा भस्मक रोगवाले को यथेष्ट दिन में निद्रा लेना हितकारी है ॥

कोलास्थियोग

कोलास्थिमज्जकल्कस्तु पीतो वाप्युदकेन वै ।
अचिराद्विनिहन्त्येनं प्रयोगो भस्मकं नृणाम् ॥

अर्थ–बेर के भीतर की मिंगी को बारीक पीस पानी के साथ फक्की लेवे तो मनुष्यों के भस्मक रोग को शीघ्र दूर करे यह प्रयोग भस्मक रोग नाशक है ॥

क्षीर

नारीक्षीरेण संपिष्ट्वा पिबेदौदुम्बरत्वचम् ।
ताभ्यां वा पायसं सिद्धं पिबेदत्यग्निशान्तये ॥

अर्थ–स्त्री के दूध में गूलर की छालको पीस के पीवे अथवा स्त्री का दूध गूलरकी छाल इन से बनाई हुई खीर को खाना अत्यंत अग्नि का नाश करे ॥

सिततण्डुलसितकमलं छागक्षीरेण पायसं सिद्धम् ।
भुक्त्वा घृतेन पुरुषो द्वादश दिवसान्बुभुक्षितो न भवेत् ॥

अर्थ–सपेद चावल, सपेद कमल और बकरी का दूध इन की खीरकर घी मिलाय बारह दिन तक नित्य भोजन करे तो भस्मक रोग अवश्य दूर होवे ॥

विदारीकल्क

विदारीस्वरसं क्षीरे पचेदष्टगुणं घृतम् ।

माहिषं जीवनीयेन कल्केनात्यग्निनाशनम् ॥

अर्थ–विदारीकंद का रस आठ भाग, दूध ११ भाग, भैंस का घी १ भाग, तथा जीवनीय (मुलहटी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक और ऋषभक इन) औषधों का कल्क १ भाग मिलाय के पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार के सेवन करे तो भस्मक रोग दूर होवे ॥

त्रिफलावलेह

त्रिफलामुस्तविडङ्गैः कणया सितया समैः ।
स्यात्खरमञ्जरिबीजैर्लेहो भस्मकनाशनः ॥

अर्थ–त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, पीपल, खांड और सपेद ओंगा के बीज इन को डालके अवलेह बनावे इस अवलेह के सेवन करने से भस्मक रोग दूर होवे ॥

अपामार्गादि योग

अपामार्गस्य बीजानि पिष्ट्वा क्षीरेण साधयेत् ।
तत्पायसं महाघोरे भस्मके संप्रशस्यते ॥

अर्थ–ओंगा के बीजों को पीसके दूध में डालके खीर सिद्ध करे इस को महाघोर भस्मक रोग पर देना उत्तम कहा है ॥

कदलीफलयोग

कदलिफल सुपक्वं षट्पलं सुप्रभाते घृतसममभिनित्यं भक्षये-न्मण्डलं च । हरति सकलमग्नेस्तीव्रतां भस्मरोगमनुभवि रिदमुक्तमग्निमान्द्यं करोति ॥

अर्थ–इकतालिस दिन पर्यंत प्रातःकाल २४ तोले पकी हुई केले की गहरों को घी में मिलाय के खाय तो संपूर्ण अग्नी की तीव्रता तथा भस्मक रोग इन का नाश करे तथा अग्निमांद्य (मंदाग्नि) करे-यह मेरा अनुभव करा हुआ प्रयोग कहा है ॥

अजीर्ण के भेद.

आमं विदग्धं विष्टब्धं कफपित्तानिलैस्त्रिभिः । अजीर्णं केचि-दिच्छन्ति चतुर्थं रसशेषतः ॥ अजीर्णं पञ्चमं केचिन्निर्दोषं दिनं पाकि च । वदन्ति षष्ठं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरम् ॥

अर्थ–मनुष्य के कफ से आम, पित्त से विदग्ध, वात से विष्टब्ध ऐसे तीन प्रकार का अजीर्ण रोग होता है–और जो भोजन करा सो पक्व होय नहीं रस शेष रहे सो

रसशेष से चतुर्थ अजीर्ण होय है, और रात्रिदिन में जो आहार पचे और जिस में अफरा हड़ फूटन कुछ न होय ये पांचवा अजीर्ण किसी के मत से है और जो नित्य ही स्वाभाविक अजीर्ण रहे (विकृतिजन्य न होय) उस को छटा अजीर्ण कहते हैं। इस अजीर्ण के पचाने के अर्थ (सुश्रुत) में वामपार्श्वशयनादिक उपाय कहे हैं सो करने चाहिये ॥

गुडाष्टक

व्योषदन्तीत्रिवृच्चित्रं कृष्णामूलं विचूर्णितम्। तच्चूर्णं गुडसंमिश्रं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम बलवर्णाग्निवर्धनम्। शोथोदावर्तशूलघ्नं प्लीहपाण्ड्वामयापहम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, दंती, निसोथ, चित्रक की छाल और पीपलामूल इन के चूर्ण को गुड में मिलाय के प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे। इस को गुडाष्टक कहते हैं। यह बल देवे अग्नि को बढावे; तथा सूजन, उदावर्त्त, शूल, प्लीहा और पांडुरोग इन को नाश करे ॥

पथ्यादि चूर्ण

पथ्यापिप्पलिसंयुक्तं चूर्णं सौवर्चलं पिबेत्। मस्तुनोष्णोदकेनाथ मत्वा दोषगतिं भिषक् ॥ चतुर्विधमजीर्णं च मन्दानलमथारुचिम्। आध्मानं वातगुल्मं च शूलं चाशु विनाशयेत् ॥

अर्थ–हरड़ और पीपल के साथ संचर निमक का चूर्ण अथवा दही के जल के साथ संचर निमक अथवा गरम जल के साथ जैसी दोषों की गति होवे उस के अनुसार इन में से एक वस्तु का सेवन करे तो चार प्रकार के अजीर्ण, मंदाग्नि, अरुचि, अफरा गोला और शूल इन को तत्काल दूर करे ॥

बृहच्छंखवटी

स्नुगर्कचिञ्चापामार्गरम्भातिलपलाशजान्। क्षारांश्च भिषगो दद्यात्प्रत्येकं पलमात्रया॥लवणानि पृथक्पञ्च ग्राह्याणि पलमात्रया। सर्जिका च यवक्षारं टङ्कणं त्रितयं पलम् ॥ सर्वं त्रयोदशपलं सूक्ष्मं चूर्णं विधाय तु। निम्बूफलरसे प्रस्थसंमिते तत्परिक्षिपेत ॥ तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वह्नौ प्रताप्य तु। वारान्निर्वापयेत्सप्त सर्वं द्रवति तद्यथा ॥ नागरं त्रिपलं ग्राह्यं मरीचं च पलद्वयम्। पिप्पली पलमानास्यात्पलार्धं भ्रष्टहिङ्गुनः ॥ ग्रन्थिकं

चित्रकं चापि यवानीजीरकं तथा। जातीफलं लवङ्गं च पृथक्कर्षद्वयोन्मितम् ॥ रसो गन्धो विषं चापि टङ्कणं च मनःशिला । एतानि कर्षमात्राणि सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ शरावार्धेन चुक्रेण सन्नीय वटिकां चरेत्। माषप्रमाणा सा वैद्यैर्बृहच्छङ्खवटी स्मृता॥ सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी । विषूच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥

अर्थ–थूहर, आक, इमली, ओंगा, केला, तिल और पलास (ढाक), इन सब के क्षार चार २ तोले लेवे, और नमक, सुहागा, सैंधा नमक, बिडनमक और संचर नमक ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा ये तीनों मिलाकर चार तोले । सब ५२ तोले हुए । सब का बारीक चूर्ण कर ६४ तोले नींबू के रस में डालके फिर ४ तोले शंख के टुकडे अग्नि में तपाय के उस में डाले । इस प्रकार वारंवार तपाय २ के सात वार बुझाने से उस में मिल जावेगा । पश्चात् सोंठ १२ तोले, काली मिरच ८ तोले, पीपल छोटी ४ तोले, भुनी हुई हींग २ तोले, पीपरामूल, चीते की छाल, अजमायन, जीरा, जायफल, लौंग, ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे; पारा, गंधक, सिंगियाविष, सुहागा और मनसिल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे । इस प्रकार सब औषध लेकर १६ तोले चूका के रस सें खरल करके १ मासे की गोली बनावे । इस में से एक गोली खाय तो अजीर्ण, शूल, विषूचिका, अलसक इन को तत्काल दूर करे । इस को बृहच्छंखवटी कहते हैं ॥

लघुक्रव्याद रस

पारदाद्द्विगुणं गन्धमर्धांशं मृतलोहकम् । पिप्पली पिप्पलीमूलमग्निशुण्ठी लवङ्गकम् ॥ लोहसाम्यं पृथक् कुर्याद्रससाम्यं सुवर्चलम् । टङ्कणं मरिचं चापि गन्धतुल्यं प्रदापयेत् ॥ एतद्विचूर्ण्य यत्नेन भावयेत्सप्तधाम्लकैः । एतद्रसायनं श्रेष्ठं माषमात्रं प्रदापयेत् ॥ तक्रेण केवलं वापि दद्याद्भोजनपाचने । क्षिप्रं तज्जीर्यते भुक्तं दीपनं भवति ध्रुवम् । सर्वाजीर्णप्रशमनं लघुक्रव्यादसंज्ञितम् ॥

अर्थ–पारा ४ तोले, गंधक ८ तोले, लोहे की भस्म २ तोले, तथा पीपल, पीपरामूल, चित्रक, सोंठ और लौंग प्रत्येक आठ २ तोले लेवे; संचरनोन, सुहागा, काली

मिरच ये सब प्रत्येक चार चार तोले लेवे इन सब का चूर्ण कर नींबू के रस की इस में सात भावना देवे तो लघुक्रव्याद् नामक रस सिद्ध होवे । इस में से १ मासे भर छाछ के साथ लेवे अथवा बिना छाछ के ही भोजन के पचने के वास्ते देय तो भोजन तत्काल पचे और अग्नि प्रदीप्त होवे तथा संपूर्ण अजीर्णों का नाश हों ॥

विदग्धाजीर्णलक्षण

विदग्धे भ्रमतृण्मूर्च्छाः पित्ताच्च विविधा रुजः ।
उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ॥

अर्थ—विदग्ध अजीर्ण में भ्रम प्यास और मूर्च्छा ये लक्षण होते हैं । और पित्त के अनेक रोग प्रगट हों तथा धूएं के साथ खट्टी डकार आवें, पसीना आवें और दाह होय ॥

विदग्धाजीर्णकी चिकित्सा

अन्नं विदग्धं च नरस्य शीघ्रं शीताम्बुना वै परिपाकमेति ।
तदास्य शैत्येन निहन्ति पित्तमाक्लेदिभावाच्च नयत्यधस्तात् ॥

अर्थ—मनुष्य का विदग्ध अन्न शीतल जल पीने से अवश्य पचे; तथा शीत के योग से पित्त भी शांति होता है तथा आर्द्रता (गीलापन) उस पचे अन्न को नीचे को गेरता है ॥

निद्रानियम

भोजनात्प्राक् दिवा स्वापात्पाषाणोपि च जीर्यति । भोजनान्ते दिवास्वापाद्वातपित्तकफैः कृतम् ॥ आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गु-त्र्यूषणसैन्धवैः । दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ॥

अर्थ—प्रातःकाल भोजन के प्रथम निद्रा लेने से यदि पाषाण (पत्थर) भी खाया होवे तो वो भी पच जावे, तथा भोजन करने पश्चात् निद्रा वादी, पित्त और कफ को कुपित करती है । इस वास्ते चतुर मनुष्य हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सैंधानमक इन को जल में पीस के उदर (पेट) पर लेप करे फिर सोय जावे तो संपूर्ण अजीर्णों का नाश होय इस में संदेह नहीं है ॥

दिवा निद्रा

व्यायामप्रमदाध्ववाहनरतान्क्लिन्नानतीसारिणः
शूलश्वासवतस्तृषापरिगतान् हिक्कामरुत्पीडितान् ।
क्षीणान्क्षीणकफान् शिशून्मदहतान्वृद्धांस्तथा जीर्णिनो
रात्रौ जागरितान्नरान्निरशनान्कामं दिवा स्वापयेत् ॥

अर्थ–व्यायाम (दण्ड कसरत), स्त्रीसंग, मार्गगमन, सवारी इन के सेवन करने से जो थके हुये हैं जो अतिसार, शूल, श्वास, प्यास, हिचकी और बादी के विकार-वाले हैं; तथा क्षीण, क्षीणकफ, बालक, मद से व्याप्त, वृद्ध, अजीर्णवाला, रात्रि में जगा हुआ, उपवास किया हुआ इन को दिन में यथेच्छ सुलाना चाहिये ॥

विष्टब्धाजीर्णलक्षण

विष्टब्धे शूलमाध्मानं विविधा वातवेदनाः ।
मलवाताप्रवृत्तिश्च स्तम्भो मोहोऽङ्गपीडनम् ॥

अर्थ–विष्टब्ध अजीर्ण के यह लक्षण हैं। शूल, अफरा, अनेक वात की पीड़ा, मल और अधोवायु का रुक जाना, देह जकड़ जाय, मोह और देह में पीड़ा होय ॥

विष्टब्धाजीर्ण में सामान्य उपचार

विष्टब्धे स्वेदनं कार्यं पेयं च लवणोदकम् ॥

अर्थ–विष्टब्धाजीर्ण में पसीने निकाले और नमक का मिला जल पीना चाहिये ॥

रसशेषाजीर्णलक्षण

रसशेषेऽन्नविद्वेषो हृदयाशुद्धिगौरवे ॥

अर्थ–रसशेष अजीर्ण के यह लक्षण हैं। अन्न में अरुचि, हृदय में शुद्धि न होय और देह भारी होय ॥

रसशेषाजीर्ण में सामान्य उपचार

रसशेषे दिवा स्वापं लङ्घनं वातवर्जनम् । आलिप्य जठरं प्राज्ञो हिङ्गुत्र्यूषणसैन्धवैः ॥ दिवा स्वापं प्रकुर्वीत सर्वाजीर्णप्रणाशनम् ।

अर्थ–रसशेष अजीर्ण में दिन में सोना और लंघन करना, जहां बहुत पवन आती होवे उस जगह न बैठना तथा हींग, सोंठ, मिरच, पीपल और सैंधा नमक इन को जल में पीसके पेट पर लेप दिन में सोना हितकारी है ।

अजीर्ण

अनात्मवन्तः पशुवद्भुञ्जन्तेऽशनलोलुपाः ।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्रभुवन्ति हि ॥

अर्थ–जिन मनुष्यों की इन्द्री स्वाधीन नहीं है वे पशु के समान अप्रमाण भोजन करते हैं। उन्हों के अनेक रोगों का कारण अजीर्ण रोग प्रगट होता है ॥

अजीर्ण के सामान्य लक्षण

ग्लानिगौरवविष्टम्भभ्रममारुतमूढता।
विबन्धोतिप्रवृत्तिर्वा सामान्याजीर्णलक्षणम् ॥

अर्थ—ग्लानि, भारीपना, विष्टंभ, भौर, अधोवातका रुकना, मलरोध अथवा अत्यंत दस्त हो. ए सामान्य अजीर्णके लक्षण हैं।

अजीर्ण के उपद्रव

मूर्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः।
उपद्रवा भवन्त्येते मरणं चाप्यजीर्णतः ॥

अर्थ—मूर्छा, बड़बड़, ओकारी अर्थात् वमन, लार का गिरना, ग्लानी, भ्रम ये अजीर्ण के उपद्रव हैं। और बहुत बढा अजीर्ण मनुष्य को मार भी डालता है ॥

स्वल्पं यदा दोषविबन्धमामं लीनं न तेजःपथमावृणोति।
भवत्यजीर्णेऽपि तदा बुभुक्षा सा मन्दबुद्धिं विषवन्निहन्ति ॥

अर्थ—जिस समय दोषयुक्त अल्प ऐसा आमाजीर्ण अग्नि के मार्ग का अवरोध नहीं करे तब इस प्राणी को अजीर्ण में भी भोजन करने की इच्छा होती है। वह भोजनेच्छा[1] अल्प बुद्धिवाले पुरुष को विष के समान मारती है ॥

प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णं जायते नृणाम्।
तन्मूलो रोगसंघातस्तद्विघाताद्विनश्यति ॥

अर्थ—प्रायः भोजन के न्यूनाधिकपनसे मनुष्यों के अजीर्ण रोग होता है उस अजीर्ण से इस प्राणी के अनेक प्रकार के रोग होते हैं और इस अजीर्ण के नष्ट होने से संपूर्ण रोग नष्ट होते हैं ॥

लवणभास्करचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं धान्यकं कृष्णजीरकम्। सैन्धवं च विडं चैव पत्रं तालीसकेसरान् ॥ एषां द्विपलिकान् भागान् पञ्च सौवर्चलस्य च। मरीचाजाजिशुण्ठीनामेकैकस्य पलं पलम् ॥ त्वगेला चार्धभागा स्यात्सामुद्रं कुडवद्वयम्। दाडिमात्कुडवं चैव द्विपलं चाम्लवेतसम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं श्लक्ष्णं गन्धाढ्यममृ-

---

१ अजीर्ण में भोजन की इच्छा होती है परंतु उस की परीक्षा यही है कि वह थोडी देर पीछे स्वयं शांत हो जाती है।

तोपमम्। लवणो भास्करो नाम भास्करेण विनिर्मितः॥ जगतोस्य हितार्थाय वातश्लेष्मामयापहः। वातगुल्मं निहन्त्येष वातशूलानि यानि च॥ तक्रमस्तुसुरासिन्धुयुक्तः काञ्जिकयोजितः। मन्दाग्नितां विनाश्यैव शक्तो भवति पावकः॥ हृद्रोगमामदोषं च विविधान्युदराणि च। अन्यान्यपि निहन्त्याशु रोगान् लवणभास्करः॥

अर्थ–पीपर, पीपरामूल, धनिया, काला जीरा, सैंधा नमक, बिडनमक, पत्रज, तालीसपत्र, नागकेशर ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे। संचरनमक २० तोले और काली मिरच, अजमायन और सोंठ ये प्रत्येक ४ चार तोले, दालचीनी और इलायची बडी दो दो तोले, नमक ३२ तोले और अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले। सब का चूर्ण करके एकत्र करे तो यह लवणभास्कर चूर्ण बनके तयार होवे। यह उत्तम गंधयुक्त अमृत के समान त्रिलोकी के हित करने के वास्ते सूर्य भगवान ने निर्माण किया है। यह वादी, कफ, वादीगोला, वातशूल इन का नाश करे। तथा छाछ, दही का जल, मद्य, सैंधानमक किंवा कांजी इन में से किसी एक के साथ मंदाग्निवाला प्राणी सेवन करे तो अग्निवृद्धि होय तथा हृद्रोग, आमदोष, संपूर्ण उदर के विकार और इन से पृथक् अनेक रोगों को यह नष्ट करता है॥

अग्निमुख चूर्ण

हिङ्गुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत्। पिप्पली त्रिगुणा ज्ञेया शृङ्गवेरं चतुर्गुणम्॥ यवानिका पञ्चगुणा षड्गुणा च हरीतकी। चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत्॥ एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया। पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा। अङ्गानि यस्य शीर्यन्ति विषं वा येन भक्षितम्॥ अर्शोहरो दीपनश्च शूलघ्नो गुल्मनाशनः। कासं श्वासं निहन्त्याशु तथैव क्षयनाशनः॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न कस्मिन्प्रतिहन्यते।

अर्थ–हींग १ भाग, बच २ भाग, पीपल ३ भाग, अदरख ४ भाग, अजमायन ५ भाग, जंगी हरड ६ भाग, चित्रक ७ भाग, और कूठ ८ भाग। इस प्रकार सब औषध

लेकर कूट पीसके चूर्ण बनावे, इस को मद्य, दही अथवा दही के पानी, सुरा अथवा गरम जल से पीवे तो उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहा, उदर, तथा अंगों का गिरना एवं विष खाय लिया हो तथा बवासीर, शूल, गोला, खाँसी, श्वास और क्षय इन का नाश करे। यह अग्निमुख चूर्ण दीपन है ॥

वृद्धाग्निमुख चूर्ण

द्वौ क्षारौ चित्रकं पाठा करञ्जो लवणानि च। सुक्ष्मैलापत्रकं भार्ङ्गी कृमिघ्नं हिङ्गुपुष्करम् ॥ शठी दार्वी त्रिवृन्मुस्ता वचा चेन्द्रयवास्तथा। धात्री जीरकवृक्षाम्लयवासा चोपकुञ्चिका ॥ आम्लवेतसमम्लीका दाडिमं सकटुत्रिकम्। भल्लातकाजमोदा च यवानी सुरदारु च ॥ आपश्चातिविषाः श्यामा हबुषारग्वधं समम्। तिलमुष्ककशिग्रूणां कोकिलाक्षपलाशयोः ॥ क्षीराणि लोहकिट्टं च तप्तं गोमूत्रभावितम्। समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ मातुलुङ्गरसेनैव भावयेत्तु दिनत्रयम्। दिनत्रयं तु सूक्तेन तथैवार्द्ररसेन च ॥ अत्यन्ताग्निकरं चूर्णं प्रदीप्ताग्निसमप्रभम्। उपयुक्तं विधानेन नाशयत्यचिराद्गदान् ॥ अजीर्णकमथो गुल्मं प्लीहानमुदराणि च। ग्रहणीं पाण्डुरोगांश्च श्वासं कासं च दारुणम् ॥ प्रतिश्यायं क्षयं शोषं विद्रधिं कफजं तथा। जठराण्यन्त्रवृद्धिं च अष्ठीलां वातशोणितम् ॥ प्रणुदत्युल्बणान् दोषान् नष्टमग्निं च दीपयेत्। समस्तव्यञ्जनोपेतं भक्तं दत्त्वा तु भोजयेत् ॥ दापयेदस्य चूर्णस्य बिडालपदमात्रकम्। गोदोहमात्रं तत्सर्वं द्रवे पक्त्वातिसोष्मकम् ॥ एषो ह्यग्निमुखश्चूर्णश्चूर्णराजो निगद्यते। ब्रह्मणा निर्मितो ह्येष अश्विभ्यां परिकीर्तितः ॥

अर्थ—सुहागा, जवाखार, चीते की छाल, पाढ, कंजा, पांचों नमक, छोटी इलायची, तमालपत्र, भारंगी, वायविडंग, हींग, पुहकरमूल, कचूर, दारुहलदी, निसोथ नागरमोथा, बच, इन्द्रजव, आँवले, जीरा, तिंतडीक, धमासा, कलौंजी, काला जीरा,

अमलवेत, इमली, अनारदाना, सोंठ, काली मिरच, पीपल, भिलाए, अजमोद, अजमायन, देवदारु, नेत्रवाला, अतीस, पीपल, हाऊवेर और अमलतास का गूदा ये सब औषधी समान भाग लेवे तथा तिल, घंटापाटलीवृक्ष (मोखावृक्ष), सहजना, तालमखाने, पलासपापडा, आक आदि का दूध, तपायके गोमूत्र में बुझाया हुआ मंडूर ये सब समान भाग एकत्र करके इस में बिजोरे निंबू के रस की तीन दिन भावना देवे। तथा कांजी की और अदरख के रस की तीन तीन भावना देवे । यह चूर्ण अग्नि को अत्यंत बढाता है । इस को नित्यप्रति सेवन करने से थोडे ही दिन में व्याधि दूर होवे तथा अजीर्ण, गोला, प्लीहा, उदररोग, संग्रहणी, पांडुरोग, श्वास, खांसी, पीनस, क्षय, शोष, कफजन्य विद्रधि, अंत्रवृद्धि, अष्ठीला, वातरक्त, त्रिदोष तथा नष्टाग्नि इन को नष्ट करे । इस पर संपूर्ण पदार्थ भोजन करने को देवे । इस चूर्ण की मात्रा एक तोले की है परंतु वैद्य अपने बुद्धि से रोगी के बलाबल को विचार के न्यूनाधिक देवे। यह अग्निमुखचूर्ण संपूर्ण औषधों में श्रेष्ठ है। इस प्रकार ब्रह्मदेव और अश्विनीकुमार ने कहा है । यह चूर्ण जितनी देर में गौ दुही जाती है इतनी देर में संपूर्ण भोजन को पचाय देता है ॥

यावशूकादि चूर्ण

स यावशूकनागरं शिवाजलं च सादरम् ।
निहन्त्यजीर्णजं दरं वदामि ते पुरन्दर ॥

अर्थ–जवाखार, सोंठ, हरडै इन का काढा अजीर्ण से होनेवाले भय को नष्ट करता है । हे इन्द्र! यह मैं तेरे आगे कहता हूं ॥

लघुचित्रकादि चूर्ण

दहनाजमोदसैन्धवनागरमरिचाम्लतक्रेण ।
सप्ताहादग्निकरं यदर्शोनाशनं परं कथितम् ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, अजमोद, सैंधा नमक, सोंठ और काली मिरच इन का चूर्ण करके खट्टी छाछ के साथ सात दिन सेवन करे तो अग्निवृद्धि करे और बवासीर को नष्ट करे ॥

शुंठ्यादि चूर्ण

यवक्षारान्वितं शुण्ठीचूर्णं लीढं घृतान्वितम् ।
उष्णोदकेन वा पीतं शुण्ठीचूर्णं क्षुधाकरम् ॥

अर्थ–सोंठ और जवाखार इन का एकत्र चूर्ण करके घी के साथ अथवा गरम जल के साथ देवे तो क्षुधा को उत्पन्न करे ॥

कणाद्य चूर्ण

कणासिन्धुशिवावह्निचूर्णमुष्णेन वारिणा ।
पीतं प्रातः क्षुधां कुर्यात्पावकस्यापि दीपनम् ॥

अर्थ–पीपल, सेंधा नमक, हरड और चीते की छाल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ प्रातःकाल लेवे तो क्षुधा तथा अग्निवृद्धि इन को करे ॥

कपित्थादियोग

कपित्थतक्रचाङ्गेरीमरिचाजाजिचित्रकैः ।
कफवातहरो ग्राही बल्यो दीपनपाचनः ॥

अर्थ–कैथ का गूदा, छाछ, चूका, काली मिरच और चीते की छाल इन का योग कफवात हारक, ग्राहक, बल देनेवाला, दीपन और पाचन है ॥

ज्वालामुख चूर्ण

हिङ्ग्वाम्लवेतसकटुत्रिकचित्रकाणां कर्षाः पृथक् गुडपलं यव-
चूर्णकं च । ज्वालामुखोपमनलस्य करोति दीप्तिं चाजीर्णमा-
त्रशमने हि कृशानुरेषः ॥

अर्थ–हींग, अमलवेत, त्रिकुटा, चित्रक की छाल और जवाखार ये प्रत्येक एक एक तोले और उस में गुड चार तोले मिलावे । इस को ज्वालामुख चूर्ण कहते हैं । यह अग्निवृद्धि तथा अजीर्ण का नाश करे ॥

व्योषादि चूर्ण

व्योषैला हिङ्गुभार्ङ्गीविडलवणयवक्षारपाठा यवानी
चिञ्चात्वग्भस्म चव्यं दहनगजकणात्वक् पटुग्रन्थजाजी ।
एतच्चूर्णं घृताढ्यं त्रिदिवसमशने हन्यते रोगजालम्
विश्वं वैश्वानरोयं दहति सरभसं किं पुनर्भुक्तमन्नम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, बडी इलायची, हींग, भारंगी, बिडनमक, जवाखार, पाढ, अजमायन, इमली की छाल की भस्म, चव्य, चित्रक, गजपीपल, दालचीनी, नमक, पीपरामूल और जीरा; इन सब के चूर्ण को घी में सान के तीन दिन खाय तो संपूर्ण रोगजालों को नष्ट करे, फिर भोजन का तो क्या कहना है, इस को **वैश्वानर** चूर्ण कहते हैं ॥

शुण्ठ्यादि चूर्ण

शुण्ठी बाणमिता कणार्णवमिता दीप्या यवानी क्रमा-
द्भागानां त्रितयं द्वयं च लवणं भागैः शिवा तत्समा ।
कोष्ठाटोपरुगामगुल्ममलहल्लोलिम्बराजोदित-
श्चूर्णोऽद्रीनपि भस्मसात्प्रकुरुते किं भोजनं भो जनाः ॥

अर्थ–सोंठ ५, पीपल ४, अजमोद ३, अजमायन २, नमक १, तथा हरड की छाल १६ भाग; इन सब का चूर्ण करके खाय तो पेट का गुडगुडाहट, आम, गोला और मल इन को नाश करे यह चूर्ण लोलिंबराज कवि का कहा हुआ पर्वतों को भी भस्म कर देता है, फिर भोजन का भस्म कर देना क्या बडी बात है ॥

विश्वादि चूर्ण

विश्वकणोषणनागदलैश्च त्वक्त्रुटिभिर्विहितं क्रमबद्धम् ।
चूर्णमिदं समखंडमरोचश्वासगुदोद्भवगुल्मवमीषु ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, नागरवेल के पान, दालचीनी तथा छोटी इलायची; ये संपूर्ण पदार्थ क्रमवृद्धि करके लेवे । सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण की बराबर खांड मिलावे इस को सेवन करने से अरुचि, श्वास, बवासीर, गोला और वांति इन का नाश होता है ॥

चित्रकादि चूर्ण

कृशानुश्चव्यं वा मरिचमगधाहिंगुचपला
शठी दीप्यो विश्वा यवजयुगलं पञ्चलवणम् ।
समं बीजद्रावैर्लुलितमथवा दाडिमरसै-
र्जयेदामान् रोगान्ग्रहणिकफतां वह्नितनुताम् ॥

अर्थ–चित्रक, चव्य, काली मिरच, पीपल, हींग, गजपीपल, कचूर, अजमायन, सोंठ, जवाखार, सैंधानमक से आदि ले पांचो नमक; ये प्रत्येक समभागलेवे, सब का चूर्ण कर बिजोरे के रस का पुट देवे । यह आमरोग, संग्रहणी, कफ, वादी और मंदाग्नि इन का नाश करे ॥

बिडलवणादि चूर्ण

विडं चित्रकं जाजियुग्मं यवानी शिवा त्र्यूषणं धान्यसौवर्चलं च ।

त्वचा तिंतिडीकाजमोदाम्लवेतं समं योज्यमेतत्समं चाविडङ्गम् ॥
विडादिरोगदारकं गदार्तिनां च तारकं
ह्यनेन जीर्यते धरा कथं न जानते नराः ॥

अर्थ–बिडनमक, चित्रक, जीरा, काला जीरा, अजमायन, हरड की छाल, सोंठ, काली मिरच, पीपल, धनियां, संचरनमक, दालचीनी, इमली, अजमोद, अमलवेत और वायविडंग; इन को समान भाग लेकर चूर्ण करे। यह बिडादिचूर्ण सर्व प्रकार की व्याधिन का नाशक है ॥

वडवानल चूर्ण

शिवाकरञ्जचित्रकं कणाजटाकटुत्रिकम् ।
सशर्करं समांशकं त्विदं हि वाडवाग्निकम् ॥

अर्थ–हरड की छाल, कंजा की छाल, चीते की छाल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल और खांड इन का समान भाग ले चूर्ण करे। इस को वडवानल चूर्ण कहते हैं। यह अजीर्ण पर पाचन है ॥

पंचाग्नि चूर्ण

अम्लवेतसधनंजयवज्री मोरटा तदनु सूरण एषः ।
पञ्चवह्निजठरानलवृद्धयै तक्रसाकमिदमाशु हि पेयम् ॥

अर्थ–अमलवेत, कोह वृक्ष की छाल, थूहर, मरोरफली और जमीकंद इन पांचों का चूर्ण छाछ के साथ देवे तो अग्निवृद्धि करता है ॥

विश्वभेषज चूर्ण

विश्वभेषजं हिङ्गुटङ्कणं मागधी च सौवर्चलं त्विदम् ।
शिग्रुपादजैर्भावितं रसैः शूलनाशनं क्षुत्प्रबोधनम् ॥

अर्थ–सोंठ, हींग, सुहागा, पीपल और संचरनमक, इन के चूर्ण को सहजने की जड के रस की भावना देवे तो यह शूल (पेट के दर्द) को नष्ट तथा क्षुधा को उत्पन्न करे ।

संजीवनी गुटी

विडङ्गनागरं कृणा पथ्या वह्निबिभीतकाः ।
वचा गुडूची भल्लातं विषं चात्र प्रयोजयेत् ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेषयेत् ।
गुञ्जाभां वटिकां कुर्याद्दद्यादार्द्रकजै रसैः ॥
एकामजीर्णयुक्तस्य द्वे विषूच्यांप्रदापयेत् ।
तिस्रो भुजङ्गदष्टस्य चतस्रःसन्निपातिनः ॥
गुटिका जीवनी नाम्ना संजीवयति मानवम् ।

अर्थ–वायविडंग, सोंठ, पीपल, हरड की छाल, चित्रक, बहेडे, वच, गिलोय भिलाए और अतीस; ये सब समान भाग लेके सब का चूर्ण करके गोमूत्र में खरल करे । फिर १ रत्ती के प्रमाण गोली बनावे । इस को अदरख के रस से अजीर्ण पर एक देवे, तथा विषूचिका (हैजा) में दो गोली देवे, सांप के काटनेपर तीन गोली और सन्निपात में चार गोली देनी चाहिये । यह संजीवनी नामक गोली मनुष्य को संजीवन करती है ॥

धनंजय वटी

जीरकं चित्रकं चव्यं ससुगन्धं वचात्वचौ ।
एलाकर्पूरहपुषाकारवीनागकेसरम् ॥
पृथक्कर्षमितं ख्यातमिति कर्षार्धसंमितम् ।
यवानी पिप्पलीमूलं स्वर्जिका च हरीतकी ॥
जातीफललवङ्गं च पृथक्कर्षयुगं मतम् ।
धान्यकं पत्रकं चापि कर्षत्रयमितं पृथक् ॥
कृष्णा पलप्रमाणं स्यात्पलमानं तु रोमकम् ।
मरीचानि च नः सप्त त्रिवृन्मूलं पलद्वयम् ॥
पृथग्दशाक्षं सामुद्रं सैन्धवं नागरं तथा ।
शरावसंमितं चुक्रं तदर्धं तिन्तिणीफलम् ॥
धनंजयवटी ह्येषा धनंजयविवर्धिनी ।
जीर्णं च जरयत्याशु शूलमुन्मूलयेद्द्रुतम् ॥
हरेद्विबन्धेन सममाध्मानं कर्षयत्यपि ।
ग्रहण्या निग्रहं कुर्याद्रुचयेद्रुचिमुत्तमाम् ॥

अर्थ–जीरा, चित्रक, चव्य, संचरनमक, वच, दालचीनी, इलायची, कपूर, हंसपदी, अजमोद, और नागकेशर ये प्रत्येक औषधी एक २ तोला लेवे; अजमायन, पीपरामूल, सज्जीखार, हरड ये प्रत्येक आधे२ तोला लेवे, जायफल और लौंग ये दोनों दो दो तोले तथा धनियां, पत्रज ये दोनों तीन २ तोले, पीपर, सांभरनमक ये चार २ तोले, काली मिरच ७ तोले, निसोथ ८ तोले, नमक १० तोले, सैंधानमक और सोंठ १० तोले एवं चूका ३२ तोले तथा इमली १६ तोले। इन सब का चूर्ण करके गोली बनावे। यह **धनंजयवटी** अग्नि को बढावे तथा अजीर्ण को नष्ट करे शूल को उखाड देवे तथा विड्बंध, अफरा और संग्रहणी इन को नष्ट करे एवं रुचि को उत्पन्न करे है॥

शंखवटी

चिञ्चाश्वत्थस्नुहिक्षारादपामार्गार्ककं तथा।
लवणं पञ्च संगृह्य ततो लवणपञ्चकात्॥
सैन्धवाद्यान्समादाय सर्वमेतत्पलद्वयम्।
द्वौ द्वौ कर्षौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः॥
फलत्रयाच्च कर्षैकं द्विकर्षं तु लवङ्गकम्।
एतत्सर्वं समासाद्य श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम्॥
भावयेदम्लयोगेन सप्तधा च प्रयत्नतः।
रसशङ्खवटी नाम सेवितः सर्वरोगजित्॥
गुञ्जामात्रमिमं खादेद्भवेद्दीपनपाचनम्।
अजीर्णं वातसंभूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा॥
विषूचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः।

अर्थ–इमली, पीपल थूहर, ओंगा, आंक इन का क्षार, सैंधवादिक पांचों नमक प्रत्येक आठ २ तोले; शंखभस्म २ तोले, त्रिफला १ तोले और लौंग २ तोले इन सब का चूर्ण करके नींबू के रस की सात भावना देवे। यह **शंखवटी** रस १ रत्ती नित्यप्रति सेवन करने से संपूर्ण रोगों को दूर करे तथा दीपन और पाचन है। तथा अजीर्ण, वात, पित्त और कफ इन से उत्पन्न हुए अजीर्ण तथा विषूचिका, शूल तथा आनाहवायु इन का नाश करे॥

लवंगामृतवटी

सर्वार्धं देवपुष्पं मरिचमगधयोस्त्रिस्त्रिकर्षं यवान्यो-

रष्टावष्टाग्नितांपित्रिपटुरथ पलं ग्रन्थिकं सप्तकर्षम् ॥ शुण्ठी पथ्या दशाक्षामलककलिफलाजाजिचव्याश्च षट् षट् सुत्रामप्रीतिपात्रं नवमितमखिलं चूर्णितं वस्त्रपूतम् । निर्भाव्यं चार्द्रकस्य द्रवमपि विधिवत् माषयुग्मप्रमाणा बद्धा चुक्रेण सिद्धा प्रभवति गुटिकासौ लवङ्गामृताख्या॥ भुक्ता युक्ता सकलसुखकरी दीप्तिमग्नेर्विधत्ते वृष्या पुष्या वपुष्याऽमर्यनिचयहृतिख्यातिपूर्णा विभाति ।

अर्थ–काली मिरच और पीपल ये प्रत्येक ३ तोले अजमायन और चित्रक ८ तोले, तीनों नमक ४ तोले, पीपरामूल ७ तोले, सोंठ और हरड १० तोले, बहेडा, आँवला, भिलाए, जीरा और चव्य ये प्रत्येक छः छः तोले; इंद्रजव २० तोले; इन सबका चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर लौंग का चूर्ण लेवे । सब को अदरख के रस की तथा चूका के रस की तीन २ भावना देवे, फिर दो दो मासे की गोली बनावे । यह लवंगामृत नामक वटी भक्षण करने से अग्नि को प्रदीप्त करती है तथा वृष्य (वीर्य बढानेवाली) और संपूर्ण सुख के देनेवाली है; तथा स्त्रियों के रजोदर्शन संबंधी व्याधियों का नाश करती है ॥

व्योषादि गुटी

त्रिकटु पिप्पलीमूलमेला लवणपञ्चकम् । द्विजीरधान्यकं नागकेसरं सारत्वक्समैः ॥ चुक्राह्वा तिंतिडीकाद्रिलवणं मद्यचार्द्रकम । निम्बुनीरेण तद्भाव्यं रोगहृद्वह्निदीपनम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, बडी इलायची, पाचों नमक, जीरा, काला जीरा, धनिया, नागकेशर, कत्था, दालचीनी, चूका, इमली और सैंधानमक, ये समान समान भाग लेके चूर्ण करे । फिर अदरख और नींबूके रस की भावना देवे । यह व्योषादि वटी रोगनाशक और अग्निदीप्त करनेवाली है ॥

हरीतक्यादि वटी

हरीतकी हरिहरतुल्यषड्गुणा चतुर्गुणा चतुरविशालपिप्पली । चित्रकं वरदवैकसैन्धवं रसायनं कुरु नृप वटिं वह्निदीपनीम् ॥

अर्थ—हरड की छाल ६ भाग, तथा पीपल और गजपीपल ४ भाग, चित्रक १ भाग और सैंधानमक १ भाग; ये सब एकत्र कर गोली बनावे। यह अग्नि को प्रदीप्त करनेवाली तथा रसायन है॥

अमृतहरीतकी

तक्रे सुसंस्वेद्य शिवाशतानि तद्बीजमुद्धृत्य च कौशलेन। षडूषणं पञ्च पटूनि हिङ्गुक्षारावजाजीमजमोदकं च॥ षडूषणादिस्त्रिवृदर्धभागं गणे प्रदेयं पटगालितस्य। विभाव्य चुक्रेण रजांस्यमीषां क्षिपेच्छिवां बीजनिवासगर्भे॥ समूह्य घर्मेषु विशोष्य तासां हरीतकीमन्यतमां निषेवेत्। अजीर्णमन्दानलजाठरामयान्समूलशूलग्रहणीगुदाङ्कुरान्॥ विबन्धमानाहरुजो जयत्यसौ स आमवातावमृता हरीतकी।

अर्थ—मोटी २ बडी हरड १०० लेकर उन को छाछ में भिगो देवे; फिर उन को अग्निपर रखके पचावे जब नरम हो जावें तब चतुराई से उन की गुठली निकाल डाले और पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक की छाल, सोंठ, मिरच, नमक, सुहागा, सैंधानमक, बिडनमक, संचरनोन, हींग, जवाखार, जीरा और अजमोद ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे और निसोथ छः मासे लेवे। इन सब को कूटपीस कपड़छान चूर्ण कर लेवे। फिर इस को चूका को रस की भावना देके पूर्वोक्त चिरी हुई हरडों में भर देवे और उन को डोरे से बांधके सुखाय देवे। इन में से १ हरड नित्य खाय तो अजीर्ण, मंदाग्नि, उदररोग, शूल, संग्रहणी, बवासीर, विडबंध, अफरा, वादी, और आमवात इन का नाश करे। इस को अमृतहरीतकी अथवा तक्रहरीतकी कहते हैं॥

चित्रकगुड

वह्नेर्द्विपञ्चमूलस्य क्वाथे पलशतद्वये। अमृताया रसस्यैकं पूतेऽस्मिन्नभयाढकम्॥ पचेद् गुडतुलां दत्त्वा यावदापाकलक्षणम्। अन्येद्युस्तु सुशीतेऽस्मिन्मधुनः कुडवद्वयम्॥ प्रत्येकं स्याद्यवक्षाराच्छुक्तिस्तस्मिन् रसायने। उत्तमं कथितं पुंसामाश्विभ्यामग्निवृद्धये॥

जीर्यन्त्यपि च काष्ठानि कासश्वासकृमिक्षयान् ।
गुल्मोदरार्शःकुष्ठानि सान्त्रवृद्धीनि हन्ति च ॥
योगैः शतैरप्याजितान् त्र्यहाज्जयति पीनसान् ।

अर्थ–चित्रक और दशमूल का काढा ८०० तोले और गिलोय का रस २५६ तोले तथा हरड़ की छाल का चूर्ण २५६ तोले और गुड ४०० तोले; इन सब को कढाई में भर चूल्हे पर चढायके पाक करे । जब पाक हो जावे तब उतारके धर लेवे । फिर दूसरे दिन इस में ३२ तोले सहत और जवाखार २ तोले मिलायके सब को एकत्र करे यह उत्तम चित्रकगुड अश्विनीकुमार ने पुरुषों की अग्निवृद्धि करने के वास्ते कहा है। इस को भक्षण करके काष्ठभी खाय ले वोभी पचजावे तथा श्वास, खाँसी, कृमि, क्षय, गोला, उदर, बवासीर, सर्व प्रकार के कुष्ठ और अंडवृद्धि इन का नाश करे तथा तीन दिन में पीनस रोग को दूर करे ।

द्राक्षादियोग

विदह्यते यस्य तु भुक्तमात्रं दह्यन्ति हृत्कोष्ठगता मलाश्च ।
द्राक्षासितामाक्षिकसंप्रयुक्ता लीढ्वाभयां वाससुखं लभेच्च ॥

अर्थ–जिस प्राणी के भोजन करने के उपरांत पेट में जलन होवे और कोष्ठ तथ हृदय में दाह होय वह दाख, खांड, सहत और हरड़ इन को भक्षण करे तो सुखी होवे ॥

यवागू

चित्रकचविकानागरभागाभ्यधिकाग्रकैर्यवागूः स्यात् ।
गुल्मानिलशूलहरी सचित्रदा वह्निजननी च ॥

अर्थ–चित्रक १ भाग, चव्य २ भाग और सोंठ ३ भाग लेवे इन की यवागू बनावे । यह गुल्म, वादी और शूल इन को नाश करे तथा अग्नि प्रदीप्त करे । यह यवागू आश्चर्यकारक है ॥

क्रव्यादकल्क

एलालवङ्गमरिचं कृष्णाशुक्तिसमन्वितम् । चुक्रनागरसिन्धूत्थशूकं लवणपञ्चकम्॥एषां चूर्णं वस्त्रपूतं क्रव्यादीनतिरिच्यते ।

अर्थ–इलायची, लौंग, काली मिरच, सीप की भस्म, चूका, सोंठ, सैंधानमक, जवाखार और पांचो नमक इन का कपडछन चूर्ण करे। यह क्रव्याद रस के समान गुण करनवालो है ॥

क्षारयोग

द्वौ क्षारौ टङ्कणं सूतं लवङ्गं लवणत्रयम् । पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरीचं पलसंमितम् ॥ कर्षमेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । अर्कदुग्धस्य दातव्या भावनाः सप्तवासरम् ॥ अन्धमूषागजपुटे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् । ततो लवङ्गं मरिचं स्फटिकानां पलं पलम् ॥ सर्वं संमर्द्य सुदृढं दृढभाण्डे निधापयेत् । सोयं गुञ्जाद्वयं खादेद्भुक्तं द्रावयति क्षणात् ॥ पुनर्भोजनवाञ्छां च जनयेत्प्रहरोपरि । आममांसं द्रावयति श्लेष्मरोगनिकृन्तनः ॥

अर्थ—सज्जीखार और जवाखार, सुहागा, पारा, लौंग, सैंधानमक, बिडनमक, कचियानमक, पीपल, गंधक, सोंठ, और मिरच ये प्रत्येक चार२ तोले तथा सींगियाविष १ तोले; इन सब का बारीक चूर्ण करके आक के दूध की ७ भावना देवे । फिर अंधमूषा में रखके गजपुट में फूंक देवे। जब शीतल हो जावे तब निकास ले फिर लौंग, कालीमिरच, तथा फिटकरी इन का चार २ तोले चूर्ण करके उस में मिलाय देवे फिर सब को खरल करके उत्तम पात्र में भरके रख देवे इस में से दो रत्ती की मात्रा खाने को देय तो एक क्षणभर में भोजन करे हुए को भस्म कर देवे तथा फिर भोजन करने की इच्छा उत्पन्न करे तथा कच्चे मांस को द्रवरूप कर देवे और कफरोग के शमन करता है ॥

अग्निमुखरस

सूतं गन्धं विषं तुल्यं मर्दयेदार्द्रकद्रवैः । अश्वत्थचिञ्चापामार्गक्षारक्षारौ च टङ्कणम् ॥ जातीफलं लवङ्गं च त्रिकटु त्रिफलासमम् । शङ्खक्षारं पञ्चपलं हिङ्गुजीरं द्विभागकम्॥ मर्दयेदम्लयोगेन गुञ्जामात्रा वटी कृता॥ पाचनी दीपनी सद्यो जीर्णशूलविषूचिकाः ॥ हिक्कां गुल्मं चोदरं च नाशयेन्नात्र संशयः । रसेन्द्रसंहितायाश्च नाम्ना वह्निमुखो रसः ॥

अर्थ—पारा, गंधक और सींगिया विष इन को अदरख के रस में खरल करे फिर पीपल, इमली, ओंगा इन का खार, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, जायफल, लौंग,

सोंठ मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आँवला ये समान भाग लेवे शंख की भस्म ९ पल लेवे, हींग और जीरा दो दो पल लेवे इन सब को नींबू के रस में खरल कर एक २ रत्ती की गोली बनावे यह पाचन करता है, जठराग्नि को दीपन करता है, तत्काल अजीर्ण, शूल, विषूचिका, हिचकी, गोला, उदर इन को नष्ट करता है इस में संदेह नहीं है यह **वह्निमुखरस** रसेन्द्रसंहिता में लिखा है ॥

अजीर्णारिरस

शुद्धं सूतं गन्धकं च पलमानं पृथक् पृथक् । हरीतकी च द्विपला नागरास्त्रिपलः स्मृतः ॥ कृष्णा च मरिचं तद्वत्सिन्धूत्थं त्रिपलं पृथक् । चतुःपला च विजया मर्द-येन्निम्बुकद्रवैः ॥ पुटानि सप्त देयानि घर्ममध्ये पुनः पुनः । अजीर्णारिरयं प्रोक्तः सद्यो दीपनपाचनः ॥ भक्षयेद्द्विगुणं भक्ष्यं पाचयेद्रेचयेदपि ।

अर्थ—पारा शुद्ध, गंधक शुद्ध दोनों चार २ तोले लेवे; हरड ८ और सोंठ १२ तोले पीपल, काली मिरच, सेंधानमक ये प्रत्येक बारह २ तोले और भांग १६ तोले इन सब का बारीक चूर्ण कर नींबू के रसके धूप में धरके सात पुट देवे । यह **अजीर्णारि** रस दीपन पाचन है इस के भक्षण करने से प्राणी दूना भोजन करे और उस का पाचन करके रेचन भी करता है ॥

पाशुपतरस

कर्षं सूतं द्विधा गंधं त्रिभागं भस्म तीक्ष्णकम् । त्रिभिः समं विषं योज्यं चित्रकद्रवभावितम् ॥ द्विधा त्रिकटुकं योज्यं लवङ्गैला तु तत्समे । जातीफलं जातिपत्री चार्ध-भागमितं समम् ॥ तथार्धपञ्चलवणं स्नुह्यर्कौ वापि ति-त्तिणी। अपामार्गाश्वत्थ एषां लवणं च पलार्धकम्॥ टङ्कणं यावकक्षारं स्वर्जिकां हिंगुजीरकम्। हरीतकी सूतस्तुल्या मर्दयेदम्लयोगतः ॥ धूर्त्तबीजस्य भस्म तु स वै सप्तम-भागतः । रसः पाशुपतो नाम प्रोक्तः प्रत्ययकारकः ॥ गुंजामात्रा वटी कार्या सर्वाजीर्णविनाशिनी । तालमूलीत-

क्रयोगादुदरामयनाशिनी ॥ मोचरसेनातिसारं ग्रहणीं तक्रसैंधवैः । शूले नागरकं शस्तं हिंगुसौवर्चलान्वितम्॥ अर्शस्सु तक्रेण हिता पिप्पली राजयक्ष्मणि । वातरोगं निहंत्याशु शुंठी सौवर्चलान्विता ॥ गुडूची शर्करायोगात्पित्तरोगविनाशिनी ! पिप्पली क्षौद्रयोगेन श्लेष्मरोगं निकृंतति॥ अतः परतरा नास्ति धन्वन्तरमते वटी ।

अर्थ–शुद्ध पारा १ तोला, गंधक २ तोले तथा कांतिलोह की भस्म ३ तोले, इन सब की बराबर शुद्ध सींगिया विष लेवे सब को चित्रक के रस में खरल करे तथा सोंठ, मिरच और पीपल ये दो दो भाग, लौंग, इलायची दो दो भाग, जायफल और जावित्री ये एक २ भाग लेवे पाँचों नमक ५ तोले तथा थूहर, आक, इमली, ओंगा और पीपर वृक्ष इन का क्षार प्रत्येक दो दो तोले ले, सुहागा, जवाखार, सज्जीखार, हींग, जीरा और हरड ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सब का चूर्ण करके अम्लवर्ग की भावना देवे । फिर इस में धतूरे के बीजों की भस्म ७ भाग मिलाकर एक २ रत्ती के प्रमाण गोली बनावे । यह पाशुपत नामक रस तत्काल परचा देनेवाला है । यह संपूर्ण अजीर्णों का नाश करे तथा मूसली और छाछ इन के साथ उदर रोग पर, अतिसार में मोचरस के साथ, संग्रहणी में छाछ और सैंधे नमक के साथ, शूल रोग में सोंठ, हींग और संचर नमक के साथ, बवासीर में छाछ के साथ, क्षयरोग में पीपल के साथ, वादी में सोंठ और संचर नमक के साथ, पित्त के रोग में गिलोय और मिश्री के साथ, कफरोग में पीपल और सहत के साथ देना चाहिये । इस पाशुपतरस से बढके दूसरा उत्तम रस धन्वतरी के मत से नहीं है ॥

आदित्यरस

दरदं च विषं गन्धं त्रिकटु त्रिफलासमम् । जातीफलं लवङ्गं च लवणानि च पञ्च वै ॥ सर्वमेकीकृतं चूर्णमम्लयोगेन सप्तधा । भावयित्वा वटी कुर्याद्गुंजार्धप्रमिता बुधैः ॥ रसो ह्यादित्यसंज्ञोयमजीर्णक्षयकारकः । भुक्तमात्रं पाचयति जठरानलदीपनः ॥

अर्थ–हींगलू, विष, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आँवला, जायफल लौंग, रेह का नमक, सैंधानमक, सञ्चरनमक, कचियानमक, कालानमक, इन सब को एकत्र कर अम्लवर्ग की सात भावना देवे फिर चार २ रत्ती की गोली बनावे । यह

आदित्य नामक रस अजीर्ण का नाशक है तथा जो खाय उसी को पचावे तथा अग्नि को प्रदीप्त करता है ॥

हुताशनरस

एकं च दिग्द्वादशभागमानं योज्यं विषं टङ्कणमूषणं च।
हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफवातहंता ॥

अर्थ–सींगियाविष १ भाग, सुहागा ८ भाग और काली मिरच १२ भाग लेवे सब को एकत्र कर चूर्ण करे और जल से घोटके गोली बनावे यह हुताशन नामक रस अग्नि की वृद्धि करे तथा कफ वादी के रोगों को नष्ट करे ॥

अजीर्णकण्टकरस

शुद्धसूतविषगन्धकं समं तुल्यभागमरिचं च चूर्णितम्।
मर्दयेत्तु बृहतीफलद्रवैरेकविंशतिविभावितं पुनः ॥
गुञ्जिकात्रयमिदं सुभक्षितं सद्य एव जठराग्निवर्धनम्।
एष कण्टकरसो विषूचिकाजीर्णमारुतगादान्निहन्ति च ॥

अर्थ–शुद्धपारा, शुद्धविष, शुद्धगंधक, तीनों समान भाग लेवे तथा काली मिरच सब के समान लेवे। इन सब का चूर्ण कर कटेली के फल के रस की २१ भावना देवे फिर तीन २ रत्ती की गोली बनावे, एक गोली नित्य खाय तो अग्नि की वृद्धि करे। यह अजीर्णकंटकरस हैजा, अजीर्ण और वादी के रोगों को दूर करे ॥

रामबाणरस

पारदामृतलवङ्गगन्धकं भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम्। तत्र
जातिफलमर्धभागिकं तिन्तिणीफलरसेन मर्दितम्॥ वह्नि-
मांद्यदशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रसः। संग्र-
हग्रहणिकुम्भकर्णयोः सामवातखरदूषणं जयेत् ॥ दीयते
तु चणकानुमानतः सद्य एव जठराग्निदीपनः। रोचनो
कफकुलान्तकारकः श्वासकासवमिजन्तुनाशनः ॥

अर्थ–पारा, सींगिया विष, लौंग, गंधक ये समान भाग ले तथा काली मिरच २ भाग और जायफल आधा भाग। सब को एकत्र कर इमली के रस में खरल करे यह रामबाणरस की चना के समान गोली बनायके देवे यह मंदाग्निरूप रावण, संग्र-

हणीरूप कुंभकर्ण, आमवातरूप खरदूषण को नष्ट करे, तत्काल जठराग्नि को दीपन करे, रुचि प्रगट करे, कफ रोग, श्वास, खांसी, वमन और कृमिरोग इनको नष्ट करे॥

दूसरा प्रकार

त्रिनिष्कं शुद्धजेपालं विषं गन्धेश टङ्कणम्। भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा भूयो वटकसाधितः॥ रामबाणरसः ख्यातो द्विगुंजः श्लेष्मवात-हा। अजीर्णाध्मानविष्टम्भशूलेषु श्वासकासयोः॥

अर्थ–शुद्ध जमालगोटा ४ मासे तथा सींगियाविष, गंधक और पारा ये एक एक मासे सब को एकत्र कर भांगरे के रस में खरल करे इस में से दो दो रत्ती की गोली बनावे यह कफ, वादी, अजीर्ण, अफरा, विष्टंभ, शूल, श्वास, और खांसी इन का नाश करे॥

ज्वालानलरस

एलात्वक्गगनपुष्पाणामत्रोत्तराविवर्धिताः। मरीचं पिप्पली शुण्ठी चतुः पञ्चषडुत्तरा॥ द्रव्याण्येतानि यावंति तावद्धि सितशर्करा। चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमग्निसंदीपनं परम्॥ क्षारत्रयं सूतगन्धौ पंचकोलमिदं शुभम्। सर्वैस्तुल्या जया भ्रष्टा तदर्धं शिग्रुजा जटा॥ एतत्सर्वं जयाशिग्रुवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः। भावयेत्रिदिनं घर्मे ततो लघुपुटे क्षिपेत्॥ सप्तधार्द्रद्रवैर्घृष्टो रसो ज्वालानलो भवेत्। निष्कं च मधुना लिह्यानुपानं गुडनागरम्॥ हन्त्यजीर्णमतीसारं ग्रहणीमग्निमार्दवम्। श्लेष्महृल्लासवमनमालस्यमरुचिं जयेत्॥

अर्थ–इलायची १ दालचीनी २ अभ्रक भस्म ३ लौंग ४ काली मिरच ४ पीपल ५ सोंठ इस प्रकार सब औषध लेवे और सब के बराबर सपेद खाँड मिलावे सब को एकत्र करके चूर्ण तयार करे इस के सेवन करने से अग्नि दीपन हो, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, पारा, गंधक, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक की छाल और सोंठ ये सब समान भाग लेवे, सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर भुनी हुई भांग तथा भांग से आधी सहजने की जड लेवे, सब को खरल कर अरनी, सहजना, चित्रक,

और अदरख इन के रस में भिगोयके धूप में धर देवे, फिर उस को सराव संपुट में रखके लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब इस में अदरख के रस की सात भावना देवे यह **ज्वालानलरस** ४ मासे सहत में मिलाय कर देवे और ऊपर से सोंठ और गुड खवावे तो अजीर्ण, अतिसार, संग्रहणी, मंदाग्नि, कफ, हृल्लास, वमन, अलस, और अरुचि इन का नाश करे॥

चिन्तामणिरस

रसं गंधं मृतं शुल्बं मृतमभ्रं फलत्रिकम्। त्र्यूषणं जयपालं च समं खल्वे विमर्दयेत्॥ द्रोणपुष्पीरसं भाव्यं शुष्कं तद्वस्त्रगालितम्। चिन्तामणिरसो ह्येष अजीर्णे शंसते सदा॥ ज्वरमष्टविधं हंति सर्वशूलहरः परः। गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा आमवातहरः परः॥

अर्थ–पारा, गंधक, तामे की भस्म, अभ्रक की भस्म, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल और जमालगोटा ये सब समान भाग लेके गोमा के रस में खरल करे जब सूख जावे तब पीसके कपरछन कर लेवे यह **चिंतामणिरस** अजीर्ण पर कहा है यह आठ प्रकार के ज्वर, संपूर्ण शूल और आमवात इन का नाश करे इस रस की मात्रा दो रत्ती की है॥

पञ्चमूल्यादिघृत

पञ्चमूल्याभयाव्योषपिप्पलीमूलसैंधवम्। रास्नाक्षारद्वयाजाजीविडङ्गसठिभिर्घृतम्॥ शुक्तेन मातुलिंगस्य स्वरसेनार्द्रकस्य च। तक्रमस्तुसुरामण्डसौवीरकतुषोदकैः॥ काञ्जिकेन तु यत्पक्वं पीतमग्निकरं स्मृतम्। गुल्मशूलोदरश्वासकासानिलकफापहम्॥

अर्थ–पंचमूल, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, सैंधानिमक, रासना, जवाखार, सज्जीखार, जीरा, वायविडंग, साँठ की जड इन का काढा करके फिर घीको विजोरे का रस, भाँगरे का रस, छाछ, दही का जल, मद्य, गेंहू की काँजी, तुषों का काढा और काँजी इन सब को मिलायके पचन करावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे इस के सेवन करने से अग्नि की वृद्धि होवे तथा गोला, शूल, उदररोग, श्वास, खाँसी, वादी और कफ इन का नाश करे॥

दशमूलादिघृत

मरीचं पिप्पलीमूलं नागरं पिप्पली तथा। भल्लातक-
यवानी च विडंगं गजपिप्पली ॥ हिंगुसौवर्चलं चैव अ-
जाजीबिडधान्यकम् ।सामुद्रसैंधवं क्षारं चित्रकं वचया
सह ॥ एभिरर्धपलैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्। दशमू-
लरसे सिद्धं पयसाष्टगुणेन वा ॥ मंदाग्नेश्च हितं सिद्धं
ग्रहणीदोषनाशनम् । विष्टंभमामं दौर्बल्यं प्लीहानमपि
कर्षयेत् ॥ कासं श्वासं क्षयं वापि दुर्नामानं भगंदरम् ।
कफजान्हंति रोगांश्च वातजान् कृमिसंभवान् ॥ तान्
सर्वान्नाशयत्याशु शुष्कं दावानलो यथा ।

अर्थ–मिरच, पीपरामूल, सोंठ, पीपर, भिलाए, अजमायन, वायविडंग, गजपीपर, हींग, संचरनिमक, जीरा, विडनिमक, धनिया, समुद्रनिमक, सैंधानिमक, जवाखार, चीते की छाल और वच ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इन का काढा करके इसमें गौ का घी ६४ तोले, दशमूल का रस, दूध ये अठगुने मिलावे–फिर मंदाग्नि पर रखके सिद्ध करे यह संग्रहणी, विष्टंभ, आम, दुर्बलता, प्लीहा, श्वास, खांसी, क्षय, बवाशीर, भगंदर, कफ के रोग, कृमिरोग, इन को जैसे वन को अग्नि दहन करे है इस प्रकार नाश करे ॥

धान्यादिघृत

धान्यजीरकसंसिद्धं घृतमग्निविवर्धनम्।
रोचनं दोषशमनं वातपित्तविनाशनम् ॥

अर्थ–धनिया और जीरा इन के काढे में घी मिलायके सिद्ध करे यह अग्नि को बढावे रोचक तथा दोषनाशक है तथा बादी और पित्त इन को नाश करे ॥

अग्निघृत

पिप्पलीपिप्पलीमूलं चित्रकं गजपिप्पली। हिंगुचव्या-
जमोदा च पंचैते लवणानि च ॥ द्वौ क्षारौ हपुषा चैव
दद्यादर्धपलोन्मिता। दधिकांजिकसूक्तानि स्नेहमात्रस-
मानि च ॥ आर्द्रकस्वरसप्रस्थं घृतप्रस्थे विपाचयेत्।

एतदग्निघृतं नाम मंदाग्नीनां प्रशस्यते ॥ अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं तथा गुल्मोदरापहम् । नाशयेद्ग्रहणीदोषं श्वयथुं सभगंदरम् ॥ ये च बस्तिगता रोगा ये च कुक्षिसमाश्रयाः । सर्वांस्तान्नाशयत्याशु सूर्यस्तम इवोदितः ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, चित्रक, गजपीपल, हींग, चव्य, अजमोद, पांचों निमक, सज्जीखार, जवाखार, हौवेर ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इन का काढा करके अथवा कल्क करके इसमें दही, कांजी, सूक्त, घी और अदरख का रस ये प्रत्येक ६४ तोले मिलाय के मंदाग्नि पर चढायके पचन करे, ये अग्निनामक घृत मंदाग्नि को उत्तम है तथा बवासीर, गोला, जलंधर, संग्रहणी, सूजन, भगंदर, बस्ति और कूख इन के रोग इन सब को नाश करे जैसे सूर्योदयके होने से अंधकार का नाश होता है उसी प्रकार यह सब रोगों को नाश करे है ॥

शार्दूलकांजिक

पिप्पली शृंगवेरं च देवदारुं सचित्रकम् । चव्यं सबिल्वपेशी च अजमोदां हरीतकीम् ॥ महौषधिं यवानीं च धान्यकं मरिचं तथा । जीरकं चापि निहितं कांजिकं साधयेद्भिषक् ॥ एष शार्दूलको नाम कांजिकोग्निबलप्रदः । सिद्धार्थतैलसंभृष्टो दश रोगान्व्यपोहति ॥ कासं श्वासमतीसारं पांडुरोगं च कामलाम् । आमं च गुल्मशूलं च वातशूलं सवेदनम् ॥ अर्शांसि श्वयथुं चैव भुक्तपातं च शाश्वतम् । क्षीरपाकविधानेन कांजिकस्यापि साधनम् ॥

अर्थ–पीपर, अदरख, देवदारु, चीते की छाल, चव्य, बेलगिरी, अजमोद, हरड, सोंठ, अजमायन, धनिया, काली मिरच और जीरा, इन सब वस्तुओं को डालके कांजी सिद्ध करे तो यह शार्दूल नामक कांजी अग्नि और बल को बढावे. यदि इस को कडुए तेल में छोकके लेवे तो खांसी, श्वास, अतिसार, पांडुरोग, कामला, आम, गोले का शूल, वातशूल, बवासीर, परिणामशूल और सूजन इन को दूर करे कांजी को बनावे तो क्षीरपाक की विधि से बनावे ॥

विषूचिकादिकीसंप्राप्तिनिदान

सूचीभिरिव गात्राणि तुदन्संतिष्ठतेनिलः ।
यत्राजीर्णे च सा वैद्यैर्विषूचीति निगद्यते ॥

अर्थ–अजीर्ण में वादी-सूई के से चबका देह में करे उस को वैद्यों ने विषूची (हैजा) रोग कहा है इंग्रजी में इस को कौलेरा कहते हैं ॥

न तां परिमिताहारा लभंते विदितागमाः ।
मूढास्तामजितात्मानो लभंतेशनलोलुपाः ॥

अर्थ–इस विषूचीका रोग को परिमाण का भोजन करनेवाले और वैद्यशास्त्र के ज्ञाता नहीं प्राप्त होते, किंतु जो मूढ हैं और आत्मा जिन की वशीभूत नहीं तथा भोजन के लालची हैं वो प्राणी इस विषूचिका रोग को प्राप्त होते हैं ॥

विषूचिकाकेलक्षण

मूर्छातिसारो वमथुः पिपासा शूलभ्रमो द्वेष्टनजृंभदाहाः ।
वैवर्ण्यकंपौ हृदये रुजश्च भवंति तस्यां शिरसश्च भेदः ॥

अर्थ–मूर्च्छा, अतिसार, वमन, प्यास, शूल, भ्रम, जांघोंमें पीडा, जंभाई, दाह, देह का विवर्ण, कम्प, हृदय में पीडा और मस्तक में पीडा ये लक्षण हों उस को विषूचिका कहते हैं इसीको महामारी अथवा हैजा कहते हैं ॥

विलंबिका व अलसक इन की चिकित्सा

विलंबिकालसकयोरूर्ध्वाधः शोधनं हितम् ।
नालेन फलवर्त्या च तथा शोधनभेषजैः ॥
दंडाद्यलसकेप्युच्चैरयमेव क्रियाक्रमः ।

अर्थ–विलंबिका और अलसक इन दोनोंको क्रमसे वमन और विरेचन हितकारी है तथा फलवर्त्ती और शोधन देना हित है. दंडालसक परभी यही क्रिया जाननी चाहिये ॥

फलवर्त्तिवमिस्वेदं लंघनं चापतर्पणम् ।
विशेषादलसे कुर्याद्विषूच्यामतिसारवत् ॥

अर्थ–कपडे की बत्ती बनायके उस को रेचक औषधों में भिगोकर गुदा में रक्खे, वमन करावे, पसीने निकाले, लंघन करावे, अतृप्त करना, ये उपाय अलसरोगपर विशेष करके करे । बाकीके अतिसारोक्त यत्न करने चाहिये ॥

अलसककीनिरुक्ति

प्रयाति नोर्ध्वं नाधस्तादाहारो न विपच्यते।
आमाशये लसीभूतस्तेनासौ लसको मतः॥

अर्थ–जिस व्याधि में ऊपर और नीचे दोष न जावे तथा आमांश पचे नहीं वो दोष आमाशयमें लसी (लहस्सी)के समान होकर रहे उसको अलसक रोग कहते हैं॥

अलसक व दंडालसकलक्षण

कुक्षिरानह्यतेत्यर्थं प्रताम्येत्परिकूजति। निरुद्धो मारुतश्चैवं कुक्षावुपरि धावति॥ वातवर्चो निरोधश्च यस्यात्यर्थं भवेदपि। तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्गारौ तु यस्य च॥

अर्थ–कूख में और पेटमें अफरा हो, मोह होय, पीड़ासे पुकारे, पवन चलने से रुककर कुख में और कंठादि स्थानों में फिरे, मलमूत्र और गुदा की पवन रुके, प्यास बहुत लगे, डकार आवे ये लक्षण जिस में होय उस को अलसक रोग कहते हैं॥

वायुः कंपभ्रमानाहशूलादीन्प्रकरोति च। पित्तं ज्वरातिसारौ च दाहादीन्स्वेदनानि च॥ श्लेष्मांगगुरुताछर्दिवाक्संगष्ठीवनानि च। लुब्धास्ते लसको दोषाश्छर्द्यतीसारवर्जिता॥ कारकास्तत्रिशूलादेः स्रोतसः सनिरोधकाः। तिर्यग्गतास्तनुं स्तब्धा दंडवत्स्तंभयंति च॥ स दंडालसकस्त्याज्यः शीघ्रं देहविनाशकृत्।

अर्थ–इस दंडालसकरोगमें कफ, भ्रम, अफरा, और शूल आदि रोगोंको करती है। तथा पित्तज्वर, अतिसार, दाह, पसीने आना, कफ, देहका भारी होना, वमन, वाणीका रुकना, वारंवार थूकना, इनको करे, यदि वातादि दोष कुपित्त हो वमन और अतिसारको न करावे तो वो त्रिक स्थानमें शूल, और छिद्रोंका रुकना यह करे. तथा तिरछे मार्गमें प्राप्त हो देहको दंडक (लकडीके) समान देहको स्तंभित करदेवे. यह दंडालसक रोग तत्काल देहको नष्ट करे इसवास्ते वैद्य इस रोगीको त्याग देवे॥

विलंबिका लक्षण

दुष्टं च भुक्तं कफमारुताभ्यां प्रवर्तते नोर्ध्वमधश्च यस्याम्।

विलंबिकां तां भृशदुश्चिकित्स्यामाचक्षते शास्त्रविदः पुराणाः ॥

अर्थ–जिस मनुष्य के भोजन करा भया अन्न, कफ वातकरके दूषित होय ऊपर नीचे नहीं जाय अर्थात् वमन, विरेचन न होय, उस को वैद्यविद्या के जाननेवाले जिस की चिकित्सा नहीं ऐसा विलंबिका रोग कहते हैं। * कोई शंका करे कि अलसक और विलंबिका इन दोनों की वातकफ के प्रबल होने से ऊपर नीचे प्रवृत्ति होती है इन दोनों में भेद क्या है सो कहो। * उत्तर–अलसकमें शूल आदि घोर पीडाकर्त्ता रोग होते हैं और विलंबिका में नहीं हों इतनाही भेद है ॥

अजीर्णसें उत्पन्न हुए आम के कार्य

यत्रस्थमामं विरुजे तमेव देशं विशेषेण विकारजातैः।
दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणैरामसमुद्भवैश्च ॥

अर्थ–जिस ठिकानेपर आम रहता है उस ठिकानेपर जिस दोष से वह स्थान व्याप्त हो उस के लक्षण करके (पीडा, दाह, गौरव आदि) और आमजन्य विकारकरके (आमवातादिक) विशेष पीडा होती है। इससे जाना गया कि और ठिकानेपर थोडी पीडा होती है और (यत्र) इस सर्वनाम शब्द से कुपित भये वातादिकों के सदृश आम का कोई स्थान नहीं है ये दिखाया ॥

विषूची और अलसक इन के असाध्य लक्षण

यः श्यावदंतोष्ठनखोल्पसंज्ञो वम्यर्दितोभ्यंतरयातनेत्रः।
क्षामस्वरः सर्वविमुक्तसंधिर्यायान्नरोसौ पुनरागमाय ॥

अर्थ–जिस रोगी के दांत, नख, होठ काले पड जावे और संज्ञा जाती रहे वमन से पीडित होवे और नेत्र भीतर को बैठ जाय मन्द स्वर हो तथा हाथपैर की संधि ढीली पड जाय वो मनुष्य बचे नहीं, विलम्बिकास्वरूप से ही असाध्य है यह जैज्जट आचारी का मत है ॥

जीर्णआहारलक्षण

उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम् ॥

अर्थ–शुद्ध डकार आवे, शरीर मन का प्रसन्न होना, जैसा भोजन करा हो उस के सदृश मलमूत्र की भले प्रकार प्रवृत्ति होना, शरीर हलका होय परंतु कोष्ठ विशेष हलका हो, भूंख और प्यास लगे, यह भोजन पचने के उत्तर लक्षण होते हैं ॥

विषूचिका के उपद्रव

निद्रानाशोरतिः कंपो मूत्राघातो विसंज्ञिता।
अमी उपद्रवा घोरा विषूच्यां पंच दारुणाः॥

अर्थ-निद्रा का नाश, मन का न लगना, कम्प, मूत्र का रुकना, संज्ञा का नाश ये विषूचिका के घोर पांच उपद्रव हैं॥

विषूचिकाचिकित्सा

विषूच्यामतिवृद्धायां पाण्योर्दाहः प्रशस्यते।
गंधकं कुंकुमं वापि दद्यान्निंबुजलेन वा॥

अर्थ-विषूचिका अत्यंत बढने पर हाथोंमें दाग देवे अथवा गंधक वा केशर को नींबू के रस में मिलायके पीवे तो विषूचिका रोग दूर हो॥

लशुनाद्यचूर्ण

लशुनजीरकसैंधवसंचलं त्रिकटुरामठचूर्णमिदं समम्।
सपदि निंबुरसेन विषूचिकां हरति भो रतिभोगविचक्षणे॥

अर्थ-लहसन, जीरा, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, काली मिरच, पीपल, और हींग इन के चूर्ण को नीबू के रस में मिलायके खाय तो हे रतिभोगविचक्षणे! विषूचिका (हैजा) का नाश होवे॥

अपामार्गादियोग

जलपीतमपामार्गमूलं हन्याद्विषूचिकाम्।
सतैलं कारवेल्लांबु विधुनोति विषूचिकाम्॥

अर्थ-ओंगा की जड़ को जल में औटायके पीवे, अथवा करेले का रस तेल मिलायके पीवे तो विषूचिका रोग नष्ट होवे॥

बालमूत्रादिकाढा

बालमूत्रस्य निःक्काथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः।
विषूचिनाशनः श्रेष्ठो जठराग्निविवर्द्धनः॥

अर्थ-बछडे के मूत्र के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे, तो विषूचिका रोग नष्ट होवे और जठराग्नि वर्द्धित होवे॥

तक्रयोग

तक्रेण युक्तं यवचूर्णमुष्णं सक्षारमार्तिं जठरस्य हन्यात् ।
स्वेदो घटैर्वा बहुवाष्पपूर्णैरुष्णैस्तथान्यैरपि पाणितोयैः ॥

अर्थ–जौ के चूर्ण को छाछ में मिलाय गरम कर उस में जवाखार मिलायके पीवे उसी प्रकार गरम जल की वाफ अथवा शेक किंवा हाथों को सेकना ये सब उपचार विषूचिका रोग नाशक है ॥

बिल्वादिकाढा

बिल्वनागरनिःक्काथो हन्याच्छर्दिविषूचिकाम् ।
बिल्वनागरकैडर्यक्काथः स्यादधिको गुणैः ॥

अर्थ–वेलगिरी और सोंठ इन का काढा वमन, विषूचिका, इन का नाशक है तथा वेलगिरी और सोंठ तथा कायफर इन का काढा पहले काढे की अपेक्षा अधिक गुणकारी है ॥

यवपिष्टलेप

यवपिष्टजवक्षारलेपस्तक्रेणसंयुतः ।
उष्णीकृतो हरेत्सद्यो जठरार्तिं सुदुर्जयाम् ॥

अर्थ–जों का चून और जवाखार इन को छाछ में मिलायके औटावे फिर इस का सुहाता लेप करे तो कैसा ही उदरशूल हो वो तत्काल शांति होवे ॥

कुष्ठादिलेप

कुष्ठसैंधवयोः कल्कं चुक्रतैलसमन्वितम् ।
विषूच्यामर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम् ॥

अर्थ–कूठ, और सेंधानिमक, इन के चूर्ण को चूका के तेल में मिलायके मंदोष्ण कर अंग में लेप करे तो विषूचिका और खल्लीशूल इन को दूर करे है ॥

साधारणलेप

सरुग्वानद्धमुदरमम्लपिष्टैः प्रलेपयेत् ।
दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ॥

अर्थ–शूलयुक्त फूले हुए पेट पर खट्टे रस में दारुहलदी, हरड, कूट, शतावर, हींग और सैंधानिमक पीसके लेप करे तो शूल और पेट का फूलना दूर होवे ॥

लंवगादिचूर्ण

शाणद्वयं स्यात्तु लवंगमेलाजातीफलं कोलसुनागफेनम् ।
माषप्रमाणं सकलं विचूर्ण्य शाणं कवोष्णेन जलेन पीतम् ॥
विषूचिकां हंति सुदारुणां च शूलातिसारौ वमथुः प्रसक्तः ।

अर्थ–लौंग ८ मासे, इलायची और जायफल ये दोनों आधे २ तोले, अफीम एक मासे; इन सब का चूर्ण एकत्र करके गरमजल के साथ छः मासे सेवन करे तो दारुण विषूचिका, शूल, अतिसार और वांति इन का नाश करे ॥

पथ्यादिचूर्ण

पथ्यावचाहिंगुकलिंगभृंगसौवर्चलैः सातिविषैः सचूर्ण्य ।
सुखांबुपीतो विनिहंत्यजीर्णशूलं विषूचीं कसनं च सद्यः ॥

अर्थ–हरड, वच, हींग, कूडा की छाल, भांगरा, संचरनिमक, और अतीस इन के चूर्ण को सुहाते २ गरमजल के साथ पीवे तो अजीर्ण, शूल, हैजा, और खांसी इन को तत्काल दूर करे ॥

शंखद्राव

लवणानि तथा क्षाराः प्रत्येकं पंचभागिका । कासीसं टंकणं तुत्थं गंधकं निंबुकद्रवम् ॥ तिलापामार्गजं क्षारप्रत्येकं वेदभागिकम् । नवसागरसौराष्ट्रीसर्जिकानेत्रभागिका ॥ एतत्सर्वं समालोड्य भाव्यं जंबीरनीरतः। सरंध्रे नलिकायंत्रे यामयुग्मं विपाचयेत् ॥ शंखद्रावो भवेदेष सर्वदोषनिकृंतनः । लोहपाषाणशंखानां द्रावकोयं न संशयः ॥

अर्थ–पांचों निमक, तथा संपूर्णक्षार, ये प्रत्येक पांच२ भाग ले,हीराकसीस, सुहागा, नीला थोथा, गंधक, नीबू का रस, तिल,ओंगा, इन का खार प्रत्येक ४ भाग लेवे, नोसद्दर, फिटकरी, और सज्जीखार ये प्रत्येक दो २ भाग लेवे इन सब को एकत्रकर नीबू के रस में खरल करे, फिरनलिका यंत्र में भरके दो प्रहर पचावे तो यह शंखद्राव सिद्ध होवे यह संपूर्ण दोषों का नाश करे है, यह लोह, पत्थर, शंख इत्यादि जो वस्तु इस में डालो उसी का पानी कर देता है इस में संदेह नहीं है ॥

दालचिनीतैल

त्वक्पत्ररास्नागुरुशिग्रुकुष्ठैरम्लप्रपिष्टैः सवचाशताह्वैः ।
उद्वर्तनं खल्लिविषूचिकाघ्नं तैलं विपक्वं च तदर्थकारी ॥

अर्थ–दालचीनी, पत्रज, रास्ना, अगर, सहजने की जड़, कूट, वच, और शतावर इन सब को नीबू के रस में पीसके देह में मालिस करे अथवा तेल बनाय लेवे इस तेल-को देह में लगावे तो वादी और हैजा इन को नष्ट करै ॥

चुक्रतैल

पलं चुक्रं कुष्ठं पिचुयुगमितं सैंधवकणा तदर्धंप्रत्येकं करतलमितं जातिफलकम् । कटुं तैलं किंचित्कुडवमितिमग्नावधिशतं तदेतच्चुक्राद्यं शमयति विषूचीं च गदहम् ॥ कुष्ठसैंधवयोः कल्कं चुक्रतैलसमन्वितम् । विषूच्यां मर्दनं कोष्णं खल्लीशूलनिवारणम् ॥

अर्थ चूका ४ तोले, कूठ ४ तोले, नीम की छाल २ तोले, सैंधानिमक १ तोले, पीपल १ तोले, जायफल १ तोले, सरसों का तेल १६ तोले अथवा सर्व चूर्ण बूड जावे इतना तेल मिलायके सिद्ध करे इस को विषूचिका में लगावे तो नष्ट होवे–तथा कूठ और सैंधानिमक इन का कल्क और चूका का तेल डालके विषूचिका पर गरम करके मालिस करे तो वायु रोग तथा शूल इन को नष्ट करे ॥

अर्कादितैल

अर्कस्य च रसप्रस्थं प्रस्थं धत्तूरकस्य च । श्वेतस्नुहिरसप्रस्थं प्रस्थं सौभांजनाद्रसात् ॥ कुष्ठसैंधवयोः कल्कं पले द्वे द्वे प्रमाणतः । तैलप्रस्थं कांजिकेन पचन् मृद्वग्निना समम् ॥ खल्लीं विषूचिकां हंति पक्षाघातं च गृध्रसीम्

अर्थ–आक का दूध ६४ तोले, धतूरे का रस ६४ तोले, सपेद थूहर का रस ६४ तोले, सहजने का रस ६४ तोले, कूठ और सैंधानिमक इन का कल्क दो दो पल तेल ६४ तोले, और कांजी ८४ तोले सब को मिलाय के मंदाग्नि से पचावे जब तेल मात्र आय रहे तब उतारके लगावे तो यह खल्लीवात, विषूचिका, पक्षाघात और गृध्रसी इन का नाश करे ॥

तक्र

विषूच्यामतिवृद्धायां तक्रं दधिसमं जलम् ।
नारिकेरांबुपेयां वा प्राणत्राणाय योजयेत् ॥

अर्थ–अत्यंत बढी हुई विषूचिका में छाछ अथवा दही ले उस में समान भाग जल मिलाय ले अथवा नारियल के पानी से पेया करे और पीवे तो प्राणों की रक्ष होवे ॥

पानी

पिपासायां तथोत्क्लेशे लवंगस्यांबु शस्यते ।
जातीफलस्य वा शीतं शृतं भद्रघनस्य वा ॥

अर्थ–तृषा अथवा उतक्लेश इन में लौंग अथवा जायफल अथवा नागरमोथा इन का जल औटायके शीतल करके देवे ॥

विलंबिका व अलसिकाचिकित्सा

विलंबिकालसकयोरयमेव क्रियाक्रमः ।
अतएव तयोरुक्तं पृथङ्नैव चिकित्सितम् ॥

अर्थ–विलंबिका और अलसक इन पर विषूचिका के ऊपर जो चिकित्सा कही है वही इन दोनों में करे इन दोनों में विषूचिकारोगसे भिन्न चिकित्सा नहीं कही ॥

हस्तिकर्णयोग

हस्तिकर्णाश्च दंतश्च पिप्पलीकंदसंयुतः ।
पीता कोष्णेन तोयेन क्षिप्रं हन्याद्विषूचिकाम् ॥

अर्थ–हस्तिकर्णपलास की जड़ और हाथीदांत पीपल और प्याज इन को गरम जल में पीसके पीने को देवे तो विषूचिका का नाश होवे ॥

निंबुरसयोग

निंबूरसं चिंचिणिकासमेतं विषूचिकाशोषहरं कफं च ।
दुग्धेन पीतो यदि टंकणोसौ प्रशाम्यतेयं वमनं निरुध्यात् ॥

अर्थ–नींबू के रस में पुरानी इमली को मिलायके पीवे तो विषूचिका शोष और कफ इन का नाश होवे तथा दूध में सुहागा डालके पीवे तो विषूचिका तथा वमन करना बंद होवे ॥

करंजादिकषाय

करंजं निंबुशिखरीगुडूच्यर्जुनवत्सकैः ।
पीतः कषायो वमनात् घोरां हन्याद्विषूचिकाम् ॥

अर्थ–कंजे की छाल, नीम की लकडी, ओंगा की जड, गिलोय, कोह और कूडा की छाल इन का काढा देय तो वमन होकर विषूचिका नाश होवे ॥

उत्क्लेशलक्षण

उत्क्लिश्यान्नं न निर्गच्छेत्प्रसेकष्ठीवनेरितम् ।
हृदयं पीड्यते चास्य तमुत्क्लेशं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ–वमन होने की सी भ्रांति तथा मुख में से पानी छूटे, वारंवार थूके, हृदय दूखे परंतु वमन न होवे उस को उत्क्लेश कहते हैं ॥

कटुत्रयरस

कटुत्रयं जीरकहिंगुसिंधूरसोनगंधं च समं विमर्द्य ।
निंबुद्रवेणाशु निहंति तूर्णं विषूचिकां दुष्टविलंबिकां च ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, सैंधानिमक, लहसन और गंधक ये संपूर्ण वस्तु समान भाग लेके पीसे कल्क करके नींबू के रस से देवे तो दुष्ट विषूचिका और विलंबिका इन का नाश होवे ॥

व्योषादिअंजन

व्योषं करंजस्य फलं हरिद्रे मूलं समावाप्य च मातुलुंग्याः ।
छायाविशुष्का गुटिकाः कृतास्ता हन्युर्विषूचीं नयनांजनेन ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, कंजे के बीज, दारुहळदी, हलदी, और बिजोरे की जड़ इन सब को कूट पीस गोली बनावे उस को छाया में सुखाय के धर रक्खे फिर जल में घिसके नेत्रों में अंजन करे तो विषूचिका का नाश होय ॥

अपामार्गाद्यंजन

अपामार्गस्य पत्राणि मरीचानि समानि च ।
अश्वस्य लालया पिष्टान्यंजनाद्धंति सूचिकाम् ॥

अर्थ–ओंगा के पत्ते और काली मिरच ये दोनों समान भाग लेवे दोनों को घोडे की लार में पीसके अंजन करे तो विषूचिका (हैजे की बिमारी) दूर होवे ॥

बिल्वादिअंजन

बिल्वस्य मूलं शिरसस्य मूलं फलं करंजस्य नतं सुराह्वम्।
फलत्रयं व्योषनिशाद्वयं च बस्तस्य मूत्रेण सुसूक्ष्मपिष्टम्॥
भुजंगलूतोदरवृश्चिकादिविषूचिकाजीर्णहरं ज्वरघ्नम्।

अर्थ–बेल की जड, सिरस की जड, कंज के बीज, तगर, देवदारु, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ,मिरच, पीपल,हरदी, दारुहरदी इन सब को बकरे के मूत्र में खरल कर-के गोली बनावे इस को जल में घिसके अंजन करे तो सांप, लूता, बीछू, इत्यादि-कों का विष तथा जलंधर, विषूचिका, अजीर्ण और ज्वर इन का नाश होवे॥

अजीर्णादिकों पर पथ्य

श्लैष्मिके वमनं पूर्वं पैत्तिके मृदुरेचनम्। वातिके स्वेदनं वाष्यं पथ्यापथ्यं हितं हि यत्॥ नानाप्रकारो व्यायामो दीपनानि लघूनि च। बहुकालसमुत्पन्ना मुद्गलोहित-शालयः॥ विलेपी लाजमंडश्च मंडो मुद्गरसस्तथा। ए-णो बर्हिः शशो लावः क्षुद्रमत्स्याश्च सर्वशः॥ शालिं च शाकं वेत्राग्रं वास्तुकं बालमूलकम्। लशुनं वृद्धकू-ष्मांडं नवीनं कदलीफलम्॥ सोभांजनं पटोलं च वा-र्त्ताकं ललदंबुजम्। कर्कोटकं कारवेलं बार्हतं च महा-र्द्रकम्॥ प्रसारणी काकमाची चांगेरी सुनिषण्णकम्। धात्रीफलं नागरं च दाडिमं यवपर्पटाः॥ अम्लवेतस-जंबीरमातुलुंगानि माक्षिकम्। नवनीतं घृतं तक्रं सौ-वीरकतुषोदकम्॥ धान्याम्लं कटुतैलं च रामठं लव-णार्द्रकम्। यवानी मरिचं मेथी धान्यकं जीरकं दधि॥ तांबूलं तप्तसलिलं कटुतिक्तौ रसस्तथा। मन्दानलेप्य-जीर्णे च पथ्यमेतन्नृणां भवेत्॥

अर्थ–मंदाग्नि, अजीर्ण (विषूचिका और भस्मकरोग) ये यदि कफजन्य होवे तो प्रथम वमन देवे, और पित्तजन्य होय तो नरम विरेचन देवे। और वात जनित

होय तो स्वेदन कर्म करे, ये यथा कालमें हितकारी होते हैं। तथा अनेक प्रकार के व्यायाम (मेहनत) दीपन, हलके और बहुत दिन के लाल चावल, बिलेपी, खीलों का माँढ, मंड (चावल आदि का) मूंग का रस (पानी) (मद्य) तथा कालाहरिण, मोर, शशा, लवा, सब प्रकार की छोटी मछली, शालिंच शाक, वेत की आगे की कोपल, वथुआ, नरम २ मूली, लहसन, पुराना पेठा, नवीन केला की फली (गहर) सौभांजन (सहजना,) परवल, वैगन, (खसका सुगंधित जल) कमल, ककोडा, करेला, कटेरीका फल, अदरख, प्रसारणी, मकोय, लोनिया का साग, चौपतिया, आवले, सोंठघाडकी, (नारंगी) अनार, (क्षार) जों, पित्तपापडा (पापड) अमलबेत,जंभीरी, बिजोरानिंबू, सहत, मक्खन, घृत, छाछ, कांजी, तुषोदक, धान्याम्ल, (धान की कांजी) कडवा तेल, हींग, निमक और अदरक, अजमायन, काली मिरच, मेथी, धनिया, जीरा, दही, पान, गरम,जल कडुए और चरपरे रस, मंदाग्निपर और अजीर्णपर ये पदार्थ पथ्यकारी हैं ॥

अपथ्य

विरेचनानि विण्मूत्रवातवेगविधारणम् । अतिवेलं चाध्यशनं जागरं विषमाशनम् ॥ रक्तस्रुतिं शिबिधान्यं मत्स्यं मांससुपोदिकाम् । जलपानं च विष्टंभं जांबवं सर्वशालुकम्॥ कूर्चिकां मोरटं क्षीरं किलाटं च प्रपानकम् । लालनं सस्यतद्वालस्नेहनं दुष्टवारि च ॥ विरुद्धासात्म्यपानानां विष्टंभीनि गुरूणि च । अग्निमांद्यध्यजीर्णे च सर्वाणि परिवर्जयेत् ॥

अर्थ– विरेचन, मल, और मूत्र इन के वेग का धारण करना, भोजन करने के अनंतर तत्काल फिर भोजन करना, जागना, विषमाशन, (विषम भोजन करना) रुधिर का निकालना, दोदल (जैसे मूंग मोठ चना आदि) का खाना, मछली, मांस, पोई का साग, जल पीना, विष्टंभकारी (जिसे अफरा होवे ऐसे पदार्थ) पिसा अन्न (चून मैंदा आदि) जामुन, सर्व प्रकार के कमलों के कंद, कूर्चिका (चावलों को घी में औटाना) सात दिन की व्याही हुई गौ का दूध, किलाट (फटे दूध का खोहा) पना, चिरोजी (तालफल की मिंगी, धनिया, नेत्रवाला, स्नेहपदार्थ) वा स्नेहन कर्म (बुरापानी) विरुद्ध और असात्म्य ऐसे अन्न, तथा जल, विष्टंभी और भारी पदार्थ, ये अग्निमांद्य और अजीर्णरोग पर त्याग देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार*

मृतसूताभ्रलोहार्कविषमं गंधकं समम् । सर्वतुल्यांशभल्लातफलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ द्रवैः सूरणकंदोत्थैः खल्वे मर्द्यं दिनत्रयम् । माषमात्रां लिहेदाज्यैरसश्चार्शांसि नाशयेत् ॥ रसोनित्योदितो नाम गुदोद्भवकुलांतकः। हस्ते नाभौ मुखे पादे गुदे वृषणयोस्तथा ॥ शोथो हृत्पार्श्वशूलं च यस्यासाध्यार्शसांहितः । असाध्यस्यापि कर्तव्या चिकित्सा शंकरोदिता ॥

अर्थ–पारे की भस्म, अभ्रक, लोहभस्म, तामे की भस्म, सिंगिया विष, और गंधक ये समान भाग लेवे सब की बराबर भिलाए का चूर्ण मिलावे सब को एकत्र पीसके जमीकंद के रस से तीन दीन खरल करे इस को १ मासे घी के साथ देवे यह नित्योदितरस बवासीर का नाश करे तथा हाथ, पैर, नाभि, मुख, गुदा, और वृषण इन की सूजन और हृदय तथा पसवाडे इन का शूल और असाध्य बवासीर इन को नाश करे तथा असाध्य बवासीर चिकित्सा शंकरोदित करनी चाहिये ॥

नित्योदितरस

विषरविगगनायः सूतगंधं समांशं समहुतभुजद्रावैर्भावितं सप्तवारम् । प्रबलगुदजकीलं हंति नित्योदितोसौ मलहति मलबंधे माषमात्रःससर्पिः।

अर्थ–सिंगिया विष, तामे की भस्म, अभ्रक, लोहभस्म, शुद्ध पारा, और गंधक ये समान भाग लेवे सब को कूट पीस चित्रक के रस की सात भावना देवे यह नित्योदितरस बवासीर और मलबंध इन पर एक मासे भर घी के साथ देवे तो बवासीर का नाश करे ॥

अर्शकुठार

भागः शुद्धरसस्य भागयुगुलं गंधस्य लोहाभ्रयोः षट्बिल्वाग्निहृत्र्यूषणाभयरजोदंती च भागैः पृथक् । पंच स्युः स्फुटटंकणस्य च यवक्षारस्य सिंधूद्भवा भागाः पंच गवांजलेषु विमले द्वात्रिंशदेतत्पचेत् ॥ स्नुकदुग्धं च गवां जलावधिशनैः पिंडीकृतं तद्भवेद्वौ माषौ गुदकीलकाननजटाच्छेदे कुठारो रसः ।

---

* यह विषय बवासीर रोगमें लिखने का था ।

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, लोहभस्म और अभ्रकभस्म ६ भाग, बेलगिरी, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरीतकी और जमालगोटा ये प्रत्येक एक २ भाग लेवे सुहागा, जवाखार, सैंधानिमक ये पांच २ भाग लेवे सब को एकत्र कर गोमूत्र ३२ भाग में डालके पचावे तथा थूहर का दूध३२ तोले डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब दो दो मासे की गोली बनावे यह रस गुदा के अंकुरों को तोडने में कुठारी के समान है इसी से इस रस को वैद्यजन अर्शकुठार कहते हैं ॥

षडाननरस

वैक्रांतताम्राभ्रकगंधकानां रसस्य कांतस्य समानभागम् ।
चूर्णं भवेत्तेन षडाननोयमर्शोविनाशाय च वल्लमात्रम् ॥

अर्थ-वैक्रांतमणी, तांमे की भस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध गंधक, पारा और कांत-लोह की भस्म ये सब समान भाग लेवे सब को घोट लेवे तो यह षडाननरस बने इस को बवासीर दूर करने के वास्ते तीन रत्ती के प्रमाण देवे ॥

पीयूषसिंधुः

शुद्धं सूतं षड्गुणं जीर्णगंधं काचे पात्रे वालुकायंत्रयोगात् ।
भस्मीकृत्वा योजयेदत्र हेम तत्तुल्यांशं भस्म लोहाभ्रयोश्च ॥
सूतस्तुल्यं गंधकं मेलयित्वा खल्वे मर्द्यं सूरणस्य द्रवेण ।
दंती मुंडी काकमाची हलाख्या भृंगार्कौ निः सप्तमेषां रसेन ॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिघस्रं चूर्णं कृत्वा माषमात्रं ददीत ।
अर्शोरोगे दारुणे च ग्रहण्यां शूले पांड्वामम्लपित्ते क्षये च ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चानुपानं प्रशस्तं रोगोक्तं वा माषषट्कप्रयोगात् ।
सर्वे रोगा यांति नाशं जरायां वर्षं द्वंद्वसेवनीयं प्रयत्नात् ॥
पथ्यं साम्लं चाम्लयोगादियोषिद्वर्ज्या देयं सर्वरोगप्रशांत्यै ।
पुष्टिं कांतिं वीर्यवृद्धिं सदा च सेवायुक्तो मानवः संलभेत ॥

अर्थ-शुद्ध पारे को लेकर वालुकायंत्र में षड्गुण गंधक जारण करे फिर उस पारे के समान भाग सुवर्णभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म और गंधक ये मिलायके जमीकंद के रस में-दंती, गोरखमुंडी, मकोय, मद्य, भांगरा, आक और चित्रक इन प्रत्येक के रस की सात २ भावना देवे फिर गोला बनाय के तीन दिन धान की राशि में दाबके धर देवे चौथे दिन निकालके इस में से १ मासे की मात्रा देवे यह उग्र बवासीर का

रोग, संग्रहणी, शूल, पांडुरोग, अम्लपित्त और क्षय इन में सहत के साथ देवे। अथवा रोगोक्त अनुपान के साथ देवे। यह छः मासे भक्षण करने से संपूर्ण रोग तथा बुढापा दूर होवे। इस वास्ते प्रयत्न से सेवन करना चाहिये इस के सेवन करनेवाले को खटाई और स्त्रीसंग इन को त्यागके और जो सात्म्य होवे सो देवे तो पुष्टि, कांति और वीर्य वृद्धि ये प्राप्त होवे॥

चक्रबन्धरस

दिनत्रयं गंधसमं रसेंद्रं विमर्दयेच्छ्वेतवसुद्रवेण। ताम्रस्य चक्रेण निबध्य वह्निहरीतकीभृंगरसैर्विमर्द्य॥ कटुत्रयेणापि ददीत गुंजाद्वयं मरुत्पायुरुहप्रशांत्यै॥चक्रबंधरसोयं हि सर्वरोगोपकारकः। एतैस्तु गंधकेनैकं पुटं चैव प्रदापयेत्॥

अर्थ—पारा और गंधक इन दोनों को सपेद पुनर्नवा के रस में तीन दिन खरल करे फिर इस में तामे की भस्म डालके खरल करे तो चक्र के समान पारा बद्ध होवे फिर उस को चित्रक, हरड, भांगरा, सोंठ, काली मिरच और पीपल इन के रस में तथा काढे में खरल कर दो दो रत्ती की गोली बनावे १ गोली वातार्श (वादी की बवासीर) दूर करने को देवे। यह चक्रबंध रस सर्व रोगनाशक है इस में गंधक की एक पुट देनी चाहिये॥

पर्पटीरस

रसेंद्रगंधं सुदृढं विमर्द्य सर्पिर्युतं तत् द्विगुणं च बोलम्।
तावत्क्षिपेल्लोहमये द्रवं स्यात् क्षिपेच्च रंभादलयुग्ममध्ये॥
ततो रसः पर्पटिकाभिधानः समस्तदुर्नामनिकृंतनः स्यात्।
संसेवितो वल्लचतुष्कमात्रः शोथातिसारंवमिरंगसादनम्॥
तृष्णाज्वरारोचकवह्निमांद्यं गुदस्य पाकं हृदयं हि शूलम्।

अर्थ—पारा, गंधक इन दोनों की कजली करके इस में घी और बीजा बोल का दूना चूर्ण डालके सब को लोह के पात्र में भरके अग्नि पर चढावे और पतला करे फिर इस को केले के पत्ते पर ढाल देवे और तत्काल दूसरे पत्ते से ढकके गौ के गोबर से दाब देवे। यह पर्पटीरस चार वल्ल (१२ रत्ती) अनुपान के साथ देवे तो संपूर्ण प्रकार की बवासीर, सूजन, अतिसार, वांति, अंगों का रह जाना, प्यास, ज्वर, अरुचि, मंदाग्नि, गुदापाक, हृदय का शूल, संपूर्ण बवासीर के विकार और शूल इन को नाश करे॥

भल्लातकावलेह

चित्रकं त्रिफला मुस्तं ग्रंथिकं चविकामृता । हस्तिपिप्पल्यपामार्गौ दंडोत्पलकुठेरकः ॥ एषां चतुःपलान्भागान् जलद्रोणे विपाचयेत् । भल्लातकसहस्रे द्वे छित्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥ तत्र पादावशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिषक् । तुलार्धं तीक्ष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥ त्र्यूषणं त्रिफला वह्निसैंधवं बिडमौद्भिदम् । सौगंधिकविडंगानि पलिकांशानि कल्पयेत् ॥ कुडवं वृद्धदारोश्च तालमूल्यास्तथैव च । सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णीकृत्वा विनिःक्षिपेत् ॥ सिद्धे सति प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् । प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥ अर्शांसि ग्रहणीदोषं पांडुरोगमरोचकम् । कृमिगुल्माश्मरीनाहान् शूलं चापि व्यपोहति ॥ भवेच्छुक्रोपमं चक्षुर्वलीपलितनाशनम् । रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ—चीते की छाल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, पीपरामूल, चव्य, गिलोय, गजपीपल, ओंगा की जड, कमल, सहदेई की जड और आजबला ये प्रत्येक सोलह २ तोले लेवे सब को २०४ तोले जल में डाले तथा २००० भिलाओं को तोड् के उस में गेरे फिर लोहे के कढाव में चढायके चतुर्थांश काढा करे इस में तीक्ष्ण (खेरी) लोह की भस्म २०० तोले डाले; घी ३२ तोले तथा त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक, सैंधानिमक, विडनिमक, सोरा, संचरनिमक, और वायविडंग ये प्रत्येक चार २ तोले तथा वृद्धदारु (विधायरो) १६ तोले, तालमूली (मूसली) १६ तोले और जमीकंद ३२ तोले इन सब का चूर्ण करके उस में डाल देवे फिर चूल्हे पर चढाय गाढा होने पर्यंत औटावे, जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल करे फिर इस में सहत ३२ तोले डाले तो यह भल्लातकावलेह सिद्ध होवे । इस को प्रातःकाल अथवा भोजन के समय बलाबल विचारके देवे तो बवासीर, संग्रहणी, पांडुरोग, अरुचि, कृमिरोग, गोला, पथरी, अफरा और शूल इन को नाश करे तथा शुक्र के समान नेत्र होवे और वली तथा पलित इन का नाश करे यह सर्व रोगनाशक उत्तम रसायन है ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अजीर्णरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ॥

कृमिरोगाधिकारः।

कृमिनिदान

कृमयस्तु द्विधा प्रोक्ता बाह्याभ्यंतरभेदतः। बहिर्मलकफासृग्विट्जन्मभेदाच्चतुर्विधाः॥ नामतो विंशतिविधा-

अर्थ–कृमिरोग दो प्रकार का है एक बाहर का दूसरा भीतरका तहां बाहर के मल (पसीना आदि) और कफ, रुधिर, विष्ठा इन कारणों से बहिः कृमिरोग चारि प्रकार का है उन के नाम वीस प्रकार के है वह कृमिरोग के वीस नाम से वीस भेद हैं॥

बाह्यकृमी के नाम

बाह्यस्तत्र मलोद्भवाः। तिलप्रमाणसंस्थानवर्णाः केशांबराश्रयाः॥ बहुपादाश्च सूक्ष्माश्च यूकालिक्षादिनामतः। द्विधा ते कुष्ठपिटिका कंडूगंडान्प्रकुर्वते॥

अर्थ–तहां बाहर के मल से प्रगट कृमि, तिल के प्रमाण श्वेत, काली, केश और वस्त्र में रहनेवाली होती है तथा बहुत पैर की और छोटी जूं लीख नामसे प्रसिद्ध दो प्रकार की है ये कृमि कोढ, पीडिका, खाज, गांठ इत्यादि रोग प्रगट करे है॥

कृमि रोग का कारण

अजीर्णभोजी मधुराम्लनित्यो द्रवः प्रियपिष्टगुडोपभोक्ता। व्यायामवर्जी च दिवा शयानो विरुद्धभुक् संलभते कृमींश्च॥

अर्थ–अजीर्णमें भोजन करे प्रतिदिन मीठा, खट्टा, खावे तथा पतला पदार्थ (जैसे कढी, रायता आदि) खावे पिसा अन्न मैदा आदि और गुड के पदार्थ खावे और भोजन करके परिश्रम न करे दिन में सोवे, विरुद्ध भोजन जैसे दूध मछली आदि को खावे ऐसे पुरुष के कृमिरोग प्रगट होता है॥

पुरीषकफरक्तजकृमिकारण

माषपिष्टान्नलवणगुडशाकैः पुरीषजाः। मांसमाषगुडक्षीरदधिसूक्तैः कफोद्भवाः॥ विरुद्धाजीर्णशाकाद्यैः शोणितोत्था भवंति हि।

अर्थ–उरद, पिसा अन्न (लड्डू, घेवर गूंझाआदि) नोन के, गुड के तथा शाक आदि ऐसे पदार्थ खाने से मल की कृमि प्रगट होती है। मांस, उडद, गुड, दूध, दही,

कांजी ऐसे पदार्थ खाने से कफ की कृमि पैदा होती है। विरुद्ध पदार्थ जैसे दूध मछली और आधा कच्चा आधा पक्का शाक (जैसे हरा चने का आदि) ऐसे भोजन से रुधिरजन्य कृमि पैदा होती है ॥

पेट में कृमि हुए के लक्षण

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगः सदनं भ्रमः ।
भक्तद्वेषोतिसारश्च संजातकृमिलक्षणम् ॥

अर्थ–ज्वर हो शरीर का रंग औरही प्रकार का हो जावे शूल हृदय दूखे वमन कीसी इच्छा हो भ्रम भोजन बुरा लगे दस्त होय ये लक्षण जिस के पेट में गिंडोहा आदि कृमि पड जातें उस के होते हैं ॥

कफजकृमि का लक्षण

कफादामाशये जाता वृद्धाः सर्पंति सर्वतः । पृथुब्रध्ननिभाः केचित्केचिद्गंडूपदोपमाः॥ रूढधान्यांकुराकारास्तनुदीर्घास्तथाणवः । श्वेतास्ताम्रावभासाश्च नामतः सप्तधा तु ते ॥ अंत्रादा उदरावेष्टा हृदयादा महारुजः । चुरवोदर्भकुसुमाः सुगंधास्ते च कुर्वते॥ हृल्लासमास्यस्रवणमविपाकमरोचकम् । मूर्छाछर्दितृषानाहकार्श्यश्वयथुपीनसान् ॥

अर्थ–कफ से आमाशय में प्रगट हुई कृमि जब बढ जाती है तब चारों तरफ डोलती है–कोई चाम के सदृश, कोई गिंडोहे के आकार, कोई धान्य के अंकुर के समान होती है। कितनी ही छोटी, बडी, चौडी होती है और किसी का वर्ण श्वेत, किसी का तामे के समान होय है उन्हों के सात नाम हैं सो इस प्रकार १ अंत्राद, २ उदरावेष्ट, ३ हृदयाद, ४ महारुज, ५ चुरु, ६ दर्भकुसुम और ७ सुगंध ये नाम कोई सार्थक है और कोई निरर्थक है । व्यवहार के निमित्त पहले आचार्यों ने कहे है इन कृमियों से वमन कीसी इच्छा होय मुख से पानी गिरै अन्न का पाक न होना, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, प्यास, अफरा, शरीर कृश होवे, सूजन और पीनस इतने विकार होते हैं ॥

रक्तकृमि का लक्षण

रक्तवाहशिरस्थाना रक्तजा जंतवोणवः । अपादावृत्तताम्राश्च सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः ॥ केशादा रोमविध्वंसा रोमद्वीपा उदुंबराः । षट् ते कुष्ठैककर्माणः सहसौरभमातरः ॥

अर्थ–रुधिर की वहनेवाली नाडीन में रुधिर से प्रगट कृमि बारीक, पादरहित, गोल, तामे के रंग के होते हैं; कोई बहुत बारीक होती हैं वो देखने सेभी नहीं दीखे ये कृमि छः प्रकार की है उन के नाम ये हैं १ केशाद, २ रोमविध्वंस, ३ रोमद्वीप, ४ उदुंबर, ५ सौरभ, और ६ मातर ये कुष्ठ को पैदा करती है ॥

पुरीषजकृमी का लक्षण

पक्वाशये पुरीषोत्था जायंतेधोविसर्पिणः। प्रवृद्धाः स्युर्भवेयुश्च ते यदामाशयोन्मुखाः ॥ तदास्योद्गारनिश्वासा विड्गंधानुविधायिनः। पृथुवृत्ततनुस्थूलाः श्यावपीतसितासिताः ॥ ते पंच नाम्ना कृमयः ककेरुकमकेरुकाः। सौसुरादामलूनाश्च लेलिहा जनयंति च ॥ विड्भेदशूलविष्टंभकार्श्यपारुष्यपांडुताः। रोमहर्षाग्निसदनगुदकंडूविमार्गगाः ॥

अर्थ–पक्वाशय में विष्ठा से प्रगट कृमि गुदा के मार्ग होकर बाहर निकसती है जब यह बढ जाती है तब आमाशय में प्राप्त होकर डकार और श्वास से विष्ठा कीसी वास आने लगती है। ये कृमि बडी, छोटी, गोल, मोटी, रंग में काली, पीली, सफैद, नीली होती है इन के पांच नाम हैं १ ककेरुक, २ अकेरुक, ३ सौसुरादा, ४ मलून, ५ लेलिह। जब ये कृमि मार्ग को छोड अन्यमार्ग में जाते हैं तब इतने रोग प्रगट करे हैं दस्तका पतला होना, शूल, अफरा, देह में कृशता तथा देह में कठोरता पांडुरोग, रोमांच, मंदाग्नि और गुदा में खुजली का होना।

कृमिरोगचिकित्सा

कृमीणां विट्कफोत्थानामेतदुक्तंचिकित्सितम्।
रक्तजानां तु संहारं कुर्यात्कुष्ठचिकित्सया ॥

अर्थ–यह चिकित्सा विष्ठा और कफ से उत्पन्न होनेवाली कृमियों की कही है तथा रुधिर से प्रगट होनेवाली कृमि (कीडा) की चिकित्सा करना होवे तो कुष्ठ रोग के समान करे ॥

तेषामन्यतमो वैद्यो जिघांसुः स्निग्धमातुरम्। सुरसादिविपक्केन सविषं वांतआदिभिः॥विरेचयेत्तीक्ष्णतरैर्योगैरास्थापयेद्धि च।

अर्थ–उस अभ्यंतर (भीतरी) अथवा बाह्य (बाहर की) कृमि के नाश करने को प्रथम निर्गुंडी इत्यादिक में सिद्ध करे हुए घृतादिक से रोगी को स्निग्ध करके वमन कराय फिर तीक्ष्ण जुलाब देवे अथवा पिचकारी आदि क्रिया करे ॥

पूडी

शालिपिष्टं कणासिंधु विडंगं भोपनीत्वचैः ।
सुपक्का पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ—चावलों का चून, पीपर, सैंधानिमक, वायविडंग इन को एकत्र कर भोपनी के रस से पूडी बनावे इन को सहत के साथ खाय तो संपूर्ण पेट की कृमि गिर जावे ॥

अन्न

प्रत्यहं कटुकं तिक्तं भोजनं कफनाशनम् ।
कृमीणां नाशनं रुच्यमग्निसंदीपनं परम् ॥

अर्थ—कृमिरोगवाले को नित्य तीक्ष्ण, कडुआ और कफ, कृमि इन के नाशकारी और अग्निदीपक ऐसे भोजन करने चाहिये ॥

पथ्याखुपर्णिकायुक्ता गोधूमैश्च कमाहृता ।
सुपक्का पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥

अर्थ—हरड, मूसाकर्णी, गैंहू का चून इन की पूडी घी में उतारके सहत के साथ भोजन करे तो संपूर्ण पेट के कीडे झड जावे ॥

कृमिलेप

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरकद्रवैः । नागवल्लीद्रवैर्वाथ वस्त्रखंडं प्रलेपयेत् ॥ तद्वस्त्रं मस्तके बध्वा धार्यं यामत्रयं ततः । यूकाः पतंति निश्चेष्टाः पारीक्ष्यं नात्र संशयः ॥

अर्थ—काले धतूरे के अथवा नागरवेल पान के रस में पारे को खरल करे फिर उस को बारीक वस्त्र में लेप करके उस को मस्तक पर दो प्रहर बांधे तो माथे की जितनी जूंआं लिख हैं सब मरके गिर पडे इसी लेप से जमजूआ भी मरके गिर पडते हैं यह अनुभव करा हुआ है ॥

यवागू

विडंगतंदुलव्योषशिग्रुभिर्मरिचं नतम् ।
तक्रसिद्धा यवागूः स्यात्कृमिघ्नोससुवर्चिका ॥

अर्थ—वायविडंग, चावल, सोंठ, मिरच, पीपल, सहजने की छाल, लालमिरच,

तगर इन सब को छाछ में यवागू (छः गुना जल डालके पतला भात करते हैं) इस प्रकार की बनावे इस में काला निमक मिलायके पिलावे तो यह कृमिनाश करे ॥

त्रिवृतादि कल्क

त्रिवृत्पलाशबीजं च पारसीकयवानि च। कंपिल्लकं वि-
डंगं च गुडश्च समभागिकः ॥ तक्रेण कल्कमेतेषां
कृमिकोटगणापहः।

अर्थ–निसोथ, पलासपापडा, किरमानी अजमायन, कवीला, वायविडंग इन के चूर्ण तथा चूर्ण के समान गुड लेवे इस का छाछ में कल्क करे यह कृमिकोटगण अर्थात् कीडों के समूह को नष्ट करे ॥

पलाशबीजरस व कल्क

पलाशबीजस्वरसं पिबेन्माक्षिकसंयुतम्।
पिबेत्तद्बीजकल्कं वा तक्रेण कृमिनाशनम्॥

अर्थ–पलास (ढाक) के बीजों का स्वरस सहत से अथवा पलासपापडे का कल्क छाछ के साथ पीने से कीडामात्र का नाश होवे ॥

स्वरस

पारिभद्रकपत्रोत्थरसं क्षौद्रयुतं पिबेत्।
रुबूकस्य रसं वापि धत्तूरस्यापि वा रसम्॥

अर्थ–कडुए नींब के पत्तों का स्वरस तथा अंड अथवा धतूरा इन का रस सहत मिलायके पीवे तो पेट के कीडे मर जावें ॥

तैल

विडंगं च शिलया शुद्धं सुरभिजलेन कटु तैलम्।
निखिलान्नयति विनाशं लाक्षासहिता दिनैर्यूकाः॥

अर्थ–वायविडंग, मनासिल इन का कल्क और गोमूत्र इन में सरसों का तेल मिलायके तेल सिद्ध करे यह एक दिन में लीख और जूआं इन को नाश करे ॥

विडंगादि तैल

विडंगगोमूत्रमनःशिलानां सुगंधिकाभिः परिपाचितं यत्।
तैलं भवेत्सर्षपसंभवं च यूकासु लीक्षासु हितं हि सद्यः॥

अर्थ—वायविडंग, गोमूत्र, मनसिल और काली निर्गुंडी इन के कल्क से सरसों के तेल को सिद्ध करे यह तेल जूआं, लीख इन को तत्काल नष्ट करे ॥

धतूरपत्रतैल

धत्तूरपत्रकल्केन तद्रसेनैव पाचितम् ।
तैलमभ्यंगमात्रेण यूका नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ—धतूरे के पत्तों का कल्क अथवा रस इस में तेल डालके सिद्ध करे इस की देह में मालिस करे तो तत्काल जूआं जमजूंआ नष्ट होवे ॥

दाडिमादि काढा

दाडिमत्वक्कृतः क्वाथस्तिलतैलेन संयुतः ।
त्रिदिनात्पातयत्येव कोष्ठतः कृमिजालकम् ॥

अर्थ—अनार की छाल का काढा करके उस में तिली का तेल मिलायके पीने को देवे तो तीन दिन में पेट की संपूर्ण कृमियों के बाहर निकालके गेर देवे ॥

नियमनादि काढा

नियमनस्त्रिफला कुटजो वचा त्रिकटुकं खदिरा त्रिवृतं युतम् ।
मुनिदिनं हि गवां सलिलेन च शृतमिदं कृमिनाशकरं पिबेत् ॥

अथ—कडुआ नीम, हरड, बहेडा, आमला, कूडा की छाल, सोंठ, वच, मिरच, पीपल, खैर की छाल और निसोथ इन का गौ के मूत्र में काढा करके देवे तो सात दिन में संपूर्ण पेट के कीडे मरके गिर जावें ॥

विडंगादि काढा

विडंगशृतपानीयं विडंगेनावधूलितम् ।
पीतं कृमिहरं कुष्ठं कृमिजातान्प्रदापयेत् ॥

अर्थ—वायविडंग का काढा कर उस में वायविडंग का ही चूर्ण डालके पिलावे तो कृमिमात्र मरके गिर जावे ॥

मुस्तादि काढा

मुस्ताखुपर्णीफलदारुशिग्रुक्वाथः सकृष्णाकृमिशत्रुकल्कः ।
मार्गद्वयेनापि चिरप्रवृत्तान्कृमीन्निहन्यात्कृमिजांश्च रोगान् ॥

अर्थ—नागरमोथा, मूसाकर्णी, इंद्रजो, देवदारु और सहजना इन का काढा करके इस में पीपल और वायविडंग का चूर्ण डालके पिलावे तो दोनों द्वार (गुदा-

और मुख) करके बहुत दिन की पडे हुए कीडे उन को और उन कीडों के होने से जो रोग होवे उन को नाश करे ॥

खदिरादिकाढा

खदिरः कुटजः पिचुमंदवचात्रिकटुत्रिफलात्रिवृतासहितम्। पशुमूत्रयुतं पिब सप्त दिनं कृमिकोटिशतान्यपि हंत्यचिरात् ॥

अर्थ–खैर की छाल, कूडा की छाल, नीम की छाल, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, और निसोथ इन का चूर्ण अथवा काढा गोमूत्र में मिलायके सात दिन पीवे तो कोटचावधि अर्थात् करोडों भी कृमि होवे तो तत्काल दूर होवे ॥

रस

हिंगुलः कर्षमानंस्याद्दंतिबीजं तदर्धकम्। अर्कक्षीरेण संमर्द्य दापयेद्भावना दश॥ माषमात्रं प्रदातव्यमर्कमूलरसं पुनः। प्रपिबेद्धिंगुसंयुक्तं कृमिजालनिपातनम् ॥

अर्थ–हींगलू १ तोले और जमालगोटा ६ मासे दोनों का चूर्ण करके आक के दूध की १० भावना देवे इस में से एक मासे औषध आक की जड के रस और हींग के साथ देवे तो पेट की संपूर्ण कृमि झरके गिर पडे ॥

पारदादियोग

शुद्धसूतमिंद्रयवमजमोदमनःशिला। पलाशबीजतुल्यांशं देवदाल्याद्रवैर्दिनम्॥ मर्दयेद्भक्षयेन्नित्यं मूषपर्णिकषायकम्। सितायुक्तं पिबेच्चानु कृमिपातो भवत्यलम् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, इन्द्रजों, अजमायन, मनसिल, पलासपापडा ये समान भाग लेके चूर्ण करे इस को बंदाल के रस से १ दिन खरल करे इसमें से ४ मासे औषध मूसाकर्णी औषध के काढे में खांड मिलाय के देवे तो पेट के कीडे सब गिर पडे ॥

कृमिकुठाररस

कर्पूरं चाष्टभागं च कुटजश्चैकभागकः। तत्समानं त्रायमाणामजमोदा विडंगकम् ॥ हिंगुलं विषभागं च तत्समानं च केसरम्। सर्वं दृढं च संमर्द्य भृंगराजरसैस्तथा ॥ पलाशबीजसंमिश्रं उंदरीरसभावितम्। ब्राह्मीरसं ततो दत्त्वा सिद्धयत्कृमिकुठारकः ॥

वल्लमात्रां वटीं कुर्याद्द्याद्धेमसमन्विताम् । कुर्यात्कृमिविनाशं च एवं सप्तविधं दृढम् ॥

अर्थ—कपूर आठ भाग, कूडा की छाल, त्रायमाण, अजमायन, वायविडंग, हींगलू, सिंगियाविष, केशर और पलासपापडा ये सब एक २ भाग लेके एकत्र करे फिर इस को भांगरे के रस, मूसाकर्णी के रस और ब्राह्मी के रस की भावना देवे यह **कृमिकुठाररस** तीन रत्ती धतूरे के रस के साथ देवे तो सर्व प्रकार के कृमि का नाश करे ॥

कृमिमुद्गररस

क्रमेण वृद्धं रसगंधकाजमोदाविडंगं विषमुष्टिका च ।
पलाशबीजस्य च चूर्णमस्य निष्कप्रमाणं मधुनावलीढम् ॥
पिबेत् कषायं घनजं तदूर्ध्वंरसो प्रयुक्तः कृमिमुद्गराख्यः ।

अर्थ—पारा १ भाग, गंधक २ भाग, अजमोद ३ भाग, वायविडंग ४ भाग, बकायन की छाल ५ भाग, पलासपापडा ६ भाग, इन का चूर्ण एक तोले अथवा शक्ति के प्रमाण सहत के साथ चाटे फिर इस के ऊपर नागरमोथे का काढा पीवे इस को **कृमिमुद्गररस** कहते हैं ॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगसिंधूद्भवहिंगुपथ्याकंपिल्लसौवर्चलपिप्पलीनाम् ।
चूर्णं कवोष्णोदकसंगृहीतं कृमीन् निहंत्याशु दहेद्वमिं च ॥

अर्थ—वायविडंग, सैंधानिमक, हींग, हरड, कवीला, संचरनिमक और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो कृमि और वमन इन को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

विडंगानां तु चूर्णं च कर्षार्धाकर्षमेव च ।
मधुना सहितं लिह्यात् कृमिकोटिनिवृत्तये ॥

अर्थ—वायविडंग का चूर्ण तोले अथवा छः मासे लेकर सहत के साथ सेवन करे तो कृमि के समुदाय को नाश करे ॥

पारसिकयवानीचूर्ण

पारसिकां यवानीं तु पर्णेन सह भक्षयेत् ।
कृमिजालं निहंत्याशु पीतो निंबरसेन वा ॥

अर्थ–किरवानी अजमायन को पान में रखके खाय अथवा नीम के रस के साथ पीवे तो कृमि रोग नष्ट होवे ॥

निंबादिचूर्ण

निंबाजमोदा जंतुघ्नं ब्रह्मबीजं सचोरकम्।
सहिंगुकं समगुडं सद्यो जंतुविनाशनम् ॥

अर्थ–नीम की छाल, अजमायन, वायविडंग, किरमानी अजमायन और हींग इन के चूर्ण की बराबर गुड मिलायके भक्षण करे तो उदर की संपूर्ण कृमि नष्ट होवे ॥

विडंगव्योषसंयुक्तं भक्तमंडं पिबेन्नरः।
दीपनं कृमिनाशाय जठराग्निविवृद्धये ॥

अर्थ–वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डालके चावल का मांढ पीवे तो दीपन करे और कीडों को नष्ट करके जठराग्नि को बढावे ॥

त्रिफलाद्यघृत

फलत्रयं वचा दंती त्रिवृत्कंपिल्लकैः समैः।
सिद्धं सर्पिर्गवां मूत्रे पीतं च कृमिनाशनम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, वच, दंती के बीज, निसेथ, कवीला और गोमूत्र इन के कल्क से घृत पचावे इस घृत के सेवन करने से कृमि का नाश होवे ॥

विडंगघृत

त्रिफलायास्त्रयः प्रस्था विडंगं प्रस्थमेव च। दीपनं दशमूलं च लाभतः समुपाहरेत् ॥ पादशेषे जलद्रोणे युते सर्पिर्विपाचयेत्। प्रस्थोन्मितं सिंधुयुतं तत्परं कृमिनाशनम् ॥ विडंगघृतमेतत्तु लेह्यं शर्करया सह। सर्वान्कृमीन्प्रणदति वज्रं मुक्तमिवासुरान् ॥

अर्थ–त्रिफला १९२ तोले, वायविडंग ६४ तोले, दीपनीय गण की औषधी और दशमूल इन में से जो जो औषध मिले वो सब लेकर उन को २०४८ तोले जल में डालके चतुर्थांश काढा करे उस में ६४ तोले घी और सैंधानिमक डालके घृत सिद्ध करे इस घृत में वायविडंग डालके घृत और खांड के साथ पीवे तो कृमि रोग दूर होवे ॥

सारनालयोग

सारनालाखुपर्णी वा तक्रं पालाशबीजयुक् ।
हिंग्वाजमोदातक्रं वा कृमिरोगं विनाशयेत् ॥

अर्थ–कांजी में मूसाकर्णी और छाछ में पलासपापडा अथवा छाछ में हींग और अजमायन मिलायके पीवे तो कृमिरोग का नाश करे ॥

भल्लातकयोग

भल्लातकं वा दध्ना च चिंचाम्लेन हरेत्कृमीन् ।

अर्थ–भिलाए को दही के साथ अथवा इमली के साथ खाने से उदर की कृमि मर जावे ॥

पलाशबीजयोग

पलाशबीजं वल्लैकं स्नुहिक्षीरेण जंतुजित् ॥

अर्थ–ढाक के बीज, थूहर के दूध के साथ खावे तो पेट के सब कीडे मरके दस्त की राह निकल जावे ॥

किरमानी अजमायन का कल्क

पारसी यवानी पीता पर्युषिता वारिणा प्रातः ।
गुडपूर्वा कृमिजालं कोष्ठगतं पातयत्याशु ॥

अर्थ–किरमानी अजमायन को बासे पानी में पीसके उस में गुड मिलायके पीवे तो पेट की सब कृमियों के जाल को तत्काल गिराय देवे ॥

निशोतरादियोग

भिंडीपिष्टारनालेन गोमूत्रेणातिमुक्ततः ।
कुनटीकटुतैलेन योज्या यूकापहास्त्रयः ॥

अथ–सफेद निसोथ को कांजी में अथवा तेंदू को गोमूत्र में अथबा मनसिल को सरसों के तेल में मिलायके पीवे ये तीनों योग जूँ लीख के नाशक है ॥

पिप्पल्याद्यचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं सैंधवं कृष्णजीरकम् । चव्यचित्रकताली-
सपत्रकानागकेसरम् ॥ एषां द्विपलिकान्भागान्पंच सौवर्चलस्य
च । मरीचाजाजिशुंठीनामेकैकस्य पलं पलम्॥ दाडिमात्कुडवं

चैव द्विदलं चाम्लवेतसात् । सर्वमेकत्र संयुक्तं योजयेत्कुशलो भिषक् ॥ पिप्पल्यादिरिति ख्यातं नष्टवन्हेश्च दीपनम् । अर्शांसि ग्रहणीगुल्ममुदरं सभगंदरम् ॥ कृमिकंडुरुचिहरं सुरयोष्णोदकेन वा । नातः परतरं किंचिदामशोथनिषूदनम् ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, सैंधानिमक, काला जीरा, चव्य, चित्रक, तालीसपत्र, नागकेशर, ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे, संचरनिमक ५ तोले तथा काली मिरच, जीरा, सोंठ, ये चार २ तोले अनारदाना १६ तोले, अमलवेत ८ तोले ले सब को एकत्र चूर्ण बनावे इस चूर्ण को कुशलवैद्य अपने बुद्धि के साथ देवे यह मंदाग्नि को दीपन करे और बवासीर, संग्रहणी, गोला, जलंधर, भगंदर, कृमि, खुजली, अरुचि इन पर मद्य के साथ अथवा गरम जल के साथ देवे इस से बढकर दूसरी आम और सूजन इन के नाश करनेवाली औषध नहीं है ॥

आखुपर्ण्यादिचूर्ण

आखुपर्णदलैः पिष्टैः पिष्टकेन च पूपकान् ।
भुक्त्वा सौवीरकं चानु पिबेत्कृमिहरं परम् ॥

अर्थ–मूसाकर्णी के पत्तों को कूट चूर्ण कर उस में गेहू का चून मिलाय पूआ बनावे और खाय इस के ऊपर यदि जोंकी कांजी पीवे तो कृमि रोग का नाश होवे ॥

निंबादिचूर्ण

निंबुवत्सकविडंगसंयुतं रामठेन सह जंतुनाशनम् ।
निंबपत्रमजमोदकान्वितं चूर्णमेव मधुना प्रशस्यते ॥

अर्थ–नींबू, कूडा की छाल, वायविडंग और हींग इन का चूर्ण जंतु (कीडा) नाशक है । अथवा नीबू के पत्ते और अजमायन इन के चूर्ण को सहत के साथ खावे तो भी संपूर्ण कीडे नष्ट हो जावे ॥

सुवर्चिकादि चूर्ण

सुवर्चिकारामठपत्रिकाह्वविडंगबाल्हीककणाग्निविश्वा ।
यवानिकाग्रंथिकभद्रमुस्ता तक्रेण चूर्णी कृमिकोटिहारी ॥

अर्थ–सज्जीखार, हींग, जावित्री, वायविडंग, केशर, पीपल, चीते की छाल, सोंठ, अजमायन, पीपरामूल और नागरमोथा इन का चूर्ण छाछ के साथ पीवे तो कोटयावधि कृमि का नाश होवे ॥

जूंआ इत्यादि कों पर तैल

चित्रकं दंतिनीमूलं कोशातकिसमन्वितम् ।
कल्कं पिष्ट्वा च तैलं च केशशत्रुविनाशनम् ॥

अर्थ–चित्रक, दंती की जड, कडूई तोरई इन का कल्क डालके तेल बनावे इस तेल के लगाने से जूंआ, लीख नष्ट होवे ॥

विडंगादि तैल

सविडंगं जतुशिलया सिद्धं सुरभेर्जलेन कटुतैलम् ।
निखिला नयति विनाशं लिक्षासहिताश्च वै यूकाः ॥

अर्थ–वायविडंग, शिलाजीत, और गोमूत्र इन में सरसों का तेल डालके तैलविधि से सिद्ध करे यह तेल लीख और जूंआ इन को नाश करे ॥

कपिलाचूर्ण

कांपिल्यचूर्णकर्षार्धं गुडेन सह भावितम् ।
पातयेत्तु कृमीन्सर्वानुदरस्थान्न संशयः ॥

अर्थ–कबीले का चूर्ण आधा तोला लेकर गुड में मिलायके खावे तो पेट की यावन्मात्र कृमि है सब निकल जावे इस में संशय नहीं है ॥

निंबादिरस

निंबपत्रसमुद्भूतं रसं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
धत्तूरपत्रजं वापि कृमिनाशनमुत्तमम् ॥

अर्थ–कडुए नीम के पत्तों का रस अथवा धतूरे के पत्तों के रस को सहत मिलायके पीवे तो कृमिरोग नष्ट होवे ॥

हरीतकीचूर्ण

हरीतकी चैव तथा हरिद्रा सौवर्चलं चैव समं विचूर्णितम् ।
इंद्रवारुणिजलेन भावितं कीटसंघविनिवारणं परम् ॥

अर्थ–हरड, हलदी और संचर निमक ये समान भाग लेवे चूर्ण कर उस में इंद्रायन के काढे की भावना देवे यह चूर्ण कृमिसमुदाय को नाश करे ॥

सावित्रवटक

पलंकषापले द्वे च कार्ष्णायसपलद्वयम् । पथ्यामृताक्षधात्रीणां

पृथगेकैकशः पलम्॥ पूतीकचव्यव्योषाग्निकारवीकृमिनाशनैः। चूर्णितैरर्धपलकैस्तिलतैलं पलद्वयम् ॥ त्रिफलाया रसप्रस्थे खंडं प्रस्थयुगं भवेत् । दार्त्रीं प्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातकसंयुतम् ॥ सावित्रवटकाद्येते यथाग्निबलभक्षिताः। कृमिकोष्ठाग्निदौर्बल्यशोथे गुल्मोदरव्रणान् ॥ कामलापांडुरोगार्शोभगंदरगदव्रणान् । निहंत्येतद्धि संधित्थं बलस्थैर्यसुखप्रदम् ॥ वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः । भवंत्यतिस्निग्धभुजो वातातपनिषेविणः ॥

अर्थ–ढाक के बीज ८ तोले, लोहे की भस्म ८ तोले, हरड, गिलोय, बहेडा, आवला, ये प्रत्येक चार २ तोले तथा पूतीकरंज, चव्य, सोंठ, काली मिरच, पीपल, चित्रक, अजमायन, वायविडंग, ये प्रत्येक दो दो तोले और तिलों का तेल ८ तोले, त्रिफले का काढा अथवा त्रिफले का रस १६ तोले, मिश्री ३२ तोले इन सब को एकत्र कर जबतक कलछी से न चिपटे तब तक पकावे, जब कलछी से लिपटने लगे तब उतार लेवे और इस में चातुर्जात (दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर) ये डालके मिलाय देवे इस को सावित्रवटक कहते हैं यह अग्नि और बलाबल विचार के देवे तो कृमि, मंदाग्नि, दुर्बलता, सूजन, उदररोग, व्रण, कामला, पांडुरोग, बवासीर, भगंदर इन का नाश करे । तथा अवस्था, बल और स्थिरता इन को करे तथा दुष्ट अधोवायु और प्रमेह इन को नाश करे। तथा नेत्रों को हितकारी है इस पर स्निग्ध भोजन और पवन तथा धूप इन का सेवन करना चाहिये ॥

विशालादिधूप

विशालायाः फलं पक्वं तप्तलोहोपरि क्षिपेत् ।
तद्धूमोदंतलग्नश्चेत् कीटानां पातनः परः ॥

अर्थ–इन्द्रायन के पके हुए फलों को गरम तवे पर गेरे इस का धूआं दांतों को देवें तो दांतों में जो कीडा होता है वो तत्काल मरके गिर पडे यह प्रयोग परमोत्तम है॥

अष्टसुगंधधूप

लाक्षा भल्लातकश्च श्रीवासः श्वेतापराजिता । अर्जु-

नस्य फलं पुष्पं विडंगं सर्जगुग्गुलुः ॥ एभिः कृतेन धूपेन शाम्यंते निहिते गृहे । भुजंगमूषकादंशाघुणामशकमत्कुणाः ॥

अर्थ–लाख, भिलाए, श्रीवास (सरलधूप) सपेद कोयल की जड, कोहवृक्ष के फल और फूल वायविडंग, राल और गूगल इन की धूनी घर में देवे तो सांप, मूंसे, डाँस, मच्छर, छोटे कीडे और खाट के खटमल ये सब मर जावे ॥

ककुभादिधूप

ककुभकुसमविडंगं लांगली भल्लातकं तथोशीरम् ।श्रीवेष्टकं सर्ज्जरसं चंदनमथ कुष्ठमष्टमं दद्यात् ॥ एष सुगंधो धूपः सकृत्कृमीनां विनाशकः प्रोक्तः । तथा स मत्कुणानां शिरसि च गात्रेषु यूकानाम् ॥

अर्थ–कोहवृक्ष के फूल, वायविडंग, पिठवन, भिलाए, नेत्रवाला, राल, चंदन, कूठ यह सुगंधधूप एकवार के देने से कृमिनाश करे तथा यह धूप शय्या (सेज) में देने से खटमल मर जावे और अपनी देह को यह धूनी देवे तो मस्तक के जूंआ, लीख और देह की जमजूआ आदि को नष्ट करे है ॥

कृमिरोगपर पथ्य

आस्थापनं कायशिरोविरेचनं धूपः कफघ्नानि शरीरशोधनम् ।
चिरंतना वैणवरक्तशालयः पटोलवेत्राग्ररसोनवास्तुकम् ॥
हुताशमन्दारदलानि सर्षपा नवीनमोचं बृहतीफलान्यपि ।
तिक्तानि नालीचफलानि मौषिकं माषं विडंगं पिचुमन्दपल्लवम् ॥
तैलं तिलानामथ सर्षपोद्भवं सौवीरसूक्तं च तुषोदकं मधु ।
पचेलिमं तारमरुष्करं गवां मूत्रं च तांबूलसुरामृगं रजः ॥
औष्ट्राणि मूत्राज्यपयांसि रामठं क्षारोजमोदाखदिरश्च वत्सकम् ।
जंबीरनीरं सुषवीयवानिकासाराः सुराह्वागुरुशिंशिपोद्भवः ॥
तिक्तः कषायः कटुको रसोयं वर्गो नराणां कृमिरोगिणां सुखः ।

अर्थ–आस्थापनवस्ती, शरीर और मस्तकका विरेचन अर्थात् जुल्लाब देकर शुद्ध

करना, धूमपान,कफनाशक पदार्थ, देह का शोधन, बहुत दिन के बांस के बीज,(वा सांठी चावल) लाल चावल, परबल, वेत के अग्रभाग, लहसन, बथुआ, चीता, मंदार (आक) के पत्ते, सरसो, नवीन केला, कटेरी के फल, कडुए पदार्थ, नाली के फल (वा तालीसपत्र), मूंसे का मांस,उडद,वायविडंग, नीम के पत्ते (हरड) तिल और सरसों का तेल, कांजी, दही का तोड, तुषोदक,सहत, पचेलिम, चांदी के वर्क-भिलाए, गोमूत्र, पान का बीडा, मदिरा, कस्तूरी, ऊँट का मूत्र, घी और दूध, हींग, क्षार,अजमोद, खैरसार,कूडा की छाल, जँभीरी नीबू का रस, सुषवी (कलौंजी), अजमायन, देवदारु, अगर और सीसों का खार, कडुए और कषेले तथा चरपरे सब रसयह संपूर्णवर्ग कृमिरोगहरणकारी जानना ॥

अपथ्य

छर्दिं च तद्वेगविधारणं च विरुद्धपानाशनमह्नि निद्राम् । द्रवं च पिष्टान्नमजीर्णभोजनं घृतानि माषान्दधिपत्रशाकम् ॥ मांसं पयोम्लं मधुरं रसञ्च कृमीन् जिघांसुः परिवर्जयेत्तु ॥

अर्थ—वमन करना, तथा वमन के वेग को रोकना,विरुद्ध अन्न पान,दिन में निद्रा, द्रवपदार्थ, पिष्टान्न (मेंदा चून), अजीर्ण में भोजन करना, घी, उडद,दही, पत्तों का साग,मांस,दूध, खटाई और मीठारस ये कृमिनाशकर्त्ता प्राणी को त्याग करने योग्य हैं ॥

दूसरा प्रकार

शीतांबु मधुरक्षीरं दधिक्षीरघृतादिकम् ।
सौवीरं शाकपत्रांश्च वर्जयेत्कृमिवान्नरः ॥

अर्थ—शीतल जल, मीठा दही, दही दूध और घृतादिक, कांजी, पत्तोके साक इनको कृमिरोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे कृमिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पांडुरोगकर्मविपाकः।

देवद्विजद्रव्यहारी पांडुरोगी भवेन्नरः ।
कृच्छ्रातिकृच्छ्रे कुर्य्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ॥
कुर्यात्कूष्माण्डहोमं च स्वर्णचंद्रेण वाससी ।
ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति पांडुरोगस्य शांतये ॥

अर्थ-देवता,ब्राह्मण, इन के द्रव्य हरण करने से यह प्राणी इस जन्म में पांडुरोगी होता है, इस पाप के प्रायश्चित्त करने को कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करे अथवा कूष्मांडहोम अथवा सुवर्ण का चंद्रमा और वस्त्र दान करे तथा यथाशक्ति द्रव्य देवे तो यह प्राणी पांडुरोग से छूट जावे ॥

शिरोवेदनासहित पांडुरोगहरण

अग्निष्टोमादिकर्माणि प्रक्रम्य न समापयेत् ।
स पांडुरोगी भवति शिरोवेदनवांस्तथा ॥
कृच्छ्रातिकृच्छ्रं कुर्य्याच्च चांद्रायणमतंद्रितः ।
शतं च भोजयेद्विप्रान्मिष्टान्नेन यथेप्सितम् ॥

अर्थ-जो अग्निष्टोमादि कर्म का प्रारंभ करके समाप्ति नहीं करे वह मस्तकपीडावाला पांडुरोगी होता है उस को कृच्छ्र अतिकृच्छ्र चांद्रायण व्रत करना चाहिये अथवा सौ ब्राह्मणों को मिठाई से तथा इच्छित भोजन करावे तो यह प्राणी का पांडुरोग जाता रहे ॥

पांडुरोगनिदान

पांडुरोगाः स्मृताः पंच वातपित्तकफैस्त्रयः ।
चतुर्थः सन्निपातेन पंचमो भक्षणान्मृदः ॥

अर्थ-मल से प्रगट कृमिरोग-पांडु(पीलिया) रोग को प्रगट करे है इसी कारण कृमिरोग के अनन्तर पांडुरोग का निदान कहे हैं तहां प्रथम पांडुरोग की संख्यारूप सम्प्राप्ति कहते हैं १ वात का, २ पित्त का, ३ कफ का, ४ सन्निपात का और ५ माटी के खाने से ऐसे पाण्डुरोग पांच प्रकार का कहा है ॥

निदानपूर्वकसंप्राप्ति

व्यवायमम्लं लवणानि मद्यं मृदं दिवास्वप्नमतीव तीक्ष्णम् ।
निषेव्यमाणस्य विदूष्य रक्तं कुर्वंति दोषास्त्वचि पांडुभावम् ॥

अर्थ-अति मैथुन,खट्टे पदार्थ का भोजन, नोन का पदार्थ खाने से,बहुत मद्य पीने से, मिट्टी खाने से,दिन में सोने से,अत्यंत तीखा पदार्थ खाने से इन कारणों से तीनों दोष रुधिर को बिगाड देह की त्वचा को पीले रंग की कर देते हैं इस जगह रुधिर का तो उपलक्षणमात्र है रक्त के कहने से त्वचा, मांस इन को दूषित करते हैं ॥

पूर्वरूप

त्वक्स्फोटनिष्ठीवनगात्रसादोमृद्भक्षणप्रेक्षणकूटशोथाः ।
विण्मूत्रपीतत्वमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥

अर्थ–त्वचा का फटना,मुख से वारंवार थूकना, अंगों का जिकडना,माटी खाने की इच्छा, नेत्रोंपर सूजन, मलमूत्र पीले हों, अन्न का परिपाक न होय ये लक्षण पांडु-रोग प्रगट होनेवाला होय है तब होते हैं ॥

पांडुरोगचिकित्सा

साध्यं च पांड्वामयिनं समीक्ष्य स्निग्धं घृतेनोर्ध्वमधुश्च शुद्धम् । संपादयेत्क्षौद्रघृतप्रगाढैर्हरीतकीचूर्णमयप्रयोगैः ॥ पिबेत्घृतं वा-रजनीविपक्वं यत्त्रैफलं तैल्वकमेकमेव । विरेचनं द्रव्यकृतं पिबेद्वा योगांश्च वै रेचनिकान्घृतेन ॥ विधिः स्निग्धोत्र वातोत्थे तिक्तः शीतश्च पैत्तिके । श्लेष्मिके कटुरूक्षोष्णः कार्यो मिश्रस्तु मिश्रजे ॥

अर्थ–यदि पांडुरोगी साध्य होवे तो उस को घी पिलायके स्निग्ध करे तथा रेच-न और वमन कराकर उस को शुद्ध करे फिर सहत, घी और हरड ये जिस चूर्ण में अधिक होवे ऐसी औषधों का उपचार करे, तथा हलदी डालके औटाए हुए घी को पीवे किंवा त्रिफला और इन से सिद्ध करा हुआ घी पिलावे अथवा किसी एक औष-ध से दस्त लानेवाली औषध सिद्ध करके पीवे अथवा रेचक औषध घृत के साथ पी-वे । अब सामान्य उपचार कहते हैं कि वात पांडुरोग पर स्निग्ध, पित्त पांडुरोग पर कडुए और शीतल तथा कफपांडुरोग पर तीक्ष्ण रूक्ष और उष्ण, द्वंद्वज अतिसार पर मिश्रित यत्न करे इस प्रकार यत्न करने चाहिये ॥

वातपांडुनिदान

त्वङ्मूत्रनयनादीनां रूक्षकृष्णारुणात्मता ।
वातपांड्वामये कंपतोदानाहभ्रमादयः ॥

अर्थ–वात के पांडुरोग में त्वचा, मूत्र, नेत्र इन में रूखापना, कालापना और लाली होय है तथा कंप सुई छेदने का सा चभका, अफरा, भ्रम, आदि शब्द से भेद और शूलादिक भी होते हैं ॥

मंडूराद्यरिष्ट

मंडूरस्य तु शुद्धस्य तुलार्द्धं परिकीर्तितम् । तद्वल्लोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ पुराणगुडपंचाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा । निकुंभचित्रकाभ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥ पिप्पलीनां विडंगानां कुडवं च पृथक्पृथक् । त्रींश्चापि त्रिफलाप्रस्थाञ्जलद्रोणे समावपेत् ॥ अर्धमासस्थितो धान्ये पेयोरिष्टप्रमाणतः । दोषानुभयतः स्राव्यपांडुरोगं नियच्छति ॥ कृमीनर्शांसि कुष्टं च कासं श्वासकफामयान् । एषोरिष्टस्तु मंडूरः सर्वपांड्वामयापहः॥

अर्थ–शुद्ध मंडूर २०० तोले, तिल के बराबर मोटे लोहे के पत्र २०० तोले, पुराना गुड २९२ तोले, जलवेत और चित्रक का चूर्ण प्रत्येक ८ तोले, पीपल और वायविडंग प्रत्येक १६ तोले, हरड ६४ तोले, बहेडे ६४ तोले, आवला ६४ तोले इन सब औषधों को १०२४ तोले पानी में डालके पंद्रह दिन धान की राशि में धर रक्खे फिर जिस प्रकार अरिष्ट देने का प्रमाण लिखा है उस प्रकार देवे तो यह दोनों मार्गों से दोषों को निकाल पांडुरोग का नाश करे उसी प्रकार कृमिरोग, बवासीर,कोढ, खांसी, श्वास और कफरोग इन को यह नाश करे । इस को **अरिष्टमंडूर** कहते हैं यह सर्व प्रकार के पांडुरोगों का नाशक है ॥

पित्तपांडुनिदान

पीतमूत्रसकृन्नेत्रो दाहतृष्णाज्वरान्वितः ।
भिन्नविट्कोतिपीताभः पित्पांड्वामयी नरः ॥

अर्थ–पित्तपांडुरोगी के ये लक्षण होते हैं मल मूत्र और नेत्र पीले हों, दाह, प्यास, ज्वर इन से पीडित हो मल पतला हो और उस रोगी के देह की कांति अत्यंत पीली होती है ॥

आमलक्यवलेह

रसमामलकानां तु संशुद्धं यंत्रपीडित्तम् । द्रोणं पचेच्च मृद्वग्नौ तत्रेमानि प्रदापयेत् ॥ चूर्णितं पिप्पलीप्रस्थं मधुकं द्विपलं तथा । प्रस्थं गोस्तनिकायाश्च द्राक्षायाः कल्कपेषितम् ॥ शृंगवेरपले द्वे तुतुगाक्षीर्याः फलद्वयम् । तुलार्धं शर्करायाश्च घनीभूतं समु-

द्धरेत् ॥ मधु प्रस्थसमायुक्तं लेहयेत्पलसंमितम् । हलीमकं कामलां च पांडुत्वं चापकर्षति ॥

अर्थ-आमलों का रस शुद्ध १०२४ तोले लेके अग्नि पर चढावे उस में पीपल का चूर्ण ६४ तोले, मुलहटी ८ तोले, काली मुनक्का दाख बीज निकाली हुई और पीसी हुई ६४ तोले, सोंठ और वंशलोचन ८ तोले तथा खांड २०० तोले इतने पदार्थ डालके गाढा करे जब गाढा हो जावे तब उतार लेवे इस में ६४ तोले सहत डालके धर देवे चार तोले के प्रमाण नित्य खावे तो हलीमक, कामला और पांडुरोग ये दूर हों ॥

दुग्धयोग

लोहपात्रस्थितं क्षीरं सप्ताहं पथ्यभोजनम् ।
पिबेत्पाण्ड्वामयी शोषी ग्रहणीदोषपीडितः ॥

अर्थ-लोहे के पात्र में औटाए हुए धरे हुए दूध को सात दिन पीवे और पथ्य करे तो पांडुरोग, क्षय और संग्रहणी ये रोग दूर होवें ॥

कफपांडुनिदान

कफप्रसेकश्वयथुस्तंद्रालस्यातिगौरवैः ।
पांडुरोगी कफाच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्रनयनाननैः ॥

अर्थ-मुख से कफ का गिरना, सूजन,तन्द्रा, आलस्य,शरीर का भारी होना, त्वचा, मूत्र,नेत्र,मुख इन का सफेद होना इन लक्षणों से कफ का पांडुरोग जानना ॥

दशमूलादिकाढा

द्विपंचमूलीक्वथितं सविश्वं कफात्मके पांडुगदे पिबेत्तत् ।
ज्वरेतिसारे श्वयथौ ग्रहण्यां कासेऽरुचौ कंठहृदामयेषु॥

अर्थ-दशमूल और सोंठ इन का काढा कफयुक्त पांडुरोग, ज्वर अतिसार, सूजन, संग्रहणी,खांसी अरुचि, कंठरोग और हृदयरोग इन को नाश करने को पिलावे ॥

नागरादियोग

नागरं लोहचूर्णं वा कृष्णां पथ्यामयोष्मजाम् ।
गुग्गुलं वाथ मूत्रेण कफपांड्वामयी नरः ॥

अर्थ-सोंठ और लोहभस्म अथवा पीपल, हरड और लोहभस्म, शिलाजीत अथवा गूगल, गोमूत्र ये सब योग कफ पांडुरोग के नाशक हैं ॥

लोहभस्मयोग

अतिशुद्धमयोभस्म सर्पिः क्षौद्रयुतं लिहेत् ।
पांडुरोगस्य नाशाय कामलानां च सर्वशः ॥

अर्थ–अत्युत्तम लोहभस्म–सहत और घी इन के साथ देवे तो पांडुरोग और कमला इन का नाश करे ॥

मधुमंडूर

गृहीत्वा भिषक्प्रस्थमंडूरभागं शृते त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।
पुटे पाचयेद्यामयुग्मं कृशानौ पुटानीह देयानि चंद्राक्षिवारम् ॥
तथा धेनुमूत्रे कुमारीरसेच विधेयश्च पंचामृते योगराजः । भवेत्सिधुनागैः पुटैः सिद्धिदोयमचिंत्यप्रभावश्च मंडूर एषः॥मधुमंडूरक एष कणामधुना चिरपांडुगदं ननु हे गदिनः । जनको रुधिरस्य निहंति परं विविधार्तिहरस्त्वनुपानबलैः ॥

अर्थ–६४ तोले लोह की कीट का चूर्ण त्रिफले के काढे में डालके प्रहरभर खरल करे फिर सराव संपुट में रखके दो प्रहर अग्निपुट देवे । इस प्रकार इक्कीस पुट देवे फिर गोमूत्र ग्वारपठे का रस और पंचामृत[1] इन के काढे की प्रत्येक की इक्कीस २ पुट देवे अर्थात् ८४ पुट देने से सर्व सिद्धि देनेवाला अचिंत्यप्रभाव ऐसा यह मंडूर सिद्ध होवे इस प्रकार सिद्ध हुआ मधुमंडूर पीपल और सहत इन के साथ छः रत्ती सेवन करने से पांडुरोग को तत्काल नष्ट करे तथा देह में रुधिर उत्पन्न करे है और भी अनुपानभेदों करके अनेक प्रकार के रोग दूर करे ॥

मंडूरवटक

सुराब्ददार्वीकटुषट्कताप्यं वेल्लं वरा चेति समांशचूर्णम् । मंडूरभागद्वयमष्टमूत्रे पक्त्वा गवां तक्रसमं च देयम् ॥ कामलापांडुमेहार्शःशोफकुष्ठकफामयान् । ऊरुस्तंभमजीर्णं च प्लीहानां नाशयेद्धि च ॥

अर्थ–देवदारु, नागरमोथा, दारुहलदी, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, वायविडंग और त्रिफला ये सब औषध एक एक

---

१ सोंठ,सफेद मूसली,गिलोय,शतावर और गोखरू इन पांच औषधों की पञ्चामृत संज्ञा है ॥

भाग लेवे और मंडूरभस्म २ भाग ले सब का चूर्ण एकत्र करके अष्ट[1] प्रकार के मूत्रों में अथवा गौ की छाछ में मिलायके पीवे तो कामला, पांडुरोग, प्रमेह, बवासीर, सूजन, कोढ, कफरोग, ऊरुस्तंभ, अजीर्ण, प्लीहा इन का नाश होवे ॥

मंडूरलवण

कृत्वाग्निवर्णं मलमायसंतु मूत्रेभिषिंचेद्बहुशो गवां च ।
तत्रैव सिंधूत्थसमं विपाच्यं निरुद्धधूमं च बिभीतकाग्नौ ॥
तक्रेण पीतं मधुनाथवापि बिभीतकाख्यं लवणं प्रयुक्तम् ।
पांड्वमयिभ्यो हितमेतदस्मात्पांड्वामयघ्नं नहि किंचिदन्यत् ॥

अर्थ–लोहे की कीटी को अग्नि में अग्नि के समान लाल करके गोमूत्र में भिगो देवे इस प्रकार अनेक वार करे फिर सैंधानिमक और वह लोहकीट को गोमूत्र में डालके धूंआ न निकले इस प्रकार भिलाए की अग्नि से पचावे इस को बिभीतकाख्यलवण कहते हैं इसे छाछ के साथ अथवा सहत के साथ पीवे यह पांडुरोग पर हितकारी है इस के समान पांडुनाशक दूसरी औषध नहीं है ॥

सन्निपातपांडुनिदान

सर्वान्नसेविनः सर्वे दुष्टा दोषास्त्रिदोषजम् ।
लिंगैः कुर्वंति दोषाणां पांडुरोगं सुदारुणम् ॥

अर्थ–जो प्राणी सर्व प्रकारके (खट्टे चरपरे आदि) रसोंका सेवन करता है उसके तीनों दोष कुपित हो त्रिदोषके लक्षणवाले ऐसे त्रिदोषज पांडुरोगको करे है ॥

पांडु का असाध्य लक्षण

ज्वरारोचकहृल्लासच्छर्दितृष्णाक्लमान्वितः ।
पांडुरोगी त्रिभिर्दोषैस्त्याज्यः क्षीणो हतेंद्रियः ॥

अर्थ–ज्वर, अरुचि, ओकारी, प्यास और क्लम तथा वमन इतने उपद्रवयुक्त जो त्रिदोषजन्य पांडुरोगी और क्षीण हो गया हो और जिस रोगी के इन्द्रियों की अपने अपने विषय ग्रहण करने की शक्ति जाती रही हो ऐसे रोगी को वैद्य त्याग दे ॥

असाध्यलक्षण

शूनाक्षिकूटगंडभ्रूः शूनपन्नाभिमेहनः । कृमिकोष्ठोतिसार्येत मलं चासृक्कफान्वितम् ॥ पांडुरोगाश्चिरोत्पन्नः खरीभूतो न सिध्यति ।

---

१ गौ, भैंस, बकरी, भेड,गधा, घोडा, ऊंट और हाथी इनके मूत्रों की अष्टमूत्र संज्ञा है ।

कालप्रकर्षाच्छूनांगो यो वा पीतानि पश्यति ॥ बद्धाल्पविट्सहरितं सकफं योतिसार्यते । दीनः श्वेतादिदिग्धांगच्छर्दिमूर्छातृडर्दितः ॥

अर्थ–नेत्र, कपोल, भृकुटी, पैर, नाभि और लिंग इन में सूजन हो और कोठे में कृमि पड जाय तथा रुधिर और कफ मिला दस्त उतरे. सब पांडुरोगों में जब पेट में कृमि पड जाय है तब ये पूर्वोक्त लक्षण होते हैं यह (जैज्जट आचारीका मत है और कोई कहता है ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोग के लक्षण हैं क्योंकि मृत्तिकाजन्य पांडुरोग लक्षण के अनंतर लिखें हैं परंतु विदेहने तो ये मृत्तिकाजन्य पांडुरोग के लक्षण स्पष्ट कहे हैं) बहुत दिन का पांडुरोग–काल बहुत बीतने से पुराना हो जाय है सो अच्छा नहीं होय । अथवा–सब देह में सूजन आ गई होवे और उस को पदार्थ पीले दीखें सो भी असाध्य है । अथवा–जिस मनुष्य का बंधा हुआ मल थोडा हरे रंग का कफमिश्रित उतरे सो भी असाध्य है । अथवा–जो पुरुष दीन कहिये ग्लानियुक्त हो और जिस की देह का श्वेत वर्ण हो और वमन, मूर्च्छा, प्यास इन से पीडित होवे सो पांडुरोगी नष्ट होवे ॥

दूसरा प्रकार

सनास्त्यसृक्क्षयादींश्च पांडुश्वेतत्वमाप्नुयात् ।पांडुदंतनखो यस्तु पांडुनेत्रश्च यो भवेत्॥पांडुसंघातदर्शी च पांडुरोगी विनश्यति॥

अर्थ–जो रुधिरक्षय होने से पांडुरोग उत्पन्न होय सोभी असाध्य है जिस के दांत, नख और नेत्र पीले होय वो रोगी असाध्य है । जिस को सब पदार्थ पीले ही पीले दीखे वो रोगी मरे। हाथ, पैर,शिर इन में सूजन हो और जिस का मध्य पतला होय ऐसा पांडुरोगी असाध्य है–या से विपरीत साध्य है ॥

तीसरा प्रकार

अंतेषु शूनं परिहीनमध्यं म्लानं तथांतेषु च मध्यशूनम् । गुदे च शेफस्यथ मुष्कयोश्च शूनं प्रताम्यं तमसंज्ञकल्पम् ॥ विवर्ज्जयेत्पांडुकिनं यशोर्थी तथातिसारज्वरपीडितं च ॥

अर्थ–जिस रोगी के देह के मध्य में सूजन हो ओर हाथ,पग, शिर ये सूख जाय तथा गुदा,लिंग इन में सूजन होय तथा मरे के समान हो गया होय ऐसे पांडुरोगी को जिस वैद्य को यश की इच्छा हो सो त्याग दे । उसी प्रकार अतिसार और ज्वर इन से पीडित रोगी को वैद्य त्याग देवे ॥

त्रिफलादिलेह

त्रिफलायास्त्रयो भागास्त्रयस्त्रिकटुकस्य च। भागश्चित्रकमूलस्य विडंगानां तथैव च॥ पंचाश्मजतुनो भागास्तथा रूप्यमलस्य च। शुद्धलोहस्य रजसो भागाश्चाष्टौ प्रकल्पयेत्॥ अष्टौ भागाः सतापस्तु तत्सर्वं मधुसंयुतम्। श्लक्ष्णचूर्णं सुसंस्थाप्यमायसे भाजने शुभे॥ उदुंबरसमां मात्रां ततः खादेद्यथाग्निना। दिने दिने प्रयोक्तव्यं जीर्णभोज्यं यथोचितम्॥ वर्जयित्वा कुलित्थांस्तु काकमाचीकपोतकान्। पांडुरोगं विषं कासं यक्ष्माणं विषमज्वरम्॥ कुष्ठानि जठरं मेहं श्वासं शोफमरोचकम्। विशेषाच्च ह्यपस्मारं कामलागुदजानि च॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल, चीते की छाल, वायविडंग ये सब औषध एक २ भाग लेवे तथा शिलाजीत, रूपे की भस्म और मंडूर ये पांच २ भाग लेवे, शुद्ध लोह की भस्म और सुवर्णमाक्षिक ये प्रत्येक आठ२भाग लेवे इन सब का चूर्ण सहत डालके सब को लोहे के पात्र में भर देवे फिर इस में से अग्निबल विचारके एक तोले पर्यंत की मात्रा प्रतिदिन देवे, जब पच जावे तब यथायोग्य पथ्य देवे परंतु कुलथी, मकोय, कबूतर ये खाना वर्जित है यह पांडुरोग, विष, खांसी, राजरोग, विषमज्वर, कोढ, जलंधर, प्रमेह, श्वास, सूजन, अरुचि, मृगी, कामला और बवासीर ये रोग नाश करे॥

फलत्रिकादिकाढा

फलत्रिकामृता वासा तिक्ता भूनिंबनिंबजः।
काथः क्षौद्रयुतो हन्यात्पांडुरोगं सकामलम्॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता, नीम के पत्ते इन सब के काढे में सहत डालके पीवे तो पांडुरोग और कामला इन का नाश करे॥

पुनर्नवादिकाढा

पुनर्नवानिंबपटोलशुंठी तिक्तामृता दार्व्यभयाकषायः।
सर्वांगशोफोदरपांडुरोगं स्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु॥

अर्थ–सांठी की जड, नीम की छाल, पटोलपत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारुहलदी और हरड इन का काढा सर्वांग की सूजन, जलंधर, पांडुरोग, स्थूलता, मुख से पानी का गिरना और कफरोग इन का नाश करे ॥

वासादिकाढा

वासामृतानिंबकिरातकट्वीकषायकोयं समधुर्निपीतः ।
सकामलं पांडुमयास्रपित्तं हन्याद्धलीमं च कफादिकान् गदान्॥

अर्थ–अडूसा, गिलोय, नीम की छाल, चिरायता और कुटकी इन का काढा, सहत और घी डालके देवे तो कामला, पांडुरोग, रक्तपित्त, हलीमक और कफादिक व्याधि इन को नाश करे ॥

दार्व्यादिवटक

दार्वीत्वङ्माक्षिको धातुर्ग्रंथिको देवदारु च । एषां द्विदलिकान्भागान्कृत्वा चूर्णं पृथक् पृथक् ॥ मंडूरं द्विगुणं चूर्णं शुद्धमंजनसन्निभम् । मूत्रे चाष्टगुणे पक्त्वा तस्मिंस्तत्प्रक्षिपेन्नरः॥ उदुंबरसमान्कृत्वा वटकांस्तान्यथाग्नि च । उपयुंजीत तक्रेण जीर्णसात्म्यं च भोजनम् ॥ मंडूरवटका ह्येते प्राणदाः पांडुरोगिणः । कुष्ठानि प्रवरं शोथमूरुस्तंभं कफामयान् ॥ अर्शांसि कामलामेहं प्लीहानं शमयंति च ॥

अर्थ–दारुहलदी, दालचीनी, सोनामक्खी की भस्म, पीपरामूल, देवदारु ये औषध आठ २ तोले ले और मंडूर १६ तोले इन सब को एकत्र करके आठ गुणे गोमूत्र मे पचाके इस में से एक २ तोले की गोली करे इस को रोगी का बलाबल विचारके देवे इस के ऊपर पुराने और आत्मा को हितकारी ऐसे पदार्थ पथ्यमें देवे यह मंडूरवटक पांडुरोगी को प्राणदायक है तथा कोढ, सूजन, ऊरुस्तंभ, कफरोग, ववासीर, कामला, प्रमेह और प्लीहा इन की शांति करे ॥

किराताादिमंडूर

किराततिक्तं सुरदारुदार्वी मुस्तागुडूची कटुकापटोलम् । दुरालभापर्पटकं सनिंबा कटुत्रिकं वन्हिफलत्रिकं च ॥ फलं विडंगस्य समांशकानि सर्वैः समं चूर्णमथायसं च ॥ सर्पिर्मधुभ्यां वटिका विधेया तत्रानुपानाद्भिषजा प्रयोज्या ॥ निहंति पांडुं च हलीम-

कं च शोथं प्रमेहं ग्रहणीरुजं च । श्वासं च कासं च सरक्तपित्त-मर्शांस्यथोर्वोग्रहमामवातम् ॥ व्रणांश्च गुल्मान् कफविद्रधीश्च श्वित्रं च कुष्ठं सततप्रयोगात् ॥

अर्थ-चिरायता, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोथा, गिलोय, कुटकी, पटोलपत्र, धमासा, पित्तपापडा, नीम की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, हरड, बहेडा, आमला और वायविडंग ये सब समान भाग ले लोहभस्म सब चूर्ण के समान लेके उस की सहत और घी के साथ गोली बनावे इस को अनुपान के साथ देवे तो पांडुरोग, हलीमक, सूजन, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, खांसी, रक्तपित्त, बवासीर, ऊरुग्रह, आमवात, व्रण, गोला, कफरोग, विद्राधि और सपेद कोढ इन सब को नष्ट करे ॥

अभयादिमोदक

अयास्तिलत्र्यूषणकोलभागैः सर्वैः समं माक्षिकधातुचूर्णम् ।
तैर्मोदकः क्षौद्रयुतो हि भक्तः पांड्वामये दूरगतोपि शस्तः ॥

अर्थ-लोहभस्म, तिल, सोंठ, मिरच, पीपल और बेर के फल की छाल ये समान भाग लेवे इन सब की बराबर सुवर्णमाक्षिक की भस्म डालके गोली बनावे इस को सहत में मिलायके खावे तो असाध्य भी पांडुरोग नष्ट होवे ॥

पाण्ड्वरिरस

रसगंधाभ्रलोहैक्यं पांड्वरिः पुटितं त्रिधा ।
कुमार्यास्तु चतुर्वल्लं पांडूकामलपूर्वहृत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म ये समान भाग ले इन को घीगुवार के रस की तीन भावना देवे तो यह पांड्वरिरस सिद्ध होय इस को चार वल्ल (१२ रत्ति) के प्रमाण सेवन करने से कामला और पांडु इन का नाश करे ॥

पुनर्नवादिवटक

पुनर्नवात्रिवृद्व्योषविडंगं दारुचित्रकम् । कुष्टं हरिद्रे त्रिफला दंती चव्यं कलिंगकम् ॥ कटुकापिप्पलीमूलं मुस्तं शृंगी च कारवी । यवानी कट्फलं चेति पृथक्पलमितं मतम् ॥ मंडूरं द्विगुणं चूर्णं गोमूत्रेष्टगुणे पचेत् । गुडवद्वटकान्कृत्वा तक्रेणालोड्य तान्पिबेत् ॥ पुनर्नवादिमंडूरवटोश्विभ्यां विनिर्मितः । पांडुरोगं पुराणं च कामलां च हलीमकम् ॥ श्वासं कासं च यक्ष्माणं

ज्वरं शोथं तथोदरम् । शूलप्लीहप्रदध्मानमर्शांसि ग्रहणीं कृमीन्॥ वातरक्तं च कुष्टं च सेवनान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ–पुनर्नवा (सांठ), निसोथ, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, कूट, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, दंति, चव्य, इन्द्रजो, कुटकी, पीपलमूल, नागरमोथा, काकडासिंगी, बडीसोफ (मगरेला), अजमायन, कायफल, ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और मंडूर ८ तोले ले सब को एकत्र करके आठ गुने गोमूत्र में पचावे जब गुड के समान पाक हो जावे तब उस की गोली बनायके इस को छाछ के साथ देवे यह पुनर्नवादि मंडूर अश्विनीकुमार ने पुराने पांडुरोग, हलीमक, श्वास, खांसी, क्षय, ज्वर, सूजन, जलंधर, शूल, प्लीहोदर, अफरा, बवासीर, संग्रहणी, कृमि, वातरक्त और कोढ इन के नाश करने को उत्पन्न करा है इस के सेवन करने से पूर्वोक्त सर्व व्याधि नष्ट होवे ॥

लोहासव पांडुरोगादिकों पर

लोहचूर्णं त्रिकटुकं त्रिफलां च यवानिकाम् । विडंगं मुस्तकं चित्रं चतुःसंख्यापलान् पृथक् ॥ धातकीकुसुमानां तु प्रक्षिपेत्पलविंशतिः । चूर्णीकृत्वा ततः क्षौद्रं चतुःषष्टिपलं क्षिपेत् ॥ दद्यात् गुडे तुलां तत्र जलद्रोणद्वयं तथा । घृतभांडे विनिक्षिप्य निदध्यान्मासमात्रकम् ॥ लोहासवममुं मर्त्यः पिबेदग्निकरं परम्। पांडुश्च पृथुगुल्मानि जठराण्यर्शसां रुजम्॥ कुष्टं प्लीहामयं कंडूं कासश्वासभगंदरम् । अरोचकं च ग्रहणीं हृद्रोगं च विनाशयेत् ॥

अर्थ–लोहभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, अजमायन, वायविडंग, नागरमोथा और चीते की छाल ये ग्यारह औषधी चार चार पल लेवे तथा धाय के फूल २० पल ले सब का चूर्ण करके ६४ पल सहत और १ तुला गुड ले इस में पूवोक्त चूर्ण मिलायके दो द्रोण जल डाले फिर सब को घी के चिकने वासन में भरके और मुख पर मुद्रा देकर एकांत में धर देवे इस प्रकार एक महीने तक धरा रहने देवे फिर मुद्रा को दूर करे इस को लोहासव कहते हैं यह आसव पीवे तो जठराग्नि प्रदीप्त होवे तथा पांडुरोग, सूजन, पेट के गोले का रोग, बवासीर, कोढ, प्लीहा (पिलही), खुजली, खांसी, श्वास, भगंदर, अरुचि, संग्रहणी, हृदय का रोग इन सब रोगों को यह लोहासव दूर करे है ॥

गोमूत्रलोह

सप्तरात्रं गवां मूत्रं भावितं चायसो रजः।
पांडुरोगप्रशांत्यर्थं पयसा प्रपिबेन्नरः॥

अर्थ-गौ के मूत्र में लोहे को सात रात दिन भीगने देवे फिर इस मूत्र को दूध के साथ मिलायके पांडुरोगी मनुष्यको पिलावे तो पांडुरोग दूर हो॥

गोमूत्रसिद्धमंडूर

गोमूत्रसिद्धमंडूरचूर्णं सगुडमिश्रितम्।
पांडुरोगः क्षयं याति पंक्तिशूलं च दारुणम्॥

अर्थ-गोमूत्र में मंडूर को पचायके उस को गुड में मिलायके पांडुरोगी को खिलावे तो पांडुरोग पक्तिशूल (परिणाम शूल) नष्ट होवे॥

नवायसादिचूर्ण पांडुरोगादिकों पर

चित्रकं त्रिफला मुस्तं विडंगं त्र्यूषणानि च। समभागानि कार्याणि नव भागा हतायसः॥ एतदेकीकृतं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत्। गोमूत्रमथवा तक्रमनुपाने प्रशस्यते॥ पांडुरोगं जयत्युग्रं त्रिदोषं च भगंदरम्। शोथकुष्ठोदरार्शांसि मंदाग्निमरुचिं कृमीन्॥

अर्थ-चीते की छाल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल ये नौ औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्ण के समान लोह भस्म ले उस चूर्ण में मिलाय देवे फिर यह चूर्ण सहत और घी मिलाके सेवन करे अथवा गौमूत्र में किंवा गौ की छाछ के साथ सेवन करे तो घोर पांडुरोग दूर होवे तथा त्रिदोष, भगंदर, सूजन, कोढ, उदररोग बवासीर, मंदाग्नि और कृमिरोग ये सब रोग दूर होवें॥

दूसरा नवायसचूर्ण

त्र्यूषणं त्रिफला मुस्ता विडंगं चित्रकं समम्। नवायोरजसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा॥ भक्षयेत्पांडुहृद्रोगकुष्ठार्शःकामलापहम्। गोमूत्रेण पिबेद्वातपांडुरोगं च नाशयेत्॥ शोथहृद्रोगमुदरं कृमिकुष्ठं भगंदरम्। नाशयेदग्निमांद्यं च दुर्नामकमरोचकम्॥ आर्द्रकस्य रसेनापि लिह्यात्कफसमृद्धिमान्। गुंजामेकां समारभ्य यावत्स्युर्नव रक्तिकाः॥प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां पिबेत्तक्रेण वा सह॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आमला, नागरमोथा, वायविडंग और चित्रक ये समान भाग लेवे तथा लोहभस्म ९ भाग, सब को एकत्र करके इसे सहत और घी में मिलायके पांडुरोग, हृदयरोग, कोढ, बवासीर, कामला इन पर देवे यदि गोमूत्र के साथ इस को देवे तो वादी का पांडुरोग, सूजन, हृदयरोग, जलंधर, कृमिरोग, कोढ, भगंदर, मंदाग्नि, बवासीर और अरुचि ये रोग नष्ट होवे तथा अदरख के रस से दिया जाय तो कफरोग नष्ट हो यह चूर्ण एक रत्ती से लेकर नौ रत्ती पर्यंत देना चाहिये अथवा अठारह रत्ती पर्यंत बलाबल विचारके सहत घी अथवा छाछ के साथ देवे ॥

लोहादिचूर्ण जीर्णपांडु पर

लोहं कटुत्रिकंकोलं तिलं वा चूर्णसमं कीलकमाक्षिक-
संयुक्तं ।क्षौद्रयुतं च सतक्रमेव हि जीर्णतरे खलु पांडुगदेपि ॥

अर्थ लोह की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, कंकोल, तिल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म इन का चूर्ण १ तोले को सहत अथवा छाछ इन के साथ देवे तो बहुत दिन क पांडुरोग नष्ट होवे ॥

शिलाजितादियोग

शिलाजतुक्षौद्रविडंगसर्पिर्लौहाभयाशर्करया समक्षम् ।
आपूर्यते दुर्बलदेहधारी त्रिपंचरात्रेण यथा शशांकः ॥

अर्थ—शिलाजीत, सहत, वायविडंग, घी, हरड और खांड इन सब का समान भाग चूर्ण करके देवे तो पंद्रह दिन में देह बलवान् होवे जैसे चंद्रमा परिपूर्ण होता है॥

मंडूरवज्रवटक

पंचकोलमरिचं देवदारुफलत्रिकम् । विडंगमुस्तायुक्ताश्च भागा-
स्त्रिफलसंमिताः ॥ यावंत्येतानि चूर्णानि मंडूरं द्विगुणं ततः ।
पक्त्वाष्टगुणिते मूत्रे तद्घनीभूतमुद्धरेत् ॥ ततोक्षमात्रान् वटका-
न् पिबेत्तक्रेण तक्रभुक् । पांडुरोगं जयेत्तद्वन्मंदाग्नित्वमरोचक-
म् ॥ मंडूरवज्रवटको रोगानीकप्रभेदतः । अर्शांसि ग्रहणीशो-
फमूरुस्तंभं हलीमकम् ॥ कृमिप्लीहानमुदरं गलरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ—पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, देवदारु, हरड, ब-

हेडा, आवला, वायविडंग और नागरमोथा ये सब औषध समान भाग ले सब से दूना मंडूर लेवे सब से आठ गुने गोमूत्र में डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उतारके एक २ तोले की गोली बनायके एक गोली छाछ के साथ देवे तथा छाछ भात पथ्य में देवे तो पांडुरोग, मदाग्नि, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, सूजन, ऊरुस्तंभ, हलीमक, कृमिरोग, प्लीहा, उदररोग, गलरोग तथा यह अनेक रोगों को नाश करे है ॥

हंसमंडूर

मंडूरं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं गोमूत्रेष्टगणे पचेत्। पंचकोलं देवदारुमुस्तव्योषफलत्रयं॥विडंगं स्यात्प्रतिपलं पाकांते चूर्णितं क्षिपेत्। भक्षयेत्कर्षमात्रं च तक्रे तक्रं च भोजने ॥ पांडुशोफंहलीमं च ऊरुस्तंभं च कामलां। अर्शांसि हंति नो चित्रं हंसमंडूर उच्यते ॥

अर्थ–मंडूर में आठ गुना गोमूत्र डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब उस में पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, देवदारु, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला और वायविडंग इन प्रत्येक को चार २ तोले लेके सब का चूर्ण करके उस अवलेह में मिलाय एक २ तोले की गोली बनावे इस को छाछ के साथ देवे तथा पथ्य में छाछ भात देवे तो पांडुरोग, सूजन, हलीमक, ऊरुस्तंभ, कामला और बवासीर इन को नाश करे इस को हंसमंडूर कहते हैं ॥

सिद्धमंडूर

मंडूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेष्टगुणे पचेत्। पुनर्नवात्रिवृत्त्र्यूषं विडंगं देवदारुकम्॥ द्विनिशा पुष्करं वह्निर्दंती चव्यं फलत्रिकम्। कुटजस्य फलं तिक्ता पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ विषं च प्रतिकर्षस्य चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत्। मंडूरस्य च पाकांते अक्षमात्रं वटीकृतम् ॥ पांडुशोफोदरानाहशूलसत्कृमिगुल्मनुत्। इत्येवं सिद्धमंडूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥

अर्थ–मंडूर ३२ तोले और गोमूत्र २५६ तोले दोनों को एकत्र कर अग्नि पर रखके पचन करे जब गाढा हो जावे तब इस में पुनर्नवा, निशोथ, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, पुहकरमूल, चीते की छाल, दंती, चव्य, हरड, बहेडा, आवला, इन्द्रजो, कुटकी, पीपरामूल, नागरमोथा, अतीस इन प्रत्येक का तोले २ चूर्ण उस में मिलावे जब पाक हो जावे तब एक एक तोले की

गोली बांधे यह सिद्धमंडूरवटक पांडुरोग, सूजन, उदर, अफरा, शूल, कृमि और गोला तथा सर्व रोगों का नाश करे है ॥

अमृतहरीतकी

शतावरीभृंगराजपुनर्नवकुरंटकैः। प्रतिसप्तपलं चूर्णं जले क्वाथ्यं चतुर्गुणे॥ पादशेषं कषायं तु वस्त्रपूतं समाहरेत्। हरीतकीपलं तस्मिन् षष्ठं चाधिशतत्रयम् ॥ पाचयेद्विधिवच्चैव त्रिंशद्दुग्धपलं पचेत्। भित्वा निवारयेदंडं तद्गर्भे सर्वमौषधम्॥ षट्पलं रसगंधौ च शुद्धे पात्रे क्षणं पचेत्। उत्तार्य चालयेत्तावद्यावत्कठिनतां व्रजेत्॥ चूर्णयित्वामृतासत्वं पलं सप्त विमिश्रयेत्। मधुना वटिका कार्या षष्ट्याधिकशतत्रयम्। एकैका ह्यभया गर्भे क्षिप्त्वा सूत्रेण बंधयेत्। मधुभांडे क्षिपेत्पश्चादेकैकां भक्षयेद्द्विजम्॥ शुष्कपांडुहरं सम्यगमृताया हरीतकी॥

अर्थ—शतावर, भांगरा, पुनर्नवा और पियावांसा ये प्रत्येक अठाईस २ तोले लेवे इन को चौगुने जल में चढाय काढा करके उतार लेवे, फिर काढे को छान के इस में हरड १४४० तोले डालके १२० तोले गौ का दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके हरडों को सिजावे जब नरम हो जावें तब उन को फोडके गुठली निकालके फैंक देवें और पारा २४ तोले, गंधक २४ तोले दोनों को एक पात्र में चढायके पचन करावे जब दोनों सघन हो जावें तब उन का चूर्ण कर उस में गिलोय का सत्व २८ तोले मिलायके सहत से ३६० गोली बनावे इन को गुठली निकाली हुई हरडों में भरे और सूत से लपेट देवे फिर इन को सहत के वासन में गेर देवे इस में से नित्य प्रति एक हरड खाय तो यह अमृतहरीतकी शुष्क पांडुरोग का नाश करे॥

पंचकोलघृत

पंचकोलं यवाग्रं च क्षीरं दध्ना घृतं पुनः। समांशानि तु योज्यानि भार्गी कुष्ठं च पौष्करम् ॥ शतं तत्र हरीतक्या जलेनैव चतुर्गुणम्। क्वाथं नैकत्र योज्यांते क्वाथयेन्मृदुवन्हिना॥ मृदुपाकघृतं सिद्धं पाने नस्ये च बास्तिषु। गुणाधिक्यं भवेन्नृणां पांडुरोगे हलीमके॥ क्षये च राजयक्ष्मे च शस्तमुक्तं भिषग्वरैः॥

अर्थ–पींपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जों के अग्रभाग (अर्थात् जों के तुस), दूध, दही, घी, भारंगी, कूठ, पुहकरमूल ये समान भाग लेवे और ३०० सौ जवाहरड ले इन सब के काढे में घी मिलायके मंद २ अग्निपर पचावे; इस घी के पीने से नस्य और बस्ति इन में देवे यह मनुष्य को उत्तम गुणकारक है, यह पांडु-रोग, हलीमक, क्षय और राजरोग इन रोगों में देना वैद्यों ने उत्तम कहा है ॥

साधारणयोग

वन्हिचूर्णनिशाभाव्यं धात्रीफलकषायकैः ।
गव्येनाज्येन दातव्यं निशायां पांडुरोगिणाम् ॥

अर्थ–चित्रक को चूर्ण के आंवले को काढे में तीन भावना देवे फिर गौ के घी में मिलायके पांडुरोगवाले को रात्रि के समय देवे तो पांडुरोग नष्ट होय ॥

देवदालीयोग

देवदाल्यास्तु पंचांगचूर्णं क्षीरेथ वा जले ।
निष्कमात्रं पिबेन्नित्यं मासात्पांडुगदापहम् ॥

अर्थ–देवदाली (वंदाल वा घघरवेल) के पंचांग के चूर्ण को दूध अथवा जल के साथ ४ मासे एक महीने पर्यंत देवे तो पांडुरोग को नाश करे ॥

गोमूत्रहरीतकीयोग

त्रिःसप्ताहं गवां मूत्रैरभयां च विभावयेत् ।
एकैका भक्षिता नित्यं पांडुरोगविनाशिनी ॥
हस्तिकर्ण्याः समूलायाश्चूर्णपानेन पांडुजित् ॥

अर्थ–हरडों को २१ दिन पर्यंत गोमूत्र में भीगने देवे फिर इस में से एक एक नित्य भक्षण करे तो पांडुरोग का नाश करे। अथवा समूल हस्तिकर्ण (कासालू) लेकर चूर्ण करके देवे तो पांडुरोग का नाश होय ॥

भूनिंबादिगुटी

भूनिंबाब्दपटोलनिंबकटुकादार्वीविडंगामृतावासाक्षामलकाभया-
मरकणाविश्वौषधैश्चूर्णितैः । तुल्यैः पर्पटचूर्णितैः सदहनैः सल्लो-
हचूर्णार्द्रकैः कर्तव्या मधुसंयुता च गुटिका पांड्वामयग्राहहा ॥

अर्थ–चिरायता, नागरमोथा, पटोलपत्र, नीम की छाल, कुटकी, दारुहलदी, वाय-विडंग, गिलोय, धमासा, बहेडा, आमले, हरड, पीपल, सोंठ, पित्तपापडा, चीते की

छाल, लोहे की भस्म इन सब को समान भाग ले चूर्ण करे फिर इस की अदरख के रस में गोली बनावे इस को सहत के साथ खाने को देवे तो घोर पांडुरोग का नाश करे ॥

मदेभसिंहसूत

रसगंधवराताम्रशंखविषनगाभ्रकांतीक्ष्णमुंडं । अथा हिंगुलं टंकणं समांशं सकलतस्त्रिगुणं पुराणकिट्टं ॥ पशुमूत्रविशोधितं तु भृष्ट्वा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोध्य नरामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगाग्निघृतं विपाच्यं गुटिका गुंजमिता निजानुपानैः । ज्वरपांडुतृषास्रपैत्त्यगुल्मक्षयकासस्वरमग्निसादमूर्छाः ॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान् सकलं पित्तहरेमदावृतं च । बहुना किमयं यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरड, बहेडा, आंवला, तामे की भस्म, शंखभस्म, सिंगियाविष, अभ्रक, कांतीलोह, तीक्ष्णलोह, मुंडलोह इन की भस्म और हींगलू तथा सुहागा ये सब समान भाग लेवे इन सब से तिगुना मंडूर ले सब को गोमूत्र में शोधन कर भूनके निकाल लेवे फिर हरड, बहेडा, आंवला, भांगरा और अदरख इन के रस में खरल करके सुखाय ले फिर त्रिफला, गिलोय इन के अठगुने रसों की भावना देकर फिर पुनर्नवा के स्वरस को डालके अग्निपर रखके पचावे जब गाढा हो जावे तब एक २ रत्ती की गोली बनावे इस को रोग २ के अनुपान से देवे तो ज्वर, पांडुरोग, तृषा, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभेद, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वातव्याधि आदि आठ असाध्य रोग, पित्तव्याधि इन को नाश करे यह संपूर्ण व्याधिरूप हाथी के मारने को सिंहरूप है ॥

त्रैलोक्यनाथरस

पलानि चत्वारि रसस्य पंच गंधस्य सत्वस्य गुडूचिकायाः ।
व्योषस्य चूर्णस्य सतालमूल्याः सशाल्मलस्येह पलत्रयं स्यात् ॥
पृथक् पृथक् षड्गगनस्य चाष्टौ लोहस्य सर्वं त्रिफलाजलेन ।
घृष्टं चतुःषष्टिमितं तदर्धाः स्युर्भावनायार्द्रकजद्रवस्य ॥
शिग्रूत्थनीरेण च षोडशाष्टौ तथानलोत्था गृहकन्यकायाः ।

आर्द्रद्रवस्येति रसोयमुक्तो पांडुक्षयश्वासगदार्तिहंता ॥
क्षौद्रेण वै शर्करया घृतेन कर्षार्धमेतस्य भजेत्प्रगुंजात् ॥

अर्थ–पारा १६ तोले, गंधक २० तोले, गिलोय का सत्व, सोंठ, मिरच, पीपल, मूसली और सेमर का गोंद ये प्रत्येक १२ तोले लेवे. अभ्रक २४ तोले, लोहभस्म ३२ तोले, सब को एकत्र करके चूर्ण करके त्रिफला के काढे की ६४ भावना देवे, अदरख के रस की ३२ भावना सहजने के रस की १६, चित्रक के रस की ८, घीगुवार-के रस की ८, फिर अदरख के रस की ८ इस प्रकार देकर उस में से सहत खांड और घी इन के साथ छः मासे देवे तो पांडुरोग, क्षय, श्वास इन सब रोगों को नाश करे ॥

उदयभास्कर

भागैकं रसगंधकं द्विगुणितं शुल्बं च भागाष्टकं शैलेयास्त्रयताल-कद्वयमिदं शुद्धं च खल्वे कृतं । अर्धं व्योषजवेदभागसहितं भागद्वयं चामृतं निर्गुण्डयार्द्रकभृंगराजसहितं भाव्यं जयंतीरसैः॥ प्रत्येकं दिनसप्तकं तु सुदृढं शोष्यं च सूर्यातपे योज्यं गुंजमितं रसार्द्रसहितं व्योषेण संमिश्रितं । पांडूकामलरोगशोकदहनं सन्ने त्रिदोषे ज्वरे मेहप्लीहजलोदरं ग्रहणिका कुष्ठं धनुर्वातजं॥ पथ्यं षष्टिकतंदुलं नवनितं तक्रं च शाल्योदनं देयश्चोदयभास्करः क्षितितले सर्वाधिकारान् जयेत् ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, तामे की भस्म ८, शिलाजीत ३, हरताल २, सोंठ, मिरच, पीपल तीनों ४ तथा सिंगियाविष २ भाग लेवे इन सब को एकत्र करके निर्गुंडी, अदरख, भांगरा और अरनी इन के रस की पृथक् २ सात २ भावना देवे अर्थात् खरल करे और धूप में सुखाय लेवे. इस में से १ रत्ती यह रस अदरख के रस और त्रिकुटा इन के साथ देवे तो पांडुरोग, कामला, सूजन, मंदाग्नि, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, प्लीहा, जलंधर, संग्रहणी, कोढ, धनुर्वात इन का नाश करे इस पर पथ्य में सांठी चावल का भात, छाछ और शाल्योदन (पुराने चावलों का भात), यह उदयभास्कर संपूर्ण रोगरूप अंधकार को नाश करे है इसी से इस की उदय-भास्कर संज्ञा है ॥

कामेश्वररस

पलं सूतं पलं गंधं बन्हिपथ्यात्रयं त्रयं । मुस्तैलापत्रकानां च

मितं चार्धपलं पलम् ॥ त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं विषं चैव पलं पलम् । नागकेसरकर्षैकं रेणुकार्धपलं तथा ॥ पुरातनगुडेनैव तुलार्धेन प्रपाचयेत् । मर्दयेच्चार्द्रकद्रावैर्यामैकं तद्घृतेन च ॥ गुटिका बदराकारा कारयेद्भक्षयेत्सदा । शोफपांडुहरः सोयं रसः कामेश्वरो ह्ययम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक दोनों चार २ भाग, चीते की छाल और हरड हर एक बारह २ भाग, नागरमोथा, इलायची और पत्रज ये दो दो भाग और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल), पीपरामूल और सिंगियाविष हर एक चार २ भाग, नागकेशर १ तथा रेणुकबीज २ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण कर लेवे; इस में पुराना, गुड २०० तोले मिलाकर पचावे अर्थात् पक्क करे फिर शीतल करके अदरख के रस में १ प्रहर तथा गौ के घी में १ प्रहर मर्दन करके बेर के बराबर गोली बनावे एक गोली नित्य सेवन करे तो सूजन, पांडुरोग इन को नाश करे इस को कामेश्वर रस कहते हैं ॥

कालविध्वंसकरस

शुद्धसूतं हेमतारं ताम्रं तुल्यं विमर्दयेत् । जंबीरनीरसंयुक्तमातपे शोषयेद्दिनम् ॥ सर्वतुल्यं पुनः सूतं क्षिप्त्वा पिष्टिं प्रकल्पयेत् । आदाय बंधयेद्वस्त्रे इष्टिकायंत्रगं पचेत् ॥ जंबीरैर्गंधकं पिष्ट्वा अधश्चोर्ध्वं च दापयेत् । तुल्यं तुल्यं पुनर्देयं रुध्वा लघुपुटे पचेत् ॥ षड्गुणैर्गंधके जीर्णे तदुद्धृत्य विचूर्णयेत् । लोहभस्म समांशं च दत्त्वामर्द्य द्रवैर्दिनम् ॥ कंटकार्या बृहत्या च तथाग्निधमनद्रवैः । प्रतिद्रावैर्दिनं मर्द्य पचेत्पंचाभिरुत्पलैः ॥ एवं नवपुटं देयं द्रवद्रावैस्त्रिधा त्रिधा । वन्ध्यकं चिराबिल्वानां द्रावैर्द्वाद्वैः पुटे पचेत् ॥ अंधमूषागतं पाच्यमादायाचूर्णयेत्पुनः । दशांशेन विषं योज्यं गुंजामात्रं प्रयोजयेत् ॥ कालविध्वंसको नाम रसः पांड्वामयापहः ॥

अर्थ–शुद्धपारा और सुवर्ण, चांदी, ताम्र इन की भस्म समान भाग लेवे सब को जंभीरी के रस में एक दिन धूप मे रखके खरल करे तथा इन सब की बराबर

फिर पारा लेवे सब की कजली करे और कपडे में पोटली बांध लेवे पश्चात् जंभीरी के रस में गंधक घोटकर उस पोटली के ऊपर नीचे देकर इष्टिकायंत्र में धरके पचावे इस प्रकार समान गंधक दे देकर षड्गुण गंधक जारण करे फिर निकालके चूर्ण कर लेवे इस चूर्ण के समान लोहभस्म डालके कटेरी, बडी कटेरी और नीम इन के रस में एक एक दिन खरल करे और पांच उपलों में रख २ के फूंकता जावे इस प्रकार प्रत्येक की तीन २ पुट देवे ऐसे नौ पुट हुई, फिर चित्रक, आंक और कंजा इन की दो दो भावना देवे परंतु प्रत्येक भावना में अंधमूषासंपुट में रख२ के अग्नि में पचाता जावे फिर इस का चूर्ण करके इस का दशमांश शुद्ध सिंगिया विष मिलावे तो यह रस सिद्ध होवे. इस में से १ रत्ती की मात्रा देवे तो यह **कालविध्वंसकरस** पांडुरोग का नाश करे॥

पांड्वरि

रसगंधकलोहैकं पांड्वरिः पुटितस्त्रिधा।
कुमार्याक्तश्चतुर्वल्लपांडुकामलपूर्ववत्॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म ये समान भाग लेवे सब का चूर्ण करके घीगुवार के रस की तीन भावना देकर प्रत्येक भावना में गजपुट में रखके फूंकता जावे तो यह तैयार हो. इस **पांड्वारिरस** चार वल्ल रोगी को देवे तो पांडुरोग और कामला इन का नाश करे॥

पांडुसूदन

रसं गंधं मृतं ताम्रं जयपालं च गुग्गुलम्।
समांशमाज्यसंयुक्तं गुटिकां कारयेन्मिताम्॥
एकैकां प्रददेद्वैद्यः शोथपांडूपनुत्तये।
शीतलं च जलं चाम्लं वर्जयेत्पांड्वसूदने॥

अर्थ–पारा, गंधक, तामे की भस्म, जमालगोटा और गूगल ये समान भाग लेकर इस की घी में गोली बनावे यह बलाबल विचारके एक एक देवे या न्यूनाधिक दे तो सूजन, पांडुरोग इन का नाश करे इस पर शीतलजल और खट्टा रस खाना वर्जित है॥

वंगेश्वर

वंगसूतकयोः कृत्वा सारणं कन्यकाद्रवैः। संमर्द्य वटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने॥ यावच्चंद्रनिभः शुभ्रो वंगेश्वरसमो गुणैः। पांडुप्रमेहदौर्बल्यकामलांतकनाशनः॥

अर्थ-वंग (रांगा) और पारा दोनों को घीगुवार के रस में खरल करके कांचकी आतसी शीशी में पचन करे तो यह चंद्रमा के तुल्य सुंदर वर्ण तथा गुणों में वंगेश्वर की समान और पांडुरोग, प्रमेह, दुर्बलता, कामला इन का नाश करनेवाला यह दूसरा वंगेश्वर है ॥

पांडुनिग्रहरस

अभ्रभस्म रसभस्म गंधकं लोहभस्म मुसलीविमर्दितम् ।
शाल्मलीरसततो गुडूचिकाक्वाथकैश्च परिमर्दितं दिनम् ॥
भावयेत्रिफलयार्द्रकन्यकावन्हिशिग्रुजरसैश्च सप्तधा ।
जायते हि भवजो विवर्जनं शोथपांडुनिवृत्तिदायकम् ॥
वल्लयुग्मपरिमाणतस्त्विमं लेहयेच्च घृतमाक्षिकान्वितम् ।
पथ्यमात्रपरिभाषितं पुरा एतदेव परिवर्जितं हितम् ॥
शोथपांडुविनिवृत्तिदायकः सेवितस्तु यवचिंचिकाद्रवैः ।
नागराग्निजयपालकैस्तु वा वर्ज्यदुग्धपरिपक्कसर्पिषा ॥
तक्रभक्तमिह भोजयेदतिस्निग्धमन्नमतिनूतनं त्यजेत् ॥

अर्थ-अभ्रकभस्म, पारे की भस्म, गंधक, लोहभस्म और मूसली का चूर्ण ये समान भाग ले सब को एकत्र करके सेमर के रस से तथा गिलोय के काढे से एक एक दिन खरल करके फिर त्रिफले का काढा, अदरख, घीगुवार, चीता, सहजने का रस इन सब की पृथक् २ सात २ भावना देवे तो यह पांडुनिग्रह रस बने. इस में से दो वल्ल (छः रत्ती) रस सहत और घी के साथ देवे तो सूजन, पांडुरोग इन का नाश करे इस पर जों, इमली, सोंठ, चित्रक, जमालगोटा और दूध इन को औटायके तथा उस में घी डाला हुआ ये तथा अतिस्निग्धान्न और नूतनान्न ये वर्जित हैं. पथ्य में छाछ भात देवे ॥

अनिलरस

ताम्रभस्म रसभस्म गंधकं वत्सनाभमपि तुल्यभागिकम् ।
वन्हितोयपरिमर्दितं पचेद्यामपादमथ मंदवन्हिना ॥
रक्तिकायुगलमानतोनिलः शोथपांडुघनपंकशोषिता ॥

अर्थ-ताम्रभस्म, पारे की भस्म, गंधक, सिंगियाविष ये सब समान भाग लेवे इन सब को चित्रक के रस में मंदाग्निपर रखके दो घडी पर्यंत घोटे फिर दो २ रत्ती की

गोली बनावे सेवन करने से यह अनिलरस सूजन और पांडुरोग तथा देह के भीतर की कीच अर्थात् तरी को सुखाय देता है ॥

लोहसुंदररस

सूतभस्म मृतलोहगंधकौ भागवर्धितमिदं विनिक्षिपेत् ।
दीर्घनालदृढकूपिकोदरे मृत्स्नया च परिवेष्टितां क्षिपेत् ॥
चुल्लिकोपरि सुकूपिकामुखे प्रक्षिपेच्च वरशाल्मलिद्रवं ।
त्रैफलं वसुगुडूचिकारसं पाचयेच्च मृदुवन्हिना दिनं ॥
स्वांगशीतलमिदं प्रगृह्य च त्र्यूषणार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसुंदररसोयमीरितः शुष्कपांडुविनिवृत्तिदः परः ॥

अर्थ–पारे की भस्म १, लोहभस्म २, तथा गंधक ३ भाग इस प्रकार लेकर खरल करे और उस कजली को कांच की आतसी शीशी में भरके मुख बंद करे ऊपर कपडमिट्टी करके वालुकायंत्र में रखके एक दिन मंदाग्नि से पचन करे और उसी चूल्हे पर उस शीशी के मुख में सेमर का रस, त्रिफले का काढा, वसु का काढा और गिलोय का रस ये डाले जब पचन होकर तैयार हो जावे तब सांग शीतल होने पर उतारके उस में त्रिकुटा और अदरख के रस की भावना देवे यह लोहसुंदररस शुष्क पांडुरोग का नाश करे ॥

चंदनादितैल।

चंदनं सरलं दारु यष्टचेला वालकं सठी । नखशैलेयकं पक्त्वा पद्मकं घनकेसरं ॥ कंकोलकं मुरा मांसी शैलेये द्वे हरीतकी । त्वग्रेण्डका किरातं च सारिवा तिक्तका गुरुः ॥ नलिकावालकं द्राक्षाकषायं सुपरिश्रृतं।तैलमस्तु तथा लाक्षारसेन समभागिकं॥ मंदाग्नौ पाचयेत्तैलं सिद्धं पानेषु बास्तिषु । नस्ये चाभ्यंजने चैव योजयेच्च भिषग्वरः॥ हंति पांडुं क्षयं कासं ग्रहाग्नि बलवर्णकृत् । मंदज्वरमपस्मारं कुष्ठपामाहरं पुनः॥करोति बलपुष्टयोजोमेधाप्रज्ञाविवर्धनं ।रूपसौभाग्यदं प्रोक्तं सर्वभूतवशीकरं ॥

अर्थ–चंदन, सरल, देवदारु, मुलहटी, इलायची, नेत्रवाला, कचूर, नखद्रव्य, शिलाजित, पद्माख, नागरमोथा, नागकेशर, कंकोल, मुरा, जटामांसी, पत्थर का फूल,

छोटी हरड, बडी हरड, दालचीनी, रेणुकबीज, चिरायता, सरवन, कुटकी, अगर, नलिका सुगंध द्रव्य, सुगंधवाला और दाख इन का काढा करके इस में मीठी तिली का तेल, दही का तोड, लाख का सीरा, ये समानभाग डालके मंदाग्नि पर रखके तेल सिद्ध करे. इस के पीने, बस्तिकर्म, नस्य, तथा देह में मालिस करना इन कर्मों में काम लावे तो पांडुरोग, क्षय, खांसी, ग्रहबाधा, मंदज्वर, मृगी, कोढ तथा खुजली इन को नाश करे. तथा बल, वर्ण, पुष्टि, तेज, बुद्धि, स्मृति, रूप, सौभाग्य इन को देवे. तथा सर्व प्राणियों को वशीकरण करनेवाला तेल है ॥

मृत्तिकाभक्षणजपांडुनिदान

मृत्तिकादनशीलस्य कुप्यत्यन्यतमोमलः । कषया मारुतं पित्तमूषरामधुराकफं॥कोपयेन्मृद्रसादींश्च रौक्षाद्भुक्तं च रूक्षयेत् । पूरयत्यविपक्वैश्च स्रोतांसि निरुणद्ध्यपि ॥ इंद्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा । पांडुरोगं करोत्याशु बलवर्णाग्निनाशनं ॥

अर्थ–मिट्टी खाने का जिस मनुष्य को अभ्यास पड जाय उस के वातादिक दो कुपित होवे कषेली माटी से वात कुपित होय खारी माटी से पित्त और मीठी माटी से कफ कुपित होवे फिर वही मिट्टी पेट में जायकर रसादिक धातुओं को रूखा करे. जब रौक्ष्य गुण प्रगट हो जाय तब जो अन्न खाय सो रूखा हो जाय। फिर वहीं मिट्टी पेट में विना पके रस को रस वहनेवाली नसों में प्राप्त कर उन के मार्ग को रोक दे रसके वहनेवाली नसों का मार्ग जब रुक जाय तब इन्द्रियों का बल अर्थात् अपने अपने विषय ग्रहण करने की शक्ति नाश होय शरीर की कांति तेज और ओज कहिये सब धातुओं का सार (हृदय में रहता है सो) क्षीण होकर पांडुरोग प्रगट कर उस में बल, वर्ण और अग्नि इन का नाश होता है ॥

केशरादिकाढा ।

तद्वत्केसरयष्ट्यार्धपिप्पलीसुरसाह्वयैः ।
मृद्द्वेषणाय तल्लोल्ये वितरेद्भाविता मृदं ॥

अर्थ–नागकेशर, मुलहटी, पीपल और निसोथ इन का काढा करके इस की भावना चिकनी सफेद मिट्टी में देवे, फिर इस मिट्टी को खवावे तो वह खाई हुई मिट्टी दस्तों की राह निकलकर विकार को दूर कर देवे ॥

घृत

व्योषबिल्वद्विरजनीत्रिफला द्विपुनर्नवा । मुस्ता चायोरजः पाठा

विडंगं देवदारु च ॥ वृश्चिकाली च भार्ङ्गी च सक्षीरैस्तैर्घृतं शृतं । सर्वान्प्रशमयत्याशु विकारान् मृत्तिकाकृतान् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, बेलगिरी, हरदी, दारुहरदी, हरड, बहेडा, आंवला, सपेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, नागरमोथा, लोहभस्म, पाढ, वायविडंग, देवदारु, मेढासिंगी, भारंगी और दूध इतनी औषधों के काढे में सिद्ध करा हुआ घी मट्टी खाने से हुए सर्व विकारों को नाश करे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे पांडुरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता ॥

कामलाकर्मविपाकः ।

कामली भक्तचोरः स्यात्तस्य वक्ष्यामि निष्कृतिं । कुर्य्याच्च पक्षिराजानं विष्णोर्वाहनमुत्तमं ॥ सुवर्णेन यथाशक्त्या पक्षयोर्मौक्तिकद्वयं । नासिकायां तथा वज्रमुत्तरीयं च राजतं ॥ एवं कृत्वा गरुत्मंतं घृतद्रोणोपरि न्यसेत् । श्वेतवस्त्रेण संवेष्टय श्वेतमाल्यैः समर्चयेत् ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञो वैष्णवो धर्मपाठकः । ब्राह्मणस्त्वर्चितो भक्त्या यजमानेन शक्तितः॥उपचारैः षोडशभिर्द्विजमभ्यर्चयेत्तथा ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्म में भात की चोरी करे है वो कामलारोगी होवे उस पाप के दूर करने को प्रायश्चित कहते हैं सुवर्ण का गरुड पक्षी बनायके उस के पंखों में मोती, नाक में हीरा और उस को चांदी के वस्त्र उढावे. ऐसा गरुड करके १०२४ तोले घी के ऊपर रखके और सपेद वस्त्रों से लपेट कर सपेद फूलमाला से सुशोभित कर पूजा करे. फिर इस को सर्वशास्त्र के तत्ववेत्ता वैष्णव धर्म और पाठ करनेवाला ऐसे ब्राह्मण का पूजन करके यथाशक्ति षोडशोपचार से पूजा करके उस को उस गरुड का दान देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

प्रतिमादान

पीनांगः कामलारोगः कपालमुसलान्वितः ।
पूजाविधानं त्वातंको देवतात्वमुदाहृतः ॥

अर्थ–कामलारोगी को आतंकदेवी की प्रतिमा पीले रंग की और जिस के हाथों में कपाल और मूसल धारण करे होवे ऐसी बनायके उस की पूजा करके ब्राह्मण को देवे ॥

कामलानिदान

पांडुरोगीति योत्यर्थं पित्तलानि निषेवते ।
तस्य पित्तमसृङ्मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते ॥

अर्थ–जो पांडुरोगी अत्यंत पित्तकारक वस्तुओं का सेवन करे उस के पित्त, रुधिर, मांस को जलाय (दुष्ट कर) कामलारूप रोग प्रगट करने को समर्थ होय ॥

लक्षण

हारिद्रनेत्रः सुभृशं हारिद्रत्वङ्नखाननः । रक्तपित्तशकृन्मूत्रो भेकवर्णो हतेंद्रियः ॥ दाहाविपाकदौर्बल्यसदनारुचिकर्षितः ।
कामला बहुपित्तैषा कोष्ठशाखाश्रया मता ॥

अर्थ–उस मनुष्य के नेत्र अत्यंत पीले होय. त्वचा, नख और मुख ये पीले होय मल मूत्र काले होय, अथवा पीले होय, वह मनुष्य वर्षाऋतु के मेंडक के समान पीला होवे, इन्द्रियों की शक्ति नष्ट होय, दाह, अन्न पचे नहीं दुर्बलता, अंगग्लानि, अन्न में अरुचि इन से पीडित होय जिस में पित्त प्रबल ऐसी यह कामला एक कोष्ठाश्रय और दूसरी शाखा (रक्तादि धातु) आश्रित है. उसी प्रकार कामला स्वतंत्र होय है ॥

कामलाचिकित्साक्रम

रेचनं कामलार्तस्य स्निग्धस्यादौ प्रयोजयेत् ।
ततः प्रशमनी कार्या क्रिया वैद्येन जानता ॥

अर्थ–ज्ञाता वैद्य होवे उस को कामलारोग से पीडित ऐसे मनुष्य को दूध, घी, कोईसा स्निग्ध पदार्थ पिलायके दस्त करावे फिर दोष शमन करनेवाली औषध देनी चाहिये ॥

नस्य व अंजन

हिंगु वा लोचने न्यस्तं कामलोन्मूलने क्षमं ।
कामलार्तस्य चैरंडपिप्पल्यो नविनांजने ॥

अर्थ–कामला के नाश करने को हींग का अंजन करे. अथवा अंड का रस तथा पीपल का चूर्ण इन की नस्य देवे ॥

जालिनीफलादि नस्य

जालिनीफलमाध्मानं नस्यं वा तंडुलांभसा।
जालिनीफलमध्यस्थं श्यामासर्षपनस्यतः॥

अर्थ-कडुई तोरई के फल के बीजों के धोवन के जल की नस्य देवे अथवा कडुई तूंबी के बीच में पीपल और सरसों भरके थोडी देर रख देवे फिर उस को पीसके उस की नस्य देवे तो कामलारोग दूर हो॥

कुमारीकंदनस्य

किंवा तोयेन सा पिष्टः कुमारीकंदनस्यतः।
जायते कामलोपेता पित्तनेत्रांतकामला॥

अर्थ- घीगुवार का रस निकालके उस में घी डालके नस्य देवे तो कामला करके नेत्र पीले भी हो गये हों तो भी उस का नाश करे॥

कामलापर अन्न

यवगोधूमशाल्यन्नं रसैर्जांगलजैः शुभैः।
मुद्गाढकामसूराद्यैस्तयोर्भोजनमिष्यते॥

अर्थ-जों, गेंहू और शालीचावल, ये अन्न, जांगली जीवों के मांसरस करके युक्त अथवा मूंग, मसूर इत्यादि करके युक्त जो भोजन वो कामलावाले रोगी को और पांडुरोगी को देना चाहिये॥

कामलापर काढा

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निंबस्य वा रसं।
प्रातर्मधुयुतं वैद्यः कामलार्ताय योजयेत्॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आमला, इन का काढा, अथवा गिलोय का काढा अथवा दारुहलदी वा नीम के काढे में सहद डालके प्रातःकाल वैद्य कामलारोगपीडित को देवे तो कामलारोग दूर होवे॥

पुनर्नवादि काढा

पुनर्नवानिंबपटोलतिक्ताविश्वाभयादारुनिशामृतानाम्।
कषायकः पांडुगदं निहंति सश्वासकासोदरशूलशोथम्॥

अर्थ-पुनर्नवा, नीम, पटोलपत्र, कुटकी, सोंठ, हरड, दारुहलदी, हलदी और

गिलोय इन का काढा पांडुरोग, श्वास, खांसी, उदररोग, शूल और सूजन इन को नाश करे ॥

त्रिफलादि काढा

त्रिफलानिंबकैराततिक्तावासामृताभवैः ।
क्वाथो मधुयुतो हंति कामलां पांडुतामपि ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, नीम की छाल, चिरायता, कुटकी, अडूसा और गिलोय इन का काढा सहत डालके पीवे तो कामलारोग और पांडुरोग नष्ट होवे ॥

गोदुग्धपान

अये मनोज्ञकुंडले स्फुरन्मुखेंदुमंडले ।
गवां पयः सनागरं प्रिये निहंति कामलां ॥

अर्थ–हे मनोज्ञकुंडले ! हे स्फुरन्मुखेन्दुमंडले प्यारी ! गौ के दूध में सोंठ डालके पीवे तो कामलारोग निश्चय दूर होवे ॥

हरीतक्याद्यंजन

हरीतकी च धात्रिका तथा मनोज्ञगैरिका ।
इति प्रयोजितांजनं निहंति कामलाननं ॥

अर्थ–हरड, वच, आंमला और स्वर्णगेरु इन की नस्य कामलारोग का नाश करे है ॥

खरविट्स्वरस

खरविड् दधिना सार्धं सम्यक् संमर्द्य पाययेत् ।
महत्पित्तोद्भवं रोगं कामलां च प्रणश्यति ॥

अर्थ–गधे की लीद दही के साथ पीसके उस का रस निकाल लेवे इस के पीने से घोर पित्त के दोष से उत्पन्न कामलारोग नष्ट होवे ॥

गुडूचीकल्क

गुडूचीपत्रकल्कं वा पिबेत्तक्रेण कामली ॥

अर्थ–कामलारोगवाला गिलोय के पत्ते के कल्क को छाछ के साथ पीवे तौ कामला दूर हो ॥

धात्र्यादिचूर्ण

धात्रीलोहरजोव्योषनिशाक्षौद्राज्यशर्करा ।
लीढानि वारयंत्याशु कामलामुद्धतामपि ॥

अर्थ-आंवले, लोहे की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हलदी, सहत, घी और खांड इन को मिलायके नित्य पीवे तो घोर बढी हुई कामलारोग को तत्काल दूर करे ॥

अयोरजादिचूर्ण

अयोरजोव्योषविडंगचूर्णं लिह्याद्धरिद्रात्रिफलान्वितं वा ।
सशर्करा कामलिनां त्रिभंडी हिता गवाक्षी सगुडा च शुंठी ॥

अर्थ-लोहे की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, हलदी, हरड, बहेडा, आंमला इन का चूर्ण अथवा निशोथ और मिश्री अथवा इन्द्रायन का गूदा, सोंठ और गुड ये देवे तो कामलारोग नष्ट होय ॥

व्योषादिचूर्ण

व्योषाग्निवल्यत्रिफलामुस्तैस्तुल्यमयोरजः ।
चूर्णितं तक्रमध्वाज्यं कोष्णतोयोपयोजितम् ॥
कामलापांडुहृद्रोगकुष्ठार्शोमेहनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, काली मिरच, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सब समान भाग लेवे तथा सब की बराबर लोहे की भस्म लेवे सब को एकत्र चूर्ण कर छाछ सहत और घी अथवा गरम जल इन के साथ देवे तो कामला, पांडुरोग, हृदयरोग, कोढ, बवासीर और प्रमेह इन को नष्ट करे ॥

अयोरजादियोग

तुल्यमयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा ।
चूर्णितं कामली लिह्याद्गुडक्षौद्रेण वाभया ॥

अर्थ-लोहे की भस्म, हरड, हलदी इन का चूर्ण सहत और घी से देवे अथवा हरड के चूर्ण को सहत में मिलायके देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

अंजन

अंजनं कामलार्तानां द्रोणपुष्पीरसं शुभम् ।
निशागैरिकधात्रीणां चूर्णवासं प्रकल्पयेत् ॥

अर्थ-गोमा का रस अथवा हलद, गेरू और आंवले इन को पीसके अंजन करे तो कामलारोग नष्ट होवे इस में संदेह नहीं ॥

नस्य

वेणीफलरसः स्वच्छो नस्यतस्तस्य सादरम् ।
कामला कामलोपेता याति दूरं च सर्पिषा ॥

अर्थ–देवदाली (वंदाल) के फलों का रस स्वच्छ निकालके नस्य देवे तो कामला दूर होवे अथवा कुछ २ दोषों करके युक्त जो कामला वो घी के पीने से नष्ट होती है॥

लोहादिचूर्ण

लोहचूर्णनिशायुग्मं त्रिफलाकटुरोहिणी ।
प्रलिह्य मधुसर्पिर्भ्यां कामलार्तः सुखी भवेत् ॥

अर्थ–लोहे की भस्म, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला और कुटकी इन के चूर्ण को सहत और घी इन में मिलायकर देवे तो कामलारोगी अच्छा होय॥

एलादिचूर्ण

एलाजीरकभूधात्रीसिता गव्येन भावयेत् ।
प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परं ॥

अर्थ–इलायची, जीरा, भूयआंवला और मिश्री इन को दूध में औटायके प्रातः-काल के समय सेवन करे तो कामला का नाश होवे ॥

हरिद्राचूर्ण

निशाचूर्णं कर्षमितं दध्नः पलमितं तथा ।
प्रातः संसेवनं कुर्यात् कामलानाशनं परं ॥

अर्थ–हलदी का चूर्ण १ तोले और दही ४ तोला दोनों को मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो कामलारोग का नाश होवे ॥

दार्व्यादिचूर्ण

दार्वीषत्रिफलाव्योषविडंगानयसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात्कामलापांडुरोगवान् ॥

अर्थ–दारुहलदी, हरड, बहेडा, आंवला, सोठ, मिरच, पीपल और लोहे की भस्म ये समान भाग लेवे चूर्ण करके सहत और घी के साथ पांडुरोगी और कामला-वाले रोगी को सेवन करना चाहिये ॥

घृत

हरिद्रात्रिफलानिंबबलामधुकसाधितम् ।
सक्षीरं माहिषं सर्पिः कामलापहमुत्तमं ॥

अर्थ–हलदी, हरड, बहेडा, आंवला, नीम की छाल, खिरेटी और मुलहटी इन के काढे में सिद्ध करा हुआ भैंस का घी उस को भैंस के दूध के साथ पीवे तो का-मलारोग नष्ट होवे ॥

एरंडस्वरस

वातारेश्च जटाद्रावं कर्षार्धं दुग्धमिश्रितं ।
पाययेत्तु प्रतिदिनमेवमेव दिनत्रये ॥
घृतं दुग्धोदनं पथ्यं कुर्याद्वै लवणं विना ।
कामलां नाशयत्याशु वायुनाभ्रं हरेद्यथा ॥

अर्थ–अंड की कोमल २ डंडी ले उन का रस निकालके छः मासे लेवे उस को में मिलाय प्रतिदिन रोगी को पिलावे इस प्रकार तीन दिन देवे और पथ्य में घी दूध और भात देवे. तो यह कामलारोग को नष्ट करे जैसे पवन बादलों को नष्ट देती है. इस पर निमक खाना वर्जित है ॥

कटुकीयोग

पिबेत्कवोष्णेन जलेन तिक्तां सशर्करां पाणितलप्रमाणां ।
निहंति दुष्टामपि कामलां सा हरीतकी वा मधुना प्रयुक्ता ॥

अर्थ–गरम जल के साथ कूठ के चूर्ण में मिश्री मिलायके एक तोले के प्रमाण पीवे. अथवा सहत में मिलायके हरड देवे तो कामलारोग नष्ट होवे ॥

कुंभकामलानिदान

कालांतरात्खरीभूता कृच्छ्रा स्यात्कुंभकामला ॥

अर्थ–बहुत काल से पुरानी पडने से जो कुंभकामला होवे सो कृच्छ्रसाध्य होती है. कुम्भ कहिये कोष्ठ तद्गत जो कामला अर्थात् कोष्ठाश्रय कामला ॥

कामलाका असाध्य लक्षण

कृष्णपीतशकृन्मूत्रो भृशं शूनश्च मानवः ।
सरक्ताक्षिमुखच्छर्दिविण्मूत्रो यश्च ताम्यति ॥

अर्थ–जिस मनुष्य का मल काला और मूत्र पीला हो और शरीरपर सूजन विशेष होवे और नेत्र, मुख, वमन, मल और मूत्र ये अत्यंत लाल होय मोह होय वो कामलावान् रोगी बचे नहीं ॥

दूसरा प्रकार

दाहारुचितृडानाहतंद्रामोहसमान्वितः ।
नष्टाग्निसंज्ञः क्षिप्रं हि कामलावान्विपद्यते ॥

अर्थ–दाह, अरुचि, प्यास, अफरा, तंद्रा, मोह इन लक्षणयुक्त तथा मन्दाग्नि और विस्मृतिवान् कामलावाला रोगी तत्काल मरे ॥

कुंभकामलाका असाध्य लक्षण

छर्द्यरोचकहृल्लासज्वरक्लमनिपीडितः ।
नश्यति श्वासकासार्तो विड्भेदी कुंभकामली ॥

अर्थ–वमन, अरुचि, ओकारी का आना, ज्वर, अनायासश्रम इन से पीडित तथा श्वास, खांसी इन से जर्जरित और अतिसारयुक्त ऐसा कुम्भकामलावाला रोगी मर जावे ॥

कुंभकामलाचिकित्साक्रम

कुंभाख्यकामलायां तु हितः कामलको विधिः ॥

अर्थ–कुंभकामलारोग में जो चिकित्सा कामलारोग में कही है वो करना हित है. अर्थात् वो कुंभकामलारोग को दूर करती है ॥

शिलाजीतयोग

गोमूत्रेण पिबेत्कुंभकामलायां शिलाजतु ॥

अर्थ–गोमूत्र के साथ शिलाजीत को मिलायके पीवे तो कुंभकामलारोग नष्ट होवे ॥

मंडूर

दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसं तु गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुंभाह्वयं पांडुगदं निहंति ॥

अर्थ–बहेडे के काष्ठ में लोहे की कीटी को फूंक देवे. जब लाल हो जावे तब निकालके गोमूत्र में बुझाय दे इस प्रकार आठवार करे. फिर उस को बारीक पीस दो अथवा तीन रत्ती के अनुमान सहत के साथ चाटे तो कुंभकामला का शीघ्र ही नाश करे ॥

नस्यादियोग

अर्कमूलं हरेन्नस्यात्कामलां तंदुलोदकैः।एरंडमूलिका पीता मधुना हंति कामलां ॥ अपामार्गशिफा पीता सतक्रा कामलापहा । विष्णुक्रांतशिफा तक्रपीता वा तद्विनाशिनी ॥ लांगलीपत्रचूर्णं वा पिबेत्तक्रेण कामली । गुडार्द्रकयुतं हंति कामलां त्रिफलाशिता ॥

अर्थ–कामला (वा कुंभकामला) पर आक की जड को चावलों के धोवन में पीसके नस्य करे और अंड की जड का चूर्ण सहत में मिलाय खाने को देवे, तथा ओंगा की जड को छाछ में औटायके देवे तथा कोयलजड पीसके छाछ में मिलायके देवे अथवा कलियारी के पत्तों का चूर्ण छाछ में मिलायके देवे. अथवा त्रिफला

के चूर्ण को गुड और अदरख में मिलायके देवे तो कामलारोग नाश होवे ये छः योग कहे हैं ॥

पांडुरोग में कब हलीमक होता है

यदा तु पांडुवर्णः स्याद्धरितस्यावपीतकः। बलोत्साहक्षयस्तंद्रा मंदाग्नित्वं मृदुज्वरः ॥ स्त्रीष्वहर्षोऽङ्गमर्दश्च दाहस्तृष्णारुचिर्भ्रमः। हलीमकं तदा तस्य विद्यादनिलपित्ततः ॥

अर्थ-जिस समय पांडुरोगी का वर्ण हरा, काला, पीला होय और बल व उत्साह इन का नाश, तंद्रा, मन्दाग्नि, महीनज्वर, स्त्रीसंभोग की इच्छा का नाश, अंगों का टूटना, दाह, प्यास, अन्न में अप्रीति और भ्रम ये उपद्रव वातपित्त से प्रगट हलीमक रोग के हैं ॥

पानकीलक्षण

संतापो भिन्नवर्चस्त्वं बहिरंतश्च पीतता।
पांडुता नेत्रयोर्यस्य पानकीलक्षणं भवेत् ॥

अर्थ-सन्ताप कहिये इन्द्री मन इन का ताप, मल का पतला होना, भीतर, बाहर पीला हो जावे और नेत्रों का पीला होना ये पानकीरोग के लक्षण हैं ॥

हलीमकपरिभाषा

पांडुरोगक्रियां सर्वां योजयेच्च हलीमके।
कामलायां तु या दृष्टा सापि कार्या भिषग्वरैः ॥

अर्थ-जो यत्न पांडुरोग पर तथा कामलारोग पर कहे हैं वो दोनों उपचार वैद्य को हलीमकरोग पर करने चाहिये ॥

अयोभस्मयोग

मारितस्यायसश्चूर्णं मुस्ताचूर्णेन संयुतम्।
खदिरस्य कषायेण पिबेद्धर्त्तु हलीमकम् ॥

अर्थ-लोहभस्म और नागरमोथे का चूर्ण ये एकत्र करके खैर के काढे के साथ पिलावे तो हलीमक रोग नष्ट होवे ॥

सितादिलेह

सितातिक्ताबलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः।
लेहं लिह्यात्समध्वाज्यं हलीमकनिवृत्तये ॥

अर्थ–मिश्री, कुटकी, खिरेटी, मुलहटी, त्रिफला, हलदी और दारुहलदी इन की अवलेह बनायके सहत और घी डालके चाटे तो हलीमक रोग दूर होवे ॥

अमृतादिघृत

अमृतलतारसकल्कं प्रसाधितं तुरगविद्विषः सर्पिः ।
क्षीरचतुर्गुणमेतद्वितरेच्च हलीमकार्तेभ्यः ॥

अर्थ–गिलोय का स्वरस अथवा कल्क इन से सिद्ध करा हुआ भैंस का घी उस में उस से चौगुना दूध मिलायके हलीमकरोगवाले को पिवावे तो यह रोग दूर होवे ॥

गुडूचीस्वरसयोग

गुडूचीस्वरसे सर्पिः सक्षीरं माहिषं घृतम् ।
चतुर्गुणेन पयसा पाययेत्तद्धलीमके ॥

अर्थ–गिलोय का रस, घी और दूध इन को मिलायके पीवे अथवा भैस के घी में चौगुना दूध डालके पीवे तो हलीमकरोग नष्ट होवे ॥

पांडु कामला कुंभकामला हलीमक इन पर पथ्य

छर्दिर्विरेचनं जीर्णा यवगोधूमशालयः । मुद्गाढकीमसूराणां यूषा जांगलजा रसाः॥पटोलं वृद्धकुष्मांडं तरुणं कदलीफलम्।जीवंती-क्षुरमत्स्याक्षी गुडूची तंदुलीयकम् ॥ पुनर्नवा द्रोणपुष्पी वार्ता-कं लशुनद्वयम् । पक्वाम्रमभया बिंबी शृंगी मत्स्यो गवां जलम् ॥ धात्री तक्रं घृतं तैलं सौवीरकतुषोदकम् । नवनीतं गंधसारो हरि-द्रा नागकेसरम् ॥ यवक्षारो लोहभस्म कषायाणि च कुंकुमम् । यथादोषमिदं पथ्यं पांडुरोगवतां नृणाम् ॥

अर्थ–वमन, रेचन, पुराने जों, गेहूं और चावल, मूंग, अरहर, मसूर इन का यूष· जंगली जीवों का मांसरस, परवर, पुराना पेठा, नवीन केला की फली, जीवंति (डोडी), कालाईख, (तालमखाना), मछेली, गिलोय, चौलाई, पुनर्नवा (सांठ), द्रोणपुष्पी (गोंमा), बैंगन, दोनों लहसन (प्याज और एक पोतिया लहसन), पका हुआ आंब, हरड, बिंबी (कंदूरी), शृंगीनामक अर्थात् सींगवाली मछली, गोमूत्र, आंवले, छाछ, घृत, तेल, कांजी, तुषोदक, मक्खन, मलयागिरिचंदन, हलदी, नाग-केशर, जवाखार, लोहे की भस्म (शीशे की भस्म), कषेले रस, केशर ये सब पांडुरोग में दोषों के अनुसार मनुष्यों को पथ्य देना ॥

अपथ्य

रक्तस्रुतिर्धूमपानं वमिवेगविधारणम् । स्वेदनं मैथुनं शिंबी पत्रशाकानि रामठम् ॥ माषांबुपानं पिण्याकं तांबूलं सर्षपं सुरा । सर्वाण्यम्लानि दुष्टानि विरुद्धाध्यशनानि च । गुर्वन्नं च विदाहीनि पांडुरोगवतां विषम् ॥

अर्थ–रुधिर का निकालना, धूमपान, वमन, मलमूत्रादि वेगों का धारण, स्वेदनकर्म, मैथुन करना, सेम (फली) और पत्ते का शाक, हींग, उडद, जलपान, खल, नागरवेल के पान, सरसों, दारु, सर्व प्रकार के खट्टे रस, पुष्ट अन्न, विरुद्ध भोजन, अध्यशन (भोजन के ऊपर तत्काल भोजन), भारी अन्न और दाह करता अन्न ये पांडुरोगवाले को विष के सदृश अपथ्य हैं ॥

पांडुरोगपर दंभ

दाहश्चरणयोः संधौ नाभेर्व्यंगुलकादधः ।
मस्तके हस्तयोर्मूले मध्ये च स्तनकुक्षयोः ॥

अर्थ–पांडुरोगवाले रोगी के दोनों पैरों की संधिपर और नाभी के नीचे दो अंगुल पर तथा मस्तक, स्तन और कूख इन में डाग देवे ॥

कामलापर दंभ

कामलेषु करपृष्ठविभागे दंभयेद्रविशलाकयैव ।
कूर्परार्धमितमध्यप्रदेशे द्रावितं द्रवति निश्चयेन रोगः ॥

अर्थ–कामलारोग में हाथों के पिछाडी पहुँचे के नीचे तथा पहुँचे के आधे भाग में अर्थात् कलाई में तामे की पट्टी से दाग देवे तथा उस को वहने देवे तो निश्चय कामला, कुंभकामला, हलीमकादि रोग नष्ट होवें ॥

रक्तपित्तिकर्मविपाकः ।

मद्यपो रक्तपित्ती स्यात्स दद्यात्सर्पिषो घटम् ।
मधुनोर्धघटं चैव सहिरण्यं विशुद्धये ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्म में मद्य पीता (दारु पीता) है वो इस जन्म में रक्त-

पित्तरोगी होता है उस को घी गगरीभर और सहत से दूसरा आधा घडा भरके उस घी के घडे पर रख उस को सुवर्ण युक्त दान करे तो रक्तपित्तरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

चंद्रक्षेत्रे यदा भौमो जायते मनुजस्तदा ।
रक्तपित्तेन दुर्नाम्नो नानाव्याधिसमाकुलः ॥

अर्थ–जिस के जन्मलग्न में चन्द्रमा के क्षेत्र में मंगल बैठा होवे तो रक्तपित्त और बवासीर ऐसी अनेक व्याधि करके युक्त होता है ॥

दूसरा प्रकार

रक्तपित्तं ज्वरं दाहमग्निवाय्वोरुपद्रवम् । लभते नात्र संदेहश्चंद्रमध्ये यदा अजः ॥ भौममंत्रजपः कार्यो होमः खादिरजैस्तिलैः ।
घृतेन च समायुक्तं दानं रक्तवृषस्य च ॥

अर्थ–चंद्रमा की दशा में भौम के आने से रक्तपित्त, ज्वर, दाह, वादी इन उपद्रवों को करे. उस दोष के दूर करने को मंगल का जप करे और खैर की समिधा, तिल, घी इन का होम करे. तथा लाल बैल का दान करे ॥

ज्योतिःशास्त्रोक्तचिकित्सा

बिल्वचंदनबलाशणपुष्पैर्हिंगुलूकफलिनीबकुलैश्च ।
स्नानमद्भिरिदमग्नियुताभिर्भौमदोषविनिवारणमाशु ॥

अर्थ–बेलफल, चंदन, खिरेटी, सन, हींगलु, कठूमर, मौरसिरी के फल इन पदार्थों को डालके पानी औटावे फिर इस जल से रोगी को न्हिलावे तो चंद्रमा के स्थान में स्थित भौमदोष की शांति होय ॥

रक्तपित्तनिदान

घर्मव्यायामशोकाध्वव्यवायैरतिसेवितैः । तीक्ष्णोष्णक्षारलवणैरम्लैः कटुभिरेव च ॥ पित्तं विदग्धं स्वगुणैर्विदहत्याशु शोणितम् ।
ततः प्रवर्तते रक्तमूर्ध्वं चाधो द्विधापि वा ॥ ऊर्ध्वं नासाक्षिकर्णास्यैर्मेढ्रयोनिगुदैरधः । कुपितं रोमकूपैश्च समस्तैस्तत्प्रवर्तते ॥

अर्थ–धूप में बहुत डोलने से, अति परिश्रम करने से, शोक से, बहुत मार्ग चलने से, अति मैथुन करने से, मिरच आदि तीखी वस्तु खाने से, अग्नि के तापने से,

जवाखार आदि खारे पदार्थ, नोन से आदि ले लवण के पदार्थ, खट्टी, कडुवी ऐसी वस्तु के खाने से कोप को प्राप्त भया जो पित्त सो अपने तीक्ष्ण द्रव पूति इत्यादि गुणों से रुधिर को बिगाडे तब रुधिर ऊपर के अथवा नीचे के मार्ग अथवा दोनों मार्ग होकर प्रवृत्त हो (निकले). ऊपर के मार्ग नाक, कान, नेत्र, मुख इन के द्वारा निकले और अधोमार्ग कहिये लिंग, गुदा और योनि इन के रास्ते होकर निकले और जब रुधिर अत्यंत कुपित होय तब दोनों मार्ग और सब रोमांचों से निकले हैं ॥

पूर्वरूपलक्षण

सदनं शीतकामित्वं कंठधूमायनं वमिः ।
लोहगंधिश्च निःश्वासो भवत्यस्मिन्भविष्यति ॥

अर्थ–ग्लानि, शीत की इच्छा, कंठसे धुआं निकलना, वमन और तपाये भये लोहपर जल गेरने से जैसी गंध आवे ऐसी श्वास लेने से गंध का आना, जिस मनुष्य में इतने लक्षण मिलते होंय उस के जानना कि इस के रक्तपित्त प्रगट होवेगा ॥

असाध्य लक्षण

मांसप्रक्षालनाभं कथितमिव च यत्कर्दमांभोनिभं च मेदः पूयास्रकल्पं यकृदिव यदि वा पक्वजंबूफलाभम्। यत्कृष्णं यच्च नीलं भृशमतिकुणपं यत्र चोक्ता विकारास्तद्वर्ज्यं रक्तपित्तं सुरपतिधनुषा यच्च तुल्यं विभाति ॥

अर्थ–जो रक्तपित्त मांस धोये हुए जल के समान हो अथवा सडे पानी के समान अथवा कीच के समान, अथवा जल के समान, उसी प्रकार मेद राध रुधिर इन के समान, अथवा कलेजे के टुकडे के समान, अथवा पकी जामन के समान, किंवा काले रंग का किंवा नील कहिये पपैया पक्षी के पंख के समान अथवा जिस में मेरखठ मलकिसी वास आवे और जिस में पूर्वोक्त कहे श्वासकासादि विकारयुक्त हों ऐसा रक्तपित्त वर्जित है और जो रक्तपित्त इन्द्रधनुष के वर्णसमान रंग हो सो भी त्याज्य है अर्थात् ऐसे रक्तपित्त का वैद्य चिकित्सा न करे ॥

वातरक्तपित्तनिदान

श्यावारुणं सफेनं च तनु रूक्षं च वातकम् ॥

अर्थ–नीला वर्ण, लाल वर्ण, कुछ झागयुक्त, पतला और रूखा ऐसा रक्तपित्तवात का जानना ॥

भोजन

शालिषष्टिकनीवारचणमुद्गा मसूरकाः ।
श्यामाकाश्च प्रियंगुश्च भोजनं रक्तपित्तजाम् ॥

अर्थ—सांठी चावल, समा, पसाई, चना, मूंग, मसूर, सामखिया और प्रियंगू इतने धान्य रक्तपित्तवाले रोगी को भोजन करने को देवे ॥

रक्तपित्तशास्त्रार्थ

अतिप्रवृद्धदोषस्य पूर्वं लोहितपित्तिनः ।
अक्षीणबलमांसाग्नेः कर्त्तव्यमपतर्पणम् ॥

अर्थ—जिस के दोष अत्यंत बढे रहे हो, तथा बल, मांस और जठराग्नि क्षीण न हुई हो उस रोगी का यत्न वैद्य को करना चाहिये ॥

ऊर्ध्वगे रेचनं शस्तमधोगे वमनं हितम् ॥

अर्थ—ऊपर होके जानेवाले रक्तपित्त में दस्त कराने और अधोगामी अर्थात् नीचे होकर जानेवाले रक्तपित्त में वमन करना चाहिये ॥

पित्तास्रं शमयेन्नादौ प्रवृत्तं बलिनः स्रुतम् ।
हृत्पांडुग्रहणीरोगप्लीहगुल्मोदरादिकृत् ॥

अर्थ—बली पुरुष के रक्तपित्त को प्रथम ही बंद न करे यदि ऐसे मनुष्य का रोग होते ही रुधिर बंदकर दिया जावे तो हृदयरोग, पांडु, संग्रहणी, प्लीहा, गोला और उदर (जलंधर) ये रोग उत्पन्न होवें ॥

क्षीणमांसबलं बालं वृद्धं शोषानुबंधिनम् ।
अवाम्यमविरेच्यं च शमनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ—जिस का मांस और बल क्षीण है तथा जो बाल तथा वृद्ध तथा जिस के शोषरोग का उपद्रव होवे तथा जो वमन अथवा विरेचनयोग्य नहीं है ॥

शालिपर्ण्यादिना सिद्धो पेयो यूषस्त्वधोगते ।
रक्तातिसारहंता च योज्यो विधिरशेषतः ॥

अर्थ—अधोगत रक्तपित्तपर सालवण इत्यादि औषधों से सिद्ध करा हुआ मंड पिलावे रक्तातिसार पर सब उपचार करने चाहिये ॥

पयांसि शीतानि रसाश्च जांगलाः सतीनयूषाश्च सशालिषष्टिकाः ।
हितानि चैतानि सरक्तपित्ते चान्यान्यपि स्युः किल पित्तहानि ॥

अर्थ–रक्तपित्त पर शीतल दूध, जंगली जीवों का मांसरस, सांठी चावलों का मंड हितकारी कहा है. तथा जितनी पित्तशांति करनेवाली वस्तु हैं वह सब रक्तपित्त-पर हित करनेवाली जाननी ॥

मसूरमुद्गचणकाः समकुष्टाढकीफलाः ।
प्रशस्ताः सूपयूषार्थं कल्किता रक्तपित्तिनाम् ॥

अर्थ–रक्तपित्तवाले मनुष्य को मसूर, मूंग, चना, मोंठ और अरहर इन की दाल अथवा इन का मंड बनाने के लिये उत्तम है ॥

दाडिमामलकं बिल्वानम्लार्थं चापि दापयेत् ॥

अर्थ–रक्तपित्तवाले मनुष्य को खटाई देनी होवे तो अनारदाना, आवले और बेलफल ये देवे ॥

पटोला निंबवेत्राग्रप्लक्षवेतसपल्लवाः ।
शाकार्थं शाककामानां तंडलीयादयो हिताः ॥

अर्थ–रक्तपित्तवाले रोगी को शाक (तरकारी) खाने की इच्छा होवे तो परवल, नीम, वेत की कोपल तथा जलवेतस, पाखर के पत्ते अथवा चोलाई इन की तरकारी हितकारक है ॥

रक्तपित्तादिकपर कामदेवघृत

अश्वगंधा तुलैका स्यात्तदर्धो गोक्षुरः स्मृतः। बलामृता शालि-पर्णी विदारी च शतावरी ॥ पुनर्नवाश्वत्थशुंठी काश्मर्यास्तु फलान्यपि । पद्मबीजं माषबीजं दद्याद्दशपलं पृथक् ॥ चतुर्द्रो-णांभसा पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् । जीवनीयगणः कुष्टं पद्म-कं रक्तचंदनम् ॥ पत्रकं पिप्पली द्राक्षा कपिकच्छूफलं तथा । नीलोत्पलं नागपुष्पं सारिवे द्वे बले तथा ॥ पृथक् कर्षसमा भागाः शर्करायाः पलद्वयम् । रसश्च पौंड्रकेक्षूणामाढकैकं समाह-रेत् ॥ घृतस्य चाढकं दत्त्वा पाचयेन्मृदुनाग्निना । घृतमेतन्निहंत्या-शु रक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥ हलीमकं पांडुरोगं वर्णभेदं स्वरक्षयम् । वातरक्तं मूत्रकृच्छ्रं पार्श्वशूलं च कामलाम् ॥ शुक्रक्षयमुरोदाहं कार्श्यमोजःक्षयं तथा । स्त्रीणां चैवाग्रजातानां गर्भदं शुक्रदं नृणाम् ॥ कामदेवघृतं नाम हृद्यं बल्यं रसायनम् ॥

अर्थ–असगंध १०० पल, गोखरू ५० पल, खिरेटी की जड, गिलोय, शालपर्णी, विदारीकंद, शतावर, पुनर्नवा, पीपल वृक्ष की मूल, सोंठ, कंभारी के फल, कमलगट्टा और उडद ये ग्यारह औषध दश दश पल लेवे जब कूट करके सब को एकत्र करके इस में कल्क बनाकर डालने की औषध इस प्रकार हैं. मुलहटी, विदारीकंद, असगंध, मुद्गपर्णी, माषपर्णी यह जीवनीय गण है. कूठ, पद्माख, लालचंदन, पत्रज, पीपल, दाख, कौंच के बीज, नीला कमल, नागकेशर, गौरीशर, कालीशर, बला, नागबला ये बीस औषध एक एक कर्ष लेवे सब का कल्क करके काढे में डाल देवे. फिर उस काढे में खांड दो पल डाले. एवं सपेद ईखका रस और घी ये दोनों एक २ आढक मिलाने चाहिये फिर उस काढे को चूल्हे पर चढाय मंद २ अग्नि से पचायके घृत शेष रखे. इस को छानके उत्तम चीनी अथवा अमृतवान आदि उत्तम पात्र में भरके धर रखे. इस घृत के सेवन करने से रक्तपित्त, उरःक्षतरोग, पांडुरोग का भेद हलीमकरोग, स्वरभंग, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, पीठ का शूल, नेत्रों में कामला होता है वह, धातुक्षय, उर में जो रोग होता है वह, देह की कृशता, शरीर के तेज का क्षय ये संपूर्ण रोग दूर होवें. यह घी जिस स्त्री के संतान नहीं होती उस को संतान देता है. तथा पुरुषों के धातु उत्पन्न करे हैं. हृदय को हितकारी है तथा बल देता है. यह कामदेवघृत रसायन है अर्थात् रोग और बुढापे का नाश करनेवाला है ॥

दूर्वादिघृत

दूर्वामुत्पलकिंजल्कं मंजिष्ठां चैलवालुकम् । शिवां लोध्रमुशीरं च मुस्ताचंदनपद्मकैः ॥ विपचेत्कार्षिकैः कल्कैर्घृतप्रस्थं सुखाग्निना । तंडुलांबुमजाक्षीरं दत्त्वा चैव चतुर्गुणम् ॥ तत्पानाद्वमतो रक्तं नावनान्नासिकागतम् । कर्णाभ्यां यस्य गच्छेच्च तस्य कर्णौ प्रपूरयेत् ॥ चक्षुस्राविणि रक्ते च पूरयेत्तेन चक्षुषी । मेढ्रपायुप्रवृत्तेषु बस्तिकर्म प्रकारयेत् ॥ रोमकूपे प्रवृत्ते च तदभ्यंगे प्रयोजयेत् । सर्वेषु रक्तपित्तेषु तस्माच्छ्रेष्ठमिदं घृतम् ॥

अर्थ–दूब, कमल की केशर, मजीठ, नेत्रवाला, हरड, लोध पठानी, खस, नागरमोथा, चंदन और पद्माख ये प्रत्येक तोला २ लेवे इन का कल्क और घी ६४ तोले तथा चावलों का धोवन, बकरी का दूध ये चौगुने डालके मंदाग्नि से पचन करावे. जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे इस के खाने से रुधिर की उलटी , नाक से रुधिर का गिरना, कान से निकलनेवाला रुधिर, नेत्र से गिरनेवाला

रुधिर तथा स्त्री की भग, लिंग, गुदा इन से निकलनेवाला रुधिर इन पर तथा समस्त रोमकूपों से जानेवाला रुधिर इन पर इस की मालिस करे. उलटीवाले को पिलावे और कान नाक से जाय तो काननाक में इस को डाले और लिंग-गुदा से जाता होवे तो बस्ति कर्म करावे. यह सर्व रक्तपित्त विकारों पर देना श्रेष्ठ कहा है ॥

शतावर्यादिपेय

शतावरी बला रास्ना काश्मर्यं सपरूषकम्।
पाययेद्रक्तपित्तघ्नं सद्यः शूलहरं परम् ॥

अर्थ–शतावरी, बला, रास्ना, कंभारी और फालसे इन का काढा करके पीवे तो रक्तपित्त का नाश करके शूल का भी नाश करे है ॥

पैत्तिकरक्तपित्तनिदान

रक्तपित्तं कषायाभं कृष्णं गोमूत्रसन्निभम्।
मेचकांगारधूमाभमंजनाभं च पैत्तिकम् ॥

अर्थ–जो रक्तपित्त काढे के रंगसमान हो काला गौ के मूत्रसमान हो अथवा मोर की चन्द्रिका के समान नीलवर्ण होय अर्थात् बैंजनी रंग के सदृश होय घर के धूआं के सुर्मा के समान होय ये रक्तपित्त के लक्षण हैं. शंका–क्योंजी केवल पैत्तिक रक्तपित्त नहीं हो सके है कारण इसका यह है कि जैसे कफ के रक्तपित्त का मार्ग कहा है इस प्रकार पित्त के रक्तपित्त का नहीं कहा? उत्तर–तुम ने कहा सो ठीक है परंतु यह मार्ग जो कहा है सो वातकफ के लक्षण प्रति नहीं कहा है ॥

त्रिफलादिकाढा

त्रिफलाकृतमालभवं क्वथनं सितया मधुना मिलितं हरति।
ननु शोणितपित्तरुजं विविधाघनदाहकपित्तशूलहरम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला और अमलतास का गूदा इन का काढा कर उस में खांड और सहत मिलायके पीवे तो अनेक प्रकार के रक्तपित्त, दाह और पित्तशूल इन को नष्ट करे ॥

अतस्यादिकाढा

अतसीकुसुमसमंगा वटप्ररोहास्तृणांभसा पीताः।
साधयंति रक्तपित्तं यदि भुंक्ते मुद्गयूषेण ॥

अर्थ–अलसी के फूल, मजीठ, बड की कोंपल और रोहिसतृण इन का काढा पीवे और इस पर मूंग के यूष के साथ भात खाय तो रक्तपित्त का नाश करे ॥

वासादिलेह

वासकस्वरसैः पथ्या सप्तधा परिभाविता ।
कृष्णा वा मधुना लीढा रक्तपित्तं द्रुतं जयेत् ॥

अर्थ—अडूसे के रस की सात भावना दीनी हुई हरड सेवन करने से रक्तपित्त दूर होवे अथवा पीपल के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो रक्तपित्त का नाश होवे ॥

कूष्मांडकावलेह रक्तपित्तादिकों पर

निष्कुलीकृतकूष्मांडखंडं पलशतं पचेत् । निक्षिप्य द्वितुलं नीरमर्धशिष्टं च गृह्यते ॥ तानि कूष्मांडखंडानि पीडयेत् दृढवाससा । आतपे शोषयेत्किंचिच्छूलाग्रैर्बहुशो व्यधेत् ॥ क्षिप्त्वा ताम्रकटाहे च दद्यादष्टपलं घृतम् । तेन किंचिद्भर्जयित्वा पूर्वोक्तं तज्जलं क्षिपेत् ॥ खंडापलं शतं दत्त्वा सर्वमेकत्र पाचयेत् । सुपक्के पिप्पली शुंठी जीरकं द्विपलं पृथक् ॥ पृथक् पलार्धधान्याकं पत्रैलामरिचत्वचम् । चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौद्रमावहेत् ॥ खादेदग्निबलं दृष्ट्वा रक्तपित्ती क्षयी ज्वरी । शोषस्तृषातमश्छर्दिकासश्वासक्षतातुरः ॥ कूष्मांडकावलेहोयं बालवृद्धेषु युज्यते । उरःसंधानकृत् वृष्यो ग्रहणीबलकृन्मतः ॥

अर्थ—पुराने पके हुए पेठे की ऊपर की छिलका छीले फिर वनारके उस के बीज दूर कर टुकडे कर १०० पल लेवे. इस को प्रथम चूने के पानी में गेरके शुद्ध कर लेवे फिर दो तुला (२०० पल) जल में गेरके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके जल को छान लेवे. और उस जल को अलग धर रखे और उन पेठे के कतलान को मजबूत कपडे में बांधके निचोड लेवे. फिर उन टुकडों को किंचित् धूप देकर छेदने के कांटे से खूब छेद लेवे. फिर तांबे के कलईदार पात्र में ८ पल घी डालके उन टुकडों को डाल आंच पर रखके भून लेवे फिर पूर्वोक्त पेठे से निकाले हुए जल को कढाई में चढायके मिश्री २०० पल गेरके दुतारी चासनी करे. फिर इस में चूर्ण डालने की औषध इस प्रकार लेवे. पीपल, सोंठ, जीरा ये तीनों औषध दो दो पल तथा धनियां, पत्रज, इलायची, काली मिरच, दालचीनी ये पांच औषध दो दो तोले लेवे सब को एकत्र चूर्ण कर प्रथम पेठे के टुकडे डाले फिर इस

चूर्ण को डालके सब को एक जीव कर देवे इस में सहत चार पल डाले. इस को **कूष्मांडावलेह** कहते हैं यह अवलेह रोगीकी शक्ति और अग्नि का बलाबल विचारके देवे तो रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, शोष, प्यास, नेत्रों के सामने अंधेरी का आना, वमन, श्वास, खांसी, उरःक्षत ये रोग दूर हों. यह अवलेह बालकों को तथा वृद्धों को उपयोगी होता है. तथा हृदय में अन्न का रस आता है उस का साधक होता है. तथा स्त्रीसंग करने की इच्छा उत्पन्न करे. तथा धातुवृद्धि करे और बल देता है ॥

कफयुक्त रक्तपित्तनिदान

सांद्रं सपांडु सस्नेहं पिच्छलं च कफान्वितम् ॥

अर्थ—सघन कुछ पीला और कुछ चिकना तथा गाढा ऐसा रक्तपित्त कफमिश्रित जानना ॥

अभयाभक्षण

अभया मधुसंयुक्ता पाचनी दीपनी मता ।
श्लेष्माणं रक्तपित्तं च हंति शूलातिसारजित् ॥

अर्थ—हरड का चूर्ण कर सहत के साथ सेवन करने से पाचक, दीपक और कफ, रक्त तथा पित्त इन का नाशक शूल, अतिसार इन के जीतनेवाली है ॥

कफवायु के संबंध से रक्त का प्रवर्त्तनमार्ग

ऊर्ध्वगं कफसंसृष्टमधोगं मारुतानुगम् ॥

अर्थ—ऊपर के मार्ग से कफ का और नीचे के मार्ग होकर वात का रक्तपित्त जानना ॥

आज्यपान

शृतेनाज्येन पयसा सुपिष्टं कुंकुमं भवेत् ।
ऊर्ध्वरक्तविनाशाय तेनैवाज्येन भोजनम् ॥

अर्थ—बकरी के दूध में केशर मिलायके पीवे और बकरी के दूध के वा घी के साथ भात भोजन करे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त बंद होवे ॥

ह्रीबेरादिजल

ह्रीबेरचंदनोशीरं मुस्तपर्पटकैः शृतम् ।
केवलं शृतशीतं वा दद्यात्तोयं पिपासिते ॥

अर्थ—नेत्रवाला, चंदन, खस, नागरमोथा और पित्तपापडा इन का काढा अथवा इन का चाह के सदृश जल उतारके शीतल करके पीने को देवे तो तृषा दूर होवे ॥

मृद्वीकादिगुटी

लोहगंधनिभश्वासे डकारे रक्तगंधिनि ।
मृद्वीकोषणमात्रात्तु खादेद् द्विगुणशर्कराम् ॥

अर्थ–जिस रक्तपित्तवाले की श्वास में गरम लोह पर जल छिडकने से जैसी दुगंध आती है और डकार में रुधिरकीसी दुर्गंध आवे उस पर गोस्तनी दाख, मिरच इन से दुगुनी खांड डालके गोली बनावे और भक्षण करे तो पूर्वोक्त रक्तपित्त के उपद्रव नहीं होवे ॥

पारावतादियूष

पारावतकपोतांश्च लावान् रक्ताक्षवर्तकान् ।
शशान्कपिंजलानेणान्हरिणान्कालपुच्छकान् ॥
रक्तपित्तहरान्विद्याद्रसं तेषां प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–परेवा, कपोत (पिंडुकिया), लवा, खबूतर तथा बटेर ये पक्षी और ससा, सपेद तीतर, काला हरिण, दुंवा ये पशु रक्तपित्तनाशक हैं इसवास्ते इन के मांस का रस तयार करके पीवे ॥

घृतसैंधवयोग

ईषदम्लाननम्लांश्च घृतभ्रष्टान् ससैंधवान् ।
कफानुगे यूषशाकं दद्याद्वातानुगे रसम् ॥

अर्थ–कफजन्य रक्तपित्त पर कुछ खट्टे किंवा मीठे पदार्थ घी में भून सेंधेनिमक मिलायके देवे. किंवा यूष तथा शाक देवे. यदि वातानुबंध होवे तो उस को मांसरस देवे ॥

पथ्य और जलपान

पथ्यं सतीनयूषेण ससितैर्लाजसक्तुभिः ।
जलं खर्जूरमृद्वीकामधुकैः सपरूषकैः ॥

अर्थ–मटर का यूष, खील, सत्तू और खांड ये पथ्य में देवे. तथा खजूर, दाख, मुलहटी और फालसे इन का काढा कर छान लेवे और शीतल करके यह जल पीने को देवे ॥

द्वंद्वजसन्निपातरक्तपित्तनिदान

संसृष्टलिंगं संसर्गात्त्रिलिंगं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ–दो दोष के मिलने से जो रक्तपित्त होय है उस में दोनों दोषों के लक्षण मिलने से द्विदोषज जानना और जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों उस को सन्निपात का रक्तपित्त जानना ॥

असाध्यरक्तपित्तलक्षण

द्विमार्गं कफवाताभ्यामुभाभ्यामनुवर्तते। ऊर्ध्वं साध्यमधो याप्यमसाध्यं युगपद्गतम् ॥ एकमार्गं बलवतो नातिवेगं नवोत्थितम्। रक्तपित्तं सुखे काले साध्यं स्यान्निरुपद्रवम्॥एकदोषानुगं साध्यं द्विदोषं याप्यमुच्यते। त्रिदोषजमसाध्यं स्यान्मंदाग्नेरतिवेगितम् ॥

अर्थ–दोनों मार्ग से जो रक्तपित्त निकले सो वात और पित्त इन दोषों से प्रगट भया जानना. ऊपर के मार्ग से लोही निकले सो साध्य है (क्योंकि कफ से प्रगट है सो कफ के रक्तपित्त में काथ तीखे रस कफ पित्त के हरण कर्त्ता होते हैं) और नीचे के मार्ग से जिस में रुधिर गिरे सो याप्य (साध्यासाध्य) है. [इस का कारण यह है कि पित्त के हरण में विरेचन मुख्य है और इस पर वातपित्त शमन करनेवाला मधुर रस प्रधान है वमन देने से विरुद्धमार्गी होय है अर्थात् वेगमात्र का अवरोधक है. परंतु पित्त का हरण करनेवाला नहीं है] और दोनों मार्ग से गिरनेवाला रक्तपित्त असाध्य है. कारण इस पर विरुद्ध चिकित्सा करनी पडती है. बलवान् पुरुष के एक मार्ग (अर्थात् ऊपर के मार्ग) से जाता होय अति वेग नहीं होवे नवीन प्रगट भया होय और हेमन्त शिशिर काल में प्रगट भया हो और दुर्बलता आदि उपद्रव रहित होय, ऐसा रक्तपित्त साध्य होय है. एक दोष का रक्तपित्त साध्य है द्विदोष का याप्य है और तीनों दोषों का असाध्य है. मन्दाग्नि अतिवेग से होय है ॥

असाध्यलक्षण

व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यानश्नतश्च यत् ॥

अर्थ–रोग से क्षीण देहवाले का बूढे मनुष्य के और जिस का आहार थक गया होय ऐसे मनुष्य के रक्तपित्त असाध्य होय है ॥

रक्तपित्त के उपद्रव

दौर्बल्यं श्वासकासज्वरवमथुमदाः पांडुतादाहमूर्छाभुक्ते घोरो विदाहस्त्वधृतिरपि सदा हृद्यतुल्या च पीडा। तृष्णा कोष्ठस्य भेदः शिरसि च तपनं पूतिनिष्ठीवनत्वं भक्तद्वेषाविपाकौ विकृतिरपि भवेद्रक्तपित्तोपसर्गाः ॥

अर्थ—अशक्तता, श्वास, खांसी, ज्वर, वमन, धतूरे के फूल खाने से जैसी अवस्था होय ऐसी अवस्था, शरीर का पीला वर्ण हो जावे, दाह, मूर्च्छा, अन्न खाने से अत्यंत दाह होय, अधीरजपना, सर्व काल हृदय में विलक्षण पीडा, प्यास, कोष्ठभेद (अर्थात् मल पतला होय), मस्तक में पीडा, दुर्गंधयुक्त थूकना, अन्न में अरुचि, आहार का परिपाक न होना, ये रक्तपित्त के उपद्रव हैं और उसी प्रकार उस रक्तपित्त की विकृति भी होय है ॥

असाध्यलक्षण

येन चोपहतो रक्तं रक्तपित्तेन मानवः । पश्येद्दृश्यं वियच्चापि तच्चासाध्यमसंशयम् ॥ लोहितं छर्दयेद्यस्तु बहुशो लोहितेक्षणः । लोहितोद्गारदर्शी च म्रियते रक्तपैत्तिकः ॥

अर्थ—जिस रक्तपित्त ने मनुष्य को ग्रस लिया होय वो दृश्य कहिये घटपटादि और अदृश्य कहिये आकाश इन को रक्तवर्ण का देखे वो रोगी निःसन्देह असाध्य जानना. जो वारंवार रुधिर की वमन करे और जिस के लाल नेत्र होय तथा डकार भी लाल आवे सो रक्तपित्तवाला रोगी मर जावे ॥

वृषादिस्वरस

वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।
अनेन प्रशमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

अर्थ—अडूसे के स्वरस में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो भयंकर भी रक्तपित्तरोग दूर होवे ॥

मातुलिंग्यादि पेय

मूलानि पुष्पाणि च मातुलिंग्याः समं पिबेत्तंदुलधावनेन ।
घ्राणप्रवृत्ते जलमाशु देयं सशर्करं नासिकयोः पयो वा ॥

अर्थ—बिजोरे की जड और फूल को चावल के धोवन में पीसके पीवे. अथवा बिजोरे की जड का वा फूल का रस निकाल उस में मिश्री किंवा दूध डालके नाक में डाले तो नाक से रुधिर का गिरना बंद हो ॥

उदुंबरादियोग

उदुंबराणि पक्वानि गुडेन मधुनापि वा ।
उपभुक्तानि निघ्नंति नासारक्तं नृणां ध्रुवम् ॥

अर्थ-गूलर के पके हुए फलों को बराबर के गुड में मिलायके खाय तो नाक से रुधिर का गिरना बंद होय ॥

अश्वत्थपत्रयोग

अश्वत्थपत्राग्ररसात् षडंशो बोलोथ तस्माद्द्विगुणं मधु स्यात् ।
रक्तप्रवाहं हृदयस्थितं वा वातो यथाभ्रं हरते तथैव ॥

अर्थ-पीपल के पत्तों के अग्रभाग का रस एक भाग और रक्तबोल छः भाग इस का दुगना सहत ले सब को एकत्र करके पीवे तो रुधिर का प्रवाह तथा हृदय में संचित रुधिर को दूर करे जैसे पवन बादलों को नष्ट करे है ॥

चित्रकचूर्णयोग

जयेन्नासाश्रितं रक्तं लीढं वा क्षौद्रपावकम् ॥

अर्थ-सहत के साथ चित्रक के चूर्ण को चाटे तो नाक से रुधिर का जाना बंद होवे॥

गंधकादिप्राशन

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोपयसा च धृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशांत्यै ॥

अर्थ-गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, सब को एकत्र करके लोहे के पात्र में त्रिफले के काढे से खरल करे तथा गौ के दूध के साथ रात्रि के समय पींवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दुग्धादियोग

पयः सिताढ्यं शृतशीतमाज्यं गव्यं पयो वा प्रसमीक्ष्य वह्निम्।
यष्टीमधूकार्जुनभावनीयं द्राक्षाथ वा गोक्षुरकैः शृतं वा ॥
द्राक्षया फलिनीमिव विलयान्तागरेण वा ।
श्वदंष्ट्रया शतावर्या रक्तजित्साधितं पयः ॥

अर्थ-गौ का अथवा बकरी का दूध, मुलहटी, महुआ, अथवा कोह इन से किंवा दाख, खिरेटी और गोखरू इन से अथवा दाख और फूलप्रियंगु इन से अथवा खिरेटी और सोंठ इन से तथा गोखरू और शतावर इन को डालके औटावे फिर शीतल करके देवे तो रक्तपित्त को शमन करे ॥

वासास्वरस

वासायां विद्यमानायामाशायां जीवितस्य च ।

रक्तपित्ती क्षयी कासी किमर्थमवसीदति ॥

अर्थ–पृथ्वी पर अडूसा है इस आशा से जीवनेवाले जो रक्तपित्ती, क्षयरोगी और खांसीरोगवाले क्यौं व्यर्थ दुःख पाते हैं ? अर्थात् जब अडूसा पृथ्वीपर है तब आप लोग उस को क्यौं नहीं सेवन करते कि जिस से तुम्हारा रोग नष्ट हो जावे ॥

लाक्षादियोग

क्षीरेण लाक्षां मधुमिश्रितेन प्रपीय जीर्णे पयसानुमद्यम् ।
सद्यो निहन्याद्रुधिरं क्षतोत्थं कांतार्जुनानामथवापि कल्कः ॥

अर्थ–दूध में लाख और सहत डालके पीवे. जब यह पच जावे तब दूध में मद्य मिलायके पीवे तो तत्काल घाव से निकलनेवाला रुधिर बंद होवे अथवा कांतलोह की भस्म, कोह वृक्ष की छाल के चूर्ण के साथ मिलायके देवे तो वो निकलते हुए रुधिर को बंद करे ॥

मध्वादिपेय

मध्वाटरूषकरसौ यदि तुल्यभागौ कृत्वा नरः
पिबति पुण्यतरः प्रभाते । तद्रक्तपित्तमतिदारुण-
वश्यमाशु यद्वत् प्रशाम्यति जलैरिव वह्निपुंजः ॥

अर्थ–सहत और अडूसे का रस दोनों को समान भाग लेकर प्रातःकाल यदि पीवे तो दारुण भी रक्तपित्त तत्काल दूर होय. जैसे जल अग्नि के समूह को शांति करता है ॥

मधुकादिकल्क

कल्कं मधूजत्रिफलार्जुनानां निशि स्थितं लोहमये सुपात्रे ।
साज्यं विलिह्यानुपिबेत्सुशीतं सशर्करं छागपयः क्षतार्तः ॥

अर्थ–मुलहटी, हरड, बहेडा, आवला और कोहवृक्ष इन का कल्क रात्रि के समय लोहे के पात्र में धर देवे प्रातःकाल घी मिलायके देवे तथा इन के ऊपर बकरी का दूध औटा हुआ और मिश्री मिला हुआ देवे तौ रक्तपित्त का नाश होवे ॥

ह्रीवेरादि काढा

ह्रीवेरमुत्पलं धान्यं चंदनं यष्टिकामृता । उशीरं च तृषश्चैषां
क्वाथः समधुशर्करः ॥ पाययेत्तेन सद्यो हि रक्तपित्तं प्रणश्यति ।
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहं ज्वरं तथा ॥

अर्थ-नेत्रवाला, कमल, धनिया, चंदनवाला, मुलहटी, गिलोय, खस, अडूसा इन का काढा सहत और मिश्री डालके देवे यह उग्र रक्तपित्त, तृषा, दाह और ज्वर इन को नाश करे ॥

पद्मोत्पलादिकाढा ।

पद्मोत्पलानांकिञ्जल्कः पृष्ठिपर्णी प्रियंगुका ।
वासापत्रसमुद्भूतो रसः समधुशर्करः ।
क्वाथो वा हरते पीतो रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥

अर्थ-सफेद कमल और नीला कमल इन की केशर, पृष्ठिपर्णी, फूलप्रियंगु और अडूसे के पत्ते इन का स्वरस अथवा काढा पीवे तो अतिकठिन भी रक्तपित्त नाश होवे॥

इक्ष्वादिकाढा

इक्षूणां मध्यकाण्डानि सकंदं नीलमुत्पलम्। केसरं पुण्डरीकस्य मोचं मधुकपद्मके ॥ वटप्ररोहशुंगाश्च द्राक्षा खर्जूरमेव च । एतानि समभागानि कषायमुपकल्पयेत् ॥ ह्युषितं मधुसंयुक्तं कषायं शर्करान्वितम् । स प्रमेहं रक्तपित्तं क्षिप्रमेतान्नियच्छति ॥

अर्थ-ईख की बीच की पोई, कंदसहित नीलाकमल, सफेद कमल की केशर, मोचरस, मुलहटी, पद्माख, वड की कोपल और बडी की मुहमुदीकली, दाख और खजूर ये सब समान भाग लेवे सब का काढा करे· फिर उतारके शीतल करे पश्चात् इस में सहत और मिश्री डालके पिलावे तो प्रमेह और रक्तपित्त इन का नाश करे ॥

चन्दनादिकाढा

चंदनेन्द्रयवा पाठा कटुका सुदुरालभा । गुडूची वालकं लोध्रं पिप्पली क्षौद्रसंयुतम् ॥ कफान्वितं जयेद्रक्तं तृष्णाकासज्वरापहम् ॥

अर्थ-लालचंदन, इन्द्रजो, पाढ, कुटकी, धमासा, गिलोय, नेत्रवाला, पठानी लोध, और पीपल इन का काढा करके उस में सहत डालके पिलावे तो कफ, रक्त-पित्त, तृषा, खासी और ज्वर इन को दूर करे ॥

उशीरादिकाढा

उशीरं चंदनं पाठा द्राक्षा मधुकपिप्पली ।
सक्षौद्रं पाययेत् क्वाथं रक्तपित्तहरं ध्रुवम्॥

अर्थ-खस, लालचंदन, पाढ, दाख, मुलहटी और पीपल इन के काढे में सहत डालके पीवे तो निश्चय रक्तपित्त को हरण करे ॥

अमृतादिकाढा

अमृता मधुकं चैव खर्जूरं गजपिप्पली ।
क्वाथः क्षौद्रयुतो ह्येष रक्तपित्तविकारनुत् ॥

अर्थ-गिलोय, मुलहटी, खजूर और गजपीपल इन के काढे में सहत डालके पीवे तो रक्तपित्तसंबंधी विकारोंका नाश करे ॥

ह्रीबेरादिकाढा

ह्रीबेरधान्यकं शुंठी चंदनं मधुयष्टिका ।
वृषोशीरयुतः क्वाथः शर्करामधुयोजितः ॥
रक्तपित्तं जयत्युग्रं तृष्णां दाहज्वरं तथा ॥

अर्थ-नेत्रवाला, धनिया, सोंठ, लालचंदन, मुलहटी, अडूसे के पत्ते और खस इन का काढा सहत और मिश्री डालके पीवे तो घोर आतिसार, प्यास, दाह और ज्वर इन को दूर करे ॥

मुद्गादिकाढा

मुद्गाः सलाजाः सयवाः सकृष्णाः सोशीरमुस्ताः सह चंदनेन ।
बलाजलैः पर्युषितः कषायः स रक्तपित्तं शमयत्युदीर्णम् ॥

अर्थ-मूंग, खील चावल की, जों, पीपल, खस, नागरमोथा, चंदन और खिरेटी इन सब को जो कूट करके रात्रि के समय कोरे कुल्हडे में भिगो देवे. दूसरे दिन प्रातःकाल काढा करके पीवे तो रक्तपित्त शांत होवे ॥

यष्ट्यादिकाढा

यष्टीमधुसमायुक्तं क्षीरं संक्वाथ्य शीतलम् ।
शर्करामधुसंमिश्रं रक्तपित्तापहं पिबेत् ॥

अर्थ-मुलहटी और दूध इन का काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इस में मिश्री और सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त का नाश होय ॥

पलाशकल्क व काढा

पलाशकल्कः क्वाथो वा सुशीतः शर्करान्वितः ।
पिबेद्वा मधुसर्पिर्भ्यां गवाश्वशकृतो रसम् ॥

अर्थ-पलाश (ढाक) के फूलों को पीस उस में मिश्री मिलायके पीवे. अथवा उन फूलों का काढा करके उस में खांड मिलायके पीवे अथवा गौ के गोबर का रस अथवा घोडे की लीद के रस में सहत और घी डालके पीवे तो रक्तपित्त दूर होय ॥

आटरूषादिकाढा

आटरूषकनिर्यूहः प्रियंगूमृत्तिकांजने ।
विनीय लोध्रं सक्षौद्रं रक्तपित्तहरं पिबेत् ॥

अर्थ-अडूसे का रस, फूलप्रियंगू, फिटकरी, रसोत और लोध इन के काढे में सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त का नाश करे ॥

वासादिकाढा

वासाकषायोत्पलमृत्प्रियंगुलोध्रांजनांभोरुहकेसराणि ।
पीत्वा सितक्षौद्रयुतानि जह्यात् पित्तासृजो वेगमुदीर्णमाशु ॥

अर्थ-अडूसा, कमल, फिटकरी, फूलप्रियंगू, लोध, रसोत, कमल की केशर इन का काढा सहत डालके और मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त नाश होय ॥

उशीरादिचूर्ण

उशीरकालीयकलोध्रपद्मकं प्रियंगुकाकट्फलशंखगैरिकम् ।
पृथक्पृथक्चंदनतुल्यभागिकं सशर्करं तंदुलधावनप्लुतम् ॥
सरक्तपित्तं तमकं पिपासां दाहं च पीतं शमयेद्धि सद्यः ॥

अर्थ-खस, दारु हलदी, लोध, पद्माख, फूलप्रियगू, कायफल, शंख, गेरू ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे इस में मिश्री मिलाय चांवलों के धोवन के साथ देवे तो रक्तपित्त, तमकश्वास, प्यास और दाह ये नष्ट होंय ॥

मृद्वीकादिचूर्ण

मृद्वीका चंदनं लोध्रं प्रियंगुं च विचूर्णयेत् । चूर्णमेतत्पिबेत्क्षौद्र-
वासारससमान्वितम् ॥ नासिकामुखपायुभ्यो योनिमेढ्राच्च वेगतः ।
रक्तपित्तं स्रवद्धंति सिद्धये स प्रयोगराट् ॥ यच्च शस्त्रक्षतेनैव
रक्तं स्रवति वेगतः । तदप्यनेन चूर्णेन तिष्ठत्येवावचूर्णितम् ॥
मेढ्रतोतिप्रवृत्तेस्त्रे बास्तिरुत्तर इष्यते ॥

अर्थ-दाख, चंदन, लोध पठानी, फूलप्रियंगू इन का चूर्ण करके इस को अडूसे के रस और सहत के साथ पीवे तो नाक, मुख, शिश्न, गुदा और योनि इन से गिरने-

वाला रुधिर, स्रवनेवाला रक्तपित्त, घाव में से वहनेवाला रक्तपित्त इन को बंद करे. अथवा शिश्नेन्द्रिय से यदि रुधिर वहने लगे तो इस औषधी से उत्तर बस्ति करे तो रुधिर बंद होवे ॥

चंदनादिचूर्ण

चंदनं नलदं लोध्रमुशीरं पद्मकेसरम् । नागपुष्पं च बिल्वं च भद्रमुस्तं सशर्करम् ॥ ह्रीबेरं चैव पाठा च कुटजोत्पलमेव च । शृंगबेरं सातिविषा धातकी सरसांजना ॥ आम्रास्थि जंबुसारास्थि तथा पाचरसोपि च । नीलोत्पलं समंगा च सूक्ष्मैला दाडिमत्वचः ॥ चतुर्विंशतिरेतानि समभागानि कारयेत् । तंदुलोदकसंयुक्तं मधुना सह योजयेत् ॥ अतिसारान्तथा छर्दिं स्त्रीणां चापि रजोग्रहम् । प्रच्युतानां च गर्भाणां स्थापनं परमिष्यते ॥ अश्विनोः संमतो योगो रक्तपित्तनिबर्हणः ॥

अर्थ–चंदन, जटामांसी, लोध, नेत्रवाला, कमल की केशर, नागकेशर, बेलफल, भद्रमोथा, मिश्री, खस, पाढ, कूडे के बीज (इन्द्रजो), कमल, सोंठ, अतीस, धाय के फूल, रसोत, आम की गुठली, जामुन की गुठली, पाच, नीले कमल, मजीठ, इलायची, अनार की छाल, ये वीस पदार्थ समान भाग लेवे सब का चूर्ण कर चावल के धोवन के साथ सहत मिलायके पीवे तो सम्पूर्ण अतिसार, वांति, स्त्रियों का प्रदर इन को नष्ट करे. तथा यह गर्भस्थापन करनेवाला है. यह योग रक्तपित्त नाश करने को अश्विनीकुमार का संमति करा हुआ है ॥

पत्रकादिचूर्ण

पत्रत्वगेलानतचंदनानां श्यामाकशुंठीमधुकोत्पलानाम् । स्याद्धात्रिवासाद्विगुणोत्तराणां चूर्णं सिताक्षौद्रसमन्वितानाम् ॥ खादेज्ज्वरे लोहितरक्तपित्ते कासे क्षये लोहितमूत्रकृच्छ्रे । रक्तातिनिष्ठीवति गात्रसादे दाहे च सद्यः स्मृतिविभ्रमे च ॥ देहस्थिते तूर्ध्वंगते च वाते श्वासे सहिक्कासु हृदामयेषु। मनोभितापे सततांगतापे योन्यामये सप्रदरे च रोगे ॥ रक्तातिमात्रं पतिते मुखाभ्यां गुदेथ नासामुखमेढ्रयोनौ । रक्तस्य पित्तस्य विनाशनार्थं सूक्तं च शिष्टेन महद्गदघ्नम् ॥

अर्थ–पत्रज २, दालचीनी ४, इलायची ६, तगर ८, चंदन १०, समा १२, सोंठ १४, मुलहटी १६ कमल १८, आंवले २० और अडूसा २२ भाग लेवे. तथा इन सब औषधों के द्विगुणोत्तर भाग के अनुसार चूर्ण करे. इस में मिश्री और सहत मिलायके देवे तो ज्वर, रक्तपित्त, खांसी, क्षय, रक्तकृच्छ्र, रुधिर की उलटी, देह का रह जाना, स्मृतिनाश (भूल का रोग), ऊर्ध्व वात (डकारों का बहुत आना), श्वास, खांसी, हृदयरोग, मन का संताप, अंगताप, योनिरोग, प्रदररोग, मुख, गुदा, नाक, शिश्न और योनि इन से अत्यन्त रुधिर का जाना और रक्तपित्त इन सब रोगों का नाश करे ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरकं च कंकोलं जातीफलदलं समम् । लवंगं स्यात्समरिचं कृष्णा शुंठी विवृद्धितः ॥ चूर्णं समसितं हृद्यं दीपनं वह्निकारकम् । रक्तपित्तं प्रतिश्यायं श्वासं कासमरोचकम् ॥ हृद्रोगं च जयेच्छीघ्रमिंद्रारिमशनिर्यथा ॥

अर्थ–कपूर भीमसेनी, कंकोल, जायफल, जावित्री, लौंग काली मिरच, पीपल और सोंठ ये पदार्थ एक, दूसरा दूना इस क्रम से लेवे सब को एकत्र कर उस चूर्ण के समान मिश्री मिलाय के देवे तो हृदय को हितकारी (दिल को कुवत देनेवाला), दीपन और अग्निकारक है. तथा रक्तपित्त, पीनस, श्वास, खांसी, अरुचि तथा हृदय-का रोग इन को नाश करे. जैसे इन्द्र का वज्र शत्रुओं का नाश करे है ॥

वासापुटपाक

पिष्टानां वृषपत्राणां पुटपाको रसो हिमः ।
मधुयुक्तो जयेद्रक्तपित्तकासज्वरक्षयान् ॥

अर्थ–अडूसे के पत्तों को पीस पुटपाक से उन को भूनके रस निकाल शीतल कर लेवे. फिर इस में सहत डालके पीवे तो रक्तपित्त, खांसी, ज्वर, क्षय इन का नाश करे ॥

एलादिगुटी रक्तपित्तादिकों पर

एलापत्रत्वचो द्राक्षाः पिप्पल्यर्धपलं तथा । शिलामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्तां गुटिकां संप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रां ततश्चैकां भक्षयेत्तां दिने तथा ॥ कासश्वासं ज्वरं हिक्कां छर्दिं मूर्छां मदं भ्रमम् । रक्तनिष्ठीवनं तृष्णां पार्श्वशूल-

मरोचकम् ॥ शोषं प्लीहं मूढवातं स्वरभेदं क्षतक्षयम् । गुटिका तर्पणी वृष्या रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ—इलायची, पत्रज, दालचीनी, दाख और पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे; शिलाजीत, मुलहटी, खर्जूर और मुनक्का दाख ये प्रत्येक चार ४ तोले, लेवे; सब को कूट पीस सहत डालके १ तोले की गोली बनायके इस में से नित्यप्रति एक गोली खाया करे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, वमन, मद, मूर्च्छा, भ्रम, मुख से रुधिर का गिरना, प्यास, पार्श्वशूल (पशली का दर्द) अरुचि, शोष, प्लीहा, (तील्ली), मूत्रघात, स्वरभंग, क्षतक्षय और रक्तपित्त इन का नाश करे. तथा वृष्य और तृप्ति का देनेवाला है ॥

हरीतक्यादिनस्य

हरीतकीदाडिमपुष्पदूर्वालाक्षारसो नस्यविधानयोगात् ।
निवारयत्येव चिरप्रवृत्तमप्याशु नासांतरशोणितौघम् ॥

अर्थ—हरड, अनार का फूल, दूब का रस और लाख इन सब के रस को एकत्र कर नाक में डाले तो बहुत दिन का व पडनेवाला नाक से रुधिर बंद होवे ॥

मस्तकलेप

नासाप्रवृत्तं रुधिरं घृतभ्रष्टं श्लक्ष्णपिष्टमामलकम् ।
सेतुरिव रुधिरवेगं रुणद्धि मूर्ध्नि प्रलेपः ॥

अर्थ—आवले को घी में भूनके उस का बारीक चूर्ण करे फिर पानी मिलायके मस्तक पर लेप करे तो यह लेप नाक से रक्तपित्त का जो रुधिर गिरता है उस को बंद करे ॥

कल्क व घृत

शीतलामलकल्केन शतधौतघृतेन च ।
मुंडयित्वा शिरो लेपः करणीयः पुनः पुनः ॥

अर्थ—शीतल आवलों का कल्क तथा सौ वार धुला हुआ घी इन का मस्तक मुंडायके उस पर शीतल २ लेप वारंवार करे ॥

नस्य

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थं रसो दूर्वाभवोऽथ वा । आम्रास्थिजं पलां-

इत्थं नासिकास्रावीरक्तजित् ॥ नासाप्रवृत्ते रुधिरे जलनस्यं प्रशस्यते ॥

अर्थ-अनार के फूल के रस की अथवा दूब के रस की अथवा आम की गुठली लहसन के रस की अथवा शीतल जल इन की नस्य देवे तो नासिका से रुधिर का गिरना दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार

भृंगीगृहं तु क्षीरेण नारीणां नावनाज्जयेत् ।
लोहं खदिरसारेण नासिकारक्तनाशनम् ॥

अर्थ-भृंगी (पीले रंग की मक्खी) के घर को स्त्रियों के दूध में मिलायके नस्य देवे तथा लोहभस्म और कत्था दोनों को मिलायके नस्य देवे तो नाक से रुधिर का गिरना अर्थात् नकशीर बंद होय ॥

आर्द्रकादिनस्य

शृंगगैरिकयोः कल्कं धातक्या मधुकस्य च ।
घ्राणस्रुतेसृजि प्रोक्तं योषित्क्षीरेण नावनम् ॥

अर्थ-अदरख, गेरू वा फिटकरी, धाय के फूल, मुलहटी इन के चूर्ण को स्त्रियों के दूध में मिलायके नस्य देवे तो नकशीर बंद होवे ॥

हरीतक्यादिनस्य

अभया दाडिमीपुष्पं लांगलीपिष्टमंभसा। नस्यतो हंति नासाया रक्तस्रावमतिस्रुतम् ॥ त्रिदिनं शर्कराक्षीरप्लुतं गोधूमचूर्णकम् । नासारक्तं वारयति वेगतो वहमानकम् ॥

अर्थ-हरड, अनार का फूल, कलयारी इन को जल में पीसके नस्य देवे; अथवा खांड और दूध डालके गेंहू का चून मिलायके नस्य देवे तो नकसीर के जाते हुए रुधिर को बंद करे ॥

कूष्मांडकावलेह

खंडकामलकेभ्यस्तु रसः प्रस्थद्वयोन्मितः । खंडकूष्मांडमेकैकं संस्विद्य रसमाहरेत्॥अन्यत्र खंडकूष्मांडे संमतः सकलो रसः। पंचाशच्च पलं स्विन्नं कूष्मांडात्प्रस्थमाज्यतः ॥ पक्कं पलशतं

खंडं वासाक्काथाढके पचेत्। शिवा धात्रीफलं भार्ङ्गी त्रिसुगंधैश्च कार्षिकैः॥ तालीसविश्वधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः। पिप्पली कुडवं चैव मधुना संप्रदापयेत् ॥ कासं श्वासं ज्वरं हिक्कां रक्तपित्तं हलीमकम्। हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति॥

अर्थ–मिश्री और आवलों का रस प्रत्येक१२८ तोले तथा पेठे के टुकडों को भून-के उन का रस २०० तोले, घी गौ का ६४ तोले,पके हुए पेठे के टुकडे ४०० तोले, अडूसे का रस,२५६ तोले लेके काढे में पचावे. जब गाढा हो जावे तब हरड, आंवला, भारंगी, तज, पत्रज और इलायची ये प्रत्येक तोला तोला लेके तथा तालीसपत्र, सोंठ, धनिया, और काली मिरच ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और पीपल १६ तोले तथा सहत ३२ तोले डालके धर रक्खे. इस में से रोगी का अग्निबल विचारके खाने को देवे तो खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त और पीनस इन को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

पुराणं पीनमानीय कूष्माण्डस्य फलं दृढम्। तद्बीजाधारबीजत्वक्-शिराशून्यं च कारयेत् ॥ततस्तस्य च खण्डानि पचेज्जलतुला-द्वये। तस्मिन्नीरार्धशिष्टे तु यत्नतः शीतलीकृते ॥ तानि कू-ष्मांडखंडानि पीडयेत् दृढवाससा। यत्नतस्तज्जलं नीत्वा पुनः पाकाय धारयेत्॥ कूष्माण्डं शोषयेद्धर्मे ताम्रपात्रे ततः क्षिपेत्। क्षिप्त्वा तप्तघृतप्रस्थं कूष्माण्डं तेन भर्जयेत्॥ मधुवर्णं तदालो-क्य तज्जलं तत्र निःक्षिपेत्। सितायाश्च तुलां तत्र क्षिप्त्वा तल्ले-हवेत्पचेत्॥ सुपक्के पिप्पलीशुंठीजीराणां द्वे पले पृथक्। पृथक् पलार्द्धं धान्याकपत्रैलामरिचत्वचा ॥ चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र घृतार्धं क्षौद्रमाहरेत्। क्षौद्राधिका सिता केचित्क्षौद्रात्केचित्सितार्धकम्॥ द्राक्षार्धानि लवंगानि कर्षं कर्पूरकं क्षिपेत्। तद्यथाग्निबलं खादे-द्रक्तपित्तक्षतक्षयी ॥ कासश्वासी ततश्छर्दितृष्णाज्वरनिपीडि-तः। वृष्यं पुनर्नवकरं बलवर्णप्रसादनम्॥उरःसंधानकरणं बृंहणं स्वरबोधनम्। अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं कूष्माण्डकरसायनम् ॥

अर्थ—पुराना और पका हुआ पेठा लेकर उस के ऊपर का छिलका और भीतर के बीजों को दूर करके छोटे २ कतरा कर लेवे उन टुकडों को ८०० तोले जल में डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके उन पेठे के टुकडों को कपडे में बांधके निचोड लेवे, इस जल को कढाई में डालके फिर चूल्हे पर चढावे. और पेठे के टुकडों को धूप में सुखाय एक तामे की कढाई में चढावे और ६४ तोले घी डालके मंद २ अग्निसे भूने जब लालरंग का हो जावे तब उतार लेवे और पूर्वोक्त पेठे के पानी में देवे. तथा मिश्री ४०० तोले डाले और मंद २ अग्नि से पाक करे. जब अवलेह के समान पाक हो जावे तब इतनी औषध और डाले. पीपल, सोंठ और जीरा ये प्रत्येक ८ तोले लेवे तथा धनिया, पत्रज, इलायची, काली मिरच, दालचीनी इन का चूर्ण दो दो तोले लेवे और सहत ३२ तोले मिलावे और मिश्री किसी के मत से सहत से अधिक और किसी के मत से सहत से आधी डाले तथा १६ तोले दाख, लौंग और कपूर एक एक तोला डाले इस को घी के बरतन में भरके धर रखे. यह **कूष्माण्डकरसायन** अग्निबल विचारके देवे. यह रक्तपित्त, क्षतक्षय, खांसी, श्वास, वमन, प्यास और ज्वर इन पर देवे यह वृष्य, तथा तारुण्य कारक, बल, वर्ण इन को करनेवाला, उरःक्षत को भरनेवाला, पुष्टिकरता और स्वर को साफ करे है. यह अश्विनीकुमार ने उत्पन्न करा है ॥

तीसरा प्रकार

पुराणं पीनमानीय कूष्मांडस्य फलं दृढम् । तद्बीजाधारबीजत्वक्शिराशून्यं च कारयेत् ॥ ततोतिसूक्ष्मखंडानि कृत्वा तस्य तुलां पचेत्। गोदुग्धस्य तुलायुग्मे मंदाग्नौ चालयेच्छनैः॥ शर्करायास्तुलार्धं च गोघृतं प्रस्थमात्रकम्। प्रस्थार्धमाक्षिकं चापि कुडवं नारिकेरतः ॥ प्रियालफलमज्जानां द्विपलं त्रिखुरीपलम् । क्षिपेदेकत्र विपचेल्लेहयेत्साधु साधयेत् ॥ भिषग्भिषक्त्वमालोक्य ज्वलनादवतारयेत् । काष्ठौषध्यः क्षिपेदेषां चूर्णं तानि वदाम्यहम् ॥ एकोक्षः शतपुष्पाया अथ जीरो यवानिका। गोक्षुरः क्षुरकः पथ्या कपिकच्छूफलानि च॥ सप्तमी त्वक्च सर्वेषामेषामक्षयुगं पृथक्। धान्यकं पिप्पली मुस्तमश्वगंधा शतावरी॥तालमूली नागबला वालकं पत्रकं शठी। जातीफलं लवंगं च सूक्ष्मैलाबृहदेलिकान् ॥ शृंगाटकं पर्पटकं

सर्वं पलमितं पृथक्॥ चंदनं नागरं धात्रीफलं चापि कसेरुकम्॥ प्रत्येकं पंचकर्षाणि चोत्तार्यैतानि निःक्षिपेत् । पलद्वयमुशीरस्य पलान्यष्टोषणानि च ॥ कूष्मांडस्यावलेहोयं भक्षितः पलमात्रकः । किंवा यथावह्निबलं भुंजन् रोगान् विनाशयेत् ॥ रक्तपित्तं शीतपित्तमाम्लपित्तमरोचकम् । वह्निमांद्यं सदाहं च तृष्णां प्रदरमेव च ॥ रक्तार्शों पित्तजिच्छर्दिं पांडुरोगं च कामलाम् । उपदंशं विसर्पं च जीर्णं च विषमज्वरम्॥ लेहोयं परमो वृष्यो बृंहणो बलवर्धनः । स्थापनीयो विशेषेण भाजने मृन्मये नवे ॥

अर्थ–पका हुआ पुराना पेठा लेकर उस को छील बना रक्खे बीज निकाल डाले और छोटे २ टुकडे कर लेवे उन को ४०० तोले लेय और ८०० तोले दूध में डालके मंदाग्निपर पचन करे. तथा धीरे २ कौचे से हिलाता जावे जब सीज जाय और गाढे होने लगे तब २०० तोले मिश्री डाले, गौ का घी ६४ तोले, सहत ३२ तोले, नारियलकी गिरी कतरी हुई १६ तोले, चिरोंजी ८ तोले और गोखरू ४ तोले डालके एकजीव कर लेवे जब चाटने योग्य गाढा हो जावे तब उतारके इस में सोंफ १ तोला, तथा जीरा, अजमायन, गोखरू, तालमखाना, हरड,कौंछ के बीज, दालचीनी ये प्रत्येक दो दो तोले ले, और धनिया, पीपल, नागरमोथा, असगंध, शतावर, मूसली, नागबला, नेत्रवाला, पत्रज, कचूर, जायफल, लोंग, इलायची बडी, इलायची छोटी, सिंघाडे, पित्तपापडा, ये प्रत्येक चार २ तोले लेय और चंदन, सोंठ, आवले, नागकेशर ये प्रत्येक पांच २ तोले ले, खस दो तोले, काली मिरच ८ तोले. इन का चूर्ण करके उस अवलेह को नीचे उतारके डाले यह कूष्माण्डकावलेह चार तोले प्रातःकाल सेवन करे. अथवा अग्निका बलाबल विचारके अधिक अथवा कम मात्र देवे तो रक्तपित्त, शीतपित्त, अम्लपित्त, अरुचि, मंदाग्नि, दाह, तृषा, प्रदर, खूनी बवासीर, पित्तजन्य वमन का होना, पांडुरोग, कामला, उपदंश, विसर्प, जीर्णज्वर और विषमज्वर इन का नाश करे यह अवलेह अत्यन्त वृष्य है, पौष्टिक तथा बल के बढानेवाला है. इस अवलेह को मिट्टीके बरतन में भरके धर रक्खे, अथवा किसी उत्तम चीनी के बासन में भरके धर देवे ॥

चौथा प्रकार

कूष्मांडकस्य स्वरसं पलानां शतमात्रकम्। रसतुल्यं गवां क्षीरं

धात्रीचूर्णं षडाष्टकम् ॥ मृद्वग्निना पचेतावद्यावद्भवति पिंडवत् । धात्रीतुल्या सिता योज्या पलार्धं लेह्ययेदनु ॥ खंडकूष्मांडकं ह्येतद्भुक्तमभ्यासतो हरेत् । रक्तपित्तं ह्यम्लपित्तं दाहं तृष्णां च कामलाम् ॥

अर्थ—पेठे का स्वरस ४०० तोले, गौ का दूध ४०० तोले और आवलों का चूर्ण ३२ तोले इन सब को मंदाग्निपर पक्क करे जब गोला बंधने लगे तब इस में मिश्री बत्तीस तोले डालके मिलाय देवे. फिर इस में से दो तोले नित्य प्रातःकाल भक्षण किया करे यह खंडकूष्माण्डकावलेह अभ्यास के साथ सेवन करने से रक्तपित्त, अम्लपित्त, दाह, तृषा और कामला इन को नाश करे ॥

वासाखंड

तुलामादाय वासायाः पचेदष्टगुणे जले । तेन पादावशेषेण पाचयेदाढकं भिषक् ॥ चूर्णानामभयानां तु खंडं शतपलं तथा । शीतीभूते तन्निदध्यात्क्षौद्रस्याष्टौ पलानि च ॥ वंशोद्भवा च चत्वारि पिप्पली द्विपलं तथा । चातुर्जातं पलं त्वेकं चूर्णितं तत्र दापयेत् ॥ रक्तपित्तं निहंत्याशु कासश्वासं क्षतक्षयम् । विद्रधिं जाठरं गुल्मं तृष्णाहृद्रोगपीनसान् ॥ पलार्धभोजनं चास्य यथेष्टं तत्र भोजनम् ॥

अर्थ—अडूसा चार सौ तोले लेकर ३२०० बत्तीस सौ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके छान लेय इस काढे में हरड का चूर्ण १०२४ तोले तथा मिश्री ४०० तोले डालके पचावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके शीतल कर लेवे और ३२ तोले सहत१६ तोले वंशलोचन८तोले पीपल और ४ तोले चातुर्जात ले इन सब का चूर्ण करके चासनी में डाल देवे. इस में से दो तोले यह वासाखंड सेवन करे तो रक्तपित्त, खांसी, श्वास, क्षतक्षय, विद्रधि, उदर, रोग, गोला, प्यास, हृदयरोग और पीनस इनका नाश करे इस पर यथेष्ट भोजन करे॥

उशीरासव रक्तपित्तादिकोंपर

उशीरं वालकं पद्मं काश्मरीनीलमुत्पलम् । प्रियंगुपद्मकं लोध्रं मंजिष्ठा धन्वयासकः॥पाठा किराततिक्तं च न्यग्रोधोदुंबरं शठी। पर्पटं पुंडरीकं च पटोलं कांचनारकम् ॥ जंबूशाल्मलिनिर्यासं

प्रत्येकं पलसंमितान् । भागान्सुचूर्णितान्कृत्वा द्राक्षायाः पलविंशतिः ॥ धातकीं षोडशपलां जलद्रोणद्वये क्षिपेत् । शर्करायास्तुलां दत्त्वा क्षौद्रस्यैकतुलां तथा ॥ मासं च स्थापयेत् भांडे मांसीमरिचधूपिते । उशीरासव इत्येष रक्तपित्तनिवारणः ॥ पांडुकुष्ठप्रमेहार्शःकृमिकोशापहस्तथा ॥

अर्थ–खस, नेत्रवाला, लालकमल, कंभारी, नीला कमल, फूल प्रियंगू, पद्माख, लोध, मजीठ, जवासों, पाढ, चिरायता, कुटकी, वड की छाल, गूलर की छाल, कचूर, पित्तपापडा, सपेद कमल और पटोलपत्र, कचनार की छाल, जामुन की छाल, सेमर का गोंद ये बाइस औषध चार२तोले लेवे तथा दाख २० पल,धाय के फूल१६ पल ले सब का कूट पीसके चूर्ण बनावे इस को दो द्रोण जल में डाले तथा मिश्री १ तुला डाले. फिर जटामांसी और मिरच इन की धूनी देकर उस बासन में ये सब वस्तु भर देवे उस पात्र का मुख बंदकर मुद्रा देकर १ महिने पर्यंत रक्खा रहने दे बाद महिने के मुद्रा को दूर करके इस को निकास लेवे. इसे उशीरासव कहते हैं इस आसव के पीने से रक्तपित्त, पांडुरोग, कोढ, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और शोष (देह का दुबला हो जाना) इन सब रोगों को यह दूर करे ॥

वमन

मुस्तेंद्रयवयष्ट्याह्वमदनाह्वं पयो मधु ।
शिशिरं वमनं योज्यं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ–नागरमोथा, इन्द्रजो, मुलहटी, मैनफल, दूध और सहत इन को शीतल करके वमन करने को देवे तो रक्तपित्त का नाश होय ॥

यष्ट्यादिवमन

यष्टीमधुकसंयुक्तं सक्षौद्रं वमनं हितम् ॥

अर्थ–मुलहटी और सहत इन का वमन करना रक्तपित्तवाले को हितकारी है ॥

आरग्वधादिरेचन

आरग्वधेन धात्र्या वा त्रिवृता पथ्ययाऽथवा ।
विरेचनं प्रयोक्तव्यं शर्करामाक्षिकोत्तरम् ॥

अर्थ–अमलतास और आंवले अथवा निसोत और हरड इन का काढा कर उस में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो दस्त होकर ऊर्ध्वगामी रक्तपित्त बंद होवे ॥

विरेचन

द्राक्षामधुककाश्मर्यः सितायुक्तं विरेचनम् ॥

अर्थ–ऊर्ध्वगत रक्तपित्तपर दाख, मुलहटी और कंभारी इन में खांड मिलाय के दस्त कराने को देवे तो ऊर्ध्वगत रक्तपित्त दूर होवे ॥

आपतर्पण

जलं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः ।
शृतं जलं प्रयोक्तव्यं तर्पणाय सशर्करम् ॥

अर्थ–नेत्रवाला, खिजूर, दाख, मुलहटी और फालसा इन औषधों को काढे में मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

दूसरा प्रकार

तर्पणं सघृतक्षौद्रं लाजाचूर्णैः प्रदापयेत् ।
ऊर्ध्वगे रक्तपित्ते तत्काले देयं पिपासिते ॥

अर्थ–धान की खीलों का चूर्ण कर उस में घी और सहत ये एकत्र करके ऊर्ध्वज रक्तपित्त में जब प्यास लगे तब पीने को देवे ॥

पारावतशकृल्लेह

सक्षौद्रं ग्रंथिते रक्ते लिह्यात्पारावतं शकृत् ॥

अर्थ–यदि देह में रुधिर की गांठ पड गई हो तो सहत के साथ कबूतर की वीट सेवन करे ॥

केशरलेह

अतिनिःसृतरक्तो वा क्षौद्रेण रुधिरं पिबेत् ॥

अर्थ–जिस के देह से अत्यन्त रुधिर निकल गया हो वो सहत के साथ केशर पीवे ।

खदिरादिलेह

खदिरस्य प्रियंगूनां कोविदारस्य शाल्मलेः ।
पुष्पचूर्णानि मधुना लिह्याद्वा रक्तपित्तनुत् ॥

अर्थ–खैर फूल, प्रियंगू, कोविदार (कचनार का भेद), सेमल इन के फूलें के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

उदुंबरादिलेह ।

पक्वोदुंबरकाश्मर्यपथ्या खर्जूरगोस्तनीः ।

मधुना घ्नंति संलीढा रक्तपित्तं पृथक् पृथक् ॥

अर्थ—पके हुए गूलर के फल, कंभारी के फल, हरड, खजूर और दाख इन में से किसी एक को सहत के साथ खाय तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

खंडकाद्यवलेह

शतावरी मुंडितका बलामृता पलं त्वचः पुष्करमूलभांर्गी। वृषो बृहत्यौ खदिरस्य मूली पृथक् पृथक् पंचपलानि मात्रा ॥ पक्कं जले द्रोणमितेऽष्टमांशं यावद्भवेच्छेषमथैव पूतम् । विमूर्छितस्यापि निधाय धीमान्पलानि च द्वादश माक्षिकस्य ॥ तथा सुवर्णस्य च लोहजस्य विद्याद्धितं खंडघृतस्य तुल्यम् । देयं पलं षोडशकं विधिज्ञो विपाचयेल्लोहमये कटाहे ॥ गुडेन तुल्यं च यदा भवेत्तदा तुगा विडंगं मगधा च शुंठी । द्वे जीरके कर्कटकं फलत्रिकं धान्यं मरीचं सकणा सकेसरम् ॥ पलेन मात्रा विदधीत तत्पृथक् सुघट्टितं चूर्णमिदं घृतेन । स्निग्धे कटाहे प्रणिधाय युंज्यात्कर्षप्रमाणं विदधीत चूर्णम् ॥ प्रभातकाले च सदुग्धपानं गुरूणि चान्नानि च भोजनानि । रक्तं सपित्तं सहसा निहंति रक्तप्रवाहं च सरक्तशूलम् ॥ रक्तातिसारं रुधिरप्रमेहं तथैव बस्तौ विहितं नराणाम् । भगंदरार्शः श्वयथुं निहंति तथाम्लपित्तं किल राजरोगम् ॥ विशेषतः कुष्ठयुजश्च गुल्मान् बलप्रदं वृष्यतमं प्रदिष्टम्। वातरक्तं प्रमेहं च शीतपित्तं वमिं कृमीन् ॥ श्वयथुं पांडुरोगं च कुष्ठं प्लीहोदरं तथा ।आनाहो मूत्रसंस्रावमम्लपित्तं निहंति च ॥ चक्षुष्यं बृंहणं वृष्यं मांगल्यं प्रीतिवर्द्धनम् । आरोग्यपुत्रदं श्रेष्ठं कामाग्निबलवर्द्धनम् ॥ श्रीकरं लाघवकरं खंडकाद्यं प्रकीर्तितम् । छागं पारावतं मांसं तित्तिरं कृकराशशम् ॥ कुरंगाः कृष्णसाराश्च मांसमेषां प्रयोजयेत् । नारिकेलपयःपानं सुनिषण्णकवास्तुकम्॥ शुष्कमूलकजीवाख्यं पटोलं बृहतीफलम् । फलं वार्ताकपक्काम्रं खर्जूरं स्वादु दाडि-

मम्॥ ककारपूर्वकं पंच मांसं चानूपसंभवम्। वर्जनीयं विशेषेण खंडकाद्यं समश्नता॥

अर्थ—सतावर, गोरखमुंडी, खिरेटी और गिलोय ये औषधी चार चार तोले, दालचीनी, पोहकरमूल, भारंगी, अडूसा, कटेरी, बडी कटेरी, खैर की जड ये प्रत्येक तीस २ तोले ले इन को १०२४ तोले जल में डालके अष्टावशेष काढा करे फिर छानके जल अलग निकास लेवे. इस में ४८ तोले स्वर्णमाक्षिक की भस्म ४८ तोले सुवर्ण की भस्म, १६ तोले लोह भस्म और मिश्री तथा ६४ तोले घी इस प्रकार सब को एकत्र कर लोहे की कढाई में पाक करे. जब गुड के समान पाक हो जावे तब इस में वंशलोचन, वायविडंग, पीपल, सोंठ, जीरा, काला जीरा, काकडी के बीज, हरड, बहेडा, आमला, धनिया, काली मिरच, पीपल, नागकेशर ये प्रत्येक चार चार तोले ले सब का चूर्ण करके चासनी में मिलाय एकजीव कर देवे. इस खंडकाद्यवलेह को घी के शुद्ध चिकने बासन में भरके धर रखे और नित्य १ तोला खाय ऊपर से दूध पीवे तथा भारी अन्न भोजन करे तो रक्तपित्त, रक्त का प्रवाह, रक्तशूल, रक्तातिसार, रक्तप्रमेह, भगंदर, बवासीर, सूजन, अम्लपित्त, क्षय, कोढ, गोला, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, कृमिरोग, पांडुरोग, प्लीहा, उदररोग, अफरा, मूत्र का रोग और अम्लपित्त इन सब रोगों को दूर करे तथा नेत्रों को हितकारी, पौष्टिक, मांगल्य, प्रीति को बढावे, आरोग्य तथा पुत्र देनेवाला और कामदेव, जठराग्नि, बल, श्री और लाघव इन को करे. इस के ऊपर बकरा, कबूतर, तीतर, कुकिर, ससा, हरिण, काला हरिण इन का मांस भक्षण करे और नारियल, दूध, चौपतिया, बथुआ, सूखी मूली, जीवंती, परवल, कटेरी के फल, बैंगन, पका आम, खजूर, मीठे अनार, ककारपंचक, आनूपदेश का मांस ये संपूर्ण पदार्थ खंडकाद्यवलेह सेवन करनेवाले को खाना निषेध है॥

रक्तपित्तकुठाररस

शुद्धपारदबलिप्रवालकं हेममाक्षिकभुजंगरंगकम्। मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च विततं द्रवैस्त्रिशः॥ चंदनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपल्लवस्य च। धान्यवारणकणाशतावरीशाल्मलीवटजटामृतस्य च॥ रक्तपित्तकुलकंडनाभिधो जायते रसवरोस्रपित्तिनाम्। प्राणदो मधुवृषद्रवैरयं सेवितस्तु वसुकृष्णलोमतः॥ नास्त्यनेन सममत्र भूतले भेषजं किमपि रक्तपित्तिनाम्॥

अर्थ—शुद्धपारा, गंधक, मूंगा, सुवर्णमाक्षिक, शीसा, रांगा इन सब की शुद्ध भस्म

समान भाग लेवे. सब को एकत्र करे फिर चंदन, कमल, मालती (चमेली) के फूल, अडूसा, धनिया, गजपीपल, सतावर, सेमर और बड की कोपल, गिलोय इन प्रत्येक के रसों की तीन २ भावना देवे. यह **रक्तपित्तकुलकुठार** रस एक मासे को अडूसे का रस और सहत इन के साथ देवे तो रक्तपित्त का नाश करे ॥

वासासुत

आटरूषनवपल्लवद्रवं पालिकारसकभस्मवल्लकम् ।
कर्षसंमितमधुप्रयोजितं प्राश्य नश्यति च रक्तपित्तकम् ॥

अर्थ–अडूसे के कोमल पत्तों का रस चार तोले, तथा पारे की भस्म इन को एकत्र कर सहत मिलायके एक तोले की मात्रा खाने को दे तो रक्तपित्त का नाश होवे॥

बोलपर्पटीरस

सूतगंधकसुकज्जलिकायाः पर्पटीसमयुतासमभागम् । बोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं स्याद्रसोयमसृगामयहारी ॥ वल्लयुग्मयुगलं प्रति देयं शर्करामधुयुतः किल दत्तः । रक्तपित्तगुदजस्रुतियोनिस्रावमाशु विनिवारयतीशः ॥

अर्थ–शुद्धपारा, गंधक दोनों की कजली करके फिर इस कजली के बराबर बोल का चूर्ण ले इन को एकत्र करके लोह के पात्र में तपायके गोबरपर केले का पत्ता बिछाय देवे उसपर उस को ढाल देना चाहिये और ऊपर से केले का पत्ता ढक गोबर से दाब देवे तो यह रक्तरोग नाश करनेवाली **बोलपर्पटी** बने. इसमें से ६ रत्ती पर्पटी और मिश्री तथा सहत इन में मिलायके देवे तो रक्तपित्त, बवासीर, रक्त का बहना और योनिस्राव इन को नाश करे ॥

सुधानिधिरस

गंधं सूतं माक्षिकं लोहचूर्णं सर्वं घृष्टं त्रैफलेनोदकेन ।
लोहे पात्रे गोलिका सा च कृत्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै॥

अर्थ–गंधक, पारा, सुवर्णमाक्षिक की भस्म और लोह भस्म ये समान भाग ले इन को लोह के खरल में डालके त्रिफले के काढे से खरल करके गोली बनाय ले यह रक्तपित्त दूर करने के वास्ते देवे ॥

आटरूषाद्यर्क

आटरूषकमृद्वीका पथ्यार्कश्च सशर्करः । वृषार्को वा समधुको

रक्तपित्तनिवारणः ॥ लोध्रप्रियंगुमृद्वीकाचंदनार्को रसान्वितः । वासायाः क्षौद्रसंयुक्त ऊर्ध्वाधो रक्तपित्तहृत् ॥ अर्को दाडिमपुष्पोत्थो मृद्वीकासंभवोपि वा । पानात्तस्य हरेन्नासारक्तमाम्रास्थिजोपि वा ॥

अर्थ–अडूसा, दाख और हरड इन के अर्क में मिश्री मिलायके देवे अथवा अडूसा और मुलहटी का अर्क देवे. अथवा लोध, फूल प्रियंगू, दाख और चंदन इन के अर्क में अडूसे का रस और सहत मिलाकर देवे. अथवा अनार के फूल और दाख इन का अर्क देवे. किंवा आम के गुठली का अर्क देवे तो रक्तपित्त दूर होवे ॥

शतावरीघृत

शतावरी दाडिमतिंतिडीकं कांकोलिकं वा मधुकं विदारी । पिष्वा च मूलं फलपूरकस्य पचेत्घृतं क्षीरचतुर्गुणं तत् ॥ कासज्वरोन्मादविबंधशूलं तद्रक्तपित्तं विविधं निहंति ॥

अर्थ–सतावर, अनार, इमली, कंकोल, मुलहटी, विदारीकंद और बिजोरे का पंचांग लेकर उन का कल्क करके उस में चौगुना दूध डाले. फिर गौ का घी डालके अग्निपर सिद्ध करे यह शतावरीघृत खांसी, ज्वर, उन्मत्तता, विबंध, शूल और अनेक प्रकार के रक्तपित्त का नाश करे ॥

दूर्वादितैल

दूर्वामधुकमंजिष्ठाद्राक्षेक्षुरसचंदनैः । सारिवाघननक्ताह्वैस्तैलप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरं चतुर्गुणं दत्त्वा सिद्धमभ्यंजने हितम् । रक्तपित्तहरं ह्येतद्बल्यं वातघ्नमुत्तमम् ॥ दूर्वातैलमिति ख्यातं सुवर्णकरणं महत् ॥

अर्थ–दूब, मुलहटी, मजीठ, दाख, ईख का रस, चंदन, सारिवा, नागरमोथा और हलदी ये समान भाग लेवे. १ सेर तेल और ४ सेर दूध डालके घी बनावे इस की देह में मालिस करना हितकारी है, रक्तपित्त को नाश करे, बल बढावे ये उत्तम वातनाशक है यह दूर्वातैल देह की उत्तम कांती करे है ॥

दूसरा प्रकार

दूर्वा भव्यफलं माषकुलित्थौ वंशपत्रिका । जलस्थलोद्भवौ

कर्णमोचकौ खरमंजरी ॥ दंडोत्पलस्य मूलं तु निःक्वाथ्याष्ट-गुणेंभसि । तत्पादशेषितं तैलं तुल्यं कृत्वा विपाचयेत् ॥तत्तैलं प्रतिघर्षेण आनाहाख्यं गदं जयेत् ॥

अर्थ–दूब, नीम के फल, उडद, कुलथी, वंशपात्रिका (बांस जाति की एक घास), जल और स्थल में उत्पन्न होनेवाला केला, ओंगा और सहदेई की जड ये सब समान भाग लेवे औषधों से आठ गुना जल ले चतुर्थांश काढा करके छान लेवे इस काढे में बराबर का तेल मिलाय फिर पाक करे इस तेल की देह में मालिस करने से आनाहाख्य रोग को दूर करे है ॥

रक्तपित्तपर पथ्य

अधोगते छर्दनमूर्ध्वनिर्गमे विरेचनं स्यादुभयत्र लंघनम् । पुरातनाः षष्टिकशालिकोद्रवा प्रियंगुनीवारयवप्रसादकाः ॥ मुद्गा मसूराश्चणकास्तुवर्या मकुष्टकश्चागडुर्वामिमत्स्याः । शशः कपोतो हरिणैणलावः शरारिपारावतवर्तिकाश्च ॥ बका उरभ्राश्च सकालपुच्छाः कपिंजलाश्चापि कषायवर्गाः । गवामजायाश्च पयो घृतं च घृतं माहिष्याः पनसं प्रियालम् ॥ रंभाफलं कंचनतंदुलीयपटोलवेत्राग्रमहार्द्रकाणि । पुराणकूष्मांडफलं च पथ्यं तालानि तद्बीजजलानि वासा ॥ स्वादूनि चिल्लानि च दाडिमानि खर्जूरधात्रीमिशिनारिकेरम् । कसेरुशृंगाटकपौष्कराणि कपित्थशालूकपरूषकाणि ॥ भूनिंबशाकं पिचुमंदपत्रं तुंबी कलिंगानि च लाजसक्तु । द्राक्षा सिता माक्षिकमिक्षवश्च शीतोदकं चोद्भिदवारि चापि ॥ सेकावगाहः शतधौतसर्पिरभ्यंगयोगः शिशिरः प्रदेशः । हिमानिलश्चंदनमिंदुपादाः कथा विचित्राश्च मनोनुकूलाः ॥ धारागृहं भूमिगृहं सुशीतं वैडूर्यमुक्तामणिधारणं च । रक्तोत्पलांभोरुहपत्रशय्या क्षौमांबरं चोपवनं सुशीतम् ॥ प्रियंगुकाचंदनरूषिकांतामालिंगितं चापि वरांगनानाम्।पद्माकराणां सरितोद्गतानां चंद्रोदयानां हिमशीक-

राणाम् ॥ सुशीतलानां गिरिनिर्झराणामतिप्रशस्तानि च कीर्तनानि । प्रतीरनीरं हिमवालुकानि मित्रं नृणां शोणितपित्तरोगे ॥

अर्थ–अधोगत (गुदालिंगेद्री द्वारा रुधिर जानेवाले) रक्तपित्त रोगी को वमन करावे, तथा ऊर्ध्वगत रक्तपित्त में जुलाब देवे, और ऊपर नीचे दोनों मार्ग से रुधिर जानेवाले को लंघन कराना चाहिये । एवं पुराने सांठी चावल, कोदों, कांगनी, समा पसाई, जों, तीनी, मूंग, मसूर, चना, अरहर तथा मोठ, ये धान्य तथा गडजाति और वर्मी जात की मछली (जो सूप के आकार होती हैं) तथा ससा, कपोत (पिंडुकिया), हरिण, काला हरिण, लवा, बगला, कबूतर, बटेर, (वनका चिडा), (मुरगा वा बगला), मेंढा, दुंबा, सपेद तीतर और कषेले वर्ग तथा गौ का और बकरी का घी, और दूध, भैंस का घी, पनस (कटहर), चिरोंजी, केला की गहर, जलचोलाई, चौलाई, पटोल (परवर), वेत की कोंपल, अदरख, पुराना पेठा, ताडफल, ताडफल के बीज, ताडीरस, अडूसा, स्वादु चिल्ली का साग (स्वादिष्ट तथा तीखे रस), अनार, खजूर (छुहारा), आमले, सोंफ, नारियल, कसेरू, सिंघाडे, पुहकरमूल, कैथ, भसीडा, फालसे, चिरायता (साग), नीमके पत्ते, सपेद तुंबी, तरमूज वा इंद्रजो, चावल की खील, सतुआ (सतू), दाख, मिश्री, सहत, ईख, शीतल जल, झरने का पानी, जल का सींचन (छिरकना), जल में गोता मारना, सौवार का धुला हुआ घी, तेल की मालिस, शीतल वस्तु का उवटना, शीतल पवन, चंदन लगाना, चंद्रकिरण (चांदनी), विचित्र और मनोनुकूल (मनोहर) कथा कहानी, फब्बारेदार घर भूमिगृह (तहखान), वैदूर्य, मोती और हीरा, पन्ना आदि मणियों का धारण, लाल कमल, (केला के भीतर के नम्र पत्ते), कमल के पत्ते, इन से रचित शय्या (सेज), रेशमी कपडे, शीतल वनबाग, प्रियंगु, चंदनचर्चित उत्तम स्त्रियों का आलिंगन, जिन में कमल फूल रहें ऐसा सरोवर अथवा नदी, चंद्रोदय, हिम (बरफ) की फुहार, (वा पर्वत के झरने), अत्यंत सुंदर गान, नदीतट का जल, शीतल वालू (रेत) अथवा कपूर ये संपूर्ण वस्तु रक्तपित्त रोगपर पथ्य कारक हैं ॥

रक्तपित्तपर अपथ्य

व्यायामाध्वनिषेवणं रविकरास्तीक्ष्णानि कर्माणि च । स्रोतोवेगविधारणं चपलता हस्त्यश्वयानानि च ॥ स्वेदांबुप्रतिधूमपानसुरतक्रोधः खलु स्याद्गुडो । वार्ताकीतिलमाषसर्षपदधिक्षीराणि कौपं पयः॥तांबूलं ललदंबु मद्यलशुनं शिम्बी विरुद्धाशनम् । कट्वम्लं लवणं विदाहि च गणस्त्याज्योस्रपित्ते नृणाम् ॥

अर्थ–व्यायाम (दंड कसरत), मार्ग का चलना, सूर्यकिरण, उग्रकर्म (क्षोभ), मलमूत्रादि वेगों का धारण, चपलता, हाथी तथा घोडेपर बैठना, पसीने निकालने, धूपमान, मैथुन करना, क्रोध करना, कुलथी, गुड, बैंगन, तिल, उडद, सरसों, दही, क्षार, कूए का जल, तांबूल (बीडा), खस, दारू, लहसन, फली (सेम), विरुद्ध भोजन, चरपरे, खट्टे, निमकीन और दाहकारी पदार्थ ये संपूर्ण वस्तु मनुष्यों को रक्तपित्त रोग में त्याज्य हैं अर्थात् उक्त वस्तुओं का सेवन न करे ॥

क्षयकर्मविपाकः।

ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात्क्षयी स्यात्क्षेत्रमारणे ॥

अर्थ–पूर्वजन्म में ब्रह्महत्या करने से अथवा पराई पृथ्वी के हरण करने से यह प्राणी इस जन्म में क्षई (खई) रोगवाला होता है ॥

कदलीदान

कारयेत्कदलीं दिव्यां पत्रैः सर्वत्र संयुताम् । फलपूगेन संयुक्तां सुवर्णस्य पलेन तु ॥ यथाविभवतः कुर्याद्वस्त्रेणावेष्टय सूत्रकैः । ब्राह्मणान्भोजयेच्चापि भक्ष्यैर्नानाविधैः शुभैः॥होमं च कारयेत्तत्र पूर्ववद्ब्राह्मणेन च । तस्मै तां कदलीं दद्याद्वस्त्रालंकारपूर्विकाम्॥ पूजिताय दरिद्राय व्रतस्थायात्मवेदिने । धर्मज्ञायातिदांताय मंत्रेणानेन तां क्षयी ॥ हिरण्यगर्भपुरुष परात्पर जगन्मय । रंभादानेन देवेश क्षयं क्षपय मे प्रभो ॥ पुण्याहवाचनं कार्यं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः । शिष्टैरिष्टैर्बंधुभिश्च सह भोजनमाचरेत् ॥

अर्थ–क्षय रोगवाला रोगी अपनी सामर्थ्यानुसार सुवर्ण की फल पत्र करके युक्त कदली (केला) बनावे उस को वस्त्र उढाय डोरे से बांध देवे तथा अनेक प्रकार पक्वान्न करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और होम करे फिर अलंकार पूर्वक उस केला का दरिद्री, व्रतस्थ, आत्मा का जाननेवाला, धर्मज्ञ तथा शांत ऐसे ब्राह्मण को दान देवे और " हिरण्यगर्भपुरुष परात्पर " इस मंत्र से पूजनादिक करे तथा पुण्याहवाचन करे तथा उत्तम ब्राह्मण, इष्टमित्र, बांधव इन के साथ बैठके भोजन करे ॥

ब्रह्मचर्यादियोग

ब्रह्मशास्त्राण्यविज्ञाय प्रायश्चित्तं ददाति यः। राजयक्ष्मा भवे-त्तस्य रोगो पीडातिदारुणा ॥ पूर्वोक्तेन विधानेन प्रदद्यात्प्रति-रूपकम्। राजयक्ष्मा कृशतनुः शंखोपासिततर्जनिः ॥ दद्या-त्रिनेत्रो दंष्ट्राभ्यां दष्टोहं हेतुमुद्यतः ॥

अर्थ-जो धर्मशास्त्र के विना जाने किसी पापी को उस पाप का प्रायश्चित्त बतावे उस के राजयक्ष्मा का रोग होता है. उस प्राणी को पूर्वोक्त विधि से क्षयरोग की कृश देह तर्जनी से शंख की धारण करनेवाली तीन नेत्र दांतों को चवानेवाली तथा तारण करने को आती हुई ऐसी मूर्ति का दान करे तो क्षयी रोग दूर होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः।
सत्येनाचारयोगेन रविमंडलसेवया ॥
वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोगराजो निवर्तते ॥

अर्थ-ब्रह्मचर्य, दान, तप, देवपूजन, सत्य, आचारयोग, सूर्यनारायण की सेवा तथा वैद्य और ब्राह्मणों के पूजन करने से इस प्राणी का खई का रोग दूर होता है ॥

दूसरा प्रकार

कुष्ठकंडुविकारैश्च क्षयरोगभगंदरैः।
गजादिवाहनभयं भवेद्य इनगे बुधे ॥

अर्थ-सूर्य की दशा में बुध का अंतर आने से कोढ, खुजली का विकार, क्षय-रोग, भगंदर, हाथी घोडे आदि वाहनोंसे भय होता है ॥

देवपूजादियोग

चंद्रक्षेत्रे यदा चांद्रिर्जायते यस्य जन्मनि।
स जातः क्षयरोगी स्यात्कुष्ठादीनि च पांडुता ॥

अर्थ-जिस के जन्मकाल के समय चन्द्र क्षेत्र में बुध का योग होय वह आदमी क्षयरोगी होता है और उस के कुष्ठ पांडु इत्यादि रोग भी होते हैं ॥

शास्त्रार्थ

नित्यं स्वदेवपूजाभक्तिर्भैषज्यदेवतागुरुषु ।
छागलमांसपयोश्नन् जीवति यक्ष्मी चिरं धृतिमान् ॥

अर्थ—नित्य इष्ट देवपूजन और औषधी, देवता और गुरु इन की भक्ति तथा बकरे का मांस तथा बकरी का दूध इन का सेवन इन उपायों से क्षयरोगी बहुत काल इस रोग से बचा रहता है ॥

उपद्रवान्स्त्वरवैकृतादीन् जयेद्यथा क्षिप्रसमीक्ष्य शास्त्रम् ।
त्यजेत्कुवैद्यप्रतिपादितानि बुद्धेर्विरुद्धानि च भेषजानि ॥

अर्थ—तत्काल जो विकृति आदि उपद्रव होते हैं उन को शास्त्र में कहे मार्गसे कुशल वैद्य के द्वारा नाश कराना चाहिये. कुवैद्य (मूर्खवैद्य की) औषध न खाय तथा बिना समझे और विचारे हर किसी औषध को नर न खाने लगे ऐसा करने से इस रोगी का हित हो अन्यथा अहित हो ॥

गीतादिउपाय

गीतवादित्रैरिष्टैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च ।
हर्षणाश्वासनैर्नित्यैर्गुरूणां समुपासनैः ॥

अर्थ—उत्तम गीत गाना, बाजे बजाना, इष्ट पदार्थ, प्रिय लगे ऐसी बडाई करना और आनंददायक पदार्थ तथा आश्वासन (दिलासा देना) ऐसा वाक्य कहना तथा नित्य गुरु की उपासना इन उपायों से क्षयरोग को जीते ॥

राजयक्ष्माक्षयनिदान

वेगरोधात्क्षयाच्चैव साहसाद्विषमाशनात् ।
त्रिदोषो जायते यक्ष्मा गदो हेतुचतुष्टयात् ॥

अर्थ—वात, मूत्र, पुरीष आदि वेगों के रोकने से, अति मैथुन, उपवास, ईर्ष्या, खेद इत्यादिक धातुक्षय के कारणों से बलवान से वैर करने से विषमाशन कहिये कुसमय थोडा अथवा बहुत भोजन करने से इन चार कारणों से तीनों दोषों के कोप से मनुष्य के राजयक्ष्मा रोग होय है. वेग का रोकना ही वातकोप का कारण है यह सत्य है तथापि वातकोप से अग्नि दुष्ट होकर कफ पित्त का कोप होय है इन चार हेतुओं में असंख्य हेतु अन्तर्भाव होय हैं. रसादि धातुओं के शोषण (सुखाने) से इस रोग को (शोष) कहते हैं. तथा शरीर में पाचनादि सर्व क्रियाओं को क्षय करे है इसी से इस रोग को (क्षय) कहते हैं. और राजा (चन्द्र) इस रोग से अति पीडित भया इसी से

इस को (राजयक्ष्मा) कहते हैं. यह (सुश्रुत) का आशय है और (वाग्भट) ने इस को सर्व रोगों का राजा कहा है इसी से इस को (राजयक्ष्मा) नाम कहा है इस श्लोक में जो कहा है कि त्रिदोष का एक ही यक्ष्मारोग प्रगट होय है उस का तात्पर्य यह है कि तीनों दोषों के कारण भेद से अनेक प्रकार का नहीं है सो (सुश्रुत) में कहा भी है और इस श्लोक में (वेगरोधात्) इस पद से केवल वात, मूत्र, मल इन का ही ग्रहण करना चाहिये. भ्रमादिक सबों का ग्रहण नहीं है सो (चरक) में लिखा है इति ॥

अनुलोम व प्रतिलोम क्षयकी संप्राप्ति

कफप्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु। अतिव्यवायिनो वापि क्षीणे रेतस्यनंतराः॥ क्षीयंते धातवः सर्वे ततः शुष्यति मानवः। राज्ञश्चंद्रमसो यस्मादभूदेष किलामयः॥ तस्मात्तं राजयक्ष्मेति केचिदाहुर्मनीषिणः॥

अर्थ–कफ है प्रधान जिन में ऐसे जो वातादिक दोष तिन करके रस के वहनेवाली नाडियों के मार्ग रुक जाने से (इस से यह सूचना करी कि रसमार्ग बंद होने से हृदय में स्थित जो रस उस को बिगाड और उसी स्थान में विकृति कहिये और प्रकार का स्वरूप करके खांसी के वेग से मुखमार्ग होकर निकाले) सो (चरक) में लिखा भी है "इस से अनुलोम क्षय दिखाया" "अब प्रतिलोम क्षय कैसा होय है उस को कहते हैं" अथवा अति मैथुन करने से मनुष्य का वीर्य क्षीण होय है. जब शुक्र क्षीण हो जाय तब समीप की धातु क्षीण होय तब पुरुष सूखने लगे जैसे शुक्र क्षीण के अनन्तर मज्जा क्षीण होय मज्जा क्षीण के अनन्तर हड्डी क्षीण होय ऐसे पूर्व पूर्व धातु क्षीण होय जाय। * **शंका**–क्योंजी रस, रुधिर, मांस, मेदा, हड्डी, मज्जा, शुक्र इन में क्रम से प्रत्येक के क्षीण होने से शुक्र का क्षय होना उचित है परंतु कार्यभूत शुक्र का क्षय होने से कारणभूत धातुओं का नाश कैसे होय है? * **उत्तर**–जब शुक्र का क्षय होय है तब वात कुपित होता है सो तंत्रान्तरों में लिखा है अर्थात् धातु के नष्ट होने से पवन के वहनेवाली नाडियों का मार्ग बन्द होकर वायु को कुपित करे तब वही पवन समीप की मज्जा धातु को सुखावे तदनंतर हड्डी और उस के पश्चात् मेदा इसी रीति से रसपर्यंत धातुओं को सुखावे है इस जगहपर * **दृष्टांत**–है जैसे अग्नि में तपाया भया लोह का गोला गीली पृथ्वी में धरने से प्रथम समीप की पृथ्वी के आर्द्रपने को शोषण करे पीछे दूर का गीलापना शोषण करे उसी रीति से यहां जानना चाहिये ॥

पूर्वरूप

श्वासांगसादकफसंस्रवतालुशोषवम्यग्निसादमदपीनसकासनिद्राः। शोषो भविष्यति भवंति स चापि जंतुः शुक्लेक्षणो भवति मांसपरो रिरंसुः ॥ स्वप्नेषु काकशुकशल्लकिनीलकंठगृध्रास्तथैव कपयः कृकलासकाश्च । तं वाहयंति स नदीर्विजलाश्च पश्येत् शुष्कां स्तरून्पवनधूमदवार्दितांश्च ॥

अर्थ–श्वास, हाथ पैर का गलना, कफ का थूकना, तालुवे का सूखना, वमन, मन्दाग्नि, उन्मत्तता, पनिस, खांसी और निद्रा ये लक्षण धातुशोष होनेवाले के होते हैं और उस मनुष्य के नेत्र सपेद होते हैं और उस मनुष्य की मांस खानेपर तथा स्त्रीसंग करने की इच्छा होती है और सपने में कौआ, तोता, सेह, नीलकंठ (मोर), गीध, वन्दर, करकैंटा इनपर अपने को बैठा देखे और जलहीन नदी को देखे तथा पवन धूर और धूंआं इन से पीडित ऐसे वृक्ष देखे. चकार से तृण, केश आदि का गिरना ये होते हैं ये सब स्वप्न क्षईरोग होने के पहले दीखते हैं (सो चरक में लिखा है) *शंका–क्यौंजी शुक्र का तो क्षय हो जाय है फिर (रिरंसुः) यह पद क्यौं धरा ? *उत्तर–यह केवल व्याधि के बढने से मन के दोष से जानना चाहिये ॥

क्षय का सामान्य त्रिरूप लक्षण

अंशपार्श्वाभिसंतापः संतापः करपादयोः।
ज्वरः सर्वांगगश्चैव लक्षणं राजयक्ष्मणः ॥

अर्थ–कन्धा और पसवाडे में पीडा, हाथपैर में जलन और सर्व अंगों में ज्वर ये राजयक्ष्मा के लक्षण ये तीन लक्षण अवश्य होते हैं ऐसे चरक ने कहा है ॥

एकादशरूप षड्रूप और त्रिरूप क्षयों का कारण

स्वरभेदोनिलाच्छूलं संकोचश्चांसपार्श्वयोः।ज्वरो दाहोतिसारश्च पित्ताद्रक्तस्य चागमः॥ शिरसः परिपूर्णत्वमभक्तच्छंद एव च। कासः कंठस्य च ध्वंसो विज्ञेयः कफकोपतः॥ एकादशभिरेतैर्वा षड्भिर्वापि समन्वितम् । कासातिसारपार्श्वार्तिस्वरभेदारुचिज्वरैः ॥ त्रिभिर्वा पीडितं लिंगैर्ज्वरकासासृगामयैः। जह्याच्छेषार्दितं जंतुमिच्छन्सुविपुलं यशः ॥

अर्थ–राजयक्ष्मा ये त्रिदोष से उत्पन्न है इस में दोषों को न्यारे न्यारे मिलाकर सब ग्यारह रूप हैं ये व्याधि के प्रभाव से होते हैं सन्निपातज्वर के सदृश सर्व लक्षण सब दोषों से नहीं होते पृथक् पृथक् होते हैं सो दिखाते हैं. वादी के प्रभाव से स्वरभेद, कन्धा और पसवाडे इन में संकोच और पीडा होय. पित्त से ज्वर, दाह, अतिसार और मुख से रुधिर का गिरना और कफ के कोप से मस्तक का भारीपना, अन्न से द्वेष, खांसी, स्वरभेद ये लक्षण होते हैं. इस में तीन तो वात से और चार लक्षण पित्त से तथा चार ही लक्षण कफ से ऐसे सब ग्यारह लक्षण से अथवा खांसी, अतिसार, पसवाडे में पीडा, स्वरभेद, अरुचि और ज्वर ये छः लक्षणों से अथवा ज्वर, खांसी और रुधिरविकार इन तीन लक्षणों से पीडित क्षई रोगवाले मनुष्य तथा जिस का बल, मांस क्षीण हो गया होय ऐसे रोगी को यशेच्छु वैद्य त्याग देय ऐसा रोगी असाध्य है ॥

पुनः असाध्यलक्षण

सर्वैरर्धैस्त्रिभिर्वापि लिंगैर्मांसबलक्षयैः । युक्तो वर्ज्यश्चिकित्स्यैस्तु सर्वरूपस्ततोन्यथा ॥ महाशनं क्षीयमाणमतीसारनिपीडितम् । शूनमुष्कोदरं चैव यक्ष्मिणं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ–स्वरभेदादिक जो ग्यारह लक्षण कहे वो सब लक्षण करके अथवा उन में से आधे (अर्थात् छः लक्षणों से) अथवा तीन लक्षण कहे इन से युक्त जो खईरोगी बल, मांस क्षीण होने पर त्याज्य है. यदि बल मांस जिसका क्षीण न भया हो परंतु सर्व लक्षणयुक्त भी है तथापि त्याज्य नहीं है उस की चिकित्सा करनी चाहिये. जो बहुत भोजन करे परंतु दिनदिनप्रति क्षीण होता जाय (ये असाध्य रोगी है) अतिसार करके अत्यन्त पीडित होय सो रोगी भी असाध्य होय है क्योंकि खईरोगवाले का जीना मल के आधीन है (जैसे लिखा है) **उक्तंच यथा–मलायत्तं बलं पुंसां शुक्रायत्तं तु जीवितम् । तस्माद्यत्नेन संरक्षेद्यक्ष्मिणो मलरेतसी ॥ इति ॥** और जिस के अंडकोश और उदर ये सूज गये हों ऐसा रोगी असाध्य है क्यौं कि शोथवाला दस्त के कराने से अच्छा होय है सो इस पर दस्त करना वर्जित है इसी से ऐसे रोगीको वैद्य त्याग देय ॥

साध्यलक्षण

ज्वरानुबंधरहितं बलवंतं क्रियासहम् ।
उपक्रमेदात्मवंतं दीप्ताग्निमकृशं नरम् ॥

अर्थ-जिस खईरोगवाले मनुष्यको ज्वरका सम्बन्ध होय नहीं बलवान् औषधादि उपचारका सहनेवाला और जिसकी इन्द्री बलमें हो तथा जठराग्नि जिसकी दीप्त होय और कृश न होय ऐसे रोगीकी चिकित्सा (उपचार) करना चाहिये । इस श्लोकमें (अकृशं) इस पदके धरनेका यह प्रयोजन है कि पुष्ट देहवालाभी इस खईरोगसे हजार दिन बचसके है सोई ग्रन्थान्तरमें लिखा[1] है ॥

असाध्यलक्षण

शुक्लाक्षमन्नद्वेष्टारं ऊर्ध्वश्वासनिपीडितम् ।
कृच्छ्रेण बहु मेहंतं यक्ष्मा हंति च मानवम् ॥

अर्थ-सपेद नेत्र जिस के हो गये होंय अन्न जिस को बुरा लगे ऊर्ध्वश्वास से पीडित और कष्ट से बहुत मूतनेवाला अर्थात् मल सुख से उतरे इस से ये दिखाया कि जो आहार खाय सो मल हो जाय जब आहार का मल हो गया तब उस के मांस, रुधिर इन का क्षय होय इसी से यह असाध्य है ॥

क्षयारोगीको वर्ज्य पदार्थ

वृंताकं कारवेल्लं च तैलं बिल्वं च राजिकाम् ।
मैथुनं च दिवा निद्रां क्षयी कोपं विवर्जयेत् ॥

अर्थ-बैंगन, करेले, तेल, बेलफल, राई, स्त्रीसंग, दिन में सोना और क्रोध करना ये सब कर्म खईरोगवाले के लिये निषेध है ॥

क्षयहारक पदार्थ

सधान्ययवगोधूमा मुद्गाश्चापि सदा हिताः ।
स्त्रियश्चतुष्पदे श्रेष्ठाः पुंमांसो विहगा मताः ॥

अर्थ-सुंदर धान, जौं, गेहू, मूंग, चौपाये स्त्री जाति के पशुओं का मांस और पक्षियों में पुरुष जाति का मांस ये क्षय रोग में हितकारी हैं ॥

छागं मांसं पयश्छागं सर्पिश्छागं सशर्करम् ।
छागोपसेवा सततं छागमध्ये तु यक्ष्मनुत् ॥

अर्थ-बकरी का मांस, बकरी का दूध, बकरी का घी, इन में मिश्री मिलायके सेवन करना, तथा बकरी की टहल चाकरी करना, तथा उन बकरियोंमें रहना ये सब क्षयरोगनाशक यत्न हैं ॥

गीतवादित्रशब्दैश्च प्रियस्तुतिभिरेव च । हर्षणाश्वासनैर्नित्यं

---

[1] परं दिनसहस्रं तु यदि जीवति मानवः । सुभिषग्भिरुपक्रांतस्तरुणः शोषपीडितः ॥ इति ।

गुरूणां समुपासनैः॥ ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः। सत्येनाचारयोगेन रविमंडलसेवया॥ वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोगराजो निवर्तते॥

अर्थ–गीत, बाजे, आदि का घोष,प्रियस्तुति, हर्ष, आश्वासन, गुरु की सेवा, ब्रह्मचर्य, तप, देवपूजन, सत्य बोलना, आचार, सूर्यनारायण की सेवा, वैद्य और ब्राह्मण की सेवा और पूजा करना ये सब कर्म राजयक्ष्मा को दूर करते हैं॥

षडंगयूष

द्रव्यतो द्विगुणं मांसं सर्वतोष्टगुणं जलम्।
पदस्थं संस्कृतं चाज्यं षडंगो यूष उच्यते॥

अर्थ–औषध की अपेक्षा दुगना मांस लेवे. तथा सब से आठ गुना जल डाले जब औटते २ चौथाई रहे तब इस में घी डाले इसे षडंगयूष कहते हैं॥

ज्वरदाहक्रिया

ज्वराणां शमनीयो यः पूर्वमुक्तो क्रियाविधिः।
क्षयिणां ज्वरदाहेषु स सर्वोपि प्रशस्यते॥

अर्थ–जो प्रथम ज्वरों के शमनार्थ क्रिया का प्रकार लिखा है वह संपूर्ण क्षय में ज्वर और दाह इत्यादि कों पर करे॥

वर्खभक्षण के माहात्म्य

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो वरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति।
वितथः प्रभवेदयं प्रयोगो यदि तन्मे शपथः सदाशिवस्य॥

अर्थ–मक्खन, मिश्री, सहत इन में सोने के वर्ख को मिलायके सेवन करे तो क्षयरोग का नाश होवे यदि यह कहा हुआ मेरा प्रयोग असत्य होवे तो मुझे मेरे उपास्य श्रीशिवजी की शपथ (सौगंध) है यह वैद्यामृत ग्रंथ में लिखा है॥

च्यवनप्राश्यावलेह

पाटलारणिकाश्मर्यबिल्वारलुकगोक्षुराः। पर्ण्यौ बृहत्यौ पिप्पल्यः शृंगी द्राक्षामृताभयाः॥ बला भूम्यामली वासा ऋद्धिर्जीवंतिका सठी। जीवकर्षभकौ मुस्तं पौष्करं काकनासिका॥ मुद्गपर्णी माषपर्णी विदारी च पुनर्नवा। कांकोल्यौ कमलं मेदे

सूक्ष्मैलागरुचंदनम् ॥ एकैकं पलसम्मानं स्थूलचूर्णितमौषधम्। एकीकृत्य बृहत्पात्रे पंचामलशतानि च ॥ पचेत् द्रोणजले क्षिप्त्वा ग्राह्यमष्टांशशेषितम् । ततस्तु तान्यामलानि निष्कुलीकृत्य वाससा ॥ दृढहस्तेन संमर्द्य क्षिप्त्वा तत्र ततो घृतम् । पलसप्तमितं तोयं किंचित् भृष्टाल्पवह्निना ॥ ततस्तत्र क्षिपेत्क्वाथं खंडं चार्धपलोन्मितम् । लेहवत्साधयित्वा च चूर्णानीमानि दापयेत् ॥ पिप्पली द्विपला ज्ञेया तुगाक्षीरी चतुःपला। प्रत्येकं च त्रिशाणा स्युस्त्वगेलापत्रकेशराः ॥ ततस्त्वेकीकृते तस्मिन्क्षिपेत्क्षौद्रं च षट्पलम्। इत्येवं च्यवनप्रोक्तं च्यवनप्राश्यसंज्ञकम् ॥ लेहं वह्निबलं दृष्ट्वा खादेत्क्षीणो रसायनम् । बालवृद्धक्षतक्षीणा नारीक्षीणाश्च शोषिणः ॥ हृद्रोगिणः स्वरक्षीणा ये नरास्तेषु युज्यते । कासं श्वासं पिपासां च वातास्रमुरसो ग्रहम् ॥ वातपित्तं शुक्रदोषं मूत्रदोषं च नाशयेत्। मेधां स्मृतिं स्त्रीषु हर्षं कांतिं वर्णं प्रसन्नताम्॥ अस्मात्प्रयोगादाप्नोति नरो जीर्णविवर्जितः ॥

अर्थ–पाठ, अरनी, कंभारी, बेलगिरी, टेंटू, गोखरू, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, वडी कटेरी, पीपल, कांकडासिंगी, दाख, गिलोय, हरड, बला, भूय आवला, अडूसा, ऋद्धि, सिद्धि के अभाव में वाराहीकंद, जीवंती (डोडी), कचूर, जीवक, ऋषभक इन दोनों के अभाव में विदारीकंद, नागरमोथा, पुहकरमूल, काकनासा (कौआडोडी), मुद्गपर्णी, माषपर्णी, विदारीकंद, पुनर्नवा (सांठ), काकोली, क्षीर काकोली इन दोनों के अभाव में असगंध, कमल, मेदा, महामेदा इन दोनों के अभाव में मुलहटी, छोटी इलायची, अगर, लालचंदन, इन सब औषधों को एकत्र एक एक पल लेवे सब को जब कूट कर लेवे फिर बडे २ आवले ५०० लेवे इन सब को बडे भारी पात्र में भरके १ द्रोण जल में औटावे जब आठवां हिस्सा जल शेष रहे तब उन आवलों को उतार लेवे और मोटे गाढे कपडे में उन आवलों को डारके मथ डाले तो उस वस्त्र में से आवलों का सीरा छनके नीचे के पात्र में गिरेगा उस को अलग रख लेवे. फिर कलई के बासन में २८ तोले घी डाल अग्निपर चढावे और आवलों का सीरा डालके मंद २ अग्नि से भून लेवे. और फिर पूर्वोक्त आवलों का

जल डालके तथा ५० पल मिश्री डालके पक्क करे जब अवलेह के माफिक चासनी हो जावे तब इन औषधों का चूर्ण डाले. पीपल ८ तोले, वंशलोचन १६ तोले, दालचिनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तीन शाण लेवे सब का चूर्ण करके उस चासनीमें डाल देवे और सहत छः पल मिलावे, तो च्यवनऋषि का कहा हुआ यह अवलेह सिद्ध होवे इसे **च्यवनप्राश्य** अवलेह कहते हैं इस अवलेह को रोगी का बलाबल देखके देवे तथा उस का अग्निबलभी विचार लेना चाहिये तो इस से क्षीणत्व दूर होवे. बाल, वृद्ध और क्षत (घाव) करके जो क्षीण है तथा स्त्रीसंग अत्यन्त करने से जिन की धातु नष्ट हो गई है. तथा जिन मनुष्यों के शोष रोग है. जिन के हृदय का रोग है वो एवं जिन के कंठ का स्वर क्षीण हो गया है वो इतने मनुष्यों को यह अवलेह देनी चाहिये. श्वास, खांसी, प्यास, वातरक्त, उरोग्रह, वात, पित्तविकार, धातुदोष, तथा मूत्र दोष ये संपूर्ण रोग दूर होवें तथा इस अवलेह के सेवन करने से बुद्धि बढती है. स्मरणशक्ति (याद) ठीक रहे है. तथा स्त्रियों से मैथुन करने की इच्छा बढती है. शरीर की कांति और शरीर का वर्ण ये उत्तम होते हैं मन प्रसन्न रहता है तथा मनुष्य के सब रोग दूर करे है यह रसायन है ॥

एलाद्यचूर्ण

एलापत्रं नागपुष्पं लवंगा भागस्त्वेषां द्वौ च खर्जूरकस्य ।
द्राक्षायष्टीशर्करापिप्पलीनां चत्वार्येतत्क्षौद्रयुक्तं क्षये स्यात् ॥

अर्थ–इलायची, पत्रज, नागकेशर और लौंग इन को एक २ भाग ले, खजूर दो भाग लेवे, मुनक्का दाख, मुलहटी, मिश्री और पीपल इन को चार भाग लेवे सब का एकत्र चूर्ण कर सहत के साथ खाने को देवे. यह चूर्ण क्षयरोगपर उत्तम है ॥

अश्वगंधाचूर्ण

अश्वगंधा दशपलं तदर्धं नागरान्वितम् । तदर्धकणसंयुक्तं मरीचं च चतुर्थकम् ॥ चातुर्जातं वरांगं च भार्गी तालीसपत्रकम् । कचोराजाजिकैटर्यं मांसीकं कोलमुस्तकम् ॥ रास्ना कटुकरोहिण्याजीवंती कुष्ठकं तथा । प्रायः कर्षमितं चूर्णं चूर्णेन समशर्करा ॥ प्रातःकाले त्विदं चूर्णं जलेनोष्णेन सेवयेत् । वातपित्तक्षये चैव अजागोघृतसंयुतम् ॥ श्लेष्मक्षये क्षौद्रयुक्तं नवनीतेन मेहजित् । शिरोभ्रमणपित्तार्तं गोक्षुरेण समन्वितम् ॥

क्षतक्षीणं च देहं च विशेषबलवर्द्धनम् । मेदोदरं च मंदाग्निं कुक्षिशूलोदरापहम् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरं परम् ॥

अर्थ—असगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले, काली मिरच ४ तोले तथा चातुर्जात, दालचीनी, भारंगी, पत्रज, कचूर, जीरा, अजमायन, कायफल, जटामांसी, कंकोल, नागरमोथा, रास्ना, कुटकी, जीवंती, कूठ ये संपूर्ण औषधी एक एक तोला लेकर चूर्ण करे तथा सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे. इस चूर्ण को प्रातःकाल गरम जल के साथ देवे तथा वातक्षय, पित्तक्षय, इन पर बकरी का अथवा गौ के घी के साथ देवे तथा कफक्षय पर सहत के साथ देवे प्रमेह में लोनी (मक्खन) के साथ शिरोभ्रमण (मस्तक के घूमने) पर तथा पित्तव्याधि इन पर गोखरू के साथ देवे यह विशेष करके क्षतक्षीण तथा क्षीणदेह इन के बल की वृद्धि करे है तथा मेद, उदर, मंदाग्नि, कुक्षिशूल, जलंधर इन का तथा सर्व रोगों का नाश करे॥

द्राक्षादिचूर्ण

द्राक्षालाजसितोपलं समधुकं खर्जूरगोपीतुगा ह्रीबेरामलकाब्दचंदननतं कंकोलजातीफलम् । चातुर्जातकणा सधान्यकमिदं चूर्णं समं शर्करा प्रातर्भक्षितमात्मकेन विधिना पित्तं सदाहं जयेत् ॥ मूर्छाछर्दिमरोचकं च शमयेत्कायस्य कांतिप्रदं पांडूकामिलरक्तपित्तमुदरं दाहज्वरारोचकम् । यक्ष्माणं रुधिरप्रमेहहरणं तद्योनिदोषापहं रक्तार्शोंत्र विवृद्धिविद्रधिहरं द्राक्षादिचूर्णोत्तमम् ॥

अर्थ—दाख, खील, मिश्री, मुलहटी, खजूर, सीखन, वंशलोचन, नेत्रवाला, आमले, नागरमोथा, चंदन, छज, कंकोल, जायफल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपल और धनिया ये सब समान भाग ले इन की बराबर मिश्री मिलावे इस चूर्ण को प्रातःकाल सेवन करने से पित्त, पित्तदाह, मूर्च्छा, वमन और अरुचि इन को शमन करे शरीर की कांति बढावे और पांडुरोग, कामला, रक्तपित्त, उदर, दाह, ज्वर, अरोचक, खई, रुधिर का विकार, प्रमेह, योनि के दोष, खूनी बवासीर, अंत्र विद्रधि और बढी हुई विद्रधि का रोग इन सब रोगों को यह द्राक्षादिचूर्ण दूर करे है ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरं चोचकं कोलजातीफलदलैः समैः । लवंगमांसीमरिचैः

कृष्णाशुंठीविवर्धितैः ॥ चूर्णं सितासमं हृद्यं सदाहक्षयकासजित् । वैवर्णपीनसश्वासछर्दिकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चानुपानैर्वा भेषजद्वेषिणां हितम् ॥

अर्थ–कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा लौंग १, जटामांसी २, काली मिरच ३, पीपल ४, सोंठ ५ भाग इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण करे चूर्ण के बराबर मिश्री मिलायके देवे. यह हृदय को हितकारी है तथा दाह, क्षय, खांसी, विवर्णता, पीनस, प्यास, वमन और कंठ के रोग इन पर अनुपान के साथ देवे यह औषध से द्वेष करनेवाले को भी प्रिय लगे है ॥

यवादिचूर्ण

यवगोधूमचूर्णं वा क्षीरसिद्धं घृतप्लुतम् ।
तत्कृत्वा सर्पिषा क्षौद्रसितात्तं क्षयशांतये ॥

अर्थ–जव और गेंहू इन का चून दूध में पक्व करके उस में घी सहत और मिश्री मिलायके पीने को देवे तो क्षयरोग की शांति होवे ॥

त्रिकट्वादिचूर्ण

त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरेतैः समं तीक्ष्णं मृतं भवेत् ॥ संचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रे नित्यं यः सेवते नरः । कासं श्वासं क्षयं मेहं पांडुरोगं भगंदरम् ॥ ज्वरं मंदानलं शोथं संमोहं ग्रहणीं जयेत् ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, इलायची, जायफल, लौंग, इन का चूर्ण बराबर करके इन सबकी बराबर पोलाद लोह की भस्म लेवे सब को एकत्र कर नित्य प्रति सहत के संग खाय तो श्वास, खासी, क्षय, प्रमेह, पांडुरोग, भगंदर, ज्वर, मंदाग्नि, सूजन, मोह, संग्रहणी इन का नाश करे ॥

शंखपोटलीरस

रसं गंधं कंबोर्भसितमपि कापर्दभसितं मरीचं भूचंद्रांबुधिरससहस्रांशुलविकम् । रसाद्व्यंशं टंकं सकलमपि चूर्णीकृतमिदं क्रमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥

अर्थ–पारा१, गंधक१, शंख की भस्म ४, कौडी की भस्म ६, काली मिरच १२,

और सुहागे का चूर्ण १॥ भाग ले सब का बारीक चूर्ण करके नित्यप्रति एक मासे के अनुमान घी के साथ सेवन करे तो क्षय रोग को नष्ट करे॥

शिलाजतुयोग

फलत्रिकक्काथविशुद्धमादौ सिद्धं गुडूच्या दशमूलसिद्धम्।
स्थिरादिकाकोलियुगादिसिद्धं शिलाजतु स्यात्क्षयिषु प्रशस्तम्॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला इन के काढे में शिलाजित को बारीक करके पोटली बांध दोलायंत्र की विधिसे शुद्ध कर लेवे फिर गिलोय के काढे, दशमूल के काढे स्थिरादि काढे, कांकोल्यादि काढा इन की भावना देकर सिद्ध कर लेवे यह बना हुआ शिलाजित क्षयरोग पर परम हितकारी है।

पिप्पल्यासव क्षयादिकोंपर

पिप्पली मरिचं चव्यं हरिद्रा चित्रको घनः। विडंगं क्रमुको लोध्रः पाठा धात्र्यैलवालुकम्॥ उशीरं चंदनं कुष्ठं लवंगं तगरं तथा। मांसी त्वगेला पत्रं च प्रियंगुर्नागकेशरम्॥ एषामर्ध-पलान्भागान् सूक्ष्मचूर्णीकृतान् शुभान्। जलद्रोणद्वये क्षिप्त्वा दद्यात् गुडतुलात्रयम्॥ पलानि दश धातक्या द्राक्षा षष्टिपला भवेत्। एतान्येकत्र संयोज्य मृद्भांडे च विनिक्षिपेत्॥ ज्ञात्वा गतरसं सर्वं पाययेदग्न्यपेक्षया। क्षयं गुल्मोदरं कार्श्यं ग्रहणीं पांडुतां तथा॥ अर्शांसि नाशयेच्छीघ्रं पिप्पल्याद्यासवस्त्वयम्॥

अर्थ—पीपल, काली मिरच, चव्य, हलदी, चीते की छाल, नागरमोथा, वायविडंग, सुपारी, लोध, पाढ, आमले, एलवालुक, खस, चंदन, कूठ, लौंग, तगर, जटामांसी, दालचीनी, इलायची, पत्रज, फूलप्रियंगु, नागकेशर ये तेइस औषध एक एक पल लेवे बारीक चूर्ण करके दो द्रोण जलमें डालके और गुड तीन तुला डाले. तथा धाय के फूल १० पल, दाख ६० पल इन दोनों को पीस उस जल में गेर देवे सब को एक मिट्टी के घडे में भर मुख बंद करके मुद्रा दे देवे. फिर इस को एक महीने और पंद्रह दिन धरा रहने देवे.जब औषधों का उत्तम रस निकल आवे तब सब मुद्रा को दूर करके इस को छान लेवे. इसे पिप्पलासव कहते हैं इस आसव को शक्ति का तारतम्य देखकर वैद्य रोगी को देवे तो यह क्षयरोग, गोला, उदररोग, शरीर की कृशता, संग्रहणी, पांडुरोग और मूलव्याधि (बवासीर) इन को दूर करे॥

कृष्णाद्यवलेह

कृष्णाद्राक्षासितालेहः क्षयहा क्षौद्रतैलवान् ।
मधुसर्पिर्युतो वाश्वगंधाकृष्णासितोद्भवः ॥

अर्थ–पीपल, दाख, मिश्री, सहत और सरसों का तेल इन का अवलेह क्षयरोगनाशक है तथा सहत, असगंध, पीपल और मिश्री इन का अवलेह भी क्षयरोगनाशक है ॥

रास्नादिचूर्ण

रास्नाकर्पूरतालीसभेकपर्णीशिलाजतु । त्रिकटुत्रिफलामुस्ताविडंगदहनाः समाः ॥ चतुर्दशायसो भागास्तच्चूर्णं मधुसर्पिषा । लीढं कासं ज्वरं श्वासं राजयक्ष्माणमेव च ॥ बलवर्णाग्निपुष्टिं च वर्धनं दोषनाशनम् ॥

अर्थ–रास्ना, कपूर, तालीसपत्र, मजीठ, शिलाजीत, त्रिकुटा, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग और चित्रक ये सब औषधी समान भाग लेवे और लोह भस्म १४ भाग ले सब को एकत्र चूर्ण कर सहत, घी के साथ बलाबल विचार के खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर, राजरोग इन को नष्ट करे तथा बल, वर्ण, अग्नि इन को बढावे तथा दोषों का नाश करे ॥

अगस्त्यहरीतकी क्षयादिकोंपर

हरितकीशतं भद्रयवानामाढकं तथा । पलानि दश मूलस्य विंशतिश्च नियोजयेत् ॥ चित्रकः पिप्पलीमूलमपामार्गः सठी तथा । कपिकच्छूः शंखपुष्पी भार्गी च गजपिप्पली ॥ बला पुष्करमूलं च पृथक् द्विपलमात्रया । पचेत्पंचाढके नीरे यवैः स्विन्नैः शृतं नयेत ॥ तच्चाभयाशतं दद्यात् क्वाथे तस्मिन्विचक्षणः । सर्पिस्तैलाष्टपलकं क्षिपेत् गुडतुलां तथा॥पक्त्वा लेहत्वमानीय सिद्धे शीते पृथक् पृथक् । क्षौद्रं च पिप्पलीचूर्णं दद्यात्कुडवमात्रया ॥ हरीतकीद्वयं खादेत्तेन लेहेन नित्यशः । क्षयं कासं ज्वरं श्वासहिक्काशोंरुचिपीनसान् ॥ ग्रहणीं नाशयेदेष

वलीपलितनाशनः । बलवर्णकरः पुंसामवलेहो रसायनः ॥ विहितोगस्त्यमुनिना सर्वरोगप्रणाशनः ॥

अर्थ–जौ एक आढक (४ सेर) ले उन को जों कूट कर चौगुने जल में चढाय के औटावे जब चौथाई जल रहे तब उतार लेवे और जल को छान लेय और जों को दूर पटक देवे फिर दशमूल की औषध २० पल ले, चित्रक, पीपरामूल, ओंगा, कचूर, कौंछ के बीज, शंखपुष्पी (शंखाहुली), भारंगी, गजपीपर, बला, पुहकरमूल, ये दश औषध आठ २ तोले लेवे सब को जोंकुट करके पांच आढक जल में डालके चौथाई जल रहे तब तक औटावे फिर उतारके छान लेय फिर इस को जौंके काढे में मिलाय देवे. फिर उस जल में बडी २ हरड १०० गेरे, घी और तिलों का तेल आठ २ पल तथा गुड एक तुला मिलावे पश्चात् इस काढे को अग्निपर चढायके अवलेह बनावे जब तयार होने को होय तब पीपल का चूर्ण और सहत ये दोनों एक एक कुडव अर्थात् पाव पाव भर मिलावे परंतु पीपल और सहत शीतल हो जावे तब मिलावे गरम में न मिलावे. यह अगस्त्यऋषि की कही हुई अवलेह है इसी से इस को अगस्त्यहरीतकी कहते हैं इस में से रोगी को दो हरड अवलेह के साथ खानी चाहिये तो यह क्षय, खांसी, ज्वर, श्वास, हिचकी, बवासीर, अरुचि, पीनसरोग, जो नाक में होता है और संग्रहणी ये रोग दूर होवे. देह में जो गुजलट पडती है सो तथा बालों की सफेदी दूर होवे तथा बल और कांति होय. यह अवलेह रसायन है. इस से संपूर्ण रोग नष्ट होवें ॥

आटरूषादिकषाय

आटरूषो शिरीषाश्वगंधश्चेति पुनर्नवा ।
एतैः क्वाथ्य पयः पीतं क्षयरोगविनाशनम् ॥

अर्थ–अडूसा, सिरस वृक्ष की जड, असगंध, लालबोल और पुनर्नवा (सांठ) इन का काढा करके पीवे तो राजरोग का नाश होय ॥

अश्वत्थवल्कलादिलोह

अश्वत्थवल्कलं चैव त्रिकटुर्लोहकिट्टकम् ।
गुडेन सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम् ॥

अर्थ–पीपल की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण और मंडूर इन को एकत्र कर गुड के साथ खाय तो क्षयरोग का नाश होय ॥

ककुभाद्यचूर्ण

ककुभत्वङ्नागबलाधात्रीवातारिबीजानाम् ।
चूर्णं मधुघृतयुक्तं सशिवं यक्ष्मादिकासहरम् ॥

अर्थ–कोह की छाल, सोंठ, बला, आंवला और अंड के बीज इन का चूर्ण कर घी और सहत मिलायके सेवन करे तो क्षय रोग और खांसी आदि रोगों को दूर करे ॥

अश्वगंधाद्यचूर्ण

अश्वगंधामृता भीरुदशमूलीबलाद्वयम् ।
पुष्करातिबला घ्नंति क्षयं क्षीररसाशिनः ॥

अर्थ–असगंध, गिलोय, सतावर, दशमूल, बला और अतिबला, तथा पुहकरमूल, इन का चूर्ण सेवन करे और ऊपर से दुग्ध आदि पथ्य में देवे तो क्षय रोग का नाश होय ॥

तालीसाद्यचूर्ण

तालीसपत्रमरिचनागरं पिप्पली तुगा । यथोत्तरं भागवृद्ध्या त्वगेला चार्धभागिका ॥ पिप्पल्यष्टगुणा चात्र प्रदेया शितशर्करा । कासश्वासारुचिहरं तच्चूर्णं दीपनं परम् ॥ पांडुहृद्ग्रहणीदोषप्लीहशोषज्वरापहम् ॥

अर्थ–तालीसपत्र, काली मिरच, सोंठ, पीपल और वंशलोचन, ये एकोत्तर वृद्धि, से लेवे. तथा दालचीनी और इलायची ये अर्ध २ भाग ले. पीपल ८ भाग और सपेद चीनी सब चूर्ण की बराबर लेके इस के सेवन करने से खांसी, श्वास, अरुचि, पांडुरोग, हृदयरोग, संग्रहणी, प्लीहा, शोष और ज्वर इन का नाश करे तथा अत्यंत दीपन है ॥

नवनीतयोग

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहेत्क्षयी ।
क्षीराशी लभते पुष्टिं मधुकुल्याजमाक्षिके ॥

अर्थ–मिश्री, सहत और मख्खन इन को मिलाय के सेवन करे अथवा दूध, सहत और घी एकत्र करके देवे तो यह प्राणी पुष्ट होय और क्षय रोग दूर होवे ॥

सितोपलादिचूर्ण

सितोपला षोडश स्यादष्टौ स्याद्वंशरोचना । पिप्पली स्याच्चतुःकर्षा एला स्याच्च द्विकर्षिका ॥ एककर्षा च त्वग्ग्राह्या चूर्णयेत्सर्वमेकतः । सितोपलादिकं चूर्णं मधुसर्पिर्युतं लिहेत् ॥ कासश्वासक्षयहरं हस्तपादांगदाहजित् । मंदाग्निं सुप्तजिह्वत्वं पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ ज्वरमूर्ध्वगतं रक्तं पित्तमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ–मिश्री १६ तोले, वंशलोचन ८ तोले,पीपल ४ तोले, इलायची २ तोले, और दालचीनी १ तोले इन सब का चूर्ण करे इसे शीतोपलादि चूर्ण कहते हैं इस को सहत और घी के साथ देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हाथ, पैर, अंग इन का दाह, मंदाग्नि, जिव्हा का रसअज्ञान, पसली की पीडा, अरुचि, ज्वर, ऊर्ध्वगत रक्तविकार और पित्त इन को शीघ्र नाश करे ॥

तवराजादिचूर्ण

तवराजकणा द्राक्षा खर्जूरं मधुकं त्रुटी । लवंगं पत्रकं चैव नागकेसरनामतः ॥ मधुना भक्षितं हंति चूर्णमेषां हि निश्चितम् । भ्रमं दाहं शिरःपीडां क्षयरोगं न संशयः ॥

अर्थ–मिश्री, पीपल, दाख, खजूर, मुलहटी, इलायची, छोटी लौंग, पत्रज, और नागकेशर इन का चूर्ण कर सहत के साथ देय तो यह भ्रम, दाह, मस्तकशूल और क्षयरोग इन का नाश करे ॥

अडूसायोग

आयुर्यदा स्याद्बलवन्नराणां सरक्तपित्तश्वसनक्षयीणाम् ।
मधुप्रयुक्ता यशसा प्रतीता वासा तदा किं न करिष्यतीयम् ॥

अर्थ–यदि रोगी की आयु बलवान् होवे तो उस के रक्तपित्त, श्वास, क्षय ये रोग अडूसे के स्वरस वा काढे में सहत डालके पीने से क्या परचा नहीं देवे. अर्थात् अवश्य अपना परचा देता है ॥

द्राक्षादिचूर्ण

द्राक्षाखर्जूरसर्पिर्भिः पिप्पल्या च सह स्मृतम् ।
सक्षौद्रं ज्वरकासघ्नं श्वयथुं च प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–दाख, खजूर और पीपल इन के चूर्ण को सहत और घी डालके सेवन करे इस को ज्वर, खांसी और सूजन पर देवे तो इन रोगों को नष्ट करे ॥

स्वर्णमाक्षिकादिचूर्ण

मधुताप्यविडंगाश्मजतु लोहं घृतं मतम् ।
हंति यक्ष्माणमत्युग्रं सेव्यमानं हिताशिनः ॥

अर्थ–सुवर्णमाक्षिक, वायविडंग, शिलाजीत, लोह इन का चूर्ण कर इस को घी और सहत में मिलायके देवे तो क्षय और श्वास इन को नाश करे ॥

शिलाजितादिचूर्ण

शिलाजतुमधुव्योषताप्यलोहरजांसि च ।
क्षीरयुग्लोहिनः श्वासः क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

अर्थ–शिलाजीत, सोंठ, मिरच, पीपल, सुवर्णमाक्षिक की भस्म और कांति लोह की भस्म ये दूध, सहत और मिश्री इन में मिलायके देवे तो क्षय तथा श्वास इन का नाश होय ॥

लाक्षाकूष्मांडरस

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेषितम् ।
लाक्षाकर्षद्वयं पीत्वा जयेद्रक्तक्षयं तथा ॥

अर्थ–कुह्मडा (पेठे) के गूदे के रस में दो तोले लाख का चूर्ण डालके पीवे तो रक्तक्षय का नाश होवे· परंतु पेठा पका हुआ लेवे ॥

मार्कवादिचूर्ण

द्वे पले मार्कवं धात्री माक्षिकं सपुनर्नवा । तुगा स्पृक्का शालिपर्णी वासकं सदुरालभम् ॥ चूर्णार्धेन समं योज्यं त्रिगंधं मरिचानि च । तालीसं मगधा चैव तदर्धेन शिलोद्भवम् ॥ शिलाभेदं तदर्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् । समेन तिलचूर्णेन शर्करा च समाहृता ॥ भक्षयित्वा पयःपानं शस्यते घृतसंयुतम् । तेन क्षयो राजयक्ष्मा कामला च विनश्यति ॥ अर्शाश्मरीं जयत्याशु बलवीर्याधिको भवेत् । शाम्यंति च महारोगाः शुक्राढ्यो जायते नरः ॥

अर्थ–भांगरा, आवले, स्वर्णमाक्षिक, पुनर्नवा, वंशलोचन, लजालु कंद, शालपर्णी, अडूसा और धमासा ये समान भाग लेवे इन सब से आधी दालचीनी, पत्रज, इला-

यची, काली मिरच, तालीसपत्र,पीपर लेवे तथा इन से आधा शिलाजीत, पाषाणभेद और सब चूर्ण के बराबर तिलों का चूर्ण और खांड ले सब को एकत्र कर चूर्ण करे इसको भक्षण करे ऊपर से घी डालके दूध पीवे तो क्षय,राजयक्ष्मा,कामला, बवासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और अष्ट महारोग इन को नाश करे तथा रोगी को बल आनकर धातु पुष्ट होवे ॥

बलादिचूर्ण

बला विदारी लघुपंचमूली पंचैव क्षीरावृतत्वक् प्रयोज्या । पुनर्नवा मेघतुगा च भृंगः संजीवनीयैर्मधुकैः समांशैः॥अक्षप्रमाणानि च मानिकानि सर्वाणि चैतानि विचूर्णयित्वा । विमिश्रयेत्तक्रकणाशतानि पंचाशगोधूमयवाश्च पिष्ठा ॥ तुगासमांशं सितंदुलानां पिष्टं सशृंगाटकमिश्रितं तु । प्राक् चूर्णं क्राथेन वियोजनीयं सर्वांशकेनाप्यथ वा प्रयोज्यम् ॥ विभावयेच्चामलकीरसेन वारत्रयं गोपयसा विभाव्यम् । ततोस्य सर्वैः समशर्करा वा घृतेन चैवं पुनरेव भाव्यम्॥ तद्भक्षयेत्क्षौद्रयुतं पलार्द्धं जीर्णे च भोज्यं कटुकाम्लवर्ज्यम् । क्षीरं घृतं वा सितशर्करं वा यवान्नगोधूमकशालिमद्यान् ॥ ज्ञात्वाग्निपाकं जठरे नरस्य देयो विधिज्ञैः क्षयरोगशांत्यै ॥

अर्थ—बला, विदारीकंद, लघुपंचमूल, वड, गूलर, पीपलवृक्ष, पाईर,नांदरूख इन की छाल, पुनर्नवा, नागरमोथा, वंशलोचन, भांगरा और जीवनीयगण, मुलहटी, ये सब समान भाग लेकर चूर्ण करे इस चूर्ण का पांचवां भाग गेंहू और जौं का आटा तथा वंशलोचन के समान चावल और सिंघाडे का चूर्ण लेवे ये सब चूर्ण को एकत्र करके ऊपर कही हुई बला से लेकर मुलहटी पर्यंत वो फिर लेके उन का काढा करके पूर्वोक्त चूर्ण में भावना देवे फिर चूर्ण में बराबर की मिश्री मिलाय लेवे इस में से छः मासे चूर्ण को सहत के साथ देवे जब चार घडी वीत जावे तब चरपरे और खट्टे पदार्थ त्यागकर दूध, घी, खांड, गेहूं, जों, चावल और मद्य ये पथ्य में देवे. इस प्रकार अग्निबल जानके क्षयरोग का नाश करने के अर्थ देवे तो राजरोग नष्ट होवे॥

जातीफलादिचूर्ण

जातीफलं विडंगानि चित्रकं तगरं तिलाः । तालीसं चंदनं शुंठी

लवंगमुपकुंचिका॥ कर्पूरश्चाभया धात्री मरीचं पिप्पली तुगा। एषामक्षसमा भागाश्चातुर्जातकसंयुताः॥ पलानि सप्त भंगायाः सिता सर्वसमा मता। चूर्णमेतत्क्षयं कासं श्वासं च ग्रहणीगदम्॥ अरोचकं प्रतिश्यायं तथा चानलमंदताम्। एतान् रोगान् निहंत्येव वृक्षानिंद्राशनिर्यथा॥

अर्थ—जायफल, वायविडंग, चीते की छाल, तगर, तिल, तालीसपत्र, चंदन, सोंठ, लौंग, इलायची, भीमसेनी कपूर, हरड, आवला, काली मिरच, पीपल, वंशलोचन तथा चातुर्जात. ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे तथा भांग सात तोले ले और सब के बराबर मिश्री लेवे इस चूर्ण के खाने से क्षय, खांसी, श्वास, संग्रहणी, अरुचि, प्रतिश्याय और मंदाग्नि इन का नाश करे॥

शिवगुटी

त्रीन्वारान्प्रथमे शिलाजतुजले भाव्यं भवे त्रैफले निःक्काथे दशमूलजेथ तदनु च्छिन्नोद्भवाया रसैः। क्काथे वालकजे पटोलसलिले यष्टीकषाये पुनर्गोमूत्रेथ पयस्यथापि च गवामेषां कषाये ततः॥ द्राक्षाभीरुविदारिकाद्वयपृथक्पर्णीस्थिरापौष्करैः पाठाकर्कटकोटजाख्यकटुकाराम्नांबुदालंबुदैः। दंतीचित्रकचव्यवारुणकणावीराष्टवर्गौषधैरष्टोर्णे चरणस्थिते पलमितैरेभिः पृथक् भावयेत्॥ धात्रीमेषविशाणिकात्रिकटुकैरेभिः पृथक् पंचकैर्द्रव्यैश्च द्विपलोन्मितैरपि पलं चूर्णं विदारीभवम्। तालीसात्कुडवं चतुःपलमिह प्रक्षिप्यते सर्पिषस्तैलस्यार्धपलं पलाष्टकमथ क्षौद्रं भिषग्योजयेत्॥ तुल्यं पलैः षोडशभिः शितायास्त्वक्क्षीरिकापत्रककेसरैश्च। बिल्वांशकैस्त्वक्तृटिसंप्रयुक्तैरित्यक्षमात्रा गुटिका प्रकल्प्या॥ तासामेकतमां प्रयोज्य विधिवत्प्रातः पुमान्भोजनात्प्राग्वा मुद्गदलांबुजांगलरसं शीतं शृतं वा जलम्। माक्षिकं मदिरामगुर्वशनभुक् पीत्वा पयो वा गवां प्राप्नोत्यंग मनोभवः सुभवनं संपन्नमानंदकृत्॥ शोफ-

ग्रंथिविबंधवेपथुवमिं पांड्वामयं श्लीपदं प्लीहार्शं प्रदरं प्रमेहपिटि-
कां मेहाश्मरीं शर्कराम्। हृद्रोगार्बुदवृद्धिविद्रधियकृद्योन्यामयः
सानिलश्चोरुस्तंभभगंदरज्वररुजस्तूणी प्रतूणी तथा॥वातासृक्
प्रबलं प्रवृद्धमुदरं कुष्ठं किलासं कृमीन् कासं श्वासमुरःक्षतक्ष-
यमसृक्पित्तं समानात्ययम् । उन्मादं मदमप्यपस्मृतिमति
स्थौल्यं कृशत्वं तनोः सालस्यं च हलीमकं च शमयेन्मूत्रस्य
कृच्छ्राणि च ॥

अर्थ–शोधा शिलाजीत लेकर उस को त्रिफले के काढे की ३ भावना देवे फिर दशमूल का काढा, गिलोय का रस, नेत्रवाला का काढा, पटोल पत्र का रस, मुल-हटी, गोमूत्र, गौ का दूध, दाख, शतावर, विदारीकंद, कोहडा, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, पुहकरमूल, पाढ, कूडे के बीज (इन्द्रजौ), कांकडी, कुटकी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दंती, चीते की छाल, चव्य, गजपीपल, भूंयआवला, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली ये औषधी प्रत्येक चार चार तोले लेकर इन के रस की अथवा काढे की पृथक् भावना देवे फिर आवला, मेढासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक ८ तोले, विदारीकंद का चूर्ण ४ तोले, तालीसपत्र १६ तोले और घी १५ तोले, तेल २ तोले, सहत ३२ तोले और मिश्री ६०, वंशलोचन, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, छोटी इलायची, ये सब चार २ तोले लेवे सब को एकजीव करके एक २ तोले की गोली बनावे इस को प्रातःकाल में सेवन करे और भोजन करने के प्रथम देवे और पथ्य में मूंग की दाल अथवा मूंग का जल देवे जंगली जीवों का मांसरस औटायके शीतल करा हुआ जल सहत, मद्य, हलके अन्न, तथा गौ का दूध ये पदार्थ देने चाहिये तौ कामदेव को प्रबल करे तथा सूजन, गांठ, बिड्बंध, कफ, वांति, पांडुरोग, श्लीपद, प्लीहा, बवासीर, प्रदर, प्रमेह, प्रमेह पिटिका, मूत्राश्मरी, हृदयरोग, अर्बुद, अंडवृद्धि, विद्रधि, यकृत, योनिरोग, वातरोग, ऊरु-स्तंभ, भगंदर, ज्वर तथा तूणी और प्रतूनी, वातरक्त, बढा हुआ जलंधर का रोग, कुष्ठ, किलासकुष्ठ, कृमिरोग, खांसी, श्वास, उरःक्षत, क्षय, रक्तपित्त, मद, उन्माद, (बावलापना), अपस्मार (मृगी), अतिस्थूलता, अत्यंत कृशता, आलकस, हलीमक, मूत्रकृच्छ्र, वली (देह में गुजलटोंका पडजाना), पलित (बालों का सपेद हो जाना) इन सब रोगों को यह शिवगुटी दूर करे है ॥

लघुशिवगुटी

कौटजं त्रिफलां निंबं पटोलं घननागरैः । भावितानि दशाहानि

रसैर्द्वित्रिगुणानि च ॥ शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा । त्वक्क्षीरी पिप्पली धात्री कर्कटाख्या पलोन्मिता ॥ निदिग्धी फलमूलाभ्यां पलं युंज्यात् त्रिजातकात् । मधुत्रिपलसंयुक्ता कुर्यादक्षसमा गुटी ॥ दाडिमाम्लपयःक्षीररसयूषसुरासवान् । तान्भक्षयित्वानुपिबेन्निरन्नो हितभक्ष्यभाक् ॥ पांडुं कुष्ठज्वरप्लीहतमकार्शोभगंदरम् । नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि मूत्रस्थानविबंधनुत् ॥ यद्यत्र मेलितं येन कांतलोहं तथाभ्रकम् । पलं पलं च मिलितं तदा स्यात्किमतः परम्॥ तीव्रदुःखप्रदं पांडुं प्रमेहमपरिग्रहम् । राजरोगं च व्याधिं च जयेदिति किमद्भुतम् ॥

अर्थ–शुद्ध शिलाजीत बत्तीस तोले को कुडा की छाल, हरड, बहेडा, आवला, नीम, पटोलपत्र, नागरमोथा और सोंठ इन के काढे में एक महीना खरल करे फिर इस में मिश्री ३२ तोले तथा वंशलोचन, पीपल, आंवला, ककोडा ये प्रत्येक चार चार तोले और कटेरी का पंचांग ४ तोले तथा दालचिनी, पत्रज, इलायची और सहत ये बारह २ तोले ले इन को खरल करके दश मासे की गोली खायकर अनारदाना, दूध, खीर, रस, यूष, मद्य अथवा आसव इन में से किसी एक को भक्षण करे. तथा हितकारी भोजन करे तो पांडुरोग, कोढ, ज्वर, प्लीहा, तमक, बवासीर, भगंदर, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रसंबंधी रोग तथा मूत्रबंध इन को नाश करे इस गोली में किसी २ वैद्य की आज्ञा है कि इस में कांतलोह और अभ्रक इन की भस्म ये चार २ तोले और मिलावे फिर इस के गुणों का क्या ही कहना है. यह पांडुरोग, सर्व प्रकार के प्रमेह, क्षय और अनेक व्याधियों को नाश करे इस में आश्चर्य ही क्या है ॥

सूर्यप्रभागुटी

दार्वी व्योषविडंगचित्रकवचा पीता करंजामृता देवाह्वातिविषा त्रिवृत्सकटुका कुस्तुंबरुः कारवी । द्वौ क्षारौ लवणत्रयं गजकणा चव्यं तथारुष्करं तालीसं कणमूलपुष्करजटाभूनिंबसंज्ञैर्युतम् ॥ भार्ङ्गी पद्मकजीरकोशकुटजो दंतीत्वचा भद्रकं सर्वं कर्षसमांशकं सुभिषजा सूक्ष्मं च संचूर्णितम् । तद्वत्पंचपलं वरा गिरिजतु स्यात्पंचमुष्टिः पुरोलोहस्य द्विपलं पलद्वयमथो ताप्यस्य

संमिश्रितम् ॥ क्षिप्त्वा पंच पलानि शुभ्रसिकतावश्यं पलं यो-
जितं त्वेकैकत्रिसुगंधवस्तु पलिकं क्षौद्रैर्घृतैर्लेहवत् । एकीकृत्य
समांशमेव गुटिका कार्या सुवर्णोन्मिता साच ब्रह्ममुखांबुजप्रक-
टिता सूर्यप्रभा नामतः ॥ शोषं कासमुरःक्षतं सतमकं पांड्वामयं
कामलं गुल्मं विद्रधिपार्श्वशूलमुदरं स्त्रीषु क्षयं च कृमीन् ।
कुष्ठार्शोविषमज्वरग्रहणिकामूत्रग्रहं नाशयेद्भुक्त्वैकां गुटिकां प्रहृ-
ष्टमनसा योज्यं यथेष्टाशनम् ॥ नास्त्येतत्सममौषधं त्रिजगति
चक्रे हितं प्राणिनामुद्दामप्रमदामदद्विपदराट् सिंहस्तु सूर्यप्रभा ॥

अर्थ—दारुहलदी, सोंठ, काली मिरच, पीपल, वायविडंग, चीते की छाल, वच, हलदी, कंजा, गिलोय, देवदारु, अतीस, निसोथ, कुटकी, धनिया, अजमायन, जवाखार, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनोन, कचियानोन, गजपीपल, चव्य, मिलाए, तालीसपत्र, पीपरामूल, पुहकरमूल, चिरायता, भारंगी, पद्माख, जीरा, जायफल, कूडे की छाल, दंती और नागरमोथा ये प्रत्येक एक २ तोले लेवे और त्रिफला २० तोले शिलाजीत २० तोले, गूगल ८ पल, तथा लोहे की भस्म २८ तोले, सुवर्ण माक्षिक की भस्म ८ तोले, मिश्री २० तोले, वंशलोचन, दालचीनी, पत्रज, इलायची ये सब चार २ तोले लेवे सब का एकत्र चूर्ण करके घी और सहत में मिलाय के इस की एक एक तोले की गोली बनावे यह ब्रह्मदेव के मुख से सूर्यप्रभा नामक वटी प्रगट हुई है. यह शोष, खांसी, उरःक्षत, तमक, पांडुरोग, कामला, गोला, विद्रधि, पार्श्वशूल, उदर, स्त्रियों का क्षय, कृमिरोग, कोढ, बवासीर, विषमज्वर, संग्रहणी, मूत्र का रुकना इन सब रोगों को यह नष्ट करे इस को भक्षण करके यथेष्ट पथ्य देवे किसी वस्तु का विचार न करे इस सूर्यप्रभा नामक गोली के समान और कोई औषधी नहीं है ॥

गुडूच्यादिमोदक

गुडूचीं खंडशः कृत्वा कुट्टयित्वा सुमर्दयेत् । वस्त्रेण विधृतं तोयं
स्रावयेत्तच्छनैः शनैः ॥ शुद्धशंखमिमं चूर्णमेतैः संमिश्रयेद्भिषक् ।
उशीरं वालकं पत्रं कुष्टं धात्रीं च मौसलीम् ॥ एलां हरेणुकं द्राक्षां
कुंकुमं नागकेशरम् । पद्मकंदं च कर्पूरं चंदनद्वयमिश्रितम् ॥ व्योषं
च मधुकं लाजा अश्वगंधः शतावरी । गोक्षुरं मर्कटाख्यं च जाती-
तक्कोलचोरकम् ॥ रसश्च वंगलोहैश्च संमिश्रं कारयेद्बुधः । एतानि
समभागानि द्विगुणामृतशर्करा ॥ मत्स्यंड्याज्यमधूपेतं भक्षयेत्प्रा-

तरुस्थितः । क्षयं च रक्तपित्तं च पाददाहमसृग्दरम् ॥ मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं वातकुंडलिकां तथा । निहन्याच्च प्रमेहांश्च सोमरोगं च दारुणम् ॥ रसायनमिवर्षीणाममृतं चामृतांधसाम् ॥

अर्थ–गिलोय के छोटे २ टुकडे करके कूट डाले. फिर उस में जल डालके हाथों से खूब मींड डाले. फिर इस को गाढे कपडे में डालके धीरे २ जल को निचोड देवे तो शंख चूर्ण के समान यह गिलोय सत्व बनके तयार होवे इसमें खस, नेत्रवाला, पत्रज, कूठ, आवले, मुसली, इलायची, पित्तपापडा, दाख, केशर, नागकेशर, कमलकंद, कपूर, चंदन, लाल चंदन, सोंठ, मिरच, पीपल, मुलहटी, खील, असगंध, सतावरी, गोखरू, कौंच के बीच, जायफल, कंकोल, चोरजीरा पारे की भस्म, वंगभस्म, और लोह की भस्म ये संपूर्ण वस्तु समान भाग लेवे. सब को एकत्र कर उस में दुगनी मिश्री मिलावे. इस चूर्ण को मिश्री सहत और घी इन में मिलायके सेवन करे तो क्षय, रक्तपित्त, पाददाह, रक्तप्रदर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, वातकुण्डली, प्रमेह और सोमरोग, इन सब को नष्ट करे यह मोदक जैसे ऋषियों को रसायन और देवताओं को अमृत गुण करे है उसी प्रकार रोगी मनुष्य को हितकारी है ॥

इक्ष्वादिमोदक

उच्चटेक्षुरसः क्षौद्रं तुगाक्षीर्याश्च बुद्धिमान्।प्रस्थं प्रस्थं पृथक् गृह्य शर्करार्धतुलां तथा॥आत्म गुप्ताफलानां च कुडवं मरिचस्य च । त्रिसुगंधं कृतावापं मंथानेन विमंथयेत् ॥ पलिकान्मोदकान्कृत्वा स्थापयेद्भाजने शुभे । एतत् द्विकालमेकं वा खादेदग्निबलं प्रति॥ वटिकां नियताहारो ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः । ग्रहण्यां यक्ष्मिणे सद्यश्चैकादशविधे तथा ॥ स्वरवर्णबलौदार्यतुष्टिपुष्टिविवर्द्धनम् । आयुष्यं पौष्टिकं चाथ भूतोपहतचेतसाम् ॥ व्याकुलीकृतदेहानां वृद्धानां क्षीणरेतसाम् । वाजीकरणमप्येवं वंध्यानां पुत्रदं परम् ॥ धनुस्त्रीमद्यभारैश्च खिन्नानां बलवर्धनम् । हृत्प्लीहग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्रापतंत्रकम् ॥ अपस्मारविषोन्मादनाशनं तद्रसायनम् ॥

अर्थ–उटंगन के बीज अथवा घुंघची के पत्ते, ईख का रस, सहत, वंशलोचन, ये प्रत्येक ६४ तोले तथा मिश्री २०० तोले, कौंछ के बीज, काली मिरच, दालचीनी,

पत्रज, इलायची ये प्रत्येक १६ तोले लेवे इन सब का चूर्ण कर उस पूर्वोक्त रसों में मिलाय देवे फिर रई से मंथन करके चार २ तोले के लड्डू करके धर रखे इस में से दोनों वख्त अथवा एक बार इस मोदक को अग्नि का बल विचारके खाने को देवे. इस पर पथ्य उत्तम करे तथा जितेन्द्री और ब्रह्मचर्य से रहे तो यह संग्रहणी, ग्यारह प्रकार की क्षय रोग इन को नष्ट करे और जो वृद्ध व्याकुल है तथा धातु क्षीण हो गए हैं उन को यह वाजीकरण कर्त्ता है वंध्याओं को पुत्र देय है और युद्ध (लढाई), स्त्रीसंग, मद्य और भार इन से श्रमित पुरुषों को बल बढावे और हृद्रोग, प्लीहा, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, अपतंत्रक, अपस्मार, विष, उन्माद इन को नाश करे यह रसायन है॥

द्राक्षासव

मृद्वीकायास्तुलार्द्धं तु द्विद्रोणेपां विपाचयेत्। पादशेषे कषाये च पूते शीते प्रदापयेत्॥ गुडस्य द्वितुला भाविधातक्या घृतभाजने। विडंगं फलिनी कृष्णा त्वगेलापत्रकेसरम्॥ मरिचं च भिषक् चूर्णं सम्यक् दत्त्वा विचक्षणः। क्षिपेच्च पलिकैर्भागैः स्थापयेच्चातपे दिने॥ ततो यथाबलं पीत्वा कासश्वासगलामयान्। हंति यक्ष्माणमत्युग्रमुरःसंधानकारकम्॥ चतुर्थभागो द्राक्षाया धातकीमत्र केचन। प्रयच्छंति ततो वीर्यमेतस्योच्चैः प्रजायते॥

अर्थ–मुनक्का दाख दो सौ तोलेन को चार हजार छियाणव तोले जल में डाल के औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके जल को छान लेवे जब काढे का जल शीतल हो जावे तब गुड आठ सौ तोले डाले और धाय के फूलों का चूर्ण ८०० तोले डालके सब को घी के चिकने बासन में भरके उस में वायविडंग, त्रायमाण, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर और काली मिरच इन प्रत्येक का चार चार तोले चूर्ण डालके ? दिन धूप में धरा रहने दे फिर मुख बंद करके १ महिने पर्यंत धरा रहने देवे इस को बलाबल विचार करके पीवे तो घोर खाई का रोग, खांसी, श्वास, गलेके रोग, उरःक्षत, इन को दूर करे इस आसव में कोई २ वैद्य चतुर्थांश धाय के फूल गेरते हैं कि जिस से आसव अधिक वीर्यवाली हो जावे॥

खर्जूरासव

पंचप्रस्थं समादाय खर्जूरस्य विचक्षणः। द्रोणांभसि पचेत्सम्यक् ततोत्तार्य च गालयेत्॥ कुंभं सुधूपितं कृत्वा प्रक्षिपेत्तं

रसं शुभम् । हपुषा ताम्रपुष्पी च कषायं तत्र निःक्षिपेत् ॥ द्वारं निरुध्य सुदृढं निक्षिपेद्वसुधातले । सप्तकद्वयययोगेन सिद्धोयमासवो रसः ॥ रोगराजं तथा शोफं प्रमेहं पांडुकामलाम् । ग्रहणीं पंचगुल्माशों नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ–खजूर ३२० तोले को २०४८ जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे फिर एक मिट्टीकी गगरी ले उस को अगरआदि की धूनी देके उस काढे के जल को उस में भर देवे फिर हाऊबेर, धाय के फूल, इन का काढा उस में डालके मुख बंद कर उस गागर को धरती खोदके गाड देवे १४ चौदह दिन के उपरान्त निकाल लेय तो यह खजूरासव तयार हो यह क्षय, सूजन, प्रमेह पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, पांच प्रकारके गोले का रोग, बवासीर इन सब रोगों का नाश करे ॥

दशमूलासव

दशमूलं तुलार्द्धं च पौष्करं च तदर्धकम् । हरीतकीनां प्रस्थार्द्धं धात्री प्रस्थद्वयं तथा ॥ चित्रकं पुष्करमितं चित्रकार्धं दुरालभा। गुडूच्यादिः शतपलं विशालापलपंचकम्॥ खदिरस्य पलान्यष्टौ तदर्धं बीजकं तथा । मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं कपित्थं देवदारु च ॥ विडंगं चविकं लोध्रं भागं चाष्टकवर्गकम्।कृष्णाजाजी पिप्पली च क्रमुकं पद्मकं सटी ॥ प्रियंगुसारिवामांसी रेणुका नागकेसरम् । त्रिवृता रजनी रास्ना मेषशृंगी पुनर्नवा॥शतावरी चेंद्रयवा मुस्ता द्विपलिकान् जले । चतुर्गुणे पादशेषे द्राक्षाषष्टिपलं क्षिपेत् ॥ त्रिंशत्पलानि धातक्या गुडं पलचतुष्टयम । मधु द्वात्रिंशत्पलं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ भांडे पुराणे स्निग्धे वा मांसीमरिचधूपिते । पृथक् द्विपलिकानेतान् पिप्पलीं चंदनं जलम् ॥ जातीफलं लवंगं च त्वगेलापत्रकेशरान् । कर्षमात्रां च कस्तूरीं दत्त्वा पक्षं निधापयेत् ॥ कनकद्रुपलं चूर्णं क्षिपेन्निर्मलभावितम् । पक्षादूर्ध्वं पिबेद्यस्तु मात्रया च यथाबलम् ॥ धातुक्षयं जयत्येव कासं पंचविधं तथा । अर्शांसि षट्प्रकाराणि तथाष्टा-

वुदराणि च ॥ प्रमेहं च महाव्याधिमरुचिं पाण्डुरुक् तथा । सर्ववातांस्तथा शूलं श्वासं छर्दिमसृग्दरम् ॥ अष्टादशैव कुष्ठानि शोफं शूलं भगंदरम् । शर्कराद्यं मूत्रकृच्छ्रमश्मरीं च विनाशयेत् ॥ कृशस्य पुष्टिं कुरुते पुष्टस्य च महाबलम् । महावेगो महातेजा महावीर्यो विलोक्यते ॥ कामपुष्टिकरो ह्येष वंध्यानां पुत्रदो भवेत् ॥

अर्थ—दशमूल २००तोले, पुहकरमूल१००, हरड ८० तोले, आवले१२८तोले, चीते की छाल १००, धमासो ५०, गुडूच्यादि क्वाथ की औषध ४००, इन्द्रायन की जड २०, खैरसार ३२, और बिजोरा १६ तोले लेवे. तथा मजीठ, मुलहटी, कूट, कैथ, देवदारु, वायविडंग, चव्य, लोध ये सब एक २ तोले. तथा जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली. ये सब चार चार तोले लेवे. तथा पीपल, जीरा, गजपीपल, चिकनी सुपारी, प्रम्राख, कचूर, फूल, प्रियंगु, सारिवा, रेणुकद्रव्य, नागकेशर, निसोथ, हलदी, रास्ना, मेढासिंगी, पुनर्नवा, शतावर, इन्द्रजो और नागरमोथा, इन सब को आठ २ तोले लेवे इस प्रकार सब को लेके औषधों से चौगुना जल डाल के औटावे. जब चतुर्थांश काढा रह जावे. तब उस को उतारके छान लेय. इस काढे के जल में दाख २४० तोले, धाय के फूल १२० तोले, गुड १६ तोले, सहत १२८ तोले, इन सब को एकत्र कर पुरानी घी की चिकनी गागर में प्रथम जटामांसी की और काली मिरच इनकी धूनी देके सब रस और औषधों को भर देवे तथा पीपल, चंदन, नेत्रवाला, जायफल, लौंग, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, ये प्रत्येक आठ२ तोले ले. कस्तूरी १तोले धतूर के फल का चूर्ण ४ तोले डाल के १५ दिन धरा रहने देवे. फिर बलाबल विचारके देवे तो यह धातुक्षय, पांच प्रकार की खांसी, छः प्रकार की बवासीर, आठ प्रकार के उदर रोग, प्रमेह, महाव्याधि, अरुचि, पांडुरोग, संपूर्ण वादीके रोग, शूल, श्वास, वांति, रक्तप्रदर, अठारह कोढ, मूत्रशर्करा, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इन को नष्ट करे लटे हुए को पुष्ट करे तथा पुष्ट बलवान तथा महातेजस्वी महावीर्यवान् करे है तथा काम पुष्टि इन को देवे तथा वंध्या स्त्री को पुत्र देवे ॥

कुमारीपाक

कुमारीकंदमादाय पलं विंशतिसंख्यया । चतुर्गुणं च गोदुग्धं पाचयेन्मंदवह्निना ॥ यावच्च जीर्यते दुग्धं तावत्पाचनकं कुरु ।

छायाशुष्कं च कुर्वीत चूर्णयेद्बुद्धिमान् भिषक् ॥ पिप्पली मरिचं शुंठी प्रत्येकं च पलत्रयम् । जातीफलं जातिपत्री लवंगं पलमेव च ॥ गोक्षुरं कर्कटीबीजं प्रत्येकं च पलं पलम् । चातुर्जातपलं चैव चित्रकं च पलं तथा ॥ सर्वेषां सूक्ष्मचूर्णं च कारयेद्बुद्धिमान् भिषक् । सिता पलं च विंशत्या गोघृतं च पलं दश ॥ तत्समं महिषीदुग्धं तत्समं मधुमिश्रितम् । लोहपात्रे विनिक्षिप्य पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ चूर्णं निक्षिप्य यत्नेन दर्व्या सम्यक् विचालयेत् । यावद्घृतं प्रदृश्येत तावत्पाचनकं कुरु ॥ कर्षमेकं लोहभस्म सुवर्णं तत्समं ततः । सिंदूरं कर्षमेकं तु दापयेद्भिषगुत्तमः ॥ कोलप्रमाणवटकान् भक्षयेद्बुद्धिमान्नरः । जीर्णज्वरं क्षयं कासं श्वाससंतापशूलनुत् ॥ अजीर्णमामवातघ्नं प्रदरं पञ्चनाशनम् । स्त्रीणां वंध्यात्वहरणं पुत्रं चैव प्रसूयते ॥ अंडवृद्धिहरं चैव स्त्रीणां रमयते शतम् । इदं गोप्यमिदं गोप्यमश्विनीदेवनिर्मितम् ॥

अर्थ–घीगुवार का गूदा ८० तोले, तथा गौ का दूध ३२० तोले, दोनों को एकत्र कर मंदाग्निपर रखके जबतक दूध सब न जले तबतक औटावे फिर उतारके उस को छाया में सुखायके चूर्ण कर डाले. फिर पीपल, मिरच और सोंठ, प्रत्येक बारह २ तोले, जायफल, जावित्री,लोंग, गोखरू,ककडी के बीज, चातुर्जात और चित्रक की छाल ये प्रत्येक चार २ तोले ले बारीक चूर्ण कर उस में मिलाय देवे. तथा मिश्री ८० तोले और गौ का घी ४०, भैंस का दूध ४० और सहत ४० तोले मिलायके इन सब को लोहे के पात्र में भरके मंदाग्नि से पचन करे और औटानेके बाद पूर्वोक्त चूर्ण आदिको इस में मिलाय देवे. और कलछीसे एकमेक कर दे जबतक घी दीखता रहे तबतक मिलाता रहे और पचावे फिर इस में लोह की भस्म, सुवर्ण की भस्म, रससिंदूर ये प्रत्येक एक एक तोले डाल के तोले २ भर की गोली बनाय लेवे. यह जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, श्वास, संताप, शूल, अजीर्ण, आमवात और प्रदर इन का नाश करे, तथा स्त्रियों का वंध्यापना और पुरुषों का नपुंसकत्व को दूर करे है तथा १०० स्त्री भोगने की शक्ति करे यह कुमारीपाक अश्विनीकुमार ने कहा है यह अति गोप्य है॥

धात्रीपाक

धात्रीफलानि पक्वानि तीक्ष्णलोहेन वेधयेत् । विश्वावरणपत्रैश्च फलानि स्वेदयेद्भृशम्॥ततो दुग्धे च संस्वेद्यं जले च तदनंतरम्। मधुमध्ये क्षिपेद्भांडे स्थापयेद्दिनविंशतिः॥ विनष्टं मधु संत्यज्य मधुमध्यं पुनः क्षिपेत् । सिता धात्रीफलान्येव पेषयेत्करिणा सह ॥ एला चैव तुगा क्षीरी लोहं वंगं तथैव च । मेलयित्वा सुनक्षत्रे प्रातः कर्षमितं भजेत् ॥ बले क्षीणे क्षये चैव पथ्यं मधुरमाचरेत् । प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत्तत्क्षणादपि ॥ वीर्यवृद्धिकरं चैव वाजीकरणमुत्तमम् । कुष्टं पित्तप्रकोपं च नाशयेन्नात्र संशयः ॥ एतेन्ये पित्तजा रोगाः शोणिताद्यास्त-थैव च । ते सर्वे प्रशमं यांति धात्रीपाकस्य सेवनात् ॥

अर्थ-मोटे २ और पके हुए आवले लेके उन को कांटे से खूब गोद लेवे फिर अदरक के पत्ते जल में डालके और आवले डालके औटावे जब सीज जावे तब निकालके फिर दूध में औटावे फिर स्वच्छ जलमें औटायके सहत से भरे हुए बासन में गेर देवे और वीस दिन पर्यंत धरे रहने दे फिर उस खराब सहत को निकाल नवीन ताजा सहत भरे तथा मिश्री, आवले, गजपीपर, इलायची, वंशलोचन, लोह-भस्म, वंग भस्म, ये सब डाल के शुभदिन में प्रातःकाल १ तोले बलक्षय और रोग इन पर देवे तथा मधुर पदार्थ पथ्य में देवे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कोढ, पित्तका कोप, पित्तजन्य सर्व रोग और रुधिरविकार ये नष्ट होवे तथा वीर्यवृद्धि करके उत्तम वाजीकरण करे है ॥

शेवंतीपाक

श्वेतपुष्पसहस्रं तु घृतप्रस्थे विपाचयेत् । घृते पक्वीकृते तत्र निःक्षिपेदौषधं भिषक् ॥ सितोपलाचतुष्कं च चातुर्जातं पलं पलम् । मृद्वीका षट्पलं चैव क्षिप्त्वा मधु पलाष्टकम् ॥ धारा-सत्वं तवक्षीरं श्वेतजीरं पृथक् पृथक् । नागं वंगं पलार्द्धं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ कर्पूरं वल्लमात्रं च दत्त्वा स्थाप्य सुकुंभके ।

भक्षयेन्निष्कमात्रं तु प्रातरेव हि पथ्यभुक् ॥ जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमांद्ये प्रमेहके । दिनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्यते ॥ प्रदरं रक्तजान् रोगान् कुष्ठार्शांसि च नाशयेत् । नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वान्मुखे स्थितान् ॥नाशयेन्नात्र संदेहो मंडलस्य च सेवनात् ॥

अर्थ–सपेद सेवती के फूल १००० ले इन को ६४ तोले घी में पचावे फिर मिश्री २५६ तोले, चातुर्जात १६ तोले, दाख २४ तोले, सहत ३२ तोले, गिलोय सत्व, तवाखीर, सपेद जीरा, नागेश्वर, वंग ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे इस प्रमाण से सब को एकत्र कर तीन रत्ती भीमसेनी कपूर इस में और मिलावे इस को अमृतवान् आदि में अथवा चीनीके बरतन में भरके धर दे. इस में से छः मासे नित्य सेवन करे. और पथ्य से रहे तो जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, मदांग्नि, प्रमेह, दिन का ज्वर, रात्रिज्वर, मस्तकरोग, रक्तप्रदर, रक्तजन्य रोग, कोढ, बवासीर, नेत्ररोग, तथा मुख रोग, इन को नाश करे ॥

महाकनकसुंदररस

रसगंधकनागाश्च रसको माक्षिकाभ्रके । कांतविद्रुममुक्तानां वंगभस्म च तालकम् ॥ भस्म कृत्वा प्रयत्नेन प्रत्येकं कर्षसंमितम् । सर्वतुल्यं शुद्धहेमभस्म कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ मर्दयेत्रिदिनं सर्वं हंसपादीरसैर्भिषक्।ततो वै गोलकान्कृत्वा काचकुप्यां विनिःक्षिपेत् ॥ रुध्वा तत्काचकूप्यां च सप्तवस्त्रेण वेष्टितम् । ततो वै सिकतायंत्रे त्रिदिनं चोक्तवह्निना ॥ पश्चात्तं स्वांगशीतं च मर्द्यं पूर्वोदिते रसे। विनिःक्षिप्य करंडेथ संपूज्य रसराजकम् ॥ महाकनकसिंदूरो राजयक्ष्महरः परः । पांडुरोगं श्वासकासकामलाग्रहणीगदान् ॥ कृमिशोफोदरावर्तगुल्ममेहगुदांकुरान् । मंदाग्निच्छर्दिमरुचिमामशूलहलीमकान् ॥ ज्वरान्द्वंद्वादिकान्सर्वान्सान्निपातांस्त्रयोदश । पैत्तरोगमपस्मारं वातरोगान्विनिःक्षिपेत् ॥ रक्तपित्तप्रमेहांश्च स्त्रीणां रक्तस्रुतिं तथा । विंशतिश्लेष्मरोगांश्च

मूत्ररोगं निहन्त्यसौ ॥ हेमवर्णश्च बल्यश्च आयुःशुक्रविवर्धनः । महाकनकसिंदूरः काश्यपेन विनिर्मितः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, शीशे की भस्म, खपरिया, माक्षिक भस्म, अभ्रक भस्म, कांतलोह, मूंगा, मोती, वंग और हरताल इन की भस्म समान भाग लेवे सबको एकत्र करके सबके बराबर सुवर्ण की भस्म मिलावे. फिर हंसपदी के रस में तीन दिन खरल कर गोली बनावे इन को आतसी शीशी में भरके उस पर सात कपड मिट्टी कर वालुकायंत्र में रखके तीन दिन पर्यंत जिस प्रकार वालुका यंत्र की विधि कही उसी रीति से पचावे जब स्वांग शीतल हो जावे तब इस रस को निकालके हंसपदी के रस में घोट शीशी में भरके धर रखे यह **महाकनकसुंदररस** राजयक्ष्मा, पांडुरोग, श्वास, खांसी, कामला, संग्रहणी, कृमिरोग, सूजन, जलंधर, उदावर्त, गोला, प्रमेह, बवासीर, मंदाग्नि, वमन, अरुचि, आमशूल, हलीमक, सर्व प्रकार के ज्वर, द्वंद्वज ज्वर, तेरह प्रकार के संन्निपात, पित्तके रोग, मृगी, वादी के रोग, रक्तपित्त, प्रमेह, स्त्रियों का रक्तप्रदर, वीस प्रकार के कफरोग, और मूत्ररोग इन को नाश करे तथा देह का सुवर्ण के समान वर्ण करे तथा आयुष्य और धातु इन को बढावे यह रस काश्यप ऋषि ने कहा है ।

क्षयकेसरीरस

नेत्रलोचनचंद्रेंदुप्रमाणं भागमाहरेत् । वह्निजं फटकी मृष्टा गरलं नवसागम् ॥ चूर्णमेषां सितायुक्तं गुंजार्धं योजयेद्भिषक् । क्षयकेसरिनामायं रसः परमदारुणः ॥

अर्थ–काली मिरच २ भाग, फिटकरी २ भाग, सिंगिया विष १ भाग, तथा नोसद्दर १ भाग, इन का चूर्ण करके मिश्री के साथ आधी रत्ती देवे यह **क्षयकेसरीरस** क्षयरोग पर अत्यन्त गुणकारी है ।

शंखेश्वररस

शंखस्य वलयं निष्कं चतुर्निष्कं वराटिका । कर्षार्धं नीलतुत्थं स्यात्सर्वतुल्यं तु गंधकम् ॥ गंधतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् । टंकणं रसतुल्यांशं मर्द्यं पाच्यं मृगांकवत्॥राजरोगहरः सोयं नाम्ना शंखेश्वरो रसः । षट् गुंजा तु कणा क्षौद्रैः क्षये वा मरिचं घृतम् ॥

अर्थ–शंख के टुकडे छः मासे, पीली कौडी २ तोले, लीलाथोथा छः मासे, तथा इन सब के बराबर गंधक और शीशे की भस्म पृथक् २ लेवे, पारे की भस्म

और सुहागा, येभी गंधक के बराबर अलग २ लेवे. सब एकत्र कर संपुट में रखके गजपुट में फूंक देवे इस पर पथ्य मृगांकरस के समान करे यह शंखेश्वररस छः रत्ती, पीपल और सहत अथवा काली मिरच और घी इन के साथ देवे तो क्षय का नाश होवे ॥

हररुद्ररस

तीक्ष्णं शुल्बं नागतारं स्वर्णं च मारितं पृथक्।एकद्वित्रिचतुःपंचक्रमषट्शुद्धसूतकम्॥चांगेर्याश्च द्रवैर्मर्द्य दिनैकं कृतगोलकम् । मृगांकवत्पचेत् स्थाल्यां वालुकाभिः प्रपूरितम् ॥ उद्धृत्य चूर्णयेत् श्लक्ष्णं हररुद्रो रसोत्तमः । मृगांकवत्क्षयं हंति तद्वन्मात्रानुपानकम् ॥

अर्थ–खेडी लोह की भस्म १ भाग, ताम्र भस्म २ भाग, शीशे की भस्म ३ भाग, चांदी की भस्म ४ भाग, सुवर्ण भस्म ५ भाग, शुद्ध पारा ६ भाग, इस क्रम से सब भस्मों को एकत्र कर चूके के रस में एक दिन घोटे फिर गोला बनाय इस को मृगांक के समान वालुकायंत्र में पचन करावे स्वांगशीत होने पर घोट कर बारीक चूर्ण कर लेवे यह हररुद्ररस मृगांक के समान क्षयरोग को नाश करे है इस पर पथ्य और अनुपान ये सब मृगांकरस के समान करनी चाहिये ॥

नीलकंठरस

विषं क्षुद्रा उशीरं च हरिद्रा गोपयो मधु ।
कुटजस्य त्वचाचूर्णं समांशं माषमात्रकम् ॥
राजयक्ष्महरं खादेद्रसोयं नीलकंठकः ॥

अर्थ–सिंगियाविष, कटेरी, खस, हलदी, कूडे की छाल का चूर्ण ये समान भाग ले. सब का चूर्ण करके इस को सहत और गौ के दूध में मिलायके एक मासे भर देवे तो यह नीलकंठरस क्षयरोग का नाश करे ॥

शंखगर्भपोटलीरस

शंखनाभिर्गवां क्षीरैः पेषयेन्निष्कषोडश । तेन मूषा प्रकर्तव्या तन्मध्ये भस्म सूतकम् ॥ निष्कार्धगंधकं त्रीणि चूर्णीकृत्य विनिःक्षिपेत् । रुध्वा तद्वेष्टयेद्वस्त्रे मृत्तिकां लेपयेद्बहिः॥ शोष्यं गजपुटे पश्चान्मूषया सह चूर्णयेत् । गुंजैकमनुपानैश्च क्षयं हंति मृगांकवत् ॥ पोटलीशंखगर्भोयं योजयेद्वातपित्तजित् ॥

अर्थ–शंखकी नाभी ८ तोले ले बारीक चूर्ण करके उसकी मूस बनावे उस में पारे की भस्म भरके ऊपर से १॥ तोले गंधक का चूर्ण डाल देवे फिर इस मूसा के मुखको बंद कर ऊपर से ७ कपड मिट्टी करे. इस को धूप में सुखाय के गजपुट में रख-के फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल मूसा समेत को खरल में डालके पीस डाले और उत्तम शीशी में भर के धर देवे यह शंखगर्भपोटली रस एक रत्ती देवे और पथ्य मृगांकरस के समान करे तो क्षय और वातपित्त इन का नाश करे ॥

हेमगर्भरस

रसभस्म द्विनिष्कं तु निष्कैकं स्वर्णभस्मकम् । शुद्धगंधक द्वौ निष्कौ मर्दयेच्चित्रकद्रवैः ॥ द्वियामांते विशोष्याथ तेन पूर्य वराटिका । गोक्षीरैष्टंकणं पिष्ट्वा तेन रोध्य वराटिका ॥ वराटी मृन्मये भांडे रुध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतो विचूर्ण्याथ पोटलीहेमगर्भकः ॥ मृगांकवच्चतुर्गुंजा भक्षितो राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ–पारद की भस्म १ तोले, सुवर्ण की भस्म छः मासे, शुद्ध गंधक १ तोले इन सब को एकत्र करके चीते के रस में दो प्रहर खरल करे फिर इस को सुखाय कौडियों में भरे और गौ के दूध में सुहागा घोटके उन कौडियों के मुख को बंद करे और उन कौडियों को मिट्टी के बासन में बंद कर ढक देवे गजपुट में फूंक देवे जब स्वयं शीतल हो जावे तब निकाल खरल में बारीक चूर्ण कर धर रखे इस का नाम हिरण्यगर्भपोटलीरस है यह चार रत्ती अनुपान के साथ देवे तथा पथ्य और अनुपान मृगांकरस के समान करने चाहिये ॥

नागेश्वररस.

मृतसूतं मृतं नागं गंधकं तूत्थटंकणम् । प्रत्येकं कर्षनिष्कं स्यान्मृतशुल्बं द्विनिष्कम् ॥ शंखचूर्णं द्विनिष्कं स्यान्नवनिष्कं वराटिका । पूरयेत् पूर्ववच्चूर्णं पुटयेल्लोकनाथवत् ॥ ततश्चार्कदल-द्रावैर्मर्द्य रुध्वा पुटे पचेत् । आदाय चूर्णयेत् श्लक्ष्णं तुल्यांशैर्मरि-चैर्युतम् ॥ चूर्णाच्चतुर्गुणं गंधमेकीकृत्य विचूर्णयेत् । पंचमाष-घृतैर्लेह्यमसाध्यराजयक्ष्माजित् ॥ शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरं गुल्मं च नाशयेत् ॥

अर्थ–पारे की भस्म, शीशे की भस्म, गंधक, लीलाथोथा और सुहागा ये प्रत्येक डेढ २ तोले लेवे. तामे की भस्म और शंख की भस्म ये एक २ तोले ले पीली कौडि ४॥ तोले,

पारे आदि की भस्म को इन कौडियों में पूर्व प्रकार से भरे और लोकनाथ रस के समान पुट देवे. फिर आक के पत्तों के रस में खरल कर गजपुट में रखके फूक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल बराबर की मिरच मिलाय बारीक खरल करे फिर इस में चौगुनी गंधक मिलावे तो यह **नागेश्वर** रस तयार होवे इस को पांच मासे लेकर घी के साथ देवे तो असाध्य क्षयरोग, सूजन, उदर, बवासीर, संग्रहणी, ज्वर, और गोले का रोग इन को नाश करे ॥

कालांतकरस

कुर्याल्लोहमयीं मूषामुन्नतां द्वादशांगुलाम् । मर्दितं स्वर्णवाराहिग्रहकन्यारसै रसम् ॥ लशुनैर्यामामात्रं च पिंडीकृत्वा निवेशयेत् । कृत्वा पूर्वोक्तमूषायां सूतपादं च गंधकम् ॥ निर्गुंडीरससंपिष्टं तन्मूषायां विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्य लोहचक्रेण रुद्रयंत्रेण जारयेत् ॥ एवमष्टगुणे जीर्णे समुद्धृत्य विचूर्णयेत । पंचगुंजामितं खादेदनुपानं मृगांकवत् ॥ अयं कालांतको नाम रसोयं राजयक्ष्मजित् ॥

अर्थ–बारह अंगुली ऊंची लोहे की मूस बनावे उस में धतूरा, बाराहीकंद, घीगुवार और लहसन इन प्रत्येक में एक एक प्रहर घुटे हुए पारे का गोला करके उस पूर्वोक्त मूसा में चतुर्थांश गंधक निर्गुंडी के रस में खरल करके उस मूसा में डालके उस पर उस पारे को रखे. ऊपर से गंधक देकर लोहे के पत्र उस मूस के मुख पर देकर उस को रुद्रयंत्र में पचावे इस प्रकार अष्ट गुण गंधक जारन करे फिर रस को निकालके घोट डाले फिर इस को मृगांक के समान अनुपान के साथ पांच रत्ती देवे यह **कालांतकरस** क्षय का नाश करे है ॥

चंद्रायतनरस

शुद्धसूतसमं गंधं सूततुल्यं च सैंधवम् । शमीश्वेतदलाद्रावैर्मर्दितं गोलकीकृतम् ॥ नागवल्लीदलव्योषैः पाच्यं पाचनयंत्रके । दिनांते ऊर्ध्वलग्नं तु ग्राह्यं भक्ष्यं त्रिगुंजकम् ॥ पर्णखंडेन संयुक्तं माषैकं राजयक्ष्मजित् । रसश्चंद्रायतो नाम ह्यनुपानं मृगांकवत् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, और सेंधानिमक ये समान भाग लेवे. इन को सपेद शमीके पत्तों के रस में घोट गोला बनाय ले उस को सोंठ, मिरच, पीपल,

तथा नागरवेल पान इन के साथ डमरूयंत्र में भरके एक दिन चूल्हे पर रखके नीचे अग्नि देवे सांयकाल को उस डमरूयंत्र में से ऊपर लगे हुए पारे निकाल ले इस को तीन रत्ती पान में रख के १ महिनेतक खाने को देय इस रस का भी अनुपान और पथ्य मृगांक रस के समान है ॥

प्राणनाथरस

लोहभस्म पलैकं तु द्विपलं भृंगजद्रवैः । वराभार्गीभवं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ पलैकं त्रैफले क्वाथे सर्वं भर्ज्यं च खर्परे । लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदितैर्द्रवैः ॥ रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्य द्रवैर्मर्द्यं पुनः पुनः । मृतं सूतं मृतं वंगं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥ द्वौ निष्कौ शुद्धगंधस्य चतुर्निष्का वराटिका । एकीकृत्य पुटे पाच्यं पूर्वं लोहविमिश्रितम्॥पूर्वोक्तैस्तु द्रवैर्मर्द्यं पुटेनैकेन पाचयेत् । चूर्णयेन्मरिचं सप्त तूत्थटंकणयोर्दश॥ मेलयेच्च पृथङ् निष्कं प्राणनाथाह्वयो रसः । भक्षयेन्निष्कपादार्धमसाध्यराजयक्ष्मनुत् ॥ शोफोदरार्शोग्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥

अर्थ—लोहभस्म ४ तोले लेवें. उस को ८ भांगरे के रस में खरल करे. फिर गिलोय और भारंगी इन का काढा तथा त्रिफले का काढा ४–४ तोले ले सब को एकत्र कर अग्नि पर रख खिपडे में भून तथा जितना लोहा हो उतनी शुद्ध माक्षिक भस्म डाल पूर्वोक्त रसों से घुटावें और पुट देवें इस प्रकार तीन पुट देवें. फिर पारे की भस्म और तामे की भस्म प्रत्येक ६–६ मासे शुद्ध गंधक १ तोले, पीली कौडी ४ तोले उन को एकत्र कर उन को पुट देकर उन्हें उस लोह में मिलावें फिर पूर्वोक्त रसों की भावना देकर फिर १ पुट देवें पश्चात् निकालके इस में ३॥ तोले काली मिरच, लीलाथोथा और सुहागा ५–५ तोले लेकर मिलावें तो यह **प्राणनाथरस** तयार हो इस में से ६ रत्ती की मात्रा देवें तो असाध्य क्षय, सूजन, उदर, बवासीर संग्रहणी, ज्वर, और गोला इन को नाश करें ।

सुवर्णपर्पटीरस

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन पिंडितमयोवसुभागभाजम् । गंधे द्रुते दरदवन्हितुलोहपात्रे दत्त्वा विलोड्य लघुलो-

शलाकया तत् ॥ मंदं निरस्य सुरभीमलमंडलस्थं रंभादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् । रंभादलं लघु नियंम्य तदाददीत शीतं सुवर्णरसपर्पटिकाभिधानम् ॥ पित्तोल्बणे ससितया तुगयाथ वातश्लेष्मोल्बणे किल तुगामधुपिप्पलीभिः । क्षीणे विरेकिणिच शोषिणि मंदवह्नौ पांडौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्याम् ॥ वृद्धे शिशौ सुखिनि राज्ञि तदेवमार्यं भैषज्यमेतदुदितं हितमामयघ्नम् ॥

अर्थ–सोने के वर्क १ भाग, शुद्ध पारा ८ भाग, और लोहभस्म ८ भाग, इन सब को एकत्र खरल कर लोहे के पात्र में गंधक को ताय उस में हिंगुल १ और चित्रक १ भाग इन के साथ पूर्वोक्त औषधी मिलाय कच्ची की डांडी से १ मेल करे फिर पृथ्वी में गोबर का चौका दे उसे केले के पत्ते बिछाय उस पर उस कजली की चासनी को उलट देवे और तत्काल दूसरे केले के पत्ते से ढक गोबर से दाब देवें जब सीतल हो जावें तब निकास ले इस को सुवर्णपर्पटी कहत हैं यह पित्तादिक व्याधी पर वंशलोचन और मिश्री इन से तथा वात श्लेष्मादिक व्याधी पर बंशलोचन, सहत और पीपल इन से खाय और यह क्षीणत्व, दस्त होनेपर, क्षय पर, मंदाग्नि पाण्डुरोग, प्रमेह, संग्रहणी, वृद्ध, बालक, और राजा इन को देने योग्य यह संपूर्ण रोगोंका नाश करे है ॥

प्राणदापर्पटी

सूताभ्रायोहिवंगोषणविषमखिलांशेन गंधेन कृत्वा कोलाग्नौ विद्रुतेन क्षणममलमिदं ढालितं गोमयस्थे। रंभापत्रेमुनान्येनच दृढपिहितं प्राणदा पर्पटी स्यात्पांडौ रेके ग्रहण्यां ज्वररुजि कसने यक्ष्ममेहाग्निमांद्ये ॥ प्राणदा पर्पटी सैषा भाषिता शंभुना स्वयम् ॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥

अर्थ–पारा, अभ्रक, लोह, वंग, मिरच, और सिंगिया विष यह सम भाग तथा सब के बराबर गंधक लेकर लोहे के पात्र में वेर की अग्नि पर पतली करके उस में सब औषधी डालके गोबर के चौके में केले के पत्ते बिछाय देवें और उस पर उस कजली की चासनी को उडेल देवे और तत्काल दूसरे पत्ते से ढकके दाब देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल ले इस औषधी को प्राणदापर्पटी कहते हैं यह पां-

डुरोग, अतिसार, संग्रहणी, ज्वर, अरुचि, कास, क्षय, प्रमेह, तथा मंदाग्नि इन पर देवे यह प्राणदापर्पटी महादेवजी ने स्वयं अपने मुख से कही है यह योग्य अनुपान के साथ देने से संपूर्ण रोगों का नाश करे ॥

कुमुदेश्वररस

पारदं शोधितं गंधमभ्रकं च समं समम् । तदर्धं दरदं दद्यात्तदर्धं च मनःशिलाम् ॥ सर्वार्धं मृतलोहं च खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् । द्विः सप्त भावना देया शतावर्या रसेन च ॥ ततः सिद्धो भवत्येष कुमुदेश्वरसंज्ञकः । सितया मरिचेनाथ गुंजाद्वित्रिप्रमाणतः ॥ भक्षयेत्प्रातरुत्थाय पूजयित्वेष्टदेवताः । यक्ष्माणमुग्रं हंत्येव वातपित्तकफामयान् ॥ ज्वरादीनखिलान् रोगान् यथा दैत्यान् जनार्दनः । सतताभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनः ॥

अर्थ—शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, तथा अभ्रकभस्म, ये समान भाग इन से आधा हिंगुल तथा इस से आधी मनशील तथा सब औषधों से आधा मृत लोह इन सब को खरल में डालके सतावरी के रस की १४ भावना देवे तो यह कुमुदेश्वररस सिद्ध होय इस को मिश्री और काली मिरच इन के साथ दो अथवा तीन रत्ती प्रातः काल इष्टदेव का पूजन करके सेवन करे तो उग्रक्षय, वातपित्तरोग और ज्वरादि सब रोगों का नाश करे जैसे विष्णु दैत्यों को नष्ट करे है उसी प्रकार यह सब रोगों को नष्ट करे इस रस को निरंतर सेवन करने से वली (गुजलट) और पलित (सपेद-बाल) इन को नष्ट करे ॥

पंचामृताख्यरस

भस्मीभूतसुवर्णतारदिनकृत्सूताभ्रसत्त्वैः क्रमात्संवृद्धैस्त्रितयं त्रयः कृमिहरांभोदैर्युतः कट्फलैः । निर्गुंडीदशमूलवन्हिरजनी-व्योषार्द्रकैर्भावितो गोलं कृत्य विशेषतो निगदितः पंचामृताख्यो रसः ॥नानेन सदृशः कोपि रसोस्ति भुवनत्रये । निहंति सकलान् रोगान् भवरोगमिवाच्युतः ॥ सर्वरोगहरः सूतस्तत्तद्रोगानुपानतः । अयं पंचामृतो नृणां त्रिदशानामिवामृतम् ॥

अर्थ—सुवर्ण भस्म, रौप्य भस्म, तामे की भस्म, पारे की भस्म, अभ्रक सत्त्व ये प्रत्येक वृद्धि के क्रम से लेवे. तथा वायविडंग, नागरमोथा, कायफल, ये तीन २

भाग लेवे सब को एकत्र कर निर्गुंडी, दशमूल, चित्रक, हलदी, त्रिकुटा और अदरख इन के रस की भावना देकर गोली बांध लेवे तो यह पंचामृताख्यरस होवे. इस रस के समान त्रिलोकी में दूसरा रस नहीं है यह संपूर्ण रोगों को नाश करे जैसे विष्णु जन्म मरण का नाश करे हैं उसी प्रकार यह संपूर्ण रोगों को योग्य अनुपान करके नाश करे है. यह पंचामृत रस मनुष्य को अमृत के प्रमाण है ॥

स्वयमग्निरस

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्यात् खल्वेन कज्जली । तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिःक्षिपेत् । आच्छाद्यैरंडपत्रेण यामार्धेत्युष्णतां भवेत्॥ धान्यराशौ न्यसेत्पश्चादहोरात्रात्समुद्धरेत् । संचूर्ण्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत्॥भावयेत्कन्यकाद्रावैः सप्तधा भृंगजैस्तथा । काकमाचीकुरंटोत्थद्रवैर्मुंड्या पुनर्नवैः॥सहदेव्यमृतानील्या निर्गुंड्याश्चित्रजैस्तथा॥ सप्तधा तु पृथक्द्रावैर्भाव्यं शोष्यं तथातपे ॥ सिद्धयोगो ह्ययं ख्यातः सिद्धानां च मुखागतः । अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः ॥ स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णीकृत्य तु लोहवत् । त्रिफलामधुसंयुक्तः सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ त्रिकटुत्रिफलैलाभिर्जातीफललवंगकैः । नवभागोन्मितैरेतैः समः पूर्वरसो भवेत् ॥ संचूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वये । स्वयमग्निरसो नाम्ना क्षयकासनिकृंतनः ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनों को एकत्र खरलकर कजली करें इस में समान भाग खेरी लोह की भस्म डाले फिर घीगुवार के रस से २ प्रहर खरल कर गोला बनावे. इस को तामे के पात्र में रखकर चारों तरफ अंडीके पत्ते ढककर चार घडी पर्यंत धूप में रहने दे तो ये गोला अत्यंत उष्ण हो जावेगा इसको धान की रास में गाढ देवे १ दिन रात के उपरान्त निकाल ले तो इस की भस्म होय उसको खरल कर कपडेमें छान ले. इस को पानी में डालने से निश्चय करके तरने लगे इस में संदेह नहीं फिर इस भस्म को खरलमें डालके जिन २ वनस्पतियों की पुट देना चाहिये वो इस प्रकार जाननी घीगुवार के रस में खरल कर धूप में सुखाय ले सूखने पर फिर उसी के रस में खरल कर धूप में सुखावे इस प्रकार सात पुट घीगुवार के देवे फिर उसी प्रकार भांगरे के रस की, मकोय के रस की,

पीयावांसे के रस की, और मुंडी के रस की और पुनर्नवा के रस की तथा सहदेई, गिलोय, मील, निर्गुंडी और चित्रक इन के रस की पृथक् २ सात २ पुट देवे तो ये रसायन सिद्ध हो इसे **स्वयमग्निरस** कहते हैं. यह रस विख्यात है ये बडे २ सिद्ध पुरुषों ने कहा है इसी वास्ते मैंने अनुभव करके कहा है यह स्वयमग्निरस संपूर्ण रोग दूर करने के वास्ते त्रिफले के चूर्ण और सहत इस अनुपान से दो निष्क प्रमाण खाय तो संपूर्ण रोग दूर होय. सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्ड, बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल, लौंग ये नउ औषध समान भाग ले चूर्ण करे इस चूर्ण के बराबर यह स्वयमग्निरस ले दोनों को एकत्र कर २ निष्क प्रमाण खाने को दे तो क्षय रोग और खांसी का रोग ये दूर होंय तथा रसायन की रीत से सुवर्णादिक धातुओं का चूर्ण कर के भस्म करे तो होय ॥

राजमृगांक

रसभस्म त्रिभागं स्याद्भागैकं हेमभस्मकम् । मृतताम्रस्य भागैकं शिलागंधकतालकम् ॥ प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्वावचूर्णयेत् । वराटान्पूरयेत्तेन चाजाक्षीरेण टंकणम् ॥ पिष्ट्वा तेन मुखं रुध्वा मृद्भांडे सन्निधापयेत् । शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ रसो राजमृगांकोयं चतुर्गुंजः क्षयापहः । एकोनत्रिंशन्मरिचैर्घृतेन सह भक्षयेत् ॥ दशानां पिप्पलीनां च चूर्णं दत्त्वा प्रदापयेत् । क्षये कासे ज्वरे पांडौ ग्रहण्यां चातिसारके ॥

अर्थ–पारद भस्म ३ भाग, सुवर्ण भस्म १, ताम्र भस्म १ भाग, और मनसिल, गंधक, हरताल ये प्रत्येक दो दो भाग लेवे सब को एकत्र खरल कर कौडियों में भरके बकरी के दूध में सुहागा पीस उन कौडियों को मुख को मूंद देवे फिर धूप में सुखाय संपुट में भरके उस का मुख बंद कर देवे फिर उस को गजपुट में धरके फूक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब इस को खरल करके धर रखे इसे राजमृगांक कहते हैं. २९ मिरचों का चूर्ण कर अथवा १० पीपल का चूर्ण और घी इन में मिलायके चार रत्ती के प्रमाण देवे तो क्षय, खांसी, ज्वर, पांडु, संग्रहणी, और अतिसार इन को नाश करे ॥

दूसराप्रकार

रसेन तुल्यं कनकं तयोस्तु साम्येन युज्यान्नवमौक्तिकानि । रसप्रमाणो बलिरग्निभागः क्षारश्च सर्वं तुषवारिणा तु ॥ संमर्द्य

वस्त्रे तु विधाय गोलं दिनं पचेत्तं लवणेन पूर्णे । भांडे मृगांकोयमतिप्रगल्भः क्षयाग्निमांद्यग्रहणीगदेषु ॥ साज्योषणाभिर्मधुपिप्पलीभिर्वल्लोस्य देयो न ततोधिकस्तु । पथ्यं हितं शीतलमेव योज्यं त्याज्यं सदा पित्तकरं विदाहि ॥

अर्थ–पारा, सुवर्ण इन दोनों की बराबर मोती और पारे के समान गंधक खपरिया २ भाग ले इस प्रकार सब को लेकर धान के तुषाम्ल के काढे से खरल करे वस्त्र में उस गोले को बांधके एक सराव लेवे प्रथम आधा निमकसे भर बीच में इस को धरके ऊपर से फिर इस को निमक से भर देवे और उस का मुख बंद कर गजपुट धरके फूक देवे तो यह मृगांक अत्यन्त उत्कृष्ट बने यह क्षय, मंदाग्नि,संग्रहणी इन पर घी और मिरच का चूर्ण अथवा सहत और पीपल इन के साथ ३ रत्ती देवे अधिक न देवे इस पर शीतल पथ्य में पदार्थ देवे पित्तकारक और गरम ऐसे पदार्थ न देवे तो क्षयादि सर्व रोगों को नाश करे ॥

लोकेश्वर

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगंधयोः । माषष्टंकणकस्यैको जंबीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ पुटेल्लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथोयमुत्तमः । ऋते कष्टं रक्तपित्तमन्यरोगान्क्षयं जयेत् ॥ पुष्टिवीर्यप्रसादौजःकांतिलावण्यदः परः । कोस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शंभुमुखोद्गतात् ॥

अर्थ–कौडी की भस्म, पारा और गंधक ये प्रत्येक चार २ तोले, सुहागा १ मासा इस क्रम से लेकर नीबू के रस से खरल करे फिर पुट देवे तो यह लोकेश्वर रस तयार हो इस को लोकनाथरसभी कहते हैं यह विना कष्ट के रक्तपित्त, क्षय इत्यादि रोग नाश करे और पुष्टि वीर्य की निर्दोषता करे· कांति, सुंदरता इन को करे यह लोकेश्वररस श्री शंभु के मुख से निकला इस से परे मनुष्य को सुख का देनेवाला कौन है ॥

नवरत्नराजमृगांक

सूतं गंधकहेमताररसकं वैक्रांतकांतायसं वंगं नागपविप्रवालविमलामाणिक्यगारुत्मतम् । ताप्यं मौक्तिकपुष्परागजलजं वैडूर्यकं शुल्बकं शुक्तिस्तालकमभ्रहिंगुलसिलागोमेदनीलं समम् ॥ गोक्षूरैः फणिवाल्लिसिंहवदनामुंडीकण।।चित्रकैरिक्षुच्छिन्नरुहाहर-

प्रियजयाद्राक्षावराजिद्रवैः । कंकोलैर्मदनागकेसरजलैर्भाव्यं पृथक् सप्तधा भांडे सिंधुभृते मृगांकवदयं पाच्यः क्रमाग्नौ दिनम् ॥ भूयः प्राक् समुदाहृतैर्द्रववयैस्तं भावयेत्पूर्ववत्पश्चात्तुल्यविभागशीतलरजःकस्तूरिकाभावना ॥ गोप्याद्गोप्यतरं रसायनमिदं श्रीशंकरेणोदितं गुंजासिंधुयुतः कणामधुयुतः शोफे सपांड्वामये ॥ वातव्याधिमुपद्रवैश्च सहितं मेहांस्तथा विंशतिं संयोज्यस्तु हरीतकीगुडयुतो वातास्रके दुर्जये । गंभीरे च गुडूचिसत्वचपलाक्षौद्रैस्तु संयोजितश्चाध्मानारुचिशूलमांद्यकसनापस्मारवातोदरान् ॥ श्वासान्संग्रहणीं हलीमकमथो सर्वज्वरान्नाशयेद्धातून्पुष्टयति क्षयं क्षपयति श्यामाशतं यौवनम् । प्रौढाटोपयुतं करोति सहसा तारुण्यगर्वोज्झितं सिद्धो राजमृगांक एव जयति स्वस्यानुपानैर्गदान् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, सुवर्ण भस्म, रूप्यभस्म, खपरिया, वैक्रांत (कांसुले) की भस्म, कांतलोह की भस्म, वंगभस्म, नागभस्म, हीरेकी भस्म, मूंगाकी भस्म, विमलामणि की भस्म, मालिक की भस्म, पन्ने की भस्म, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, मोती की भस्म, पुखराज की भस्म, शंखभस्म, वैदूर्यमणि की भस्म, ताम्रभस्म, शीपी की भस्म, हरतालभस्म, अभ्रकभस्म, हिंगुल, मनसिल, गोमेदमणि की भस्म, और नीलमणि की भस्म इन सब भस्मों को एकत्र कर गोखरू, नागरवेल के पान, अडुसा, गोरखमुंडी, पीपल, चीते की छाल, ईख, गिलोय, धतूरा, भांग, दाख, शतावर, कंकोल, कस्तूरी, नागकेसर इन के रस की अथवा जिस का रस न निकले उस के काढे की पृथक् २ सात सात भावना देवे सब मिलायके१०५भावना हुई फिर इस का गोला बनायके एक हांडी लेवे उस में सैंधा निमक भर बीच में गोला रखके उपर से नोन को फिर भर देवे और आग्निपर रखके क्रमसे मंद, मध्य और तेज अग्नि देकर मृगांक के समान पचावे फिर पूर्वोक्त रीति से भावना देवे फिर कपूर और कस्तूरी समान भाग ले इन की भावना देवे तो यह रस सिद्ध होवे यह छिपाने लायकों में भी अतिगोपनीय है यह रस श्रीशंकर ने कहा है इसे १ रत्ती सेंधेनिमक के साथ सेवन करे तो सूजन को नाश करे और सहत तथा पीपल इन के साथ पांडुरोग और उपद्रव सहित वादी के रोग, वीस प्रकारके प्रमेह इन का नाश करे तथा हरड और गुड इन के साथ बातरक्त को नाश करे तथा अफरा, अरुचि, शूल, मंदाग्नि,

खांसी, अपस्मार (मृगी) , वातोदर, श्वास, संग्रहणी, हलीमक, ज्वर, क्षय इन पर अनुपान के साथ सेवन करने से इन का नाश करे और धातु को पुष्ट करनेवाला सौ तरुणी स्त्रियों के गर्व दूर करने की शक्ति देनेवाला है इस को राजमृगांकरस कहते हैं यह योग्य अनुपान के साथ देने से सर्व रोगों को नाश करे है ॥

मृगांकरस

रसबलितपनीयं योजयेत्तुल्यभागं तदनु युगुलभागं मौक्तिकानां शुभानाम् । यवजचरणभागं मर्दयेत्सर्वमेतद्दिनमपि तुषवारा गोलकं लब्धमात्रे ॥ विधाय मुद्रां विदधीच्च भांडे चुल्यां समुद्रे लवणेन पूर्णे । दिनं पचेच्चानुमृगांकनामा क्षयाग्निमांद्यग्रहणीविकारे ॥ योज्यः सदा वह्निजसर्पिषा वा कृष्णामधुभ्यां सततं त्रिगुंजः ॥ वर्ज्यं सदा पित्तकरं हि वस्तु लोकेशवत्पथ्यविधिर्निरुक्तः ॥

अर्थ—पारा, गंधक और सोना ये समान भाग ले मोती २ भाग, जवाखार १भाग इन सब को एकत्र करके फिर तुषों की कांजी में १ दिन खरल करके गोला बनाय ले फिर इस पर कपड मिट्टी करके निमक भरे पात्र के बीच में इस को धर के उस पात्र का मुख बंद कर एक दिन चूल्हे पर रखके अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब उस में से इस रस को निकाल ले यह मृगांकरस क्षय, मंदाग्नि, संग्रहणी इन पर सहत और पीपल इन से तीन रत्ती के अनुमान देवे और पित्तकर्त्ता वस्तुओंसे परहेज करे तथा लोकनाथ रस के समान पथ्य करे ॥

कनकसिंदूर

रसः कनकभार्ङ्गिकः कनकमाक्षिकस्तालकः शिलारसकगंधकारससमाः सतुत्था इमे । विमर्द्य पयसा रवेः सकलमेतदस्योपरि द्रवैः प्रतिदिनं पृथक् तदिति भावयेद् बुद्धिमान्॥जयामुनिकलिप्रियादहनभृंगवासोद्रवैर्विभाव्य च रसस्ततः सुदृढगोलकं स्वेदयेत् । मृगांकवदथार्द्रकद्रवभरेण तं सप्तधा विमर्द्य च कटुत्रयांबुभिरयं क्षयस्यांतकृत् ॥ रसः कनकसिंदुरो भवति सन्निपातेप्ययं सदार्द्रकरसैस्तथा पवनगुल्मशूलादिहृत् । सवि-

श्वघृतयोजितः सकलमत्र पथ्यं हितं मृगांकवदथापरं किमपि नैव योज्यं क्वचित् ॥

अर्थ–पारद, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, मनसिल, खपरिया, गंधक और लीलाथोथा ये समान भाग लेवे पारा और गंधक की कजली करे इस कजली में सब औषध मिलाय आक के दूध में खरल करे फिर अरनी, अगस्तिया, बहेडा, चित्रक, भांगरा और अडूसा इन प्रत्येक के रस में एक एक दिन खरल करे फिर गोला बनाय भूधर यंत्र में मृगांक के समान पुट देवे फिर निकाल के अदरख के रस की सात भावना देवे पश्चात् सोंठ, मिरच, पीपल इन के काढे की सात २ भावना देवे यह कनकसुंदररस क्षयरोग का नाश करे यह अदरख के रस से सन्निपात पर देवे और सोंठ, तथा घी इन से वातव्याधि पर देवे इस पर भी राजमृगांक के समान पथ्य करे इस से सिवाय और कुछ न खाय ॥

हेमाभ्रकरससिंदूर

अभ्रकं रससिंदूरं मिश्रितं हेमभस्मना। समभागं प्रकुर्वीत रसेनार्द्रकयोजितम् ॥ क्षयं च क्षयपांडुं च क्षयकासं च कुंभकम्। जयेन्मडलपर्यंतं पूर्वकर्मविपाकवित् ॥

अर्थ–अभ्रक भस्म, रससिंदूर और सुवर्ण भस्म ये समान भाग लेवे सब को अदरख के रस में खरल कर दो रत्ती की मात्रा सेवन करे तो क्षय, क्षयपांडुरोग, खांसी, कुंभकामला इन को दूर करे कर्मविपाक का जाननेवाला उस को एक मंडल पर्यंत सेवन करना चाहिये ॥

सुवर्णभूपति

शुद्धं सूतं समं गंधं मृतशुल्बं तयोः समम्। अभ्रलोहकयोर्भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥ रजतं च विषं सम्यक्पृथक् सूतसमं भवेत्। हंसपादीरसैर्मर्द्यं दिनमेकं वटीकृतम्॥काचकुप्यां विनिःक्षिप्य मृदा संलेपयेद्बहिः। शुष्का सा वालुकायंत्रे शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥ चतुर्गुंजमितं देयं पिप्पल्यादिद्रवेण तु। क्षयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ आमवातं धनुर्वातं शृंखलावातमेव च। आढ्यवातं पंगुवातं कफवाताग्निमांद्यनुत्॥कटीवातं सर्वशूलं नाशयेन्नात्र संशयः। गुल्मशूलमुदावर्तं ग्रहणीमतिदुस्तराम्॥

प्रमेहमुदरं सर्वामश्मरीं मूत्रविट्ग्रहम् । भगंदरं सर्वकुष्ठं विद्रधिं महतीं तथा ॥ श्वासं कासमजीर्णं च ज्वरमष्टविधं तथा । कामलां पांडुरोगं च शिरोरोगं च नाशयेत् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगान्विनाशयेत् । यथा सूर्योदये नश्येत्तमः सर्वगतं तथा ॥ सर्वरोगविनाशाय सर्वेषां स्वर्णभूपतिः ॥

अर्थ–पारा १, गंधक १, ताम्रभस्म २ और अभ्रक, लोह, कांति, सुवर्ण और चांदी इन प्रत्येक की भस्म एक एक भाग और सिंगियाविष १ भाग, इस प्रकार सब औषध लेकर हंसपदी (लाल लालू) के रस में १ दिन खरल कर गोली बनावे इन को कांच की आतसी शीशी में भर मुख बंद करे और उस के ऊपर कपडमिट्टी करके सुखाय लेवे इस को वालुकायंत्र में मंद मंद अग्नि से धीरे पचावे तो रस सिद्ध होवे. इस को पीपल और अदरख के रस के साथ ४ रत्ती देवे तो त्रिदोष, क्षय, तेरह प्रकार के संनिपात, आमवात, धनुर्वात, शृंखलावात, आढ्यवात, पंगुवात, कफवात, मंदाग्नि, कटिवात, सर्व प्रकार के शूल, गुल्मशूल उदावर्त्त, संग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सर्व प्रकार की पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विड्ग्रह, भगंदर, सर्व प्रकार के कुष्ठरोग, घोर विद्रधि का रोग, श्वास, खांसी, अजीर्ण, आठ प्रकार के ज्वर, कामला, पांडुरोग और मस्तकरोग इत्यादि सब रोगों को अनुपान विशेष करके नाश करे है. जैसे सूर्योदय होनेसे अंधकार सर्वत्र का नष्ट होता है इसी प्रकार यह सुवर्णभूपति रस सर्व रोग नाश करके प्रगट हुआ है ॥

लक्ष्मीविलासरस

सुवर्णताराभ्रकताम्रवंगं त्रिलोहनागामृतमौक्तिकं च । एतत्समं योज्य रसस्य भस्म खल्वे कृतं स्यात्कृतकज्जलीकम् ॥ संमर्द्दयेन्माक्षिकसंप्रयुक्तं तच्छोषयेत् द्वित्रिदिनं च घर्मे । तत्कल्कमूषोदरमध्यगामी यत्नात्कृतं तार्क्ष्यपुटेन पक्कम् ॥ यामाष्टकं पावकमर्दितं च लक्ष्मीविलासो रसराज एषः । क्षये त्रिदोषप्रभवे च पांडौ सकामलासर्वसमीरणेषु ॥ शोकप्रतिश्यायविनष्टवीर्ये मूलामयं सर्वसशूलकुष्ठम् । हत्वाग्निमांद्यं क्षयसन्निपातं श्वासं च कासं च हरेत्प्रयुक्तम् ॥ तारुण्यलक्ष्मीप्रतिबोधनाय श्रीमद्विलासो रसराज एषः ॥

अर्थ-सुवर्ण, रूपा, अभ्रक, ताम्र, रांगा, वट्टलोह, शीसा, सिंगियाविष और मोती इन प्रत्येक की भस्म समान भाग ले. तथा सब की बराबर पारे की भस्म लेवे सब को एकत्र कर सहत डालके खरल करे और सुखावे फिर मूस में भरके गरुड-पुट में फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चीते के काढे में आठ प्रहर खरल करे. तो यह लक्ष्मीविलासरस बने यह संपूर्ण रसोंका राजा है यह त्रिदोष से प्रगट क्षयरोग, पांडुरोग, कामला, सर्व प्रकार के बादी के रोग, सूजन, प्रतिश्याय, विनष्टवीर्य, बवासीर, सर्व प्रकार के शूल कोढ, मंदाग्नि, सन्निपात, श्वास और खांसी इन को नष्ट करे तथा तारुण्यलक्ष्मी को बढावे, धनवान् (सेठ, साहुकार, राजा, महाराजाओं) को यह विलास के अर्थ है ॥

शिलाजत्वादिलोह

शिलाजतुयुतं लोहं वल्लं तु विधिमारितम् ।
पथ्याशी सेवते यस्तु स यक्ष्माणं व्यपोहति ॥

अर्थ-लोह भस्म २ रत्ती शिलाजित के साथ सेवन करे और पथ्य से रहे तो राजयक्ष्मा (खई का) रोग नाश होवे ॥

पंचामृतरस

भस्मसूताभ्रलोहानां शिलाजतुविषं समम् । गुडूचीत्रिफलाक्वाथसंकृतं गुग्गुलं तथा ॥ मृतनैपालताम्रं वा सूततुल्यं नियोजयेत् । एकीकृत्य द्विगुंजं तु भक्षयेद्राजयक्ष्मनुत् ॥ पंचामृतो रसो नाम ह्यनुपानं च पूर्ववत् ॥

अर्थ-पारा, अभ्रक, लोह इन की भस्म, शिलाजीत और सिंगियाविष ये समान भाग लेवे इन को गिलोय, हरड, बहेडा, आवला इन के रस में खरल कर गूगल और नेपाली तामे की भस्म ये पारे के समान मिलायके घोटे फिर दो रत्ती इस में से अनुपान के संग देय तो यह पंचामृतरस राजयक्ष्मा को नाश करे ॥

अमृतेश्वररस

रसभस्मामृतासत्वं लोहं मधुघृतान्वितम् ।
अमृतेश्वरनामायं षड्‌ गुंजा राजयक्ष्माजित् ॥

अर्थ-पारे की भस्म, गिलोय का सत्व और लोह इन को एकत्र कर सहत और घी के साथ १ रत्ती के प्रमाण देवे. इस को अमृतेश्वररस कहते हैं यह क्षयनाशक है ॥

चिंतामणिरस

रसेंद्रवैक्रांतकरौप्यताम्रसलोहमुक्ताफलगंधहेम्नाम् । त्रिभावितं चार्द्रकमार्कवन्हिरसैरजा गोपयसा तथैव ॥ अर्शं क्षयं कासमरोचकं च जीर्णज्वरं पांडुमपि प्रमेहान् । गुंजाप्रमाणं मधुमागधीभ्यां लीढं निहन्याद्विषमं च वातम्॥चिंतामणिरिति ख्यातः पार्वत्या निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ-पारा, वैक्रांत, रूपा, तांबा, लोहा, मोती और सुवर्ण इन की भस्म तथा गंधक ये समान भाग लेवे सब को खरल में डालके अदरख, भांगरा और चित्रक इन के रस की तीन २ भावना देवे और बकरी, गौ इन के दूध की तीन २ भावना देवे तो यह चिंतामणि रस सिद्ध होवे यह १ रत्ती सहत और पीपल के साथ खाय तो बवासीर, क्षय, खांसी, अरुचि, अजीर्ण, ज्वर, पांडुरोग, और प्रमेह इन को नाश करे यह पहले पार्वती ने स्वयं निर्माण करा है ॥

दुसरा त्रैलोक्यचिंतामणि

सूताभ्रस्वर्णतारारुणभिदुरशिलाताप्यगंधप्रवालायोमुक्ताशंखतालं वरमिदमनलक्वाथतः सप्तभाव्यम् । निर्गुंडीसूरणांभःपविरविपयसा त्रिःपृथग्भावयित्वा चापूर्यैतैर्वराटानथ मिहिरपयष्टंकणालिप्तवक्रान् ॥ कृत्वा भांडे च रुद्ध्वा गजपुटजठरे युक्तितस्तत्तु पक्त्वोद्धृत्यैतन्मर्दयित्वा तदखिलतुलितं सूतभस्म प्रदद्यात् । वैक्रांतं सूर्यतुर्यांशकमथ मिलितं सप्तशः शिग्रुमूलं त्वग्बाणस्तेन तुल्यं विषमनलवरं टंकणं चोषणं च ॥ पथ्या जातीफलं चामरकुसुमकणानागरं वत्सनाभं तुर्यांशं मेलयित्वा पृथगथ दिवसं मर्दयेल्लुंगतोयैः । एष त्रैलोक्यचिंतामणिरखिलगदध्वांतविध्वंसहंसस्तत्तद्रोगानुपानादुषसि कवलितः सार्धवल्लप्रमाणः ॥ वातव्याध्यामवातज्वरजठरकृमिश्वासशूलास्रवातासृक्पित्तक्षैण्यकासक्षयकफजगदोरःक्षताजीर्णमेहे । कुष्ठातीसारपांडुग्रहणिषु तमकेषु व्रणार्शःप्रकृष्टे खांजे खंजाढ्यवाते श्रुतिभगजगदे सर्वथैष प्रशस्तः ॥

अर्थ–पारा, अभ्रक, सुवर्ण, चांदी, माणिक, हीरा, मनशिल, सुवर्णमाक्षिक, गंधक, मूंगा, लोह, मोती, शंख और हरताल इन की भस्म, पारा और गंधक इन की कजली इन सब को एकत्र करके चित्रक के काढे की सात भावना देवे फिर निर्गुंडी, सूरण (जमीकंद) इनके रस, थूहर और आक इन का दूध इन प्रत्येक की तीन तीन भावना देवे फिर इन को कौडियोंमें भर आक के दूध में सुहागा पीसके उन कौडियों के मुख को बंद कर देवे फिर इन को एक सराव में बंद कर संपुट में धरके गजपुट में फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके घोट डाले फिर सब चूर्णके समान पारे की भस्म और वैक्रांत की भस्म पारे की भस्म से चतुर्थांश ले सब को एकत्र कर सब से सातगुना सहजने के जड का चूर्ण डाले. दालचीनी पांच भाग तथा लाल बोल, चित्रक, सुहागा, काली मिरच ये सब पाव २ भाग लेवे जंगी हरड, जायफल लौंग, पीपल, सोंठ और सिंगिया विष ये प्रत्येक चतुर्थांश मिलावे फिर इस को बिजोरे के रस में १ दिन खरल करे यह **त्रैलोक्यचिंतामणिरस** संपूर्ण रोगरूप अंधकार नाश करने में सूर्य के समान है यह रोगोक्त अनुपान से तीन रत्ती सेवन करने से संपूर्ण रोगों का नाश करे यह वातव्याधि, आमवात, ज्वर, उदर, कृमि, श्वास, शूल, रक्तवात, रक्तपित्त, क्षीणता, खांसी, क्षय, कफरोग, उरःक्षत, अजीर्ण, प्रमेह, कोढ, अतिसार, पांडु, संग्रहणी, तमकश्वास, व्रण, बवासीर, पंगुवात, आढ्यवात, कर्णरोग और योनिरोग इन पर उत्तम है ॥

वसंतकुसुमाकर

प्रवालरसमौक्तिकाभ्रकमिदं चतुर्भागभाक् पृथक्पृथगथ स्मृते रजतहेमनी द्व्यंशके । अयोभुजगरंगकं त्रिलवकं विमर्द्याखिलं शुभेहनि विभावयेद्भिषगियं धिया सप्तशः॥द्रवैर्वृषनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजै रसैः कदलिकंदजैर्मलयचंदनादुद्भवैः । वसंतकुसुमाकरो रसपतिर्द्विवल्लोशितः समस्तगदहृद्भवेत्किलनिजानुपानैरयम् ॥ क्षिपेच्च समधूषणैः क्षयगदेषु सर्वेष्वपि प्रमेहरुजि रात्रिभिः समधुशर्कराभिः सह । सितामलयजद्रवैर्महति रक्तपित्तेथ वा सितामधुसमन्वितैर्वृषभपल्लवानां द्रवैः ॥ त्रिजातगुरुचंदनैरपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो मनोभवकरः परो वमिषु शंखपुष्पीरसैः । अभीरुरसशर्करामधुभिरम्लपित्तामये परेषु च यथोचितं ननु गदेषु संसेवयेत् ॥

अर्थ–मूंगा, पारा, मोती और अभ्रक ये चार२तोले, रौप्यभस्म और सुवर्णभस्म, ये दो दो तोले, लोहेकी भस्म शीशे की तथा रांग इन की भस्म तीन२तोले लेवे सब को एकत्र खरल कर अडूसेका रस, हलदी का काढा ईखका रस,कमल और मालती इनके फूलों का रस, केले के कंद का रस, काली अगर और चंदन उन का काढा इन प्रत्येक की सात २ भावना देवे तो यह बसंतकुसुमाकररस बनकर तयार होवे. इस में से ४ या ६ रत्ती रोगोक्त अनुपान के साथ सेवन करे तो संपूर्ण व्याधि का नाश करे. सहत और काली मिरच इन के साथ क्षय पर देवे. प्रमेह पर हलदी के चूर्ण तथा सहत और मिश्री इन से चंदन का काढा और मिश्री इन के सात रक्तपित्ति पर दे. अथवा मिश्री, सहत, अडूसेके रस के साथ देवे तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची इन के चूर्ण से देवे तो तुष्टि तथा पुष्टि देकर कामोद्दीपन करे तथा शंखाहूली के रस से वांति पर, शतावर का रस, मिश्री और सहत इन से अम्लपित्त पर तथा सर्वरोगों पर योग्य अनुपानों के साथ सेवन करे ॥

लोकेश्वरपोटली

रसस्य भस्म वा हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् । द्विगुणं गंधकं दत्त्वा मर्द्दयेच्चित्रकांबुना ॥ वराटकांश्च संपूर्य टंकणेन निरुध्य च । भांडे चूर्णप्रलिप्तेथ शीघ्रं रुन्ध्यात्तु मृन्मये ॥ शोषयित्वा पुटे गर्तेरात्रिमात्रेपराह्णिके । स्वांगशीतलमुद्धृत्य चूर्णयित्वाथ विन्यसेत् ॥ एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्धनः । गुंजाचतुष्टयं खादेत्पिप्पलीमधुसंयुतः ॥ भक्षयेत्परया भक्त्या लोकेशः सर्वदर्शनः । अंगकार्श्येऽग्निमांद्ये च कासे पित्ते रसः स्वयम् ॥ मरीचैर्घृतसंयुक्तैः प्रदातव्यो दिनत्रयम् । लवणं वर्जयेत्तत्र साज्यं दधि च योजयेत् ॥ एकविंशद्दिनं यावन्मरीचं सघृतं विवेत् । पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं शयीतोत्तानपादतः ॥ ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च ये कुष्ठिनो ये पांडुत्वहताः कुवैद्यविधिना ये शोषिणो दुर्भगाः । ये तप्ता विविधज्वरैर्भ्रममदोन्मादैः प्रमादं गतास्ते सर्वे विगता यया हि परया स्युः पोटलीसेवया ॥

अर्थ—पारदभस्म ४, सुवर्णभस्म १ और गंधक ८ इस प्रकार भाग लेकर चित्रक के काढे से खरल करे फिर कौडियों में भरे और उन के मुख को आक के दूध में सुहागे को पीस उस सुहागे से बंद करे फिर १ हांडी लेय उसको आधी चूने से भरे फिर इन कौंडियों को भरे और ऊपर से चूना फिर भर दे फिर उस का मुख बंद कर फिर १ हाथ का गढ्ढा खोद उस में उस पात्र को रख आरने ऊपरों से भर देवे ३ पहर के अनंतर पुट देकर भस्म करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल खरल कर धर रक्खे इसे लोकेश्वर रस कहते हैं यह पीपर और सहत इन के साथ ४–४ रत्ती सेवन करे तो तथा भक्तिपूर्वक सेवन करने से सर्व सुख का दिखानेवाला है देह की कृशता, मंदाग्नि, खांसी, पित्त इन पर घी और मिर्च के चूर्ण के साथ ३ दिन देवे निमक खाना वर्जित है तथा इस के ऊपर घी और दही खाय और २१ दिनतक घी और मिर्चका चूरा मिलाकर पीया करे और मृगांक के समान पथ्य करे तथा पैरों को सीधे करके लेटे और जो कोई विषमाशन करके शुष्क, क्षय रोग करके व्याप्त, कोढी, पांडुरोगी, कुत्सित वैद्यों के उपचार करके शोषयुक्त, दुर्भग, अनेक प्रकार के ज्वरों करके तप्त, भ्रमरोगवाला, उन्मादरोगवाला और बावला ऐसे सर्व रोग इस लोकेश्वरपोटली के सेवन करने से निरोगी होय ॥

लोहरसायन क्षयादिकोंपर.

शुद्धं रसेंद्रं भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । क्षिपेत्कज्जलिकां कुर्यात्तत्र तीक्ष्णभवं रजः ॥ क्षिप्त्वा कज्जलिकातुल्यं प्रहरैकं विमर्द्दयेत् । ततः संजायते तस्य सोष्णो धूमोद्गमो महान्॥अत्यंतं पिंडितं कृत्वा ताम्रपात्रे निधायच । मध्ये धान्यकशूकस्य त्रिदिनं धारयेद्बुधः ॥ उद्धृत्य तस्मात्खल्वे च क्षिप्त्वा घर्मे निधाय च । रसैः कुठारच्छिन्नायास्त्रिवेलं परिभावयेत् ॥ संशोष्य घर्मक्काथैश्च भावयेत्रिकटोस्त्रिधा । लोहपात्रे ततः क्षिप्त्वा भावयेत्रिफलाजलैः ॥ निर्गुंडीदाडिमत्वग्भिर्बिसभृंगकुरंटकैः । पलाशकदलीद्रावैर्बीजकस्य शृतेन वा ॥ नीलीकालंबुषाद्रावैर्बूब्बूलफलिकारसैः । त्रित्रिवेलं यथालाभं भावयेदेभिरौषधैः ॥ ततः प्रातर्लिहेत्क्षौद्रघृताभ्यां कालमात्रकम् । पलमात्रं वरक्काथं पिबेदस्यानुमानकम् ॥ मासत्रयं शीलितं स्याद्वलीपलीत-

नाशनम्। मंदाग्निश्वासकासांश्च पांडुतां कफमारुतौ ॥ पिप्पलीमधुसंयुक्तं हन्यादेतन्न संशयः। वातास्रं मूत्रदोषांश्च ग्रहणीं तोयजां रुजम् ॥ अंडवृद्धिं जयेदेतच्छिन्नासत्त्वमधुप्लुतम्। बलवर्णकरं वृष्यमायुष्यं परमं स्मृतम् ॥ कूष्मांडं तिलतैलं च माषान्नं राजिका तथा। मद्यमम्लरसं चैव त्यजेल्लोहस्य सेवकः॥

अर्थ–शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगंधक २ भाग, दोनों को खरल में डाल खरल करे उस के समान भाग काली मिर्च का चूर्ण लेकर उस कजली में मिलाय १ प्रहर खरल करे फिर घीगुवार के रस में ३ दिन पर्यंत खरल करे ऐसा करने से इस औषधी में से गर्म २ घोर धूंआ निकलता है तब इसका प्रथम गोला करके तामे के पात्र में धरके धानी में गाढ देवे जब ३ दिन बीत जाय ४ दिन उस गोला को निकाल कर खरल कर धूप में रख वनतुलसी के रस की ३ पुट देवे फिर सोंठ, मिर्च, पीपर इन का काढा करके पृथक् २ तीन दिन पुट देवे फिर अडूसा, गिलोय और चित्रक इन तीनों का रस पृथक् २ निकाल क्रम से एक २ की पुट तीन २ देवे पश्चात् इस रसायन को लोहे की कढाई में डालके आगे लिखी औषधों की पुट देवे जैसे हरड, बहेडा, आवला, निर्गुंडी, अनार की छाल, कमलकंद, भांगरा, पीयावांसा, पलास, केला का कंद, विजेसार, नीलपुष्पी, मुंडी, बबूरके फली का रस. इन चौदह औषधों के न्यारे २ रस निकाल कर क्रम पूर्वक एक एक रस की तीन भावना देकर गोली छडिया बेर की बराबर बनावे १ गोली सहत और घी इन को एकत्र कर इस में मिलायके खाय और तत्काल इस के ऊपर त्रिफले का काढा एक पल के प्रमाण पीवे इस प्रकार तीन महिने पर्यंत इस रसायन को सेवन करे तो देह की गुजलट और छोटी उम्र (अवस्था) में बालों का सफेद होना ये दूर हों और देह हृष्ट पुष्ट हो तथा बाल काले हों तथा सहत और पीपल के साथ सेवन करे तो मंदाग्नि, श्वास, खांसी, पांडुरोग, कफवायु ये रोग दूर हों तथा गिलोय के सत्व के साथ मिलायकर खाय तो वातरक्त, मूत्रदोष दुष्ट पानी पीनेसे हुई जो संग्रहणी, तथा अंडवृद्धि ये रोग दूर हों. यह रसायन है. बल, कांति, तथा स्त्रीगमन में इच्छा देनेवाला तथा आयुष्य की वृद्धि करनेवाला है. तथा पेठा, तिलों का तैल, उडद, राई, मद्य (दारू) और खट्टे पदार्थ ये सब इस रस के सेवन करनेवाले को खाना वर्जित अर्थात् अपथ्य हैं ॥

रत्नगर्भपोटली

रसं वज्रं हेम तारं नागं लोहं तथाभ्रकम्। तुल्यांशं मारितं यो-

ज्यं मुक्तामाक्षिकविद्रुमम् ॥ राजावर्तं च वैक्रांतं गोमेदं पुष्पराजकम् । शंखं च तुल्यतुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ॥ मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेनापूर्य वराटकान् । टंकणं रविदुग्धेन पिष्ट्वा तन्मुखमालिपेत्॥मृद्भांडे तान्सुसंयन्त्र्य सम्यग्गजपुटे पचेत्।आदाय चूर्णयेत्सम्यङ्‌ निर्गुंड्याः सप्तभावनाः ॥ आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः । द्रवैर्भाव्यं ततः शुष्कं देयं गुंजाचतुष्टयम् ॥ क्षयरोगं निहंत्याशु सत्यं शिव इवांधकम् । योजयेत्पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैश्च वा ॥ पोटलीरत्नगर्भोयं सर्वरोगहरो मतः ॥

अर्थ–पारा, हीरा, सुवर्ण, चांदी, शीशी, लोह, अभ्रक, मोती, सुवर्णमाक्षिक, मूंगा, राजावर्त्त, वैक्रांत, गोमेद, पुखराज और शंख इन सब की भस्म समान भाग लेवे सात दिन पर्यंत चित्रक के काढे में खरल करे फिर इस चूर्ण को कौडियों में भरे उन का मुख आक के दूध में पिसे सुहागे से बंद करे. फिर उन कौडियों को मिट्टी के हांडिया में बंद कर उस के मुख को बंद कर देवे और इस हांडी को गजपुट में धरके फूंक देवे. शीतल होने पर निकालके चूर कर लेवे और निर्गुंडी के रस की सात भावना देकर सुखाय ले. इस में से ४ रत्ती रस ले सहत, पीपल अथवा घी और काली मिरचों की बुकनी इन के साथ देवे तो जैसे शिवने अंधक दैत्य का नाश करा उसी प्रकार यह रत्नगर्भपोटली रस क्षय रोग का नाश करे तथा सर्व रोगों का भी नाश करे ॥

हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकोंपर

सूतात्पादप्रमाणेन हेम्नः पिष्टं प्रकल्पयेत् । तयोः स्याद्द्विगुणो गधो मर्दयेत्कांचनारिणा ॥ कृत्वा गोलं क्षिपेन्मूषासंपुटे मुद्रयेत्ततः । पचेद्भूधरयंत्रेण वासरात्रितयं बुधः ॥ तत उद्धृत्य तत्सर्वं दद्याद्गंधं च तत्समम् । मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रकस्वरसेन च ॥ स्थूलपीतवराटांश्च पूरयेत्तेन युक्तितः । एतस्मादौषधात्कुर्यादष्टमांशेन टंकणम्॥टंकणार्धं विषं दत्त्वा पिष्ट्वा सेहुंडदुग्धकैः । मुद्रयेत्तेन कल्केन वराटानां मुखानि च ॥ भांडे चूर्णप्र-

लिप्तेथ धृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् । गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पुटे-द्गजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं रसं ज्ञात्वा प्रदद्याल्लोकनाथवत् । पथ्यं मृगांकवत् ज्ञेयं त्रिदिनं लवणं त्यजेत् ॥ यदा छर्दिर्भवे-त्तस्य दद्याच्छिन्नाशृतं तदा । मधुयुक्तं तथा श्लेष्मकोपे दद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ विरेके भर्जिता भंगा प्रदेया दधिसंयुता । जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमरुचिं तथा॥ अग्निं च कुरुते दीप्तं कफवातं नियच्छति । हेमगर्भः परो ज्ञेयो रसः पोटलिकाभिधः ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १ भाग तथा पारे का चतुर्थांश खरल करा हुआ सुवर्ण का वरक और दोनों से दुगुनी गंधक लेवे इन तीनों को कचनार के रस में खरल करे और इस का गोला बनाय लेवे इस गोले को मिट्टीके सराव संपुट में रख कपडमिट्टी करके उस को भूधर यंत्र में पचावे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल उस के समान गंधक ले दोनों को अदरख के रस में घोटे फिर चित्रक के रस में घोटे फिर इस को सुखायके बडी २ पीली कौडियों में युक्तिपूर्वक भर देवे. फिर सब औषधों का आठवां हिस्सा सुहागा ले और सुहागे से आधा सिंगियाविष लेवे दोनों को थूहर के दूध में खरल करके उन कौडियों के मुख पर मुद्रा देवे. फिर इन कौडियों को एक चूने भरे हुए पात्र के बीच में रख ऊपर से फिर दाबके चूने को भर देवे फिर इस पात्र के मुख पर दूसरा पात्र औंधा रखके उस की संधियों को कपडमिट्टी से लहसे देवे. फिर एक हाथ भर का गड्ढा खोद के आरने उपले भरे और बीच में इस पात्र को रखके ऊपर से फिर आरने उपले भर देवे और अग्नि लगाय देवे जब इस गजपुट की अग्नि स्वांगशीतल हो जावे तब बडी होसयारी से उन कौडियों को निकाल के खरल में डाल के पीस डाले. इस रस को **हेमगर्भपोटली** कहते हैं यह हेमगर्भपोटली लोकनाथ रस के समान सेवन करे और पथ्य मृगांक रसायन के समान सेवन करे. तथा इस से भी विशेषता यह है तीन दिन अधिक नोन न खावे पश्चात् इस औषध से उलटी आने लगती है तब गिलोय का काढा कर उस में सहत मि-लायके देवे तो उलटी दूर हो. तथा कफ का प्रकोप होने से गुड और अदरक का रस मिलायके देवे तो कफप्रकोप दूर होवे तथा दस्त होने लगे तो भांग को भून दधी में मिलायके देवे इस से दस्तों को होना बंद होवे, तथा इस हेमगर्भ पोटली से खांसी, क्षय, श्वास, संग्रहणी और अरुचि ये रोग सब दूर होवे तथा अग्नि प्रदीप्त होय तथा कफ और वायु का प्रकोप दूर होवे ।

दूसरा प्रकार

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावंतः कनकस्य च। तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्य्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश। चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥ एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिंबूकजै रसैः। कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासंपुटके न्यसेत् ॥ मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः। पुटेद्गजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाचतुर्मानं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम्। एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत्। लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात् शुचितमानसः ॥कासे श्वासे क्षये वाते कफग्रहणिकागदे। अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ—पारा ४ भाग, सुवर्णके वर्क ४ भाग, दोनों को एकत्र करके खरल करे जब उत्तम पिठ्ठी हो जावे तब पारे के बारह भाग शुद्ध गंधक लेवे इस को मिलायके फिर घोटकर कजली करे पश्चात् पारे के सोलह भाग मोती, चौवीस भाग शंख, एकभाग सुहागा ले पूर्वोक्त कजली में मिलाय पके हुए नींबूके रसमें मिलायके खरल करे गोला बनाय ले इस गोले को मिट्टीके सराव संपुट में रख कपडमिट्टी करके गौ के गोबरों के गजपुट में धरके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल उस में से युक्तिपूर्वक औषध को निकाल लेवे और इस को खरल में डालके पीस डाले. इस को भी हेमगर्भपोटली रस कहते हैं यह हेमगर्भ ४ रत्ती के अनुमान उनतीस मिरच की बुकनी के साथ चांदी के पात्र में अथवा मिट्टी के अथवा शीशे के प्याले में गौ का घी डालके सब मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरण को स्वस्थ कर लोकनाथ रस के समान पथ्य करे तो श्वास, क्षयरोग, वात के विकार, कफ और संग्रहणी, तथा अतिसार ये रोग दूर होवें।

लोकनाथरस

शुद्धो बुभुक्षितः सूतो भागद्वयमितो भवेत्। तथा गंधस्य भागौ द्वौ कुर्य्यात्कज्जलिकां तयोः॥ सूताच्चतुर्गुणेष्वेव कपर्देषु विनिक्षिपेत्। भागैकं टंकणं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ तथा शंखस्य खंडानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् । क्षिपेत्सर्वंपुटस्यांत-

श्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ गर्ते हस्तोन्मिते धृत्वा पचेद्गजपुटेन च। स्वांगशीतं समुद्धृत्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ षड्गुंजासंमितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः । घृतेन वातजे दद्यान्नवनीतेन पित्तजे ॥ क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारे क्षये तथा। अरुचौ ग्रहणीरोगे कार्श्ये मंदानले तथा ॥ कासे श्वासेषु गुल्मेषु लोकनाथो रसो हितः । तस्योपरि घृतान्नं च भुंजीत कवलत्रयम् ॥ मंचे क्षणैकमुत्तानः शयीतानुपधानके। अनम्लमन्नं सघृतं भुंजीत मधुरं दधि ॥ प्रायेण जांगलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ॥ सुदुग्धभक्तं दद्याच्च जातेऽग्नौ सांध्यभोजने । सघृतान् मुद्गवटकान् व्यंजनेष्वेव चारयेत्॥ तिलामलककल्केन स्नापयेत्सर्पिषाथवा। अभ्यंजयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णोदकेन च ॥ क्वचित्तैलं न गृह्णीयान्न बिल्वं कारवेल्लकम्। वार्ताकं शफरीं चिंचां त्यजेद् व्यायाममैथुने॥ मद्यं संधानकं हिंगुशुंठीमाषान् मसूरकान्।कूष्मांडराजिकां कापं कांजिकं चैव वर्जयेत् ॥ त्यजेच्च युक्तनिद्रां च कांस्यपात्रे च भोजनम्। ककारादियुतं सर्वं त्यजेच्छाकफलादिकम् ॥ पथ्योयं लोकनाथस्तु शुभनक्षत्रवासरे। पूर्णातिथौ शुक्लपक्षजाते चंद्रबले तथा ॥ पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीं भोजयेत्ततः । दानं दद्याद्द्विघटिकामध्ये ग्राह्यो रसोत्तमः ॥ रसात्संजायते तापस्तदा शर्करया युतम्। सत्वं गुडूच्या गृह्णीयाद्वंशरोचनया युतम् ॥ खर्जूरं दाडिमं द्राक्षामिक्षुखंडानि चारयेत्।अरुचौ निस्तुषं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ॥ दद्यात्तथा ज्वरे धान्यं गुडूचीक्वाथमाहरेत् । उशीरवासकक्वाथं दद्यात्समधुशर्करम्॥ रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये। अग्निभृष्टजयाचूर्णं मधुना निशि दीयते ॥ निद्रानाशेतिसारे च ग्रहण्यां मंदपावके। सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैः पिबेत् ॥

शूले जीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता। प्लीहोदरे वात- रक्ते छर्द्यां चैव गुदांकुरे॥ नासिकादिषु रक्तेषु रसदाडिमपुष्प- जम्। दूर्वायाः स्वरसं नस्ये दद्याच्छर्करया युतम्॥ कोलमज्जा- कणाबर्हियक्षभस्म सशर्करम्। मधुना लेहयेच्छर्दिहिक्काकोप- स्य शांतये॥ विधिरेष प्रयोज्यस्तु सर्वस्मिन् पोटलीरसे। मृ- गांके हेमगर्भे च मौक्तिकाख्ये रसेषु च॥ इत्ययं लोकनाथो- क्तो रसः सर्वरुजो जयेत्॥

अर्थ–शुद्ध और बुभुक्षित पारा दो भाग तथा शुद्ध करी हुई गंधक दो भाग इन दोनों की एकत्र कजली करे फिर पारे से चौगुनी पीली कौडी ले उन में इस कजली को युक्ति से भर देवे और सुहागा एक भाग लेके गौ के दूध खरल करके इस से उन कौडियों के मुख बंद कर देवे. फिर शंख के टुकडे वजन में आठ भाग ले. और मिट्टी के दो सराव लेकर एक में चूना भरके उस चूने के बीच में शंख के टुकडे को रखके और उस पर उन कौडियों रखके आधे शंख के टुकडे को उन कौडियों के ऊपर रख देवे और चूने से दाब ऊपर दूसरे सराव से ढक देवे और कपडमिट्टी करके एक हाथ के गड्ढे में आरने उपले भर बीच में इस संपुट को धर देय और ऊपर फिर ऊपले भरके फूंक देवे. जब गजपुट स्वयं शीतल हो जावे तब संपुट को निकाल उस के भीतर से चूना दूर कर बाकी सब की भस्म को नि- काल के खरल में डाल के घोट डाले और उत्तम पात्र में भरके रख देवे इस को लोकनाथरस कहते हैं यह लोकनाथ रस छः रत्ती लेकर उन्नीस काली मिरचों के चूर्ण में मिलायके वादी का रोग होवे तो घी के साथ देवे. तथा पित्तरोग होय तो मक्खन के साथ और कफ का रोग होय तो सहत में मिलाकर देवे तथा अतिसार, क्षय, अरुचि संग्रहणी, कृशता, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और गोला इतने रोग दूर होने को यह रस देवे इस की मात्रा लेकर इस के ऊपर घी भात के तीन ग्रास खाय फिर शय्या (खाट) पर विना बिछैया के एक क्षण मात्र चीत लेट जावे. खट्टे पदार्थ को त्यागके घृत से भोजन करे तथा उत्तम मीठा दही भोजन में खाय. जं- गली जीवों का अर्थात् हरिण आदि के मांस घी में तलके खाय. सायंकाल में जब भूक लगे तब दूधभात खाय, मूंग के बडे घी में तल के खाय. तिल और आवले इन का कल्क करके देह में मालिस कर फिर स्नान करे, अथवा घी की देह में मा- लिस करके स्नान करे. स्नान के शिवाय देह में लगाना होय तो घी को ही लगावे और स्नान को जल सुहाता २ गरम लेवे. तेल का स्पर्श न करे तथा बेलफल,

करेला, बैंगन, छोटी मछली, इमली, परिश्रम करना, मैथुन, मद्यपान, संधान (अचार), हींग, सोंठ, उडद, मसूर, पेठा, राई, कांजी इन सब वस्तुओं का सेवन त्याग देय. क्रोध करना, दिन में सोना, त्याग देवे. कांसे के पात्र में भोजन न करे. ककार है आदि में जिन के ऐसे शाक और फल इत्यादिक वर्जित हैं इस प्रकार लोकनाथ की पथ्य करे. शुभदिन, शुभवार, पूर्णतिथि, शुक्लपक्ष, और अपने को जिस दिन उत्तम चंद्रमा होवे उस दिन लोकनाथरस की पूजा करके फिर कुमारी स्त्री को भोजन करावे तथा सुवर्णादिक दान करके लोकनाथ रस को खाय इस के खाने से दो घडी पश्चात् देह में संताप होता है उस के दूर करने को मिश्री और गिलोय का सत्व और वंशलोचन इन तीनों को एकत्र मिलायके सेवन करे तो संताप दूर हो. खजूर, अनार, दाख, ईख के टुकडे ये पदार्थ थोडे थोडे खाय तो संताप और अरुचि का होना दूर होवे तथा धनियों को कूट उस की गिरी निकालके घी में भून और मिश्री मिलायके उस के साथ लोकनाथरस खाय तो अरुचि दूर हो. धनिया, गिलोय इन का काढा कर इस काढे में इस रस को मिलायके पीवे तो ज्वर दूर होय. खस और अडूसा इन दोनों का काढा कर सहत और मिश्री मिलाय उस में लोकनाथ रस को मिलायके पीवे. रक्तपित्त और कफ, श्वास, खांसी, स्वरभंग ये रोग दूर हों, भांग को भूनके चूर्ण करे उस में इस रस को मिलायके और सहत डालके रात्रि में सेवन करे तो जिस को निद्रा न आती हो उस को निद्रा आवे. अतिसार और संग्रहणी ये रोग दूर हों, जठराग्नि प्रदीप्त होवे. संचरनिमक, जंगीहरड, पीपल इन तीन औषधों का चूर्ण कर इस में इस लोकनाथ रस को मिलायके गरम जल के साथ पीवे, शूल और अजीर्ण ये दूर हों, सहत और पीपल के साथ लोकनाथ सेवन करे तो ज्वर दूर हो, अनार के फल के रस के साथ सेवन करे तो पेट में दहने तरफ जो तिल्ली का रोग होता है वह और वातरक्त, वमन, बवासीर, नाक से रुधिर का गिरना ये सब रोग दूर हों. दूब का रस निकाल उस में खांड मिलाय तथा लोकनाथ को डालके नाक में नस्य देवे तो नाक से रुधिर गिरना बंद होवे. बेर की गुठली के भीतर की मींगी, पीपल, मोरचंद्रका की भस्म इन तीन औषधों को एकत्र कर उस में मिश्री और सहत डाल लोकनाथरस मिलायके सेवन करे तो वमन और हिचकी ये दूर हों. इस प्रकार संपूर्ण जितने पोटली रस हैं उन में तथा मृगांक तथा हेमगर्भ और मौक्तिकाख्य रसायन इन में इसी प्रकार विधि करनी चाहिये. इस प्रकार लोकनाथरस कहा है यह लोकनाथ संपूर्ण रोगों को दूर करता है यह शार्ङ्गधर संहिता में लिखा है और अन्य ग्रंथों में भी लिखा है ॥

लघुलोकनाथरस

वराटभस्म मंडूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् । तत्समं मरिचं चूर्णं

नागवल्या विभावितम् ॥ तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः । माषमात्रं क्षयं हंति यामे यामे च भक्षितम् ॥ लोकनाथरसो ह्येष मंडलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥

अर्थ–कौडी की भस्म १ भाग, मंडूर १ भाग, काली मिरच २ भाग इन को एकत्र करके घी में खरल करे जब घी गाढा हो जावे तब नागरवेलपान में खरल करके मासे २ भर की गोली बनावे इस को सहत अथवा नवनीत के संग एक एक प्रहर में सेवन करे तो सामान्य क्षय को दूर करे इसी प्रकार एक मंडल सेवन करने से राजयक्ष्मा को भी दूर करे इसे लघुलोकनाथरस कहते हैं इस की भी पथ्य लोकनाथ के समान करे ऐसी किसी आचार्य की संमति है ॥

मृगांकपोटलीरस

भूर्जवत्तनुपत्राणि हेम्नः सूक्ष्माणि कारयेत् । तुल्यानि तानि सूतेन खल्वे क्षिप्त्वा विमर्दयेत्॥ कांचनाररसेनैव ज्वालामुख्यारसेन वा । लांगल्या वा रसैस्तावद्यावद्भवति पिष्टिका ॥ ततो हेम्नश्चतुर्थांशं टंकणं तत्र निक्षिपेत्। पिष्टमौक्तिकचूर्णं च हेमाद्विगुणमावपेत् ॥ तेषु सर्वसमं गंधं क्षिप्त्वा चैकत्र मर्दयेत् । तेषां कृत्वा ततो गोलं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥ पश्चान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् । शरावसंपुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ लवणापूरिते भांडे धारयेत्तं च संपुटम् । मुद्रां दत्वा शोषयित्वा बहुभिर्गोमयैः पुटेत् ॥ ततः शीते समाहृत्य गंधं सूतसमं क्षिपेत् ॥ घृष्ट्वा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्गजपुटेन च ॥ स्वांगशीतं ततो नीत्वा गुंजायुग्मं प्रकल्पयेत् । अष्टभिर्मरिचैर्युक्तो कृष्णात्रययुतोथवा ॥ विलोक्य देयो दोषादीनेकैका रसरक्तिका । सर्पिषा मधुना वापि दद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ॥ श्लेष्माणं ग्रहणीं कासं श्वासं क्षयमरोचकम् । मृगांकोयं रसो हन्यात्कृशत्वं बलहानिताम् ॥

अर्थ—सोने के भोजपत्र के समान बारीक पत्र करके उस के समान भाग शुद्ध पारा लेवे दोनों को एकत्र करके कचनार के रस में अथवा ज्वालामुखी के रस में तथा कटियारी के रस में जबतक सब मिलकर उत्तम पिष्टीन होवे तबतक खरल करे फिर सुवर्ण की चतुर्थांश सुहागा और सुवर्ण से दूना मोती का बारीक चूर्ण तथा सोने के बराबर गंधक ले सब को एकत्र खरल कर गोला बनावे उस के चारों तरफ कपडा लपेट उस पर मिट्टी का लेप करके धूप में सुखाय ले. फिर मिट्टी के दो सराव ले एक में उस गोले को रखके उस के ऊपर दूसरा रख देवे और दोनों को मिलाय कपडमिट्टी कर देवे मिट्टी के मटके में नोन भरके उस में इस सराव संपुट को रखके ऊपर से फिर निमक भर देवे फिर इस के मुख को बंद कर उस की संधियों को कपडमिट्टी से बंद कर देवे फिर इस को गजपुट से अधिक आरने उपलों की अग्नि में रखके फूंक देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके फिर उस पारे की बराबर गंधक लेकर सब को खरल में डालके पहले जो औषध कही है उन्हों के रसों में खरल करे और पूर्वविधि से गजपुट की अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल फिर इस संपुट में से औषधी निकाल लेवे इस को मृगांकपोटली रस कहते हैं यह पोटली रस दो रत्ती के अनुमान आठ मिरचों के अथवा तीन पीपलों के साथ देवे तथा दोषों का तारतम्य देखकर एकरत्ती भी देवे जैसी दोषों की अपेक्षा होवे उसी प्रकार घी में अथवा सहत में मिलायके सेवन करे तथा अंतःकरण को स्वच्छ करके पवित्र हो लोकनाथरस के समान पथ्य करे. इस प्रकार आचरण करने से इस रसायन से कफरोग, संग्रहणी, खांसी, श्वास, क्षयरोग, अरुचि, शरीर की कृशता तथा बलहानी ये रोग दूर होवें ॥

गोक्षुराद्यघृत

दुरालभा स्वदंष्ट्रा च चतस्रः पर्णिनी बला । भागान्पलोन्मितान् कृत्वा पलं पर्पटकस्य च ॥ पचेद्दशगुणे तोये दशभागावशेषितम् । रसे पूते तु द्रव्याणामेषां कल्कं समावपेत् ॥ सठीपुष्करमूलानां पिप्पलीत्रायमाणयोः । तामलक्या किरातस्य तिक्तस्य कटुकस्य च ॥ पलानां सारिवायाश्च तत्पिष्ट्वा कर्षसंमितान् । तैः साधयेद्धृतप्रस्थं क्षीरं द्विगुणितं भिषक् ॥ ज्वरं दाहं तमः श्वासं कासं पार्श्वशिरोरुजम् । तृष्णां छर्दिमतीसारमेतत्पानं व्यपोहति ॥

अर्थ—गोखरू,धमासा, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, खरेटी, पित्तपापडा , ये आठ औषध चार २ तोले लेवे इन को दस गुने जल में डालके औटावे और काढा करे जब दशांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर कचूर, पुहकरमूल, पीपल, त्रायमाण, हरड, चिरायता, तेजबल, कुटकी, सारिवा ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे इन का कल्क तथा ६४ तोले घी, १२८ तोले दूध डालके घृतपाक की विधि से इस घृत को सिद्ध करे यह **गोक्षुरादिघृत** ज्वर, दाह, तमकश्वास, पसली और मस्तक इन के शूल को तथा प्यास, वमन और अतिसार इन को नाश करे ॥

जीवंत्यादिघृत

जीवंतिकावत्सकयष्टिकानां सपौष्करं गोक्षुरके बले द्वे । नीलोत्पलं तामलकं यवासा सत्रायमाणा मगधा च कुष्ठं ॥ द्राक्षामलक्या रसमेकप्रस्थं प्रस्थद्वयं छागलकं पयश्च । प्रस्थं तथा योज्य दधिश्च धीमान् पचेत् घृतं वा मृदुवह्निना तत् ॥ पाने प्रशस्तं हितमेतदेव नस्ये च बस्तौ विनियोजयेत्तु । विनाशयत्याशु च राजयक्ष्महलीमकं कामलपांडुरोगम् ॥ मूर्छाभ्रमश्लेष्मशिरोर्तिशूलं मदाश्मरीं वा गुदकीलकुष्ठम् । शिरोगदं नाशमुपैति तस्य नस्यप्रदानेन नियोजितेन ॥ पानेन पाण्ड्वामयराजयक्ष्मा नाशं समायाति हलीमकं च । बस्तिप्रदानेन गुदोद्भवश्च रोगो विनाशं समुपैति पुंसाम् ॥ विसर्पविस्फोटकमृंक्षणेन नश्यंत्यनेनैव गदाः समस्ताः ॥

अर्थ—गिलोय, कुडे की छाल,मुलहटी,पुहकर मूल,गोखरू, खिरेटी,गगेरन, नीला कमल, भूय आवला, धमासा, त्रायमाण, पीपल, कूठ, दाख और आमले इन का रस ६४तोले बकरी का दूध १२८ तोले,दही ६४ और घी ६४ तोले ले सबको एकत्र कर के लोहे की कढाई में भरके चूल्हे पर चढावे और मंद २ अग्नि से पचावे इस घृत के नस्य देने से तथा पान करने से तथा बस्ति इन कर्मों में देवे तो तत्काल राजयक्ष्मा, हलीमक, कामला, पांडुरोग इन को तथा बस्तिकर्म से गुदासंबंधी रोगोंका तथा देह में लगाने से विसर्प, बिस्फोटक इन को और अनेक व्याधियों को नाश करे ॥

बलाद्यघृत

बला श्वदंष्ट्रा कलशी बृहती धावनी स्थिरा । निंबपर्पटकं मुस्ता त्रा-

यमाणं दुरालभा ॥ कृत्वा कषायं पेयार्थं दद्यात्तामलकी सठी ॥ द्राक्षा पुष्करमूलं च मेदा ह्यामलकानि च ॥ घृतं पयश्च तत्सिद्धं सर्पिज्वरहरं परम् । क्षयकासप्रशमनं शिरःपार्श्वरुजापहम् ॥

अर्थ—खिरेटी, गोखरू,पिठवन,कटेरी, बडी कटेरी,सालपर्णी, नीम की छाल, पित्त पापडा, नागरमोथा, त्रायमाण, धमासा, हरड, कचूर, दाख, पुहकरमूल, मेदा और आवला इन का काढा, तथा दूध, घी, डालके घृतपाक की विधि से इस घृत को सिद्ध करे तो यह अत्यंत ज्वरनाशक, मोह और क्षय, मस्तक और पसली इन के शूल को नाश करे इस को बलादिघृत कहते हैं ॥

कोलाद्यघृत

कोललाक्षारसे तद्वत्क्षीराष्टगुणसाधितम् ॥ कल्कैः षडंगदार्वीत्वग्द्राक्षाक्षोटफलान्वितम् ॥ घृतं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः । सपिप्पलीकं वैस्वर्यकासश्वासरुजापहम् ॥

अर्थ—बेर की लाख के काढे में अष्टमांश दूध तथा गोखरू,दारुहलदी,दालचीनी, दाख, अखरोट, खजूर, गोस्तनी मुनक्का, मुलहटी, फालसे और पीपल इन का कल्क करके इस में घी सिद्ध करे यह घृत स्वरभंग, खांसी और श्वास इस का नाश करे है॥

कणाद्यघृत

कणापलं पंचगुडांभसश्च सज्यं घृतं वै विपचेत्समांशम् ।
पानेथवा भोजनके प्रशस्तं क्षये च राजक्षयनाशहेतु ॥

अर्थ—पीपल २० तोले, गुड का जल २० तोले और घी ये सब समान भाग ले सब को एकत्र कर घृत सिद्ध करे इस को पीने के वास्ते अथवा भोजन करने को देवे तो क्षय और राजयक्ष्मा इन को दूर करे ॥

पाराशरघृत

यष्टी बला गुडूची च पंचमूलं समांशकम् । क्काथेन सदृशं धात्रीरसं चेक्षुरसं तथा ॥ विदार्याया रसं चैव घृतं च समभागिकम् ॥ क्षीरं दधिसमं चात्र नवनीतं तु तत्समम् ॥ द्राक्षातालीससंयुक्तं पथ्यालाभेन योजयेत् ॥ सिद्धं घृतं च पानीये नस्ये बस्तौ प्रदापयेत् । हरते राजयक्ष्माणं पांडुरोगं च दारु-

णम् ॥ हलीमकार्शसी नित्यं रक्तपित्तनिवारणम् । लेपनं दुष्टवीसर्पपित्तदग्धव्रणापहम् ॥

अर्थ—मुलहटी, खिरेटी, गिलोय, और पंचमूल इन सब को समान भाग लेकर काढा करे इस काढे के समान आवले का रस ईख का रस विदारी कंद का रस और घी, दूध, दही, मक्खन, दाख, तालीसपत्र ये यथालाभ करके घी को सिद्ध करे इस घी के खाने से नस्य अथवा बस्ति इन में देवे तो क्षय, पांडुरोग, कामला, हलीमक, बवासीर, रक्तपित्त, इन को नाश करे. तथा इस की देह में मालिस करने से पित्त और दग्ध व्रण इन को दूर करे ॥

जलाद्यघृत

जलद्रोणे विपक्तव्यं यावत्पादावशेषितम् । पिप्पली चंदनं लोध्रं ह्रीबेरोशीरपर्पटम् ॥ पाठाभूनिंबयष्ट्याह्वा त्रायंती नीलमुत्पलम् । मुस्तकेंद्रयवा शुंठी कटुकं सदुरालभम् ॥ त्वक्पत्रं वृषमूलं च कल्पैरर्धपलैर्भिषक् । अजाक्षीरेण तूष्णेन घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ हंति यक्ष्माणमत्युग्रं रक्तपित्तं त्रिदोषजम् । श्वासकासक्षतक्षीणदाहशोकरुजापहम् ॥

अर्थ—१०२४ तोले जल में पीपल, रक्तचंदन, लोध्र, नेत्रवाला, खस, पित्तपापडा, पाढ, चिरायता, मुलहटी, त्रायंती, कालाकमल, नागरमोथा, इन्द्रजो, सोंठ, कुटकी, धमासा, दालचीनी और अडूसे की जड ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सब को एकत्र करके चतुर्थांश शेष काढा करे. फिर इस को छान लेय और काढे के समान बकरी का दूध तथा ६४ तोले घी इन सब को एकत्र करके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतार लेवे यह घी क्षयरोग, त्रिदोषजन्य रक्तपित्त, श्वास, खांसी, क्षतक्षीण, दाह, तथा शोक इन को नाश करे ॥

वासाद्यघृत

वासामृतारिष्टनिदिग्धिकानां रसेश्वगंधेभबलार्जुनानाम् । सिद्धं सपंचोषणपुष्कराणां कल्कैर्घृतं छागपयस्तु शेषे ॥

अर्थ—अडूसा, गिलोय, नीम की छाल, कटेरी, असगंध, अतिबला, कोह, इन के काढे में घी, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, पीपरामूल, पुहकरमूल, इन के कल्क की बराबर बकरी का दूध डालके घी को सिद्ध करे तो यह वासादिघृत क्षयरोग को नाश करे है ॥

खर्जूरादिघृत

घृतं खर्जूरमृद्वीकामधूकैः सपरूषकैः।
सपिप्पलीकैर्वैस्वर्यकासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ-खजूर, दाख, मुलहटी, फालसे और पीपल इन से सिद्ध करे हुए घी के सेवन करने से स्वरभंग (आवाज का बैठ जाना), खांसी, श्वास, ज्वर इन का नाश करे ॥

पिप्पल्याद्यघृत

पिप्पलीगुडसंयुक्तं छागमांसयुतं घृतम् ।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थं प्रदेयं क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ-पीपल और गुड तथा बकरे का मांस इन से सिद्ध करा हुआ घी क्षयरोग और खांसी इनपर देना चाहिये ॥

दूसरा प्रकार

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ।
सयावशूकैश्च क्षीरं स्रोतसां शोधनं परम् ॥
कल्कोत्र पादिकः कार्यः क्षीरं वापि चतुर्गुणम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और जवाखार इन से सिद्ध करा हुआ घृत स्रोत (देह की छिद्रों) की शुद्धि करे है· इस जगह औषधों का कल्क १ भाग और घी ४ भाग इस प्रमाण से लेकर घी बनावे ॥

दशमूलाद्यघृत

दशमूलीशृतात्क्षीरात्सर्पिर्यदुदियान्नवम् ।
सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरशोधनम् ॥
शिरःपार्श्वांगशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम् ॥

अर्थ-दशमूल डालके औटे हुए दूध को जमाय घी निकाल लेवे यह घी, सहत और पीपल इन के साथ सेवन करे तो स्वर को शुद्ध करता और मस्तक, कूख इन के शूल का, खांसी, श्वास और ज्वर इन का नाशक है ॥

तिलोंका तैल

क्षीरे चतुर्गुणे तैलं प्रस्थद्वयतिलोद्भवम् ।
शतशः पावितं यष्टीपलकल्केन यत्नतः ॥

पाननस्यादिभिर्यक्ष्महरमामयपांडुजित् ।
ऊर्ध्वजत्रुगरोन्मादरक्तपित्तविसर्पनुत् ॥

अर्थ–१२८ तोले तिलों का तेल, ५१२ तोले दूध, ४ तोले मुलहटी का चूरा इन को एकत्र कर बहुत वार औटावे फिर छानके पीवे तो राजयक्ष्मा, पांडुरोग, हसली के ऊपर के भाग में होनेवाले रोग, विष के रोग, उन्माद, रक्तपित्त और विसर्प इन रोगों को दूर करे ॥

चंदनादितैल

चंदनांबुनखैर्याम्यं यष्टचा शैलेयपद्मकम् । मंजिष्ठा सरलं दारु सेव्यैलं पूतिकेसरम् ॥ हरिद्रा सारिवा तिक्ता लवंगागुरु-कुंकुमम् । त्वग्रेणुनलिका चेति तैलं मस्तु चतुर्गुणम्॥ लाक्षार-ससमं सिद्धं ग्रहघ्नं बलवर्धनम् । अपस्मारज्वरोन्मादकृत्याल क्ष्मीविनाशनम् ॥ आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् । विशेषात्क्षयरोगघ्नं रक्तपित्तहरं परम् ॥

अर्थ–चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), लालचंदन, मुलहटी, शिलाजीत, पद्माख, मजीठ, सरलद्रव्य, देवदारु, खस, जवाद, हलदी, सारिवा, कुटकी, लौंग, अगर, केशर, दालचीनी, रेणुकबीज और नलिका ये सब वस्तु समान भाग ले और इन सब से चौगुना तेल तथा दही का जल और सब की बराबर लाख का काढा लेवे सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे यह ग्रहनाशक, बल बढानेवाला, मृगी, ज्वर, उन्माद रोग, कृत्या (घातमूढ) और अलक्ष्मी इन को नाश करे तथा आयुष्य, पुष्टि और वशीकरण इन को करे है तथा विशेष करके क्षयरोग और रक्तपित्त इन को नाश करे है ॥

लक्ष्मीविलासतैल

एलाश्रीखंडरास्नाजतुनखशशितक्कोलकं चाथ मुस्ता वल्लत्वग्दा-रुकृष्णागरुतगरजटाकुष्ठमेतत्समांशम् । त्रैगुण्यं कालरालं सु-दृढडमरुकायंत्रसिद्धं तु तैलं गंधैः पुष्पैश्च भाव्यं परिमलल-लितं नामतो गंधतैलम् ॥ एतल्लक्ष्मीविलासं जनयति जगती-नायकैः संप्रयोगं युक्त्या रोगान् निखिलगदहरं वातसंघात-हंतृ । पीतं तांबूलवल्लीदलमिलितमलं जाठरे वह्निसिद्धं कु-र्याद्दुर्नामयक्ष्मक्षयमपि नितरामंगसंमर्दनेन ॥

अर्थ–इलायची, चंदन, रासना, लाख, नखद्रव्य, कपूर, कंकोल, नागरमोथा, खिरेटी, दालचीनी, हलदी, पीपल, अगर, तगर, जटामांसी, कूठ ये समान भाग ले. तिगुनी राल लेवे. इन सब पदार्थों को डमरूयंत्र में डालके तेल निकाल लेवे. इसे लक्ष्मीविलासतैल कहते हैं यह अत्यंत सुगंध करके युक्त इस को गंधतैल भी कहते हैं. यह स्त्रीपुरुषों में प्रीति उत्पन्न करे है. युक्तिपूर्वक इस का उपयोग करने से अनेक रोग तथा अनेक वादी के रोग इन को नाश करे. इस को पान में लगायके खाय तो जठराग्नि को दीप्त करे तथा देह में लगाने से बवासीर, क्षयरोग इन को नाश करे है ॥

व्यवायजन्यशोष

व्यवायशोकवार्धक्यव्यायामाध्वप्रशोषितान् ।
व्रणोरःक्षतसंज्ञौ तु शोषिणो लक्षणं शृणु ॥

अर्थ–अति मैथुन का शोष, शोकशोषी, वार्द्धक्यशोषी, व्यायामशोषी, मार्गशोषी, व्रणशोषी और उरःक्षतशोषी इन के न्यारे न्यारे लक्षण कहता हूं ॥

व्यवायशोषिलक्षण

व्यवायशोषी शुक्रस्य क्षयलिंगैरुपद्रुतः ।
पांडुदेहो यथापूर्वं क्षीयंते चास्य धातवः ॥

अर्थ–व्यवायशोषी (अति मैथुन से क्षीण भया), (सुश्रुत) के कहे अनुसार शुक्रक्षयलक्षणों से (शुक्रक्षय होने से लिंग और अंडकोश में पीडा होय मैथुन करने में अशक्ति और बल से मैथुन करे तौ बहुत देर में शुक्र का स्राव होय और वह स्राव बहुत अल्प होय अथवा रुधिर का स्राव होय) पीडित होय उस के देह का वर्ण पीला हो जाय और शुक्र से मज्जा, मज्जा से हड्डी ऐसे उलटे धातु क्षीण होते जाते हैं ॥

व्यवायदोषचिकित्सा

व्यवायशोषिणं क्षीररसमांसाज्यभोजनैः ।
सकलैर्मधुरैर्हृद्यैर्जीवनीयैरुपाचरेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी अत्यन्त मैथुन के करने से क्षीण हो गया हो उस को दूध, मांस, घी इन करके युक्त भोजन करे तथा संपूर्ण मिष्ट पदार्थ, हृदय को जो प्रिय हो, आयुष्यवर्धक ऐसी औषधों का उपचार करे ॥

शोकशोषिलक्षण

प्रध्मानशीलः स्रस्तांगः शोकशोष्यपि तादृशः ।
विना शुक्रक्षयकृतैर्विकारैरुपलक्षितः ॥

अर्थ–शोकशोषी अर्थात् शोच से जिस को क्षय हो वह चिंता करे और हाथ, पैर गलने लगे तथा शुक्रक्षयव्यतिरिक्त शोषवान् हो और पांडु देह होय ऐसा शोच से क्षयवाला पुरुष होता है ॥

शोकशोषिचिकित्सा

हर्षणाश्वासनैः क्षीरैः स्निग्धैर्मधुरशीतलैः ।
दीपनैर्लघुभिश्चान्नैः शोकशोषमुपाचरेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी शोक के कारण क्षीण हो गया हो उस को हर्ष (प्रसन्न करना), आश्वासन (धीरज बधाना) तथा क्षीर, स्निग्ध, मधुर, शीतल, दीपन और हलके ऐसे अन्न इन पदार्थों करके उपचार करे ॥

जराशोषलक्षण

जराशोषी कृशो मंदवीर्यबुद्धिबलेंद्रियः ।
कंपनो रुचिमान्भिन्नः कांस्यपात्रहतस्वरः ॥
ष्ठीवति श्लेष्मणा हीनो गौरवारुचिपीडितः ।
संप्रस्रुतास्यनासाक्षिः शुष्करूक्षमलच्छविः ॥

अर्थ–जरा (बुढापा) शोषी मनुष्य कृश होय है उस के वीर्य, बुद्धि, बल और इन्द्रियें मन्द हो जाँय, कंप होय, अन्न में अरुचि, फूटे कांसे के बासन को लकडी से बजाने से जैसा शब्द होय ऐसा शब्द होय, कफरहित वारंवार थूके (अर्थात् कफ के निकालने के वास्ते यत्न करे तथापि कफ नहीं निकले) शरीर भारी रहे अरुचि से पीडित (पुनः अरुचि ग्रहणविशेषताद्योतक के वास्ते कही है) मुख, नाक और नेत्र इन से स्राव होय मल शुष्क उतरे और देह की कांति निस्तेज होय ॥

अध्वशोषलक्षण

अध्वप्रशोषी स्रस्तांगः संभृष्टपरुषच्छविः ।
प्रसुप्तगात्रावयवः शुष्कक्लोमगलाननः ॥

अर्थ–अध्वप्रशोषी (अति मार्ग चलने से क्षीण हुआ) मनुष्य के हाथ, पैर शिथिल हो जावें उस के देह का वर्ण भूजे पदार्थ के सदृश और खरदार होय है सर्व देह में प्रसुप्तता हृदय में प्यास का स्थान है सो गला और मुख इन का सूखना शंका–क्यों जी जराशोषी के अनन्तर व्यायामशोषी के लक्षण कहने चाहिये अध्व (मार्ग) शोषी के लक्षण नहीं कहने चाहिये फिर माधवाचार्य ने अध्वशोषी के लक्षण क्यों कहे । * उत्तर–अध्वशोषी के लक्षण इस वास्ते पहले कहे कि व्यायामशोषी में

इस के सब लक्षण मिलते हैं। अच्छा आप ऐसे कहोगे तो व्यायामशोषी में अध्वशोषी के कौनसे लक्षण नहीं मिलते ? *उत्तर–तुम ने कहा सो ठीक है परंतु अध्वशोषी में उरःक्षत आदि चिन्ह नहीं हैं इस से पूर्व अध्वशोषी के लक्षण कहे ॥

अध्वशोषचिकित्सा

आस्यासुखैर्दिवास्वप्नैः शीतैर्मधुरबृंहणैः ।
अन्नमांसरसाहारैरध्वशोषमुपाचरेत् ॥

अर्थ–बैठने का सुख, दिन में सोना और शीतल, मधुर, पौष्टिक ऐसे अन्न, मांस का रस इन के सेवन इन उपायों से अध्वशोष (रास्ते के चलने करके जो सूख गया हो उस) की चिकित्सा करे ॥

व्यायामशोषलक्षण

व्यायामशोषी भूयिष्ठमेभिरेवमुपद्रुतः ।
लिंगैरुरःक्षतसमैः संयुक्तश्च क्षतं विना ॥

अर्थ–व्यायामशोषी (अत्यंत दंड कसरत आदि श्रम से क्षीण) मनुष्य, विशेष करके अध्वशोषी के लक्षण स्रस्तांगतादियुक्त होय है, अर्थात् जो लक्षण अध्वशोषी में थोडे थोडे होते हैं वे व्यायामशोषी में अधिक होते हैं और उस मनुष्य के घाव के विना ही उरःक्षत के लक्षण मिलते हैं उरःक्षतके लक्षण सुश्रुत में लिखे हैं ॥

व्यायामशोषचिकित्सा

व्यायामशोषिणं स्निग्धैः क्षतक्षयकृतैर्हितैः ।
उपाचरेज्जीवनीयैर्विधिना श्लैष्मिकेण तु ॥

अर्थ–जो प्राणी दंड, कसरत आदि परिश्रम के करने से क्षीण हो गया हो उस को स्निग्ध, क्षतक्षय पर जो पदार्थ हितकारी हैं तथा शरीर को हितकारी, कफ करनेवाले और जीवनीयगणोक्त औषध इत्यादिक उपचार करें ॥

व्रणशोषलक्षण

रक्तक्षयाद्वेदनाभिस्तथैवाहारयंत्रणात् ।
व्रणिनश्च भवेच्छोषः स चासाध्यतमो मतः ॥

अर्थ–रुधिर के क्षय से फोडा की पीडा से तैसे ही आहार के घटने से व्रणी पुरुष के जो शोष होय सो अत्यंत असाध्य जानना ॥

व्रणशोष

व्रणशोषं जयेत्स्निग्धैर्दीपनैः स्वादुशीतलैः ।
ईषदम्लैरनम्लैर्वा यूषमांसरसादिभिः ॥

अर्थ–चिकने, दीपन, मीठे, कुछ २ खट्टे और मिष्ट ऐसे यूष मांस रस इत्यादिक से व्रणशोष अर्थात् जिस के घाव होने से क्षीण हो उस का यत्न करे ॥

रसवर्द्धन

गुडूची शृंगवेरं च यवानां क्वथितं जलम् ।
मरीचैः क्वथितं दुग्धं पाने रात्रौ प्रशस्यते ॥
रसस्य तेन वृद्धिः स्यात्क्षयं शीघ्रं विमुंचति ॥

अर्थ–गिलोय, अदरख और जो इन का काढा अथवा काली मिरच डालके तपाया हुआ दूध पीवे तो रसधातु की वृद्धि होवे और तत्काल रसक्षय का नाश होय॥

रक्तवर्द्धन

गोधूमयवशालीनां जांगलानि विशेषतः ।
घृतदुग्धसिताक्षौद्रमरीचानि च पिप्पली ॥
पानं शस्तं मनुष्याणां रक्तवृद्धिकरं परम् ॥

अर्थ–गेहूं, जो, शालीधान्य, जंगली जीवों का मांस, घी, दूध, मिश्री, सहत, काली मिरच और पीपल इन का सेवन करे तो मनुष्यों के रुधिरवृद्धि करने को यह यत्न उत्तम है ॥

मांसवर्द्धन

अनूपानि च धान्यानि लशुनादीनि कल्पयेत् ।
कुल्यासघृतदुग्धादीन् सेवयेन्मधुराणि च ॥

अर्थ–जलसमीप रहनेवाले जीवों का मांस और अनूपदेश के धान्य, लहसन, घी, दूध और मधुर पदार्थ ये भक्षण करे तो मांसवृद्धि होय ॥

मेदवर्धन

तालिसाद्यं हितं चूर्णसेवनं मधुरांस्तथा ।
रसांश्च जांगलान्दद्यात् सेवनार्थं भिषग्वरः ॥

अर्थ–तालीसादिक चूर्ण, मधुर रस, तथा जंगली जीवों के मांस का रस ये पदार्थ जिस प्राणी की मेदाधातु क्षीण हो गई हो उस को देवे ॥

दूसरा प्रकार

सीतोपलादिकं चूर्णमजाक्षीरं सकोलकम् ।
हितं पानं क्षये चैव कल्पयेत्प्रातराशनैः ॥

अर्थ–सितोपलादि चूर्ण, बकरी का दूध, वन में रहनेवाला सूअर का मांस तथा हितकारी पदार्थों का पान ये सब वस्तुओं को वैद्य प्रातःकाल खाने को देवे तो मेदाधातु की वृद्धि होवे ॥

अस्थिवर्धन

घृतपक्कानि शस्तानि क्षीराणि विविधानि च ।
चंदनादीनि द्राक्षादिचूर्णानि च भिषग्वरैः ॥
जांगलानि च सर्वाणि सेवनीयानि पुत्रक ।
मधुराणि तथान्नानि सर्वाणि संप्रयोजयेत् ॥

अर्थ–घृतपक्क पदार्थ (मोमन की पूडी, कचौडी), दूध के पदार्थ, चंदनादि और द्राक्षादि चूर्ण, जंगली जीवों का मांस, मधुर अन्न और पान ये सब कुशलवैद्य हड्डी क्षीण हो गई हो उस के बढाने को देवे ॥

शुक्रवृद्धि

शुक्रक्षयेम्लपक्कानि सराणि च विशेषतः ।
नवनीतं तथा क्षीरं मधुराणि च सेवयेत् ॥

अर्थ–जिस प्राणी का शुक्र (वीर्य) क्षीण हो गया हो उस को अम्ल पदार्थों से सिद्ध करा हुआ अन्न तथा विशेष करके दस्तावर पदार्थ, मक्खन, दूध और मधुर रस ये देने चाहिये ॥

दूसरा प्रकार

कर्कटीमूलपयसा विदारीकंदशाल्मली ।
सिताढ्यं च हितं पानं शस्यते मधुना सह ॥

अर्थ–ककडी की जड को पीसके दूध में मिलाय लेवे तथा विदारीकंद, सेमर का मूसला तथा मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो शुक्र की क्षीणता दूर होवे ॥

ककडी का रस वांतिपर

पिबेद्वांतिप्रशांत्यर्थं क्षौद्रं छिन्नरुहारसम् ।

मातुलुंगस्य मूलं वा लाजाचूर्णं ससैंधवम् ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं खादेद्वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ–क्षयरोग में वांति (वमन) नाश करने को गिलोय का रस, सहत अथवा बिजोरे की जड, खीलों का चूरा, सैंधा निमक, पीपल और सहत इन को एकत्र करके पीवे तो वमन होना शांति होवे ॥

दूसरा प्रकार

रजनी पूगखंडं च निष्कैकं वांतिनाशकम् ।
निष्कार्धं टंकणं वाथ काकमाचीद्रवैः पिबेत् ॥
सुगंधं वा पिबेत्खादेत्सर्वं वांतिप्रशांतये ॥

अर्थ–हलदी, सुपारी और मिश्री इन का एक तोला चूर्ण सेवन करे तो वांति को नाश करे अथवा आधा तोला मकोय के रस में सुहागा मिलायके पीवे अथवा सुगंधित पदार्थों को पीवे वा खाय तो सर्व प्रकार की वांति (रद्दों) की शांति होवे ॥

रक्तवांतिपर

आलक्तकरसैः क्षौद्रं रक्तवांतिहरं परम् ।
पुष्यार्के काकतुंड्यास्तु मूलं गोक्षीरमर्कटम् ॥
रक्तवांतिहरं पेयं सदाहे निष्कनिष्ककम् ॥

अर्थ–लाख का रस और सहत इन को एकत्र करके पिलावे अथवा काकडोडी की जड पुष्य नक्षत्र पर जब सूर्य आवे तब उखाडी हो उस को गौ के दूध में औटायके देवे वह दाहयुक्त रुधिर की वांति को नाश करे ॥

उशीरादिचूर्ण

उशीरं तगरं शुंठी कंकोलं चंदनद्वयम् । लवंगं पिप्पलीमूलं कृष्णैला नागकेसरम् ॥ मुस्तामलककर्पूरं तवक्षीरं च पत्रकम् । कृष्णागरुसमं चूर्णं सिता स्यादष्टमांशतः ॥ रक्तवांतिं च हृत्तापं नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ–खस, तगर, सोंठ, कंकोल, लाल चंदन, सपेद चंदन, लौंग, पीपरामूल, पीपल, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा, आवला, कपूर, तवाखीर, पत्रज, काली अगर ये समान भाग लेवे तथा इन सब के अष्टमांश मिश्री मिलायके चूर्ण करे यह रक्तवांति तथा हृदय का संताप इन को नष्ट करे ॥

श्लेष्मापर

विकारे श्लेष्मणो जाते भक्षयेत्कदलीफलम् ।
भृष्टं तन्मरिचैः साज्यं हंति श्लेष्माणमुल्बणम् ॥

अर्थ-कफविकार होने से केला की पकी हुई फली को भून सहत और काली मिरच के चूर्ण में मिलायके खाय तो बढे हुए कफ को नाश करे ॥

कुस्तुंबर्यादिचूर्ण

घृतं कुस्तुंबरीचूर्णं पाययेच्छर्करायुतम् ।
एलामरीचसंयुक्तं खादेदरुचिशांतये ॥

अर्थ-धनिया, इलायची, काली मिरच इन के चूर्ण को घी मिश्रीमें मिलायके खाय तो अरुचिनाश होय ॥

अरुचिपर

खादेदरुचिशांत्यर्थमार्द्रकं वा समाक्षिकम् ॥

अर्थ-अरुचि दूर करने को अदरख का रस मिलायके पीवे ॥

दाहपर

कांचनारस्य त्वक्पिष्टं सजीरं तापनाशकम् ।
कर्पूरेण समायुक्तं रसं तापे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-कचनार की छाल को कूटकर रस निकाल लेवे उस में जीरे का चूर्ण और कपूर डालके देवे तो संताप का नाश होय ॥

शोषपर

कोकिलाक्षस्य बीजैर्वा जीरकेण गुडेन वा ।
वमने चास्य शोषे वा फलं जात्याः प्रशस्यते ॥
मत्स्याक्षी पाटला मेघनादमूलं च शोषजित् ॥

अर्थ-तालमखाने, जीरा और जायफल इन का चूर्ण गुड के साथ देवे किंवा मत्स्याक्षी (मछेली), पाढर और चौलाई इन की जड देवे तो शोषरोग नष्ट होवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे राजयक्ष्मरोगनिदानचिकित्सा समाप्त ।

उरःक्षतक्षयनिदानम् ।
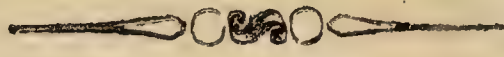
धनुरायम्यतोत्यर्थं भारमुद्वहतो गुरुम् । युध्यमानस्य बलिभिः पततो विषमोच्चतः ॥ वृषं हयं वा धावंतं दम्यं चान्यं निगृह्णतः । शिलाकाष्ठाश्मनिर्घातान्क्षिपतो निघ्नतः परान् ॥ अधीयानस्य वात्युच्चैर्दूराद्वा व्रजतो भृशम् । महानदीं चातरतो हयैर्वा सह धावतः ॥ सहसोत्पततो दूरं तूर्णं वापि प्रनृत्यतः । तथान्यैः कर्मभिः क्रूरैर्भृशमभ्याहतस्य च ॥ वीक्ष्यते वक्षसि व्याधिर्बलवान्समुदीर्यते । स्त्रीषु चातिप्रसक्तस्य रूक्षाल्पप्रमिताशिनः ॥ उरो विरुज्यतेत्यर्थं भिद्यतेथ विदह्यते । प्रपीड्यते तथा पार्श्वे शुष्यत्यंगं प्रवेपते ॥ क्रमाद्वीर्यं बलं वर्णो रुचिरग्निश्च हीयते । ज्वरो व्यथा मनोदैन्यं विड्भेदाग्निवधावपि ॥ दुष्टः श्यावः सदुर्गंधः पीतो विग्रंथितो बहु । कासमानस्य चाभीक्ष्णं कफस्रावः प्रवर्तते ॥ स क्षती क्षीयतेत्यर्थं तथा शुक्रौजसः क्षयात् ॥

अर्थ—बहुत तीरंदाजी करने से बहुत भारी वस्तु उठाने से बलवान् पुरुष के साथ युद्ध करने से ऊंचे स्थान से गिरने से बैल घोडा हाथी ऊंट इत्यादिक दौडते हुओं को थामने से भारी शिला लकडी पत्थरनिर्घात (अस्त्रविशेष) इन के फेंकने से शत्रु को मारनेवाला जोर से वेदादिक शास्त्र को पढने से अथवा दूर दिशावर शीघ्र चलकर जाने से गंगा यमुनादि महानदी को तरनेवाला अथवा घोडे के साथ दौडनेवाला अकस्मात् कला खानेवाला जल्दी जल्दी बहुत नाचने से इस प्रकार दूसरे मल्लयुद्धादि क्रूर कर्म करने से उर (छाती) फट जाती है ऐसे पुरुष की छाती दूखने से बलवान् उरःक्षतरूप व्याधी उत्पन्न होय है और बहुत मैथुन करे तथा रूखा थोडा कुसमय तथा छाती में चोट लगने से अत्यंत स्त्रीरमण करने से और रूखा थोडा और अनमानका भोजन करनेवाले के पूर्वोक्त लक्षणयुक्त ऐसे पुरुषका हृदय फटेके सदृश मालूम हो अथवा हृदय के दो टूक कर डाले ऐसा मालूम होय और हृदय में अत्यंत पीडा होय और उस के पसबाडोंमें अत्यंत पीडा होय अंग सब सूखने लगे तथा थरथर कांपने लगे और शक्ति मांस वर्ण रुचि और अग्नि ये सब क्रम से घटने लगे ज्वर रहे व्यथा होय मन में सन्ताप दीन हो जाय अग्नि मन्द होने से दस्त होने लगे और वारंवार खांसते

श्वासते दुष्ट काला अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त पीला गांठ के समान बहुत और रुधिर मिला ऐसा कफ गिरे इस प्रकार क्षतरोगी अत्यंत क्षीण होय सो केवल क्षत से ही क्षीण हो जाय ऐसा नहीं किन्तु स्त्रीसेवन करने से शुक्र और ओज (सब धातुओं का तेज) इनका क्षय होने से ये मनुष्य क्षीण होय है ॥

उरःक्षत के पूर्वरूप

अव्यक्तं लक्षणं तस्य पूर्वरूपमिति स्मृतम् ॥

अर्थ—उस उरःक्षत के अप्रगट लक्षणों को पूर्वरूप कहते हैं ॥

क्षतक्षीण के असाध्यलक्षण

उरोरुक्छोणितच्छर्दिंकासो वैशेषिकः क्षते ।
क्षीणे सरक्तमूत्रत्वं पार्श्वपृष्ठकटिग्रहः ॥

अर्थ—क्षतक्षीण रोगी के हृदय में पीडा होय रुधिर की उलटी करे और विशिष्ट कास (अर्थात् पूर्व कहे जो दुष्टश्वासादि लक्षण उन्हों से युक्त होय) और रुधिरयुक्त मूत्र का उतरना पसवाडे पीठ और कमर इन में पीडा होय ॥

असाध्यलक्षण

अल्पलिंगस्य दीप्ताग्नेः साध्यो बलवतो नवः । परिसंवत्सरो याप्यः सर्वलिंगं विवर्जयेत् ॥ परं दिनसहस्रं तु यदि जीवति मानवः । सुभिषग्भिरुपक्रांतस्तरुणः शोषपीडितः ॥

अर्थ—जिस में थोडे लक्षण मिलते हों और जिस को अग्नि दीप्त होय ऐसे पुरुष बलवान् के होय तथा रोग नवा हो तो वह साध्य है और रोग को भये एक वर्ष व्यतीत हो गया होय सो याप्य (साध्यासाध्य) है और जिस में सर्व लक्षण मिलते होय सो असाध्य है उस को वैद्य त्याग देय ॥

उरःक्षतक्षयचिकित्साक्रम

यद्यच्च तर्पणं शीतमविदाहि हितं लघु ।
अन्नपानं निषेव्यं तत्क्षतक्षीणैः सुखार्थिभिः ॥

अर्थ—जो जो पदार्थ तृप्ति करनेवाले, शीतल, अविदाही अर्थात् जो दाह न करे, हितकारी, हलके हो वह वह अन्न और जल सेवन उरःक्षत से क्षीण हुआ तथा सुख की इच्छा करनेवाले को करना चाहिये ॥

चिकित्साक्रम

शोकं स्त्रियः क्रोधमसूयतां च त्यजेदुदारान्विषयान्भजेच्च ।
तथा द्विजातींस्त्रिदशान्गुरूंश्च वाचश्च पुण्याः शृणुयाद् द्विजेभ्यः ॥

अर्थ—उरःक्षत से क्षीण हुए मनुष्य को शोक करना, स्त्री सेवन, दूसरे के गुणों में दोष लगाना ये छोड देवे. तथा कथा, पुराण इत्यादि विषय सेवन करे. देव, ब्राह्मण और गुरु इन की सेवा करे ब्राह्मणों से पुण्यकारक वाणी को श्रवण करे ये सब कर्म हितकारी हैं ॥

दशमूलादिकाढा

दशमूलबलारास्नापुष्करामरदारुनागरैः क्वथितम् ।
पेयं पार्श्वांसशिरोरुक्क्षतकासादिशांतये सलिलम् ॥

अर्थ—दशमूल, खिरेटी, रास्ना, पोहकरमूल, देवदारु, नागरमोथा इन का काढा पीवे तो पसवाडा, कंधा, मस्तक इन स्थानों की पीडा, उरःक्षत, खांसी, श्वास ये शांति होवे ॥

बलादिकाढा

बला विदारी श्रीपर्णी बहुपुत्री पुनर्नवा । पयसा नित्यमभ्यस्ताः शमयंति क्षतक्षयम्॥शृतं पयो मधुयुतं सिद्धार्थानां पिबेत्क्षयी ॥

अर्थ—बला, विदारीकंद, श्रीपर्णी (कंभारी), कांटेसेवंती वा सतावर, पुनर्नवा इन को पीसके दूध और सहत इन के साथ पीवे तो उरःक्षत क्षय का नाश होय ॥

एलादिगुटिका

एलापत्रत्वचो द्राक्षा पिप्पल्यर्धपलं पृथक् । सितामधुकखर्जूरमृद्वीकाश्च पलोन्मिताः ॥ संचूर्ण्य मधुना युक्ता वटिकाः संप्रकल्पयेत् । अक्षमात्रास्ततश्चैव भक्षयेच्च दिने दिने ॥ क्षतक्षयं ज्वरं कासं श्वासं हिक्कां वमिं भ्रमम् । मूर्च्छां मदं तृषां शोषं पार्श्वशूलमरोचकम् ॥ प्लीहानमाढ्यवातं च रक्तपित्तं ज्वरं क्षयम् । एलादिगुटिका हंति वृष्या संतर्पणी परा ॥

अर्थ—इलायची, पत्रज, दालचीनी, दाख, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे मिश्री, मुलहटी, खजूर और दाख ये प्रत्येक चार २ तोले लेय सब का चूर्ण करके

उस में सहत मिलायके गोली एक २ तोले की बनावे इस में से नित्य प्रती एक एक सेवन करे तो उरःक्षत, क्षय, ज्वर, खांसी, श्वास, हिचकी, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, मद, तृषा, शोष, पसवाडे का शूल, अरुचि का रोग, प्लीहा (तापतिल्ली), आढचवात, रक्तपित्त, ज्वर और क्षय इन का नाश करे ऐसी यह एलादिगुटिका वृष्य और तृप्ति करनेवाली है ॥

द्राक्षादिघृत

द्राक्षायाः प्रस्थमेकं तु मधुकस्य पलाष्टकम् । पचेत्तोयाढके शुद्धे पादशेषेण तेन तु ॥ पलिके मधुकद्राक्षे पिष्टं कृष्णापल-द्वयम । प्रदाय सर्पिषः प्रस्थं पचेत्क्षीरे चतुर्गुणे ॥ सिद्धे शीते पलान्यष्टौ शर्करायाः प्रदापयेत् । एतद् द्राक्षाघृतं सिद्धं क्षत-क्षीणसुखावहम् ॥ वातपित्तज्वरश्वासविस्फोटकहलीमकान् । प्रदरं रक्तपित्तं च हन्यान्मांसबलप्रदम् ॥

अर्थ–दाख ६४ तोले, मुलहटी ३२ तोले और जल २५६ तोले इन तीनों को एकत्र कर औटावे. जब चतुर्थांश जल रहे तब इस काढे को उतारके छान लेवे इस में मुलहटी और दाख इन को कूट २ कर चार चार तोले डाले पीपल का चूर्ण ८ तोले घी ६४ तोले और सब से चौगुना दूध डाले फिर चूल्हे पर चढायके घृत को सिद्ध करे अर्थात् बनावे जब तयार हो जावे तब उतारके शीतल कर लेवे फिर इस में ३२ तोले मिश्री मिलावे और सब को चलायके एक जीवकर लेय तो यह द्रा-क्षाघृत बनके तयार हो यह उरःक्षत करके क्षीण मनुष्यों को हितकारी है और वातपित्तज्वर, श्वास, विस्फोटक, हलीमक, प्रदर और रक्तपित्त इन को नाश करे तथा मांस को बलवान् करे ॥

बलादिघृत

घृतं बलानागबलार्जुनांबुसिद्धं सयष्टीमधुकल्कपादम् ।
हृद्रोगशूलक्षतरक्तपित्तं कासानिलार्शान् शमयत्युदीर्णान् ॥

अर्थ–खिरेटी, गगेरन और कोह इन के काढे में मुलहटी का कल्क मिलाय के घृत को बनावे इस घृत के सेवन करने से हृदयरोग, शूल, उरःक्षत, रक्तपित्त, खांसी, वादी और बवासीर ये अत्यंत बढे हुए हों तोभी नाश करे ॥

पथ्यादिघृत

पथ्याह्वनागबलयोः क्वाथे क्षीरसमे घृतम् ।

पयसा पिप्पलीवासाकल्कसिद्धं क्षते हितम् ॥

अर्थ—हरड और गगेरन इन के काढे में बराबर का दूध पीपल और अडूसा इन का कल्क डालके घृत बनावे यह घृत उरःक्षत क्षय को नाश करे ॥

गोक्षुराद्यघृत

श्वदंष्ट्रोशिरमंजिष्ठाबलाकाश्मर्यकट्तृणम् । दर्भमूलं पृष्ठिपर्णी बला सर्षपका स्थिरा॥ पलिकान्साधयेत्तेषां रसे क्षीरे चतुर्गुणे । कल्कैः स्वगुप्तर्षभकमेदाजीवंतिजीवकैः ॥ शतावर्यादिमृद्वीकाशर्कराश्रावणीवृषैः । प्रस्थं सिद्धं घृतं वातपित्तहृद्रोगगुल्मनुत् ॥ मूत्रकृच्छ्रप्रमेहार्शकासशोषक्षयापहम् । धनुःस्त्रीसंगभाराध्वखिन्नानां बलमांसदम् ॥

अर्थ—गोखरू, खस, मजीठ, खिरेटी, कंभीरा, कट्तृण, डाभ की जड, पृष्ठपर्णी, अतिबला, सरसों और सालपर्णी ये सब औषध चार २ तोले लेय इन का रस और चौगुणा दूध तथा सपेद लाजालू, सपेद सांठ, मेदा, जीवंती, जीवक, सतावर, दाख, मिश्री, मुंडी और अडूसा इन का कल्क और १ सेर घी इन को एकत्र करके घृतपाक करे इस घी के खाने से वात, पित्त, हृदयरोग, गोला, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, बवासीर, खांसी, शोष और क्षय इन को नाश करे ॥

अमृतप्राश्यावलेह

क्षीरधात्रीविदारीक्षुक्षीरीणां च तथा रसे । पचेत्समे घृतप्रस्थे मधुकैरिक्षुणान्वितैः ॥ द्राक्षाद्विचंदनोशीरशर्करोत्पलपद्मकैः । मधूककुसुमानंताकाश्मरीतृणसंज्ञकैः ॥ प्रस्थार्धं मधुनः शीतशर्करायास्तुलां तथा। पलार्धकांश्च संचूर्ण्य त्वगेलापद्मकेसरान्॥ विनीय तस्य संलिह्यान्मात्रां नित्यं सुयंत्रितः । अमृतप्राश्यमित्येतन्निर्मितं त्रिपुरारिणा ॥ क्षीरमांसाशिनो हंति रक्तपित्तक्षतक्षयान् । तृष्णारुचिश्वासकासछर्दिदाहिक्काप्रमर्दनम् ॥ मूत्रकृच्छ्रज्वरघ्नं च बल्यं स्त्रीरतिवर्द्धनम् ॥

अर्थ—दूध, आवलों का रस, विदारी कंद का रस, ईख का रस, क्षीर वृक्षों का रस२, तथा १ सेर घी इन सब को मिलायके उत्तम विधि से पचावे. फिर इस में मुलहटी,

ईख, दाख, चंदन, लालचंदन, नेत्रवाला, मिश्री, कूट, पद्माख, महुआ के फूल, धमासा, कंभारी और कत्तृण इन का चूर्ण डालके अवलेह बनावे जब शीतल हो जावे तब ३२ तोले सहत और ४०० तोले मिश्री और दालचीनी, पत्रज, नागकेशर इन प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले डालके धर रखे. इस में से अग्नि का बलाबल विचारके मात्रा खाने को देवे. दूध और मांस इत्यादिक पदार्थ पथ्य में देवे तो रक्तपित्त, क्षतक्षय, प्यास, अरुचि, श्वास, खांसी, वांति, हिचकी, मूत्रकृच्छ्र और ज्वर इन का नाश करे और बल तथा स्त्रियों में प्रीति इस के सेवन से बढती है. इस को अमृतप्राश्यावलेह कहते हैं ॥

रसराज

मुक्ताप्रवालरसहेमशिताभ्रकांतं वंगं मृतं सकलमेतदलं विभाव्य । छिन्नारसेन च वरीसलिलेन सप्त पश्चाददेन्मधुहविर्मरिचेन साकम् ॥ लिह्यादुरःक्षतहरं रसराजकाख्यं माषप्रमाणमतनूद्भवहेतुमेनम् ॥

अर्थ--मोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, काला अभ्रक, कांतलोह और बंग इन सब की भस्म समान भाग लेवे. इन को गिलोय और सतावर के रस की पृथक् २ सात सात दिन भावना देवे फिर इस रसराज में से१ मासे की मात्रा सहत, घी और काली मिरचों का चूर्ण इन के साथ देवे तो उरःक्षत का नाश करे तथा कामदेव को प्रदीप्त करे है ॥

उरोमंथिक्षती लाजान्पयसा मधुसंयुतान् । सद्य एव पिबेत् जीर्णे पयसाद्यात्सशर्करम् ॥ पार्श्ववस्तिरुजि त्वल्पपित्ताग्निस्तान् सुरायुतान् ॥

अर्थ--उरःक्षत क्षयरोगी को खीलों को दूध और सहत के साथ भक्षण करे, जब ये पच जावे तब मिश्री मिलायकर दूध पीवे तथा पसवाडा और बस्ती इन में शूल तथा अग्नि और पित्त ये मंद होवे तो उन रोगियों को मद्य के साथ धान की खील खानी चाहिये ॥

क्षयरोग में पथ्य

दोषाधिकस्य बलिनो मृदुशुद्धिरग्रे गोधूममुद्गचणकावनशालयश्च । छागानि मांसनवनीतपयोघृतानि क्रव्यादमांसमपि जांगलजा रसाश्च ॥ मार्त्तंडचन्द्रकिरणैः प्रतिशोषितानि लेह्यानि

पक्कपललानि सुचूर्णितानि । रागाः सकांबलिकखांडववेसवारा भक्ष्याः शशांककिरणैर्मधुरो रसश्च ॥ पक्कानि मोचपनसाम्रफलानि धात्रीखर्जूरपौष्करपरूषकनारिकेरम्। सौभाञ्जनं बकुलकं नवतालसस्यद्राक्षाफलानि भिषजापि इमानि दद्यात्॥ सिंहास्यपत्रमपि गोमहिषीघृतं च छागाश्रयश्च हितदंतकमूत्रलेपः । मत्स्यंडिकाशिखरणीमदिरारसालाः कर्पूरकं मृगमदः शितिचंदनं च ॥ अभ्यंजनानि सुरभीण्यनुलेपनानि स्थानानि वेश्मरचनान्यवगाहनानि । हर्म्यं स्रजः स्मरकथा मृदुगंधवाहः शीतानिलास्यमपि चंद्ररुजो विपंची ॥ संदर्शनं मृगदृशामपि हेमपूर्णं मुक्तामणिप्रचुरभूषणधारणं च । होमप्रदानममरद्विजपूजनानि दिव्यानुपानमपि पथ्यगणः क्षयार्त्ते ॥

अर्थ–जो दोषाधिक क्षयरोगी बलवान् हो तो प्रथम मृदु विरेचन आदि से शुद्धि करे तथा गेहूँ, मूंग, चना, वन के शाली (लाल चावल), बकरे का मांस, मक्खन, दूध, घी, कच्चे मांस भक्षण करनेवाले पक्षियों का मांस, जंगली जीवों का मांस, रस, सूर्य की किरणों से तपे हुए तथा चंद्रमा की किरणों से शीतल ऐसे लेह्य पदार्थ, पक्क करे हुए तथा बारीक करे हुए मांस, खांडवादि, राग और कांबलिक (मूल और फल इन के काढे में समभाग तिल पुष्पों की खटाई डालते हैं वह) वेसवार (गरम मसाला) [तवेड] पने, चंद्रमा की किरण, मीठे रस, पके हुए केले की गहर, कटहर, पके आम, आंमरे, खजूर (छुहारे), पुहकर मूल, फालसे, नारियल, सहजना, मौलसरी, नवीन ताल के फल, हरी दाख, अडूसे के पत्ते, गौ और भैस का घी, सर्वदा बकरियों में रहना [अथवा बकरे की मेंगनी और मूत्र का लेप], मत्स्यंडी (मिश्री), सिखरन, मद्य (दारू), रसाला (मिश्री काली मिरच मिलायके बनाते हैं वह पदार्थ), कपूर, कस्तूरी, सपेद चंदन, उवटना, सुगंधित लेप, उत्तम सुंदर और मनोहर ऐसे स्थान, तथा घर (न्हाना और वस्त्रालंकारादि से सजना), गोता मारना, फूल माला का धारण करना, काम के बढानेवाली वार्त्ता का कहना, शीतल मंद सुगंध पवन, नाच, गान, चंद्रमा की चांदनी, वीणा (बीनबाजा) स्त्रियों का दर्शन तथा सुवर्ण (सुवर्ण के वर्क), मोती, हीरा पन्नाआदि रत्न के गहनों का धारण तथा होम दान देव और ब्राह्मण इन की पूजा और उत्तम अनुपान, यह सब क्षयरोग में पथ्यगण कहा है. क्षयरोग को भाषा में खई की बिमारी कहते हैं कोई कोई इस को राजरोग कहते हैं ॥

क्षयपर अपथ्य

विरेचनं वेगविधारणं च श्रमश्च सुस्वेदनमंजनं चाप्रजागरं साहसकर्मसेवा रूक्षं च पानं विषमाशनं च॥तांबूलकालिंगकुलिंगमांसं रसोनवंशांकुररामठानि। अम्लानि तिक्तानि कषायकाणि कटूनि सर्वाणि च पत्रशाकम्॥ क्षारान्विरुद्धाध्यशनानि बिंबी कर्कोटकं चापि विदाहि सर्वम्। कुटिल्लकं कृष्णमपि क्षयेषु विवर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ–विरेचन, मलमूत्रादि वेगों का धारण, परिश्रम, स्वेदन, अंजन, रात्रि में जागना, साहस (जो अपनी सामर्थ्य से न हो सके उस को करना) रूखा अन्न, रूखा पान, विषमाशन, तांबूल भक्षण, तरबूज, कुलथी, (कुलंग पक्षी का मांस) उडद, लहसन, वंश की कोपल, हींग, खट्टे पदार्थ, कडुए और कषेले पदार्थ, तथा सब चर्परे रस, साग, पत्तों का क्षार, विरुद्ध भोजन, अध्यशन, कंदूरी (सैंम), ककोडा (करेला), संपूर्ण विदाही पदार्थ, लाल और सपेद पुनर्नवा ये पदार्थ क्षयरोगी को सेवन करना वर्जित है ॥

इति श्रीबृहन्निघंण्टुरत्नाकरे उरःक्षतनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

कासकर्मविपाकः

द्रव्याणि चाल्पसाराणां स्तेयं कृत्वान्यवेषतः ।
चरेत्सांतपनं कृच्छ्रमित्येवं मनुरब्रवीत् ॥

अर्थ–जो प्राणी दुर्बल (गरीब) मनुष्यों का द्रव्य चुराता है इस पाप के प्रभावसे इस जन्म में वह प्राणी कफरोगी होता है. उस को इस पाप के प्रायश्चित्त करने को कृच्छ्र और सांतपन व्रत करना चाहिये ऐसे मनुमहाराज की आज्ञा है ॥

दूसरा प्रकार

त्रपुहारी च पुरुषो जायते श्लेष्मलः सदा ।
उपोष्य दिवसं सोपि दद्यात्पलशतं त्रपु ॥

अर्थ–जो प्राणी पूर्वजन्म में रांगे की चोरी करता है वो इस जन्म में कफरोगी होता है उस को एक दिन उपवास करके ४०० तोले रांगे का दान करना चाहिये ॥

तीसरा प्रकार

नित्यानुष्ठानविमुखः कफरोगी भवेन्नरः । पराभवं स चाप्नोती-
त्याह वै भगवान् यमः ॥ तच्छांतये मासमेकं यावकं भक्षयेन्नरः ।
सहस्रनामपाठश्च होमश्चाष्टोत्तरायुतम् ॥ नाममंत्रेण कुर्वीत च-
र्वाज्यं च हविर्भवेत् ॥

अर्थ—जो प्राणी नित्यकर्म (संध्यावंदनादि) नहीं करे वो कफरोगी होता है उस को कफ से अथवा शत्रु से पीडा होती है इस प्रकार यमऋषि ने कहा है. इस पाप की शांति के अर्थ १ महीने पर्यंत जों खाय और विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा अष्टाक्षरी वा द्वादशाक्षरीनाममंत्र से चरु और आज्य (घृत) इन से १०८ आहुती देवे इस प्रकार विधि करनी चाहिये ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

सूर्ये कुलीरजाते बुधेन दृष्टे विगतनेत्रः ।
कफमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः ॥

अर्थ—जन्मसमय में सूर्य कर्कराशि में बैठा होय और बुध उस को देखता होय तो नष्टदृष्टि अर्थात् अंधा होय अथवा कफवातरोगी होय अथवा चौरी और चंचलपने (चालाकी) के कर्म करे ॥

कारणसम्प्राप्ति और निरुक्ति

धूमोपघाताद्रजसस्तथैव व्यायामरूक्षान्ननिषेवणाच्च । विमार्ग-
गत्वादपि भोजनस्य वेगावरोधात्क्षवथोस्तथैव॥ प्राणो ह्युदाना-
नुगतः प्रदुष्टः संभिन्नकांस्यस्वनतुल्यघोषः । निरेति वक्त्रा-
त्सहसा सदोषो मनीषिभिः कास इति प्रदिष्टः ॥

अर्थ—नाक मुख में धूर वा धूंआ जाने से दंड, कसरत, रूक्षान्न इन के नित्य सेवन करने से, भोजन के कुपथ्य से, मलमूत्र के रोकने से, उसी प्रकार छिक्का अर्थात् (छींक) आती हुई के रोकने से, प्राणवायु अत्यंत दुष्ट होकर और दुष्ट उदानवायु से मिलकर कफपित्तयुक्त अकस्मात् मुख से बाहर निकले उस का शब्द फूटे कांस्यपात्र के समान होय उस को विद्वान् लोग कांस (खांसी) कहते हैं ॥

संख्यारूपसंप्राप्ति

पंच कासाः स्मृता वातापित्तश्लेष्मक्षतक्षयैः ।
क्षयायोपेक्षिताः सर्वे बलिनश्चोत्तरोत्तरम् ॥

अर्थ–वात, पित्त, कफ, क्षत और क्षय ऐसे पांच प्रकार की खांसी होती हैं इन की औषध न करे तो सर्व का क्षयरूप हो जाय है ये उत्तरोत्तर बलवान् जाननी जैसे वात से पित्त की पित्त से कफ की कफ से क्षत की क्षत से क्षय की खांसी प्रबल है ॥

पूर्वरूप

पूर्वरूपं भवेत्तेषां शूकपूर्णगलास्यता ।
कंठे कंडूश्च भोज्यानामवरोधश्च जायते ॥

अर्थ–मुख और गले में कांटेसे पड जाय तथा कंठ में खुजली चले भोजन करा न जाय ये खांसी होनेहारे के लक्षण हैं ॥

वातिक कासनिदान

हृच्छंखमूर्धोदरपार्श्वशूलीक्षामाननः क्षीणबलस्वरौजाः ।
प्रसक्तवेगस्तु समीरणेन भिन्नस्वरः कास्यति शुष्कमेव ॥

अर्थ–हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर, पसवाडा इन में शूल चले, मुह उतर जाय, बल, स्वर, पराक्रम ये क्षीण पड जांय वारंवार खांसी का उठना,स्वरभेद और सूखी खांसी उठे यह वात की खांसी के लक्षण हैं॥

कासचिकित्सापरिभाषा

रूक्षस्यानिलजं कासमादौ स्नेहैरुपाचरेत् । सर्पिभिर्वस्तुभिः पेया क्षीरे यूषरसादिभिः ॥ ग्राम्यानूपोदकैः शालियवगोधूमषष्टिकैः । रसैर्मांसात्मगुप्तानां यूषैर्वा भोजयेद्धितैः ॥

अर्थ–रूक्ष रोगी के वादी की खांसी को प्रथम स्नेहपानादिक उपचार करे· तथा घृत, बस्तिकर्म, इत्यादिक करे और पेया, क्षीर, यूष, रस तथा ग्राम के जीव, अनूप (अनूपदेश के जीव), चावल, जों, गेहूं, साठी ये धान्य तथा मांस और कौंछ इन का रस अथवा यूष इन को भोजन करे ॥

रुद्रपर्पटी

शुद्धसूतं द्विधा गंधं संमर्द्यैषां द्रवैः पुनः । वातारिरार्द्रकं शृंगी काकमाच्यादिकार्णिका ॥ दिनैकं मर्दयेत् खल्वे पाचयेत्पर्पटीं तथा । द्वयोः पादं मृतं ताम्रं क्षिप्त्वा मृद्वग्निना पचेत् ॥ रक्तवर्णं भवेद्यावत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत् । प्रक्षिपेत्कदलीपत्रे स्थाप्य स्निग्धपुटे पुनः ॥ आच्छाद्य तेन योगेन अधश्चोर्ध्वं च

गोमयम् । दग्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विषं क्षिपेत् ॥ रुद्रपर्पटिका ह्येषा देया गुंजाद्वयं द्वयम् । चूर्णितं कटुनिर्गुंड्या मूलनिष्कद्वयं पिबेत् ॥ भृंगराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह । वातकासान्निहंत्याशु सर्वथैव न संशयः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, दोनों को मिलायके कजली करे फिर इस को अंड की जड, काकडासींगी, मकोय और इन के रस में एक २ दिन खरल करे फिर इस को अग्निपर तपायके पर्पटी बनावे फिर इस पर्पटी का चतुर्थांश ताम्रभस्म मिलावे और मंदाग्निपर पचन करे जब लालरंग हो जावे तब उतारके केले के पत्तेपर डाल देवे और तत्काल दूसरे पत्ते से ढकके गोवर से दाब देय तो पतली पर्पट्टी हो जावेगी जब शीतल हो जाय तब निकालके चूर्ण करके धर रखे इस में चतुर्थांश सिंगिया विष मिलावे. यह रुद्रपर्पटी दो रत्ती अनुपान से देवे और इस के ऊपर निर्गुंडी के जड का चूर्ण छः मासे देवे अथवा भांगरे का रस और सहत इन के साथ देवे तो सर्व वादी की खांसी नाश करे ॥

भूतांकुशरस

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगंधकम् । भागत्रयं मृतं ताम्रं मरीचं दशभागिकम् ॥ मृताभ्रस्य चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् । भूतांकुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन मर्द्दयेत् ॥ रसो भूतांकुशो नाम माषैको वातकासजित् । अनुपानं लिहेत्क्षौद्रं बिभीतकफलत्वचः ॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भाग, गंधक २ भाग, तामे की भस्म ३ भाग, मिरच १० भाग, अभ्रक ४, विष १ और नकछिकनी १ भाग ले इन सब को एकत्र चूर्ण कर नीबू के रस में खरल करे. इस भूतांकुशरस की मात्रा १ तोले की है इस को बहेडे का चूर्ण और सहत इन के साथ देवे तो वादी की खांसी दूर होय॥

सठ्यादि लेह

सठी शृंगी कणा भार्ङ्गी गुडवारिदयासकैः ।
सतैलैर्वातकासघ्नो लेहोयमपराजितः ॥

अर्थ-कचोरा, काकडासिंगी, पीपली, भारंगमूल, गुड, नागरमोथा और धमासा इन का लेह करके तेल डालके सेवन करने से वात का नाश करता है ॥

भाङ्गर्यादिलेह

भार्ङ्गी द्राक्षा शठी शृंगी पिप्पली विश्वभेषजम् ।
गुडतैलयुतो लेहो हितो मारुतकासिनाम् ॥

अर्थ–भारंगी, दाख, कचूर, काकडासिंगी, पीपल और सोंठ इन का गुड मिलाय-के अवलेह बनावे इस में तेल डालके सेवन करे तो वादी की खांसी दूर होय ॥

विश्वादिलेह

विश्वा भार्ङ्गी कणा सोमवल्कद्राक्षासठीसिताः ।
लीढा तैलेन वातोत्थं कासं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ–सोंठ, भारंगी, पीपल, कायफल, दाख और कचूर इन का अवलेह तेल मिलायके सिद्ध करे इस में मिश्री मिलायके सेवन करे तो घोर दुस्तर वादी की खांसी नाश होय ॥

दशमूलीघृत

दशमूलीकषायेण भार्ङ्गीकल्कैर्घृतं पचेत् ।
दशतित्तिरनिर्व्यूहैस्तत्परं वातकासनुत् ॥

अर्थ–दशमूल का काढा, भारंगी का कल्क तथा दश तीतरों के मांस का काढा इन में घी डालके सिद्ध करे यह वात की खांसी नाश करने में उत्तम है ॥

कट्फलादिपेय वातकफकासोंपर

कट्फलं कट्तृणं भार्ङ्गी मुस्तधान्यं वचाभया । शुंठी पर्पटकं शृंगी सुराह्वं च जले शृतम् ॥ मधुहिंगुयुतं पेयं कासे वातक-फान्विते । कंठरोगे मुखे शूले हिक्काश्वासज्वरेषु च ॥

अर्थ–कायफल, रोहिषतृण, भारंगी, नागरमोथा, धनियां, बच, हरड, सोंठ, पित्त-पापडा, काकडासिंगी, देवदार इन के काढे में सहत, हींग डालके पीवे तो वादी कफ की खांसी, कंठरोग, मुखरोग, शूल, हिचकी, श्वास और ज्वर इनपर परमोत्तम है ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

शुंठी दुरालभैरंडमूलं कर्कटशृंगिका । चचुंदरो देवदारुश्चूर्णमेषां समांशतः ॥ उष्णेन वारिणा किंवा तैलेनालोड्य भक्षितम् ।
वातजं श्लेष्मजं कासं नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ–सोंठ, जवासा, अंड की जड, काकडासिंगी चचूंदर, देवदारु इन का समभाग चूर्ण कर गरम जल से अथवा तेल से सेवन करे तो वातजन्य तथा कफजन्य खांसी का नाश होय ॥

चित्रकादिलेह

चित्रकं पिप्पलीमूलं व्योषं मुस्ता दुरालभा। शठी पुष्करमूलं च श्रेयसी सुरसा वचा ॥ भार्ङ्गी छिन्नरुहा रास्ना कर्कटाख्या च कर्षिका। कल्कोग्निदग्धाद्वितुलां कषाये पलविंशतिः॥ मत्स्यंडिकाया दश वा सर्पिषः कुडवं पचेत्। सिद्धे सीते पृथक् क्षौद्रपिप्पलीकुडवान्वितम् ॥ चतुःपलं तुगाक्षीर्याश्चूर्णं तत्र प्रदापयेत्। लेहयेत्कासहृद्रोगश्वासगुल्मनिवारणम् ॥

अर्थ–चीते की छाल, पीपल, पीपरामूल, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, धमासा, कचूर, पुहकरमूल, हरड, तुलसी, वच, भारंगी, गिलोय, रास्ना, काकडासिंगी इन को समान भाग ले कल्क और राख ८० तोले इन को औषधों के ८०० तोले काढे में डाले और मिश्री ४० तोले तथा घी ६४ तोले डालके उस काढे को पचावे तो अवलेह सिद्ध होय इस में सहत, पीपल और वंशलोचन ये प्रत्येक १६ तोले डाले और सेवन करे तो खांसी, हृदय, श्वास और गोला इन को दूर करे ॥

शुंठ्यादि लेह वातकासपर

चूर्णिता विश्वदुःस्पर्शा शृंगीद्राक्षा शठी सिता।
लिहेत्तैलेन वाताढ्यं कासं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ–सोंठ, धमासा, काकडासिंगी, द्राक्षा, कचूर और मिश्री इन को तेल मिलायके अवलेह बनावे इस के सेवन करने से दुस्तर वाताधिक खांसी को नाश करे ॥

दशमूलका काढा

दशमूली शृता विश्वा कासहिक्कारुजापहा।
यवागू दीपनी वृष्या वातरोगविनाशिनी ॥

अर्थ–दशमूल, सोंठ इन का काढा खांसी और हिचकी इन का नाशक है. और यवागू छः गुन पानी डालके करा हुआ पतला भात यह दीपन, कामोद्दीपक तथा वातरोग नाश करनेवाला है ॥

पंचमूलकाढा

पंचमूलीकृतः क्राथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः ।
रसान्नमश्नतो नित्यं वातकासमुदस्यति॥

अर्थ–शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू इन का काढा पीपल का चूर्ण डालके सेवन करे तथा रसयुक्त भोजन करे तो वात खांसी का नाश करे ॥

कर्कटरस

रसं कर्कटकानां वा घृतभृष्टं सनागरम् ।
वातकासप्रशमनं शृंगीमत्स्यस्य वा पुनः ॥

अर्थ–केकडे के मांसरस को घी में भून उस में सोंठ डालके देवे अथवा शृंगी-जाति की मछली का रस घृत में भून सोंठ को डालके देवे तो वात की खांसी दूर करे ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

शुंठी दुरालभा द्राक्षा कर्चूरस्तवराजकम् ।
वातकासं निहंत्याशु तैलभुक्तं हि चूर्णकम् ॥

अर्थ–सोंठ, धमासा, दाख, कचूर और यवाशशर्करा (शीराखिस्त) इन का चूर्ण तेल में मिलायके देवे तो वादी की खांसी का नाश होय ॥

पित्तकासनिदान

उरोविदाहज्वरवक्रशोषैरभ्यर्दितस्तिक्तमुखस्तृषार्तः ।
पित्तेन पीतानि वमेत्कटूनि कासेन पांडुः परिदह्यमानः ॥

अर्थ–पित्त की खांसी से हृदय में दाह, ज्वर, मुख का सूखना इन से पीडित हो मुख कडुआ रहे प्यास लगे पीले रंग की और कडुवी ऐसी पित्त के प्रभाव से वमन होय रोगी का पीला वर्ण हो जाय और सब देह में दाह होय ॥

सिंहास्यादिकाढा

सिंहास्यामृतसिंहीनां क्राथं मधुयुतं पिबेत् ।
पिबेत्सपित्तकफजे कासे श्वासे ज्वरे क्षये ॥

अर्थ–अडूसा, गिलोय और कटेरी इन के काढे में सहत डालके पीवे तो पित्त-कफात्मक खांसी, श्वास, ज्वर और क्षय इन का नाश करे ॥

बलादिकाढा

बलाद्विबृहतीद्राक्षावासाभिः क्वथितं जलम् ।
पित्तकासापहं पेयं शर्करामधुयोजितम् ॥

अर्थ-खिरेटी, कटेरी, बडी कटेरी, दाख और अडूसा इन के काढे में सहत और मिश्री डालके सेवन करे तो यह पित्तकास को नाश करे ॥

शठ्यादिकाढा

शठी ह्रीबेरबृहती शर्करा विश्वभेषजम् ।
पक्त्वा रसे पिबेत्पूतं सघृतं पित्तकासनुत् ॥

अर्थ-कचूर, नेत्रवाला, कटेरी और सोंठ इन के काढे में घी और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी को नाश करे ॥

शरादिकाढा

शरादिपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ-शर, ईख, डाभ, कांस इन की जड का काढा करके उस में दूध डालके औटावे फिर सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी का नाश करे ॥

शठ्यादिकाढा

सठीद्विपंचमूलस्य पिप्पलीद्राक्षयोस्तथा ।
कषायेण शृतं क्षीरं पिबेत्समधुशर्करम् ॥

अर्थ-कचूर, दशमूल, पीपल और दाख इन के काढे में औटा हुआ दूध सहत और मिश्री मिलायके देवे तो पित्त की खांसी दूर होय ॥

त्वक्क्षीरलेह

त्वक्क्षीरपिप्पलीलाजाद्राक्षाजलदशर्कराः ।
सर्पिर्मध्वावलेहोयं पित्तकासविनाशनः ॥

अर्थ तवाखीर, पीपल, खील, दाख, नागरमोथा इन के काढे में मिश्री, घी और सहत डालके पीवे तो पित्त की खांसी दूर होवे ॥

कंटकार्य्यादिकाढा

कंटकारीयुगं द्राक्षावासाकर्चूरबालकैः ।

नागरेण च पिप्पल्या कथितं सलिलं पिबेत् ॥
शर्करामधुसंयुक्तं पित्तकासहरं परम् ॥

अर्थ–कटेरी, बडी कटेरी, दाख, अडूसा, कचूर, नेत्रबाला, सोंठ और पीपल इन के काढे में मिश्री और सहत मिलायके देवे तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

पिप्पल्यादिचूर्ण

पिप्पलीतवराजश्च तवक्षीरं त्रयं समम् ।
मधुसर्पियुतं भुक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ–पीपर, यवास, शर्करा और तवाखीर इन को समान भाग लेवे सब का चूर्ण करके सहत और घी मिलायके सेवन करे तो पित्त (गरमी) की खांसी दूर हो॥

मधुकादिचूर्ण

मधुकं पिप्पलीमूलं दूर्वाद्राक्षाकणासमम् ।
घृतेन मधुना युक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥

अर्थ–मुलहटी, पीपरामूल, दूर्वा, दाख और पीपल इन का समान भाग चूर्ण करके सहत के साथ खाय तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

अर्धावर्तितकाढा

अर्धावर्तितपानीयं सलाजं पिप्पली मधु ।
त्रयं सर्पियुतं भुक्तं पित्तकासविनाशकृत् ॥

अर्थ–अधोटा पानी, खील और पीपल इन का काढा करके उस में सहत और घी डालके पीवे तो पित्त की खांसी का निवारण होय ॥

मातुलिंगादिलेह

मातुलिंगरसो हिंगुत्रिफला मधुशर्करा ।
सर्पिर्मध्वावलेह्यायं पित्तकासविनाशकृत् ॥

अर्थ–बिजोरे का रस, हींग और त्रिफला इन का काढा सहत और मिश्री डालके देवे तो पित्त की खांसी को दूर करे ॥

खर्जूरादिलेह

खर्जूरं पिप्पली द्राक्षा सिता लाजाः समांशकाः ।
मधुसर्पियुतो लेहः पित्तकासहरः परः ॥

अर्थ–खजूर, पीपल, दाख, मिश्री और खील इन को समान भाग लेकर लेह

सिद्ध करे इस में सहत घी डालके सेवन करे तो पित्त की खांसी को नाश करे ॥

द्राक्षामलकादिलेह

द्राक्षामलकखर्जूरं पिप्पलीमरिचान्वितम् ।
पित्तकासहरं ह्येतल्लिह्यान्माक्षिकसंयुतम् ॥

अर्थ–दाख, आमला, खजूर, पीपल और मिरच इन को एकत्र चूर्ण कर सहत और घी के साथ खाने से पित्त की खांसी को नाश करे है ॥

क्षीरामलकघृत

महिष्यजाविगोक्षीरधात्रीफलरसैः समैः ।
सर्पिः प्रस्थं पचेद्युक्त्या पित्तकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–भैंस, बकरी और गौ इन का दूध और आमले का रस ये समान भाग ले इस में ६४ तोले घी मिलायके युक्ति से पचावे और सेवन करे तो यह घृत पित्त की खांसी को दूर करे ॥

रस

भस्मताम्राभ्रतीक्ष्णानां कासमर्दवरीरसैः ।
मुनिजैर्वेतसाम्लेन दिनं मद्ये तु पीडितम् ॥
निष्कार्धं पित्तकासार्तं भक्षयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ–ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म और कांतभस्म इन को एकत्र करके कसोंदी के रस की, सतावर और अगस्तिया अमलवेत और मद्य इन में घोटके दो मासे पित्तखांसी-वाले को देवे तो हित करे ॥

लोकेश्वररस

रसो लोकेश्वरोप्यत्र पिप्पलीमधुना सह ।
दातव्यो विनिहंत्येव पित्तकासं सुदारुणम् ॥

अर्थ–क्षयीरोग में जो लोकेश्वररस कह आये हैं उस को पीपल और सहत के साथ देवे तो दारुण पित्तखांसी को नाश करे ॥

कफकासनिदान

प्रलिप्यमानेन मुखेन सीदन् शिरोरुजार्त्तः कफपूर्णदेहः ।
अभक्तरुग्गौरवकंडुयुक्तः कासेद्भृशं सांद्रकफः कफेन ॥

अर्थ–कफ की खांसी से मुख कफ से लिपटा रहे मथवाय और सब देह कफ से

परिपूर्ण रहे अन्न में अरुचि शरीर भारी रहे कंठ में खुजली और रोगी वारंवार खांसे कफ की गांठ थूकने से सुख मालूम होवे ॥

कफकाससामान्यचिकित्सा

कफजे वमनं कार्यं कासे लंघनमेव च ।
शस्तापवाताप्रकृतिर्यूषाश्च कटुतिक्तकाः ॥

अर्थ-कफ की खांसी में प्रथम ही वमन करावे तथा लंघन कराना ये उपचार तथा मुख्यत्व करके वातरहित प्रकृति का रखना और चरपरे, कडुए ऐसे यूष देना इत्यादि उपचार करे ॥

नवांगयूष

मुद्गामलाभ्यां यवदाडिमाभ्यां कर्कंधुना मूलसशुष्ककेन ।
शुंठीकणाभ्यां सकुलित्थकेन यूषो नवांगः कफकासहंता ॥

अर्थ-मूंग, आमले, जो, अनार, बेर, सूखी मूली, सोंठ, पीपल और कुलथी इन का यूष करे यह नवांगयूष कफकास को नाश करे ॥

पिप्पल्यादिकाढा

पिप्पली कट्फलं शुंठी शृंगी भार्ङ्गी तथोषणम् । कारकं कंटकारी च सिंधुवारो यवानिका॥ चित्रको वासकश्चैषां कषायं विधिवत्कृतम् । कफकासविनाशाय पिबेत्कृष्णारजोयुतम् ॥

अर्थ-पीपर, कायफल, सोंठ, कांकडासिंगी, भार्ङ्गी, मिरच, अजमायन, कटेरी, निर्गुंडी, अजमोद, चित्रक और अडूसा इन के काढे में पीपल के चूर्ण की बुकनी डालके देवे तो कफकास को नष्ट करे ॥

पित्तश्लेष्मकास

वासकः स्वरसः पेयो मधुयुक्तो हिताशिना ।
पित्तश्लेष्मकृते कासे तालीसाद्यं च योजयेत् ॥

अर्थ-पित्तकफ की खांसी पर अडूसे का रस सहत मिलायके देवे और पथ्य से रहे अथवा तालीसादि चूर्ण देवे तो इस को नष्ट करे ॥

अवलेह

शठी सातिविषा मुस्ता शृंगी कर्कटकस्य च । अभयां

शृंगबेरं च समं शुंठ्यादि पेषयेत् ॥ हिंगुसैंधवसंयुक्तं तक्रो-
दकपरिप्लुतम् । श्लेष्मकासी लिहेदेवमवलेहं मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ—कचूर, अतीस, नागरमोथा, कांकडासिंगी, हरड, अदरख और सोंठ ये समान भाग लेकर चूर्ण करे इस छाछ के जल में हींग और सेंधानिमक मिलायके वारंवार चाटने को देवे तो कफ की खांसी नष्ट होय इस में संदेह नहीं है ॥

बिभीतकधारण

बिभीतकं घृताभ्यक्तं गोशकृत्परिवेष्टितम् ।
स्विन्नमेतन्निहंत्याशु कासमास्यविधारितम् ॥

अर्थ—बहेडे को घृत में भूनके उस पर गोबर लपेट पुटपाक कर लेवे फिर इस से गोबर दूर करके तोड डाले इस के टुकडों को मुख में रखे तो सर्व प्रकार की खांसी नष्ट होय ॥

भद्रमुस्तादिचूर्ण

भद्रमुस्ताकणाचूर्णं समांशं मधुना सह ।
निहंति भक्षितं शीघ्रं श्लेष्मकासं न संशयः ॥

अर्थ—नागरमोथा और पीपल इन का समान भाग चूर्ण कर सहत से खाय तो कफ की खांसी को नष्ट करे इस में संदेह नहीं है ॥

पथ्यादिचूर्ण

पथ्या विश्वा कणा मुस्ता देवदारुः समांशकम् ।
एतच्चूर्णं मधूपेतं श्लेष्मकासापनुत्तये ॥

अर्थ—हरड, सोंठ, पीपल, नागरमोथा और देवदारु इन का समान भाग चूर्ण करके सहत में मिलायके चाटे तो कफ की खांसी नष्ट होय ॥

चित्रकादिचूर्ण

चित्रकं पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ।
एतच्चूर्णं समं युक्तं मधुना श्लेष्मकासनुत् ॥

अर्थ—चित्रक की छाल, पीपरामूल, पीपल और गजपीपल इन के चूर्ण को एकत्र समान भाग लेवे. इस में यथायोग्य मात्रा सहत में मिलायके देवे तो कफ की खांसी को नष्ट करे ॥

शिलादिलेह

शिला व्योषाभयाहिंगुविडंगं सैंधवं समम् ।
लेह्यं साज्यमधुश्वासहिक्काकासेषु शस्यते ॥

अर्थ–मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, वायविडंग और सेंधानिमक इन के चूर्ण को सहत और घी इन में मिलायके श्वास, हिचकी और खांसी इन पर देना चाहिये ॥

व्योषादिघृत ।

व्योषाजमोदचित्रकजीरकषड्ग्रंथिचव्यकल्कितं सर्पिः ।
कफकासश्वासहरं वासकरससाधितं समधु ॥

अर्थ--सोंठ, मिरच, पीपर, अजमोद, चित्रक, जीरा, वच और चव्य इन को समान भाग ले सब का कल्क करके उस में घी, अडूसे का रस और सहत डालके सेवन करे तो कफ संबंधी खांसी, श्वासों को नाश करे ॥

कटुत्रयादिचूर्ण

कटुत्रयं पावकदेवदारुरास्नाविडंगत्रिफलामृतानाम् ।
चूर्णं समांशं सितया समेतं कासं जयेद्विष्णुगदेव दैत्यान् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, चीते की छाल, देवदारु, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आवला इन का चूर्ण मिश्री मिलायके देवे तो खांसी का नाश करे ॥

बोलबद्धरस

रसभस्म विषं तुल्यं बोलाद्याद्विगुणं मतम् । बोलातालकपाठाग्निककौंटीमाक्षिकं निशा ॥ कंटकारीयवक्षारं लांगली जीरसैंधवम् । मधूकसारसं चूर्णं सप्ताहं चार्द्रकद्रवैः॥ छायायां भावयेत्पश्चात्सप्ताहं चित्रकद्रवैः । गुटिका बदराकारा श्लेष्मकासापनुत्तये ॥ भक्षयेद्बोलबद्धोयं रसः स्यात् श्वासपांडुजित् ॥

अर्थ–पारद की भस्म और सिंगियाविष दोनों समान भाग लेवे तथा बोल, हरताल, पाढ, काकडासिंगी, सुवर्णमाक्षिक, हलदी, कटेरी, जवाखार, कलयारी, जीरा, सेंधानिमक और मूलहटी इन के चूर्ण को सात दिन अदरख के रस में खरल करे फिर छाया में सुखायके सात दिन चीते के रस में खरल कर बेर की बराबर गोली बनाय लेवे इस को कफरोग, श्वास और पांडुरोग इन पर देवे ॥

दंतीधूम

दंतिमूलस्य धूमं वा निर्गुंडीं चापि योजयेत् ।
श्लेष्मकासं न संदेहो धूमपानेन तत्क्षणात् ॥

अर्थ–दंती की जड का धूआं अथवा निर्गुंडी का धूआं पीवे तो इस धूमपान के करने से कफ की खांसी दूर हो इस में संदेह नहीं है ॥

उरःक्षतकासनिदान

अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्व गजनिग्रहैः ।
रूक्षस्योरःक्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत् ॥

अर्थ–बहुत स्त्रीसंग करने से, भारके उठाने से, बहुत मार्ग चलने से, मल्लयुद्ध (कुस्ती) करने से, हाथी घोडा दौडने को रोकने से रूक्ष पुरुष का हृदय फूटकर वायुकोप होकर खांसी को प्रगट करे ॥

क्षतकासलक्षण

स पूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवति शोणितम् । कंठेन रुजतात्यर्थं विभिन्नेनेव चोरसा ॥ सूचीभिरिव तीक्ष्णाभिस्तुद्यमानेन शूलिना । दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभितापिना ॥ पर्वभेदज्वरश्वासतृष्णावैवर्ण्यपीडितः । पारावत इवाकूजन्कासवेगात्क्षयो भवेत् ॥

अर्थ–सो पुरुष प्रथम सूखा खांसे पीछे रुधिर मिला थूके कंठ अत्यन्त दूखे हृदय फूटे सदृश मालूम होय और तीखी सुईकेसे चभका चले और उस को हृदय का स्पर्श सुहाय नहीं दोनों पसवाडों में शूल होय यह वाग्भट का मत है तथा दाह हो उस रोगी के गांठ गांठ में पीडा होय. ज्वर, श्वास, प्यास, स्वरभेद इन से पीडित होय क्षतजन्य खांसी के वेग से रोगी कबूतर की तरह घुंघुं शब्द करे ॥

क्षयकासनिदान

विषमासात्म्यभोज्यातिव्यवायाद्वेगनिग्रहात् ।
घृणिनां शोचतां नृणां व्याप्यन्तेऽग्नौ त्रयो मलाः ॥
कुपिता क्षयजं कासं कुर्युर्देहक्षयप्रदम् ॥

अर्थ–कुपथ्य और विषमाशन के करने से अतिमैथुन मलमूत्रादिक वेगधारण इन से अति दया करने से अति शोक करने से अग्नि मन्द होय (अर्थात् आहार

थंककर वायु कुपित हो अग्नि को नष्ट करे) तब तीनों दोष कोप को प्राप्त हो क्षयज-न्य देह का नाशक ऐसी खांसी को प्रगट करे तब वह खांसी देह को क्षीण करे ॥

क्षयकासलक्षण

सगात्रशूलज्वरदाहमोहात्प्राणक्षयं चोपलभेच्च कासी । शुष्कं विनिष्ठीवाति दुर्बलस्तु प्रक्षीणमांसो रुधिरं सपूयम् ॥ तं सर्व-लिंगं भृशदुश्चिकित्स्यं चिकित्सितज्ञा क्षयजं वदंति ॥ इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः । साध्यो बलवतां वा स्या-द्याप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः ॥

अर्थ–शूल, ज्वर, दाह और मोह ये होय तब यह प्राण का नाश करे सूखी खांसी रुधिर मांस शरीर को सुखावे रुधिर और राध थूके ये सर्व लक्षणयुक्त और चिकित्सा करने में अति कठिन ऐसे इस खांसी को वैद्य क्षयज कहते हैं. इस प्रकार यह क्षयजकास (खांसी) क्षीण पुरुष की घातक होय है बलवान् पुरुष के असाध्य अथवा याप्य (साध्यासाध्य) होय है क्षतज खांसीभी इसी प्रकार की होती है यदि वैद्यादि पादचतुष्टयसंपन्न हो और ये दोनों प्रकार की खांसी नवीन होय तौ कदाचित् साध्य होय और बूढे पुरुष के जराकास अर्थात् धातुक्षीण होने से भई जो खांसी सो सब प्रकार की याप्य है सो सब इंद्रियके अंतर्गत जाननी. अब कहते हैं कि वात, पित्त, कफ ये तीन खांसी साध्य हैं और बाकी तीन याप्य हैं वे पथ्य सेवन करने से नाश होती और अवज्ञा करने से असाध्य हो जाती है ॥

साध्यासाध्यविचार

न वै कदाचित्साध्येतामपि पादगुणान्वितौ ।
स्थविराणां जराकासः सर्वो याप्यः प्रकीर्तितः ॥
त्रीन्पूर्वान्साधयेत्साध्यान्पथ्यैर्याप्यांस्तु यापयेत् ॥

अर्थ–यदि नवीनोत्पन्न क्षयकासरोगी वैद्य परिचारक और द्रव्य इत्यादि गुणों करके युक्त होय तो वह रोगी कदाचित् अच्छा होय और वृद्ध रोगी का जो जराकास होय तो सर्व याप्य जानना तथा वातादिक जनित तीन प्रकारके जो खांसी है वह साध्य है वह औषधों करके अच्छी हो तथा याप्य खांसी को पथ्य करके न्यून करे॥

चिकित्साप्रक्रिया

कासे तु क्षतजे बल्ये पाचनैर्बृंहणैरपि ।
शमनैः पित्तकासघ्नैरन्यैश्च मधुरौषधैः ॥

अर्थ-क्षयकास को पाचन, पौष्टिक और शमन तथा पित्तकास को शमन करनेवाली औषधों करके तथा दूसरी मधुर औषधों करके शमन करे ॥

यवागूं वा पिबेत्सिद्धां क्षतोरस्कः सुशीतलाम् ।
इक्ष्विक्षुबालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः ॥
शृतां पेयां मधुयुतां संधानार्थं पिबेत्क्षती ॥

अर्थ-उरःक्षत खांसी रोगी ईख, कसोंदी के बीज, कमल का कंद, नीलकमल कंद तथा चंदन इन करके सिद्ध करी शीतल यवागू घाव को संधान करने के अर्थ पीवे॥

इक्ष्वाद्यावलेह

इक्ष्विक्षुबालिकापद्ममृणालोत्पलचंदनैः । मधुकं पिप्पली द्राक्षा लाक्षा शृंगी शतावरी ॥ द्विगुणा च तुगाक्षीरी सिता सर्वैश्चतुर्गुणा । लिह्यात्तं सधुसर्पिर्भ्यां क्षतकासनिवृत्तये ॥

अर्थ-ईख का रस, कसोंदी के बीज, कमलकंद, कमल, सपेद चंदन, मुलहटी, पीपल, दाख, लाख, कांकडासिंगी और सतावर ये समान भाग ले तथा दो भाग वंशलोचन तथा सब औषधों से चौगुनी मिश्री डालके अवलेह बनावे इस में सहत और घी डालके चाटे तो खांसी की निवृत्ति अर्थात् नाश होय ॥

मंजिष्ठाद्यचूर्ण

मंजिष्ठमूर्वानतवह्निपाठाकृष्णाहरिद्राविदधीतचूर्णाः ।
क्षौद्रेण कासे विलिहेत्क्षतोत्थे पिबेद्घृतं चेक्षुरसे विपक्वम् ॥

अर्थ-मजीठ, मूर्वा, तगर, चित्रक, पाठा, पीपल और हलदी इन का चूर्ण सहत के साथ चाटे अथवा ईख के रस में घी को औटाकर पीवे ये दोनों योग क्षतज खांसीपर उत्तम हैं ॥

क्षुद्रावलेह

समूलकंटकारी च चपला चपलाजटा । अपामार्गस्य बीजानि जीर्णं सामुद्रकं तथा ॥ मधुना लेहयेत्सर्वं कासश्वासहरं परम् । उरःक्षतक्षये तीव्रे कफरक्तवमीषु च ॥

अर्थ-कटेरी का पंचांग, पीपल, पीपरामूल, आगा के बीज, जीरा और सैंधानिमक इन से सिद्ध करे अवलेह को सेवन करे तो खांसी, श्वास, उरःक्षत और कफरक्त की वांति इन को दूर करे ॥

तारेश्वररस

रसपादं मृतं तारं शिलाताप्यं चतुर्गुणम् । वासाचेक्षुरसाभ्यां च मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ द्वियामं वालुकायंत्रे स्वेद्यमादाय चूर्णयेत् । गुंजाद्वयं निहंत्याशु कासं क्षतभवं ध्रुवम् ॥ रसस्तारेश्वरो नाम ह्यनुपानं च कथ्यते । दाडिमं त्रिफला व्योषं त्रयाणां च समं गुडम् ॥ चूर्णितं भक्षयेत्कर्षं क्षतकासापनुत्तये ॥

अर्थ–पारा १ भाग, रूपे की भस्म पारे की चतुर्थांश, मनसिल तथा सुवर्णमाक्षिक ये चतुर्गुण लेकर अडूसा और ईख का रस इन में दो प्रहर खरल करे फिर इस को कांच की शीशी में भरके वालुकायंत्र में दो प्रहर पर्यंत पचायके उतार लेवे इस में से दो रत्ती यह तारकेश्वररस अनार, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), सोंठ, मिरच, पीपल तथा इन सब के बराबर गुड मिलाय इन के एक तोले चूर्ण के साथ देवे तो क्षतकास को नष्ट करे ॥

सूर्यरस

रसमेकं द्विधा गंधं त्रिताप्यं पंच तालकम् । सर्वशुद्धं विचूर्ण्याथ चतुर्भागं मृताभ्रकम् ॥ वचा कुष्ठहरिद्राग्निटंकणं सैंधवं विषम् । सपाठालांगलीव्योषं सर्वं प्रत्येककर्षकम् ॥ भावितं भृंगसारेण दिनैकं तं च भक्षयेत् । माषः सूर्यरसो नाम हिक्कावैस्वर्यकासजित् ॥ अष्टगुंजामितं भक्ष्यं विख्याता रसपर्पटी । त्रिकंटमूलशुंठी च अजाक्षीरसमोदकम् ॥ क्षीरावशिष्टं तं क्वाथं सकणं पाययेन्निशि ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, सुवर्णमाक्षिक ३, हरताल ५ और अभ्रक ४ भाग लेवे और वच, कूठ, हलदी, चित्रक, सुहागा, सैंधानिमक, बछनाग विष, पाढ, कलयारी, सोंठ, मिरच और पीपल ये प्रत्येक एक एक तोला लेवे सब का चूर्ण कर भांगरे के रस में १ दिन खरल करे यह सूर्यरस एक मासे खाने को देय तो हिचकी, स्वरभंग और खांसी इन को नष्ट करे अथवा रत्ती रसपर्पटी लेकर रात्रि में गोखरू,सोंठ, बकरी का दूध तथा दूध की बराबर जल लेकर औटावे जब दूधमात्र शेष रहे तब उतारके उस में पीपल का चूर्ण डालके पीवे ॥

पिप्पलपादिलेह

पिप्पली पद्मकं लाक्षा सुपक्कं बृहतीफलम् ।
घृतक्षौद्रयुतो लेहः क्षयकासनिबर्हणः ॥

अर्थ—पीपल, पद्माख, लाख और उत्तम पके हुए कटेरी के फल ये समान भाग लेवे सब को पीस घी और बहुत इन से अवलेह बनायके सेवन करे तो क्षयजन्य खांसी को नाश करे ॥

कुलित्थगुड

कुलित्थानां शतपलं दशमूलं तथा शतम् । शतब्राह्मणयष्ट्या-ह्वा चतुर्गुणजले शृतम् ॥ पादावशेषतः पूते गुडस्यार्धतुलां पचेत् । पाकं ज्ञात्वावतार्यैवं सुशीते श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ षट्पलं च तुगाक्षीया पिप्पल्या द्विपलं तथा । कुडवं मधुना दद्यात्स्था-पयेद्भाजने शुभे ॥ खादेदग्निबलापेक्षी नाशयेदचिराद्गदान् । यक्ष्माणं पित्तजं कासं श्वासं जीर्णमजीर्णकम् ॥ जीर्णज्वरं पां-डुरोगं हृद्रोगं श्लेष्ममारुतौ । कुलित्थगुड इत्युक्तः सर्वोपद्रव-नाशनः ॥

अर्थ—कुलथी ५०० तोले, दशमूल की औषध ४०० तोले और भारंगी ४०० तोले ले १६००तोले जल में काढा करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार लेवे इस में गुड २०० तोले डालके पाक करे जब तयार हो जावे तब शीतल करके इस में २४ तोले वंशलोचन, ८ तोले पीपल और १६ तोले सहत डालके उत्तम पात्र में भरके धर रखे इस में से अग्निबल विचारके खाने को देवे तो क्षय, पित्त की खांसी, श्वास, पका हुआ अजीर्ण, जीर्णज्वर, पांडुरोग, हृदयरोग और कफवात इन को और संपूर्ण उपद्रवों को यह कुलित्थगुड नाश करे ॥

वासाकूष्मांडावलेह

पंचाशतपलं स्विन्नं कूष्मांडं प्रस्थमाज्यतः । पक्कं पलशतं खंडं वासाक्काथाढके पचेत् ॥ शुभ्रा धात्री घनो भार्ङ्गी त्रिसुगंधिश्च क-र्षकैः । एलोपविषधान्याकमरिचैश्च पलांशकैः ॥ पिप्पली कुडवं चैव मधुमानं प्रदापयेत् । कासं श्वासं क्षयं हिक्कां रक्त-पित्तहलीमकान् ॥ हृद्रोगमम्लपित्तं च पीनसं च व्यपोहति ॥

अर्थ–पेंठे के टुकडे शुद्ध करे हुए २०० तोले उन को ६४ तोले घी में भूने फिर इस में १०० तोले टुकडे लेकर अडूसे के २५६ तोले काढे में सिजावे इस में वंशलोचन, आंवले, नागरमोथा, भारंगी, तज, तमालपत्र और इलायची ये प्रत्येक चार २ तोले ले तथा पीपल १६ तोले और सहत ३२ तोले डालके भरके धर रखे. इस में से बलाबल विचारके मात्रा वैद्य देवे तो खांसी, श्वास, क्षय, हिचकी, रक्तपित्त, हलीमक, हृदयरोग, अम्लपित्त और पीनस इन को दूर करे ॥

ककुभलेह

चूर्णं ककुभविपिष्टं वासकरसभावितं सुबहुवारान् ।
मधुघृतसितोपलाभिर्लेह्यं क्षयकासपित्तहरम् ॥

अर्थ–कोहवृक्ष की छाल को चूर्ण में अडूसे के रस की बहुतसी भावना देवे फिर सहत, घी और मिश्री मिलायके चाटे तो क्षय कास और पित्त इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादिघृत

पिप्पलीगुडसंसिद्धं छागक्षीरयुतं घृतम् ।
एतदग्निविवृद्ध्यर्थमुक्तं च क्षयकासिनाम् ॥

अर्थ–पीपल और गुड इन से बनाया हुआ घी बकरी के दूध के साथ पीवे, तो क्षयखांसी के अग्नि प्रदीप्त करने को उत्तम है ॥

पिप्पल्यादिलेह

पिप्पलीमधुकं पिष्टं कषायंससितोपलम् । प्रस्थैकं गव्यमाज्यं च क्षीरमिक्षुरसस्तथा ॥ यवगोधूममृद्वीका चूर्णमामलकीरसम् । तैलं च प्रसृतांशानि तत्सर्वं मृदुवह्निना ॥ पचेल्लेहं घृतक्षौद्रयुक्तः सश्वासकासनुत् । क्षयहृद्रोगकासघ्नो हितो वृद्धाल्परेतसाम् ॥

अर्थ–पीपल और मुलहटी इन दोनों को कूट इन के चूर्ण का काढा मिश्री मिले हुए गौ का दूध, घी और ईख का रस प्रत्येक ६४ तोले जों का गेहूं का चून चून, दाख, आंवले का रस और सरसों का तेल ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे सब को एकत्र कर मंद २ अग्नि पर रखके अवलेह बनावे इस अवलेह में सहत और घी डालके पीवे तो श्वास, खांसी, क्षय और हृदयरोग इन को नाश करे और वृद्धत्व तथा अल्पवीर्य पुरुषों को परम हितकारी है ॥

स्वयमग्निरस

शुद्धसूतं द्विधा गंधं कुर्य्यात्खल्वे च कज्जलीम् । तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ द्वियामांते कृतं गोलं ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् । आच्छाद्यैरंडपत्रेण यामार्धेत्युष्णतां व्रजेत् ॥ धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात् द्विदिनांते समुद्धरेत् । संपेष्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत् ॥ त्रिकटुत्रिफलाचैलाजाती-फललवंगकैः । एतेषां नवभागानां समं पूर्वैरितं भवेत् ॥ सं-चूर्ण्य लोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् । स्वयमग्निरसो नाम क्षयकासनिकृंतकः ॥ इंद्रवारुणिकामूलं भृंगीकृष्णातिलैः सह । भक्षयेत्क्षयकासार्तो निष्कमात्रं प्रशांतये ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १ भाग और गंधक २ भाग ले दोनों की कजली करे तथा कजली के समान पोलाद लोह की चूर्ण मिलायके उस को घीगुवार के रस में दो प्रहर घोटके गोला बनावे उस को ताम्रसंपुट में रखके उस के ऊपर और नीचे अंड के पत्ते लपेट देवे फिर चार घडी पर्यंत उस को धूप में उसी प्रकार धरा रहने दे जब गरम हो जावे तब उठायके धान की राशि में दो दिन पर्यंत गडा रहने दे तीसरे दिन निकालके खरल में डालके घोट डाले फिर कपडे में छान ले तो यह जल में तैरनेवाली लोह की भस्म होवे. यह लोहभस्म सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, इलायची, जायफल और लौंग इन नौ औषधों के चूर्ण के बराबर लोहभस्म मिलायके इस को सहत से आठ मासे पर्यंत देवे यह स्वयमग्निरस क्षय कास का नाश करे अथवा इंद्रायन की जड, भांग, पीपल और तिल इन के साथ ४ मासे देवे तो क्षयजन्य खांसी की शांति होय ॥

सन्निपातकास

सन्निपातभवो ह्येषः क्षयकासः सुदारुणः ।
सन्निपातहितं तस्मात्कार्यमत्र चिकित्सितम् ॥

अर्थ–यह दारुण क्षयकास संनिपात से होती है इसी से जो संनिपात पर हित होवे उसी उपाय को वैद्य करे ॥

अमृतादिकाढा

अमृता नागरं फंजी व्याघ्रिपर्णी सुसाधितः ।
क्वाथः पिप्पलिचूर्णाढ्यः कासश्वासौ जयत्यलम् ॥

अर्थ-गिलोय, सोंठ और सालपर्णी इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके रोगी को पिलावे तो खांसी और श्वास इन को शीघ्र नाश करे ॥

भार्ङ्ग्यादिकाढा

भार्ङ्गी सनागरा सिंही कुलित्थं मूलकं तथा ।
पिबेत्पिप्पलिचूर्णेन कासश्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ-भारंगी, सोंठ, कटेरी, कुलथी और मूली इन का काढा पीपल का चूर्ण मिलायके पीवे तो खांसी और श्वास इन को दूर करे ॥

स्वरसादियोग

स्वरसं शृंगबेरस्य माक्षिकेण समन्वितम् ।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ-अदरख के रस में सहत डालके पीवे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इन का नाश करे परंतु अग्निपर कुछ गरम करके और बडी इलायची का चूरा मिलायके खाय तो अधिक गुण करे ॥

मरीच्यादिचूर्ण

सेवितं मधुखंडाभ्यां चूर्णं मरिचजं यदि ।
किमर्थं क्रियते चिंता कासश्वासपराजितैः ॥

अर्थ-सहत और मिश्री इन के साथ मिरच का चूर्ण देने से खांसी की और श्वास की दूर होने की फिकर क्यों करते हो ? ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्थं कंटकारी च तथा ब्राह्मणयष्टिका ।
शुंठीसुरभिसंयुक्तः कासश्वासज्वरापहः ॥

अर्थ-कुलथी, कटेरी, भारंगी, सोंठ और राल इन सबका काढा करके पीवे तो खांसी, श्वास और ज्वर इन का नाश करे ॥

पुष्करादिकाढा

पौष्करं कट्फलं भार्ङ्गीं विश्वपिप्पलिसाधितम् ।
पिबेत्काथं कफोद्रेके कासे श्वासे च हृद्गदे ॥

अर्थ-पुहकरमूल, कायफल, भारंगी, सोंठ और पीपल इन सब को समान भाग लेके काढा करे तो कफादिक, श्वास, खांसी और हृदयरोग इन को नाश करे ॥

कुनट्यादिलेह

कुनटी सैंधवं व्योषविडंगामरुहिंगुभिः ।
लेहः साज्यमधुकासहिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ-मनसिल, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु और हींग इन का अवलेह करके उस में घी और सहत डाल पीवे तो खांसी, हिचकी, श्वास इन को दूर करे ॥

बर्हिपादादि और मरिचादिलेह

श्वासकासहरा बर्हिपादा च क्षौद्रसर्पिषा ।
लिह्यान्मरिचचूर्णं वा सघृतं क्षौद्रशर्करम् ॥

अर्थ-पीले टेंटू के चूर्ण में सहत और घी मिलायके देवे अथवा काली मिरचों का चूर्ण घी, सहत और मिश्री मिलायकर देवे तो खांसी दूर हो ॥

भार्ङ्ग्यादिचूर्ण

भार्ङ्गींशुंठिकणाचूर्णं गुडेन श्वासकासनुत् । संयुतो मधुसर्पिर्भ्यां चूर्णं त्रिकटुसंभवम् ॥ निहंति तरसा कासं श्वासानिव सतां हरिः ॥

अर्थ-भारंगी, सोंठ, पीपल इन के चूर्ण को गुड में मिलायके अथवा सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को सहत और घी में मिलायके देवे तो श्वास, खांसी का नाश हो ॥

घनादिगुटी

घनविश्वशिवागुडजा गुटिका त्रिदिनं वदनांबुजमध्यधृता ।
हरति श्वसनं कसनं ललने ललनेव हिमे हृदये निहिता ॥

अर्थ-नागरमोथा, सोंठ और हरड इन का चूर्ण करके उस में गुड मिलायके अथवा सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण सहत और घी इन के साथ देवे तो श्वास, खांसी का नाश होय ॥

निर्गुंड्यादिघृत

निर्गुंडीरसभागैकं रसाच्चतुर्गुणं घृतम् । पाच्यं घृतावशेषं च चव्यं वह्निविडंगकम् ॥ चतुर्जातं कटुः कुष्टं समं चूर्ण्यं घृते पचेत् । अष्टमांशघृतं चूर्णं निर्गुंड्याख्यं घृतं पिबेत् ॥ यवागूः कृष्णशाल्यस्तु तंडुलैः परिपाचितैः । निर्गुंडीघृतसंयुक्तं कास-श्वासहरं पिबेत् ॥

अर्थ–निर्गुंडी का रस १ भाग ले उस में चौगुना घी डालके घृत शेष रहे तब-तक पचावे फिर इस में चव्य, चित्रक, वायविडंग, दालचीनी, इलायची, पत्रज, ना-गकेशर, महुआ और कूठ इन का चूर्ण घृत का अष्टमांश डालके घृत के साथ पचावे फिर काले चावलों की यवागू डालके पचावे तो यह निर्गुंडीघृत सिद्ध होवे. यह खांसी और श्वास को दूर करे ॥

धूमपान

अपामार्गस्य पंचांगं संपिष्टं नलिकारसैः । तल्लिप्तवस्त्रे वा लिप्य तालकं च मनःशिला ॥ तं क्षिप्त्वाग्नौ पिबेत्धूमं सप्ताहं श्वास-कासजित् ॥

अर्थ–ओंगा के पंचांग को बारीक पीस उस को नलिका के रस में खरल करे उस में हरताल और मनसिल घोटके उस का कपडे पर लेप करे जब सूख जावे तब इस को हुक्के में धरके धूआ पीवे तो सात दिन में श्वास और खांसी इन को नाश करे ॥

वारुणीपत्रधूम

उत्तरावारुणीपत्रं शालितंडुलतालकम् । संपेष्य गुटिका कार्या बदरांडप्रमाणका॥मुखी तंदुलपिष्टेन कर्तव्या छिद्रसंयुता॥दीप्तां-गारे वटीं क्षिप्त्वा मुखमाच्छाद्य यत्नतः॥ धूममेरंडनालेन पिबे-द्भुक्तोतरं शनैः । तांबूलपूरितमुखं पथ्यं क्षीरोदनं हितम् ॥ तत्क्षणान्नाशयेत्कासं सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अर्थ–इंद्रायन के पत्ते, शालीधान के चावल और हरताल इन को एकत्र पीस बेर की गुठली के बराबर गोली बनावे उस को चावलों को पीसके चिलम बनावे

उस में इस गोली को रखके ऊपर अग्नि रखे और उस को ढकने से ढक देवे. फिर उस चिलम में अंडकी नली (नै) लगायके भोजन करने के पश्चात् पीवे और ऊपर से पान खाय और पथ्य में दूध भात खाने को देवे तो खांसी तत्क्षण दूर होय यह सिद्ध प्रयोग है ॥

हेमगर्भपोटली

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावंतः कनकस्य च । तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गंधो द्वादशभागिकः ॥ कुर्यात्कज्जलिकां तेषामुक्तभागाश्च षोडश । चतुर्विंशच्च शंखस्य भागैकं टंकणस्य च ॥ एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिंबूकजै रसैः । कृत्वा तेषां ततो गोलं मूषासंपुटके न्यसेत् ॥ मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गर्ते च गोमयैः । पुटेद्गजपुटेनैव स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वा गुंजाचतुर्मानं दद्याद्गव्याज्यसंयुतम् । एकोनत्रिंशदुन्मानमरिचैः सह दीयते ॥ राजते मृन्मये पात्रे काचजे वावलेहयेत् । लोकनाथसमं पथ्यं कुर्याच्छुचितमानसः ॥ कासे श्वासे क्षये वाते कफग्रहणिकागदे । अतिसारे प्रयोक्तव्या पोटली हेमगर्भिका ॥

अर्थ—पारा ४ भाग और सुवर्ण का बारीक चूरा ४ भाग लेकर दोनों को एकत्र मर्दन करे जब दोनों की उत्तम पिट्ठी हो जावे तब पारे का १२ भाग गंधक ले. इसी पिट्ठी में मिलायके खरल कर कजली करे फिर पारे का सोलहवां भाग मोती, चौवीस भाग शंक तथा एक भाग सुहागा लेकर उस में मिलाय देवे फिर पके हुए नीबू के रस में खरल करके उस का गोला बनावे और उस गोले को सराव संपुट में रखे ऊपर से कपडमिट्टी करे फिर एक हाथ भर का गड्ढा खोदे उस में गोबर के आरने उपले भर बीच में उस संपुट को रख गजपुट की अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल लेवे और उस में औषध निकाल किसी उत्तम पात्र में भरके धर रखे. इस रस को **हेमगर्भपोटलीरस** कहते हैं. यह हेमगर्भ ४ रत्ती ले २९ नग काली मिरचों के चूर्ण से चांदी के पात्र में अथवा मिट्टी के पात्र में अथवा कांच के प्याले में गौ का घी डालके पीवे तथा चित्त को एकाग्र कर लोकनाथरस के समान पथ्य करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग, वादी के विकार, कफ और संग्रहणी तथा अतिसार इन सब रोगों को दूर करे ॥

कासविधूननरस

रसभागो भवेदेको गंधको द्वौ तथैव च। यवक्षारं त्रिभागं स्याद्रुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविमर्दितम्। कासं पंचविधं हन्याच्छ्वासं पंचविधं हरेत् ॥

अर्थ—पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पांगानिमक ४ भाग, काली मिरच ५ भाग ले इन को अदरख के रस में खरल कर तीन २ रत्ती की गोली बनाय ले इसे खाय तो पांच प्रकार की खांसियों का नाश करे ॥

ताम्रपर्पटी

मृतं ताम्रं त्रिभागं च रसं गंधं च तत्समम्। भागमेकं वत्सनाभं कज्जलीं खल्वमध्यगाम् ॥ गोघृतेन कृतं कल्कं लोहपात्रे विपाचयेत्। ढालयेदर्कपत्रस्थपर्पटीरससिद्धये ॥ गुंजाद्वयं त्रयं चैव पिप्पलीमधुसंयुतम्। त्रिःसप्तरात्रयोगेन रोगराजं च नाशयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव सन्निपातं नियच्छति। त्रिफला खंडसंयुक्तं सर्वं पांडुं विनाशयेत् ॥ वातारितैलसंयुक्तं सर्वशूलनिवारणम्। कुमारीरसयोगेन वातपित्तोपशांतये ॥ बाकूचीरससंयुक्तं सर्वदद्रुविनाशनम्। त्रिफलामधुसंयुक्तं सर्वमेहनिवारणम् ॥ खदिरक्काथपानेन कुष्ठाष्टादशनाशनम्। मंथानभैरवेणोक्ता लोकानां हितकाम्यया ॥

अर्थ—तामे की भस्म, पारा, गंधक ये प्रत्येक तीन २ भाग ले सिंगियाविष १ भाग इन सब को एकत्र करके कजली करे इस को गौ के घी में खरल कर लोहे के पात्र में पक्क करके इस को आक के पत्तों पर ढाल देवे और दूसरे पत्ते से तत्काल इस को ढकके दबाय देवे तो यह पर्पटी सिद्ध होय इस को दो अथवा तीन रत्ती लेके सहत और पीपल के चूर्ण के साथ २१ दिन खाय तो राजयक्ष्मा को नाश करे, अदरख के रस के साथ सेवन करे तो सन्निपात का नाश करे, त्रिफला और मिश्री के अनुपान से सर्व प्रकार के पांडुरोग, अंडी के तिल के अनुपान से शूल, घीगुवार के रस के अनुपान से वातपित्त, बावची के रस के अनुपान से सर्वकुष्ठ, त्रिफला और सहत इन के अनुपान से सर्व प्रकार के प्रमेह, खैर के काढे के अनुपान से अठारह प्रकार के कोढ इस प्रकार अनुपान के भेद से अनेक रोगों का नाश करे. यह मंथानभैरव ने लोगों के हितार्थ पर्पटीरस कहा है ॥

कंटकार्यादिचूर्ण

कंटकार्याः काणायाश्च चूर्णं समधु कासहृत् ॥

अर्थ–कटेरी और पीपल इन के चूर्ण को सहत से देवे तो खांसी को दूर करे ॥

लवंगादिचूर्ण

लवंगजातीफलपिप्पलीनां भागाश्च कल्प्याक्षसमानपूर्वाः । पलार्द्धमानं मरिचं प्रदेयं पलानि चत्वारि महौषधस्य ॥ सितासमस्तेन समाप्य चूर्णं रोगानिमानाशु बलान्निहंति। कासज्वरारोचकमेदगुल्मश्वासाग्निमांद्यं ग्रहणीविकारान् ॥

अर्थ–लौंग, जायफल और पीपल ये एक एक तोला, बहेडा ३ तोले, काली मिरच २ तोले तथा सोंठ १६ तोले ले इन सब का चूर्ण कर और इस चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे. यह चूर्ण खांसी, ज्वर, अरुचि, प्रमेह, गोला, श्वास, मंदाग्नि और संग्रहणी को दूर करे ॥

बिभीतकादिचूर्ण

द्वौ भागौ च बिभीतक्या भागैकं पिप्पलीयुतम् ।
चूर्णं मधुयुतं लेह्यं कासरोगहरं परम् ॥

अर्थ–बहेडा २ भाग और पीपल १ भाग इन का एकत्र चूर्ण कर सहत से चाटे तो यह खांसी के दूर करने में सर्वोत्कृष्ट है ॥

पंचकोलादिचूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं शुंठीचूर्णं बिभीतकम् ।
मधुना लेहयेच्चाशु हरेत्कासं त्रिदोषजम् ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, सोंठ और बहेडा इन का चूर्ण सहत से चाटे तो त्रिदोषजन्य खांसी का नाश होय ॥

बदरीकल्क

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैंधवम् ।
ज्वरोपघाते श्वासे च लेहमेतं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–बेर के पत्तों का कल्क करके उस में सैंधा निमक मिलायके घी में तल लेय यह स्वरभंग और श्वास इन पर देवे ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरवालकंकोलजातीफलदलं समम् । लवंगं नागमरिचं कृ-
ष्णाशुंठीविवर्द्धिता ॥ चूर्णं सितासमं ग्राह्यं रोचनं क्षयकासजित्।
वैस्वर्यश्वासकासघ्नं छर्दितृष्णाक्षयापहम् ॥

अर्थ–कपूर, नेत्रवाला, कंकोल, जायफल और जावित्री ये समान भाग लेवे तथा लौंग, नागकेशर, काली मिरच, पीपल और सोंठ ये सब१-२-३-४भाग इस क्रम से लेय सब का चूर्ण कर तथा सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे इस के सेवन करने से रुचि करे और क्षय, कास, स्वरभंग, श्वास, खांसी और वमन इन का नाश करे ॥

त्रिकटुकादिचूर्ण

कटुत्रिकं छिन्नलताकृशानुफलत्रिकं वेल्लभवं सरासना ।
सशर्करं चूर्णमिदं तु सेव्यं कासाटवीदाहदवानलाख्यम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, चीते की छाल, हरड, बहेडा, आंवला, मिरच और रास्ना इन का चूर्ण कर इस में मिश्री मिलाय खाने को देवे तो खांसीरूप वन को अग्नि के समान नष्ट करनेवाला है ॥

देवदार्वादिचूर्ण

देवदारुबलारास्नात्रिफलाव्योषपद्मकैः ।
सविडंगैः सितातुल्यं तच्चूर्णं सर्वकासनुत् ॥

अर्थ–देवदारु, बला, रास्ना, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, पद्माख और वायविडंग इन का चूर्ण करके बराबर मिश्री मिलाय खाने को देवे तो संपूर्ण खांसियों का नाश करे ॥

द्विक्षारादि

द्वौ क्षारौ पञ्चमूलानि पंचैव लवणानि च । सठीनागरकोदीच्य-
कल्कं वा वस्त्रगालितम् ॥ पाययेच्च घृतोन्मिश्रं सर्वकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–जवाखार, सज्जीखार, पंचमूल और पांचों निमक, कचूर, सोंठ, नेत्रवाला इन का कल्क करके वस्त्र से छान लेवे फिर इस में घी डालके देवे तो संपूर्ण खांसियों का नाश करे ॥

ग्रंथिकादि

ग्रंथिकमागधिकाक्षमहौषधैरचितं चूर्णमिदं मधुना युतम् ।
हरति कासभवं दरमाततं विविधदोषहरं च निषेवितम् ॥

अर्थ–पीपरामूल, पीपल, बहेडा और सोंठ इन का चूर्ण सहत में मिलायके देवे तो खांसी की भय को और अनेक दोषों का नाश करे ॥

कटुत्रिकादि

कटुत्रिकं च चूर्णितं गुडेन सर्पिषा युतम् ।
निहंति कासजं दरं निषेवणं निरंतरम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण गुड और घी इन के साथ बहुत दिन देवे तो खांसी का भय नष्ट होवे ॥

हरीतक्यादिगुटी

हरीतकी कणा शुंठी मरिचं गुडसंयुतम् ।
कासघ्नो मोदकः प्रोक्तो परं चानलदीपनः ॥

अर्थ–हरड, पीपल, सोंठ और काली मिरच इन का चूर्ण गुड में मिलायके खाय तो खांसी नष्ट होय तथा दीपन और पाचन है ॥

त्रिजातादि

त्रिजातमर्धकर्षं च पिप्पल्यर्धपलं सिता । द्राक्षामधुकखर्जूरं पलांशं श्लक्ष्णकल्कितम् ॥ मधुना गुटिका घ्नंति ता वृष्याः पित्तशोणिते । कासश्वासारुचिच्छर्दिमूर्च्छाहिध्मामदभ्रमान् ॥ क्षतक्षये स्वरभ्रंशे प्लीहशोषाढ्यमारुतान् । रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्वरुक्पिपासाज्वरानपि ।

अर्थ–दालचीनी, पत्रज और इलायची ये छः छः मासे लेवे. पीपल २ तोले और मिश्री, मुलहटी, दाख, खजूर ये प्रत्येक ४ तोले बारीक चूर्ण करके कल्क करे और सहत से गोली बनायके देवे. यह वृष्य है तथा पित्तरक्त, श्वास, खांसी, अरुचि, वांति, मूर्छा, हिचकी, मद, भ्रम, क्षतक्षय, स्वरभंग, प्लीहा, शोष, आढ्यवात, रुधिर की वमन, हृदयरोग, पार्श्वशूल, प्यास और ज्वर इन को दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटी

मरीचं कर्षमात्रं च पिप्पली कर्षसंमिता । अर्धकर्षो यवक्षारो कर्षयुग्मं च दाडिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं युंज्यादष्टकर्षगुडेन हि । शाणप्रमाणगुटिका कृत्वा वक्त्रे विधारयन् ॥ अस्याः प्रभावात्सर्वोपि कासा यांत्येव संक्षयम् ॥

अर्थ–काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनार की छाल २ तोले इन सब का चूर्ण करके उस में ८ तोले गुड मिलायके चार २ मासे की गोली बनावे इस को मुख में रखे इस गोली के प्रभाव से संपूर्ण प्रकार की खांसी नष्ट होवे ॥

लवंगादिगुटी

तुल्या लवंगमरिचाक्षफलत्वचः स्युः सर्वैः समो निगदितः खदिरस्य सारः । बब्बूलवल्कलकषाययुता विभाव्यात्कासान्निहंति गुटिका घटिकाष्टकांते ॥

अर्थ–लौंग, काली मिरच और बहेडे की छाल लेवे. तथा इन तीनों की बराबर खैरसार लेवे. सब को खरल में डाल बबूर की छाल के काढे से खरल करे तो यह लवंगादिगुटी आठ घडी में सर्व प्रकार की खांसियों को दूर करे ॥

धनंजयवटी

धनंजयत्रिजातकं कणा जटा कटुत्रिकम् ।
रसार्द्रकेन भावितं जयेच्च कासमाततम् ॥

अर्थ–कोह की छाल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, पीपरामूल, सोंठ, काली मिरच और पीपल इन का चूर्ण अदरख के रस में खरल करे और गोली बनाय ले यह धनंजयवटी सर्व प्रकार की खांसियों को नष्ट करे ॥

खदिरादिगुटी

खदिरं पौष्करं शृंगी कट्फलं द्विजयष्टिका । हरीतकी लवंगं च व्योषं चातिविषं तथा ॥ कारवीयासममृता बृहतीद्वयमक्षकम् । पृथक्कर्षद्वयं ग्राह्यं सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् ॥ सर्वैः समं खादिरं च मेलयित्वा विभावयेत् । दाडिमत्वक् तथा क्षुद्राखादिरांभोभिरार्द्रकैः ॥ बबूलत्वग्दलैः क्वाथैश्चाटरूषजलं तथा । सप्तधा भावयेद्बध्वा गुटिका खदिराभिधा ॥ कासश्वासौ निहंत्याशु दुस्तरौ चिरजावपि ॥

अर्थ–कत्था, पुहकरमूल, कांकडासिंगी, कायफल, भारंगी, हरड, लौंग, सोंठ, मिरच, पीपल, अतीस, अजमायन, धमासा, गिलोय, कटेरी, बडी कटेरी और बहेडे का वक्कल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करके उस सब चूर्ण की

बराबर खैरसार मिलावे. फिर अनार की छाल, कटेरी, खैर की छाल, बबूर की छाल और पत्ते, अडूसा इन के काढे से अथवा रस से सात वार घोटे फिर मासे भर की गोली बांध ले. इसे खदिरादिवटी कहते हैं इस से खांसी और श्वास ये बहुत दिन के होवे तो भी नष्ट हों ॥

व्योषादिगुटी

व्योषाम्लवेतसं चव्यं तालीसं चित्रकं तथा । जीरकं तित्तिडीकं च प्रत्येकं कर्षभागिकम् ॥ त्रिसुगंधित्रिशाणं स्याद्गुडः स्यात्कर्षविंशतिः । सर्वमेकत्र संकुप्ये गुटिका कर्षसंमिता ॥ भक्षयेत्प्रातरुत्थाय सर्वान् कासान् व्यपोहति । पीनसं श्वासमरुचिं स्वरभेदं व्यपोहति ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, अमलवेत, चव्य, तालीस, चीता, जीरा, तिंतिडीक, प्रत्येक एक २ तोला ले और तज, पत्रज और इलायची ये चार २ मासे लेवे. और गुड २० तोले इन सब को एकत्र कूटके एक एक मासे की गोली बनावे इस को प्रातःकाल खाय तो संपूर्ण खांसी, पीनस, श्वास, अरुचि और स्वरभेद इन सब को दूर करे ॥

पिप्पल्यादिगुटी

सपिप्पली पुष्करमूलपथ्या शुंठी शठी मुस्तकसूक्ष्मचूर्णम् ।
गुडेन युक्ता गुटिका प्रयोज्या श्वासेषु कासेषु विवर्धितेषु ॥

अर्थ–पीपल, पुहकरमूल, हरड, सोंठ, कचूर और नागरमोथा इन का बारीक चूर्ण करके इस को गुड में मिलाय गोली बनावे यह बढी हुई खांसी, श्वास इन को दूर करे ॥

क्षवथौ गंधनाशे च धूमपानं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–जिस को छीक और गंध न आती उस को धूमपान कराना चाहिये ॥

अर्कमूलादिधूम

अर्कमूलशिलैस्तुल्यं ततोर्धेन कटुत्रिकम् । चूर्णितं वह्निनिक्षिप्तं पिबेद्धूमं तु योगवित्॥ भक्षयेदथ तांबूलं पिबेद्दुग्धमथापि वा । कासः पंचविधो याति शांतिमाशु न संशयः ॥

अर्थ–आंक की जड और मनासिल इन से आधी सोंठ, मिरच, पीपल इन के

चूर्ण को अग्निपर डालके धूए को पीवे और ऊपर से वीडी खाय अथवा दूध पीवे तो पांच प्रकार की खांसी नष्ट हो. इस में संदेह नहीं है ॥

मनःशिलादिधूम

मनः शिलाभिर्मरिचमांसीमुस्तेंगुदीयुतम् । धूमं तस्यानुपचयं सुखोष्णं सगुडं पिबेत् ॥ एष कासान्पृथग्द्वंद्वसन्निपातसमुद्भवान् । शतैरपि प्रयोगाणां साधयेदप्रसाधितान् ॥

अर्थ–मनसिल, काली मिरच, जटामांसी, नागरमोथा और गोंदी इन के चूर्ण में गुड मिलायके इस को सुखोष्ण पावे तो यह दोषज, द्वंद्वज, सान्निपातिक और सैंकडों औषधों से जो खांसी अच्छी न होवे वे सब इस से नष्ट हों ॥

दूसरा प्रकार

मनःशिलालिप्तदलं बदर्यातपशोषितम् ।
सक्षीरं धूमपानं च महाकासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–बेर के पत्तों में सनसिल लगाके धूप में धर देवे जब सूख जावे तब इन को चिलम में धरके इन का धूआ पीवे तो घोर खांसी का नाश होय ॥

धत्तूरादिधूम

पिष्ट्वा त्रिपुटधत्तूरमूलव्योषमनःशिलाः । तेन प्रलिप्य वसनं धूमवर्तिं प्रकल्पयेत् ॥ धूमं तस्याः पिबेद्यस्तु कासो नश्येद्दिनत्रयात् ॥

अर्थ–धतूरे की जड, सोंठ, मिरच, पीपल और मनसिल इन को एकत्र जल में पीस कपडे पर लेप कर देवे फिर इस को धूप में सुखायके बत्ती बनाय ले इस का धूआ पीवे तो तीन दिन में खांसी दूर होवे अथवा इस को हुक्के में धरके पीवे ॥

जातिपत्रादिधूम

जातिपत्रं शिलारालैर्योजयेद्गुगुलं समम् ।
अजामूत्रेण पिष्टोयं धूमः कासहरः परः ॥

अर्थ–जावित्री, मनसिल, रार और गूगुल ये समान भाग ले सब को कूट पीस बकरी के मूत्र में खरल करे फिर इस को हुक्के में रखके इस के धूंए को पीवे तो खांसी को नष्ट करे ॥

जातिमूलादिधूम

जातीजटाकिसलयैर्बदरीदलैश्च जाता मसूरकफलैः समनःशिलाभिः। स्याद्धूमवर्तिरिह गुग्गुलुना समेतैः कासे स्थिते बदरिकाग्निविदह्यमानैः ॥

अर्थ–चमेली की जड, चमेली के पत्ते, मसूर, मनसिल और गूगुल इन को पीसके बेर की पत्ती पर लेप कर देवे फिर इन को सुखाय हुक्के में रखके इन के धूंए को पीवे तो खांसी को नष्ट करे ॥

हरिद्राधूम

रात्रिद्वयशिलाधूमपानात्कासश्रुतिः कुतः।
जलपानादपि तथा क्षणेन क्षणदाक्षये ॥

अर्थ–हरदी, दारुहरदी और मनसिल इन के धूए को पीवे किंवा उषःपान करे अर्थात् प्रातःकाल उठकर जल को पीवे तो सर्व प्रकार की खांसी दूर हो ॥

बिभीतकावलेह

अजस्य मूत्रस्य शतं पलानि शतं पलानां च कलिद्रुमस्य। पक्कं समध्वाशु निहंति कासं श्वासं च तद्वत्सबलं बलासम् ॥

अर्थ–बकरी का मूत्र १००पल और बहेडे की छाल१००पल ले दोनों को औटायके अवलेह बनावे इस अवलेह में सहत डालके पीवे तो खांसी, श्वास और कफ इन का नाश करे ॥

कंटकार्यवलेह

कंटकारीं तुलानीरे द्रोणे पक्त्वा कषायकम् । पादशेषं गृहीत्वा च तस्मिन् चूर्णानि दापयेत् ॥ पृथक्पलांशान्येतानि गुडूचीचव्यचित्रकम्। मुस्तकर्कटशृंगी च त्र्यूषणं धन्वयासकम् ॥ भार्ङ्गी रास्ना शठी चैव शर्करापलविंशतिः। प्रत्येकं च पलान्यष्टौ प्रदद्याद्भूतलोहयोः ॥ पक्त्वा लेहत्वजाते च शीते मधुपलाष्टकम्। चतुःपलं तुगाक्षीरीपिप्पलीनां चतुःपलम् ॥ क्षिप्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे। लेहोयं हंति कासार्तिहिक्काश्वासानशेषतः ॥

अर्थ–कटेरी ४०० तोले, जल २०४८ तोले ले सब को एकत्र कर चतुर्थांश काढा करे उस में गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, कांकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर ये प्रत्येक चार चार तोले लेवे. तथा मिश्री ८० तोले, घी ३२ तोले लेवे और लोहभस्म ३२ तोले, वंशलोचन १६ तोले और पीपल १६ तोले मिलायके यह अवलेह उत्तम मिट्टी के पात्र में भरके धर रखे इस को खाय तो यह खांसी, हिचकी, सर्व प्रकार के श्वास रोग इन को नाश करे ॥

अगस्तिहरीतक्यवलेह

दशमूली स्वयंगुप्ता शंखपुष्पी शठी बला । हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान् ॥ भार्ङ्गी पुष्करमूलं च द्विपलांशं यवाढकम् । हरीतकीशतं चैव जले पंचाढके पचेत् ॥ यवैः स्विन्नैः कषाये च पूतं तच्चाभयाशतम् । पचेद्गुडतुलां दत्त्वा कुडवं च पृथग्घृतम् ॥ तैलात्पिप्पलिचूर्णाच्च सिद्धे शीते च माक्षिकात् । लिह्याद्द्वे चाभये नित्यमतः खादेद्रसायनम् ॥ वलिं च पलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्द्धनम् । पंच कासान् क्षयान् श्वासान् हिक्कां च विषमज्वरान् ॥ हन्यात्तथा ग्रहण्यर्शोहृद्रोगारुचिपीनसान् । अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम् ॥

अर्थ–दशमूल, कौंछ के बीज, संखाहूली, कचूर, खिरेटी, गजपीपर, ओंगा, पीपरामूल, चित्रक की छाल, भारंगी, पुहकरमूल ये प्रत्येक आठ आठ तोले लेवे जौं १०२४ तोले, हरड ४०० तोले और जल ५१२० तोले डालके पक्व करे जब जौं सीजके काढा हो जावे तब उतारके जल को छान ले उस में ४०० तोले बडी २ हरड डालके औटावे और गुड ४०० तोले, घी १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपल का चूर्ण १६ तोले डालके अवलेह बनावे जब तयार हो जावे तब नीचे उतार ले शतिल होने पर सहत १६ तोले मिलावे और शीशे में अथवा चीनी आदि के पात्र में भरके धर रखे इस में से दो हरड नित्य खाय यह हरड वली, पलित और ५ प्रकार की खांसी, क्षय, श्वास, हिचकी, विषमज्वर, संग्रहणी, बवासीर, हृदयरोग, पीनस इन को नष्ट करे और वर्ण, आयुष्य तथा बल को बढावे. यह अगस्त्यऋषि की कही हुई है इसी से इस को अगस्त्यावलेह कहते हैं ॥

व्याघ्र्यादिघृत

**व्याघ्रीस्वरसविपक्वं रास्नाकट्फलगोक्षुरव्योषैः ।
सर्पिः स्वरोपघातं निहंति कासं च पंचविधम् ॥**

अर्थ—कटेरी के स्वरस में रास्ना, कायफल, गोखरू, सोंठ, मिरच, पीपल और घी डालके इस घृत को सिद्ध कर लेवे इस के खाने से स्वरभंग और पांच प्रकार की खांसी इन का नाश होवे ॥

गुडूच्यादिघृत

सर्पिर्गुडूचीवृषकंटकारीक्वाथेन कल्केन च सिद्धमेतत् । पेयं पुराणज्वरकासशूलप्लीहाग्निमांद्यग्रहणीगदेषु ॥

अर्थ—गिलोय, अडूसा और कटेरी इन का काढा करे तथा कल्क करे इस में घी डालके सिद्ध करे तो यह जीर्णज्वर, खांसी, शूल, प्लीहा, मंदाग्नि और संग्रहणी इन को नष्ट करे ॥

त्र्यूषणादिघृत

त्र्यूषणं त्रिफला द्राक्षा काश्मर्याटपरूषकम् । द्वे पाठे देवदार्व्यब्दसगुप्तं चित्रकं सठी ॥ व्याघ्री तामलकी मेदा काकनासा शतावरी । त्रिकंटकं विदारी च पिष्ट्वा कर्षसमान् घृतात् ॥ प्रस्थं चतुर्गुणं क्षीरं सिद्धं कासहरं पिबेत् । ज्वरगुल्मारुचिप्लीहशिरोहृत्पार्श्वशूलनुत् ॥ कामलार्शोनिलाष्ठीलाक्षतशोषक्षयापहम् । त्र्यूषणं नाम विख्यातं घृतमेतन्महोत्तमम् ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, दाख, कंभारी, अडूसा, पाढ, वल्लीपाढ, देवदारू, नागरमोथा, कौंछ के बीज, चित्रक, कचूर, कटेरी, भूय आंवला ये सब एक २ तोला ले घी ६४ तोले, दूध २५६ तोले डालके घृत सिद्ध करे तो खांसी, ज्वर, गोला, अरुचि, प्लीहा और मस्तक, हृदय, पार्श्व इन का शूल, कामला, बवासीर, वातष्ठीला, क्षतक्षय और क्षय इन का नाश करे यह त्र्यूषणनामक घृत सर्वोत्तम विख्यात है ॥

कंटकारीघृत

समूलफलपत्रायाः कंटकार्या रसाढकम् । घृतप्रस्थं बलाव्योषविडंगं शठिदाडिमम् ॥ सौवर्चलं यवक्षारं विश्वामलकपौष्करैः । वृश्चिवद्बृहतीपथ्या यवानीचित्रकादिभिः ॥ मृद्वीका चव्यवर्षाभूदुरालंभाम्लवेतसैः । शृंगीतामलकीभार्ङ्गीरास्नागोक्षुरकैः

पचेत् ॥ कल्कैस्तु सर्वकासेषु श्वासहिक्कासु शस्यते । कंटकारीघृतं सिद्धं पंचकासनिषूदनम् ॥

अर्थ–कटेरी के पंचांग का रस १०२४ तोले, घी ६४ तोले और खिरेटी का रस, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, कचूर, अनारदाना, संचर निमक, जवाखार, सोंठ, आमले, पुहकरमूल, सोंठ, लाल रंगकी कटेरी, हरड, अजमायन, चित्रक, दाख, चव्य, सपेद सांठ, धमासा, अमलवेत, कांकडासिंगी, भूयआंवला, भारंगी, रास्ना, गोखरू इन का काढा और कल्क डालके घृत सिद्ध करे यह संपूर्ण प्रकार की खांसी, श्वास और हिंचकी इन पर देना चाहिये यह सिद्धकंटकारीघृत पांच प्रकार की खांसी को नष्ट करे ॥

दूसरा प्रकार

कंटकार्यास्तुलां क्षुण्णां कृत्वा द्रोणेंभसः पचेत् । तेनाढकेन क्राथस्य घृतप्रस्थं पिचून्मितैः ॥ रास्नादुस्पर्शषड्ग्रंथि पिप्पलीद्वयचित्रकैः । सौवर्चलयवक्षारकृष्णामूलैश्च तज्जयेत् ॥ कासश्वासकफष्ठीवहिक्कारोचकपीनसान् ॥

अर्थ–कटेरी ४०० तोले को २०४८ तोले जल में औटावे जब आधा जल रहे तब इस काढे को उतारके छान लेवे फिर इस में ६४ तोले घी तथा रास्ना, धमासा, पीपल बडी, पीपल छोटी, गजपीपल, चित्रक, संचर निमक, जवाखार, पीपरामूल ये एक एक तोला डालके घृत सिद्ध करे. यह कंटकारीघृत खांसी, श्वास, कफ की वांति, अरुचि और पीनस इन को दूर करे ॥

भागोत्तरवटी

रसगंधकणा पथ्या कलिद्रुफलवासकः । भार्ङ्गी चेति क्रमाद्वृद्धमेतज्जंबीरजद्रवैः॥अष्टाविंशत्तमानेतान्कुर्यात्क्षौद्रेण गोलकान् । कर्षप्रमाणमेतस्य तमेकं प्रातरुत्थितः ॥ अद्यान्मासत्रयं क्षुद्राक्वाथं दशकणायुतम् । पिबेत्तदनु कासाच्च श्वासाच्च परिमुच्यते॥

अर्थ–पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला और भारंगी ये क्रमवृद्धिसे लेकर इन का चूर्ण करे और नींबू के रस में खरल करे फिर सहत से तोले २ भर की गोली २८ बनावे और नित्यप्रति १ गोली सेवन करे इस प्रकार तीन महीने भक्षण करे और ऊपर से दस पीपल पीसके पीवे तौ खांसी और श्वास से छूट जावे ॥

अगंधखर्परपर्पटी

भागौ रसस्य द्वावेकौ द्वावेकौ लोहभस्मनः । एतद्द्रुते द्रवीभूतं मृदग्नौ कदलीदले ॥ पातयेद्गोमयगते तथैवोपरि योजयेत् । ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिर्मर्दयेत्सप्तधा पृथक् ॥ भार्ङ्गीशुंठीमुनिवराजयानिर्गुंडिकाद्रवैः । व्योषवासककन्यार्द्रद्रवैः शुष्कैः पुटेल्लघुः॥ अगंधखर्परो नाम्ना पर्पटीति रसो भवेत् । सर्वरोगहरः स्वैः स्वैरनुपानैर्द्विमाषतः ॥ तांबूलपत्रसहितः कासश्वासहरः परः । सकृणः सुरसाक्काथोनुपानं वा सगोजलम् ॥

अर्थ–पारा बारह भाग और लोहभस्म बारह भाग इन की कजली को अग्नि में ताय करके लेके पत्रे पर ढाल देवे. फिर उस को पीसके भारंगी, सोंठ, अगस्तिया, अरनी, निर्गुंडी, सोंठ, मिरच, पीपल, अडूसा, घीगुवार और अदरख इन के काढे में अथवा रस में घोटकर लघु पुट देवे तो यह अगंधखर्पर नामक रस बने इस को पर्पटी भी कहते हैं यह अनुपान दो रत्ती के प्रमाण देने से संपूर्ण रोगों को हरण करे. इस को पान में रखके खाय और ऊपर से तुलसी के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे अथवा गोमूत्र पीवे तो खांसी और श्वास इन को नष्ट करे ॥

कासश्वासविधूननरस

रसभागो भवेदेको गंधकद्वौ तथैव च । यवक्षारस्त्रिभागः स्याद्रुचकं च चतुर्गुणम् ॥ मरीचं पंचभागं स्याच्छुद्धं रसविमर्दितम् । कासं पंचविधं हन्याच्छ्वासं पंचविधं तथा ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १ भाग, गंधक २ भाग, जवाखार ३ भाग, पागा निमक ४ भाग, तथा काली मिरच ५ भाग सब शुद्ध लेवे सब को पारे के साथ खरल करे जब तयार हो जावे तब खाने को देवे तो ५ प्रकार की खांसी तथा पांच प्रकार की श्वास इन को नाश करे ॥

गुरुपंचमूलीकाढा

अतः परं कोमलवाणि कासश्वासप्रतीकारमुदीरयामि । निहंति कासं गुरुपंचमूलीकृतः कषायश्चपलासहायः ॥

अर्थ–लोलिंबराजकवि अपनी स्त्री को संबोधन देकर कहता है कि हे कोमलवाणि! अब इस के उपरांत मैं तेरे आगे खांसी और श्वास का प्रतीकार कहता हूं. बृहत्पंचमूल के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो खांसी को नष्ट करे ॥

वासादिकाढा

वासाहरिद्राधनिकागुडूचीभार्ङ्गीकणापौष्कररिंगणीनाम् ।
क्वाथेन मारीचरजोन्वितेन कासः क्षयं याति न कस्य पुंसः ॥

अर्थ–अडूसा, हलदी, धनिया, गिलोय, भारंगी, पीपल, पुहकरमूल और कटेरी इन का काढा काली मिरचों का चूर्ण डालके पीवे तो किस पुरुष की खांसी दूर नहीं होती ? ॥

सिंहीकषाय

अयि रत्नकले नीलनलिनच्छदनेक्षणे ।
सिंहीकषायः सकणः कासग्रासकरः क्षणात् ॥

अर्थ–हे रत्नकले ! हे नीलनलिनच्छदनेक्षणे ! कटेरी के काढे में पीपल का चूर्ण डालके देवे तो खांसी को एक क्षणमात्र में ग्रास कर जावे ॥

वृषादिकाढा

पुलोमजावल्लभसूनुपत्नीतातात्मभूशेखरवाहनस्य ।
सौंदर्यदूरीकृतरामरामे कषायकः काससमीरसर्पः ॥

अर्थ–हे सौंदर्यदूरीकृतरामरामे ! इन्द्राणी पति (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) की स्त्री (द्रौपदी) का पिता (द्रुपद) का पुत्र (शिखंडी) सो है मस्तक में जिस के ऐसे (शिव) का वाहन (वृष) अर्थात् अडूसा इस का काढा खांसीरूप पवन के पीने को सर्परूप है यह श्लोक कूट है और लोलिंबराज में लिखा है ॥

आर्द्रकावलेह

आर्द्रादर्धगुडातुलादपि तथार्धाभ्रं च कुस्तुंबरीदीप्यायोजरणा-
त्रिजातकटुकादेतत्पचेद्युक्तितः । लेहो रत्नकले तवैव कथितः
प्राणप्रियाया मया कासार्शोज्वरपीनसश्वयथुरुग्गुल्मक्षयध्वंसनः ॥

अर्थ–अदरख २०० तोले, गुड २०० तोले, धनिया २ तोले और अजमायन, लोहभस्म, जीरा, दालचीनी, पत्रज, इलायची, कुटकी इन प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले लेवे सब को युक्तिपूर्वक पचायके अवलेह सिद्ध करे यह खांसी, बवासीर, ज्वर, पीनस, सूजन, गोला और क्षय इन का नाश करे ॥

व्याघ्रीहरीतक्यवलेह

समूलपुष्पच्छदकंटकार्यातुलाजले द्रोणपरिप्लुता च । हरीतकीनां

च शतं निदध्यादेतत्तु पक्त्वा चरणावशेषम् ॥ गुडस्य दत्त्वा शतमेतदग्नौ विपक्वमुत्तार्य ततः सुशीते। कटुत्रिकं च त्रिपलप्रमाणं पलानि षट् पुष्परसस्य चापि ॥ क्षिपेच्चतुर्जातपलं यथाग्निप्रयुज्यमानो विधिनावलेहः । वातात्मकं पित्तकफोद्भवं च द्विदोषकासानपि सन्निपातान् ॥ क्षतोद्भवं कासक्षयं च हन्यात्सपीनसश्वासमुरःक्षतं च । यक्ष्माणमेकादशमुग्रभूयं भृगूपदिष्टं हि रसायनं स्यात् ॥

अर्थ–कटेरी का पंचांग ४०० तोले और ४०० तोले हरड ले इन को २०४८ तोले जल में डालके चतुर्थांश शेष काढा करे फिर उस में ४०० तोले गुड डालके उत्तम अवलेह योग्य पाक करे जब सिद्ध हो जावे तब उतार लेवे और शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषध डाले जैसे सोंठ, काली मिरच और पीपर चार २ तोले, सहत २४ तोले तथा दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये चार तोले डाले फिर इस को बलाबल विचारके खाने को देय तो वात, पित्त, कफ, द्विदोष, सन्निपात इन से होनेवाले तथा क्षतकास, क्षयकास, पीनस, उरःक्षत, ग्यारह प्रकार के क्षय इन को नाश करे यह रसायन भृगु ने कहा है ॥

कासकंडनावलेह

अजामूत्रं शतपलं मंदाग्नौ गुडपाकवत् । पक्त्वा बिभीतकं चूर्णं पलद्वयमितं क्षिपेत् ॥ पलं पिप्पलिचूर्णं च पलमात्रं मृतायसम् । कंटकारीफलरजो निःक्षिपेच्च पलद्वयम् ॥ ततो माषद्वयं खादेट्टंकक्कर्षमथापि वा । क्षौद्ररंभांबुना वापि सर्वकासात्प्रमुच्यते ॥ असाध्यभिषजा त्यक्ताश्चिरजापथ्यवर्जिताः । ये कासास्ते त्वनेनाशु प्रणश्यंति न संशयः ॥ कासकंडननामायं योग आत्रेयभाषितः ॥

अर्थ–बकरी के मूत्र ४०० तोले को मंदाग्नि पर रखके गुडपाक के समान पक्व करके उस में बहेडे का चूर्ण ८ तोले, पीपल का चूर्ण ४ तोले, लोह की भस्म ४ तोले, कटेरी के फल का चूर्ण ८ तोले इन सब को एकत्र करके सहत से अवलेह बनावे यह कासकंडनावलेह को दो मासे वा दस मासे अथवा एक तोला नित्य सेवन करे अथवा केले के जल से देवे तो बहुत दिनों से वैद्यों ने छोडा तथा पथ्यहीन ऐसा खांसी का रोग शीघ्र नष्ट करे यह आत्रेयऋषि ने कहा है ॥

हेमगर्भपोटली

शुद्धसूतं त्रिभागं च तत्समं लोहभस्म च । भागैकं गंधकं दद्या-
त्तदर्धं स्वर्णमेव च ॥ कज्जलीं कारयेत्तत्तु खल्वके सप्तवासरम् ।
अथ निर्गुंडिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ अथवा कनकद्रावैर्गुटि-
कां कारयेत्ततः । किंचिच्छलिसमायुक्तवस्त्रे गोलं निधाय च ॥
बध्नीयात्पोटलीमेवं ततश्च त्रिपुटं पचेत् । दृढमृन्मयपात्रस्थे
गंधं दत्त्वाधरोत्तरम् ॥ तन्मध्ये पोटलीं न्यस्य निर्वातभवनांतर-
म् । वितस्तिप्रमितां गर्त्तां तस्यां संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥ अंगुली-
मुद्रिकाभिश्च ज्वालयेदिंधनानि च ॥ यामेन सिद्धतां याति
हेमगर्भाख्यपोटली ॥ अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

अर्थ-शुद्ध पारा ३ भाग, लोहभस्म ३ भाग, गंधक १ भाग और सुवर्ण की भस्म आधा भाग इन की खरल में कजली करे फिर इस को निर्गुंडी के रस से ७ दिन भावना देवे फिर धतूरे के रस में खरल करके गोला कर लेवे फिर इस के ऊपर कपडा लपेट दे और मिट्टी के बरतन में गंधक बिछाय इस गोले को रख देवे और ऊपर से फिर गंधक बिछाय दे· फिर निर्वात स्थान में एक बितस्त का गड्ढा करके उस में इस गोले के पात्र को रखके उस पर मुद्रा दे उस के ऊपर १ अंगुल मिट्टी डाल देवे और एक प्रहर लकडी की अग्नि देवे तो यह हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे इस को अनुपान के साथ सर्व रोग पर देवे तो सब को नष्ट करे ॥

हेमगर्भ

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्धं कनकस्य च। तदर्धं ताम्रकं चैव मौ-
क्तिकं विद्रुमं समम्॥तत्समानेन बलिना सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पचेद्भूधरयंत्रके ॥ मृदुना वह्निना चैव
स्वांगशीतं समुद्धरेत्। बलिमेव च सम्यग्वै षड्गुणं जारयेत्सुधीः॥
हेमगर्भरसो नाम त्रिषु लोकेषु विश्रुतः । कासश्वासेषु सर्वेषु
शूलेषु च हितस्तथा॥ तत्तद्रोगानुपानेन सर्वान् रोगाञ्जयेत्परम् ॥

अर्थ—पारा ४ भाग, ताम्रभस्म १ भाग, मोती ११ भाग, मूंगा १भाग और गंधक १ भाग इन सब को खरल में डालके कजली करे फिर इस का गोला बनाय उस को

भूधरयंत्र में रख मंदाग्नि से पचन करावे. जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल गंधक के साथ खरल करके फिर पुट देवे. इस प्रकार षड्गुण गंधक जारण करे तो यह हेमगर्भरस त्रिलोकी में खांसी, संपूर्ण श्वास और शूल इन का नाशक प्रसिद्ध है तथा रोगोक्त अनुपान के साथ सर्व रोगों का नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

शुद्धसूतं पलं चैकं पादांशं शुद्धहेमकम् । शुद्धगंधस्य माषैकं प्रतिकर्षेण योजयेत्॥ त्रयमेकत्र कुर्वीत श्लक्ष्णचूर्णं च कारयेत् । सुदृढं बंधयेद्वस्त्रे बहिः सूतं समं बलिम् ॥ वस्त्रं गृहीत्वा गुटिका तदंतर्बंधयेत्पुनः । शरावसंपुटे न्यस्य मुखे मुद्रां च कारयेत् ॥ भूमिसंपुटगं कृत्वा भूधराख्ये पचेत्पुटे । स्वांगशीतं समुत्धृत्य त्यजेज्जीर्णं च गंधकम्॥पुनः संचूर्ण्य गुटिकाः सुदृढं बंधयेद्भिषक्। तया बहिर्बलिं दत्त्वा भूधराख्ये पुनः पचेत्॥ एवं दत्त्वा मुनिपुटं रसः स्याद्धेमगर्भकः। श्वासकासेषु सर्वेषु शूलेषु विहितस्तथा ॥

अर्थ–शुद्ध पारा ४ तोले, शुद्ध सुवर्ण १ तोला और शुद्ध गंधक १ मासा ले तीनों को एकत्र करके बारीक चूर्ण करे फिर इस को दृढ कपडे में बांधे और उस कपडे के बाहर पारे गंधक की कजली कर उस को जल में सानके लेप कर दे और दूसरा कपडा चढाय देवे फिर गोले को सरावसंपुट में रख मुख को मुद्रा देकर बंद कर देवे. फिर इस को पृथ्वी में गड्ढा खोद भूधरयंत्र में पचन करे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके ऊपर जली हुई गंधक को दूर करे फिर चूर्ण करके दृढ गोला बनाय लेवे उसी प्रकार कपडा लपेट कजली की पंक ऊपर से लपेट देवे और भूधर-यंत्र में रखके फूंक देवे इस प्रकार सात पुट देवे तो हेमगर्भपोटलीरस सिद्ध होवे. यह खांसी, श्वास, शूल इन पर परम हितकारी है तथा अनुपान के साथ सर्व रोगों का नाश करे है ॥

कासकेसरी

दरदं मरिचं मुस्तं टंकणं च विषं समम् ।
जंबीराद्भिश्च संमर्द्य कुर्यान्मुद्गनिभां वटीम् ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव कासं श्वासं व्यपोहति ॥

अर्थ–हिंगुल, काली मिरच, नागरमोथा, सुहागा और सिंगियाविष इन सब को

जंभीरी के रस में खरल कर मूंग के समान गोली बनावे इस को अदरख के रस से खाने को देवे तो खांसी और श्वास इन को दूर करे ॥

रसेंद्रवटी

कर्षं शुद्धरसेंद्रस्य गंधकस्याभ्रकस्य च । ताम्रस्य हरितालस्य लोहस्य च विषस्य च ॥ मरिचस्य च सर्वेषां श्लक्ष्णचूर्णं पृथक् पृथक् । मानोल्बौ खंडकर्षं च निर्गुंडी काकमाचिका ॥ केशराजभृंगराजस्वरसेन सुभावितम् । कलायपरिमाणं तु गुटिकां कारयेद्भिषक्॥ कृत्वादौ शिवमभ्यर्च्य द्विजादीन्परितोषितान् । जीर्णान्नो भोजयेत्पश्चात्क्षीरमांसरसाशनः ॥ अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति । कासं पंचविधं हंति श्वासं चैव सुदुर्जयम् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, हरिताल, लोह इन की भस्म और सिंगियाविष तथा काली मिरच इन का बारीक चूर्ण करके निर्गुंडी, मकोय, काला भांगरा और भांगरा इन के रस की भावना देकर मटर के बराबर गोली बनावे इस को श्रीशिव का पूजन कर तथा ब्राह्मणों को दान देकर सेवन करे और अन्न पचने पर फिर भोजन करे, दूध और मांसरस भोजन करे तो सैंकडों वैद्यों से जो अच्छा न होवे ऐसा अम्लपित्त, पांच प्रकार की खांसी और दुर्जय श्वास इन को नाश करे ॥

नीलकंठरस

सूतकं गंधकं लोहं विषं चित्रकपत्रकम् । वरांगं रेणुका मुस्ता ग्रंथिकं नागकेसरम् ॥ फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्बं तुल्यं तथैव च । एतानि समभागानि गुडो द्विगुणमुच्यते ॥ संमर्द्य गुटिकां कृत्वा भक्षयेच्चणमात्रकम् । कासे श्वासे तथा गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ मूत्रकृच्छ्रे मूढगर्भे वातरोगे च दारुणे । नीलकंठरसो नाम शंभुना निर्मितः स्वयम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, सिंगियाविष, चित्रक, पत्रज, मोटी दालचीनी, पित्तपापडा, नागरमोथा, पीपरामूल, नागकेशर, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल और ताम्रभस्म ये समान भाग लेवे तथा सब औषधों से दूना गुड डाले सब

को घोटके एक जीव करे और चने के बराबर गोली बनावे यह खांसी, श्वास, गोला, प्रमेह, विषमज्वर, मूत्रकृच्छ्र, मूढगर्भ और वातरोग इन पर भक्षण करे यह नीलकंठ नामक रस श्रीशिव ने स्वयं निर्माण करा है ॥

लोकनाथपोटली

कृत्वा जंभरसेन गंधरसयोस्तत्तुल्यताम्रावृतं गोलं लावणयंत्रगर्भनिहितं रुध्वा पचेत्तं शनैः । यामानष्टकपर्दजेन सकलं तुल्येन तद्भस्मना युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं दापयेत् ॥ संशुद्धामिति पोटलीं सहविषं मारीचचूर्णेन तां मृद्गीयादिति लोकनाथविधिना दौर्बल्यकासादिषु । शोफामानिलगुल्मशूलकसनश्वासग्रहण्यार्शसी प्रौढे यक्ष्मणि पांडुरोगसहिते संतापमांद्यारुचौ ॥

अर्थ--गंधक और पारा इन दोनों की कजली करके नींबू के रस में खरल करे फिर कजली के समान तामे की डिब्बिया लेवे उस में इस कजली को भरके बंद कर देवे और एक हांडी में निमक भरके बीच में उस डिब्बी को रखे ऊपर फिर निमक भर देवे और उस के मुख को बंद कर देय तथा ऊपर से उस पर कपडमिट्टी देकर सुखाय ले इस को अग्नि के संपुट में रखके आठ प्रहर पर्यंत पचावे जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके उस के बीच में से उस डिब्बी सहित भस्म को निकाल पीस लेवे और उस में समान भाग कौडी की भस्म मिलावे फिर चित्रक के रस में घोटके पुट देवे उस पुट में से निकालके सिंगियाविष और काली मिरच का चूर्ण मिलावे और खरल में डालके बारीक पीस डाले इस लोकनाथपोटलीरस को लोकनाथरस के सदृश देवे तो दुर्बलता, कृशता, सूजन, आमवात, गोला, शूल, खांसी, श्वास, संग्रहणी, बवासीर, क्षयरोग, पांडुरोग, संताप, मंदाग्नि और अरुचि इन को नाश करे॥

अमृतार्णवरस

पारदं गंधकं शुद्धं मृतलोहं च टंकणम् । रास्नाविडंगत्रिफलादेवदारुकटुत्रयम् ॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यांशचूर्णितम् । त्रिगुंजं सर्वकासार्तः सेवयेदमृतार्णवम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पद्माख, सहत और सिंगियाविष ये सब समान

भाग लेवे सब का चूर्ण करके तीन रत्ती सर्वकासयुक्त रोगी को देवे. इसे **अमृतार्णवरस** कहते हैं॥

अग्निरस

रसगंधकपिप्पल्यो हरीतस्याक्षवासकः । यष्ट्यांतरगुडं चूर्णं बब्बूलक्काथभावितम् ॥ एकविंशतिवारेण शोषयित्वा विचूर्णयेत् । भक्षयेन्मधुना हंति कासमग्निरसो ह्ययम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और मुलहटी इन को समान भाग ले चूर्ण करे फिर इस को बबूर के काढे की २१ भावना देवे तथा सुखायके चूर्ण कर लेवे इस को सहत के साथ देवे तो खांसी को दूर करे. इस को अग्निरस कहते हैं॥

कासकर्त्तरी

वंगं कृष्णाभयाक्षाटरूषभाङ्गर्यः क्रमोत्तराः । तत्समं खादिरं क्षारं बब्बूलक्काथभावितम् ॥ एकविंशतिवारं च मधुना कासकर्तरी । कासं श्वासं क्षयं हिक्कां हंत्येतन्नात्र संशयः ॥

अर्थ–वंग [लौंग], पीपल, हरड, बहेडा, अडूसा और भारंगी ये क्रम से अधिक २ भाग लेवे इन सब के बराबर खैर का सार ले वे अथवा क्षार लेवे इन सब को एकत्र करके बबूल के काढे की २१ भावना देवे तो यह कासकर्त्तरीरस बने इस रस को सहत में मिलायके देवे तो खांसी, श्वास, क्षय और हिचकी इन का नाश करे इस में संदेह नहीं ॥

कफाग्निवटी

कर्पूरमर्धकर्षं मृगमदमपि देवकुसुमयुगम् । मरिचं कणाक्षकुलिंजनमेकैकं शुक्तिपरिमाणम् ॥ दाडिमफलवल्कलपलमखिलसमं खदिरसारमवचूर्ण्य । वटिका मुद्गसमाना कृता धृतास्ये कफघ्नी स्यात् ॥

अर्थ–कपूर और कस्तूरी एक २ तोला, लौंग २ तोले और काली मिरच, पीपल, बहेडा, कुलिंजन ये प्रत्येक आधा २ तोला लेय तथा अनार की छाल ४ तोले लेय इन सब को खैरसार के काढे से खरल करके मूंग के समान गोली बांधे इस को मुख में रखे तो कफ का नाश करे ॥

कासपथ्य

शालिषष्टिकगोधूममाषमुद्गकुलित्थकाः । छाग्याः पयो घृतं बिंबी वार्ताकं बालमूलकम् ॥ कासमर्दकजीवंती वास्तुकं बीज-पूरकम् । गोस्तनी लशुनं लाजा व्योषमुष्णोदकं मधु ॥ पथ्यमेतद्यथादोषमुक्तं कासगदातुरे ॥

अर्थ–शालीचांवल, गेहूं, उडद, मूग, कुलित्थ, बकरी का दूध व घी, कंदूरी, बैंगन, छोटी मूली, कासमर्द, जीवंती, वास्तुक, बिजोरा, मुनक्का, लहसन, खील, सोंठ, मिरच, पीपल, गरम पानी और सहत ये पदार्थ कासरोग में पथ्य हैं ॥

अपथ्य

मैथुनं स्निग्धमधुरं दिवास्वापं पयो दधि ।
भिष्टान्नं पायसादीनि कासी धूमं च वर्जयेत् ॥

अर्थ–मैथुन, स्निग्ध (चिकना) और मीठे पदार्थ, दिन में सोना, दूध, दही, पिष्टान्न, पायस और धुआ यह कासरोग में अपथ्य है ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे कासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता.

हिक्काकर्मविपाकः ।

योकृत्वा ब्राह्मणो भुंक्ते स्नानहोमजपादिकम् ।
स हिक्कारोगसंयुक्तस्तत्पापस्यापनुत्तये ॥
चांद्रायणत्रयं कुर्यात् त्रीन् कृच्छ्रांश्च समाचरेत् ॥

अर्थ–जो ब्राह्मण पूर्व जन्म में स्नान, होम, जपादिक नहीं करे और भोजन कर लेय वह हिक्का (हिचकी) रोगी होता है इस पाप के दूर करने को तीन चांद्रायण व्रत और तीन कृच्छ्रव्रत ये प्रायश्चित्त करे तो हिचकी का रोग दूर होवे ॥

हिक्कानिदान

विदाहिगुरुविष्टंभिरूक्षाभिष्यंदिभोजनैः । शीतपानाशनस्नान-रजोधूमातपानिलैः ॥ व्यायामकर्मभाराध्ववेगघातापतर्पणैः । हिक्का श्वासश्च कासश्च नृणां समुपजायते ॥

अर्थ–दाहकारक, भारी, अफराकारक, रूखी, अभिष्यंदी ऐसे भोजन करने से, शीतल जल पीने से, शीतल अन्न खाने से, शीत जल करके स्नान करने से, रज और धूंआ मुख नाक में जाने से, गरमी हवा में डोलने से, दंड कसरत के करने से, भार के उठाने से, बहुत मार्ग के चलने से, मलादिक वेग के रोकने से और उपवास के करने से मनुष्य के हिक्का (हिचकी), श्वास (दमा) और कास (खांसी) ये रोग उत्पन्न होते हैं ॥

संप्राप्ति

मुहुर्मुहुर्वायुरुदेति सस्वनो यकृत्प्लिहांत्राणि मुखादि वा क्षिपन्।
सघोषवानाशु हिनस्ति यस्मात्ततस्तु हिक्केत्यभिधीयते बुधैः ॥

अर्थ–उदानवायु प्राणवायु के साथ मिलकर जब निकले तब मनुष्य हिग्हिग् ऐसा शब्द करे और कलेजा प्लीह इन को मुखपर्यंत खींच लावे (इस स्थान में मुख शब्द करके प्राण, जल, अन्न इन के वहनेवाले मार्ग जानने) और मुख में आकर बडा शब्द निकले उस को वैद्यवर हिक्का (हिचकी) रोग कहते हैं यह शीघ्र प्राणों का हर्त्ता होय है ॥

हिक्का के भेद

अन्नजां यमलां क्षुद्रां गंभीरां महतीं तथा।
वायुः कफेनानुगतः पंच हिक्काः करोति च ॥

अर्थ–वात कफ से मिलकर १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गंभीरा और ५ महती ऐसे पांच प्रकार की हिचकी रोग को प्रगट करे ॥

पूर्वरूप

कंठो रसो गुरुत्वं च वदनस्य कषायता।
हिक्कानां पूर्वरूपाणि कुक्षेराटोप एव च ॥

अर्थ–कंठ और हृदय भारी रहे और वादी से मुख कसेला रहे, कूख में अफरा रहे यह हिचकी का पूर्वरूप जानना ॥

सामान्यचिकित्सा

यत्किंचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम्।
भेषजं पानमन्नं वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥

अर्थ–जो कुछ कफवातनाशक, गरम, वादी को अनुलोमन कर्त्ता ऐसे औषध, पान और अन्न ये हिचकी तथा श्वास इस विषय में हितकारक हैं ॥

हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्वेद इष्यते ।
ऊर्ध्वाधःशोधनं शक्ते दुर्बले शमनं मतम् ॥

अर्थ–हिचकी और श्वासवाले रोगी के देह में प्रथम तेल की मालिस करके पसीने निकाले फिर यही रोगी बलवान् होय तो उस को वमन और विरेचन देकर देह शुद्ध करे और रोगी निर्बल होवे तो दोष शमन करनेवाली औषध देवे ॥

प्राणावरोधतर्जनविस्मापनशीतवारिपरिषेकैः ।
चित्रैः कथाप्रयोगैः शमयेद्धिक्कां मनोभिघातैश्च ॥

अर्थ–प्राणायाम से प्राणपवन को रोकना, भय दिखाना अथवा आश्चर्य करनेवाली बात कहना, शीतजल की देह में छींटा देना और अनेक प्रकार की वार्त्ता कहनी अथवा मन को बिगाडना इन उपचारों के करने से हिचकीरोग को शमन करे ॥

त्याज्यहिक्का

वातेन हिक्काः प्रभवंति पंच तासामसाध्यत्वमुदाहरंति ।
अक्षीणमांसस्य भवंति साध्याः प्रांते च हिक्के परिवर्जनीये ॥

अर्थ–वात से पांच प्रकार की हिचकी होती हैं वे बहुत असाध्य है. अक्षीणमांसवाले की मात्र साध्य हैं. आखिर की दो हिचकी वैद्य को त्याग देनी चाहिये ॥

कासप्रकरणोक्तं च भिषगत्र नियोजयेत् ।
क्षयोक्तं वातकासे च हिक्काश्वासे नियोजयेत् ॥

अर्थ–जो यत्न खांसी रोग में कह आये हैं वे सब इस बात की हिचकी रोग में करे. तथा क्षयरोग में यत्न कहे हैं वे सब इस वात की खांसी में करने चाहिये ॥

अन्नजाहिक्कानिदान

पानान्नैरतिसंयुक्तैः सहसा पीडितोनिलः ।
हिक्कयत्यूर्ध्वगो भूत्वा विद्यात्तामन्नजां भिषक् ॥

अर्थ–अन्न और पानी के बहुत सेवन करने से वात अकस्मात् कुपित हो ऊर्ध्वगामी होकर मनुष्य के अन्नजा हिचकी प्रगट करे ॥

यूष

कासमर्दकपत्राणां यूषः सौभांजनस्य च ।
शुष्कमूलकमंडस्तु हिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ–कसोंदी के पत्ते अथवा सहजने की छाल अथवा सूखी मूली का मांड हिचकी और श्वास इन को दूर करे ॥

सदधिव्योषसर्पिष्को यूषो वातार्कजो हितः ॥

अर्थ–बैंगनों का मंड, दही, सोंठ, काली मिरच, पीपल और घी इन को मिला-यके पीवे तो हिचकी दूर हो ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्था नागरं व्याघ्री वासाभिः क्वथितं जलम् ।
पीतं पुष्करसंयुक्तं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

अर्थ–कुलथी, सोंठ, कटेरी और अडूसा इन का काढा पुहकरमूल का चूर्ण डालके पीवे तो यह हिचकी और श्वास को दूर करे ॥

हरिद्रादिलेह

हरिद्रा मरिचं द्राक्षा गुडं रास्ना कणा शठी । लिह्यात्तैलेन वि-लिहन् श्वासं प्राणहरामपि ॥ हिक्कां हरति प्रबलां श्वासातिप्र-भूतं निवारयति ॥

अर्थ–हलदी, काली मिरच, दाख, गुड, रास्ना, पीपल और कचूर इन के चूर्ण को तेल के साथ अवलेह बनायके देवे तो श्वास, प्राणहारक हिचकी तथा अत्यंत बढी हुई श्वास इन को नष्ट करे ॥

अभयादिकल्क

अभयानागरकल्कं पौष्करयावशूकमरीचकल्कं वा ।
तोयेनोष्णेन पिबतः श्वासहिक्कां नियच्छति ॥

अर्थ–हरड और सोंठ इन का अथवा पुहकरमूल और जौं के अंकुर और काली मिरच इन का कल्क करके इस को गरम जल के साथ पीवे तो श्वास और हिचकी ये शांत होवें ॥

चंद्रसूरकाढा

चंद्रसूरस्य बीजानि क्षिपेदष्टगुणे जले । यदा मृदूनि गृह्णीया-त्ततो वाससि गालयेत् ॥ हिक्कातिवेगकललस्तज्जलं पलमात्र-या । पिबेत्पुनः पुनश्चापि हिक्का शीघ्रं प्रणश्यति ॥

अर्थ–हालों के बीजों को अठगुने जल में भिगोवे जब नरम हो जावे तब उन को मलके कपडे में छान लेवे. इस जल को चार ४ तोले वारंवार पीवे तो हिचकी बहुत जल्दी दूर हो ॥

मधुना कटुकाचूर्णं लीढं हिक्कानिवारणम् ॥

अर्थ–कुटकी के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो हिचकी का आना बंद होय॥

यमलाहिक्कानिदान

चिरेण यमलैर्वेगैर्या हिक्का संप्रवर्तते ।
कंपयंती शिरोग्रीवं यमलां तां विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ–ठहर ठहरके दो दो हिचकी चलें शिरकंधा को कंपावे उस को यमला हिचकी जाननी ॥

दशमूला यवागू

दशमूली सठी रास्ना पिप्पली विश्वपौष्करैः। शृंगी तामलकी भार्ङ्गी गुडूचीनागरादिभिः ॥ यवागूं मधुना सिद्धां कषायं वा पिबेन्नरः । कासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ–दशमूल, कचूरा, रास्ना, पीपर, सोंठ, पुहकरमूल, काकडासिंगी, भूयआंवला, भारंगी, गिलोय, नागरमोथा इन से सिद्ध करी हुई यवागू को सहत के साथ पीवे अथवा इन का काढा पीवे तो खांसी, हृदयरोग, पसली की वादी, श्वास, हिचकी इन को शांत करे ॥

हिंग्वादियवागू

हिंगुसौवर्चलाजाजीबिडपुष्पकचित्रकैः ।
सिद्धा कर्कटशृंग्या च यवागूः श्वासहिक्किनाम् ॥

अर्थ-हींग, संचरनोन, जीरा, बिड निमक, पुहकरमूल, चित्रक और काकडासिंगी इन सब से सिद्ध करी हुई कांजी श्वास वा हिचकी इन को दूर करे ॥

क्षुद्राहिक्कानिदान

विकृष्टकालैर्या वेगैर्मंदैः समभिवर्तते ।
क्षुद्रिका नाम सा हिक्का जत्रूमूलात्प्रधावति ॥

अर्थ–जो हिचकी बहुत देर में कंठ हृदय की संधि से मंद मंद चले उस को क्षुद्रानाम हिचकी कहते हैं ॥

दशमूलीकाढा

दशमूलीजलयुतं हितं हिक्कासु योजयेत् ।
श्वासकासहरः सर्वो विधिरत्रापि युज्यते ॥

अर्थ–दशमूल के काढे के साथ हिचकी रोग पर जो हित पदार्थ होवे वह देवे तथा संपूर्ण श्वास और खांसी इन के नाशक जो औषधी हैं वह हिचकी रोग पर देवे ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्थयवकोलांबुदशमूलबलाजलम् ।
पानार्थं कल्पयेत्कासहिक्काश्वासप्रशांतये ॥

अर्थ–कुलथी, जौं, बेर, दशमूल और खिरेटी इन का काढा खांसी, हिचकी तथा श्वास इन की शांति होने के वास्ते पीवे ॥

धात्र्यादिकाढा

धात्री च मागधी शुंठी क्वाथश्चैषां सितायुतः ।
हिनस्ति हृदयोद्भूतां हिक्कां प्राणापनोदिनीम् ॥

अर्थ–आंवले, पीपल और सोंठ इन के काढे में मिश्री मिलायके पीवे तो प्राणों के नाश करनेवाली घोर हिचकी का नाश होय ॥

गंभीराहिक्कानिदान

नाभिप्रवृत्ता या हिक्का घोरा गंभीरनादिनी । शुष्कास्यकंठजिह्वा स्याच्छ्वासकासरुजाकरी ॥ अनेकोपद्रववती गंभीरा नाम सा स्मृता ॥

अर्थ–जो हिचकी नाभि के पास से उठ घोर गंभीर शब्द करे और जिस में ज्वरादि अनेक उपद्रव हों उस को गंभीरा हिचकी कहते हैं ॥

पाटल्यादियोग

पाटल्याः फलतोयेन क्षौद्रेण च समन्वितम् ।
हेमभस्म निहंत्येव हिक्काः पंचातिदुस्तराः ॥

अर्थ–पाढर के फलों का रस और सहत इन के साथ सुवर्ण की भस्म सेवन करे तो अतिकठोर पांच प्रकार की हिचकियों का नाश करे ॥

दशमूलीकाढा

दशमूलीकषायेण मधुना च समन्वितम् ।
कांतायोभस्म हिक्कानां पंचानां पंचतां नयेत् ॥

अर्थ–दशमूल का काढा और सहत इस में कांतलोह का भस्म लेने से पांच प्रकार की हिचकियों का नाश होता है ॥

छागदुग्धयोग

हिक्कार्तस्य पयश्छागं हंति नागरसाधितम्।
रसान्पचेत्फलाम्लांश्च लाजचूर्णं ससैंधवम् ॥

अर्थ–हिचकी पर सोंठ को डालके औटाया हुआ दूध अथवा अमलवेत से सिद्ध करा हुआ अम्लरस अथवा धान खीलों का चूर्ण सैंधा निमक डालके देवे ॥

मधुसौवर्चलयोग

मधुसौवर्चलोपेतं मातुलिंगरसं पिवेत्।
हिक्कार्तो मधुना लिह्याच्छुंठीधात्रीकणान्वितम् ॥

अर्थ–हिचकी रोगवाले को बिजोरे का रस, सहत और संचर निमक डालके पिलावे अथवा बिजोरे के रस में सोंठ, आंवला और पीपल इन का चूर्ण और सहत डालके चाटे तो हिचकीरोग दूर होवे ॥

शिखिलेह

शिखिपिच्छभस्मकृष्णाचूर्णं मधुमिश्रितं मुहुर्लीढम्।
हिक्कां हरति प्रबलां श्वासं चैवातिदुस्तरां छर्दिम् ॥

अर्थ–मोर की पांखों की भस्म और पीपल का चूर्ण इन दोनों को सहत में मिलायके वारंवार चाटे तो घोर हिचकी, श्वास और घोर वमन का रोग इन को दूर करे ॥

पिप्पल्यादिलेह

पिप्पलीमूलमधुकं गुडगोश्वसकृद्रसान्।
हिध्माभिष्यंदकासघ्नान् लिहेन्मधुघृतान्वितान् ॥

अर्थ–पीपरामूल, मुलहटी, गुड और गौ के गोबर का रस तथा घोडे की लीद का रस इन सब को मिलाय काढा करे उस में सहत और घी डालके वारंवार चाटे तो हिचकी, अंगस्फुरण तथा खांसी इन का नाश करे ॥

कपित्थस्वरसो वापि रस आमलकस्य च।
पिप्पलीक्षौद्रसंयुक्तो हिक्काश्वासनिवारणः ॥

अर्थ–कैथ का स्वरस अथवा आँवले का स्वरस इन में सहत और पीपल का चूर्ण मिलायके चाटे तो हिचकी और श्वास इन को दूर करे ॥

खर्जूरं पिप्पली द्राक्षा शर्करा चेति तत्समम्।
मधुसर्पिर्युतो लेहो हिक्काश्वासनिवारणः॥

अर्थ–खजूर, पीपल, दाख, मिश्री ये समान भाग ले इन को पीस सहत और घी मिलाय लेह बनावे यह हिचकी और श्वास इन को निवारण करे॥

कटुकादिभस्म

कटुकागैरिकाभ्यां च मुक्ताभस्म तथैव च।
बीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिकम्॥

अर्थ–कुटकी, गेरू और मोती की भस्म ये समान भाग लेवे इन को बिजोरे के रस में मिलाय और उस में सहत डालके पीवे अथवा कुटकी, गेरू, बिजोरे का रस और सहत इन को ताम्र की भस्म मिलायके चाटे तो हिचकी का नाश होय॥

कोलमज्जालेह

कोलमज्जांजनं लाजास्तिक्ता कांचनगैरिकम्। कृष्णा धात्री सिता शुंठी कासीसं दाधनाम च॥ पाटल्याः सफलं पुष्पं कृष्णा खर्जूरमुस्तकम्। षडेते पादिका लेहा हिक्काघ्ना मधुसंयुताः॥

अर्थ–बेर की गुठली की मिंगी, सुरमा और खील यह एक. कुटकी, नागकेशर और सुवर्णभस्म यह दूसरा. पीपल, आंवले, मिश्री और सोंठ यह तीसरा. हीराकसीस और कमरख यह चौथा. पाडल के फल और फूल यह पांचवां. पीपल, खजूर और नागरमोथा यह छठा. इन में से किसी को चतुर्थांश जल डालके अवलेह बनावे तो यह प्रत्येक योग हिक्का को नाश करे॥

हेममात्रा

हेममुक्तार्ककांतानां भस्म वल्लमितं वरम्। बीजपूररसक्षौद्रसौवर्चलसमन्वितम्॥ हंति हिक्काशतं सत्यमेकमात्राप्रयोगतः। का कथा पंच हिक्कानां हरणे पुनरुच्यते॥

अर्थ–सुवर्ण, मोती, ताम्र और कांतलोह इन चारों की भस्म तीन रत्ती ले बिजोरे का रस और सहत तथा संचर निमक इन के साथ एक वार भक्षण करे तो सौ हिचकियों को नाश करे फिर पांच हिचकियोंको नाश करना क्या बडी बात है?॥

पिप्पल्यादिलोह

पिप्पल्यामलकीद्राक्षाकोलास्थिमधुशर्करैः। विडंगपौष्करैर्युक्तो लोहो हंति सुदुर्जयाम्॥ छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः॥

अर्थ—पीपल, आंवला, दाख, बेर की गुठली, सहत, मिश्री, वायविडंग और पुहकरमूल इन के चूर्ण में लोह की भस्म मिलायके सेवन करे तो तीन दिन में छर्दि (वमन), हिक्का (हिचकी) और तृषा (प्यास) इन को नाश करे ॥

शंखचूलरस

रसाभ्रहेमभस्मानि वैक्रांतं सर्वतुल्यकम् । सर्वैः पंचगुणं शंखचूर्णं शुष्कं विमर्दयेत् ॥ लेहयेन्मधुना माषचतुष्कं सानुपानकम् । हिक्कां पंचविधां हंति मुमूर्षोरपि तत्क्षणात् ॥

अर्थ—पारा, अभ्रक, सुवर्ण इन तीनों की भस्म समान भाग और इन तीनों की बराबर वैक्रांतभस्म लेवे और चारों से पंचगुनी शंख की भस्म लेवे इस प्रकार सब को एकत्र कर पीस डाले फिर इस में से चार मासे भस्म सहत के साथ अनुपान के साथ खाय तो यदि मरणोन्मुख रोगी होय तोभी उस के पांच प्रकार की हिचकियों को तत्क्षण नाश करे ॥

मेघडंबररस

तंदुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यं च गंधकम् । वज्रमूषागतं चैव भूधरे भस्मतां व्रजेत् ॥ दशमूलकषायेण भावयेत्प्रहरद्वयम् । गुंजाद्वयं हरत्येष हिक्काश्वासं ज्वरं किल ॥ अनुपानेन दातव्यो रसोयं मेघडंबरः ॥

अर्थ—चौलाई के रस में पारे गंधक बराबर लेकर खरल करे फिर वज्रमूषा में भरके भूधरयंत्र में पचावे तो भस्म होय. फिर दशमूल के काढे में इस भस्म को दो प्रहर खरल करे फिर इस में से दो रत्ती खाने को देवे तो यह मेघडंबररस हिचकी, श्वास और ज्वर इन को नाश करे ॥

महाहिक्कानिदान

मर्माण्युत्पीडयंतीव सततं या प्रवर्तते ।
महाहिक्केति सा ज्ञेया सर्वगात्रप्रकंपिनी ॥

अर्थ—जो हिचकी मर्मस्थान में पीडा करती हुई और सर्व गात्र को कंपावती हुई सर्वकाल प्रवृत्त होय उस को महाहिक्का कहते हैं ॥

कटुत्रिकलेह

कटुत्रिकयवासकट्फलककारवीपौष्करैः । सशृंगिभिरतिद्रुतं

मधुयुतोवलेहो जयेत् ॥ सहिध्मकसनः कफश्वसनमंभसा सिंधुजं प्रदत्तमपि नावनं झटिति सर्व हिक्काहरम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, कायफल, अजमायन, पुहकरमूल और काकडासिंगी इन का सहत डालके अवलेह बनावे इस के सेवन करने से हिचकी, खांसी, कफ और श्वास इन को नाश करे अथवा सैंधा निमक और जल इन की नस्य देवे तो ये संपूर्ण हिचकियों का नाश करे ॥

असाध्यहिक्कानिदानलक्षण

आयम्यते हिक्कतो यस्य देहो दृष्टिश्चोर्ध्वं ताम्यते यस्य नित्यम् । क्षीणोऽन्नद्विट् क्षौति यश्चातिमात्रं तौ द्वौ चांत्यौ वर्जयेद्धिक्कमानौ ॥ अतिसंचितदोषस्य भक्तच्छेदकृशस्य च । व्याधिभिः क्षीणदेहस्य वृद्धस्यातिव्यवायिनः ॥ आयासाद्या समुत्पन्ना हिक्का हंत्याशु जीवितम् । यमिका च प्रलापार्ति-मोहतृष्णासमन्विता ॥

अर्थ–जिस का हिचकी से देह तन जावे ऊंची दृष्टि हो जावे और मोह होय क्षीण पड जाय भोजन से अरुचि होय और छीक बहुत आवे ये दोनों हिचकीवाला रोगी अर्थात् जिस को गम्भीरा और महती हिचकी होय सो वैद्य को त्याज्य है जिस के अत्यन्त दोषों का संचय हो गया हो और जिस का अन्न छूट गया हो जो कृश हो गया हो जिस के अनेक व्याधि से देह क्षीण हो गया होय और जो वृद्ध है अति मैथुन करनेवाला हो ऐसे पुरुषके ये दोनों हिचकी उत्पन्न होय तौ तत्क्षण उस रोगी के प्राण नाश करे बकवाद करे पीडा होय मोह, प्यास इन लक्षण से युक्त जो यमिका नाम की हिचकी सो तत्काल प्राणहर्त्री जाननी ॥

असाध्यलक्षण

अक्षीणश्चाप्यदीनश्च स्थिरधात्विंद्रियश्च यः ।
तस्य साधयितुं शक्या यमिका हंत्यतोऽन्यथा ॥

अर्थ–बलवान्, प्रसन्न मन, जिस की धातु और इन्द्रिय स्थिर होय ऐसे पुरुष की यमिकाहिचकी साध्य है और इस से विपरीत (अर्थात् क्षीण, दीन इत्यादि) पुरुष को तत्काल ही नाश करे· अन्नजा, क्षुद्रा यह दोनों साध्य ही दो वार आने से यमिका कहाती है चरकोक्त यमला इस जगह नहीं ग्रहण करनी चाहिये ॥

यष्ट्यादिचूर्ण

यष्ट्याह्वं वामाक्षिकेणावलीढं कृष्णाचूर्णं शर्कराढ्यं च किंवा।
सर्पिः कोष्णं क्षीरमुष्णं रसो वा हन्यादिक्षोः पानतः पंच हिक्काः ॥

अर्थ–मुलहटी और सहत अथवा पीपल और मिश्री अथवा गरम २ घी अथवा औटा हुआ दूध अथवा ईख का रस ये सब योग पांच प्रकार की हिचकियों को नाश करते हैं ॥

विश्वादिचूर्ण

विश्वाशिवाकणाचूर्णः ससितः समधुः स्मृतः।
गुडूचीनागरं नस्यं हिक्काधिक्कारकारकम् ॥

अर्थ–सोंठ, हरड और पीपल इन का चूर्ण सहत और मिश्री मिलायके चाटे अथवा गिलोय और सोंठ इन की नस्य देय तो हिचकी का नाश करे ॥

रक्तचंदनयोग

नारीपयःपिष्टसुरक्तचंदनं कृतं सुखोष्णं च सुसैंधवं च।
पिष्टं तथा सैंधवमंबुना वा निहंति हिक्कां ननु नावनेन ॥

अर्थ–स्त्री के दूध में रक्तचंदन को पीस कुछ थोडासा गरम कर उस में सैंधा निमक डालके पीवे अथवा इस सैंधा निमक को जल में मिलायके नस्य देवे तो हिचकी दूर हो ॥

कृष्णाचूर्ण

कृष्णामलकशुंठीनां चूर्णं मधुसितायुतम्।
मुहुर्मुहुः प्रयोक्तव्यं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥

अर्थ–पीपल, आंवला, सोंठ इन का चूर्ण सहत और मिश्री के साथ सेवन करे तो हिचकी और श्वास दूर होता है ॥

शृंग्यादिचूर्ण

शृंगीकटुत्रिकफलत्रयकंटकारी भार्ङ्गीसपुष्करजटालवणानि चैषाम्। चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्कां श्वासोर्ध्ववातकसनारुचिपीनसेषु ॥

अर्थ–काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कटेरी, भारंगी,

पुहकरमूल और सैंधा निमक इन का चूर्ण गरम जल से देय तो हिचकी, श्वास, ऊ-र्ध्ववात, खांसी, अरुचि और पीनस इन को दूर करे ॥

भाङ्गर्यादिचूर्ण

हिक्काश्वासी पिबेद् भार्ङ्गीसविश्वामुष्णवारिणा ।
नागरं वा सिताभार्गीसौवर्चलसमन्वितम् ॥

अर्थ–भारंगी और सोंठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे अथवा सोंठ, मिश्री, भारंगी और संचरनिमक इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो श्वास और खांसी नष्ट होय ॥

हिक्कानस्य

हरेणुकापिप्पलिकाकषायो हिंग्वन्वितोपोहति पंच हिक्काः ।
नस्यं तथालक्तकसंभवं च स्तन्येन वापोहति माक्षिकाविट् ॥

अर्थ–निर्गुंडी अथवा कबीला और पीपल इन का काढा करके उस में हींग डा-लके पीवे तो पांच प्रकार की हिचकी दूर हो अथवा लाख की नस्य देय अथवा म-क्खी के विष्टा को स्त्री के दूध में मिलायके नस्य देवे तो हिचकी दूर होय ॥

मधुकनस्य

मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पली शर्करान्विता ।
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥

अर्थ–मुलहटी और सहत पीपल और मिश्री तथा सोंठ और गुड इन तीन न-स्य में से कोई नस्य देवे तो हिचकी दूर हो ॥

मक्षिकानस्य

स्तन्येन माक्षिकाविष्टा नस्ये वालक्तकांबुना ।
योज्या हिक्काभिभूतेभ्यः स्तन्यं वा चंदनान्वितम् ॥

अर्थ–स्त्री के दूध में मक्खी की वींट पीसके अथवा लाख के रस को जल में मिलाय-के नस्य देवे अथवा स्त्री के दूध में चंदन पीसके नस्य देवे तो हिचकी का रोग दूर हो॥

शिलाजीतधूम

शिलामूलस्य पानं वा नलिकायंत्रयोगतः । नेपाल्या गोविषाणाद्वा कुष्ठसर्जरसस्य वा॥ धूमं कुशस्य वा साज्यं पिबेद्धिक्कोपशांतये ॥

अर्थ–शिलाजीत और मूली अथवा कस्तूरी और बबूर किंवा कूठ और राल अथवा दर्भ (डाभ) को घृत योग करके उस को चिलम में रखके धूमपान करे तो यह हिचकी को नाश करे ॥

श्वासावरोध

श्वासावरोधतो हिक्का शमयत्यतिवेगतः ।
चूलकैर्वा जलं पीतं धृत्वा श्वासैर्निवर्तते ॥

अर्थ–श्वास के रोकने से अथवा एक चुल्लू जल पीके तत्क्षण श्वास को रोक लेवे तो बहुत जल्दी हिचकी के रोग का नाश होवे ॥

माषादिधूम

धूमो माषनिशारजोयुतशणत्वक्संभवो हंत्यलम् ।
श्वासोर्ध्वानिलकासहृद्गलरुजोहिध्माः समस्ता अपि ॥

अर्थ–उडद और हलदी इन के चूर्ण को और सन इन को मिलायके हुक्के में रखके पीवे तो श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी, गले का रोग और सर्व प्रकार की हिचकियों को नाश करे ॥

हिंग्वादिधूम

निर्धूमांगारसंक्षिप्तहिंगुमाषरजोद्भवम् ।
हिक्का पंचापि हंत्याशु धूमः पीतो न संशयः ॥

अर्थ–निर्धूम अंगारों पर हींग और उडद का चूर्ण डालके उस के धुए को पीवे तो पांच प्रकार की हिचकियों का नाश करे ॥

हिक्कारोग में पथ्य

स्वेदनं वमनं नस्यं धूमपानं विरेचनम् । निद्रा स्निग्धानि चान्नानि मृदूनि लवणानि च ॥ जीर्णा कुलित्था गोधूमाः शालयः षष्टिका यवाः । एणतित्तिरलावाद्या जांगला मृगपक्षिणः ॥ उष्णोदकं मातुलुंगं माक्षिकं सुरभीजलम् । पक्कं कपित्थं लशुनं पटोलं बालमूलकम् ॥ पौष्करं कृष्णतुलसी मदिरा नलदंबु च । अन्नपानानि सर्वाणि वातश्लेष्महराणि च ॥ शीतांबुसेकः सहसा त्रासो विस्मापनं भयम् । क्रोधो हर्षः प्रियोद्वेगः प्राणा-

यामनिषेवणम् ॥ दग्धसिक्तमृदाघ्राणं कूर्चधारा जलार्पणम् । नाभ्यर्धपीडनं दाहो दीपदग्धहरिद्रया ॥ पादयोर्द्व्यंगुलान्नाभेरूर्ध्वं चेष्टातिहिक्किनाम् ॥

अर्थ–स्वेदन, वमन, नास, धूमपान, विरेचन, निद्रा, चिकने और नरम अन्न, निमक, पुराने कुलथी, गेहूं, सांठी चावल, जौं, एण (काला हिरन), तीतर, लवा आदि का मांस, जंगली जीव, मृग और पक्षियों का मांस, गरम जल, बिजोरा, नींबू, सहत, गोमूत्र, पके हुए कैथ, लहसन, परवल, नरम २ छोटी मूली, पोहकरमूल, काली तुलसी, मदिरा, खस का सुगंधित जल तथा वात और कफनाशक सर्व प्रकार के अन्नपान, शीतल जल का छिडकाव करना, एकसाथ त्रास देना, विस्मापन (भुलाई में डाल देना), भय दिखाना, क्रोध करना, हर्ष, प्रिय और उद्वेग करनेवाले पदार्थ, प्राणायाम (श्वास का रोकना), अग्नि से गरमागरम मिट्टी पर जल छिडकके सूंघना, कूर्च (कुशा की सी गड्डी) से अथवा धारा से जल का गेरना, नाभी के ऊपर दाबना तथा जली हुई हलदी से नाभि के ऊपर दाग देना अथवा पैरों से ऊपर दो अंगुल पर दाग देना, अथवा नाभि से दो अंगुल ऊपर दाग देना ये प्रकार हिचकी रोगवाले को हितकारी हैं ॥

हिक्कारोग में अपथ्य

वातमूत्रोद्गारकासशकृद्वेगविधारणम् । रजोनिलातपायासान्विरुद्धान्यशनानि च ॥ विष्टंभीनि विदाहीनि रूक्षाणि कफदानि च । निष्पावमाषपिण्याकवारिजानूपमामिषम् ॥ अविदुग्धं दंतकाष्ठं बस्तिमत्स्यांश्च सर्षपान् । आम्लं तुंबीफलं कंदं तैलभृष्टमुपोदिकाम् ॥ गुरु शीतं चान्नपानं हिक्कारोगी विवर्जयेत् ॥

अर्थ–अधोवायु, मूत्र, डकार, खांसी और मल इन की बाधा को रोकना, धूल, पवन, धूप, परिश्रम (शीत), विरुद्धभोजन, चौरा, उडद, (पिष्ट पदार्थ), पिण्याक (खल), जल के जीव और जल किनारे रहनेवाले जीवों का मांस, भेड का दूध, दांतन करना, बस्तिकर्म, मछली, सरसों, खटाई, तूंबी का फल, कंद के साग, तैल में छुका पोई का साग, भारी और शीतल ऐसे अन्न और पान इन सब को हिचकीरोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे हिक्कारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

श्वासकर्मविपाकः।

कृतघ्नो जायते मर्त्यः कफवान्श्वासकासवान् । उष्णज्वरो च नित्यं हि पित्तरोगसमन्वितः ॥ चांद्रायणत्रयं कुर्यात्पंचाशद्द्विप्रभोजनम् । विष्णोर्नामजपं कुर्यात्तथा चैव द्विजोत्तमान् ॥ पूजयेद्भोजयेद्दद्यात्तन्मना नान्यमानसः ॥

अर्थ–जो प्राणी कृतघ्नी (किसी के करे हुए उपकार को न माने) वह कफ, श्वास, खांसी, उष्ण ज्वर और पित्तरोग इन से पीडित होता है. इस पाप के दूर करने को तीन चांद्रायण प्रायश्चित्त करके ५० ब्राह्मणों को जिमावे तथा विष्णुसहस्रनाम का पाठ करे और ब्राह्मणों का पूजन करके उन को भोजन करावे तथा दान देवे ॥

दूसरा प्रकार

कुरुक्षेत्रादिदेशेषु कालेषु ग्रहणादिषु । महादानानि गृह्णीयान्निषिद्धान्यथ वा स्वयम् ॥ अपात्रभूतो दातृभ्यो निषिद्धेभ्यश्च मानवः । स पामाश्वासकासैश्च कुक्षिस्थकृमिभिस्तथा ॥ कंडूत्या चैव पीड्येत तद्रोगस्य प्रशांतये । महिषीं यमदैवत्यां दद्याद्वित्तानुसारतः ॥ काम्यं यद्दीयते दानं तत्समग्रं सुखावहम् । असमग्रं तु दोषाय भवतीह परत्र च ॥ जपेन्नारायणस्याथ नाम्नां चैव सहस्रकम् । हिरण्यं रक्तवासांसि पंचाशद्विप्रभोजनम् ॥ सहस्रकलशस्नानं प्रकुर्याद्रोगशांतये ॥

अर्थ–जो प्राणि कुरुक्षेत्रादि पुण्यदेशों में, ग्रहणादि पुण्य काल में, निषिद्ध मनुष्य से (जिस का दान लेना वर्जित है) दान लेवे अथवा जो दान लेने योग्य नहीं है उस को लेवे तो वह खुजली, श्वास, खांसी, कुक्षिरोग, कृमि और कंडू इन से पीडित होता है. उस के दूर करने को यमदेवता जिस का ऐसा भैंस का दान यथाशक्ति करे. जो काम्य कर्म करे वह संपूर्ण होने से सुख होता है और आधा रहने से वही कर्म दुखदाई होता है तथा इस लोक और परलोक में पातक लगे. उस को विष्णुसहस्रनाम का जप करना अथवा सुवर्ण, रक्त वस्त्र दान करे और ५० ब्राह्मणों को भोजन करावे, किंवा सहस्र कलशाभिषेक करे तो रोग दूर होय ॥

तीसरा प्रकार

पिशुनो नरकस्यांते जायते श्वासकासवान् ।
घृतं तेन प्रदातव्यं सहस्रपलसंख्यया ॥

अर्थ–पिशुन (चुगलखोर) मनुष्य प्रथम नरकों को भोगे पश्चात् नरक भोगने के श्वास और खांसीवाला होवे. उस के दूर करने को इस प्राणी को १००० पल अर्थात् चार सौ तोले घी का दान करे ॥

श्वासनिदान

महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैस्तु पंचधा ।
भिद्यते स महाव्याधिः श्वास एको विशेषतः ॥

अर्थ–हिक्का श्वास का एक हेतु होने से हिक्का के अनन्तर श्वासरोग को कहते हैं. महाश्वास, ऊर्ध्वश्वास, छिन्नश्वास, तमकश्वास और क्षुद्रश्वास इन भेदों से एक श्वासरोग पांच प्रकार का है ॥

प्राग्रूप

प्राग्रूपं तस्य हृत्पीडा शूलमाध्मानमेव च ।
आनाहो वक्त्रवैरस्यं शंखनिस्तोद एव च ॥

अर्थ–हृदय दूखे, शूल होय, अफरा होय, पेट तनासा होय, कनपटी दूखे, मुख में रस का स्वाद आवे नहीं यह श्वासरोग का पूर्वरूप है ॥

संप्राप्ति

यदा स्रोतांसि संरुध्य मारुतः कफपूर्वकः ।
विष्वग्व्रजति संरुद्धस्तदा श्वासं करोति सः ॥

अर्थ–सर्व देह में विचरनेवाला पवन जब कफ से मिलकर प्राण, अन्न, उदक वहनेवाली सब नसों के मार्ग को रोक देवे तब पवन फिरने से रुककर श्वासरोग को प्रकट करे ॥

सामान्यचिकित्सा

यत्किंचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम् । भेषजं पानमन्नं वा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥ हिक्काश्वासातुरे पूर्वं तैलाक्ते स्वेद इष्यते । ऊर्ध्वाधःशोधनं वहेद्दुर्बले शमनं मतम् ॥

अर्थ–जो कुछ कफ वादी के नाशक, गरम, वादी को अनुलोमन करनेवाले

औषध, पान और अन्न है वह सब हिचकी और श्वास रोग पर देवे अथवा हिचकी और श्वास ये रोग जिस के हैं उस के प्रथम देह में तेल की मालिस करके पसीने निकाले और वमन तथा अग्निदीपनकर्त्री क्रिया करे ॥

दूसरा प्रकार

स्नेहबस्तिमृते केचिदूर्ध्वं चाधश्च शोधनम् । मृदुप्राणवतां श्रेष्ठं श्वासिनामादिशंति हि ॥ सर्वेषु श्वासरोगेषु वातश्लेष्मनिबर्हणम् । विदधीत विधिं विद्वानादौ स्वेदं मृदुं तथा ॥

अर्थ—स्नेहन और बस्तिकर्म इन के विना ऊर्ध्वाध अर्थात् ऊपर नीचे शोधन करना अल्पप्राणवाले (निर्बलों) को उत्तम है. संपूर्ण श्वासरोगों में वात और कफ के नाशक यत्न करने चाहिये तथा प्रथम विद्वान् वैद्य को उचित है कि मृदु स्वेदन कर्म करे ॥

महाश्वासलक्षण

उद्धूयमानवातो यः शब्दवद्दुःखितो नरः । उच्चैः श्वसिति संरुद्धो मत्तर्षभ इवानिशम् ॥ प्रनष्टज्ञानविज्ञानस्तथा विभ्रांतलोचनः। निवृत्ताक्ष्याननो बद्धमूत्रवर्चाविशीर्णवाक् ॥ दीर्घं प्रश्वसितं चास्य दूराद्विज्ञायते भृशम् । महाश्वासोपसृष्टस्तु क्षिप्रमेव विपद्यते ॥

अर्थ—जिस का वायु ऊपर को जायके प्राप्त हो ऐसा मनुष्य दुःखित होकर मुख से शब्दयुक्त श्वास को निकाले, ऊंचे स्वर से अथवा जैसे मतवाला बैल शब्द करे उस प्रकार रात्रिदिन श्वास से पीडित होय उस का ज्ञान विज्ञान जाते रहे, नेत्र चंचल होय और जिस का श्वास लेने में नेत्र और मुख फट जाय, मल मूत्र बन्द हो जाय, बोला जाय नहीं अथवा बोले तौ मन्द बोले, मन खिन्न होय और जिस का श्वास दूर से सुनाई देय यह महाश्वास जिस पुरुष को होय वह तत्काल मरण को प्राप्त होय ॥

शृंग्यादि चूर्ण

शृंगी कटुत्रिकफलत्रयकंटकारी भार्ङ्गी च पुष्करजटालवणानि पच । चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्काश्वासोर्ध्ववातकसनारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ-कांकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कटेरी, भारंगी, पुहकरमूल, जटामांसी, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, कचियानिमक और सामुद्रनिमक इन का चूर्ण करके गरम जल से पीवे तो हिचकी, श्वास, ऊर्ध्ववात, खांसी और अरुचि इन को नाश करे ॥

शुंठ्यादि चूर्ण

शुंठीकणामरिचनागदलं त्वगेलाचूर्णं कृतं क्रमविवर्धितमूर्ध्व-मंत्यात्। खादेदिदं समसितं गुदजाग्निमांद्यकासारुचिश्वसनकंठहृदामयेषु ॥

अर्थ-सोंठ, पीपल, काली मिरच ४, पान ३, तज २, इलायची १ क्रम से लेवे सब का चूर्ण करके बराबर की मिश्री मिलावे इस के भक्षण करने से बवासीर, मंदाग्नि, खांसी, अरुचि, श्वास, कंठरोग और हृदयरोग ये दूर हों ॥

मर्कटीचूर्ण

मर्कटीनां तु बीजानां चूर्णं माक्षिकसर्पिषा।
प्रलिह्यात्प्रातरुत्थाय श्वासार्तः स्वास्थ्यमाप्नुयात् ॥

अर्थ-कौंच के बीजों के चूर्ण को सहत और घी में मिलायके प्रातःकाल सेवन करे तो श्वास से पीडित प्राणी सुखी होय ॥

शठ्यादि चूर्ण

शठी भार्ङ्गी वचा व्योषपथ्यारुचककट्फलम्।
तेजोह्वा पौष्करं शृंगी सक्षौद्रं श्वासकासहृत् ॥

अर्थ-कचूर, भारंगी, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड छोटी, संचर निमक, कायफल, तेजबल, पुहकरमूल और कांकडासिंगी इन के चूर्ण के सहत में मिलायके चाटे तो पचास खांसी का नाश होय ॥

गुडादि लेह

गुडोषणा निशा रास्ना द्राक्षा मागधिकाः समाः।
तैलेन चूर्णिता लीढास्तीव्रश्वासनुदः स्मृताः ॥

अर्थ-गुड, काली मिरच, हलदी, रास्ना, मुनक्का दाख और पीपल इन सब को समान भाग लेकर चूर्ण करे इस को तेल में मिलायके सेवन करे तो तीव्र श्वास का नाश करे ॥

भार्ङ्ग्यादि चूर्ण

भार्ङ्गीनागरयोश्चूर्णं लीढमार्द्रकवारिणा।
श्वासं निहंति दुर्धर्षं पंचानन इव द्विपम्॥

अर्थ–भारंगी और सोंठ इन दोनों के चूर्ण को अदरख के रस से सेवन करे तो घोर दुर्धर भी श्वासरोग का नाश करे. जैसे सिंह हाथी को नष्ट करता है॥

ऊर्ध्वश्वासनिदान

ऊर्ध्वं श्वसिति योत्यर्थं नच प्रत्याहरत्यधः। श्लेष्मावृतमुखश्रोताः क्रुद्धगंधवहार्दितः॥ ऊर्ध्वदृष्टिर्विपश्यंश्च विभ्रांताक्ष इतस्ततः। प्रमुह्यन्वेदनार्तश्च शुष्कास्योरतिपीडितः॥

अर्थ–बहुत देर पर्यंत ऊंचा श्वास लेय नीचे आवे नहीं, कफ से मुख भर जाय तथा और सब नाडी के मार्ग कफ से बन्द हो जांय, कुपित वायु से पीडित होय, ऊपर को नेत्र कर चंचल दृष्टि से चारों ओर देखे, मूर्छा से और पीडा से अत्यंत पीडित होय, मुख सूखे तथा बेहोश होय यह ऊर्ध्वश्वास के लक्षण हैं॥

श्वास नीचे न आने का कारण

ऊर्ध्वःश्वासे प्रकुपिते ह्यधःश्वासो निरुध्यते।
मुह्यतस्ताम्यतश्चोर्ध्वं श्वासस्तस्यैव हंत्यसून्॥

अर्थ–ऊपर का श्वास कुपित होने से नीचे का श्वास बन्द होय अर्थात् हृदय में रुक जाय अथवा श्वास कहिये वायु सो खाली नीचे नहीं उतरे तब मनुष्य को मोह होय, ग्लानि होय ऐसे पुरुष के ऊर्ध्वश्वास प्राण का हरण करे॥

दुल्हरीचूर्ण

दुल्हरी सैंधवं मांसी लवणं च सुवर्चलम्। त्रिकटु ब्रह्मदंडी च त्रिफलैरण्डमूलिका॥ पीतमुष्णांभसा कासमूर्ध्वश्वासं निवारयेत्। बिडादिलवणं सर्वं मासं श्लक्ष्णं विचूर्णितम्॥

अर्थ–दुल्हरी, सैंधानिमक, जटामांसी, निमक, संचरानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, हरड, बहेडा, आंवला और अंड की जड इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वास को दूर करे अथवा बिडादि संपूर्ण लवणों को एक महिने पर्यंत बारीक पीसके गरम जल के साथ सेवन करे तो उक्त रोग दूर हो॥

शुंठ्यादि चूर्ण

शुंठीदारुकणाचूर्णं पीतमुष्णांभसा समम् ।
ऊर्ध्वश्वासहरं किंवा शुंठीपिप्पलिचूर्णकम् ॥

अर्थ–सोंठ, देवदारु, पीपल इन के अथवा सोंठ और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो ऊर्ध्वश्वास को दूर करे ॥

शिलाद्यवलेह

शिलाहिंगुविडंगं च मरिचं कुष्ठसैंधवम् ।
मध्वाज्याभ्यां लिहेत्कर्षं श्वासकासकफापहम् ॥

अर्थ–शिलाजीत, हींग, वायविडंग, काली मिरच, कूठ और सैंधानिमक इन के चूर्ण को सहत और घी में मिलाय एक कर्ष सेवन करे तो श्वास, खांसी और कफ इन को नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण

विडंगं पिप्पली चैला त्वचं च प्रतिकर्षकम् । द्विकर्षमरिचं चूर्णं नागरं च चतुः पलम् ॥ सर्वैस्तुल्या सिता योज्या कर्षमात्रं च भक्षयेत् । श्वासकासज्वरप्लीहपांडुरोगज्वरापहम् ॥

अर्थ–वायविडंग, पीपल, इलायची और दालचीनी प्रत्येक तोले तोले भर, काली मिरच २ तोले और सोंठ १६ तोले सब का चूर्ण करे और सब चूर्ण की बराबर मिश्री मिलावे वो एक तोले नित्यप्रति खाय तो श्वास, खांसी, ज्वर, प्लीहा और पांडुरोग इन को नाश करे ॥

दाडिमादिचूर्ण

दाडिमं नागरं हिंगु कृष्णा च लवणं समम् ।
आम्लवेतससंयुक्तं श्वासहृद्रोगजिद्भवेत् ॥

अर्थ–अनारदाना, सोंठ, हींग, पीपर, निमक और अमलवेत ये सब औषध समान भाग लेवे इन का चूर्ण करके खाय तो श्वास, खांसी और हृदयरोग इन का नाश करे॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगं पिप्पली हिंगु साजिसैंधवनागरम् । रास्नया च समं चूर्णं कर्षमद्याद्घृतप्लुतम् ॥ कफश्वासहरं ख्यातं विडंगादि च नामकम् ॥

अर्थ–वायविडंग, पीपल, हींग, अजमायन, सैंधानिमक, सोंठ और रास्ना इन

का समान भाग चूर्ण कर १ तोले की मात्रा घी में मिलायके देवे तो कफ और श्वास इन का नाश करे इस को विडंगादि चूर्ण कहते हैं ॥

आर्द्रकस्वरस

एक एवार्द्रकरसः समधु श्वासकासजित् ।
रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ॥

अर्थ–हे रतिवल्लभचांपेयचापचारुकलेवरे ! एक ही अदरख का रस सहत डालके पीने से श्वास और खांसी का नाश करे ॥

अक्षकवल

रावणस्य सुतो हन्यान्मुखवारिजधारितः ।
श्वसनं कसनं वापि तमिवानिलनंदनः ॥

अर्थ–रावण का सुत (अक्ष अर्थात् बहेडा) मुख में रखने से श्वास और खांसी को नाश करे जैसे तं (अक्षकुमारं) अर्थात् अक्षकुमारको अनिलनंदन हनुमान् नाश करते भये ॥

आटरूषरस

आटरूषरसो गव्यनवनीतेन पाचितः ।
तेन त्रिफलजं चूर्णं भक्षितं श्वासवारकम् ॥

अर्थ–अडूसे के रस को गौ के मक्खन में मिलायके औटावे जब रस जलके केवल घृतमात्र रहे तब उतारके इस में त्रिफले का चूर्ण मिलायके सेवन करे तो श्वास को दूर करे ॥

छिन्नश्वासनिदान

यस्तु श्वसिति विच्छिन्नं सर्वप्राणैर्निपीडितः । न वा श्वसिति दुःखार्तो मर्मभेदरुजार्दितः ॥ आनाहस्वेदमूर्छार्तो दह्यमानेन वस्तिना । विप्लुताक्षः परिक्षीणः श्वसन् रक्तैकलोचनः॥विचेताः परिशुष्कास्यो विवर्णः प्रलपन्नरः । छिन्नश्वासेन विच्छिन्नः स शीघ्रं विजहात्यसून् ॥

अर्थ–जो पुरुष ठहर ठहर कर जितनी शक्ती उतनी शक्ति से श्वास को त्याग करे, अथवा क्लेश को प्राप्त हो, श्वास को नहीं छोडे और मर्म कहिये हृदयबस्ती (मूत्रस्थान) और नाडियों को मानों कोई छेदन करे ऐसी पीडा होय, पेट का

फूलना, पसीना और मूर्च्छा, इन से पीडित होय, बस्ती (मूत्रस्थान) में जलन होय, नेत्र चलायमान होय, अथवा नेत्र आंसुओं से भरे होय, श्वास लेते लेते थक जाय, तथा श्वास लेते लेते एक नेत्र लाल हो जाय, (यह व्याधी के प्रभाव से होय है दोष के प्रभाव से होय तौ दोनों हो जाय) उद्विग्न चित्त हो जाय, मुख सूखे, देह का वर्ण पलट जाय, बकवाद करे, संधि के सब बंध शिथिल हो जाय, इस छिन्न-श्वास करके मनुष्य शीघ्र प्राण का त्याग करे ॥

तमकश्वासके लक्षण

प्रतिलोमं यदा वायुः स्रोतांसि प्रतिपद्यते । ग्रीवां शिरश्च संगृह्य श्लेष्माणं समुदीर्य च ॥ करोति पीनसं तेन रुद्धो घुर्घुरकं तथा । अतीव तीव्रवेगेन श्वासं प्राणप्रपीडकम् ॥ प्रताम्यति स वेगेन त्रस्यते सन्निरुध्यते । प्रमोहं कासमानश्च स गच्छति मुहुर्मुहुः ॥ श्लेष्मणा मुच्यमानेन भृशं भवति दुःखितः । तस्यैव च विमोक्षांते मुहूर्तं लभते सुखम् ॥ तथास्योद्ध्वंसते कंठः कृच्छ्राच्छक्नोति भाषितम् । न चापि निद्रां लभते शयानः श्वासपीडितः॥ पार्श्वे तस्यावगृह्णाति शयानस्य समीरणः । आसीनो लभते सौख्यमुष्णं चैवाभिनंदति ॥ उच्छ्रिताक्षो ललाटेन स्विद्यता भृशमार्तिमान् । विशुष्कास्यो बहुश्वासो मुहुश्चैवावधम्यते ॥ मेघांबुशीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्धते ॥ स याप्यस्तमकश्वासः साध्यो वा स्यान्नवोत्थितः ॥

अर्थ–जिस काल में शरीर की पवन उलटी गति से नाडियों के छिद्र में प्राप्त होकर मस्तक तथा कंठ का आश्रय कर कफसंयुक्त होय, तब कफ से रुककर अतिवेगपूर्वक कंठ में घुर घुर शब्द करे और मस्तक में पीनसरोग करे और अत्यन्त तीव्रवेग से हृदय को पीडा का करनेवाला ऐसा श्वास को उत्पन्न करे, उस श्वास के वेग से मूर्च्छित होय, त्रास को प्राप्त होय, चेष्टारहित होय और खांसी के उठने से बडे मोह को वारंवार प्राप्त होय और जब कफ छूटे तब दुःख होय और कफ छूटने के बाद दो घडी पर्य्यन्त सुख पावे, कंठ में खुजली चले, बडे कष्ट से बोले, श्वास की पीडा से नींद न आवे, सोवे तौ वायु से पसवाडों में पीडा होय, बैठे ही चैन पडे और गरमी के पदार्थ से खुश होय, नेत्रों में सूजन होय, ललाट में पसीना आवे, अत्यन्त पीडा होय, मुख सूखे, वारंवार श्वास और वारंवार हाथीपर बैठने के

सदृश सर्व देह चलायमान होवे, यह श्वास मेघ के वर्षने से, शीत से, पूरव की पवन से और कफकारक पदार्थ इन के सेवन करने से बढे है यह तमकश्वास याप्य है. यदि नया प्रगट भया होय तो साध्य होय है ॥

प्रतमकनिदान

ज्वरमूर्च्छापरीतस्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् । उदावर्त्तरजोजीर्ण-क्लिन्नकायनिरोधजः ॥ तमसा वर्धतेऽत्यर्थं शीतैश्चाशु प्रशाम्य-ति । मज्जतस्तमसीवास्य विद्यात्प्रतमकं तु तम् ॥

अर्थ—इस तमकश्वास में श्वास, ज्वर और मूर्च्छा ये दोनों लक्षण होने से इस को प्रतमक श्वास कहते हैं. उदावर्त, धूल, आमादि, अजीर्ण, विदग्धान्न, मल, मूत्रादि वेग के रोकने से अथवा क्लिन्नकाय कहिये वृद्ध मनुष्य और निरोध कहिये वेगरोध इन कारणों से प्रगट भई जो श्वास सो अंधकार से अथवा तमोगुण से अत्यन्त बढे और शीतल उपचार से शीघ्र शांति हो जाय, इस श्वास के योग से रोगी को अन्धकार में बूडासदृश मालूम होय, इस को प्रतमकश्वास ऐसे कहते हैं ॥

सठ्यादि चूर्ण

सठी पुष्करजीवंती त्वङ्मुस्तं पुष्कराह्वयम् । सुरसातामलक्ये-लापिप्पल्यागरुनागरम् ॥ वालुकं च समं चूर्णं कृत्वा द्विगुणश-र्करम् । सर्वथा तमकश्वासे हिक्कायां च प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—कचूर, कमलकंद, गिलोय, दालचिनी, नागरमोथा, पुहकरमूल, तुलसी, भूयआंवला, इलायची, पीपल, काली अगर, सोंठ और भीमसेनी कपूर इन को समान भाग ले चूर्ण करे और सब चूर्ण से दूनी मिश्री मिलावे. यह चूर्ण प्रायः तमक-श्वास और हिचकी इनपर देवे ॥

व्याघ्रीजीरकादिगुटिका

**व्याघ्रीजीरकधात्रीणां चूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।
ऊर्ध्ववातमहाश्वासतमकैर्मुच्यते क्षणात् ॥**

अर्थ—कटेरी, जीरा और आंवला इन तीन औषधों का चूर्ण करके सहत में मिला-यके चाटे तो ऊर्ध्ववायु, महाश्वास और तमकश्वास ये रोग क्षणमात्र में दूर हो ॥

क्षुद्रावलेह

व्याघ्रीशतं स्यादभयाशतं च द्रोणे जलस्य प्रपचेत्कषायम् ।

तुलाप्रमाणेन गुडेन युक्तं पक्त्वाभयाभिः सह ताभिरत्र॥शीते क्षिपेत्षण्मधुनः पलानि पलानि च त्रीणि कटुत्रयस्य । त्वक्पत्रकैलाकरिकेसराणां चूर्णात्पलं चेति विदेहदृष्टः॥ क्षुद्रावलेहः कफजान्विकारान्सश्वासशोषानपि पंच कासान्। हिक्कामुरोरोगमपस्मृतिं च हत्वा विवृद्धिं कुरुतेऽनलस्य॥

अर्थ—कटेरी और हरड प्रत्येक सौ सौ तोले लेवे इन को १०२४ तोले जल में डालके काढा बनावे फिर इस को छानके उस में ४०० तोले गुड मिलायके पक्क करी हुई हरड मिलायके फिर पक्क करे जब शीतल हो जावे तब २४ तोले सहत और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक चार २ तोले, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर ये प्रत्येक एक २ तोले मिलायके अवलेह बनावे इस को क्षुद्रावलेह कहते हैं यह विदेह नामक आचार्य ने प्रथम देखा है. यह कफविकार, श्वास, शोष, खांसी, हिचकी, छाती का रोग तथा अपस्मार (मृगी का रोग)इन का नाशक और अग्नि को दीपन करे है॥

कंटकार्यावलेह श्वासकासोंपर

कंटकारीतुलां नीरद्रोणे पक्त्वा कषायकम् । पादशेषं गृहीत्वा च तस्मिंश्चूर्णानि दापयेत्॥ पृथक्पलानि चैतानि गुडूचीचव्यचित्रकाः। मुस्तं कर्कटशृंगी च त्र्यूषणं धन्वयासकः॥ भार्ङ्गी रास्ना सठी चैव शर्करा पलविंशतिः। प्रत्येकं च पलान्यष्टौ प्रदद्याद्घृततैलयोः॥ पक्त्वा लेहत्वमानीय शीते मधुपलाष्टकम्। चतुःपलं तुगाक्षीर्याः पिप्पलीनां चतुःपलम्॥ क्षिप्त्वा निदध्यात्सुदृढे मृन्मये भाजने शुभे। लेहोयं हंति हिक्कार्तिश्वासकासानशेषतः॥

अर्थ—कटेरी ४०० तोले ले जव कूट करके २०२४ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके कपडे से छान लेवे. फिर गिलोय, चव्य, चित्रक, नागरमोथा, काकडासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, धमासा, भारंगी, रास्ना और कचूर ये बारह औषध एक एक पल लेवे; सब का चूर्ण करके उस काढे में डाल देवे. और मिश्री २० पल मिलावे. घी ८ पल और सरसों का तेल आठ पल इन सब को काढे में मिलायके फिर औटायके अवलेह बनाय लेवे फिर शीतल होने पर

सहत ८ पल मिलावे. इस को दृढ चीनी के अथवा ईम्रतवान् आदि उत्तम पात्र में भरके धर रखे चार पल इन का चूर्ण भी उसी अवलेह में मिलाय देवे फिर वंशलोचन ४ पल पीपल इस में से बलाबल विचारके रोगी नित्यप्रति सेवन करे तो हिचकी तथा सर्व प्रकार के श्वास रोग और खांसी ये दूर हो ॥

क्षुद्रश्वासनिदान

रूक्षायासोद्भवः कोष्ठे क्षुद्रो वातमुदीरयेत् । क्षुद्रश्वासेन सोऽत्यर्थं दुःखेनांगप्रबाधकः ॥ हिनस्ति न स गात्राणि न च दुःखं यथेतरे । न च भोजनपानानि निरुणद्ध्युचितां गतिम् ॥ नेंद्रियाणां व्यथां चापि कांचिदापादयेद्रुजम् । स साध्य उक्तो बलिनः सर्वे चाव्यक्तलक्षणाः ॥ क्षुद्रः साध्यतमस्तेषां तमकः क्षुद्र उच्यते ॥

अर्थ—रूखा पदार्थ खाने से, श्रम के करने से, प्रगट भई जो क्षुद्रश्वास सो पवन को ऊपर ले जाय यह क्षुद्रश्वास अत्यन्त दुःखदायक नहीं है. तथा अंगों को कुछ विकार नहीं करे, जैसे ऊर्ध्व श्वासादिक दुःखदायक है ऐसे यह नहीं है और भोजनपानादिकों की उचित गति को बन्द नहीं करे और इन्द्रीन को भी पीडा नहीं करे और कोई रोग को भी नहीं प्रगट करे. यह क्षुद्रश्वास साध्य कहा है. बलवान् पुरुष के सब महाश्वासादिकों के लक्षण प्रगट न होय तौ साध्य है, तिन में भी क्षुद्रश्वास अत्यंत साध्य है, और तमक को क्षुद्र कहते हैं अथवा "तमकः क्षुद्र उच्यते" इस जगह " तमकः कृच्छ्र उच्यते " ऐसा भी पाठ कोई कहते हैं. उस का अर्थ यह है कि तमक कृच्छ्रसाध्य है महान्, ऊर्ध्व और छिन्न ॥

असाध्यलक्षण

त्रयः श्वासा न सिध्यंति तमको दुर्बलस्य च । कामं प्राणहरा रोगा बहवो न तु ते तथा ॥ यथा श्वासश्च हिक्का च हरतः प्राणमाशु च ॥

अर्थ—ये तीन श्वास सम्पूर्ण लक्षणयुक्त साध्य नहीं है और निर्बल पुरुष के तमकश्वास भी साध्य नहीं होय. प्राण हरण करनेवाले ऐसे सन्निपात ज्वरादिक रोग बहुत से हैं सो ठीक है. परंतु श्वास और हिचकी ये जैसे जल्दी प्राण हरण करते हैं ऐसे और ज्वरादिक नहीं करे ॥

सामान्य उपचार

श्वासहिक्कातुरं प्रायः स्निग्धैः स्वेदैरुपाचरेत् । युक्तैर्लवणतैला-
भ्यां तैरस्य ग्रथितः कफः ॥ श्वासो विलयमायाति मारुतश्चो-
पशाम्यति । स्निग्धं ज्ञात्वा ततश्चैनं भोजयेच्च रसौदनम् ॥

अर्थ–श्वास और हिचकी इन से आतुर प्राणी को सैंधव, निमक और तेल इन से स्निग्ध ऐसा पसीने निकालने का उपचार करे इस प्रकार करने से उस मनुष्य का गाठदार जो कफ हो गया है वो पतला होकर श्वास का नाश करे और वादी को शमन करे फिर वह मनुष्य स्निग्ध हुआ जानके इस को मांसरस और भात भोजन करावे ॥

शृंगबेररस

स्वरसं शृंगबेरस्य माक्षिकेण समन्वितम् ।
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ–अदरख का स्वरस सहत डालके पिलावे तो श्वास, खांसी, पीनस और कफ इन को नाश करे ॥

बिभीतकावलेह

प्रस्थं बिभीतकानामस्थि विना साधयेदजामूत्रे ।
अयमेव लेहो लीढो मधुसहितः श्वासकासघ्नः ॥

अर्थ–एक सेर भिलावे की छाल को बकरी की मूत्र में पचावे जब सिद्ध हो जावे तब इस में सहत डालके चाटे तो श्वास और खांसी ये दूर हो ॥

द्राक्षाद्यवलेह

द्राक्षां हरीतकीं मुस्तां कर्कटाख्यां दुरालभाम् ।
सर्पिर्मधुभ्यां विलिहन् श्वासान् हंति सुदारुणान् ॥

अर्थ–दाख, हरड, नागरमोथा, कांकडासिंगी और धमासा इन की अवलेह सहत और घी डालके बनावे इस को भक्षण करने से घोर भयंकर श्वास दूर हो ॥

दशमूला यवागू

दशमूलीसठीरास्नापिप्पलीविश्वपौष्करैः । शृंगी तामलकी
भार्ङ्गी गुडूचीनागराग्निभिः ॥ यवागूं विधिना सिद्धां कषायं
वा पिबेन्नरः । श्वासहृद्ग्रहपार्श्वार्तिहिक्काकासप्रशांतये ॥

अर्थ–दशमूल, कचूर, रास्ना, पीपल, सोंठ, अंड की जड, काकडासिंगी, भूय-आंवला, भारंगी, गिलोय, सोंठ और चित्रक इन औषधों से करी हुई कांजी को पीवे अथवा काढा करके पीवे तो श्वास, हृदयव्यथा, पसली की पीडा, हिचकी और खांसी इन की शांति होय ॥

दशमूलकाढा

दशमूलस्य वा क्वाथः पौष्करेणावचूर्णितः ।
श्वासकासप्रशमनः पार्श्वशूलविनाशनः ॥

अर्थ–दशमूल का काढा करके उस में पुहकरमूल का (अथवा अंड की जड का) चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, खांसी और पसली की पीडा ये नष्ट होवे ॥

रंभादिकुसुमपान

रंभाकुंदशिरीषाणां कुसुमं पिप्पलीयुतम् ।
पिष्ट्वा तंदुलतोयेन पीत्वा श्वासमपोहति ॥

अर्थ–केला का फूल और कुंद का फूल तथा शिरस का फूल इन तीनों पुष्पों में पीपल मिलायके चावलों के धोवन से पीसके पीवे तो श्वास नष्ट होवे ॥

कटुतैलेन संयुक्तो गुडो यावन्न सेवितः ।
तावन्नश्यति किं श्वासः पीयूषमधुराधरे ॥

अर्थ–जबतक सरसों का तेल और गुड को यह प्राणी सेवन नहीं करता है पीयूषमधुराधरे ! क्या इस का श्वासरोग नष्ट होता है कदापि नहीं ॥

शृंग्यादिचूर्ण

शृंगीमहौषधकणाघनपुष्कराणां चूर्णं शठीमरिचयोश्च सिताविमिश्रम् । क्वाथेन पीतममृतावृषपंचमूल्याः श्वासं त्र्यहेण विनिहंति हि घोररूपम् ॥

अर्थ–काकडासिंगी, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, पुहकरमूल, कचूर और काली मिरच इन का चूर्ण समान भाग लेकर करे. फिर गिलोय, अडूसा और पंचमूल इन का काढा करके चूर्ण मिलाय तथा मिश्री डालके पीवे तो बडा भारी घोररूप श्वास तीन दिन में नष्ट होय ॥

शुंठ्यादिकाढा

अयि प्राणप्रिये जातिफललोहितलोचने ।
शुंठीभार्ङ्गीकृतः क्वाथः श्वासत्रासाय पाययेत् ॥

अर्थ–हे प्राणप्रिये! हे जातिफललोहितलोचने !! श्वास नष्ट करने को सोंठ और भारंगी इन का काढा करके पीवे ॥

पंचमूलीयोग

पंचमूली तु सामान्या पित्ते योज्या कनीयसी ।
महती मारुते देया सैव देया कफाधिके ॥

अर्थ–सामान्यता करके पित्त की श्वास में लघुपंचमूल देवे और वातश्वास तथा कफश्वास पर बृहत्पंचमूल देना चाहिये ॥

कूष्मांडशिफाचूर्ण

कूष्मांडकशिफाचूर्णं पीतं कोष्णेन वारिणा ।
शीघ्रं शमयति श्वासं कासं चापि सुदारुणम् ॥

अर्थ–पेठे की जड के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो घोर दारुण श्वास और खांसी शीघ्र शमन होवे ॥

हरिद्राद्यवलेह

हरिद्रामरिचं द्राक्षां कणां रास्नां शठीं गुडम् ।
कटुतैलं लिहन्हन्याच्छ्वासान्प्राणहरानपि ॥

अर्थ–हरदी, मिरच, दाख, पीपल, रास्ना, कचूर और गुड इन का चूर्ण सरसों के तेल में मिलायके चाटे तो प्राणों के नाश करनेवाली भी श्वास का नाश होवे ॥

भार्ङ्गीगुड

शतं संगृह्य भार्ङ्ग्यास्तु दशमूल्यास्तथा शतम् । शतं हरीतकीनां च पचेत्तोये चतुर्गुणे ॥ पादावशेषे तस्मिंस्तु रसे वस्त्रनिपीडिते । आलोड्य च तुलां पूतां गुडस्याप्यभयां पुनः॥पुनः पचेत्तु मृद्वग्नौ यावल्लेहत्वमेति तत्। शीते च मधुनस्तत्र षट् पलानि विनिःक्षिपेत्॥ त्रिकटुत्रिसुगंधं च पलमात्रं पृथक् पृथक्। यवक्षारं कर्षयुग्मं संचूर्ण्य प्रक्षिपेत्ततः ॥ भक्षयेदभयामेकां लेहस्यार्धपलं तथा । श्वासं सुदारुणं हंति कासं पंचविधं तथा ॥ अर्शास्यरोचकं गुल्मं शकृद्भेदं क्षयं तथा । स्वरवर्णप्रदो ह्येष जठराग्नेः प्रदीपनः ॥ नाम्ना भार्ङ्गीगुडः ख्यातो भिषग्भिः सकलैर्मतः ॥

अर्थ–भारंगी, दशमूल और हरड ये प्रत्येक १०० तोले ले इन को १२००तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके कपडे में छान लेवे फिर इस में ४०० तोले गुड डालके तथा औटाई हुई हरडों को डाल फिर मंदाग्निपर रस को पचावे जब गाढी अवलेह हो जावें तब उतारके इस को शीतल कर लेवे और शीतल होने पर २४ तोले सहत और सोंठ, काली मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची तथा पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले ले जवाखार २ तोले इन सब का चूर्ण करके अवलेह में मिलाय देवे और कडछी से मिलायके एक कर देवे. तो यह अवलेह सिद्ध होवे. इस में से दो तोले अवलेह और उस में से १ हरड नित्य प्रातःकाल खाय तो बडा भारी भयंकर श्वास, पांच प्रकार की खांसी, बवासीर, अरुचि, गोला, अतिसार और क्षय इन को नाश करे तथा स्वर और देह का वर्ण को उत्तम करनेवाला और अग्निदीपक ऐसा है. इस को भांर्गीगुड ऐसा कहते हैं यह सर्ववैद्यों को माननीय है ॥

द्राक्षादिकाढा

द्राक्षामृता नागरमुष्णतोयं कृष्णाविपाकं बहुरोगनिघ्नम् ।
श्वासं च शूलं कसनं च मांद्यं जीर्णज्वरं चैव जयेच्च तृष्णाम् ॥

अर्थ–दाख, गिलोय और सोंठ, इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो श्वास, शूल, खांसी, मंदाग्नि, अजीर्ण और प्यास इन को दूर करे ॥

कुलित्थादिकाढा

कुलित्थनागरव्याघ्रीवासाभिः क्वथितं जलम् ।
पीतं पौष्करसंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥

अर्थ–कुलथी, सोंठ, कटेरी, अडूसा और पुहकरमूल इन के काढे को पीवे तो श्वास, खांसी इन को दूर करे ॥

देवदार्व्यादिकाढा

देवदारुवचाव्याघ्रीविश्वकट्फलपौष्करैः ।
कृतः क्वाथो जयत्याशु श्वासकासावशेषतः ॥

अर्थ–देवदारु, वच, कटेरी, सोंठ, कायफल और पुहकरमूल इन का काढा करके देवे तो श्वास और खांसी इन का शीघ्र निवारण करे ॥

सिंह्यादिकाढा

सिंही निशा सिंहमुखी गुडूची विश्वोपकुल्याभृगुजाघनानाम् ।
कृष्णामरीचैर्मिलितः कषायः श्वासाटवीदाहपयोद एषः ॥

अर्थ–कटेरी, हलदी, अडूसा, गिलोय, सोंठ, पीपल, भारंगी और नागरमोथा इन का काढा कर उस में पीपल और काली मिरच इन का चूर्ण डालके पीवे तो यह श्वासरूप वन के दहन करते अग्नि को मेघ के समान है ॥

वासादिकाढा

वासा हरिद्रा मगधा गुडूची भार्ङ्गी घना नागररिङ्गणीनाम् ।
क्काथेन मारिच्यकणान्वितेन श्वासः शमं याति न कस्य पुंसः॥

अर्थ–अडूसा, हरदी, पीपल, गिलोय, भारंगी, नागरमोथा, सोंठ और कटेरी इन के काढे में काली मिरच और पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो इस से किस मनुष्य की श्वास दूर नहीं हो ॥

भार्ङ्ग्यादिलेह

प्रलिह्यान्मधुसर्पिर्भ्यां भार्ङ्गीं मधुकसंयुताम् ।
पथ्यां तिक्ताकणाव्योषयुक्तां वा श्वासनाशनीम् ॥

अर्थ–भारंगी की जड, ज्येष्ठमध, हरीतकी, पीपल, कुटकी, सोंठ, काली मिरच, पीपल इन का चूर्ण सहत और घी डालके देवे तो श्वास का नाश करता है ॥

गुडाद्यवलेह

गुडदाडिममृद्वीकापिप्पलीविश्वभेषजैः ।
मातुलिंगरसं क्षौद्रं लीढं श्वासनिबर्हणम् ॥

अर्थ–गुड, अनारदाना, दाख, पीपल और सोंठ इन का चूर्ण बिजोरे के रस में देवे तो श्वासरोग को दूर करे ॥

वासाद्यवलेह

वासातुलामष्टगुणे च नीरे विपाच्य तां पादजलेन साकम् । क्षु-
ण्णाढकं तद्विपचेच्छिवानां खंडा प्रयोज्या सकलस्य तुल्या॥ततः
समुत्तार्य पलानि चाष्टौ क्षौद्रस्य च द्वे किल वंशजायाः । क्षि-
पेत्तथा मागधिकापलार्धं पलं चतुर्जातभवं प्रयोज्यम् ॥ योज्यं
पलार्धं श्वसने च कासे क्षयेऽस्रपित्ते कफपीनसे च । हृद्रोगका-
र्श्ये किल विद्रधौ च उरःक्षते शोणितवांतिकोपे ॥

अर्थ–अडूसा ४०० तोले ले इस को कुछ कूटके ३२०० तोले जल में गेरके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस में २५६ तोले

हरड का चूर्ण डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल करे और ३२ तोले सहत, वंशलोचन ८ तोले, पीपल २ तोले तथा चातुर्जात ४ तोले इन सब का चूर्ण करके मिलाय देवे फिर इस में से दो तोले सेवन करे तो श्वास, खांसी, क्षय, रक्तपित्त, कफ, पीनस, हृदयरोग, कृशता, विद्रधि रोग, उरःक्षत और रुधिर की वांति इन का नाश करे ॥

सितादिचूर्ण

सिताद्राक्षाकणाचूर्णं समांशं तैलपाचितम् ।
भक्षितं दारुणं श्वासं निवर्तयति वेगतः ॥

अर्थ-मिश्री, दाख और पीपल का चूर्ण इन को समान भाग ले चूर्ण को तेल में पचावे फिर इस के भक्षण करने से अतिदारुण श्वास के वेग को नाश करे ॥

शिलाद्यवलेह

शिलाव्योषभयाहिंगुमणिमंथविडंगकैः ।
लेहः साज्यमधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥

अर्थ-मनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, सैंधानिमक और वायविडंग इन का लेह सहत और घी इन के साथ देवे. यह श्वास, खांसी और हिचकी इन पर उत्तम है॥

राजिकादिगुटी

राजिकाक्षीरकंदश्च चपला च रसोनकम् । ऊषणातिविषा देवकुसुमं च विचूर्णितम् ॥ मार्कवार्ककुमारीभिर्निर्गुंडीमुंडिचित्रकैः । भावयित्वा पृथक्सर्वैः श्वासकासनिकृंतनम् ॥

अर्थ-राई, सपेद विदारीकंद, पीपल, लहसन, काली मिरच, अतीस और लौंग इन का चूर्ण करके उस को भांगरे के रस, आंक का दूध, घीगुवार, निर्गुंडी, मुंडी और चित्रक इन प्रत्येक की भावना देवे फिर गोली बनाय ले यह गोली श्वास और खांसी इन का नाश करे ॥

सूर्यावर्तरस

सूतार्धं बलिमेकयाममभितः कृत्वा रसैर्मर्दयेत्तद्द्वंद्वेन समं तु शुल्बजलदं लिप्त्वा घटीयंत्रकैः । पक्त्वैकाहमथाहरन्निगदितो वल्लोन्मितः श्वासजित्सूर्यावर्तरसोथ गंधमरिचैः साज्यः कफश्वासजित् ॥

अर्थ-पारा १ भाग और गंधक आधा भाग इन दोनों को प्रहर भर तक खूब घोटे फिर इन दोनों की बराबर बहुत बारीक ताम्रपत्र ले उन पर लेप करके संपुट में रख घटीयंत्र से एक दिन पचावे फिर निकालके एक वल्ल गंधक, काली मिरच और घी इन के साथ देवे तो कफ, श्वास इन को नाश करे॥

अमृतार्णवरस

पारदं गंधकं शुद्धं मृतं लोहं च टंकणम्। रास्ना विडंगात्रिफलादेवदारुकटुत्रयम्॥ अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यं सचूर्णितम्। त्रिगुंजं श्वासकासार्तं सेवयेदमृतार्णवम्॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल, गिलोय, पद्माख, सहत, विष इन को समान भाग लेके चूर्ण करे इस को ३ रत्ती श्वास और खांसीरोगवाला सेवन करे इसे अमृतार्णव रस कहते हैं॥

श्वासहेमाद्रिरस

आच्छादितां शिलां ताम्रे द्विगुणं वालुकाह्वये। पक्त्वा संचूर्ण्य गंधेशौ दिनार्धं तां पुनः पचेत्॥ श्वासहेमाद्रिनामायं महाश्वासविनाशनः। वर्णवृद्धिकरो ह्येष सौवर्ण्यश्च न संशयः॥

अर्थ-मनसिल को तामे की डिबी में भरके वालुकायंत्र में पचावे फिर उस डिबी के साथ चूर्ण करके उस में पारा, गंधक इन की कजली डालके फिर आधे दिन पचावे यह **श्वासहेमाद्रिनामक** रस महाश्वास को नाश करे इस में संदेह नहीं है॥

उदयभास्कर

धान्याभ्रं सूतकं गंधं श्वेतापामार्गजद्रवैः। तुल्यांशं मर्दयेच्चायःपात्रे पाचनकं पचेत्॥ ऊर्ध्वलग्नं ततो ग्राह्यं रसो ह्युदयभास्करः। श्वासं पंचविधं हंति गुंजाद्वयानुपानतः॥ निष्कैकं लेहयेच्चानु क्षौद्रेण कटुरोहिणीम्॥

अर्थ-धान्याभ्रक लेके उस में पारा और गंधक अभ्रक के बराबर मिलायके सपेद ओंगा के रस से उस को खरल करके फिर डमरूयंत्र में भरके अग्नि देवे फिर ऊपर के लगे हुए पारे को निकाल लेवे इस को **उदयभास्कर** सूत कहते हैं यह २ रत्ती अनुपान के साथ देवे और ऊपर से सहत और कुटकी का चूर्ण चटावे तो पांच प्रकार के श्वासों को नष्ट करे॥

श्वासकालेश्वर

मृतं वंगं मृतं लोहं मृतार्कं मृतमभ्रकम् । शुद्धसूतं तथा गंधं माक्षिकं हिंगुलं विषम् ॥ जातीफलं लवंगं च त्वगेलानागकेसरम् । उन्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ एतानि समभागानि मरिचं हरनेत्रयोः । सर्वं तव्याक्षिपेत्खल्वे लोहदंडेन मर्दयेत् ॥ तावच्चूर्णीकृतं धीमान् यावत्सूतो न दृश्यते । शक्रासनस्य स्वरसैर्भावना एकविंशतिः ॥ द्विगुंजा उत्तमा मात्रा आर्द्रकस्वरसैर्युता । तदर्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥ पंच श्वासान् क्षयं कासं राजयक्ष्मनिवारणम् । श्वासकालेश्वरो नाम लोकानामपि दुर्लभः ॥

अर्थ—वंग की भस्म, लोहभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, पारा, गंधक, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, हींगलू, विष, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, धतूरे के बीज, जमालगोटा, हलदी, कचूर ये सब समान भाग लेवे और काली मिरच तीन भाग ले सब को खरल में डालके लोहे के मूसल से खरल करे कि जबतक पारा दीखने से न बंद होवे. फिर इस को भांग के स्वरस की २१ भावना देवे इस में से २ रत्ती की उत्तम मात्रा को अदरख के रस से देवे. और बालक वृद्ध होवे उन को आधी मात्रा देनी चाहिये और पथ्य से रहे तो ५ प्रकार के श्वास, क्षय, खांसी, राजयक्ष्मा इन को नाश करे यह श्वासकालेश्वर रस देवताओं को भी दुर्लभ है ॥

पारदादिगुटी

पारदं गंधकं नागं ताम्रं व्योषानलैः समम् । सर्जीरसेन संचूर्ण्य प्रदेया भावना दश ॥ पुनः पत्ररसे सम्यक् चार्द्रकस्य रसैस्तथा । मिरिप्रमाणा कफजित् कार्या सा गुटिकोत्तमा ॥ मंदाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः । आध्मानप्रतिपन्नार्तप्रदेया सुखकारिणी ॥

अर्थ—पारा, गंधक, शीशे की भस्म, ताम्रभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक और राल ये समान भाग लेकर चूर्ण करे और नागरवेल के पत्तों के रस की १० भावना देवे. और अदरख के रस की १० भावना देवे. फिर मिरच के समान गोली बनावे. यह मंदाग्नि, कफरोग, श्वास, खांसी और पेट का फूलना इन पर देवे तो सुखदायक होय॥

लवंगादिगुटी

लवंगमरिचे तुल्ये त्रिफलारसभाविते ।
बब्बूलत्वचया कार्या गुटी श्वासकफापहा ॥

अर्थ–लौंग, काली मिरच और त्रिफला (हरड, बहेडा, आवला) का चूर्ण समान भाग ले उस को बबूल के छाल के काढे की भावना देकर गोली बनावे. यह श्वास और कफ इन को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

लवंगत्रिकटूनागभृंगीक्षुद्राबिभीतकैः ।
कन्यारसेन गुटिका कार्या श्वासनिवारिणी ॥

अर्थ–लौंग, सोंठ, काली मिरच, पीपल, सिंगिया विष, भांगरा, कटेरी और बहेडा इन का समान भाग चूर्ण कर घीगुवार के रस में घोटके गोली बनाय ले इस में से एक २ गोली खाने को देय तो यह श्वासरोग को नष्ट करे ॥

त्रिकटुकवटी

त्रिकटूटंकणं नागपत्रेण क्रियते वटी ।
मिरीप्रमाणा कफजिन्नाम्ना त्रिपुरभैरवी ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल और सुहागा इन को एकत्र चूर्ण करके नागरवेल के पानों के रस में घोटके गोली मिरच के समान बनावे इस के खाने से कफ नष्ट होय इसे त्रिपुरभैरवी गुटी कहते हैं ॥

फलत्रयगुटी

फलत्रयं नागरदारुकृष्णाविषानपावेल्लसुवर्णबीजैः ।
दिनत्रयं भृंगरसैर्विमर्द्य कार्या गुटी श्वासकफापहारिणी ॥

अर्थ–त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), सोंठ, देवदारु, पीपल, सिंगिया विष, नेत्रवाला, काली मिरच और धतूरे के बीज इन सब को तीन दिन भांगरे के रस में खरल कर गोली बनावे यह श्वास और कफ को दूर करे ॥

स्नुहीदुग्धयोग

वल्लयुग्मं स्नुहीदुग्धं गुडयुक्तनिषेवणात् ।
कासः श्वासः क्षयरोगो हृद्रोगश्च प्रणश्यति ॥

अर्थ–दो वल्ल (४रत्ती) थूहर के दूध को गुड में मिलायके सेवन करे तो श्वास, खांसी, क्षयरोग और हृदयरोग नष्ट होवे ॥

श्वासकुठार

रसो गंधो विषं चापि टंकणं च मनःशिला । एतानि कर्षमात्राणि मरिचं चाष्टकर्षकम् ॥ कटुत्रयं कर्षयुग्मं पृथगत्र विनिःक्षिपेत् । रसः श्वासकुठारोयं सर्वश्वासनिवारणः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सिंगिया विष, सुहागा और मनसिल इन को एक २ तोले ले सोंठ, मिरच, पीपल ये एक तोले लेकर चूर्ण करे. इस के सेवन करने से यह **श्वासकुठाररस** संपूर्ण रोगों को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

रसं गंधं विषं चैव टंकणं च मनःशिला । एतानि टंकमात्राणि मरिचं चाष्टटंककम् ॥ एकैकं मरिचं दत्त्वा खल्वे सूक्ष्मं विमर्दयेत् । त्रिकटुं टंकषट्कं च दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ सर्वमेकत्र संयोज्य काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् । श्वासे कासे च मंदाग्नौ वातश्लेष्मामयेषु च ॥ गुंजामात्रं प्रदातव्यं पर्णखंडेन धीमता । सन्निपाते च मूर्छायामपस्मारे तथा पुनः ॥ अतिमोहत्वमापन्ने नस्यं दद्याद्विचक्षणः । रसः श्वासकुठारोयं सर्वश्वासगदप्रणुत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, विष, सुहागा और मनासिल ये एक २ तोले ले काली मिरच ८ तोले और सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. फिर एक एक मिरच डालके पीसे फिर सब औषधों को डालके बारीक चूर्ण करे और कपडे से छान लेवे फिर इस को काच की शीशी में भरके धर रखे और श्वास, खांसी, मंदाग्नि, वात, कफसंबंधी रोग इन में पान के बीडा में रखके १ रत्ती खाय तथा सन्निपात अपस्मार और अतिमोहवाले रोगी को इस रस की नास देवे यह **श्वासकुठाररस** संपूर्ण श्वाससंबंधी रोगों को दूर करे ॥

मरीच्यादिगुटिका कासादिकोंपर

मरिचं कर्षमात्रं स्यात्पिप्पली कर्षसंमिता । अर्धकर्षो यवक्षारः कर्षयुग्मं च दाडिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं युंज्यादष्टकर्षगुडेन हि ।

शाणप्रमाणां गुटिकां कृत्वा वक्त्रे विधारयेत् ॥ अस्याः प्रभावात्सर्वेऽपि कासा यान्त्येव संक्षयम् ॥

अर्थ–काली मिरच १ तोला, पीपल १ तोला, जवाखार छः मासे, अनार का छिलका २ तोले इन चार औषधों का चूर्ण कर आठ तोले गुड में कूट पीसके चार २ मासे की गोली बनाय लेवे इस गोली को मुख में रखे तो सर्व प्रकार की खांसी और श्वास दूर हो इस में संदेह नहीं है ॥

श्वासे पथ्य

विरेचनं स्वेदनधूम्रपानप्रच्छर्दनानि स्वपनं दिवा च। पुरातनाः षष्टिकरक्तशालिकुलित्थगोधूमयवाः प्रशस्ताः ॥ शशाहिभुक्तित्तिरिलावदक्षः शुकादयो धन्वमृगा द्विजाश्च। पुरातनं सर्पिरजाप्रभूतं पयो घृतं वापि सुरा मधूनि ॥ पटोलवार्त्ताकरसोनबिंबीजंबीरतंदूलियवास्तुकं च। द्राक्षा त्रुटिः पौष्करमुष्णवारि कटुत्रयं गोजनितं च मूत्रम् ॥ अन्नानि पानानि च भेषजानि श्लेष्मानिलघ्नानि च पथ्यवर्गः ॥

अर्थ–विरेचन, स्वेदन, धूमपान, वमन, दिन में सोना, पुराने सांठी चावल और लाल चावल, कुलथी, गेहूं, जौ ये सब अन्न पुराने पथ्य हैं. ससे, मोर, तीतर, लवा, मुरगा, तोता आदि शब्द से मैना कोयल, मरुभूमि के मृग और पक्षी, पुराना बकरी का घी, दूध, मद्य, सहत, पटोल, बैंगन, लहसन, कँदूरी, जंभीरी, बथुए का साग (कटेरी का साग, डोडी का साग, मूली, पिंडुकिया), दाख, [हरड] इलायची, पोहकर मूल, गरम जल, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल), गौ का मूत्र तथा कफवातनाशक अन्न पान तथा औषधी ये पथ्य हैं ॥

अपथ्य

रक्तस्रावं पूर्ववातान्नपानं मेषीसर्पिर्दुग्धमंभोपि दुष्टम्। मत्स्याः कंदाः सर्षपाश्चान्नपानं रूक्षं शीतं गुर्वपि श्वासि वर्ज्यम् ॥ मूत्रोद्गारश्छर्दितृट्कामरोधो नस्यं बस्तिर्दंतकाष्ठं श्रमं च ॥

अर्थ–रुधिर का निकालना, पूर्व दिशा की पवन, बहुत जल का पीना, भेड का घी और दूध, खराब जल, मछली, कंद, सरसों तथा रूखे शीतल और भारी ऐसे अन्न, पान, मूत्र, डकार, वमन, प्यास, कामदेव इन की बाधा को रोकना, नास लेना, बस्तिकर्म, दांतन, परिश्रम श्वासरोग को वर्जित हैं ॥

दंभ

वक्षःप्रदेशादपि पार्श्वयुग्मे करस्थयोर्मध्यमयोर्धयोश्च । प्रदीप्त-
लोहेन च कंठकूपे दाहोपि च श्वासिनि दंभ उक्तः ॥

अर्थ-वक्षस्थल (छाती) के दोनों तरफ, दोनों हाथों के बीच की अंगुलियों में तथा कंठ में गरम लोहे से जलाना इत्यादि अन्य जो कर्म हैं वह सब श्वासरोगी का दम्भ है ॥

इति बृहन्निघंटुरत्नाकरे श्वासरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अथ स्वरभेदनिदानम् ।

अत्युच्चभाषणविषाध्ययनाभिघातसंदूषणैः प्रकु-
पिताः पवनादयस्तु । स्रोतःसु ते स्वरवहेषु गताः
प्रतिष्ठां हन्युः स्वरं भवति चापि हि षड्विधः सः ॥

अर्थ-बहुत जोर के बोलने से, विष के खाने से, ऊंचे स्वर के पाठ करने से अर्थात् वेदादि पाठ करने से, कंठ में लकडी काष्ठ आदि की चोट लगने से, कोप को प्राप्त हुए जो वात, कफ, पित्त सो कंठ में स्वर के वहनेवाली चार नसें हैं उन में प्राप्त हो अथवा उन में वृद्धि को प्राप्त स्वर को नाश करे यह स्वरभेद रोग वात, पित्त, कफ, सन्निपात, क्षय और भेद इन भेदों से छः प्रकार का है ॥

चिकित्साप्रक्रिया

वाते सलवणं तैलं पित्ते सर्पिः समाक्षिकम् ।
कफे सक्षारकटुकं क्षौद्रं केवलमिष्यते ॥

अर्थ-वादी के स्वरभेद पर क्षार और तेल तथा पित्त के स्वरभेद पर घी और सहत एवं कफ के स्वरभेद पर क्षार और मरिचादिक तीखे रस तथा सहत इत्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

गले तालुनि जिह्वायां दंतमूलेषु चाश्रितः ।
तेन निष्क्रमते श्लेष्मा स्वरश्चाशु प्रसीदति ॥

अर्थ-ऊपर कहे हुए कर्म के करने से गला, तालू, जीभ, दांतों की जड इन का आश्रय करके रहनेवाला कफ निकलकर गिर जाने से स्वर स्वच्छ होवे ॥

स्वरभेदसामान्यचिकित्सा

वातादिजनितश्वासकासघ्ना ये प्रकीर्तिताः ।
योगास्तानत्र युंजीत यथादोषं चिकित्सकः ॥

अर्थ-वातादि दोषों के कुपित होने से जो हुआ स्वरभंग उसपर वातादि जनित श्वास खांसी के जो यत्न लिखे हैं वो सब यथा दोषक्रमसे चिकित्सा करे ॥

स्वरोपघाते मेदोजे कफवद्विधिरिष्यते ।
क्षयजे सर्वजे वापि प्रत्याख्याय चरेत्क्रियाम् ॥

अर्थ-मेदवृद्धिसे जो प्रगट स्वरभेद उसपर कफजन्य स्वरभेद की कही हुई चिकित्सा करे और क्षयज तथा सर्वज (सन्निपातजन्य) स्वरभेद को असाध्य जानके उस की यथायोग्य चिकित्सा वैद्य को करनी चाहिये ॥

वातिकस्वरभेदनिदान

वातेन कृष्णनयनाननमूत्रवर्चाभिन्नं शनैर्वदति गर्द्दभवत्स्वरं च ।

अर्थ-वायु से स्वरभंग होय तौ रोगी के नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा यह काले होंय वह पुरुष टूटा हुआ शब्द बोले, अथवा गधा के स्वर प्रमाण कर्कश बोले ॥

मरीचघृतपान

स्वरोपघातेनिलजे भुक्त्वोपरि घृतं पिबेत् ।
मरीचचूर्णसहितं मरुत्स्वरहतिप्रणुत् ॥

अर्थ-वादी से उत्पन्न हुए स्वरभेदपर भोजन करने के उपरांत घी को काली मिरच का चूर्ण डालके पीवे तो यह वादी के स्वरभेद को नष्ट करे ॥

घृतगुडोदन

आद्ये कोष्णजलं पेयं जग्ध्वा घृतगुडौदनम् ।
पीतं घृतं हंत्यनिलं सिद्धं मार्कवजे रसे ॥

अर्थ-भात में गुड और घी मिलायके भोजन करे फिर ऊपर से गरम २ जल पीवे तो वादी का स्वरभेद अच्छा होय. उसी प्रकार भांगरे के रस में घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब इस को पीवे तो वादी का स्वरभंग अच्छा होवे ॥

कासमर्दादिघृत

कासमर्दरसं दत्त्वा भार्ङ्गीकल्कं शनैः शनैः ।
सिद्धं सर्पिर्हितं पीतं स्वरभेदं मरुद्भवम् ॥

अर्थ–कसोंदी का रस और भारंगी इन का चूर्ण डालके मंदाग्निपर सिद्ध करा हुआ घी पीवे तो वातजन्य स्वरभेद दूर होवे ॥

व्याघ्रीघृत

व्याघ्रीस्वरसविपक्कं रास्नावाट्यालगोक्षुरैः सिद्धम् ।
सर्पिः स्वरोपघातं हन्यात् कासं च पंचविधम् ॥

अर्थ–कटेरी का स्वरस, रास्ना, खिरेटी और गोखरू इन का कल्क अथवा काढा डालके सिद्ध करा हुआ घी स्वरभंग तथा पांच प्रकार की खांसी इन को नष्ट करे ॥

पैत्तिकस्वरभेदनिदान

पित्तेन पीतनयनाननमूत्रवर्चा ब्रूयाद्गलेन स च दाहसमन्वितेन ॥

अर्थ–पित्तस्वरभेदवाले मनुष्य के नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा ये पीले होते हैं और बोलते समय गले से दाह होय है ॥

सामान्यचिकित्सा

पैत्तिके तु विरेकः स्यात्पयश्च मधुरैः शृतम् ।
लिह्यान्मधुरवस्तूनां चूर्णं मधुसमन्वितम् ॥

अर्थ–पित्त के स्वरभेदपर रेचन (जुलाब) देवे और मिश्री अथवा दूसरे मधुर पदार्थ डालके औटाया हुआ दूध अथवा मीठे २ पदार्थों का चूर्ण करके सहत में मिलायके चाटे तो पित्त का स्वरभेद दूर होवे ॥

जेष्ठीमधकाढा

अश्नीयाच्च ससर्पिष्कं यष्टीमधुकषायकम् ॥

अर्थ–पित्त के स्वरभेदपर मुलहटीके काढे में घी मिलायके पीवे तो हित करे ॥

पयःपान

शर्करामधुमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह ।
पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोपि हतः स्वरः ॥

अर्थ–ऊंचा और बहुत बोलने से जिस का स्वर बैठ गया हो उस को मिश्री, सहत इन से मिला हुआ तथा अन्य मीठे पदार्थ मुनक्का आदि मिलायके औटा हुआ दूध पीवे ॥

शतावरीचूर्ण

शतावरीचूर्णयोगं बलाचूर्णमथापि वा ।
लाजाशतावरीचूर्णं लिह्यान्मधुसितायुतम् ॥

अर्थ–सतावर और खिरेटी इन के चूर्ण को अथवा खील और सतावर इन के चूर्ण को सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्त के स्वरभंगको दूर करे ॥

शुंठीघृत

शुंठीत्वचो दुग्धवतां द्रुमाणां संपिष्य दुग्धे विपचेत्तु तेन ।
कल्केन यष्टीमधुकस्य सर्पिः सशर्करं पित्तरुजामयघ्नम् ॥

अर्थ–सोंठ और तज इन के चूर्ण को वड आदि क्षीरवृक्ष है उन के दूध में औटाके घी और मिश्री मिलायके भक्षण करे. अथवा मुलहटी के चूर्ण को घी मिश्री के साथ खाय तो पित्तजन्य स्वरभंग को नाश करे ॥

पित्तस्वरभेद

कासमर्दकवार्ताकमार्कवैः स्वरसैर्युतम् ।
क्षीरानुपानं पैत्तेषु पिबेत्सर्पिरतंद्रितः॥

अर्थ–कसोंदी, बैंगन और भांगरा इन के स्वरस में घी डालके पीवे और ऊपरसे दूध पीवे तो पित्त से उत्पन्न स्वरभेद दूर होय ॥

कफस्वरभेद

ब्रूयात्स्वनेन सततं कफरुद्धकंठः
स्वल्पं शनैर्वदति चापि दिवा विशेषात् ॥

अर्थ–कफ के स्वरभेद से, कंठ कफ से रुका रहे, और मंद मंद तथा थोडा बोले दिन में बहुत बोले ॥

पिप्पलीयोग

पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं विश्वभेषजम् ।
पिबेन्मूत्रेण मतिमान्कफजे स्वरसंक्षये ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, काली मिरच और सोंठ इन के चूर्ण को गोमूत्र में डालके पीवे तो कफ से प्रगट हुआ स्वरभंग नष्ट होय ॥

आम्लवेतसादिचूर्ण

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतित्तिडीकं तालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः।
चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम्॥

अर्थ–चव्य, अमलवेत, सोंठ, काली मिरच, पीपल, इमली, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज और इलायची इन का चूर्ण गुड में मिलायके खाय तो स्वरभेद, पीनस, कफ और अरुचि इनपर उत्तम है॥

गंडूष

आर्द्रकस्वरसोपेतं सैंधवं च कटुत्रिकैः।
बीजपूररसैः सार्धं गंडूषः कफकेसरी ॥

अर्थ–अदरख का रस, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, बिजोरे का रस इन के गंडूष (कुल्ले) करे तो कफरूप हाथी के मारने को सिंहरूप है ॥

कटुकादिकाढा

कटुकातिविषापाठादारुमुस्तकलिंगकाः।
गोमूत्रक्वथिताः पेयाः कंठरोगविनाशनाः ॥

अर्थ–कुटकी, अतीस, पाढ, दारुहलदी, नागरमोथा और इंद्रजों इन को गोमूत्र में औटायके पीवे तो कंठरोग को नाश करे ॥

सन्निपातस्वरभेदनिदान

सर्वात्मके भवति सर्वविकारसंपत् तं चाप्यसाध्यमृषयः स्वरभेदमाहुः॥

अर्थ–सन्निपात के स्वरभेद में तीनों दोषों के लक्षण होय हैं यह स्वरभेद असाध्य है ऐसे ऋषि कहते हैं ॥

अजमोदादिचूर्ण

अजमोदां निशां धात्रीं क्षारं वह्निं विचूर्णयेत्।
मधुसर्पिर्युतं लीढ्वा त्रिदोषस्वरभंगनुत् ॥

अर्थ–अजमोद, हलदी, आंवले, जवाखार और चित्रक इन का चूर्ण सहत और घी डालके चाटे तो सन्निपात के स्वरभंग को नाश करे ॥

फलत्रिकचूर्ण

फलत्रिकत्र्यूषणयावशूकचूर्णानि हन्युः स्वरभंगमाशु।
किं वा कुलित्थं वदनांतरस्थं स्वरामयं हंत्यथ पौष्करं वा ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल और जवाखार इन का चूर्ण अथवा कुलथी अथवा पुहकरमूल ये स्वरभेद के नाशक हैं ॥

निदिग्धिकावलेह

निदिग्धिका तुला ग्राह्या तदर्धं ग्रंथिकस्य तु। तदर्धं चित्रकस्यापि दशमूलं च तत्समम् ॥ जलद्रोणद्वये क्वाथ्यं गृहीयादाढकं ततः। पूते क्षिपेत्तदर्धं च पुराणस्य गुडस्य च ॥ सर्वमेकत्र

कृत्वा तु लेहवत्साधु साधयेत्। अष्टौ पलानि पिप्पल्यास्त्रिजातकपलं तथा॥ मरिचस्य पलं चैकं सर्वमेकत्र चूर्णितम्। मधुनः कुडवं दत्त्वा तदश्नीयाद्यथानलम्॥ निदिग्धिकावलेहोयं भिषग्भिर्मुनिभिर्मतः। स्वरभेदहरो मुख्यः प्रतिश्यायहरस्तथा॥ कासश्वासाग्निमांद्यादीन् गुल्ममेहगलामयान्। आनाहं मूत्रकृच्छ्राणि हन्याद्ग्रंथ्यर्बुदानि च॥

अर्थ-कटेरी ४०० तोले, पीपरामूल २०० तोले, चित्रक १०० तोले और दशमूल १०० तोले ले २०२८ तोले जल में डालके औटावे जब २५६ तोले जल रहे तब उतारके कपडे से छान लेवे. इस में १२८ तोले पुराना गुड डाले फिर मंदाग्नि पर रखके अवलेह बनावे जब तयार हो जावे तब उतारके शीतल होनेपर ३२ तोले पीपल और दालचीनी, इलायची, पत्रज, मिलायके मिरच ४ तोले और सहत १६ तोले उस अवलेह में मिलावे फिर सब को एकजीव करके बलाबल विचारके भक्षण करे यह निदिग्धिकावलेह नाम से विख्यात है वैद्य और ऋषियों को मान्य है मुख्यकरके स्वरभंग को नाश करे और पीनस, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, गोला, प्रमेह, कंठ के रोग, अफरा, मूत्रकृच्छ्र, गांठ, अर्बुद इन सब रोगों को नाश करे॥

क्षयकृतस्वरभेद और मेदजस्वरभेदनिदान

धूम्येत वाक्क्षयकृते क्षयमाप्नुयाच्च सर्वेषु चापि हतवाक्परिवर्जनीयः। अंतर्गतस्वरमलक्ष्य पदं चिरेण भेदः क्षयाद्वदति दिग्धगलस्तृषार्त्तः॥

अर्थ-क्षयी के स्वरभेदवाले पुरुष के बोलते समय मुख से धूआंसा निकले और वाणीक्षय हो जाय, अर्थात् यथार्थ स्वर नहीं निकले. इस स्वरभेद में जिस समय वाणी हत हो जाय अर्थात् ओज का क्षय होने से बोलने की सामर्थ्य नहीं हो तब यह असाध्य होय है. और ओज का क्षय (नाश) नहीं होय तौ साध्य है. मेद के सम्बन्ध से कफ अथवा मेद इन से गला लिप्त होय अथवा मेद से स्वर के मार्ग रुक जाने से प्यास बहुत लगे, गले के भीतर बोले और मंद बोले॥

असाध्यलक्षण

क्षीणस्य वृद्धस्य कृशस्य चापि चिरोत्थितो यस्य सहोपजातः। मेदस्विनः सर्वसमुद्भवश्च स्वरामयो यो न स सिद्धिमेति॥

अर्थ-क्षीण पुरुष के, वृद्ध के, कृश के, बहुत दिन का, जन्म के संग ही प्रगट भया मोटे पुरुष के और सन्निपातोद्भव ऐसा स्वरभेद रोग साध्य नहीं होय॥

क्षयज व मेदज स्वरभंगचिकित्सा

क्षयजे स्वरभेदे तु तत्रोक्तविधिमाचरेत् ।
कटुतिक्तकषायाद्यैर्मेदःस्वरहृतिं जयेत् ॥

अर्थ—क्षय से उत्पन्न स्वरभेद पर क्षयरोग पर जो चिकित्सा कही है वो करे और मेदजन्य स्वरभेदपर तीखे, कडुए और कषेले इत्यादि औषधियोंसे यत्न करे ॥

जातीफलावलेह

जातीफलैलामधुमातुलिंगैः पत्रैश्च लाजैर्युतपिप्पलीकैः ।
कृतोवलेहः कुरुते नराणां कंठे ध्वनिं किंनरनादतुल्यम् ॥

अर्थ—जायफल, इलायची, सहत, बिजोरा, पत्रज, खील और पीपल इन का अवलेह करके सेवन करे तो किन्नरों के स्वर के समान मनुष्य के कंठ का स्वर करे॥

काकजंघादिधार्य

काकजंघा वचा कुष्ठं पिप्पलीमधुसंयुतम् ।
सप्तरात्रं मुखे धार्यं किन्नरैः सह गीयते ॥

अर्थ—काकजंघा, बच, कूठ, पीपल इन के चूर्ण को सहत के साथ सेवन करे तो यह प्राणी सात ही दिन में किन्नरों के समान गान करे. इन औषधों की गोली बनायके ७ दिन बराबर मुख में रखे ॥

जातिदलादिलेह

जातीदलैलापिप्पलिलामज्जकमधुमातुलिंगदललेहः ।
सतताभ्यासात्कुरुते किन्नरमधुरस्वरं रुचिरम् ॥

अर्थ—चमेली के पत्ते, इलायची, पीपल, पीलातृण, सहत, बिजोरे की केशर और तमालपत्र इन का अवलेह बनायके निरंतर सेवन करने से किंनर के समान मधुर और सुंदर स्वरवाला होवे ॥

गुडूच्यादिलेह

गुडूच्यपामार्गविडंगशंखिनीवचा तथा शुंठिशतावरी समम् ।
घृतेन लीढं प्रकरोति मानवं त्रिभिर्दिनैः श्लोकसहस्रधारिणम् ॥

अर्थ—गिलोय, ओंगा, वायविडंग, संखाहूली, वच, सोंठ और इन के चूर्ण को घी में मिलायके चाटने से मनुष्य को तीन दिन में नित्य हजार श्लोक धारण करने की शक्ति होवे ॥

बदरीकल्क

बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैंधवम् ।
स्वरोपघाते कासे च लेहमेनं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–बेर के पत्तों के कल्क में सैंधा निमक डालके घी में भून लेवे वह अवलेह स्वरोपघात, खांसी इन पर देना चाहिये ॥

आरनालचूर्ण

विहितमसृणचूर्णान्यारनालेन सार्धं ।
कलितरुफलकृष्णासैंधवानि प्रलिह्यात् ॥

अर्थ–बहेडा, पीपल और सैंधा निमक इन का चूर्ण कर कांजी में मिलायके पीवे तो स्वरभंग का नाश होवे इस में संदेह नहीं है ॥

अभिलषति विजेतुं यः स्वरस्य प्रणाशम् ।
स पिबति सह दुग्धेनामलक्याः फलं वा ॥

अर्थ जिस प्राणी को स्वरभंग जीतने की इच्छा होवे वह औटे हुए दूध में बारीक आंवलों का चूर्ण डालके पीवे ॥

खदिरधार्य

तैलाक्तं स्वरभेदे वा खादिरं धारयेन्मुखे ।
पथ्या पिप्पलियुक्तं वा संयुक्तं नागरेण वा ॥

अर्थ–सरसों के तेल में कत्थे को भिगोय मुख में रक्खे अथवा हरडा और पीपल इन के चूर्ण में सोंठ का चूर्ण मिलायके मुख में रखे तो स्वर स्वच्छ होवे ॥

गोरक्षवटी

रसभस्मार्कलोहस्य भावितस्य त्रिसप्तधा । क्षुद्राफलरसैर्मुद्गतुल्या कार्या वटी शुभा ॥ मुखस्था हरते सर्वं स्वरभंगमसंशयम् । गोरक्षनाथैर्गदिता स्वरामयि कृपालुभिः ॥

अर्थ–पारे की भस्म, तामे की भस्म और लोहभस्म इन तीनों को एकत्र करके कटेरी के फलों के रस की भावना देकर मूंग के बराबर गोली बनावे इस में से एक गोली मुख में रक्खे और उस के रस को चूसता रहे तो निःसंदेह स्वरभेद को हरण करे यह गोरखनाथ सिद्ध ने कृपा करके प्राणियों के अनुग्रह के वास्ते यह स्वरभेद पर गुटिका कही है ॥

ब्राह्म्यादिचूर्ण

ब्राह्मी मुंडी वचा शुंठी पिप्पली मधुसंयुता ।
सेविता सप्तरात्रेण जायते किंकिणिध्वनिः ॥

अर्थ–ब्राह्मी, गोरखमुंडी, वच, सोंठ और पीपल इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो यह चूर्ण मनुष्य के स्वर को कोकिला के स्वर समान करे ॥

वचादिचूर्ण

ब्राह्मी वचाभया वासा पिप्पली मधुसंयुता ।
अस्य प्रयोगात्सहसा किंनरैः सह गीयते ॥

अर्थ–ब्राह्मी, वच, हरड, अडूसा और पीपल इन के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो किन्नर के समान उत्तम स्वर होय ॥

दुग्धामलकपान

दुग्धं प्रयुक्तामलकं नराणां नष्टस्वराणां सुखमातनोति ।
यथा मृगाक्षी सुरकिंनराणां कंदर्पदर्पप्रतिपीडनं च ॥

अर्थ–आंवले के चूर्ण को दूध में डालके पीवे तो स्वरभंगरोगवाले को सुख होता है जैसे मृगाक्षी सुरकिन्नरों के कामदेव का दलन सुख देता है ॥

पथ्य

स्वेदो बस्तिर्धूमपानं विरेकः कवलग्रहः । नस्यं भालशिरावेधो यवा लोहितशालयः ॥ हंसाटवीताम्रचूडकेकीमांसरसाः सुराः । गोकंटकः काकमाची जीवंती बालमूलकम्॥ द्राक्षा पथ्या मातुलिंगं लशुनं लवणार्द्रकम् । तांबूलं मरिचं सर्पिः पथ्यानि स्वरभेदिनाम् ॥

अर्थ–स्वेदन, बस्तिकर्म, धूमपान, विरेचन, औषधों का कवड बना कर मुख में रखना, नास, मस्तक की नस का वेधना, जों, लाल चांवल, हंस, वन का मुरगा, मोर, इन के मांस का रस, दारू, गोखरू, मकोय, जीवंती (डोडी) का साग, नवीन मूली, दाख, हरड, बिजोरा, लहसन, निमकामिला अदरख, पान की बीडी, काली मिरच और घी ये स्वरभेद (अवाज का मंद हो जाना) रोगवाले को पथ्य कहे हैं ॥

स्वरभेदपर अपथ्य

आम्रः कपित्थं बकुलं शालकं जांबवानि च। तिंदुकानि कषाया-
णि वमिं स्वप्नं प्रजल्पताम् ॥ अन्नपानं विरुद्धं च स्वरभेदे विवर्जयेत् ॥

अर्थ–आम, कच्चा कैथ, मौलसिरी, भसीडा, जामुन, तेंदू के फल और कषेले रस, वमन, सोना, बहुत बोलना तथा विरुद्ध अन्न पान ये सब स्वरभेदरोगी को वर्जित हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे स्वरभंगरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अरुचिकर्मविपाकः ।

श्रद्धाहीनो धनी अदाता दानरतिर्वा तामसगुणान्वितो यः ॥
सोरुचिमान् शूली वा जायते ॥ तस्य प्रायश्चित्तम् ॥ कृच्छ्रम-
तिकृच्छ्रं चांद्रायणं व्यस्तं समस्तं वा व्याधितारतम्येन कुर्यात् ॥
अत्राशक्तौ धनी च नित्यं पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं प्रतिदिनं मिष्टा-
न्नेन कारयेत् ॥ अत्राप्यशक्तौ ॥ जपं होमं तथा तीर्थस्नानं
वापि समाचरेत् । तीव्रवैराग्यसंयुक्तः कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

अर्थ–जो प्राणी धनाढ्य होकर श्रद्धाहीन, अदाता अथवा दान करे तौभी तामसी दान करे उस प्राणी के अरुचि (नफरत) का रोग अथवा शूलरोग होय इस का प्रायश्चित्त कहता हूं. उस को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत ये संपूर्ण अथवा इन में से कोईसा एक व्याधि के तारतम्य करके प्रायश्चित्त करे. यदि इन प्रायश्चित्तों के करने में अशक्त होवे और धनाढ्य होय तो नित्यप्रति पचास ब्राह्मणों को मिष्टान्न भोजन करावे. यदि ये भी न हो सके तो जप, होम तथा तीर्थ स्नान ये करे. तथा तीव्र वैराग्य धारण तथा ब्राह्मणभोजन करावे. तो रोगसे छूट जावे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय तत्प्रतीकार

अतिपरिभूतक्षपणः सहजयुतो मानवो भवति । जीवे मंदाग्नि-
विजितो दुश्चित्तको पापकर्मा च ॥ दुश्चिकित्स्यस्थानस्थितगु-
रोः प्रागुक्तजपहोमस्नानादिकं विदध्यात् ॥

अर्थ–जिस प्राणी के जन्मसमय में सहजस्थान (तीसरे घर में) क्रूर ग्रह होवे

किंवा बृहस्पति सहज स्थान में क्रूरग्रहयुक्त हो तो मंदाग्नि युक्त, पापकर्ता, शत्रुओं से जीता और दुश्चित्त ऐसा उत्पन्न होवे. तिसने दुश्चिकित्स्यस्थान गुरुदोष जाने के वास्ते पीछे कहे हुए जप होमादि करे ॥

अरोचकनिदान

परीक्ष्य संमुखे चान्नं जंतुर्न स्वादते मुहुः । अरोचकः स विज्ञेयो भक्तद्वेषमथो शृणु ॥ चिंतयत्यथ मनसा दृष्ट्वा दृष्ट्वा तु भोजन-म् । द्वेषमायाति यो जंतुर्भक्तद्वेषः स उच्यते ॥ यस्यान्ने न भवेच्छ्रद्धा स भक्तच्छंद उच्यते । कुपितस्य भयार्तस्य ज्वरि-तस्य विरोधकः ॥

अर्थ–वारंवार मुख में अन्न डालने पर मनुष्य को स्वाद नहीं आता उस को अरोचक कहते हैं और अन्न के सुनने से, स्मरण से, दर्शन से और स्पर्श से जो मन खिन्न हो जाय उस विकार को अन्नद्वेष कहते हैं और जिस विकार से अन्न की इच्छा न हो उस को भक्तच्छंद कहते हैं वह कुपित, भयार्त और ज्वरित ऐसे रोगी का असाध्य समझना ॥

अरोचककारण

**वातादिभिः शोकभयातिलोभक्रोधैर्मनोघ्नाशनरूपगंधैः ।
अरोचकाः स्युः परिहृष्टदंतः कषायवक्त्रस्य नरोऽनिलेन ॥**

अर्थ–पृथक् वातादि दोष करके ३ सन्निपात से १, शोक से १, भय से १, अतिलोभ से १ तथा अतिक्रोध से ऐसे ८ प्रकार का अरोचक (अरुचि) रोग है. वह मन को क्लेश देनेवाले अन्न, रूप और गंध इन कारणों से प्रगट होय हैं परंतु सुश्रुत और अन्य ग्रन्थों के मत से पांच ही प्रकार मुख्य माने हैं. भय, लोभ, क्रोध की अरुचि को शोक की ही अरुचि के अन्तर्गत मानते हैं. वादी की अरुचि से दांत खट्टे हों और मुख कसेला होय ॥

सामान्यशास्त्रार्थ

**बस्तिः समीरणे पित्ते विरेको वमनं कफे ।
सर्वजे सर्वकामार्थं हर्षणं स्यादरोचके ॥**

अर्थ–वादी से यदि अरुचि का रोग होवे तो बस्तिकर्म देवे. पित्त से होय तो रेचन (जुल्लाब) देवे. कफ से होय तो वमन करावे और त्रिदोष से होवे तो त्रिदोष के नाश करनेवाले तथा मन को प्रसन्न करनेवाले उपचार करे ॥

अरुचौ कवलग्राहो धूमो सुमुखधावनम् ।
मनोज्ञमन्नपानं वा हर्षणाश्वासनानि च ॥

अर्थ–अरुचिरोग में सामान्यता करके कवलग्रह (मुख में औषधों की गोली रखना) धूमपान करना तथा औषंध के जल को मुख में धर खुलखुलायके कुल्ले करना, उत्तम स्वच्छ अन्न और जल तथा अंतःकरण को हर किसी उपाय से प्रसन्न करना और आश्वासन देना ये उपचार करने चाहिये ॥

सात्म्यान्स्वदेशरचितान्विविधांश्च भक्ष्यान्पानानि मूलफलखांडवरागलेहान् । सेवेद्रसांश्च विविधान्विविधप्रयोगैर्भुंजीत चापि लघुरूक्षमनःसुखानि ॥

अर्थ–अपनी प्रकृति के अनुकूल अपने देश में बने ऐसे अनेक प्रकार के भक्ष पदार्थ कहिये लड्डू, पेडा, बरफी, खुरचन, मेवावाटी इत्यादि पक्वान्न, सखत, पने, कंद, अनार, सेव, अंगूर, चटनी, मुरब्बा, अवलेह, पंचामृत, गुलाबजल, श्रीखंड, रायता इत्यादिक पदार्थ, हलके, रूक्ष, अंतःकरण को सुखकारी ऐसे पदार्थ सेवन करे तो मुख में रुचि प्रगट होवे ॥

वचादिस्नेहपान

वांतो वचाद्भिरनिले विधिवत्पिबेत्तु स्नेहोम्लतोयमदिरान्यतमेन चूर्णम् । कृष्णाविडंगयवभस्महरेणुभार्ङ्गीरास्नैलाहिंगुलवणोत्तमनागराणाम् ॥ पैत्ते गुडांबुमधुकैर्वमनं प्रशस्तं लेहः ससैंधवसितामधुसर्पिरिष्टः । निंबांबुना कृतवमेः कफजेनुपानं राजद्रुमांबु मधुना सह दीप्यकाढ्यम्॥ चूर्णं तदुक्तमथ वानिलजे तदेव सर्वैस्तु सर्वकृतमेनमुपक्रमेत ॥

अर्थ–वादी से जो अरुचि होय उसपर बच के काढे से वमन करायके फिर स्नेह, खट्टे रस अथवा मद्य इन में से किसी एक के साथ पीपल, वायविडंग, जवाखार, रेणुक, भारंगी, रास्ना, इलायची, हींग, सैंधा निमक और सोंठ इन के चूर्ण को खाय. पित्त की अरुचि में गुड, जल और मुलहटी इन की वमन देवे. सैंधा निमक, मिश्री, सहत और घी इन का अवलेह बनायके देवे, कफ की अरुचिपर नीम के रस से वमन करायके फिर अमलतास के काढे में सहत और अजमायन का चूर्ण डालके पीवे. अथवा वादी की अरुचि पर जो चिकित्सा कही है वो सब करे तथा सर्व दोषों से उत्पन्न अरुचि में तीनों दोषों पर जो उपचार कहे हैं वो सब करे ॥

सामान्यचिकित्सा

इच्छाविनाशभयजेषु च बाधकेषु भावान्भवाय वितरेत्खलु साध्यरूपान्। अर्थेषु चातिपतितेषु पुनर्भवाय पौराणिकैः श्रुतिपथैरनुमानयेत्तम्॥

अर्थ–इच्छानाश अथवा भय से उत्पन्न अरुचि पर सुख होने के वास्ते इच्छित पदार्थ जो मिल सके वो देवे और उस के भय को दूर करे और द्रव्यनाश के होने से जो अरुचि प्रगट हुई पुराण (भागवत वेदांत आदि शास्त्रों को) सुने जिस से ज्ञान प्रकट होवे ॥

पित्तजन्यअरोचकनिदान

कट्वाम्लमुष्णं विरसं च पूति पित्तेन विद्याल्लवणं च वक्त्रम् ॥

अर्थ–पित्त की अरुचि से कडुआ, खट्टा, गरम, विरस, दुर्गंधयुक्त ऐसा मुख होय ॥

कफजन्यअरोचकनिदान

माधुर्यपैच्छिल्यगुरुत्वशैत्यविबद्धसंबद्धयुतं कफेन ॥

अर्थ–कफ की अरुचि से खारा, मीठा, पिच्छल, भारी, शीतल मुख होय है और मुख बंधा सरीखा अर्थात् खाय नहीं और आंत कफ से लिप्त होय ॥

अरोचके शोकभयातिलोभक्रोधाद्यहृद्याऽशुचिगंधजे स्यात्। स्वाभाविकं चास्यमथारुचिश्च त्रिदोषजे नैकरसं भवेत्तु ॥ हृच्छूलपीडनयुतं पवनेन पित्ततृड्दाहशोषबहुलं सकफप्रसेकम्। श्लेष्मात्मकं बहुरुजं बहुभिश्च विद्याद्वैगुण्यमोहजडताभिरथापरं च॥

अर्थ–शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध, अहृद्य (अर्थात् मन को बूरी लगे ऐसी वस्तु) अपवित्र वास इन से प्रगट हुई अरुचि में मुख स्वाभाविक रहे अर्थात् वातजादिकों के सदृश कसेला, खट्टा आदि नहीं होय. सन्निपात की अरुचि में अन्न से अरुचि तथा मुख में अनेक रस मालूम हो. वात की अरुचि से हृदय में शूल और वेदना होती है. पित्त से प्यास, दाह और चूषने के सदृश पीडा ये लक्षण होते हैं. कफ की अरुचि में मुख से कफ गिरे, सन्निपात की अरुचि में पीडा अत्यन्त होय. वैगुण्य कहिये मन की व्याकुलता, मोह, जडत्व इन लक्षणों से अपर कहिये आगंतुज अरोचक जाने. भूख होय परंतु खाने की सामर्थ्य न होना इस को अरुचि कहते हैं. आप को प्रिय भी अन्न किसी ने दिया हो परंतु खाय नहीं उस को अन्नाभिनन्दन

कहते हैं. अन्न के स्मरण, श्रवण, दर्शन और वास इन से जिस को त्रास होय, उस को भक्तद्वेष कहते हैं इस प्रकार ये रोग तीन प्रकार का है. इसी वास्ते चरक सुश्रुत ने अरोचक शब्दकरके संग्रह करा है ॥

गंडूष

किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत्।
तेन गंडूषमात्रेण आस्यवैरस्यमृच्छति ॥

अर्थ–कांजी में थोडासा निमक डालके औटावे फिर इस के कुल्ले करे तो मुख की विरसता अर्थात् जायके कान आना दूर होवे ॥

कवलग्राह

सिताव्योषकपित्थानां चूर्णं क्षौद्रेण तद्वटी।
सर्वारोचकशांत्यर्थं धारयेद्वदनांबुजे ॥

अर्थ–मिश्री, सोंठ, मिरच, पीपल और कैथ इन का चूर्ण करके सहत में गोली बनावे इस को मुख में रखे तो अरुचि दूर होवे ॥

विडंगचूर्ण

विडंगचूर्णकर्षैकं क्षौद्रैश्चतुर्गुणैर्युतम्।
असाध्यमपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारणात् ॥

अर्थ–वायविडंग का चूर्ण १ तोले, सहत ४ तोले डालके गोली बनावे तो असाध्य भी अरुचि होवे तौ उस का भी नाश होय ॥

अम्लिकाकवल

अम्लिकागुडतोयं च त्वगेलामरिचान्वितम्।
अभक्तच्छंदरोगेषु शस्तं कवलधारणम् ॥

अर्थ–जिस प्राणी की अन्न पर अरुचि होवे उस को इमली के पत्ते में गुड, जल, दालचीनी, इलायची और मिरच इन का चूर्ण डालके पीवे तो अरुचि दूर हो ॥

कुष्ठादिकवल

कुष्ठसौवर्चलाजाजीशर्करामरिचं बिडम्। धान्यैलापद्मकोशीर-
पिप्पल्यश्चंदनोत्पलम् ॥ लोध्रतेजोवती पथ्या त्र्यूषणं सयवा-
ग्रजम्। आर्द्रदाडिमनिर्यासः साजाजीशर्करायुतम् ॥ सतैल-
माक्षिका ह्येते चत्वारः कवलग्रहाः। चतुरो रोचकान् घ्नंति
वाताद्येकजसर्वजान् ॥

अर्थ–कूठ, संचरनिमक, जीरा, मिश्री, काली मिरच और बिडनिमक इन का चूर्ण तथा धनिया, इलायची, पद्माख, खस, पीपल, चंदन सपेद कमल इन का चूर्ण, लोध, मालकांगनी, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार इन का चूर्ण. अदरख, अनारदाना, इन के रस में जीरा और मिश्री मिलावे ये चार योग सरसों का तेल और सहत के साथ खाय तो कवल यानी गस्से खाने की शक्ति हो. और वात, पित्त, कफ और सन्निपात इन से उत्पन्न ४ प्रकारकी अरुचि को नाश करे ॥

नींब का पन्हा

भागैकं निंबुजं तोयं षड्भागं शर्करोदकम् । लवंगमरिचोन्मिश्रं पानकं पानकोत्तमम् ॥ निंबूरसभवं पानमत्यम्लं वातनाशनम् । वह्निदीप्तिकरं रुच्यं समस्ताहारपाचकम् ॥

अर्थ–नीबू का रस १ भाग, मिंश्री का सरबत ६ भाग लेकर उस में लौंग का और काली मिरचों का चूर्ण डालके पन्हा करे यह सब पन्हों में उत्तम है. यह नीबू का पन्हा अत्यंत खट्टा, वादीनाशक, अग्नि प्रदीप्त करता, रुचिकारक तथा सर्व आहार का पाचक है ॥

मुखधावन

अजाजीमरिचं कुष्ठं बिडं सौवर्चलं तथा ।
मधुकं शर्करा तैलं वातिके मुखधावनम् ॥

अर्थ–जीरा, काली मिरच, कूठ, बिडनिमक, संचरनिमक, मूलहटी, मिश्री और सरसों का तेल इन सब को एकत्र करके मुख को धोवे अर्थात् कुल्ले करे तो वादी की अरुचि दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

कारंजं दंतकाष्ठं च विधेयमरुचौ सदा । किंचिल्लवणसंयुक्तमारनालं विपाचयेत् ॥ तेन गंडूषकं कुर्यादास्यवैरस्य शांतये ॥

अर्थ–मुख की रुचि चली गई हो तो कंजे की दांतन से दांतों को घिसे अर्थात् दांतन करे तथा कांजी में थोडा निमक मिलायके कुल्ले करे तो फिर रुचि हो जावे ॥

तीसरा प्रकार

त्रिऊषणानि त्रिफलारजनीद्वयं च चूर्णीकृतानि यवशूकविमि-

श्रितानि। क्षौद्रान्वितानि वितरेन्मुखधावनार्थमन्यानि तिक्तकटुकानि च भेषजानि ॥

अर्थ–दालचीनी, इलायची, पत्रज, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, दारुहलदी, जों के कांटे इन का चूर्ण सहत में मिलायके मुख को धोवे तथा यह कडुए चरपरी औषध लेवे. तो अरुचि इन का नाश होवे ॥

शर्करादिभक्ष

शर्करा दाडिमं चाथ द्राक्षा खर्जूरमेव च । केसरं मातुलिंगस्य सिंधुना मधुनापि वा॥आस्यवैरस्यशमनं भक्षयेत्कर्षसंमितम्॥

अर्थ–मिश्री, अनारदाना, मुनक्का, खजूर, बिजोरे की केशर, सैंधा निमक अथवा सहत से युक्त इन में के किसी एक के साथ तोले भर भोजन करने से मुख में रुचि होवे ॥

पानक

पक्काम्लिका सिता शीतवारिणा वस्त्रगालितम् । एलालवंगकर्पूरमरीचैरवधूलितम्॥ पानकस्यास्य गंडूषं धारयित्वा मुखेतुरः। अरुचिं नाशयत्येव पित्तं प्रशमयेद्यथा ॥

अर्थ–पकी हुई इमली को जल में भिगोकर मसल कर छान लेवे फिर इस में मिश्री, शीतल जल, इलायची, लौंग, कपूर और मिरच इन का चूर्ण डालके पन्हा बनावे इस को मुख में धारण करने से अरुचि का नाश होवे तथा पित्त शांत हो ॥

तालीसादिचूर्ण

तालीसं मरिचं शुंठी पिप्पली वंशरोचना । एकद्वित्रिचतुः पंच कर्षैर्भागान् प्रकल्पयेत् ॥ एलात्वचोस्तु कर्षार्धं प्रत्येकं भागमावहेत् । मृतं वंगं मृतं ताम्रं समभागानि कारयेत ॥ द्वात्रिंशत्कर्षतुलिता प्रदेया शर्करा बुधैः । तालीसाद्यमिदं चूर्णं रोचनं पाचनं स्मृतम् ॥ कासश्वासज्वरहरं छर्द्यतीसारनाशनम् । शोषाध्मानहरं प्लीहाग्रहणीपांडुरोगजित् ॥

अर्थ–तालीसपत्र १ तोला, काली मिरच २ तोले, सोंठ ३ तोले, पीपल ४ तोले, वंशलोचन ५ तोले, इलायची, दालचीनी ये दोनों छः छः मासे लेवे. वंग की भस्म और तामे की भस्म दोनों आठ आठ तोले. मिश्री ३२ तोले इस को कूट पीस चूर्ण

बनावे. उस में पूर्वोक्त मिश्री को मिलायके सेवन करे तो मुख में रुचि प्रगट हो. तथा अन्न पचे तथा खांसी, श्वास, ज्वर, वमन, अतिसार, शोष, पेटका फूलना, कामला, संग्रहणी और पांडुरोग ये दूर हो ॥

खांडवचूर्ण

तुल्यं तालीसचव्योषणलवणगजाद्विः कणाग्रंथ्यजातीवृक्षाम्ला-ग्नित्वचं त्रिर्घनबदरधनैलाजमोदाम्लविश्वम्। सार्धश्वेतोंग्रिसारो तिसृतिकृमिवमीखांडवोरुच्यजीर्णे गुल्माध्मानानलास्योदरग-लगुदहृन्मृद्गदश्वासकासे ॥

अर्थ-तालीसपत्र१, चव्य १, मिरच १, सैंधानिमक १, नागकेशर १, पीपल २, पीपरामूल २, जीरा २, इमली२, चित्रक २, दालचीनी २, नागरमोथा३, सुखेबेर ३, धनिया३, इलायची३, अजमोद३, अमलवेत ३, सोंठ और मिश्री १९ तोले लेवे तथा अनारदाना ९॥ तोले इन सब औषधों का बारीक चूर्ण करके अनुपान के साथ अतिसार, कृमि, वांति, अरुचि, अजीर्ण, गोला, पेट का फूलना, मंदाग्नि, मुखरोग, उदररोग, गलरोग, बवासीर, हृदयरोग, मृत्तिकाजन्य रोग, श्वास और खांसी इनपर देवे ॥

यवानीखांडवचूर्ण अरोचकादिपर

यवानी दाडिमं शुंठी तिंतिडीकाम्लवेतसौ । बदराम्लं च कुर्वीत चतुःशाणमितानि च ॥ सार्धद्विशाणं मरिचं पिप्पली दशशाणिका । त्वक्सौवर्चलधान्याकं जीरकं द्विद्विशाणकम् ॥ चतुःषष्टिमितैः शाणैः शर्करामत्र योजयेत् । चूर्णितं सर्वमेकत्र यवानीखांडवाभिधम् ॥ चूर्णं जयेत्पांडुरोगं हृद्रोगं ग्रहणीज्वरम् । छर्दिशोषातिसारांश्च प्लीहानाहविबंधताम् ॥ अरुचिं शूलमंदाग्निमर्शोजिह्वागलामयान् ॥

अर्थ-अजमोद, अनारदाना, सोंठ, इमली, अमलवेत, बेर की खटाई, ये छः औषध चार चार शाण लेवे. काली मिरच २॥ शाण, पीपल १० शाण, दालचीनी, संचरनिमक, धनिया, जीरा ये प्रत्येक दो दो शाण लेवे. मिश्री ६४ शाण, इन सब औषधों को कूट पीसके चूर्ण करे इस चूर्ण को यवानीखंड कहते हैं. इस चूर्ण के सेवन करने से पांडुरोग, हृदयरोग, संग्रहणी, ज्वर, छर्दि (वमन), शोष, अतिसार, प्लीहा, अफरा, मल का रुकना, अरुचि, शूल, मंदाग्नि, बवासीर, जीभ और गले के विकार इन सब को दूर करे ॥

कारव्यादिगुटिका

कारव्यजाजीमरिचं द्राक्षावृक्षाम्लदाडिमम्। सौवर्चलं गुडः क्षौद्रमेषां कार्या वटी शुभा॥ बदरास्थिमिता सास्ये धार्यारोचकनाशिनी॥

अर्थ–कलोंजी, जीरा, काली मिरच, दाख, अमलवेत, अनारदाना, संचरनिमक, गुड और सहत ये सब को एकत्र खरल करके बेर की गुठली के बराबर गोली बनायके मुख में रखे तो अरुचि रोग दूर होय॥

खंडार्द्रकयोग

आर्द्रकस्य सितायाश्च द्विगुणाष्टपलानि च। निष्कद्वादशकं तीक्ष्णमष्टनिष्का च मागधी॥ अष्टनिष्कं च तन्मूलं पंचनिष्कं च नागरम्। जातीफलैलादहनवंशाख्याः पंच निष्ककाः॥ सर्वाण्येतानि शुष्काणि चूर्णं कृत्वा पृथक् पृथक्। आर्द्रकं खंडशः कृत्वा गोघृतेष्टपले पचेत्॥ शर्करापूर्णचूर्णं च आर्द्रकं सह मेलयेत्। मंडलं सेवयेन्नित्यं महापित्तविनाशनम्॥ अम्लपित्तं निहंत्याशु सर्वपित्तविकारजित्। सर्वारुचिं वातरोगं मंदाग्निं च नियच्छति॥

अर्थ--अदरख ६४ तोले, मिश्री ६४ तोले, काली मिरच ४ तोले, पीपल ३ तोले, पीपरामूल ३ तोले, सोंठ १॥ तोला, जायफल, इलायची, चित्रक, वंशलोचन ये प्रत्येक डेढ २ तोला लेवे इन सूखी हुई औषधोंका पृथक् २ चूर्ण करे फिर अदरख के टुकडे बारीक करके ३२ तोले घी में गेरके तल लेवे फिर मिश्री और सब चूर्ण को खटाई में मिलाय नित्यप्रति ४० दिनपर्यंत सेवन करे तो यह खंडार्द्रक लेह घोर पित्त का नाश करनेवाला है. अम्लपित्त को बहुत जल्दी दूर करे और सर्वपित्त के विकारों को नष्ट करे तथा सर्व प्रकार की अरुचि, वादी के रोग, मंदाग्नि इन सब को नष्ट करे॥

राजिकादिशिखरिणी

राजिका जीरको कुष्ठो भृष्टहिंगु च नागरम्। सैंधवं दधि गोः सर्वं वस्त्रपूतं प्रकल्पयेत्॥ तावन्मानं क्षिपेत्तत्र यथा स्याद्रुचिरुत्तमा। तक्रमेतद्भवेत्सद्यो रोचनं वह्निदीपनम्॥

अर्थ–राई, जीरा, कूट, भुनी हुई हींग, सोंठ, सैंधा निमक और गौ का दही ये सब पदार्थ यथायोग्य एकत्र कर वस्त्र में डालके छान लेवे यह छाछ अरुचि को नाश करे और जठराग्नि को दीपन करे है यह राजिकादि शिखरन कहाती है ॥

आर्द्रकयोग

धौतं खंडितमार्द्रकं च सलिलैः क्षिप्तं सुतप्ते घृते सिंधूत्थं मरिचं सुजीरयुगुलं चूर्णीकृतं प्रक्षिपेत् । चूर्णं भृष्टयवोद्भवं च वितुषं हिंग्वाज्यधूमे दहेदित्थं दोषविहीनमार्द्रकवरं सुस्वादु संजायते ॥

अर्थ–अदरख को जल से धोय स्वच्छ करके उस के टुकडे २ कर लेवे फिर घी को कढाई में चढाय उस में इस अदरख को डालके परिपक्व करे. फिर सैंधानिमक, काली मिरच, जीरा, काला जीरा इन का चूर्ण उस में डालके कुछ गरम करे फिर जौओं को भूनके उन के चून को घी में हींग डालके भून लेवे और सब में मिलाय देवे. इस प्रकार बना हुआ अदरख दोषहीन, स्वादिष्ठ और अरुचिनाशक होता है ॥

ताम्राशिखरिणी

गव्यमावर्तितं दुग्धं निबद्धं दधि माहिषम् । एकीकृत्य पटे घृष्टं शुभ्रशर्करया शुभम् ॥ एलालवंगकर्पूरमरिचैश्च समन्विता । ताम्रा शिखरिणी कुर्याद्रुचिं सकलवल्लभा ॥

अर्थ-गौ का दूध, भैंस का दही इन दोनों को एकत्र करके कपडे में डाल और सपेद बूरा मिलायके धीरे २ हाथ से मलके छान लेवे उस में इलायची, लौंग, कपूर और काली मिरच ये पदार्थ यथायोग्य डालके सिखरन बनावे. इस का नाम **ताम्राशिखरिणी** है. यह रुचि को उत्पन्न करे तथा सर्व प्राणियों को प्यारी है ॥

आमलकादि चूर्ण

आमलं चित्रकः पथ्या पिप्पली सैंधवं तथा । चूर्णितोयं गणो ज्ञेयः सर्वज्वरविनाशनः ॥ भेदी रुचिकरः श्लेष्मजेता दीपनपाचनः ॥

अर्थ–आंवले १, चित्रक २, छोटी हरड ३, पीपल ४, सैंधा निमक ५ इन पांच औषधों को समान समान भाग लेकर चूर्ण करे यह सर्वज्वरों को दूर करे. तथा मलादिक को भेदन करे और रुचिदाई तथा कफ दूर होय, अग्नि प्रदीप्त होय और अन्न पचे ॥

कर्पूरादिचूर्ण

कर्पूरचोचकंकोलजातीफलदलैः समैः । लवंगं नागमरिचं कृष्णा शुंठी विवर्धिताः ॥ चूर्णं सितासमं ग्राह्यं रोचनं क्षयकासजित् । वैस्वर्यश्वासगुल्मार्शश्छर्दिकंठामयापहम् ॥ प्रयुक्तं चान्नपानेषु भिषजा रोगिणां हितम् ॥

अर्थ–कपूर, दालचीनी, कंकोल, जायफल और पत्रज ये सब प्रत्येक एक २ तोला लेवे. लौंग २ तोले, नागकेशर ३ तोले, काली मिरच ४ तोले, पीपल ५ तोले और सोंठ ६ तोले इस प्रकार लेके चूर्ण करे फिर मिश्री मिलायके सेवन करे तो रुचि करे. खांसी, स्वरभेद, श्वास, गोला, बवासीर, छर्दि, कंठरोग इन को नाश करें, इस को भोजन में मिलायके अथवा जल में मिलायके देवे ॥

चव्यादिचूर्ण

चव्याम्लवेतसकटुत्रयतिंतिडिकतालीसजीरकतुगादहनैः समांशैः । चूर्णं गुडप्रमुदितं त्रिसुगंधियुक्तं वैस्वर्यपीनसकफारुचिषु प्रशस्तम् ॥

अर्थ–चव्य, अमलवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, अमलवेत, तालीसपत्र, जीरा, वंशलोचन, चित्रक, दालचीनी, पत्रज, इलायची इन का चूर्ण गुड में मिलायके देवे तो स्वरभेद, पीनस, कफ, अरुचि को नष्ट करे ॥

आर्द्रकमातुलुंगावलेह

आर्द्रकस्वरसं प्रस्थं तदर्धांशं गुडं क्षिपेत् । कुडवं बीजपूराम्लं गालयित्वा विचक्षणः ॥ सर्वं मंदाग्निना पक्त्वा तत्रेमानिविनिःक्षिपेत् । त्रिजातकं त्रिकटुकं त्रिफलायासमेव च ॥ चित्रकं ग्रंथिकं धान्यं जीरकद्वयमेव च । कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं तु मेलयित्वा तु भक्षयेत् ॥ अरोचकक्षयहरमाग्निदीप्तिकरं परम् । कामलापांडुशोकघ्नं कासश्वासहरं परम् ॥ आध्मानोदरगुल्मांश्च प्लीहं शूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ–६४ तोले अदरखका रस, गुड ३२ तोले, बिजोरे का रस १६ तोले इन सब को मंदाग्निपर पचावे. फिर इस में दालचीनी, पत्रज, इलायची, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, धमासा, चित्रक, पीपरामूल, धनिया, जीरा इन प्रत्येक का चूर्ण तोले २ भर लेवे सब को पूर्वोक्त रस में मिलायके खाय तो

अरुचि, क्षय, मंदाग्नि, कामला, पांडुरोग, शोष, खांसी, श्वास, अफरा, उदर, गोला, प्लीहा और शूल इन को नष्ट करे ॥

जीरकादिघृत

पिष्ट्वाजाजी सधान्याकं घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
कफपित्तारुचिहरं मंदानलवमिं जयेत् ॥

अर्थ–जीरा और धनिया इन का कल्क ६४ तोले घी में डालके घृत को पक्व करे यह घृत कफपित्त से हुई अरुचि को नाश करे तथा मंदाग्नि और वमन इन को नष्ट करे है ॥

सूतादिगुटिका

सूतं गंधाभ्रमगधाम्लीकामगधसैंधवैः ।
गुटिकारोचकहरी जिह्वावदनशुद्धिकृत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, अभ्रकभस्म, पीपल, इमली, पीपरामूल और सैंधा निमक इन सब की गोली बनायके मुख में रक्खे तो अरुचि को नष्ट करे तथा जिह्वा और मुख की शुद्धि करे ॥

लघुचुक्रसंधान

गुडक्षौद्रारनालानि समस्तानि यथोत्तरम् । शंसंति द्विगुणान्भागान्सम्यक् सूक्तस्य सिद्धये ॥ यन्मस्त्वादिशुचौ भांडे सक्षौद्रं गुडकांजिकम् । त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं सूक्तं चुक्रं तदुच्यते॥

अर्थ–गुड १ भाग, सहत २ भाग और कांजी ४ भाग इस प्रकार लेकर चिकने बासन में भरके धान की राशि में तीन दिन रख देवे. इस को सूक्तचुक्र कहते हैं यह सर्व प्रकार की अरुचिरोग को नाश करे ॥

केसरादिलेह

केसरं मातुलुंगस्य सैंधवं मधुनापि वा ।
आस्यवैरस्यशमनं भक्षयेत्कर्षसंमितम् ॥

अर्थ–बिजोरे की केसर को सैंधा निमक अथवा सहत इन के साथ एक तोला खाय तो मुख की विरसता (बुरा स्वाद) दूर होवे ॥

शमयति केसरमरुचिं सलवणघृतमाशु मातुलुंगस्य ।
दाडिमचर्वणमथवा चरको रुचिकारि सूचयामास ॥

अर्थ-बिजोरे की केसर, सेंधा निमक इन को सहत में मिलायके सेवन करे तो अरुचि को दूर करे अथवा अनार का चवाना रुचि करता है इस प्रकार चरक ऋषि ने कहा है ॥

आर्द्रकदाडिमयोग

जिह्वाकंठविशोधनं तदनु च स्याच्छृंगबेरान्वितं सिंधूत्थं हितमत्र चाथ मधुना शस्तो रसो दाडिमः। अग्न्युद्बोधकराण्यजीर्णशमनान्याहुस्तथा भेषजान्यन्नारोचकहृत्प्रयोगमसकृत्तत्तत्प्रदेयानि च॥

अर्थ-प्रथम जिव्हा और कंठ इन को शुद्धि करनेवाली औषध लेकर फिर अदरख और सैंधा निमक खाय अथवा अनारदाना और सहत खाय तथा अग्नि प्रदीप्त करनेवाली और अजीर्णनाशक औषध सेवन करने से अरुचि रोग दूर होय ॥

दाडिमचूर्ण

द्वे पले दाडिमादष्टौ खंडाद्व्योषात्पलत्रयम्। त्रिसुगंधिपलं चैकं चूर्णमेकत्र कारयेत्॥ दीपनं रोचनं हृद्यं पीनसश्वासकासजित्॥

अर्थ-अनारदाना ८ तोले, मिश्री ३२ तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये चार २ तोले, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये ४ तोले इन सब को एकत्र चूर्ण करके खाय यह दीपन, रोचन और हृदय को हितकारी है तथा पीनस, श्वास और खांसी इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः। मरिचं दीप्यकं चैव वृक्षाम्लं साम्लवेतसम्॥ एलालवंगशालूकदधित्थं चेति कार्षिकम्। प्रदेयं चातिशुद्धायाः शर्करायाश्चतुः पलम्॥ चूर्णमग्निप्रसादः स्यात्परमं रुचिवर्धनम्। प्लीहकार्श्यमथार्शांसि श्वासं शूलं ज्वरं वमिम्॥ निहंति दीपयत्यग्निं बलवर्णरुचिप्रदम्। वातानुलोमनं हृद्यं जिह्वाकंठविशोधनम्॥

अर्थ-पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिरच, अजमायन, अमलवेत, डासरा, इलायची, लौंग, जायफल और कैथ ये एक एक तोला, मिश्री १६ तोले इन को कूट पीस चूर्ण बनावे यह अग्नि को प्रदीप्त करता, रुचिकारी तथा प्लीह,

कार्श्य (कृशता), बवासीर, श्वास, शूल, ज्वर और वमन इन को दूर करे तथा वायु का अनुलोमन करे अर्थात् बिगडी हुई वायु को शुद्ध करे और हृदय, जीभ और कंठ इन को शुद्ध करे है ॥

छत्रादिचूर्ण

छत्राबीजं तिन्तिडीकं द्राक्षा दाडिमजीरकम् ।
सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ—आंवले, इमली, दाख, अनारदाना, जीरा, संचरनिमक, गुड और सहत इन सब को एकत्र करके सेवन करे तो अरुचि को नाश करे ॥

अम्लिकादिपेय

सौवर्चलं गुडं क्षौद्रं सर्वारोचकनाशनम् ॥

अर्थ—संचरनिमक, गुड और सहत इन सब को मिलायके सेवन करे तो सर्व प्रकार का अरुचिरोग दूर हो ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

त्रुटित्वक्केसरं पुष्पं वह्लिजं सकणौषधम् । समखंडं भागवृद्धं चूर्णितं भक्षयेद्गदी ॥ श्वासकासप्रसेकेषु हृत्पार्श्वरुचिजे गदे ।
गलामये प्रशस्तं च मुखपाकविधौ हितम् ॥

अर्थ—इलायची, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, काली मिरच, पीपर और सोंठ ये पदार्थ एक से दूसरा वृद्धि के क्रम से लेवे. तथा सब चूर्ण के समान मिश्री मिलावे इस चूर्ण को सेवन करे तो श्वास, खांसी, मुख से पानी का छूटना और हृदय, पार्श्व, अरुचि, गले का रोग और मुखपाक (छाले) इन सब रोगों को दूर करे ॥

त्र्यूषणादिवटी

त्र्यूषणकपित्थशर्करारोचकेन च साधयेद्वटी ।
सेविता च सा जायते जरो भीमसेनवद्भक्षयेल्लालसः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, कैथ, मिश्री और संचरानिमक इन की गोली बनायके खाय तो वृद्धावस्था दूर हो तथा भीमसेन के समान भूंख लगे ॥

अमृतप्रभावटी

मरिचं पिप्पलीमूलं लवंगं च हरीतकी । यवानी तिन्तिडीकं च दाडिमं लवणत्रयम् ॥ एतानि पलमात्राणि मागधीक्षारचित्र-

कम् । त्रिजाजीनागरं धान्य एला धात्रीफलं समम् ॥ एतान्द्वि-पलिकान् भागान् भावयेद्बीजपूरकैः। भावनात्रितयं दत्त्वा गुटिकां कारयेद्बुधः ॥ छायाशुष्कां प्रकुर्वीत अजीर्णस्य प्रशांतये । अग्निं च कुरुते घोरं गुटिका चामृतप्रभा ॥

अर्थ–मिरच, पीपलामूल, लौंग, हरड, अजमायन, इमली, अनारदाना, बिडनिमक, कचिया निमक और साझर ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन सब का चूर्ण करके इस में बिजोरे के रस की तीन भावना देकर गोली बनाय ले इन को छाया में सुखायके देवे तो अजीर्ण को नष्ट करे. तथा अग्नि को बढावे इस को **अमृतप्रभा** गुटिका कहते हैं ॥

आकल्लकादिचूर्ण

आकल्लकं सैंधववह्निशुंठीधात्र्यूषणं दीप्यसमांशपथ्या । रसेन भाव्यं फलपूरकेन मंदानलत्वे ह्यमृतप्रभेयम् ॥ कासे गलामये श्वासे प्रतिश्याये च पीनसे । अपस्मारे तथोन्मादे सन्निपाते सदा हिता ॥

अर्थ–अकरकरा, सैंधानिमक, चीता, सोंठ, आंवले, काली मिरच, अजमायन और हरड ये बराबर लेवे इन सब का चूर्ण करके बिजोरे के रस की भावना देवे तो यह मंदाग्नि रोगपर **अमृतप्रभा** चूर्ण बने यह खांसी, कंठ के रोग, श्वास, सरेकमा, पीनस, अपस्मार (मृगी) उन्माद और सान्निपात रोग इनपर सदैव हित है ॥

लवणार्द्रकयोग

भोजनादौ सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम् ।
रोचनं दीपनं वह्नेर्जिह्वाकंठविशोधनम् ॥

अर्थ–भोजन करने के थोडी देर पहले सैंधानिमक और अदरख को मिलायके खाने से रुचि करे, अग्नि को दीपन करे तथा जीभ और कंठ को शोधन करे ॥

शृंगवेरादिलेह

शृंगवेररसं चापि मधुना सह योजयेत् ।
अरुचिश्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥

अर्थ–अदरख के रस में सहत डालके देवे तो अरुचि, श्वास, खांसी, पीनस और कफ के विकारों को नष्ट करे ॥

त्वङ्मुस्तादिचूर्ण

त्वङ्मुस्तमेलाधान्यानि मुस्तामामलकत्वचा । त्वक् च दार्वी यवान्याश्च पिप्पली तेजवत्यपि ॥ यवानी तिंतिडीकं च पंचैते मुखशोधनाः । श्लोकपादैरभिहिताः सर्वारोचकनाशनाः ॥

अर्थ–दालचीनी, नागरमोथा, इलायची, धनिया अथवा नागरमोथा, आंवले, दालचीनी, दारुहलदी, अजमायन अथवा पीपर और जलपीपर अथवा अजमायन और इमली ये पांच योग मुख की शुद्धि और अरुचि इन को नाश करे ॥

दाडिमरस

विडंगचूर्णसंयुक्तो रसो दाडिमसंभवः ।
असाध्यामपि संहन्यादरुचिं वक्त्रधारितः ॥

अर्थ–अनारदाने के रस में वायविडंग का चूर्ण डालके इस रस को मुख में रखे तो असाध्य भी अरुचि का रोग नष्ट होवे ॥

जीरकादिचूर्ण

अजाजिनिष्कमात्रं च कर्षैकं सितशर्करा ।
पलं क्षौद्रेण संयुक्तं पीतं रुचिकरं मुखे ॥

अर्थ–जीरा ४ मासे और मिश्री १ तोला दोनों को एकत्र करके और सहत ४ तोले मिलायके मुख में रखे तो यह रुचि को प्रगट करे ॥

कपित्थादिचूर्ण

कपित्थमज्जात्रिकटुचूर्णं क्षौद्रसितायुतम् ।
अरोचकेषु सर्वेषु प्रशस्तं धारयेन्मुखे ॥

अर्थ–कैथ का गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण सहत और मिश्री में मिलायके मुख में रखे तो सर्व अरुचि पर उत्तम है ॥

शुंठ्यादिगुटी

शुंठ्येकभागा द्विगुणा च कृष्णा निशोत्र पथ्या त्रिगुणा तथा च । साध्यैकभागामलकी च तीक्ष्णं चतुर्गुणं सैंधवमम्लमर्द्यम् ॥ शाणैकमात्रा गुटिका निषेव्या निहंति मंदानलजं प्रकोपम् ॥

अर्थ–सोंठ १, पीपल २, निसोथ ३, हरड ३, आंवला १॥, मिरच ४ और सैंधानिमक ४ भाग लेवे. इन सब का चूर्ण करके नींबू के रस में खरल करे फिर चार २ मासे की गोली बनावे ये गोली मंदाग्नि को नष्ट करे है और रुचि प्रगट करे ॥

अरुचि रोग में पथ्य

बस्तिर्विरेको वमनं यथाबलं धूमोपसेवा कवलग्रहस्तथा । तिक्तानि काष्ठानि च दंतघर्षणे चित्रान्नपानानि हितैः कृतान्यपि ॥ गोधूममुद्गाढकिशालिषष्टिकामांसं वराहालिशशैणसंभवम् । वेगो झषांडं मधुरालिकेलिशः प्रोष्ठी खलेशः कवची च रोहितः॥ कर्कारुवेत्राग्रनवीनमूलकं वार्त्ताकसौभांजनमोचदाडिमम् । भव्यं पटोलं रुचकं पयो घृतं बालानि तालानि रसोनसूरणम् ॥ द्राक्षा रसालं ललदंबु कांजिकं मद्यं रसालां दधि तक्रमार्द्रकम् । कंकोलखर्जूरप्रियालतिंदुकं पक्कं कपित्थं बदरं विकंकतम् ॥ तालास्थिमज्जाहिमवालुकासितापथ्यायवानीमरिचानि रामठम् । स्वाद्वम्लतिक्तानि च देहमार्जनं वर्गोयमुक्तोऽरुचिरोगिणां हितः ॥

अर्थ–रोगी के बलानुसार बस्तिकर्म, विरेचन, वमन का करना तथा धूमपान मुख में औषध का कवल रखना तथा कडुए काष्ठ की दांतन करना और अनेक प्रकार के हितकारी ऐसे अन्न, पान, गेहूँ, मूंग, अरहर, शालीधान, सांठी चावल और सूअर, बकरा, शशा, काला मृग इन का मांस, चेकु जात की मछली, झषांड, मधुरालिका, इल्लिश, प्रोष्ठी, खलेश, कवयी और रोहू इतने प्रकार की मछली. लाल जात की घीया, वेत की आगे की कोपल, नई कोमल मूली, बैंगन, सहजना, केला, अनार, भव्य, परवल, सैंधा निमक, दूध, घी, कोमल ताल के फल, लहसन, जमीकंद, दाख, आँम, खस का अथवा झरने का वहता हुआ जल, कांजी, मदिरा (दारू), सिखरन, दही, छाछ, अदरख, कंकोल, खजूर, चिरोंजी, तेंदू (अथवा ढेडस का साग), पका कैथ फा फल, वेर, विकंकत (कटाई), ताड के भीतर की गिरी, शीतल वालू, मिश्री, हरड, अजमायन, काली मिरच, हींग, स्वादिष्ठ (मीठे), खट्टे और कडुए रस तथा स्नान ये सब अरुचि रोगवाले को पथ्यवर्ग कहा है ॥

अरुचिपर अपथ्य

तृष्णोद्गारक्षुधानेत्रवारिवेगविधारणम् । अहृद्यान्नमसृङ्मोक्षं क्रोधं लोभं भयं शुचम् ॥ दुर्गंधारूपसेवां च न कुर्यादरुचौ नरः ॥

अर्थ–प्यास, डकार, भूंख और रुदन इन के वेग को रोकना, अप्रिय अन्न का भोजन, फस्त खोलना, क्रोध, लोभ, भय, शोक, दुर्गंध और कुरूप पदार्थों का देखना ये अरुचि रोगवाले को सेवन नहीं करने चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अरुचिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

छर्दिरोगकर्मविपाकः ।

यो ब्राह्मणाय केशकीटकाकसारमेयाद्युपहतमन्नं जानन्नेव प्रमादात्प्रयच्छति स च्छर्दिमानन्यजन्मनि ॥

अर्थ–जो प्राणी ब्राह्मण के अर्थ बाल, कीट, कौआ और कुत्ता इन से बिगडे हुए अन्न को अर्थात् निषिद्ध अन्न को उन्मत्तपने से जान कर जो देता है वह दूसरे जन्म में वमन रोग करके पीडित होय ॥

अन्यच्च

विश्वासघातकी च्छर्दियुक्तो भवति तदुपशांतये पंचाशद्ब्राह्मणभोजनं कारयेत् । अन्नदानं च यथाशक्त्या आज्ययुक्तं च कुर्यात् । तेनोपशांतिर्भवति ॥

अर्थ–जो प्राणी विश्वासघात करे है वह वमनरोग से पीडित होता है उस को उस दोष के दूर करने को पचास ब्राह्मणों को भोजन करावे और घृतयुक्त अन्न का दान करे तो यह रोग शांत होय ॥

ज्योतिषशास्त्राभिप्राय

रिपुस्थाने यदा स्यातां चंद्रशुक्रौ ततो भवेत् । छर्दिमान्मनुजस्तृष्णापक्षं वा इव लोकिते ॥ क्षीणचंद्रावलोकी तु षष्ठस्थानस्थितो बुधः ॥ शुक्रबाधोपशांतये बुधस्य पूर्वोक्तमेव सकलं जपादि विदध्यात् ॥

अर्थ–जन्म के समय छठे स्थान में चंद्रमा और शुक्र पडे होवें अथवा इन की दृष्टि होवे तो वह वमनरोगी होय अथवा तृष्णा (प्यास) रोगी होवे अथवा छठे स्थान में बुध पडा होवे और उस को क्षीणचंद्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता होय तो वांति अथवा तृष्णारोगी होय उस को शुक्र और बुध इन की शांति करने को पूर्वोक्त जपादिक संपूर्ण करे ॥

छर्दिनिदान संप्राप्ति व लक्षण

दुष्टैर्दोषैः पृथक् सर्वैर्बीभत्सालोकनादिभिः। छर्दयः पंच विज्ञेयास्तासां लक्षणमुच्यते ॥ अतिद्रवैरतिस्निग्धैरहृद्यैर्लवणैरपि। अकाले चातिमात्रैश्च तथा सात्म्यैश्च भोजनैः॥ श्रमाद्भयात्तथोद्वेगादजीर्णात्कृमिदोषतः। नार्याश्चापन्नसत्वायास्तथातिद्रुतमश्नतः॥ बीभत्सैर्हेतुभिश्चान्यैर्द्रुतमुत्क्लेशितो बलात्। छादयन्नाननं वेगैरर्दयन्नङ्गभञ्जनैः॥ निरुच्यते छर्दिरिति दोषो वक्रं प्रधावति॥

अर्थ—दुष्ट हुए पृथक् और सब दोषों करके तथा दुष्ट वस्तुके देखने से आदिशब्दकरके दुष्ट गंध के सूंघने से पांच प्रकार की छर्दि जाननी अर्थात् जिस को रद्द वमन, उलटी कहते हैं उस के लक्षण आगे कहते हैं. अत्यन्त पतले अथवा चिकने अहृद्य (अप्रिय) वस्तु, खार के पदार्थ, इन के सेवन करने से, कुसमय भोजन करने से, अथवा अत्यन्त भोजन करने से, अथवा जो न पचे ऐसे भोजन करने से, श्रम, भय, उद्वेग, अजीर्ण, कृमिदोष इन कारणों से गर्भिणी स्त्री के गर्भ की पीडा से तथा जल्दी जल्दी भोजन करने से और बीभत्स (खोटे) कारणों से जैसे विष्ठा, राध, आदि का देखना इन से तीनों दोष कुपित हो बल से मुख को आच्छादन करे और अंगों को पीडा कर मुखद्वारा भोजन हुआ सब निकाल देय इस को (छर्दि) उलटी ऐसे मनुष्य कहते हैं. इस जगह उदान वायु वमन कराती है॥

पूर्वरूप

हृल्लासोद्गारसंरोधैः प्रसेको लवणस्तनुः।
द्वेषोऽन्नपाने च भृशं वमीनां पूर्वलक्षणम्॥

अर्थ—हृदय से खारा, खट्टा, प्रथमही निकले अथवा सूखी रद्द होय, डकार आवे नहीं, लार गिरे, खारी मुख हो जाय, अन्न और पानी से अत्यन्त अरुचि होय ये छर्दि (छाट) के पूर्वरूप हैं॥

वातछर्दिलक्षण

हृत्पार्श्वपीडामुखशोषशीर्षनाभ्यर्तिकासस्वरभेदतोदैः। उद्गारशब्दं प्रबलं सफेनं विभिन्नकृष्णं तनुकं कषायम्॥ कृच्छ्रेण चाल्पं महता च वेगेनाऽर्तोऽनिलाच्छर्दयतीह दुःखम्॥

अर्थ–हृदय और पसवाडे में पीडा होय, मुखशोष, मस्तक और नाभि इन में शूल होय, खांसी, स्वरभेद, सुई चुभने की सी पीडा होय, डकार का शब्द प्रबल होय, वमन में झाग आवे, ठहर २ कर वमन होय, तथा थोडी होय, वमन का रंग काला होय पतली और कसेली होय, वमन का वेग बहुत होय, परंतु वमन थोडा होय और वेग के प्रभाव से दुःख बहुत होय ये लक्षण वायु की छर्दि के हैं ॥

सैंधवयोग

सैंधवं सर्पिषा पीतं वातच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ–घी में सैंधा निमक डालके पीवे तो वादी की छर्दि रोग दूर हो ॥

लवणत्रययोग

लवणत्रयसंयुक्तं संयुक्तं लवणेन वा ।
हन्यात्क्षीरोदकं पीतं छर्दिं पवनसंभवाम् ॥

अर्थ–सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक इन के साथ अथवा केवल निमक को दूध और जल में मिलायके पीवे तो वादी से प्रगट हुई छर्दि को नष्ट करे ॥

धान्याकयूष

धान्याकविश्वदशमूलकषायसिद्धान् यूषान् रसान् पवनवम्य-रुचिप्रशांत्यै । पीत्वा सुखानि लभते मधुमिश्रितं वा शंखाह्व-यास्वरसमूषणचूर्णयुक्तम् ॥

अर्थ–धनिया, सोंठ और दशमूल इन के काढे, मंड अथवा रस ये वादी की छर्दि तथा वादी की अरुचि इन की शांति करने को लेय तो सुख होय अथवा शंखाहूली के रस में सहत और काली मिरचों का चूर्ण डालके देवे तो सुख होय ॥

पित्तच्छर्दिलक्षण

मूर्छापिपासामुखशोषमूर्धताल्वक्षिसंतापतमोभ्रमार्तः ।
पीतं भृशोष्णं हरितं सतिक्तं धूम्रं स पित्तेन वमेत्सदाहम् ॥

अर्थ–मूर्च्छा, प्यास, मुखशोष, मस्तक, तलुआ, नेत्र इन में सन्ताप अर्थात् तपायमान रहें, अंधेरा आवे, चक्कर आवे, रोगी पीला गरम हारा कडुआ धूआं के रंग का और दाहयुक्त ऐसा पित्त को वमन करे यह पित्त की छर्दि का लक्षण है ॥

तंदुलजलपान

पित्तछर्दिर्व्रजेद्दूर्वातंदुलोदकदानतः ।
धात्रीरसेन वा पीताः सितालाजाश्च घ्नंति ताम् ॥

अर्थ–चावल के धोवन के जल में दूब का रस डालके पीवे तो अथवा आवले का रस, मिश्री और खील इन को एकत्र करके सेवन करे तो पित्त की छर्दि दूर हो॥

लाजादियूष

लाजामसूरयवमुद्गकृता यवागूश्छर्द्यां हिता मधुयुता बहुपित्तजायाम् । यूषाः सुगंधिमधुतिक्तरसाः प्रयुक्ता मृद्भृष्टलोष्टभवमंबु हितं तृषायाम् ॥

अर्थ–खील, मसूर, जौ और मूंग इन की यवागू बनाय उस में सहत डालके पीवे तो अत्यंत पित्त से जो छर्दि होती है वह दूर होय अथवा सुगंधित पदार्थ, सहत और कडुए रस इन करके युक्त जो मंड वह भी उत्तम है तथा मिट्टी के डेले को अग्नि में डाल करके जल में बुझाय देवे यह जल प्यास में उत्तम है ॥

पर्पटादिकाढा

क्वाथः पर्पटजः पीतः सक्षौद्रः शिशिरीकृतः ।
पित्तच्छर्दिशिरस्तापचक्षुर्दाहानपोहति ॥

अर्थ–पित्तपापडे के काढे को शीतल कर सहत डालके पीवे तो पित्त की छर्दि, मस्तक की गरमी, नेत्रों का दाह इन को दूर करे ॥

मक्षिकाविडवलेह

सिताचंदनमध्वाढ्यं विलिहेन्मक्षिकाशकृत् ।
सोपद्रवा पित्तभवा च्छर्दिरेतेन शाम्यति ॥

अर्थ–मिश्री, चंदन और सहत इन के बराबर मक्खी की वीट लेवे सब को एकत्र करके चाटे तो उपद्रवयुक्त भी पित्त की छर्दि शांत होवे ॥

गुडूच्यादिकाढा

गुडूचीत्रिफलारिष्टपटोलैः क्वथितं जलम् ।
क्षौद्रयुक्तं निहंत्याशु च्छर्दिं पित्तसमुद्भवाम् ॥

अर्थ–गिलोय, त्रिफला, नीम की छाल और पटोलपत्र इन के काढे में सहत डालके पीवे तो पित्त की छर्दि का नाश होवे ॥

लाजसक्तुपान

सर्पिःक्षौद्रसितोपेतान् लाजसक्तून् लिहेत्ततः ।
पित्तच्छर्दिश्च तेनाशु प्रशाम्यति सुदुस्तरा ॥

अर्थ-खीलों का चूर्ण, घी, मिश्री और सहत इन सब को एकत्र करके चाटे तो घोर दुस्तर पित्त की छर्दि शांत होवे ॥

कफछर्दिलक्षण

तंद्रास्यमाधुर्यकफप्रसेकं संतोषनिद्राऽरुचिगौरवार्त्तः ।
स्निग्धं घनं स्वादु कफाद्विशुद्धं सरोमहर्षोऽल्परुजं वमेत्तु ॥

अर्थ-तन्द्रा, मुख में मिठास, कफ का पडना, संतोष, अन्न में अरुचि, निद्रा, अरुचि, भारीपना इन से पीडित हो. चिकना, गाढा, मीठा, सफेद ऐसे कफ को वमन करे. जब रद्द करे तब पीडा थोडी होय, रोमांच होय ये कफ की छर्दि के लक्षण हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

छर्द्यां कफोद्भवायां तु वमनं कारयेद्भिषक् । तोयैः सर्षपसिंधूत्थराठनिंबकणायुतैः ॥ शस्यंते शालिगोधूमयवमुद्गमकुष्ठकाः ।
षष्टिकास्तत्र यूषश्च पटोल्याद्याश्च भोजनम् ॥

अर्थ-कफ से उत्पन्न हुई छर्दिरोगपर सरसों, सैंधानिमक, मैनफल, नीम की छाल और पीपल इन के काढे से वमन करावे और शालिचावल, गेहूं, जौ, मूंग, मोठ और साठी चावल इन के बने पदार्थ और मंड, परवल इत्यादिक भोजन में देवे ॥

शालिभक्त

आरक्तशालिभक्तं गोदधिशर्करावमिश्रं च ।
कुर्याद्भोजनमेतत्कफच्छर्दिच्छिदं जंतोः ॥

अर्थ-लाल चावलों का भात, गौ का दही और मिश्री इन का भोजन करे तो उपद्रवयुक्त कफ की छर्दि शांत होवे ॥

विडंगादिचूर्ण

विडंगत्रिफलाव्योषचूर्णं मधुयुतं लिहेत् ।
शाम्यत्यनेन कफजा छर्दिः सोपद्रवा नृणाम् ॥

अर्थ-वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो उपद्रवयुक्त भी कफ की छर्दि शांत होवे ॥

जांबवादियोग

सजांबवं बादरचूर्णमम्लं मुस्तायुतं कर्कटकं सशृंगि ।
दुरालभा वा मधुना च युक्ता लिह्यात्कफच्छर्दिविनिग्रहार्थम् ॥

अर्थ-जामुन, बेर, बिजौरा और नागरमोथा इन का चूर्ण ईख के रस में मिलायके देवे अथवा काकडासिंगी और धमासा इन का चूर्ण सहत में मिलायके चाटे तो कफ की छर्दि को बंद करे ॥

सन्निपातच्छर्दिलक्षण

शूलाविपाकारुचिदाहतृष्णाश्वासप्रमोहप्रबलाप्रसक्तम् ।
छर्दिस्त्रिदोषाल्लवणाम्लनीलं सांद्रोष्णरक्तं वमतां नृणां स्यात् ॥

अर्थ-शूल, अजीर्ण, अरुचि, दाह, प्यास, श्वास, मोह इन लक्षणों से प्रबल हुई जो वमन सो सन्निपात से होय है. रद्द करनेवाले की वमन खारी, खट्टी, नीली, संघट्ट (जिस को देशवारी मनुष्य जाडी कहे हैं), गरम, लाल ऐसी होय है ॥

बिल्वादिकाढा

बिल्वत्वचो गुडूच्या वा क्काथः क्षौद्रेण संयुतः ।
जयेत्रिदोषजां छर्दिं पर्पटः पित्तजां तथा ॥

अर्थ-बेल की छाल का अथवा गिलोय का काढा सहत डालके पीवे तो त्रिदोष की छर्दि को नाश करे अथवा पित्तपापडे के काढे को पीवे तो पित्त की छर्दि दूर हो ॥

कोलाद्यवलेह

कोलामलकमज्जानौ मक्षिकाविट् सिता मधु ।
सकृष्णातंदुलो लेहश्छर्दिमाशु व्यपोहति ॥

अर्थ-बेर और आंवला इन की मज्जा (गुठली), मक्खी की विष्ठा, मिश्री, सहत, पीपल, चांवलों का धोवन इन की बनी हुई अवलेह छर्दि को तत्काल दूर करे॥

सुरसापान

सुरसास्वरसैर्युक्तं त्रुटिका मर्दिता भृशम् ।
वांतिं शमयति क्षिप्रं वातपित्तकफोद्भवाम् ॥

अर्थ-तुलसी के स्वरस में छोटी इलायची का चूर्ण डालके पीवे तो इस प्राणी की वातपित्तकफ की वांति शमन होवे ॥

मनःशिलादियोग

मनःशिलामागधिकोषणानां चूर्णं कपित्थाम्लरसेन युक्तम् ।
लाजैः समांशैर्मधुनावलीढं छर्दिं प्रसक्तामसकृन्निहंति ॥

अर्थ–मनसील, पीपल और काली मिरच ये समान भाग ले और इन को बराबर ३ भाग खीलों का चूर्ण ले सब को एकत्र कर कैथ के और बिजौरे के रस में सहत मिलायके चाटे तो तत्काल छर्दि को बंद कर देवे ॥

अश्वत्थवल्कलादियोग

अश्वत्थवल्कलं शुष्कं दग्धं निर्वापितं जले ।
तज्जलं पानमात्रेण छर्दिं जयति दुर्जयाम् ॥

अर्थ–पीपल की छाल को जलाय के भस्म कर लेवे. फिर इस राख को जल में गेर नितारके छान लेवे. इस जल के पीते ही दुर्जय छर्दि भी नष्ट होय ॥

लाजादियोगत्रय

लाजाकपित्थमधुमागधिकोषणानां क्षौद्राभयात्रिकटुधान्यकजीरकाणाम् । पथ्यामृतामरिचमाक्षिकपिप्पलीनां लेहास्त्रयः सकलवम्यरुचिप्रशांत्यै ॥

अर्थ–खील, कैथ, सहत, पीपल और काली मिरच इन का अवलेह उसी प्रकार सहत, हरड, त्रिकुटा, धनिया और जीरा इन का अवलेह तथा हरड, गिलोय, काली मिरच, सहत और पीपल इन का अवलेह ये तीन योग सर्व प्रकार की वमन और अरुचि इन को शांत करनेवाले हैं ॥

धात्रीफलपान

पिष्ट्वा धात्रीफलं द्राक्षां शर्करां च पलोन्मिताम् । दत्त्वा मधुपलं चैव कुडवं सलिलस्य च ॥ वाससा गालितं पीतं हंति छर्दिं त्रिदोषजाम् ॥

अर्थ–आंवले, दाख, मिश्री और सहत ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन को ६४ तोले जल में डालके खूब मसलके कपडे में छान ले फिर इस को पीवे तो त्रिदोष की छर्दि दूर होवे ॥

मसूरसक्तु

मसूरसक्तवः क्षौद्रमर्दिता दाडिमांभसा ।
पीता निवारयंत्याशु छर्दिं दोषत्रयोद्भवाम् ॥

अर्थ–मसूर और सत्तु तथा सहत इन को अनार के रस में मिलायके देवे तो त्रिदोष की छर्दि को निवारण करे ॥

एलाद्यचूर्ण

एलालवंगगजकेसरकोलमज्जालाजाप्रियंगुघनचंदनपिप्पलीनाम्।
चूर्णं सितामधुयुतं मनुजो विलिह्य छर्दिं निहंति कफमारुत-
पित्तजाताम् ॥

अर्थ-इलायची, लौंग, नागकेशर, बेर की गुठली, खील, फूलप्रियंगु, नागरमोथा, चंदन और पीपल इन के चूर्ण में मिश्री और सहत मिलायके चाटे तो कफ, वादी और पित्तकी छर्दि को दूर करे ॥

पद्मकादिघृत

पद्मकामृतनिंबानां धान्यचंदनयोः पचेत् ।
कल्के क्वाथे च हविषः प्रस्थं छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ-पद्माख, गिलोय, नीम की छाल, धनिया और चंदन इन के काढे में अथवा कल्क में ६४ तोले घी मिलायके सिद्ध करे तो यह घी छर्दि को दूर करे ॥

चंदनादिपान

चंदनं च मृणालं च वालकं नागरं वृषम् ।
सतंदुलोदकक्षौद्रैः पीतः कल्को वमिं जयेत् ॥

अर्थ-चंदन, कमलकंद, नेत्रवाला, नागरमोथा और अडूसा इन को चावलों के जल में पीसके और उस में सहत डालके पीवे तो छर्दि (उलटी) का होना दूर होवे ॥

उदीच्यजल

सोदीच्यगैरिकं देयं सेव्यं वा तंदुलांबुना । जातीपत्र-
रसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम् ॥ एतानि मधुयुक्तानि
घ्नंति छर्दिं चिरोद्भवाम् ॥

अर्थ-नेत्रवाला और गेरू इन को चावल के धोअन में पीस सहत डालके पीवे अथवा चमेली के पत्तों के रस में पीपल, मिरच इन का चूर्ण, सहत और मिश्री डालके पीवे तो बहुत दिन की छर्दि दूर होवे ॥

चंदनपान

चंदने ह्यक्षमात्रे च संयोज्यामलकीरसम् ।
पिबेन्माक्षिकसंयुक्तं छर्दिस्तेन निवार्यते ॥

अर्थ-१ तोले चंदन का चूर्ण कर उस में आवले का रस और सहत डालके पीवे तो यह होती हुई वमन को बंद कर देवे ॥

मुद्गकाढा

कषायो भृष्टमुद्गानां सलाजमधुशर्करः।
छर्द्यतीसारदाहघ्नो ज्वरघ्नः संप्रकाशितः ॥

अर्थ-भूने हुए मूंगों का काढा, खील और सहत तथा मिश्री मिलायके पीवे तो वमन, अतिसार, दाह और ज्वर इन को दूर करे ॥

कोलमज्जा

कोलमज्जाकणाबर्हिपक्षभस्म सशर्करम्।
मधुना लेहयेच्छर्दिंहिक्काकोपस्य शांतये ॥

अर्थ-बेर की गुठली की मिंगी, पीपल, मोर के पंख की राख, मिश्री, सहत इन सब को एकत्र करके चाटे तो वमन का होना और हिचकी इन के कोप को शांत करे ॥

बीजपूरादिपुटपाक

बीजपूराम्रजंबूनां पल्लवानि जटाः पृथक्। विपचेत्पुट-
पाकेन क्षौद्रयुक्तश्च तद्रसः ॥ छर्दिं निवारयेत्सद्यः सर्व-
दोषसमुद्भवाम् ॥

अर्थ-बिजौरा, आम, जामुन इन के पत्ते अथवा इन की जड को पुटपाक विधि से पक करके इन का रस सहतयुक्त सन्निपात की छर्दि को शीघ्र निवारण करे ॥

हरीतकीचूर्ण

हरीतकीनां चूर्णं तु लिह्यान्माक्षिकसंयुतम्।
अधोभागीकृते दोषे छर्दिस्तेन निवार्यते ॥

अर्थ-हरड के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो दोष (वात कफ) के अधोभाग जाने से वमन का होना बंद होय ॥

मृद्भृष्टलोष्टप्रभवं सुशीतं सलिलं पिबेत् ॥

अर्थ-मिट्टी के डेले को आग में तपायके जल में बुझावे जब वह जल शीतल हो जावे तब पीवे तो छर्दि बंद होय ॥

जंब्वाम्रपल्लवरस

जंब्वाम्रपल्लवोशीरवटशृंगावरोहजः। क्वाथः क्षौद्रयुतः शीतः पीतो वा विनियच्छति ॥ छर्दिं ज्वरमतीसारं मूर्च्छां तृष्णां च दुर्जयाम् ॥

अर्थ-जामुन, आम इन के नवीन पल्लव (पत्ते), खस, वड की कली, अथवा पल्लव इन का काढा करे जब शीतल हो जावे तब शीतल करके सहत मिलायके पीवे तो वमन, ज्वर, अतिसार, मूर्च्छा और तृषा ये दुर्जय होय तो भी इन का नाश होय ॥

हिंग्वादिपान

हिंगुना सारिवामूलं सर्ववांतिहरं परम्।
जातीफलं वमौ शोषे जागरे विप्रयोजयेत् ॥

अर्थ-सारिवा की जड को हींग में मिलायके पीसे इस के सेवन से सर्व प्रकार की वमन नाश करे अथवा जायफल वमन, शोष और जागरण इन पर उत्तम है ॥

उग्रगंधादियोग

उग्रगंधारनालेन पीता छर्दिं निवारयेत् ॥

अर्थ-वच को पीसके कांजी में मिलायके पीवे तो छर्दि को बंद करे ॥

सामान्यचिकित्सा

आमाशयोत्क्लेशभवा हि सर्वाः स्युश्छर्दयो लंघनमेव तस्मात्।
प्रकारयेन्मारुतजां विना तु संशोधनं वा कफपित्तहारि ॥

अर्थ-आमाशय के उत्क्लेशित होने से संपूर्ण वांति उत्पन्न होती है; इस वास्ते लंघन करे. परंतु वातजन्य वांती के विना लंघन करे अथवा वमन विरेचन द्वारा देह को शुद्ध करे तो यह कफ और पित्त का नाश करे ॥

हितं न लंघनं पुरा वमीषु मारुताभिधे।
अथापि वामयेदमुं विरेचयेद्यथार्हतः ॥

अर्थ-वादी की वमन पर प्रथम लंघन नहीं करने. किंतु उस रोगी को उलटी करानेवाली और दस्त लानेवाली औषध देवे ॥

जातीपत्रचूर्ण

जातीपत्ररसं कृष्णा मरिचं शर्करान्वितम्।
एतानि मधुयुक्तानि घ्नंति छर्दिं चिरोद्भवाम् ॥

अर्थ-चमेली के पत्तों का रस, पीपल, काली मिरच, मिश्री और सहत इन को एकत्र करके देवे तो बहुत दिन की भी वांति का नाश होय ॥

असाध्यच्छर्दिलक्षण

विट्स्वेदमूत्रांबुवहानि वायुः स्रोतांसि संरुद्धच यदोर्ध्वमेति । उत्पन्नदोषस्य समाचितं तं दोषं समुद्धूय नरस्य कोष्ठात् ॥ विण्मूत्रयोस्तत्समगन्धवर्णं तृट्श्वासकासार्तियुतं प्रसक्तम् । प्रच्छर्दयेद्दुष्टमिहातिवेगात्तयार्दितश्चाशु विनाशमेति ॥

अर्थ-जिस समय यह वायु पुरीष, पसीना, मूत्र और जल इन के वहनेवाली नाडी के मार्ग को रोककर ऊपर आवे तब ऊपर आनेवाला दोष (मलमूत्रादि) को कोठे से बाहर निकाल वमन करावे, उस वमन में मलमूत्र की सी दुर्गंध आवे तथा वर्ण भी मलमूत्र के सदृश होय, प्यास, श्वास, खांसी और शूल ये होय और यह वमन वारंवार बडे वेग से होय हैं इस वमन से पीडित मनुष्य थोडे काल में नाश को प्राप्त हो, यह भी सन्निपात की है ऐसे कोई आचार्य कहते हैं और अन्य आचार्य कहते हैं कि सब छर्दि प्रबल हैं परंतु ऐसी छर्दि असाध्य है ॥

आगंतुकच्छर्दिलक्षण

बीभत्सजा दौर्हृदजाऽमजा च याऽसात्म्यजा वा कृमिजा च या हि । सा पंचमी ताश्च विभावयेत्तु दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥ शूलहृल्लासबहुला कृमिजा च विशेषतः । कृमिहृद्रोगतुल्येन लक्षणेन च लक्षिता ॥

अर्थ-बीभत्स पदार्थ कहिये मल, राध, रुधिर आदि अपवित्र वस्तु के देखने से, गंध से, स्वाद से, स्त्री के गर्भ रहने से, आम से, असमान भोजन से अथवा कृमिरोग से इन कारणों से प्रगट भई, आगंतुज पांचवीं छर्दि होय है. उस में पूर्वोक्त लक्षणों में से जिस दोष के अधिक लक्षण मिलें उसी दोष को प्रबल जाने. कृमि की छर्दि में शूल, खाली रद्द ये विशेष होते हैं और बहुधा कृमि और हृदयरोग इन के लक्षण सदृश लक्षण जानने. जैसे पिछाडी कह आये हैं. " उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृल्लासकस्तमः । अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोषश्च कृमिजे भवेत् ॥ "

असाध्यलक्षण

क्षीणस्य या च्छर्दिरतिप्रसक्ता सोपद्रवा शोणितपूययुक्ता । सचंद्रिकां तां प्रवदेदसाध्यां साध्यां चिकित्सेन्निरुपद्रवां च ॥

अर्थ–क्षीण पुरुष की अथवा वारंवार एकसी होनेवाली और कासादि उपद्रवयुक्त और रुधिर राध मिली मोरचंद्रिका के समान ऐसी छर्दि असाध्य है और जो उपद्रवरहित हो उस को साध्य समझकर उपाय करे ॥

उपद्रव

कासश्वासौ ज्वरो हिक्का तृष्णा वैचित्यमेव च ।
हृद्रोगस्तमकश्चैव ज्ञेयाश्छर्देरुपद्रवाः ॥

अर्थ–खांसी, श्वास, ज्वर, हिचकी, प्यास, बेचेत, हृदयरोग, अंधेरा आना ये छर्दिरोग के उपद्रव हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

बीभत्सजामबीभत्सैर्हेतुभिः संहरेद्वमिम् ।
दौर्हृदोत्थां वमिं हृद्यैः कांक्षितैर्वस्तुभिर्जयेत् ॥

अर्थ–प्राणियों को घिनाने से अथवा दुष्ट पदार्थ के देखने से अथवा दुर्गंध के सूंघने से जो वमन होती होय उस को उत्तम स्वच्छता और पवित्रता आदि कारणों से दूर करनी चाहिये और स्त्रियों के जो दौर्हृद के कारण होती है उस को उत्तम हृदय को प्रिय सुंदर ऐसे पदार्थों के देने करके जीते ॥

लंघनैर्वमनैर्वापि सात्म्यैर्वासात्म्यसंभवाम् ।
कृमिहृद्रोगवच्चापि साधयेत्कृमिजां वमिम् ॥

अर्थ–जो वस्तु अप्रिय अर्थात् न रुचे उस से हुए छर्दिरोगको लंघन, वमन और अपनी प्रकृति को रुचे ऐसे पदार्थों करके जीते तथा कृमिरोग होने से जो छर्दि होवे वह कृमि और हृदयरोग इन के ऊपर जो उपचार कहे हैं उन उपचारों से बंद करे ॥

यथादोषं च विचरेच्छस्तं विधिमनंतरम् ।
पवनघ्नी चिरोत्थासु प्रयोज्या छर्दिषु क्रिया ॥

अर्थ–कहे हुए उपचार जैसे २ दोष होवे उसी २ के अनुसार विचारपूर्वक यत्न करे और जो बहुत दिनों का छर्दिरोग है उसपर वातनाशक उपचार करने चाहिये ॥

आम्रास्थिकाढा

आम्रास्थिबिल्वनिर्व्यूहः पीतः समधुशर्करः ।
निहंति च्छर्द्यतीसारं वैश्वानर इवाहुतिम् ॥

अर्थ–आम की गुठली और बेलगिरी इन के काढे में सहत और मिश्री डालके देवे तो छर्दि, अतिसार इन को नष्ट करे जैसे अग्नि होमी हुई आहुति को नष्ट करे ॥

जंबूपल्लवादिकाढा

जंब्वाम्रपल्लवशतं क्षौद्रं दत्त्वा सुशीतलं तोयम् ।
लाजैरवचूर्ण्यं पिबेच्छर्द्यतिसारे परं सिद्धम् ॥

अर्थ–जामुन और आम इन दोनों के सौ कोमल २ पत्ते लेवे उन का काढा कर उस में खीलों का चूर्ण और सहत डालके पीवे तो वमन और अतिसार इन पर हितकारी होय ॥

मयूरपक्षभस्मावलेह

मयूरपक्षं निर्दग्ध्वा तद्भस्म मधुमिश्रितम् ।
लीढं निवारयत्याशु च्छर्दिं सोपद्रवामपि ॥

अर्थ–मोर की पांख जलायके भस्म करे इस भस्म को सहत में मिलाय कर चाटे तो उपद्रवयुक्त भी छर्दि नष्ट होवे ॥

गोण्याद्यभस्मयोग

पुराणगोणिभस्मांभो मधुयुक्तं निपीय तु ।
छर्दिं छिनत्ति मनुजस्तृणान्येव हुताशनः ॥

अर्थ–पुरानी टाट की गोन (थैली) को जलाय ले इस भस्म को जल में मिलायके छान ले फिर सहत डालके पीवे तो छर्दि को नाश करे जैसे अग्नि तृणों को नाश करे ॥

पटोलाद्यघृत

पटोलशुंठ्योः कल्काभ्यां केवलं कुलकेन वा ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कफपित्तवमिं हरेत् ॥

अर्थ–परवल और सोंठ इन के कल्क के साथ अथवा केवल परवल के कल्क के साथ ६४ तोले घी को औटावे जब कल्क जलकर केवल घी मात्र शेष रहे तब उतारके पीवे तो कफपित्त से प्रगट हुई वांति बंद होवे ॥

दधित्थरसादिलेह

दधित्थरससंयुक्तं पिप्पलीमाक्षिकं तथा ।
मुहुर्मुहुर्नरो लिह्याच्छर्दिभ्यः प्रतिमुच्यते ॥

अर्थ-कैथ के रस में सहत और पीपल डालके वारंवार चाटे तो छर्दिरोग से छूट जावे॥

रंभाकंदयोग

रंभाकंदरसो वापि मधुना छर्दिनाशकृत् ॥

अर्थ-केले के कंद के रस में सहत डालके पीवे तो यह छर्दिनाशक है ॥

करंजादिलेह

कोमलकरंजपत्रं सलवणमम्लेन संयुक्तम् ।
यः खादति दीनवदनो च्छर्दिकफौ तस्य कुत्रेह ॥

अर्थ-करंज के कोमल २ पत्ते, बिजोरा और सैंधा निमक इन का कल्क करके खाय तो जो उलटी करते २ दीनवदन हो गया हो उस के छर्दि और कफ कदाचित् नहीं रहे ॥

करंजबीजादियोग

ईषत् भृष्टं करंजस्य बीजं खंडीकृतं पुनः ।
मुहुर्मुहुर्नरो भुक्त्वा छर्दिं जयति दुस्तराम् ॥

अर्थ-करंज के बीजों को कुछ भूनके टुकडे २ करके वारंवार खाय तो दुस्तर छर्दि को निवारण करे ॥

शंखपुष्पीरसादिपान

शंखपुष्पीरसं टंकद्वयं समरिचं मुहुः ।
सक्षौद्रं मनुजः पीत्वा छर्दिभ्यः किल मुच्यते ॥

अर्थ-संखाहूली का रस दो तोले सहत और काली मिरच का चूरा डालके पीवे तो छर्दिरोग से निश्चय मुक्त होवे ॥

जीरकादिधूप

जीरान्वितं पट्टवस्त्रं वर्तिं कृत्वाथ धूपयेत् ।
आघ्राणाद्विलयं यांति सर्वाश्छर्द्यश्चिरोद्भवाः ॥

अर्थ-पट्टवस्त्र (पीतांबर) में जीरा बांधके बत्ती बनावे फिर इस की धूनी देवे इस धूनी के सूंघते ही बहुत दिन की भी सर्व प्रकार की छर्दि नष्ट होवे ॥

वांतिहृद्रस

अयः शंखवली सूतः खल्वे तुल्यं विमर्दयेत् । कन्याकनकचांगेरी-

रसैर्गोलं विधाय च ॥ ततमृत्कर्पटैर्लिप्त्वा पुटितो वांतिहृद्रसः । द्विवल्लः कृमिरोगेपि साजमोदः सवेल्लकः ॥ वांतिहारेण मुनिना प्रोक्तोयं मधुना युतः । पिप्पलक्षारपानीयं पाययेद्वांतिहृद्भिषक् ॥

अर्थ–लोहचूर्ण, शंख का चूर्ण, गंधक, पारा ये सब समान भाग लेवे खरल में डाल घीगुवार के रस में धतूरा और चूका इन के रस में पृथक् २ खरल करके गोला बनावे उस गोले के चारों तरफ सात कपडमिट्टी करके गजपुट में रखके फूंक देवे तो यह **वांतिहारस** बने इस में से ४ रत्ती रस अजमोदा और वायविडंग इन के साथ कृमिरोग में और सहत के साथ वांति पर देवे तथा पीपल वृक्ष के खार का पानी ऊपर से पिलावे तो वांति को नष्ट करे यह रस वांतिहार नामक ऋषि ने कहा है ॥

जातीरसपान

जात्या रसः कपित्थस्य पिप्पलीमरिचान्वितः ।
क्षौद्रेण युक्तः शमयेल्लेहोयं छर्दिमुल्बणाम् ॥

अथ–चमेली का रस, कैथ का रस, पीपल और काली मिरच इन का अवलेह भीतर सहत डालके देवे तो घोर उग्रवांति को नाश करे ॥

यष्ट्यादिपान

यष्ट्याह्वा चंदनोपेतं सम्यक् क्षीरेण पेषितम् ।
तेनैवालोड्य पातव्यं रुधिरच्छर्दिनाशनम् ॥

अर्थ–मुलहटी और चंदन इन दोनों को दूध में पीसे और दूध में ही मिलायके पी जावे तो रुधिर की उलटी होना बंद होवे ॥

गुडूच्यादिहिम

गुडूच्यारचितं हंति हिमं मधुसमन्वितम् ।
दुर्निवारामपि च्छर्दिं त्रिदोषजनितां बलात् ॥

अर्थ–गिलोय का हिम करके उस में सहत डालके देवे तो दुर्निवार वांति का नाश होवे ॥

पारदादिचूर्ण

रसबलिघनसारकोलमज्जामरकुसुमांबुधरप्रियंगुलाजाः । मलयजमगधात्वगेलपत्रं दलितमिदं परिभाव्य चंदनाद्भिः ॥ मधुमरिचयुतं रजोस्य माषं जयति वमिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, कपूर, बेर की गुठली, लौंग, नागरमोथा, फूलप्रियंगु, खील, काली अगर, पीपल, दालचीनी, इलायची और तमालपत्र इन के चूर्ण को चंदन के काढे में भावना देकर फिर सहत और काली मिरचों का चूर्ण डालके १ मासा नित्य सेवन करे तो घोर प्रबल वमन का नाश होवे ॥

जीरकादिरस

अजाजीधान्यपथ्याभिः सक्षौद्रैः सकटुत्रिकैः ।
एतैः सार्धं सूतभस्म सद्यो वांतिं विनाशयेत् ॥

अर्थ–जीरा, धनिया, हरड और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) इन का चूर्ण और सहत इन के साथ पारे की भस्म सेवन करे तो तत्काल रद्द होने को बंद कर देवे॥

वमनामृतयोग

गंधकः कमलाक्षश्च यष्टी मधु शिलाजतु । रुद्राक्षो टंकणश्चैव सारंगस्य च शृंगकम् ॥ चंदनं च तवक्षीरी गोरोचनमिदं समम् । बिल्वमूलकषायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ मात्रां चैव प्रकुर्वीत वल्लस्यैव प्रमाणतः । नानाविधानुपानेन च्छर्दिं हंति त्रिदोषजाम् ॥ वमनामृतयोगोयं कमलाकरभाषितः ॥

अर्थ–गंधक, कमलाक्ष, मुलहटी, शिलाजीत, रुद्राक्ष, सुहागा, हिरन का सींग, चंदन, तवाखीर और गोरोचन ये सब समान भाग लेके चूर्ण करे फिर बेल की जड के काढे में एक प्रहर खरल करे पश्चात् २ रत्ती की मात्रा अनेक प्रकार के अनुपानों के साथ देवे तो त्रिदोष की छर्दि नष्ट होय. इस को **वमनामृत योग** कहते हैं. यह योग कमलाकर नामक आचार्य ने कहा है ॥

छर्दिपथ्य

विरेचनं छर्दनलंघनानि स्नानं जपो लाजकृतश्च मंडः । पुरातना शालिकषष्टिमुद्गा कलायगोधूमयवा मधूनि ॥ शशाहिभुक्तित्तिरिलावकाद्या मृगाद्द्विजा जांगलसंज्ञिताश्च । मनोज्ञनानारसगंधरूपा रसाश्च यूषा अपि खांडवाश्च ॥ गवां जलं कांबलिकाः सुरा च वेत्राग्रकुस्तुंबरिनारिकेरम् । जंबीरधात्रीसहकारकोलद्राक्षाकपित्थानि पचेलिमानि॥हरीतकीदाडिमबीजपूरं जा-

तीफलं बालकनिंबवासा । शिताशताह्वाकरिकेशराणि भक्ष्या मनःप्रीतिकरा हिताश्च ॥ भुक्तस्य वक्रे शिशिरांबुसेकः कस्तूरिकाचंदनमिंदुपादाः । मनोज्ञगंधान्यनुलेपनानि पानानि पुष्पाणि फलानि चापि ॥ रूपाणि शब्दाश्च रसाश्च गंधाः स्पर्शाश्च योज्याः स्वमनोनुकूलाः । दाहश्च नाभेस्त्रिकपार्श्वपृष्ठे शस्तं हि पथ्यं वमनातुरस्य ॥

अर्थ–विरेचन (जुल्लाब), वमन, लंघन, स्नान, जप, खीलों का मंड तथा पुराने सांठी चावल और लाल चावल, मूंग, मटर, गेहूँ, जौ ये सब पुराने, सहत, शशा, मोर, तीतर, लवा इत्यादि, जंगली जीवोंमें मृग और पक्षी इन का मांस तथा उत्तम २ अनेक प्रकार के रस तथा सुगंधित रस, यूष, रागखांडव, गोमूत्र और कांबलिक (मूल और फल की पेज बनायके उस में समान भाग तिल के फूलों की खटाई डाले वह), मद्य, वांस की कोपल, धनिया, नारियल, जंभीरी, आमले, आंम, बेर, दाख, पका हुआ कैथ, हरड, अनार, बिजौरा, जायफल, नेत्रवाला, नीम, अडूसा, खांड, सोंफ, नागकेशर और मन को प्रीति करता पदार्थ तथा हितकारी पदार्थ सेवन करे. भोजन करने के उपरांत मुख में शीतल जल का भरना, कस्तूरी, चंदन, चांदनी, उत्तम अतर आदि की सुगंध तथा मन को अनुलोमन करता पान और फल, फूल, मन को प्रिय ऐसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये देवे तथा नाभी, त्रिकस्थान, पसवाडे और पीठ में दाहकर्म करना ये संपूर्ण वस्तु वांतिरोगवाले को पथ्य कही हैं ॥

अपथ्य

नस्यं बस्तिस्वेदनं स्नेहपानं रक्तस्रावं दंतकाष्ठं द्रवान्नम् । बीभत्सेच्छाभीतिमुद्वेगमुष्णं स्निग्धासात्म्यं हृद्यवैरोचकान्नम् ॥ रम्भा [लंबा] बिंबीकोशवत्यौ मधूकं चित्रामलीसर्षपदेवदाली । व्यायामं वा सात्म्यदुष्टान्नपानं छर्द्यां सद्यो वर्जयेदप्रमत्तः ॥

अर्थ–नस्य, बस्तिकर्म, पसीने निकालना, स्नेहपान, रक्तस्राव, दांतन करना, पतला अन्न, बीभत्स पदार्थ को देखना, भय, उद्वेग, गरम, स्निग्ध, असात्म्य, अप्रिय, अरुचिकारी ऐसे अन्न, केला, घीया कंदूरी, तोरई, मुलहटी वा महुआ, मजीठ, इलायची, सरसों, बंदाल, दंड कसरत, अहित तथा दुष्ट अन्न जल का सेवन इन सब को छर्दिरोग में प्रमादरहित होके त्याग कर देवें ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे छर्दिरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

तृष्णाकर्मविपाकः ।

पथि चाध्वपरिश्रांतं ब्राह्मणं गामथापि वा ।
न पाययेज्जलं यस्तु स तृष्णामूर्च्छितो भवेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी ब्राह्मण अथवा गौ को मार्ग (रास्ते) में थककर तृषा से पीडित को जल नहीं पिलावे उसके तृष्णारोग उत्पन्न होता है ॥

शांति

पानीयं पायसं भुक्त्वा शर्करा घृतसंयुता ।
इदमावश्यतो देयं मूर्छांतृष्णोपशांतये ॥

अर्थ–जल, दूध अथवा घी और खांड ये पदार्थ ब्राह्मण को अवश्य देवे और आप भी भक्षण करे तो तृष्णाजनित मूर्च्छा का नाश होय ॥

तृष्णानिदान

भयश्रमाभ्यां बलसंक्षयाद्वाप्यूर्ध्वं चितं पित्तविवर्धनैश्च । पित्तं सवातं कुपितं नराणां तालुप्रपन्नां जनयेत्पिपासाम् ॥

अर्थ–भय से, श्रम से, बल के क्षय से और पित्त के बढानेवाले क्रोध उपवासादिकों से अपने स्थान में संचित हुआ जो पित्त और वात ये कुपित होकर ऊपर तालुए (पिपासास्थान) में जाय तृष्णा (प्यास) को उत्पन्न करे. इस जगह तालुका तो उपलक्षणमात्र है तालु के कहने से क्लोमस्थान (हृदय में जो प्यास का स्थान है उस का भी ग्रहण है क्यों कि वह भी प्यास का स्थान है) सो चरक में लिखा है ॥

तृष्णार्दित का स्वरूप

सततं यः पिबेत्तोयं न तृप्तिमधिगच्छति ।
पुनः कांक्षति तोयं च तं तृष्णार्दितमादिशेत् ॥

अर्थ–जो आदमी वारंवार जल पीने से तृप्त नहीं होता और वारंवार जल पीने की इच्छा करता है उस को तृषारोगी कहते हैं ॥

तृष्णासंप्राप्ति

स्रोतःस्वपांवाहिषु दूषितेषु दोषेश्च तृष्णा भवतीह जंतोः । तिस्रः स्मृतास्ताः क्षतजा चतुर्थी क्षयात्तथा ह्यामसमुद्भवा च ॥
भक्तोद्भवा सप्तमिकेति तासां निबोध लिंगान्यनुपूर्वशश्च ॥

अर्थ—जल के वहनेवाली नस के दूषित होने से दोष (अन्न, कफ और आम) इन से तृष्णा रोग होय है सो तीन है और चौथी क्षतज तृष्णा जो व्रणवाले पुरुष के होती है, पांचवीं क्षय से होती है, छठी आम से होय है, सातवीं अन्न से होय है, उन्हों के लक्षण क्रम से कहता हूं, इन में पहिली चार तृष्णा सुखसाध्य हैं और बाकी की तीन कष्टसाध्य हैं. **शंका**—क्यौंजी इस श्लोक में **स्रोतःसु** यह बहुवचन क्यौं धरा ये विरुद्ध है क्यौंकि **सुश्रुत** में तो जल के वहनेवाली दो ही नाडी मानी हैं. **उत्तर**—अन्न, कफ, आम को दुष्ट करने से तथा दुष्ट रोगों के सम्बन्ध होने से अन्न, आम, कफ को दोषत्व ग्रहण है यह **गयदास** का मत है अथवा दोष के कहने से वात, पित्त, कफ का ही ग्रहण करना चाहिये ॥

वातजतृष्णानिदान

क्षामास्यता मारुतसंभवायां तोदस्तथा शंखशिरःसु चापि ।
स्रोतोनिरोधो विरसं च वक्रं शीताभिरद्भिश्च विवृद्धिमेति ॥
ताल्वोष्ठकंठस्य च तोददाहसंतापमोहभ्रमविप्रलापाः । पूर्वाणि
रूपाणि भवंति तासामुत्पत्तिकालेषु विशेषतो हि ॥

अर्थ—वात की तृषा (प्यास) से मुख उतर जाय अथवा दीन होय, कनपटी और मस्तक इन ठिकाने नोचने के समान पीडा होय, रस और जल वहनेवाली नाडियों का मार्ग रुक जाय, मुख से स्वाद जाता रहे और शीतल जल के पीने से प्यास बढे ये अनुपशय के लक्षण हैं. चकार से निद्रा का नाश होय और तालु, होंठ और कंठ इन में शूल व दाह और संताप, मोह, भ्रम और प्रलाप इत्यादि वाततृष्णा का लक्षण समझना ॥

वाततृष्णाजयप्रकार

वातघ्नमन्नपानमिष्टं लघु शीतं च वाततृष्णायाम् ।
स्याज्जीवनीयसिद्धं क्षीरघृतं वातजे तर्षे ॥

अर्थ—वातनाशक, हलके और शीतल ऐसे अन्न, पान और जीवनीय गण करके सिद्ध करे हुए दूध और घी ये वाततृष्णा पर उत्तम हैं ॥

दूसरा प्रकार

वातोद्भवायां तृष्णायां पानान्नं वातमुद्धतम् ।
स्वर्णरूप्यैरग्नितप्तैर्लोष्टैः सोष्टाजलं तथा ॥

अर्थ—वादी की तृष्णा पर वातनाशक जल, अन्न अथवा सुवर्ण के लोष्ट (मिट्टीका

डेला) अथवा चांदी को अग्निपर गरम करे हुए को जल में बुझायके पिलावे तो वादी की तृषा दूर होवे ॥

तेल

देयं सुगंधि तैलं शिरसि च गात्रेषु सर्वेषु ॥

अर्थ–मस्तक पर और संपूर्ण अंगों में सुगंधित तेल की मालिस करे तो वादी की तृष्णा दूर हो ॥

जल

सुवर्णरौप्यादिभिरग्नितप्तैर्लोष्टैः कृतं वा सिकतोत्करैर्वा ।
जलं सुखोष्णं शमयेत्तु तृष्णां सशर्करं क्षौद्रयुतं जलं वा ॥

अर्थ–सुवर्ण, रूपा, मिट्टी का डेला और वालू (रेत) इन में से किसी एक को आग में तपायके जल में बुझाय देवे. इस जल को कुछ गरम २ पीवे अथवा जल में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा शांत होय ॥

पित्ततृष्णानिदान

मूर्छान्नविद्वेषविलापदाहरक्तेक्षणत्वं प्रततश्च शोषः ।
शीताभिनंदा मुखतिक्तता च पित्तात्मिकायां परिदूयनं च॥

अर्थ–पित्त की तृषा में मूर्च्छा, अन्न में अरुचि, बडबड, दाह, नेत्रों में लाली, अत्यंत शोष, शीत पदार्थ की इच्छा, मुख में कडुवाट और सन्ताप यह लक्षण होते हैं॥

पित्ततृष्णाचिकित्सा

पित्तजायां सितायुक्तः पक्वोदुंबरजो रसः ॥

अर्थ–यदि पित्तजन्य तृषा होवे तो पके हुए गूलर का रस मिश्री मिलायके पीवे तो शांति हो ॥

स्वादु तिक्तं द्रवं शीतं पित्ततृष्णापहं परम् ।
आतपात्संश्रृतं पथ्यमुदकं लाजसक्तुभिः ॥

अर्थ–मिष्ट, कडुए, पतले और शीतल ऐसी जो वस्तु हैं वो सब तृष्णानाशक हैं तथा धूप में तपे हुए जल में खीलों का चूरा मिलायके पीवे तो हितकारी होय ॥

तंदुलोदकपान

जीर्णे भुक्ते पिबेद्वापि सक्षौद्रं तंदुलोदकम् ॥

अर्थ–भोजन पचने के पश्चात् तृषा लगे तो चावलों के धोवन में सहत डालके पीवे ॥

मधुकादिफांट

मधूकपुष्पं गंभारी चंदनोशीरधान्यकैः । द्राक्षया च कृतः फांटः शीतः शर्करया पुनः ॥ तृष्णापित्तहरः प्रोक्तो दाहमूर्छा-भ्रमान् जयेत् ॥

अर्थ–महुआ के फूल, कंभारी, चंदन, खस, धनिया और दाख इन के फांट को शीतल करके उस में मिश्री मिलायके पीवे तो तृषा, पित्त, दाह, मूर्च्छा, भ्रम इन को नष्ट करे ॥

कफतृष्णानिदान

वाष्पावरोधात्कफसंवृतेग्नौ तृष्णाबलांशेन भवेत्तथानु ।
निद्रा गुरुत्वं मधुरास्यता च तृष्णार्दितः शुष्यति चातिमात्रम् ॥

अर्थ–अपने कारण से कुपित कफ करके जठराग्नि आच्छादित होय, तब अग्नि की गरमी अधोगत जल के वहनेवाली नाडियों को सुखाय कफ की तृषा को प्रगट करे केवल कफ से तृष्णा को प्रगट होना असंभव है केवल कफ बडे भय का द्रवीभूत धर्म पतला होने से प्यासकर्तृत्व असंभव है और वात पित्त को तृषा करनेवाले होने से होय है सो ग्रंथांतर में लिखा भी है. इसी से चरकाचार्य ने कफ की तृष्णा नहीं कही, सुश्रुत ने चिकित्सा में भेद होने से कही है और हारीत ने भी सपित्त कफ की तृषा मानी है, केवल कफ की नहीं मानी, इस तृषा में निद्रा, भारीपना, मुख में मिठास यह लक्षण होते हैं इस तृषा से पीडित पुरुष अत्यन्त सूख जाय है ॥

कफतृष्णासामान्यचिकित्सा

तिक्तं द्रवं कदुष्णं च कफतृष्णानिवारणम् ।
अन्नपानौषधं सर्वं प्रदद्यात्कफतृड्युते ॥

अर्थ–कडुए, पतले किंचित् उष्ण, कफ और तृषानिवारक ऐसे अन्नपान और औषध कफ की तृष्णापर देवे ॥

बिल्वादिकाढा

बिल्वाढकीधातकिपंचकोलदर्भेषु सिद्धं कफजां निहंति ।
हितं भवेच्छर्दनमेव चात्र तप्तेन निंबप्रसवोदकेन ॥

अर्थ–बेलगिरी, अरहर, धाय के फूल, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, डाभ की जड इस का काढा करके देवे और नीम के काढे का वमन देवे तो कफ की वमन नष्ट होय ॥

कफतृष्णाप्रयोग

यथोक्तं कफतृष्णायां छर्द्यां तथैव कार्यं स्यात् । स्तंभारुच्य-
विपाकालस्यच्छर्दिषु कफानुगां तृष्णाम् ॥ ज्ञात्वा मधुदधित-
र्पणलवणेन जलैर्वमनमइलक्ष्णम् । दाडिममम्लफलं वा न्यास-
कषायमवलेह्म् ॥ पयोथ वा प्रदद्याद्रजनीमधुशर्करायुक्तम् ॥

अर्थ–जैसी कफ की छर्दि में औषधि कही है वही कफ तृष्णा पर देवे तथा स्तंभ, अरुचि, अजीर्ण, आलस्य और छर्दि इन में जो तृषा होती है वह कफसंबंधी होती है इस वास्ते सहत और दही ऐसे तृप्ति करती वस्तु देवे तथा निमक और जल इन से वमन करावे और अनार, कोकम अथवा और जो कषेले पदार्थ हैं उन को चटावे अथवा हलदी और मिश्री डालके दूध पिलावे ॥

क्षतजन्यतृषानिदान

क्षतस्य रुक् शोणितनिर्गमाभ्यां तृष्णा चतुर्थी क्षतजा मता तु ॥

अर्थ–शस्त्रादिक के लगने से घाव होय तब उस पुरुष के पीडा और रुधिर का स्राव होने से जो तृष्णा होय यह चौथी क्षतज तृष्णा जाननी ॥

क्षतजतृष्णाचिकित्सा

क्षतोद्भवां रुग्विनिवारणेन जयेद्रसानामसृजश्च पानैः ॥

अर्थ–घाव के कारण जो प्यास लगती है उस को घाव दूर करने से दूर करे तथा औषधीय रसों के पत्रों करके खून को रोके ॥

क्षयजतृष्णानिदान

रसक्षयाद्या क्षयसंभवा सा तथाभिभूतस्तु निशादिनेषु । पेपी-
यतेंभः ससुखं न याति तां सन्निपातादिति केचिदाहुः ॥ रस-
क्षयोक्तानि च लक्षणानि तस्यामशेषेण भिषग्व्यवस्येत् ॥

अर्थ–रसक्षय से जो तृष्णा होय उस में जो लक्षण होय हैं सो सब क्षयजतृष्णा में होते हैं, तिस से पीडित पुरुष रात्रि दिन वारंवार पानी पीवे, परंतु संतोष नहीं होय. कोई आचारी इस को सन्निपात से प्रगट कहते हैं. रसक्षय के जो लक्षण कहे वे सब होते हैं सो वैद्यों को जानने चाहिये (रसक्षयलक्षण सुश्रुत में कहे हैं) सो इस प्रकार रसक्षय होने से हृदय में पीडा, कंप, शोष, बधिरता (बहरापना) और प्यास होय है ॥

क्षयजतृष्णा

क्षयोत्थितां क्षीरजलं निहन्यान्मांसोदकं वा मधुकोदकं वा ॥

अर्थ–क्षयजन्य तृषा को उस को दूध और जल के काढे से अथवा मांसरसों क-रके अथवा मुलहटी के काढे से शांत करे ॥

आमजतृष्णानिदान

त्रिदोषलिंगाऽमसमुद्भवा तु हृच्छूलनिष्ठीवनसादकर्त्री ॥

अर्थ–आमज कहिये अजीर्ण से जो तृष्णा होय उस में तीनों दोषों के लक्षण होते हैं सो **सुश्रुत** में लिखा भी है और हृदय में शूल, लार का गिरना, ग्लानि ये सब होय हैं ॥

आमजतृष्णा

आमोद्भवां बिल्ववचायुतानां जयेत्कषायैरपि दीपनानाम् ।
उल्लेखनैर्गुर्वशनप्रजातां जयेत्क्षतोत्थां तु विना पिपासाम् ॥

अर्थ–आमांश से जो तृषा होती है वह बेलगिरी और वच इन करके युक्त जो दीपन काढे उन से जीते तथा भारी पदार्थों के खाने से जो तृषा होवे उस को लेखन पदार्थ देकर जीते परंतु वह क्षतजन्य न होवे ॥

अन्नजातृष्णानिदान

स्निग्धं तथाम्लं लवणं च भुक्तं गुर्वन्नमेवाशु तृषां करोति ॥

अर्थ–चिकना, खट्टा, खारा, (चकार से कडुआ, कषेला आदि जानना) ऐसे भोजन से तथा मात्राधिक और भारी ऐसा अन्न खाने से अवश्य ही शीघ्र प्यास को प्रगट करे. दृढबल आचारी ने पांच ही प्रकार की तृष्णा कही हैं. वात की, पित्त की, क्षय की, आम की, उपसर्ग की. तहां कफ की आम की तृषा के अंतर्गत कही है और क्षतजा वात की तृषा के अंतर्गत जाननी और अन्नजा भी वात की तृषा के अंतर्गत कही है क्योंकि भोजन से वात का कोप होय है * शंका–क्योंजी सुश्रुत ने मद्य के प्रकरण में मद्य की तृष्णा कही है फिर माधवाचार्य ने सात ही तृष्णा कैसे कही हैं * उत्तर–दृढबलाचारी के मत से मद्य की तृषा को वात की तृषा के अन्त-र्गत होने से माधवाचार्य ने सात ही कही हैं ॥

अन्नजाचिकित्सा

स्निग्धान्ने भुक्ते या तृष्णा स्यात्तां गुडांबुना शमयेत् ।
अतिरूक्षकदुर्बलानां तृषां शमयेन्नृणामिहांबुपयः ॥

अर्थ–स्निग्ध (चिकने) अन्न के सेवन से जो तृषा होय उस को गुड के पानी से शांत करे और अतिरूक्ष तथा दुर्बल मनुष्य की तृषा नेत्रवाले के काढे से दूर करे ॥

उपद्रव व असाध्यलक्षण तृष्णा

दीनस्वरः प्रताम्यन्दीनाननशुष्कहृदयगलतालुः । भवति खलु सोपसर्गा तृष्णा सा शोषिणी कष्टा ॥ ज्वरमोहक्षयकासश्वासाद्युपसृष्टदेहानाम् । सर्वास्त्वतिप्रसक्ता रोगकृशानां वमिप्रसक्तानाम् ॥ घोरोपद्रवयुक्तास्तृष्णा मरणाय विज्ञेयाः ॥

अर्थ–हीनस्वर, मोह, मन में ग्लान होय, मुख दीन हो जाय, हृदय, गला और तालु सूख जाय यह तृष्णा के उपद्रव से होय है. यह मनुष्य को सुखाय डाले और व्याधि से शरीर कृश होने से यह कष्टसाध्य हो जाय है. वे उपद्रव यह हैं ज्वर, मोह, क्षय, खांसी, श्वास, आदिशब्द से अतिसारादिकोंका ग्रहण है. ये रोग जिस के होय उस के तृष्णा कष्टसाध्य जाननी. वातजादि सब प्रकार की तृष्णा अत्यन्त बढी हुई अथवा रोग से कृश भया ऐसे पुरुष के जो तृष्णा है सो अथवा छार्दि से प्रगट भई जो तृषा और जो भयंकर उपद्रव करके युक्त ऐसी तृष्णा मारने का कारण होय है ॥

जलपाननियम

सात्म्यान्नपानभैषज्यैस्तृष्णार्तस्य जयेत्तृषाम् । तस्यां जितायामन्योपि व्याधिः शक्यश्चिकित्सितुम् ॥ तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान्विमुंचति । तस्मात्सर्वास्ववस्थासु न क्वचिद्वारि वार्यते ॥ अन्नेनापि विना जंतुः प्राणान्संधारयेत्क्वचित् । तोयाभावे पिपासार्तः क्षणात्प्राणैर्विमुच्यते ॥

अर्थ–अपनी प्रकृति को जो रुचे ऐसे अन्न, पान और औषध इन से तृषार्त्त रोगी की तृषा जीते. यह तृषा के जीतने से और दूसरी व्याधि सहज में जीती जाती है. अन्यथा तृषावाला मनुष्य मोह को प्राप्त होता है और मोह से प्राणों को छोड देता है इसी वास्ते किसी अवस्था में जल का देना बंद न करे. विना अन्न के एक घडी जी सक्ता है परंतु जल के विना यह प्राणी एक क्षणमात्र भी नहीं जीवे इस वास्ते प्यासे को जल पिलाना ही चाहिये ॥

गंडूष

पटोली मूलिका साद्रा तुवरी मधुयष्टिका । क्रमुकं चिक्कणं

कंदश्छल्ली च खदिरान्विता ॥ कटुकीरवराजोत्थक्काथोमी-
षां सुशीतलः । गंडूषधारणाद्धंति गलशोषं सुदारुणम् ॥

अर्थ–परवल, हरें की जड, अरहर, मुलहटी, चिकनी सुपारी, तृषा बंद करने-वाला कंद, खैर तथा कुटकी, गठोना इन का काढा करके शीतल करे इस को मुख में रखे तो दारुण गलशोष (गले का सूखना) इन को नष्ट करे ॥

गंडूष

श्रीखंडं पद्मकं मुस्तधान्यकं निंबवल्कलम् । कूष्मांडं खदिरो
दूर्वामूलं कितवराजकम् ॥ अष्टावशेषितोमीषां क्काथः शीतल-
तां गतः । गंडूषकरणाद्धंति रोगिणः शोकमुल्बणम् ॥

अर्थ–चंदन, पद्माख, नागरमोथा, धनिया, नीम की छाल, पेठा, खैर, दूब की जड, गठोना इन का अष्टावशेष काढा करके शीतल कर लेवे. फिर इस काढे के कुल्ले करे तो रोगी के बढे हुए शोष का नाश करे ॥

लेप

जलं मलयजं रक्तचंदनं पद्मकेसरम् ।
उशीरेणांचितैर्लेपो मस्तके तृड्निवारणः ॥

अर्थ–नेत्रवाला, चंदन, लाल चंदन, कमल की केशर और खस इन को जल में पीस मस्तक पर लेप करे तो तृषा को दूर करे ॥

चूर्ण

कणा जीरं सिता नागकेसरं दाडिमीफलम् ।
मधुना भक्षणादेषां रोगो गच्छति रोगिणः ॥

अर्थ–पीपल, जीरा, मिश्री, नागकेशर और अनारदाना इन का चूर्ण करके सहत में मिलायके चाटे तो तृषा जाती रहे ॥

कुष्ठादिचूर्ण

कुष्ठं कासोद्भवं मूलं मधुकं पिष्टमंजसा ।
भक्षितं तं द्रुतं हंति पिपासां चिरकालजाम् ॥

अर्थ–कूठ, कसोंदी की जड और मुलहटी इन को जल में पीसके देय तो बहुत दिनों की भी तृषा शीघ्र शांत होय ॥

चूर्ण

कुशः कुष्ठजतुर्यष्टी लाजातप्तेन वारिणा ।
पीतश्चूर्णस्तृषां हंति शोकसंतापसंभवाम् ॥

अर्थ-कुसा, कूठ, लाख, मुलहटी और खील इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो शोक और संताप के कारण से प्रगट तृषा को शांत करे ॥

वटाद्यवलेह

वटबाला शिवा कृष्णा मधुकं मधुना सह ।
अवलेहः कृतोमीषां तृषारोगो विनश्यति ॥

अर्थ-वड की कोपल, नेत्रवाला, हरड, पीपल और मुलहटी इन का अवलेह बनाय उस में सहत मिलायके सेवन करे तो तृषारोग नष्ट होय ॥

दूसरा प्रकार

वटशृंगा सिता लोध्रं दाडिमं मधुकं मधु ।
पिबेत्तंदुलतोयेन तृष्णाच्छर्दिनिवारणम् ॥

अर्थ-वड की कोपल, मिश्री, लोध, अनारदाना और मुलहटी इन का काढा करे शीतल होने पर सहत डालके पीवे और चावलों के धोवन में मिलायके पिलावे तो प्यास और वमन का होना ये बंद होवे ॥

अवलेह

अर्धावर्तितपानीयं सलाजैः शीतलं मधु ।
तवराजयुता द्राक्षा मुखे क्षिप्ता तृषां जयेत् ॥

अर्थ-जल में खीलों को डालके औटावे जब आधा जल रहे तब उतारके शीतल करे फिर सहत मिलायके देवे अथवा दाख और मिश्री मिलायके गोली बनाय ले इस को मुख में रखे तो तृषानाश होवे ॥

ताम्रादिरस

ताम्रं चक्रिकया बद्धं सूतं तालं सतुत्थकम् ।
वटांकुररसैर्मर्द्यं तृष्णानुलवमात्रया ॥

अर्थ-तामे की भस्म, पारा, हरताल और लीला थोथा इन को वड की कोपल के रस में खरल कर टिकिया बनायके संपुट में धरके फूंक देवे इस में से लवमात्र की मात्रा देय तो प्यास दूर होय ॥

श्रीखंडयोग

अर्धाढकं रुचिरपर्युषितस्य दध्नः खंडस्य षोडश पलानि शशिप्रभस्य। सर्पिः पलं मधु पलं मरिचं द्विकर्षं शुंठ्या पलार्धमपि चार्धपलं तृटेश्च ॥ श्लक्ष्णे पटे ललनया मृदुपाणिघृष्टे कर्पूरधूलिसुरभीकृतचारुभांडे । एषा वृकोदरकृता सुरसा रसाला सुस्वादिता भगवता मधुसूदनेन ॥

अर्थ–पहली दिन का जमा हुआ गाढा २ सुंदर चिकना दही दो सेर लेय बहुत सपेद बूरा १ सेर, घी ४ तोले, सहत ४ तोले, काली मिरच २ तोले, सोंठ २ तोले तथा छोटी इलायची के दाने २ तोले इतने पदार्थों को उस दही में मिलायके पतले कपडे में डाल और कपूर के चूर्ण करके सुगंधित ऐसे पात्र में स्त्री अपने कोमल हाथों से उसे छाने, इस को श्रीखंड कहते हैं. इस के सेवन करने से मनुष्यों की तृषा शांत होय इस को कोई **रसाला** अथवा **सिखरन** भी कहते हैं इस प्रकार श्रीखंड प्रथम भीमसेन ने बनाई उस को श्रीकृष्ण ने बडे स्वादपूर्वक भोग लगाई ॥

आमलक्यादिगुटिका तृष्णादिपर

आमलं कमलं कुष्ठं लाजाश्च वटरोहकम् । एतच्चूर्णस्य मधुना गुटिकां धारयेन्मुखे ॥ तृष्णां प्रवृद्धां हंत्येषा मुखशोषं च दारुणम्॥

अर्थ–आंवले, कमल, कूट, खील, वड की कोंपल इन पांच औषधों का चूर्ण करके सहत में मिलायके गोली बनावे. इस को मुख में रखे तो बहुत प्यास का लगना तथा मुख का अत्यन्त सूखना इन दोनों को दूर करे ॥

वटी

उत्पलं मधु लाजाश्च वटरोहो गदस्तथा ।
एतैः कृता वटी नित्यं तृष्णां नाशयति क्षणात् ॥

अर्थ–नीला कमल, सहत, खील, वड के अंकुर और कूट इन को कूट पीसके गोली बनावे. इस गोली को मुख में रखे तो क्षणमात्र में तृषा का नाश करे ॥

गुटी

खर्जूरमृद्वीकमधुः सखंडं पृथक् पलं मागधिका त्रिगंधे ।
तथार्धबिल्वे मधुना गुटीयं तृण्मोहपित्तास्रजयेति शस्ता ॥

अर्थ—खजूर, दाख, मुलहटी, मिश्री ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. पीपल, दालचीनी, पत्रज और इलायची ये दो २ पल लेवे इन सब को कूट पीस सहत से गोली बनावे यह तृषा, मोह और रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

काश्मर्यादिकाढा

काश्मर्यशर्करायुक्तं चंदनोशीरपद्मकम् ।
द्राक्षामधुकसंयुक्तं पित्ततृष्णो जलं पिबेत् ॥

अर्थ—कंभारी के फल, मिश्री, चंदन, खस, पद्माख, मुनक्का और मुलहटी इन का काढा पित्तजन्य तृषावाले को हितकारी है ॥

जीरकादिचूर्ण

सजीरधान्यार्द्रकशृंगवेरसौवर्चलान्यर्धपरिप्लुतानि ।
मद्यानि हृद्यानि च गंधवंति पीतानि सद्यः शमयंति तृष्णाम् ॥

अर्थ—जीरा, धनिया, अदरख, बांस, संचरनिमक इन के चूर्ण को आधा भीगे इतना मद्य (दारु) उत्तम सुगंध युक्त पीने से तृषा की शांति होवे ॥

आम्रादिकाढा

आम्रजंबूकषायं वा पिबेन्माक्षिकसंयुतम् ।
छर्दिं सर्वां प्रणुदति तृष्णां चैवापकर्षति ॥

अर्थ—आम और जामुन की छाल का काढा सहत मिलायके पीने से सब प्रकार वांति, तृषा इन को शमन करे ॥

द्राक्षादिनस्य

गोस्तनीक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ।
नियतं नस्यतो पीतैस्तृष्णा शाम्यति तत्क्षणात् ॥

अर्थ—काली दाख, ईख, दूध, मुलहटी, सहत और कमल इन का नस्य लेने से नियमपूर्वक उसी क्षण में तृषा शांत होवे ॥

जीरकादिकाढा

जीरकुस्तुंबरीद्राक्षाचंदनोत्पलशीतलम् ।
शीतलेन समं दद्यात्तृष्णां हन्त्यतिशीतलम् ॥

अर्थ—जीरा, धनिया, मुनक्का दाख, चंदन, कमल, कपूर ये सब पीस शीतल जल के साथ पीने से तृषा का नाश होय ॥

कोष्ठादियोग

रुग्लाजाब्दवटप्ररोहमधुकैर्मध्वन्वितैः कल्पितान्यु-
ग्रामाशु तृषां भृशं प्रशमयेदास्यांतरस्था गुटी ॥

अर्थ–कूठ, खील, नागरमोथा, वड के अंकुर, मुलहटी और सहत इन सब को एकत्र पीस गोली बनायके मुख में रखे तो अत्यंत तृष्णा भी होवे तो शीघ्र शांत होवे ॥

तप्तलोष्टादियोग

निर्वापितं तप्तलोष्टकपालसिकतादिभिः ।
तृष्णायां वमनोत्थायां सगुडं दधि शस्यते ॥

अर्थ–मिट्टी का डेला, खीपडा और वालू (रेत) में से किसी एक को अग्नि में गरम करके दही में बुझ ले. फिर इस में गुड डालके पीवे तो वमन के होने से जो तृषा उत्पन्न हुई वह शांत होवे ॥

मंदादियोग

आतपात्ससितं मंथं यवकोलजसक्तुभिः ।
सर्वाण्यंगानि विलिपेत्तिलपिण्याककांजिकैः ॥

अर्थ–यदि धूप में रहने से तृषा लगी होवे तो छाछ में मिश्री, सत्तू और बेर का चूर्ण इन को मिलाय के पीवे. तथा सब देह में तिल के खल का और कांजी का लेप करे ॥

रोगोपसर्गजातायां धान्यांबु ससिता मधु । वटप्ररोहयष्ट्याह्वक-
णामधुकृता वटी ॥ मुखस्था चिरकालोत्थां तृष्णां हन्यात्सु-
दुस्तराम् ॥

अर्थ–रोग के कारण यदि प्यास लगे तो धनिये का जल, सहत और मिश्री डालके पीवे और बहुत देर की प्यास लगकर दुःसाध्य होवे तो वड के पल्लव अथवा कोमल अंकुर, मुलहटी, पीपल और सहत इन की गोली बनायके मुख में रखे॥

रसादिगुटी

रसरजतगुटीं पटीयसीं यो वदनसरोरुहमध्यगां दधाति ।
स जयति तृषितस्तृषां मनुष्यो भृशमघमिव त्रिमार्गगांभः ॥

अर्थ–पारा और चांदी इन दोनों को खरल करके गोली बनावे इस को मुख में रखे तो तृषित मनुष्य अपनी तृषा को दूर करे जैसे त्रिपथगा गंगाजी पापों को नष्ट करे है ॥

रसादिचूर्ण

रसगंधककर्पूरैः शैलोशीरमरीचकैः। रसितैः क्रमवृद्धैश्च सूक्ष्मं कृत्वा त्वहर्मुखे ॥ त्रिगुंजाप्रमितं खादेत्पिबेत्पर्युषितांबु च। भृशं तृष्णां निहंत्येवमश्विभ्यां च प्रकाशितम् ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, कपूर ३, शिलाजीत ४, खस ५, काली मिरच ६ और मिश्री ७ भाग, इस प्रकार लेकर बारीक चूर्ण करे इस में से तीन रत्ती के अनुमान प्रातःकाल सेवन करे फिर शीतल जल पीवे तो अत्यंत तृषा का नाश होवे यह अश्विनीकुमार ने प्रकाश करा है ॥

लेप

अरुणचंदनचंदनवालकैर्नलदपद्मकतुल्यकृतांशकैः। शिरसि लेपनमाचरतां नृणां तृडपयात्युपशांतिमसंशयम् ॥

अर्थ–लाल चंदन, चंदन, नेत्रवाला, खस, पद्माख ये समान भाग लेवे सब को जल में पीसके मस्तकपर लेप करे तो निश्चय तृषा शांत होय ॥

गुटी

नीलांबुजाब्दमधुलाजवटावरोहैः श्लक्ष्णीकृतैर्विरचिता गुटिका मुखस्था। तृष्णां निवारयति तत्क्षणमेव तीव्रां मृत्योः स्पृहामिव यतेः परमार्थचिंता ॥

अर्थ–नीला कमल, नागरमोथा, सहत, खील और वड के अंकुर इन सब को पीसके गोली बनावे इस को मुख में रखे तो तत्क्षण तृषा दूर होवे जैसे संन्यस्त (संन्यासी) परमार्थविषय में चिंता, मृत्यु की इच्छा निवारण करे उसी प्रकार ॥

उपसर्गतृष्णासामान्यविधि

तृष्णातिवृद्धावुदरे च पूर्णे संछर्दयेन्मागधिकोदकेन। विलोमसंचाररहितं विधेयं स्याद्दाडिमाम्रातकमातुलिंगैः ॥

अर्थ–यदि प्यास अधिक बढ गई हो और जल पीते २ पेट अफर गया होवे तो पीपल के काढे से उलटी करावे और वायु का अनुलोम संचार होय ऐसे हितकारी अनार, अंबाडा और बिजोरा इन को सेवन करे, अभ्यंजन और सेक करे ॥

अभ्यंजन और स्नान

मधुरैः संजीवनीयैः शीतैश्च सतिक्तकं शृतम् ।
क्षीरं पानाभ्यंजनसेके त्विष्टं मधुशर्करायुक्तम् ॥

अर्थ–मधुर, जीवनीयगण, शीतल पदार्थ, कुटकी इन करके तयार करे हुए दूध में सहत और मिश्री डालके मालिस करे तथा सेक (तरडा देना) ये तृषारोग में हितकारी हैं ॥

कसेर्वादिकाढा

कसेरुशृंगाटकपद्मबीजाबिसेक्षुसिद्धं ससितं च वारि ।
तृष्णां क्षतोत्थामपि पित्तजातां निहंति पीतं शिशिरीकृतं च ॥

अर्थ–कसेरू, सिंघाडे, कमलाक्ष, कमलकंद और ईख इन का शीतल हुआ काढा कर उस में खांड डालके पीवे तो क्षत से अथवा पित्त से प्रगट हुई तृषा नाश होवे ॥

मधुयुक्तं जलं शीतं पिबेदाकंठमातुरः ।
पश्चाद्वमेदशेषं तत्तृष्णा तेन प्रशाम्यति ॥

अर्थ–जल और सहत मिलायके कंठपर्यंत खूब पीवे फिर ऊंगली गले में डालके उस जल की उलटी कर देवे तो इस कर्म के करने से तृषा शांत होय ॥

क्षौद्रादिगंडूष

सक्षौद्रमाम्रजंबूत्थं पिबेत्क्वाथं सुपाचितम् ।
सतृष्णो मधुना कुर्याद्गडूषान् शिशिरस्थितम् ॥

अर्थ–आम और जामुन की छाल के काढे में सहत मिलायके शीतल करके पीवे और सहत तथा जल को मिलायके कुल्ले करे तो तृषा शांत होवे ॥

क्षीरेक्षुरसमृद्वीकाक्षौद्रसिंधुगुडोदकैः ।
सह वृक्षाम्लगंडूषस्तालुशोषतृडंतकृत् ॥

अर्थ–दूध, ईख का रस, मुनक्का दाख, सहत, सैंधानिमक, गुड, डासरा और जल इन सब को एकत्र करके कुल्ले करे तो तालुशोष और तृषा इन को नष्ट करे ॥

लेप

दाडिमदधिकपित्थलोध्रैः सविदारीबीजपूरकैः शिरसः ।
लेपो गौरामलकैः शृतारनालयुतैः सहितैः ॥

अर्थ–अनारदाना, दही, कैथ, लोध, विदारीकंद, बिजोरा, कमल की केशर और आवले इन सब को पीस कांजी में मिलायके मस्तकपर लेप करे तो प्यास शांत होवे ॥

दूसरा प्रकार

दाडिमं बदरं लोध्रं कपित्थं बीजपूरकम् ।
पिष्ट्वा लेपः शिरस्येषां पिपासादाहनाशनः ॥

अर्थ–अनारदाना, बेर, लोध, कैथ और बिजोरा इन को एकत्र पीसके मस्तकपर लेप करे तो प्यास और दाह ये शांत होवें ॥

पानात्ययजतृष्णा

छागमांसरसं साज्यं शीतं समधुशर्करम् ।
पीत्वा जयति दुर्दाहमूर्च्छाछर्दिमदात्ययान् ॥

अर्थ–बकरे के मांस का रस, घी, मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो दुस्तर दाह, मूर्च्छा, वमन और मदात्यय इन को जीते ॥

तृष्णारोग पथ्य

शोधनं वमनं निद्रा स्नानं कवलधारणम् । कोद्रवाः शालयः पेयविलेपी लाजसक्तवः ॥ अन्नमंडो धन्वरसः शर्करारागखांडवैः । भृष्टमुद्गैर्मसूरैर्वा चणकैर्वा कृतो रसः ॥ रंभापुष्पं तक्रकूर्चं द्राक्षापर्पटवल्लकम् । कपित्थं मालिकाकोलं कूष्मांडकमुपोदिका॥खर्जूरं दाडिमं धात्री कर्कटी ललदंबु च । जंबीरं करमर्दश्च बीजपूरो गवां पयः॥ मधूकपुष्पं ह्रीबेरं तिक्तानि मधुराणि च । बालतालांबु शीतांबु पयः पेयं प्रपानकम् ॥ माक्षिकं सरसीतोयं शताह्वा नागकेशरम् । एला जातीफलं पथ्या कुस्तुंबुरुकुचंदनम् ॥ घनसारो गंधसारः कौमुदी शिशिरोनिलः । चंदनार्द्रप्रियाश्लेषो मुक्ताभरणधारणम् ॥ गाहनं लेपनं चास्य पथ्यमेतत्तृषातुरे ॥

अर्थ–शोधन, वमन, निद्रा, स्नान, मुख में कवल धारण, कोदों, शाली चावल, पेया, विलेपी, खील और सत्तू, चौदह गुने पानी में चावलों का बना हुआ मंड,

जंगली जीवों के मांस का रस, खांडव, मिश्री, रागखांडव (सहत, मीठा दही इन दोनों को मिलायके बनाया हुआ पदार्थ) तथा मूंग का, मसूर का अथवा चने का रस, केले के फूल, छाछ (तैल) कूर्च, दाख, पित्तपापडा, बेल, कैथ, कमरख, बेर, पेठा, पोई का साग, खजूर, अनार, आंवले, ककडी, बहता जल, जँभीरी, कमरख, बिजोरा, गौ का दूध, महुआ के फूल, नेत्रवाला, कडुए रस, मीठे रस, छोटे २ तालफलों का जल अथवा खस और ताडीरस, शीतल जल, दूध, पना, सहत, तालाव का जल, सतावर, नागकेशर, इलायची, जायफल, हरड,धनिया, लालचंदन, कपूर, कपूरकचरी, चाँदनी, शीतलपवन, चंदन लगाए हुए स्त्री, मोती के आभूषण, नदी में स्नान करना तथा लेपन ये तृषा (प्यास) रोगवाले को पथ्य में देवे ॥

तृषारोगअपथ्य

स्नेहांजनं स्वेदनधूमपानं व्यायामनस्यातपदंतकाष्ठम् । गुर्वन्नमम्लं लवणं कषायं कटुत्रिकं दुष्टजलानि तीक्ष्णम् ॥
एतानि सर्वाणि हिताभिलाषी तृष्णातुरो नैव भजेत्कदाचित् ॥

अर्थ–स्नेहन, अंजन, स्वेदन, धूमपान, दंड कसरत, नस्यकर्म, धूप का सेवन, दांतन करना, भारी अन्न, खट्टा, निमकीन, कषेला ऐसे रस, त्रिकुटा (सोंठ,मिरच, पीपल), दूषित जल, तीक्ष्ण पदार्थ, इन संपूर्ण पदार्थों को हित की इच्छा करनेवाला तृषा (प्यास का) रोगी कदाचित् सेवन न करे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे तृष्णारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूर्च्छाभ्रमनिद्रासंन्यासनिदानम् ।

क्षीणस्य बहुदोषस्य विरुद्धाहारसेविनः । वेगाघातादभीघाताद्धीनसत्वस्य वा पुनः ॥ करणायतनेषूग्रा बाह्येष्वाभ्यंतरेषु च ।
निविशंते यदा दोषास्तदा मूर्च्छंति मानवाः ॥

अर्थ–तृषा में मोह होय है, इसी से तृषा के अनन्तर मूर्च्छा को कहते हैं. क्षीण पुरुष के बहुत दोष के संचय होने से, विरुद्ध आहार क्षीर मत्स्यादिक के सेवन करने से, मलमूत्रादि वेग के धारण करने से, लकडी आदि के चोट लगने से अथवा जिस पुरुष का सतोगुण क्षीण हो गया होय, ऐसे पुरुष की बाहर की और भीतर की मन के वहनेवाली नाडियों में दोष प्रवेश करे तब मनुष्य को मूर्च्छा आती है ॥

संप्राप्ति

संज्ञावहासु नाडीषु पिहितास्वनिलादिभिः। तमोभ्युपैति सहसा सुखदुःखव्यपोहकृत् ॥सुखदुःखव्यपोहाच्च नरः पतति काष्ठवत्। मोहो मूर्च्छेति तामाहुः षड्विधा सा प्रकीर्तिता ॥ वातादिभिः शोणितेन मद्येन च विषेण च। षट्स्वप्येतासु पित्तं तु प्रभुत्वेनावतिष्ठते ॥

अर्थ–अर्थात् संज्ञा के वहनेवाली नाडियों में वातादि दोषों करके आच्छादित होने से सुखदुःख का ज्ञान नष्ट होय, तब मनुष्य पृथ्वीपर काष्ठ की सी तरह गिरे इस रोग को मूर्च्छा अथवा मोह ऐसे कहते हैं अथवा बाहर की इन्द्रिय नेत्र, कान आदि कर्मेंद्रिय और बुद्धीन्द्रिय इन में बलवान् दोष (वात, पित्त, कफ) प्रवेश कर संज्ञा की वहनेवाली जो नाडी तिन को वह वात, पित्त, कफ रोक अंधकार को प्रगट करे तब मनुष्य काष्ठ की भांति पृथ्वीपर गिरे उस को मूर्च्छा कहते हैं अथवा मोह कहते हैं सो मूर्च्छा छः प्रकार की है. वात, पित्त, कफ से तीन प्रकार की और रुधिर, विष और मद्य इन भेदों से तीन प्रकार की. इन तीनों मूर्च्छा में पित्त है सो मुख्य (प्रधान) है अथवा व्यापक है ॥

पूर्वरूप

**हृत्पीडा जृंभणं ग्लानिः संज्ञानाशो बलस्य च।
सर्वासां पूर्वरूपाणि यथास्वं तं विभावयेत् ॥**

अर्थ–हृदय में पीडा, जंभाई, ग्लानि, भ्रांति ये मूर्च्छा के पूर्वरूप हैं. आगे उस मूर्च्छा के वातादि भेद जानने. यह प्रगट अवस्था के पूर्वरूप अवस्था के भेद नहीं यह जैय्यटाचार्य का मत है ॥

वातादिमूर्च्छालक्षण

नीलं वा यदि वा कृष्णमाकाशमथवाऽरुणम्। पश्यंस्तमः प्रविशति शीघ्रं च प्रतिबुद्ध्यते ॥ वेपथुश्चांगमर्दश्च प्रपीडा हृदयस्य च। कार्श्यं श्यावारुणा च्छाया मूर्च्छांगे वातसंभवे ॥

अर्थ–जो मनुष्य नीले रंग का अथवा काले रंग का तथा लाल रंग का आकाश को देखे पीछे मूर्च्छा को प्राप्त होय और जलदी होश हो जाय, देह में कंप, अंगों का टूटना, हृदय में पीडा होय, शरीर कृश हो जाय शरीर का रंग काला लाल पड जाय, उस को वात की मूर्च्छा जाननी ॥

पित्तमूर्च्छानिदान

रक्तं हरितवर्णं वा वियत्पीतमथापि वा । पश्यंस्तमः प्रविशति सस्वेदश्च प्रबुद्धयते॥ सपिपासः ससंतापो रक्तपीताकुलेक्षणः । जातमात्रे च पतति शीघ्रं च प्रतिबुध्यते ॥ संभिन्नवर्चाः पीताभो मूर्च्छाँगे पित्तसंभवे ॥

अर्थ—जिस को आकाश लाल, हरा, पीला दीखे पीछे मूर्च्छा आवे और सावधान होते समय पसीना आवे, प्यास होय, संताप होय, नेत्र लाल, पीले होंय, मल पतला होय, देह का वर्ण पीला होय ये लक्षण पित्त की मूर्च्छा के हैं ॥

कफमूर्च्छा

मेघसंकाशमाकाशमावृतं वा तमोघनैः । पश्यंस्तमः प्रविशति चिराच्च प्रतिबुद्धयते ॥ गुरुभिः प्रावृतैरंगैर्यथैवार्द्रेण चर्मणा । सप्रसेकः सहृल्लासो मूर्च्छाँगे कफसंभवे ॥

अर्थ—कफ की मूर्च्छा में आकाश को मेघ के समान अथवा अंधकार के समान अथवा बादल इन से व्याप्त देखकर मूर्च्छागत होय, देर में सावधान होय, भारी बोझासा देहपर भार मालूम होय अथवा गीला चमडा धारण करासा मालूम होय, मुख से पानी गिरे, रद्द होयगी ऐसा मालूम होय ॥

संनिपातमूर्च्छानिदान

सर्वाकृतिः सन्निपातादपस्मार इवापरः ।
स जंतुं पातयत्याशु विना बीभत्सचेष्टितैः ॥

अर्थ—सन्निपात की मूर्च्छा में सब दोषों के लक्षण होते हैं, ये रोग दूसरा अपस्मार (मृगी) जानना चाहिये. परन्तु अपस्मार में दातों का चवाना, मुख से झाग का गेरना, नेत्रों का हाल और ही प्रकार का हो जाना, इत्यादिक लक्षण होते हैं सो इस रोग में नहीं होते, इतना ही भेद है. * शंका—क्यौंजी पूर्व तो छः प्रकार की मूर्च्छा कह आये फिर सन्निपात की मूर्च्छा कैसे कही. * उत्तर—चरक की अष्टोत्तरीयाध्याय में लिखा है, जैसे अपस्मार चार प्रकार का है. वात का, पित्त का, कफ का, सन्निपात का, उसी प्रकार मूर्च्छारोग भी चार प्रकार का है इसी मत को ग्रहण कर माधवाचार्य ने सन्निपात की मूर्च्छा कही है ॥

रक्तमूर्च्छानिदान

पृथिव्यापस्तमोरूपं रक्तगंधश्च तन्मयः । तस्माद्रक्तस्य गंधेन

मूर्च्छंति भुवि मानवाः ॥ द्रव्यस्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदि च मूर्च्छंति ॥

अर्थ—पृथ्वी और जल ये दोनों तमोगुणविशिष्ट हैं सो सुश्रुत में लिखा है. और रुधिर की गंध भी उन दोनों से अर्थात् पृथ्वी और जल से प्रगट है. तो रुधिर की गंध भी तमोगुण विशिष्ट हुई इसी से जो तामसी पुरुष हैं सो रुधिर की गंधी से मूर्छित होते हैं और जो राजसी, सात्विकी पुरुष हैं सो मूर्च्छित नहीं होते * शंका—क्योंजी चंपक (चम्पा) पुष्प की गंध से भी मूर्च्छा होनी चाहिये क्योंकि उस में भी पार्थिव अर्थात् तामसगुणविशिष्ट गंध है इस वास्ते कहते हैं. (द्रव्यस्वभावमित्येके) अर्थात् कोई आचार्य कहते हैं कि ये द्रव्य का ही स्वभाव है अर्थात् रुधिर का यही स्वभाव है कि जिस की गंध से ही मनुष्य मूर्च्छित होय है. अब प्रभाव को और भी दृढ करते हैं (दृष्ट्वा यदभिमुह्यति) अर्थात् रक्त के देखने से भी मूर्च्छित होय है सो लिखा है ॥

विषमद्यमूर्च्छानिदान

गुणास्तीव्रतरत्वेन स्थितास्तु विषमद्ययोः।
त एव तस्मादाभ्यां तु मोहौ स्यातां यथेरितौ ॥

अर्थ—तैलादिकों में जो दश गुण हैं वे ही गुण विष और मद्य में अत्यंत तीव्रता से रहते हैं. इसी से विष और मद्य के सेवन करने से मोह होय है, इस में भी मद्य में तीव्र रहे और विष में तीव्रतर रहे इसी से विष का मोह स्वयं शांत नहीं होय. क्योंकि विष अपाकी है और मद्य का मोह, मद्य के नसा उतरे पर शांत हो जाय है यह भेद विष और मद्य में रहता है ॥

रक्तादिमूर्च्छाओं के लक्षण

स्तब्धांगदृष्टिस्त्वसृजा गूढोच्छ्वासश्च मूर्च्छितः। मद्येन विलपञ्छेते नष्टविभ्रांतमानसः ॥ गात्राणि विक्षिपन्भूमौ जरां यावन्न याति तत्। वेपथुस्वप्नतृष्णाः स्युस्तमश्च विषमूर्छिते ॥ वेदितव्यं तीव्रतरैर्यथास्वं विषलक्षणैः ॥

अर्थ—रुधिर की मूर्च्छा में अंग और नेत्र निश्चल हो जांय और श्वास अच्छे प्रकार आवे नहीं. बहुत मद्य के पीने से जो मूर्च्छा हो उस के ये लक्षण हैं. बहुत बके, सोय जाय, संज्ञा जाती रहे, भ्रमयुक्त होय और जबतक मद्य न पचे तबतक पृथ्वी में हाथ पैर पटके. विषजन्य मूर्च्छा में कांपे, सोवे, प्यास लगे और अंधेर

आवे, एवं मूल, पत्र, दूध इन के भेदकर जो विषभक्षण से लक्षण होते हैं सो सब लक्षण होते हैं ॥

मूर्च्छाभेदकारण विशेषकरके कहता हूं

मूर्छा पित्ततमःप्राया रजःपित्तानिलाद्भ्रमः । तमोवातकफात्तंद्रा निद्रा श्लेष्मतमोभवा ॥ इंद्रियार्थेष्वसंवृत्तिर्गौरवं जृंभणं क्लमः । निद्रार्तस्यैव यस्यैते तस्य तंद्रां विनिर्दिशेत् ॥ योनायासः श्रमो देहे प्रवृद्धश्वासवर्जितः । क्लमः स इति विज्ञेयो इंद्रियार्थप्रबोधकः ॥

अर्थ–मूर्च्छा में पित्त और तमोगुण अधिक रहे हैं. रजोगुण पित्त और वायु इन से भ्रम होय है. तमोगुण, वायु और कफ इन से तन्द्रा और कफ तथा तमोगुण इन से निद्रा उत्पन्न होती है. इन्द्रिय अपने अपने विषय को ग्रहण न करे, देह भारी हो जाय अर्थात् सुस्त हो जाय, जंभाई और क्लम होय, ये लक्षण निद्रार्त पुरुष के सदृश जिस के होंय उस को तन्द्रा कहते हैं. इस में आधे नेत्र खुले रहते हैं, निद्रा में इन्द्रिय और मन को मोह होय है, तन्द्रा में केवल इन्द्रियों को ही मोह होय है.निद्रा और भ्रम ये दोनों अतिप्रसिद्ध होने से माधवाचार्य ने नहीं कहे, परंतु चरक में कहे हैं. सो इस प्रकार की जिस समय मन और इन्द्रिय खेद को प्राप्त होंय और अपने अपने विषय (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) को त्याग देंय, तब यह मनुष्य को निद्रा आती है और शरीर के आयास विना देह को श्रम होवे और अन्य आयास में जो बडा श्वास होता है वह नहीं होता और विषय में इंद्रियों की प्रवृत्ति होती है इस को क्लम कहते हैं ॥

संन्यासकथन

दोषेषु मदमूर्च्छाद्यागतवेगेषु देहिनाम् ।
स्वयमेवोपशाम्यंति संन्यासो नौषधैर्विना ॥

अर्थ–दोषों के वेग नष्ट होने से मदमूर्च्छादिक अपने आप शांत हो जाय हैं परंतु संन्यास यह औषध के विना शांत नहीं होय है ॥

संन्यासलक्षण

वाग्देहमनसां चेष्टा आक्षिप्यातिबलान्मलाः । संन्यस्यंत्यबलं जंतुं प्राणायतनमाश्रिताः ॥ स ना संन्याससंन्यस्तः काष्ठीभूतो मृतोपमः । प्राणैर्विमुच्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्यःफलां क्रियाम् ॥

अर्थ–अत्यंत बलिष्ठ भये जो दोष, सो वाणी, देह और मन इन के व्यापार को बंद कर हृदय में प्राप्त हो निर्मल मनुष्य को मूर्च्छित करे, वह संन्यास से पीडित मनुष्य काष्ठ की भांति पृथ्वी पर गिरे उस की सद्यःफल चिकित्सा अर्थात् सुई से छेदना, तीखे अंजन का लगाना, अनामिका को पीडित करना, कोंच की फली लगाना, दाह देना, नास देना इत्यादिक क्रिया न करे तौ वह रोगी प्राणवियुक्त कहिये मरण को प्राप्त हो, अन्यथा बचे है ॥

मूर्छा

**मूर्छा मोहो द्विधा स्यात्प्रभवति सहजागंतुभेदेन भिन्नस्त-
त्रागंतुस्त्रिधा स्याद्रुधिरविषसुराजन्मभेदाद्विभिन्ना । प्रत्येकं
दोषभेदाद्भवति च सहजा सा त्रिधा षट्सु पित्तं प्रधान्येनेह ति-
ष्ठेदभिदधाति च तां द्वंद्वजां सन्निपातात् ॥**

अर्थ–मूर्छासंबंध से मोह दो प्रकार का होता है सहज और आगंतुक इन में से आगंतुक रक्त, विष और मद्य इन से तीन प्रकार का है और सहज मूर्छा में पित्त-प्रधान होता है व यह मूर्छा द्वंद्वज और सन्निपात इन से भी होती है ॥

चिकित्साक्रम

**सेकावगाहा मणयः सहाराः शीताः प्रदेहा व्यजनानिलाश्च ।
शीतानि पानानि च गंधवंति सर्वासु मूर्छास्वनिवारितानि ॥**

अर्थ–अंग पर जल का तरडा देना, स्नान करना, रत्न और रत्नों के हार धारण करना, शीतल चंदनादिक लेप करना, पंखे से पवन करना, सुगंधित और शीतल पने ये उपचार संपूर्ण मूर्च्छा पर अबाध हैं ॥

दुरालभादिकाढा

**दुरालभाकषायस्य घृतयुक्तस्य सेवनात् ।
भ्रमः शाम्यति गोविंदचरणस्मरणादिव ॥**

अर्थ–धमासे का काढा कर उस में घी डालके देवे तो भ्रम की शांति होय जैसे गोविंदचरणस्मरण से पाप नष्ट होते हैं ॥

पंचमूलकाढा

**पंचमूलकषायं च मधुना सितया पिबेत् ।
ज्वरघ्नांस्तु कषायांश्च तान्यथास्वं प्रयोजयेत् ॥**

अर्थ–मूर्छा पर पंचमूल काढा, सहत और मिश्री मिलाय ले देवे और जो ज्वरनाशक काढे हैं वह भी यथादोष देखकर देवे ॥

क्षुद्रादिकाढा

क्षुद्रामृताग्रंथिकनागराणां मूर्छां जयेद्दारुणकाकषायः ॥

अर्थ–कटेरी, गिलोय, पीपरामूल, सोंठ और बरना इन का काढा मूर्छा का नाश करे है ॥

द्राक्षादिकाढा

द्राक्षासितादाडिमलाजवंति कह्लारनीलोत्पलपद्मवंति ।
पिबेत्कषायाणि च शीतलानि पित्तज्वरं यानि च यापयंति ॥

अर्थ–दाख, मिश्री, अनारदाना, लजालू, लाल कमल, नीले कमल और कमल इन का काढा करके देवे अथवा जो पित्तज्वर पर काढा देना चाहिये सो इसपर देवे ॥

रक्तजादि का मूर्च्छापर शास्त्रार्थ

रक्तजायां च मूर्छायां हितः शीतक्रियाविधिः । मद्यजायां वमेन्मद्यं निद्रां सेवेद्यथासुखम् ॥ विषजायां विषघ्नानि भेषजानि प्रदापयेत् ॥

अर्थ–रुधिर के कारण मूर्छा होवे तो शीतल औषध हितकारी होती है. मद्य पीने के कारण मूर्च्छा होय तो मद्य को रद्द करके निकाल देवे और सोय जावे. यदि विषभक्षण से मूर्च्छा होवे तो विषनाशक औषध सेवन करे ॥

कोलादियोग

कोलमज्जाकणोशीरकेसरं शीतवारिणा ।
पीतं मूर्छां जयेल्लीढ्वा कृष्णां वा मधुसंयुताम् ॥

अर्थ–बेर की गुठली की मिंगी, पीपल, खस, नागकेशर इन को जल में पीसके पीवे, अथवा सहत में मिलायके पीपल का चूर्ण सेवन करे तो मूर्च्छा दूर होय ॥

त्रिफलादियोग

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।
सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्छाकासकामलामोहान् ॥

अर्थ–रात्रि के समय सहत में हरड, बहेडा, आवला इन के चूर्ण को मिलायके खाय और गुड, अदरख मिलायके प्रातःकाल खाय, पथ्य से रहे इस प्रकार सात दिन करे तो मद, मूर्च्छा, कामला और मोह इन का नाश होवे ॥

महौषधामृताद्राक्षापौष्करग्रंथिकोद्भवम् ।
पिबेत्कणायुतं क्वाथं मूर्छायां च मदेषु च ॥

अर्थ–सोंठ, गिलोय, मुनक्का, पोहकरमूल और पीपरामूल इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो मूर्च्छा और मद इन को दूर करे ॥

दुरालभादिकाढा

पिबेद्दुरालभाक्काथं सघृतं भ्रमशांतये ।
अंजनान्यपि पीडाश्च धूमाः प्रधमनानि च ॥

अर्थ–धमासे के काढे में घी मिलायके पीवे अथवा तीव्र अंजन लगावे तथा रोगी को (नोचने आदि से) पीडा करना, धूमपान अथवा प्रधमन नस्य देवे तो मूर्छा शांत होवे ॥

सामान्य

सूचिभिस्तोदनं शस्तं दाहपीडा नखांतरे ।
लुंचनं नखलोम्नां च दंतैर्दंशनमेव च ॥

अर्थ–मूर्छारोगी को सुई से चोटना, दाहकर्म करना, नख आदि को खूब दबाना, बाल और नखों को खैंचना तथा दांतों से काटना ये सब कर्म मूर्च्छारोग पर हितकारी हैं ॥

आत्मगुप्तादियोग

आत्मगुप्तावघर्षश्च हितस्तस्यावबोधने ॥

अर्थ–मूर्च्छावाले रोगी के देह में कौंच की फली घिस देवे तो उस को होश हो जावे ॥

नारिकेलादियोग

नारिकेलांबुना पीताः सक्तवः समशर्कराः ।
पित्तहृत्कफतृण्मूर्छाभ्रमादीन्हंति दारुणान् ॥

अर्थ–नरियल के जल में सत्तु और खांड मिलायके पीवे तो पित्त, हृदय का कफ, तृष्णा, मूर्च्छा, भ्रम ये यदि भयंकर भी होवें तो इन का नाश होय ॥

प्रकारांतर

अंडयोर्घर्षणं चापि हितमेतैर्विबाधनम् । नासावदनरोधेन नस्यैर्मरिचनिर्मितैः ॥ नरं जागरयेद्भूमौ मूर्च्छितं मंदमारुतैः ॥

अर्थ–अंडकोशों में कौंच की फली आदि का लगाना मूर्च्छारोग में हितकारी है. मूर्छा आनकर पृथ्वी में गिरे हुए मनुष्य को मिरचों की नस्य देकर उस के मुख और नाक को बंदकर देवे अर्थात् श्वास रोक देवे तो मूर्च्छावाला रोगी तत्काल जाग उठे ॥

मृणालाद्यवलेह

शीतेन तोयेन भृशं मृणालं कृष्णा च पथ्या मधुनावलिह्यात् ।
कुर्याच्च नासावदनावरोधं क्षीरं पिबेद्वाप्यथ मानुषीणाम् ॥

अर्थ–शीतल जल से कमलकंद, पीपल और हरड इन को पीस सहत डालके चाटे अथवा मुख, नाक इन में वायु का कुछ प्रतिबंध करे अर्थात् इन को रोक देवे अथवा किसी स्त्री का दूध देवे तो मूर्छित मनुष्य जाग उठे ॥

अंजन

शिरीषबीजं गोमूत्रं कृष्णामरिचसैंधवैः ।
अंजनं स्यात्प्रबोधाय सरसोनशिलावचैः ॥

अर्थ–सिरस के बीज, पीपल, काली मिरच और सैंधानिमक इन को गोमूत्र में पीस इस का अथवा लहसन, मनसिल और वच इन को पीसके अंजन करे तो मूर्छित मनुष्य जगे ॥

दूसरा प्रकार

अंजनं सम्यगारब्धं मधुसिंधुशिलोषणैः ।
प्रमोहद्रोहि भवति भाषितं भिषजां वरैः ॥

अर्थ–सहत, सैंधानिमक, मनसिल और काली मिरच इन का अंजन करे तो मोह को नाश करे ऐसा उत्तम वैद्यों ने कहा है ॥

सामान्य उपचार अंजन

धूमांजनप्रधमनान्यवपीडनानि निस्तोददाहकचलोमविलुंठनानि । संदंशितानि दशनैः कपिकच्छुघर्षैश्चैतद्धितं सकलमोहविनाशनाय ॥

अर्थ–धूम और अंजन नाक में तथा कान में फूंकना, पीडा देना, दुखाना, दाग देना, केश (बाल) लोम (रुआं) का उखाडना, दांतों से काटना, कौंछ की फली का लगाना इत्यादिक उपचार मोहनाश करने में अर्थात् मूर्च्छा दूर करने में हितकारी होते हैं ॥

स्विन्नामलकादिलेह

स्विन्नमामलकं पिष्ट्वा द्राक्षया सह संसृजेत् । विश्वभेषजसंयुक्तं मधुना सह लेहयेत् ॥ तेनास्य शाम्यते मूर्च्छा कासः श्वासस्तथैव च ॥

अर्थ-औटायके नरम करे हुए आंवलों को पीस दाख और सोंठ तथा सहत मिलायके चाटे तो मूर्च्छा, खांसी और श्वास ये शांत होवें ॥

पथ्यादिघृत मदजन्यमूर्च्छापर

पथ्याक्काथेन संसिद्धं घृतं धात्रीरसेन वा ।
सर्पिः कल्याणकं वापि मदमूर्च्छापहं पिबेत् ॥

अर्थ-हरड के काढे से अथवा आंवले के रस से सिद्ध करा हुआ घी अथवा कल्याण घृत पीवे तो यह मद और मूर्च्छा का नाश करे ॥

रस

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा पीडनं हितम् ॥

अर्थ-पीपल, सहत और पारा इन को एकत्र खरल करके सेवन करे तथा शीतल जल अंग पर छिडके तथा नेत्रों पर छिडका देना इत्यादिक पीडा हितकारी है ॥

ताम्रादिचूर्ण

ताम्रचूर्णसमोशीरं केसरं शीतवारिणा ।
पीतं मूर्च्छां द्रुतं हन्याद्वृक्षामिंद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ-लाल चंदन, खस और नागकेशर इन का चूर्ण करके शीतल जल के साथ पीवे तो शीघ्र मूर्च्छा का नाश करे जैसे वज्र वृक्ष का नाश करे ॥

शुंठ्यादिगुटी

शुंठीकणशताह्वानां साभयानां पलं पलम् ।
गुडस्य षट् पलान्येषां गुटिका भ्रमनाशिनी ॥

अर्थ-सोंठ, पीपल, सतावर और हरड इन प्रत्येक को चार २ तोले लेके चूर्ण करे और गुड २४ तोले मिलायके गोली बनावे. इस को सेवन करे तो भ्रम को निवारण करे ॥

मूर्च्छारोग में पथ्य

धूमोंजनं नावनरक्तमोक्षो दाहश्च सूचीपरितोदनानि । रोम्णां कचानामपि लुंचनानि नखांतपीडा दशनोपदंशः ॥ नासामुखद्वारमरुन्निरोधो विरेचनं छर्दनलंघनानि । क्रोधो भयं दुःखकरी च शय्या कथा विचित्रा सुमनोहराश्च ॥ छाया नभोम्भः शतधौतसर्पिर्मृदुश्च तिक्तानि च लाजमंडः । जीर्णा यवा लोहितशालयश्च कौंभं हविर्मुद्गसतीनयूषाः ॥ धन्वोद्भवा मांसरसाश्च रागाः सखांडवा गव्यपयः सिता च। पुराणकूष्मांडपटोलमोचहरीतकी दाडिमनारिकेरम् ॥ मधूकपुष्पाणि च तंदुलीयस्तुषोदकान्नानि लघूनि वापि । निरंतरं चंदनचर्चनं च कर्पूरनीरं हिमवालुका च ॥ अत्युच्चशब्दोद्भुतदर्शनानि गीतानि वाद्यान्यपि चोत्कटानि । श्रमः स्मृतिश्चिन्तनमात्मबोधो धैर्यं च मूर्च्छावति पथ्यवर्गः ॥

अर्थ–जल के छींट देना, स्नान, मणियों का और हारों का पहनना, शीतल लेप, पंखे की पवन, शीतल और सुगंधित पानवस्तु, धारागृह अर्थात् जिस में फव्वारे लगे हुए ऐसा मकान, चंद्रमा की किरण, धूमपान, अंजन, नस्य, रक्तमोक्ष, दागना, सुई का चुभाना, छोटे २ बाल और बडे २ बालों का उखाडना, नख (नाखून) को दबाना, दांतों से काटना, नाक, मुख इन से निकलनेवाली पवन का रोकना, दस्त, वमन का कराना, लंघन, क्रोध कराना, भय (डरपाना), दुःख देनेवाली सेज पर सुलाना, चित्रविचित्र और मनोहर कहानियों का कहना, छाया, वर्षा का जल, सौ वार धुला हुआ घी, नरम और तीखे खीलों के मंड [अथवा नरम और कडुए खीलों के मंड], पुराने जौं, लाल चावल, घडे का घी, मूंग और मटर इन का यूष, जंगली जीवों के मांस का रस, रागखांडव, गौ का दूध, मिश्री, पुराना पेठा, परवल, केला, हरड, अनार, नारियल, महुए के फूल, चौलाई, तुषोदक, हलके अन्न, नदीकांठ का जल, सपेद चंदन, कपूर, नेत्रबाला, शीतल बालू रेत, अत्यंत ऊंचे स्वर से पुकारके बोलना, अद्भुत पदार्थ का देखना, उत्तम गीत, उत्तम बाजे, उत्कट कर्मों का करना, परिश्रम का न करना, भूल का सोचना, आत्मज्ञान और धीरज का धारण करना इत्यादि मूर्छारोगी को पथ्य पदार्थों का वर्ग कहा है ॥

मूर्छाअपथ्य

तांबूलं पत्रशाकानि दंतघर्षणमातपम् । विरुद्धान्यन्नपानानि व्यवायं स्वेदनं कटु ॥ विण्मूत्रवेगरोधं च तक्रं मूर्च्छामयी त्यजेत् ॥

अर्थ–तांबूल (पान का बीडा), पत्तों का साग, दांतों का घिसना, धूप खाना, विरुद्ध अन्न पानों का सेवन, मैथुन करना, पसीने निकालना, चरपरे पदार्थों का सेवन, मलमूत्र आदि वेगों का रोकना (तृषा, निद्रा, इन के वेग को धारण करना), छाछ पीना, इतनी वस्तु मूर्छारोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मूर्छारोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पानात्ययपरमदपानाजीर्णपानविभ्रमनिदानम् ।

ये विषस्य गुणाः प्रोक्तास्तेपि मद्ये प्रतिष्ठिताः ।
तेन मिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रो मदात्ययः ॥

अर्थ–विष के जो गुण कहे हैं सोई गुण मद्य में हैं अर्थात् यही मद्य अविधि से सेवन करा भया घोर भयंकर मदात्यय रोग प्रगट करे हैं ॥

किंतु मद्यं स्वभावेन यथैवान्नं तथा स्मृतम् ।
अयुक्तियुक्तं रोगाय युक्तियुक्तं तथाऽमृतम् ॥

अर्थ–कोई ऐसी शंका करे कि विष के गुण मद्य में हैं इस से विषके समान मद्य को सेवन न करे इस विषय में कहते हैं मद्य यह स्वभाव से ही जैसे अन्न देहधारक है ऐसा ही है, परंतु वह मद्य अविधि से पीवे तौ रोगकारक होय है और विधि से सेवन करे तौ अमृत के समान गुण करे ॥

प्राणाः प्राणभृतामन्नं तदयुक्तं तु हंत्यसून् ।
विषं प्राणहरं यत्तु युक्तियुक्तं रसायनम् ॥

अर्थ–मनुष्य आदि सब जीव अन्न के आश्रय से रहते हैं इस से "प्राणाः अन्नं" अर्थात् प्राण ही अन्न है परंतु वह अन्न अप्रमाण सेवन करने से प्राण का नाश करता है. वस्तुतः विष प्राणनाशक है परंतु यथाशास्त्र सेवन करने से रसायन होता है ॥

मद्य का सेवनप्रकार

विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् । प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं

तस्य स्यादमृतं यथा ॥ स्निग्धैः सदन्नैर्मांसैश्च भक्ष्यैश्च सह सेवितम् । भवेदायुः प्रकर्षाय बलायोपचयाय च ॥

अर्थ–विधिपूर्वक प्रमाण के संग योग्य काल में, चिकना आदि अच्छे अन्न के संग, बलाबल के अनुसार, अत्यंत हर्ष के साथ, जो मद्यपान करे, उस को अमृत के तुल्य गुण करे इस के पीने की विधि मदात्यय के दूसरे श्लोक की टिप्पणी में लिख आये हैं तथा और ग्रन्थान्तरों में विधि तथा मात्रा काल का नियम लिखा है अर्थात् शुद्धशरीर होकर प्रातःकाल सोपदंश (अर्थात् मद्यपान करने के बाद जो चटनी आदि पदार्थ खाये जांय हैं सो) करके सहित सो दो पल पीवे, मध्यान्ह को चार पल पीवे, तदनंतर चिकना पदार्थ भोजन करे और सायंकाल को आठ पल पीवे इस जगह पल नाम जैपुरसाई १ टका पक्के को कहते हैं अथवा चिकने अन्न के साथ, मांस के साथ अथवा और भक्ष्य हैं उन के साथ मद्य को सेवन करे तौ मनुष्य की आयुष्य बढे, बल बढे तथा देह पुष्ट होय, इस श्लोक में "स्निग्धैः सदन्नैः" यह जो पद धरा सो स्निग्ध का एक उपलक्षण मात्र है अर्थात् जो मद्य से विपरीत गुण रखते हैं जैसे तीक्ष्णादि दश गुण हैं उन से विपरीत होय उस के साथ मद्य पीना चाहिये सो तीक्ष्णादि दशगुण ग्रन्थांतरों में लिखे हैं और विशेष देखना होय तो भावप्रकाश में देख लेवे, इस स्थल में ग्रन्थविस्तारभय से हम ने त्यागे हैं ॥

विधि से मद्य पीने के दूसरे गुण

काम्यता मनसस्तुष्टिस्तेजो विक्रम एव च ।
विधिवत्सेव्यमाने तु मद्ये सन्निहिता गुणाः ॥

अर्थ–मद्य को विधिपूर्वक पीने से सुन्दर स्वरूप, मन को संतोष, उत्साह, दूसरे को जीतने की सामर्थ्य इत्यादि हितकारक गुण होय हैं कही हुई विधि से विरुद्ध मद्यपान करने से मदात्यय रोग होय है सो मदात्यय तीन प्रकार का है, पूर्वमद मध्यमद और अन्त्यमद ॥

शुद्धकायः पिबेत्प्रातः सोपदंशं पलद्वयम् । मध्याह्ने द्विगुणं तच्च स्निग्धाहारेण पाययेत् ॥ प्रदोषेष्टपलं तद्वन्मात्रामद्य रसायने ॥

अर्थ–प्रातःकाल में दँतौन आदि शरीरशुद्धि करके ८ तोले मद्य सेवन करना. दुपहरे में स्निग्ध पदार्थों के साथ द्विगुणित अर्थात् सोलह तोले और सायंकाल में चौगुना अर्थात् ३२ तोले सेवन करने से रसायन होता है ॥

त्रिविधमद के लक्षण

बुद्धिस्मृतिप्रीतिकरः सुखश्च पानान्ननिद्रारतिवर्धनश्च ।
संपाठगीतस्वरवर्द्धनश्च प्रोक्तोऽतिरम्यः प्रथमो मदो हि ॥

अर्थ—बुद्धि, स्मरण और प्रीति इन को करे सुख करे, पान (पीना), अन्न, निद्रा और रति इन को बढावे, सुन्दर पाठ और गीत गाने को बढावे, ऐसा प्रथम मद अति रमणीय कहा है * शंका—क्यौंजी मद तौ मन में विकार उत्पन्न करे है फिर आप इस को रमणीय कैसे कहते हो? * उत्तर—आप ने कहा सो ठीक है परंतु दुःख को दूर करने से इस को रमणीयता है, इसी कारण सुश्रुत ने हर्ष को मन के विकारों में कहा है ॥

मध्यममद के लक्षण

अव्यक्तबुद्धिस्मृतिवाग्विचेष्टः सोन्मत्तलीलाकृतिरप्रशांतः ।
आलस्यनिद्राभिहतो मुहुश्च मध्येन मत्तः पुरुषो मदेन ॥

अर्थ—मध्यम मद से मतवाले पुरुष की बुद्धि, स्मरण और वाणी यथार्थ नहीं होय, विरुद्ध चेष्टा करे और बावले की सी चेष्टा करे, प्रचंड हो जाय, वारंवार आलस और निद्रा से पीडित हो जाय ॥

तृतीयमद के लक्षण

गच्छेदगम्यां न गुरून्न मन्येत्खादेदभक्ष्याणि च नष्टसंज्ञः ।
ब्रूयाच्च गुह्यानि हृदि स्थितानि मदे तृतीये पुरुषोऽस्वतंत्रः ॥

अर्थ—तीसरे मद से पुरुष मद के स्वाधीन होकर अगम्या (गुरु की स्त्री आदि) से गमन करे, बडों का तिरस्कार करे, जो वस्तु खाने के योग्य नहीं है उस को खाय, संज्ञा जाती रहे और जो गुप्त बात हृदय में है उन को कहने लगे ॥

चतुर्थमद लक्षण

चतुर्थे तु मदे मूढो भग्नदारुविनिष्क्रियः । कार्याकार्यविभागज्ञो मृतादप्यपरो मृतः ॥ को मदं तादृशं गच्छेदुन्मादमिव चापरम् । बहुदोषमिवारूढः कांतारं स्ववशः कृती ॥

अर्थ—चतुर्थ मद से मनुष्य मूढ होकर टूटे वृक्ष के समान क्रियारहित होय, कार्य (करने योग्य), अकार्य (नहीं करने योग्य) इन को न समझे, वह पुरुष मरे से भी अधिक मरा भया है कौन ऐसा स्ववश अथवा सुकृती पुरुष ऐसे निंद्य मद (अमल)का

सहनशील होय है किंतु कोई नहीं होय कैसे कि जैसे सिंह व्याघ्रादि हिंसक पशु जिस वन में बहुत हैं ऐसे निर्जन वन में मार्ग में कौन चतुर मनुष्य जायगा. * **शंका**–चरक, विदेह, वाग्भट आदि आचार्यों ने तौ चतुर्थ मद कहा ही नहीं है और सुश्रुत ने कहा है इन में विरोध क्यौं है ? * **उत्तर**–चरक में जो दूसरे और तीसरे में अन्तर कहा है सोई सुश्रुत ने तृतीयमद को मानकर उस के लक्षण कहे हैं और जो चरक में तृतीय मद के लक्षण कहे हैं सो सुश्रुत ने चतुर्थ मद के लक्षण कहे हैं ऐसे विरोध नहीं है वास्तव में तीन ही मद हैं. * **शंका**–क्योंजी एक मद्य से ३ प्रकार के मद होय हैं इस में क्या कारण है ? * **उत्तर**–मद्य यह अग्नि के समान है जैसे अग्नि में सुवर्ण (सोना) तपाने से उत्तम, मध्यम, अधम की परिक्षा होय है. ऐसे ही मद्य भी सतोगुण, रजोगुण, तमोगुणवाले पुरुषों की प्रकृतिसूचक है अर्थात् सतोगुणवाले पुरुष को प्रथम मद, रजोगुणवाले पुरुष को दूसरा मद, तमोगुणवाले पुरुष को तीसरा मद प्राप्त होय है. सो चरक में लिखा है ॥

अविधि से सेवित मद्य के अन्य विकारों को कहता हूं

निर्भुक्तमेकान्तत एव मद्यं निषेव्यमाणं मनुजेन नित्यम् ।
आपादयेत्कष्टतमान्विकारानापादयेच्चापि शरीरभेदम् ॥

अर्थ–जिस पुरुष ने अन्नरहित निरंतर मद्यपान करा होय, वे अत्यंत दुःखदायक विकार (पानात्ययादिक) उत्पन्न करे है और शरीर का विनाश करे है ॥

अन्न के साथ मद्यपान करने के विकार

क्रुद्धेन भीतेन पिपासितेन शोकाभितप्तेन बुभुक्षितेन । व्यायाममभाराध्वपरिक्षतेन वेगावरोधाभिहतेन चापि ॥ अत्यम्लभक्ष्यावततोदरेण साजीर्णभुक्तेन तथाऽबलेन । उष्णाभितप्तेन च सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान्विकारान् ॥

अर्थ–क्रोधयुक्त, भय से पीडित, प्यासा, शोकवान्, क्षुधायुक्त, दंड कसरत और भार से जो क्षीण हो गया होय, मलमूत्र आदि वेग से पीडित हो, अत्यंत अम्लरस खाने से जिस का पेट भर रहा होय, अजीर्ण में भोजन करनेवाले पुरुष के, निर्बल पुरुष के, गरमी से तपायमान ऐसे मनुष्य के मद्य सेवन करने से अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ॥

उन विकारों को कहते हैं

पानात्ययं परमदं पानाजीर्णमथापि वा ।
पानविभ्रममुग्रं च तेषां वक्ष्यामि लक्षणम् ॥

अर्थ–पानात्यय, परमद, पानाजीर्ण और पानविभ्रम इत्यादिक भयंकर विकार होते हैं उन के लक्षण कहता हूं॥

वातादिसंबंधमदात्ययलक्षण

हिक्काश्वासशिरःकंपपार्श्वशूलप्रजागरैः।
विद्याद्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययम्॥

अर्थ–हिचकी, श्वास, मस्तक का कंप होना, पसवाडों में पीडा, निद्रा का नाश और अत्यंत बकवाद ये लक्षण जिस में होंय उस को वातप्रधान मदात्यय जानना॥

पित्तजन्यमदात्ययनिदान

तृष्णादाहज्वरस्वेदमोहातीसारविभ्रमैः।
विद्याद्धरितवर्णस्य पित्तप्रायं मदात्ययम्॥

अर्थ–प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतीसार, विभ्रम (कुछ कुछ ज्ञान होय), देह का वर्ण हरा होय इन लक्षणों से पित्तप्रधान मदात्यय जानना॥

कफमदात्ययनिदान

छर्द्यरोचकहृल्लासतन्द्रास्तैमित्यगौरवैः।
विद्याच्छीतपरीतस्य कफप्रायं मदात्ययम्॥

अर्थ–वमन (रद्द), अन्न में अरुचि, खाली रद्द (ओकारी), तन्द्रा, देह गीली और भारी और शीत लगे, इन लक्षणों से कफप्रधान मदात्यय जानना॥

त्रिदोषमदात्ययनिदान

ज्ञेयस्त्रिदोषजश्चापि सर्वलिंगैर्मदात्ययः॥

अर्थ–जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों उस को सान्निपातप्रधान मदात्यय जानना॥

परमदलक्षण

श्लेष्मोच्छ्रयोऽङ्गगुरुता मधुरास्यता च विण्मूत्रसक्तिरथ तंद्रिररोचकश्च। लिंगं परस्य तु मदस्य वदंति तज्ज्ञास्तृष्णा रुजा शिरसि संधिषु चातिभेदः॥

अर्थ–कफ का कोप (यह नासास्रावादिक जानना), देह का जड होना, मुख में मिठास, मलमूत्र का अवरोध, तन्द्रा, अरुचि, प्यास, मस्तक में पीडा और संधि में कुठारी से तोडने सरीखी पीडा होय, ये परमद के लक्षण जानने॥

वातमदात्यय में सौवर्चलादि

मद्यं सौवर्चलं व्योषयुक्तं किंचिज्जलान्वितम् ।
जीर्णमद्याय दातव्यं वातपानात्ययापहम् ॥

अर्थ-मद्य (दारु), संचर निमक और त्रिकुटे का चूर्ण इन को एकत्र करके थोडासा जल मिलायके जिस के मद्य पिया हुआ जीर्ण हो गया हो उस को देवे तो वातपानात्यय का नाश होय ॥

सूक्तश्रृंग्यादि

सूक्तं सौवर्चलं श्रृंगीत्र्यूषणार्द्रकदीपकैः ।
मद्यं पीत्वा जयत्युग्रं पवनोत्थं मदात्ययम् ॥

अर्थ-कांजी, संचर निमक, कांकडासिंगी, त्रिकुटा, अदरख और चित्रक इन के साथ मद्य पीवे तो वातपानात्यय को नाश करे ॥

आम्लस्निग्धादि

आम्लं स्निग्धोष्णलवणं रसा जांगलजा हिताः ।
पानकानि च मद्यानि हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ-खटाई, चिकने, गरम, निमक, जांगलदेशज जीवों का मांस, पने और मद्य ये बातमदात्यय को दूर करते हैं ॥

पित्तमदात्यय

पित्तपानात्यये येयं वटश्रृंगं हिमांबुना ।
सशर्करं पुनर्मद्यं हन्युर्वातमदात्ययम् ॥

अर्थ-पित्त के पानात्यय रोग में वड के कोपल को पीस शीतल जल में छान पीवे तथा मिश्री मिलाय दारु पीवे तो वातमदात्यय दूर होय ॥

क्षुद्रामलकादिपान

क्षुद्रामलकखर्जूरपरूषकहिमं पिबेत् ।
सिताविमिश्रितं पीतं पानात्ययविकारनुत् ॥

अर्थ-कटेरी, आमले, छुहारे, फालसे इन को शीतल जल में छान मिश्री मिलायके पीवे तो सर्व पानात्ययों को दूर करे ॥

सामान्य

पित्तोत्थे तु हितं मद्यं मधुरौषधिसाधितम् ।
उल्लिखेदथवा मद्यं पीत्वेक्षुरससंयुतम् ॥

अर्थ–पित्तजन्य मदात्यय में मिष्ट औषधों करके बना मद्य पीना हितकारी है अथवा ईख के रस को मिलायके मद्य पीवे फिर उस को उलटी कर देवे ॥

कफमदात्ययसामान्य

पानात्यये कफोत्थे तु तत्पीत्वोल्लेखनं चरेत् ।
यथाबलं लंघनं च दीपनीयौषधानि च ॥

अर्थ–कफ के पानात्यय में मद्य पीकर वमन कर देवे तथा बलाबल के अनुसार लंघन करावे तथा दीपनीय औषधों को सेवन करे ॥

अष्टांगलवण

सौवर्चलमजाजी च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् । त्वगेलामरिचा-
र्धांशं शर्कराभागयोजितम् ॥ एतल्लवणमष्टांगमग्निसंदीपनं परम्।
मदात्यये कफोत्थे तु दद्यात्स्रोतोविशोधनम् ॥

अर्थ–संचर निमक, जीरा, तिंतडीक, अमलवेत, तज, इलायची और काली मिरच प्रत्येक तोले २ लेवे और मिश्री २ तोले ले. यह अष्टांगलवण अग्नि को दीपन करे इस को कफमदात्यय में स्रोतःशुद्धि के लिये देवे ॥

सुपारी के मदपर

पूगान्मदः प्रशमयत्यचिरेण जंतोराघ्राय शंखरजसः प्रबलस्य
गंधम् । पानेन वा शिशिरपुष्करणीजलस्य संसेवितैरतिहितै-
र्व्यजनानिलैश्च ॥

अर्थ–सुपारी के खाने से प्रगट मद छोटे शंख के चूर्ण की प्रबल धूनी के सूंघने से नष्ट होवे अथवा शीतल पुष्करणी के जल पीने से अथवा अत्यंत हितकारी पंखे की पवन करके तत्काल शांत होय ॥

दूसरा प्रकार

अवघ्राणेन धूमस्य सितालवणभक्षणात् ।
शर्करा केवला हंति दुःसहां पूगजां रुजम् ॥

अर्थ–सुपारी के मदपर नासिका द्वारा धूंआ पीवे अथवा मिश्री अथवा निमक खाय अथवा केवल मिश्री के खाने से सुपारी का दुःसह मद दूर होवे ॥

कोद्रवधत्तूर

कूष्मांडरसः सगुडः शमयति मदमाशु कोद्रवजः ।
धत्तूरजं च दुग्धं सशर्करं पानयोगेन ॥

अर्थ–पेठे के रस में गुड डालके पीवे तो कोदों अन्न का मद नष्ट होवे और धतूरे के मदपर दूध में मिश्री मिलायके पीवे तो धतूरे का मद तत्काल नष्ट होय ॥

जायफल के मदपर

जातीफलेषु नवनीतसिताप्रयुक्तां पत्रीं तथा मसृणचंदनशर्करां वा ।
रंभाजलेन मदिरां विषमुष्टिगव्यं हन्यान्मदं सकलशीघ्रमिदं प्रयुक्तम् ॥

अर्थ–जायफल के उन्माद पर मक्खन, मिश्री और जावित्री खाय अथवा मक्खन, चंदन और मिश्री खाने को देवे तथा मद्य (दारू) के मद में केले का निकाला हुआ जल पिलावे और कुचले के नसे दूर करने को गौ का मक्खन देवे तो बुद्धिगत यह मद तत्काल दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

जातीफलमदं शीघ्रं हंति पथ्या निषेविता ।
शीततोयावगाहश्च शर्करा दधियोजिता ॥

अर्थ–जायफल के मदपर हरड भक्षण करे तो मद शीघ्र दूर हो अथवा शीतल जल से स्नान करे अथवा दही बूरा मिलायके भक्षण करे तो जायफल का मद शीघ्र दूर हो ॥

कज्जलीरस

धात्री स्वरसनिपीता रसगंधककज्जली सितासहिता ।
हरति मदात्ययरोगान् गरुत्मानिवोरगान् सहसा ॥

अर्थ–आवले के रस में पारे और गंधक की कजली करके देय ऊपर से मिश्री का सरबत पीवे तो मदात्यय रोग का नाश करे. जैसे गरुड सर्प का नाश करे है ॥

सामान्य

सर्वजे सर्वमेवेदं प्रयोक्तव्यं चिकित्सितम् ।
आभिः क्रियाभिः सिद्धाभिः शांतिं याति मदात्ययः ॥

अर्थ—त्रिदोषजन्य मदात्यय पर ये पूर्वोक्त सर्व कर्म करे. ये सर्व क्रिया सिद्ध होने से मदात्यय शांति को प्राप्त होवे ॥

पानाजीर्ण के लक्षण

आध्मानमुग्रमथवोद्गिरणं विदाहः पाने त्वजीर्णमुपगच्छति लक्षणानि । ज्ञेयानि तत्र भिषजा सुविनिश्चितानि पित्तप्रकोपजनितानि च कारणानि ॥

अर्थ—अत्यंत पेट का फूलना, वमन अथवा डकार का आना, जलन होना, ये लक्षण जब मद्याजीर्ण होय हैं तब होते हैं. इस का कारण पित्तप्रकोप है ऐसा वैद्यों ने जानना ॥

पानविभ्रमलक्षण

हृद्गात्रतोदकफसंस्रवकंठधूममूर्च्छावमिज्वरशिरोरुजनप्रदाहाः । द्वेषः सुरान्नविकृतेष्वपि तेषु तेषु तं पानविभ्रममुशंत्यखिलेन धीराः॥

अर्थ—हृदय और गात्र इन में सुई चुभाने की सी पीडा होय, कफ का स्राव होय, कंठ से धूआंसा निकलने की सी पीडा, मूर्च्छा, वमन, ज्वर, सिर में पीडा, मुख कफ से लिहसासा होय. अनेक प्रकार की मैरेय, पैष्टिक इत्यादिक सुराविकृति और लड्डू, पेडा आदि अन्नविकृति इन में द्वेष होय, ये सर्व लक्षण से इस रोग को पानविभ्रम ऐसे कहते हैं. सन्निपात के अंतर्गत होने से ये परमदादिक तीनों चरक ने नहीं कहे और पूर्वोक्त मदात्यय के लक्षणों से विलक्षण होने से सुश्रुत ने उक्त त्रिदोषज मदात्यय को पृथक् कहा है ॥

असाध्य लक्षण

हीनोत्तरौष्ठमतिशीतममन्ददाहं तैलप्रभास्यमतिपानहतं त्यजेत्तु । जिव्हौष्ठदंतमसितं त्वथवापि नीलं पीते च यस्य नयने रुधिरप्रभे वा ॥

अर्थ—ऊपर के होठ से नीचे का होठ कुछ लम्बा होय, देह के बाहर अति शीत लगे और भीतर अत्यन्त दाह होय, तेल से लिप्त सदृश मुख हो, जीभ, होठ, दांत ये काले अथवा नीले होय जाय, नेत्र पीले अथवा रुधिर के समान लाल होय ऐसा अतिपान से अर्थात् अतिमद्य पीने से नष्ट मनुष्य को वैद्य त्याग देय. (चरक में) ध्वंसक, विक्षेपक दो मद्यविकार और कहे हैं ॥

पानोपद्रव

हिक्काज्वरौ वमथुवेपथुपार्श्वशूलाः
कासभ्रमावपि च पानहतं त्यजेत्तम् ॥

अर्थ–हिचकी, ज्वर, वमन, कम्प, पसवाडों में पीडा होय, खांसी, भ्रम ये उपद्रव जिस के होय उस को वैद्य त्याग दे परन्तु जैज्जट आचारी कहते हैं कि असाध्य लक्षण से पृथक् पाठ होने से यह लक्षण होने से रोगी कृच्छ्रसाध्य जानना, असाध्य न जानना ॥

मथिततैल

मथितं गोदधिसहितं तैलं कर्पूरसंमिश्रम् ।
आस्वाद्य पीतमाशु क्षपयति पानात्ययं रोगम् ॥

अर्थ–गौ का दही और तेल दोनों को एकत्र करके मथ लेवे. फिर इस में कपूर मिलायके धीरे २ स्वाद ले लेकर चाटे तो पानात्यय रोग का तत्काल नाश करे ॥

मद्योपशम

मद्यं पीत्वा यदि वा तत्क्षणमेव लेह्या शर्करा सघृता ।
मदयति न जातु मद्यं मनागपि प्रथितवीर्यमपि ॥

अर्थ–मद्य पीकर फिर घी मिश्री मिलायके चाटे तो चढी हुई भी दारु हो तथापि कदाचित् उस का मद नहीं आवे ॥

कृष्णादिपने

कृष्णाधान्यपरूषकामरतृटीजीरैः सनागोषणैः संपन्नंससितं मधूकसहितं युक्तं दधित्थद्रवैः । कर्पूरेण सुवासितं मदगदान्पीतं जयेत् पानकं हृद्यं रोचनमग्निदीपनमिदं पूर्वैर्भिषग्भिः स्मृतम् ॥

अर्थ–पीपल, धनिया, फालसा, देवदारु, इलायची, जीरा, नागकेशर, काली मिरच, मिश्री, मुलहटी और कैथ का रस इन का पना करके उस को कपूर से वासित करके पीवे तो यह पना हृदय को प्रिय, रोचक, दीपक और मदनाशक है इस प्रकार प्राचीन वैद्यों ने कहा है ॥

सर्वजमदात्यय में त्रिफलादिपान

मधुना हंत्युपयुक्ता त्रिफला रात्रौ गुडार्द्रकं प्रातः ।
सप्ताहात्पथ्यभुजो मदमूर्च्छाकामलोन्मादान् ॥

अर्थ-त्रिफले के चूर्ण को सहत में मिलायके रात्रि के समय खाय और अदरख गुड प्रातःकाल खावे इस प्रकार सात दिन खाय और पथ्य भोजन करे तो यह मद, मूर्छा और कामला इन को जीते ॥

दुःस्पर्शादियोग

दुःस्पर्शेन समुस्तेन मस्तपर्पटकेन वा । जलमुस्तैः शृतं वापि दद्याद्दोषविपाचनम् ॥ एतदेव च पानीयं सर्वत्रापि मदात्यये । निरंतरं पीयमानं पिपासाज्वरनाशनम् ॥

अर्थ-धमासे और नागरमोथे का काढा अथवा नागरमोथा और पित्तपापडा इन का काढा अथवा केवल नागरमोथे का काढा दोषों के पचाने को देवे और जल पीने के ऐवज में इसी काढे को मदात्यय रोग में पिलावे. इस को निरंतर पीने से प्यास और ज्वर इन का नाश होय ॥

चव्यादिचूर्ण

**चव्यं सौवर्चलं हिंगु पूरकं विश्वभेषजम् ।
चूर्णं मद्येन पातव्यं पानात्ययरुजापहम् ॥**

अर्थ-चव्य, संचर निमक, हींग, बिजोरा और सोंठ इन का चूर्ण मद्य के साथ पीवे तो पानात्यय व्याधि को नाश करे ॥

शतावरीपुनर्नवाघृत

**शतावरीरसक्षीरयष्टीकल्कैः शृतं घृतम् ।
पुनर्नवाक्काथपयो पानात्ययमपोहति ॥**

अर्थ-शतावर का काढा दूध और मुलहटी का चूर्ण इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी अथवा पुनर्नवा के काढे के साथ औटे हुए दूध को पीवे तो पानात्यय रोग दूर हो ॥

माषघृत

**कट्फलमुस्तगुडूचीमाषैः क्रमवर्धितैश्च तत्सर्वैः ।
घृतमर्दितैर्माषघृतं हन्याद्गंधं सुराभवं सपदि ॥**

अर्थ-कायफल १, नागरमोथा २, गिलोय ३ और उडद ४ भाग इस प्रकार सब को लेकर घी में खरल करे तो इसे माषघृत कहते हैं यह मद्य की दुर्गंध को दूर करनेवाला है ॥

सामान्यशास्त्रार्थ

अहानि सप्त चाष्टौ वा नृणां पानात्ययः स्मृतः । पानं हि मज्ज-
ते जीर्णमत ऊर्ध्वं विमार्गगम् ॥ पानाजीर्णविनाशाय कुर्यात्क-
फहरं विधिम् ॥

अर्थ—मनुष्य को पानात्यय सात दिन अथवा आठ दिन होता है. आठ दिन के बाद पानाजीर्ण होकर अंगों में प्रवेश होवे और कुत्सित मार्ग में जाता है. उस को पानाजीर्ण कहते हैं. इस पानाजीर्ण के दूर करने को कफहरणकारी क्रिया करनी चाहिये ॥

खर्जूरादिमंथ

मंथः खर्जूरमृद्वीकावृक्षाम्लाम्लीकदाडिमैः ।
परूषकैः सामलकैर्युक्तो मद्यविकारनुत् ॥

अर्थ—खजूर, दाख, अमलवेत, जलवेत, अनारदाना, फालसा और आवले इन से बना हुआ मंथ सरबत के समान होता है. यह मद्यविकारों को नाश करे ॥

मदात्ययपथ्य

संशोधनं संयमनं स्वपनं लंघनं श्रमः । संवत्सरसमुत्पन्नाः
शालयः षष्टिका यवाः ॥ मुद्गाश्च माषगोधूमा लावातित्तिरका-
दयः । वेसवारो विचित्रान्नं हृद्यं मद्यं पयः सिता ॥ तंदुलीयं
पटोलं च मातुलुंगं परूषकम् । खर्जूरं दाडिमं धात्री नारिकेरं
च गोस्तनी ॥ सर्पिः पुराणं कर्पूरं प्रतीरं शिशिरोनिलः । धारा-
गृहं चन्द्रपादा मणयो मित्रसंगमः ॥ क्षौमांबरं प्रियाश्लेषो गीतं
वादित्रमुद्धतम् । शीतांबु चंदनं स्नानं सेव्यमेतन्मदात्यये ॥

अर्थ—मदात्यय रोग होने से उस को दस्त करावे, वेगों का नियमन, निद्रा, लंघन, भ्रम, (श्रम), एक वर्ष के पुराने चावल, सांठी चावल, जौ, मूंग, उडद, गेहूं, लवापक्षी, तीतरआदि [मटर, रागखांडव, काला हिरण, बकरा, मुर्गा, मोर, और शशा इन का मांस], वेसवार (गरम मसाला), चित्र विचित्र अन्न, प्रियमद्य, दूध, खांड, चौलाई, परवल, बिजोरा, फालसे, खिजूर (छुहारे), अनार, आंवले, नारियल, मुनक्का दाख, पुराना घी, कपूर, नदी सरोवर आदि का तट, शीतल, पवन, फव्वारेवाला घर, चंद्रमा की चांदनी, मणियों का धारण, इष्टमित्रों से मिलाप,

रेसमी वस्त्रों का धारण, प्यारी स्त्री का आलिंगन करना, गीत गाना, अत्यंत बाजे बजाना, शीतल जल, चंदन और स्नान ये उपचार करे, ये मदात्ययनाशक हैं ॥

मदात्यय अपथ्य

स्वेदोऽञ्जनं धूमपानं नावनं दंतघर्षणम् ।
तांबूलं चाप्यपथ्यं स्यान्मदात्ययविकारिणाम् ॥

अर्थ–पसीने निकालना, अंजन, धूमपान, नस्य, दातों का घिसना, बीडा चवाना ये सब मदात्ययरोगवाले को अपथ्य जानना ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे पानात्ययरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

दाहरोगकर्मविपाकः।

पुनरग्नौ ष्ठीवति तं कपिलनामग्रहो गृह्णाति । तत्क्षणाज्ज्वरशूलसर्वांगदाहपीतनयनश्च भवति ॥ बलिं च निशि चतुष्पथे पिष्टलाजंपिण्याकरुधिरतिलाश्वगंधपुष्पैर्मिश्रेण दद्यात् । गृह्णीष्व च बलिं चेमं कपिलाख्यमहाग्रह । आतुरस्य सुखं सिद्धिं प्रयच्छ त्वं महाबल ॥

अर्थ–जो प्राणी अग्नि में थूकता है उस को कपिल नामक ग्रह पीडा करे है तथा तत्क्षण ज्वर, शूल, सर्वांग में दाह और नेत्रों में पीलापन ये उपद्रव होते हैं. उन उपद्रवों के दूर करने को चौराहे में रात्रि के समय चून, खील, खल, रुधिर, तिल, असगंध और फूल इन को एकत्र करके 'गृण्हीष्व च बलिं चेमम्' इस मंत्र करके बलिदान देवे तो दाहरोग शांत होवे ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

तनौ भवति भूपुत्रो रंध्रे भवति भास्करः ।
जन्मकाले यदा यस्य स दाहज्वरवान्भवेत् ॥

अर्थ--जिस के जन्मलग्न में मंगल और अष्टम स्थान में सूर्य बैठा होय वह प्राणी दाह और ज्वररोगी होता है ॥

दाहनिदान

त्वचं प्राप्तः समानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः ।
दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजम् ॥

अर्थ—दाहरोग सात प्रकार का है. तिस में प्रथम मद्यजन्य दाह के लक्षण कहते हैं. मद्यपान करने से कुपित भया जो पित्त उस पित्त की उष्णता पित्तरक्त को बढाय भयंकर दाहरोग उत्पन्न करे. इस में पित्त के समान औषध करे ॥

सामान्यचिकित्सा

उत्तुंगकुचसंसर्गवीणानां हरिणीदृशाम् । गायनं सुकुमारीणां दाहमुत्सादयेद् द्रुतम् ॥ रसौषधसमुद्भूते तापेपि सकले हितम् ॥

अर्थ—उठे हुए कठोर कुचों का संबंध जिस वीणा को हैं उस वीणा को लेकर गान करनेवाली सुकुमार स्त्री के गान करके, रस और औषध से उत्पन्न हुआ सर्व प्रकार का ताप दूर होय ॥

कोलामलकयुक्तैर्वा धान्याम्लैरपि बुद्धिमान् । छादयेत्तस्य सर्वांगमारनालार्द्रवाससा॥लामज्जकेन युक्तेन चंदनेनानुलेपयेत् । चंदनांबुकणस्यंदितालवृंतोपवीजनम् ॥

अर्थ—बेर, आवले इनकरके युक्त खटाई को अंग में लगाने से अथवा इस खटाई को वस्त्र में लगायके उस वस्त्र से सब देह को लपेट देवे अथवा कांजी में भीगे हुए कपडे से सब देह को ढक देवे अथवा रोहिस तृण और चंदन इस का लेप देह में करे अथवा चंदन के जल को छिडकके उस पंखे की पवन करे तो दाहरोग दूर हो ॥

दूसरा प्रकार

सुप्याद्दाहार्दितोंभोजकदलीदलसंस्तरे । परिषेकावगाहौ च व्यजनानां च सेवनम् ॥ शस्यते शिशिरं तोयं दाहतृष्णोपशांतये ॥

अर्थ—दाहपीडित मनुष्य को कमलके केले के पत्तों की शय्या बनाकर उस पर शयन करावे अंगों में जल छिडके, जल में गोते मारे, पंखे की पवन करावे तथा शीतल जल पीवे तो दाह और तृषारोग शांत होवे ॥

रक्तजदाहलक्षण

कृत्स्नदेहानुगं रक्तमुद्रिक्तं दहति ध्रुवम् । संचूष्यते तृष्यते वा ताम्राभस्ताम्रलोचनः ॥ लोहगंधांगनयनो वह्निनैवावकीर्यते । पित्तज्वरसमः पित्तात्स चाप्यस्य विधिः स्मृतः ॥

अर्थ–सर्व देह का रुधिर कुपित होकर अत्यन्त दाह करे और वह रोगी अग्नि के समीप रहने से जैसा तपे है ऐसा तपे, प्यासयुक्त ताम्र के रंगसदृश देह का रंग होय, और नेत्र भी लाल होय, तथा मुख से और देह से तप्त लोहेपर जल डालने की सी गंध आवे और अंगों में मानों किसी ने अग्नि लगाय दीनी ऐसी वेदना होय, पित्त से जो दाह होय उस में पित्तज्वर के से लक्षण होते हैं. उसपर पित्तज्वर की चिकित्सा करनी चाहिये. पित्तज्वर में और पित्त के दाह में इतना अन्तर है कि पित्तज्वर में अग्नि और आमाशय का दुष्ट होना होय है और पित्त के दाह में नहीं होय और सब लक्षण होते हैं ॥

रसादिगुटी

रसबलिघनसारचंदनानां सनलदसेव्यपयोदजीवनानाम् ।
अपहरति गुटी मुखस्थितेयं सकलसमुत्थितदाहमाश्रयेत्ताम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, कपूर, चंदन, खस, नागरमोथा और घी इन की गोली बनायके मुख में रखे. तो त्रिदोषजन्य दाह को नाश करे ॥

चंद्रकलारस

गगनदरदयुक्तं शुद्धसूतं च गंधं प्रहरमधुसुपिष्टं वल्लयुग्मं नरो-
द्यात् । ज्वरहरगदसिंहः शृंगवेरोदकेन प्रथमजनितदाहं तक्र-
भक्तं च भोज्यम् ॥

अर्थ–अभ्रक भस्म, हिंगलू, पारा और गंधक इन सब को एकत्र कर सहत में १ प्रहर खरल करे फिर इस में से दो वल्ल के अनुमान अदरख के रस से चाटे तो वादी के कोप से हुआ दाह शांत हो. इस प्राणी को छाछ भात पथ्य में देवे. यह ज्वरनाशक भी है इस रस को गदसिंहरस कहते हैं ॥

तृष्णानिरोधजदाहलक्षण

तृष्णानिरोधादब्धातौ क्षीणे तेजःसमुद्धतम् । सबाह्याभ्यंतरं देहं
प्रदहेन्मंदचेतसः ॥ संशुष्कगलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृष्य वेपते ॥

अर्थ–प्यास के रोकने से जलरूप धातु क्षीण होकर तेज कहिये पित्त की गरमी को बढावे तब वह गरमी देह के बाहर और भीतर दाह करे, इस दाह से रोगी बेसुध होय और गला, तालू, होठ यह अत्यंत सूखें और जीभ को बाहर काढ दे, कांपे ॥

तृष्णानिरोधजदाह

सशर्करं सेंदुशैलं शीतमंभः पिबेन्नरः ।
तृष्णानिरोधजं दाहं हंति तोयमिवानिलम् ॥

अर्थ–मिश्री, कपूर, शिलाजीत इन का चूर्ण शीतल जल में मिलायके पीवे तो तृषा के निरोध से उत्पन्न हुए दाह का नाश करता है जैसे पानी अग्नि का नाश करता है ॥

यवादिमंथ

पाचितैः शीतनीरेण सघृतैर्यवसक्तुभिः ।
नातिसांद्रद्रवैर्मंथस्तृषादाहार्तिपित्तहा ॥

अर्थ–जौ के सत्तू को शीतल जल और घी में मिलाय के पचावे फिर इस को बहुत गाढा न होवे ऐसे मंथ करके पीवे तो तृषा, दाह और पित्त को दूर करे ॥

मृतसंजीवनीगुटी

यष्टीमधुलवंगं च शिलाकल्कं त्रुटिस्तथा । सहस्रभावनाः कार्या नवतंदुलवारिणा ॥ याममात्रं दृढं मर्द्यं वटी कोलसमा स्मृता । कृष्णकार्पासनीरेण तृष्णादाहज्वरान् जयेत् ॥ मूर्च्छाद्यमुग्ररोगं च वातं पित्तं च नाशयेत् । मृतसंजीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता ॥

अर्थ–मुलहटी, लौंग, शिलाजीत और इलायची इन के चूर्ण को नवीन चांवलों के धोवन की हजार भावना देवे फिर एक प्रहर उत्तम खरल करके बेर के बराबर गोली बनावे फिर इस गोली को काले कपास के जल में मिलायके सेवन करे तो तृषा, दाह, ज्वर, मूर्छादि उग्ररोग तथा वातपित्त इत्यादि रोगों को नाश करे इस को मृतसंजीवनी गोली श्रेष्ठ पुरुषों ने कही है ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह

असृजः पूर्णकोष्ठस्य दाहोन्यः स्यात्सुदुस्तरः ॥

अर्थ–शस्त्र कहिये तलवार आदि के लगने से प्रगट रुधिर उस रुधिर से कोष्ठ कहिये हृदय भर जाय तब दाह अत्यन्त दुःसह प्रगट होय ॥

रक्तपूर्णकोष्ठजदाह

धान्याकधात्रीवासानां द्राक्षापर्पटयोर्हिमः ।
रक्तपित्तं ज्वरं दाहं तृष्णां शोषं च नाशयेत् ॥

अर्थ–धनिया, आवले, अडूसा, दाख और पित्तपापडा इन का हिम रक्तपित्त, ज्वर, दाह, तृषा और शोष इन को नाश करे ॥

दूसरा प्रकार

पीत्वा वेणुत्वचः क्वाथं सक्षौद्रं शिशिरं नरः।
रक्तसंपूर्णकोष्ठोत्थदाहं जयति दुस्तरम्॥

अर्थ–बांस की त्वचा का काढा करके शीतल करे और उस में सहत डालके पीवे तो रुधिर से संपूर्ण कष्ट से उत्पन्न घोर दाह दूर होवे॥

दशसारचूर्ण

यष्टीधात्रीफलाद्राक्षाएलाचंदनवालकम्। मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत्समम्॥ सर्वतुल्या सिता योज्या पलार्धं भक्षयेत्सदा। दशसारमिदं ख्यातं सर्वपित्तविकारनुत॥

अर्थ–मुलहटी, आवला, मुनक्का, इलायची, चंदन, नेत्रवाला, महुआ के फूल, खजूर, अनारदाना इन को समभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस चूर्ण के बराबर मिश्री मिलाय सब को मिलाय दो तोले के प्रमाण सेवन करे इस को **दशसार** चूर्ण कहते हैं. यह सर्व पित्तविकारों को दूर करे॥

धातुक्षयजन्यदाह

धातुक्षयोत्थो यो दाहस्तेन मूर्च्छातृषान्वितः।
क्षामस्वरः क्रियाहीनः स सीदेद्भृशपीडितः॥

अर्थ–धातु के क्षय होने से जो दाह होय उस से रोगी मूर्च्छा प्यास इन से युक्त होय, स्वरभंग और चेष्टाहीन होय और इस दाह से पीडित होकर यदि चिकित्सा न करावे तौ वह रोगी मरण को प्राप्त होय॥

खर्जूरादिचूर्ण

खर्जूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु। एलामधुकपाषाणचंदनैर्वारुबीजकम्॥ धान्यकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्योष्ठिवारिणा। अंगदाहं लिंगदाहं गुदजं क्षीणशुक्रजम्॥ शर्कराश्मरिशूलघ्नं वृष्यं बलकरं परम्। नाशयेन्मूत्ररोगांश्च तथा शुक्रभवानपि॥

अर्थ–खजूर, आंवले, पीपल, शिलाजीत, इलायची, मुलहटी, पाषाणभेद, चंदन, कांकडी के बीज, धनिया और मिश्री इन का चूर्ण मुलहटी के काढे के साथ पीवे तो अंगों का दाह, लिंगदाह, गुददाह, क्षीणशुक्रदाह, शर्करा, पथरी और शूल इन का नाश होवे. तथा यह वृष्य तथा बल का देनेवाला है और मूत्ररोग, शुक्र से उत्पन्न हुए रोग इन को नाश करे॥

धातुक्षयजदाह

धातुक्षयोत्थं दाहं तु जयेदिष्टार्थसाधनैः ।
क्षीरमांसरसाहारैर्विधिनोक्तेन तत्र च ॥

अर्थ–धातुक्षय से जो दाह होता है वह इष्टसाधनों करके अथवा क्षीर, मांसरस इन का आहार इत्यादि विधि से जीते ॥

पित्तदाह

पित्तज्वरहरः सर्वो पित्तदाहे विधिर्मतः ॥

अर्थ–पित्तदाहपर संपूर्ण पित्तज्वरनाशक विधि करनी चाहिये ॥

औदुंबरस्य निर्यासः सितया दाहनाशनः ॥

अर्थ–गूलर का दूध मिश्री डालके देवे तौ दाह का नाश करता है ॥

छिन्नासारः सितायुक्तः पित्तज्वरनिषूदनः ॥

अर्थ–गिलोय के सत्व को मिश्री में मिलायके खाय तो पित्तज्वर को दूर करे ॥

क्षतजदाह

क्षतजोनश्नतश्चान्यः शोचतो वाप्यनेकधा ।
तेनांतर्दह्यतेत्यर्थं तृष्णामूर्च्छाप्रलापकम् ॥

अर्थ–क्षत (घाव) के होने से जो दाह होय उस से आहार थोडा रह जावे, और अनेक प्रकार के शोक कर दाह होय और इस दाहकरके अभ्यन्तर दाह होय, तथा प्यास, मूर्च्छा और प्रलाप (बकवाद) ये लक्षण होंय ॥

चंदनादिचूर्ण

चंदनोशीरकुष्ठाब्दधात्रीचोरकमुत्पलम् । मधुकं मधुपुष्पं च द्राक्षा खर्जूरकं तथा ॥ चूर्णं कृत्वा समसितं प्रातः शीतांबुना पिबेत् । रक्तपित्तं तथा श्वासं पैत्तं गुल्मं समुद्धरेत् ॥ अंगदाहं शिरोदाहं शिरोविभ्रममेव च । कामलां च प्रमेहांश्च पैत्तज्वरविनाशनम् ॥ चंदनाद्यमिदं चूर्णं पूज्यपादेन भाषितम् ॥

अर्थ–चंदन, खस, कूठ, नागरमोथा, आवले, गठोना, कमल, मुलहटी, महुआ के फूल, दाख और खजूर इन का चूर्ण कर चूर्ण के बराबर मिश्री मिलावे. प्रातःकाल शीतल जल के साथ खाय तो रक्तपित्त, श्वास, पित्तजन्य गोला, अंगों का दाह, मस्तकदाह, मस्तक का घूमना, कामला, प्रमेह और पित्तज्वर इन को दूर करे ॥ इन को चंदनाद्य चूर्ण कहते हैं यह श्रेष्ठ पुरुष ने कहा है ॥

रक्तजदाहपर

शाखाश्रयां यथान्यायं रोहिणीं व्यधयेच्छिराम् ।
रक्तजातस्ततो दाहः प्रशाम्यति न संशयः ॥

अर्थ-हाथ में रोहिणी नाम की शिरा (नस) है उस को शस्त्र से छेदकर रुधिर निकाले तो रक्तजन्य दाह शांत होवे. इस में संशय नहीं है ॥

चंदनादिकाढा

चंदनं पर्पटोशीरनीरनीरदनीरजैः । मृणालमिसिधान्याकपद्मकामलकैः कृतः ॥ अर्धशिष्टः सितासीतः पीतः क्षौद्रसमन्वितः । क्वाथो विपोथयेद्दाहं तत्क्षणं परमोल्बणम् ॥

अर्थ-चंदन, पित्तपापडा, खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, कमल, भसीडा, सौंफ, धनिया, पद्माख और आंवले इन का काढा करे जब जल दो भाग जल जावे अर्थात् आधा रहे उस में मिश्री मिलाय जब शीतल हो जावे तब सहत डालके पीवे तो तत्क्षण बडे भारी बढे हुए दाह का नाश करे ॥

योग

रसौषधिसमुद्भूते तापेपि सकले हितम् । पानीयामलकी द्राक्षा नारिकेलेक्षुशर्करा ॥ सेवनाय हिता तापे कोमलं मूत्रलं फलम् ॥

अर्थ-रस सेवन से अथवा औषध के खाने से यदि दाह प्रगट हुआ होवे तो उस के दूर करने को जल, आंवले, दाख, नरियल, ईख मिश्री अथवा ककडी ये पदार्थ सेवन करे तो हित होवे ॥

लाजादिकाढा

लाजाह्वचंदनोशीरक्वाथोन्तःशर्करान्वितः ।
शीतः पीतो निहंत्याशु दाहं पित्तज्वरं नृणाम् ॥

अर्थ-नेत्रवाला, लालचंदन और खस इस का काढा करके उस में मिश्री मिलायके पीवे तो दाह और पित्तज्वर इन को दूर करे ॥

शीतांबुचंदनसुगंधिकषाययुक्तमाश्लिष्य चार्द्रवसनोपहृतांबुपूर्णाः । तैलैर्मधूककुसुमारुकचंदनाद्यैर्द्रोणीं प्रपूर्य शिशिरैरवगाहयेत्तम् ॥

अर्थ-दाहवाले रोगी को शीतल जल, चंदन और सुगंधित पदार्थ इन के काढे में भीगे हुए कपडे को ओढे तथा जल में अथवा महुआ के फूल, आरुक (आडू) और चंदन इत्यादिकों के काढे में अथवा तैलों से हौंद को भरके उस में स्नान करे ॥

कमलादिपान

पाययेत्कमलस्यांभः शर्करांभः पयोपि वा।
क्षीरमिक्षुरसं वापि कारयेत्पित्तबुद्धिभिः ॥

अर्थ-जिस प्राणी को पित्त बढ रहा हो उस को कमलों की सुगंध का पानी अथवा मिश्री का सरबत अथवा दूध अथवा ईख का रस ये पदार्थ सेवन करे तो पित्त की शांति हो ॥

कोष्ठपूर्णरक्तदाह

धृत्वा पात्रे कांस्यजे ताम्रजे वा नाभौ पुंसां दाहरोगातुरस्य।
धारापातैः शीतलं तत्र तोयं निक्षेप्तव्यं कोष्ठदाहोपशांत्यै ॥

अर्थ-रोगी के कोठे में दाह होवे तो उस के नाभी (टूंडी) पर कासे का पात्र रखके अथवा तामे का पात्र उस में शीतल जल की धारा ऊपर से गेरे तो दाह शांत होय॥

दाहरोगतैल

कुशादिशालिपर्णी च जीवकर्षभसाधितम्।
तैलं घृतं वा दाहघ्नं वातपित्तविनाशनम् ॥

अर्थ-कुशादिगण, सालपर्णी, जीवक और ऋषभक इन के कल्क से अथवा काढे से सिद्ध करे हुए तेल अथवा घी दाह, वादी और पित्त इन को नाश करे ॥

तिलतैल

तिलतैलं भवेत्प्रस्थं तत्षोडशगुणाशनैः।
कांजिके विपचेत्तस्माद्दाहज्वरहरं परम् ॥

अर्थ-तिल का तेल ६४ तोले लेकर तिस में तिस के सोलह गुणा कांजी डालके सिद्ध करे तो दाह और ज्वर इन का नाश करता है ॥

पुनर्नवादितैल

श्वेतं पुनर्नवामूलं पलं शतमितं शुभम्। कृष्णाज्यदुग्धमध्ये च पेषयेदाढके भिषक् ॥ तत्समं तिलतैलं च पृथग्द्रव्याणि योज-

येत् । धूपं षोडशभागं च मरीचाष्टवरालकम् ॥ कचोरमुशिरं श्वेतं कृष्णोशीरस्तथैव च । मंजिष्ठं रंगचूर्णं च श्रीगंधं रक्तचंदनम् ॥ कृष्णागुरुं च रुद्राक्षान् पलमेकं प्रयोजयेत् । तच्चूर्णं तैलमध्ये च निक्षिपेत्पाचयेत्सुधीः ॥ मेहारिकाष्ठयुक्तेन पाचयेत्कोमलाग्निना । सुपक्वं तैलमुद्धृत्य रात्रौ वंगं च मर्दयेत् ॥ अंगशूलमंगदाहान्नेत्ररोगान्सपीनसान् । पांडुकामलमुष्णानि सूतिकासन्निपातजित् ॥ करदाहान्पाददाहान् तंद्रां कटिसमीरजान् । क्षयकुष्ठादिकंडूश्च गजकर्णादिकं तथा ॥ शिरोरोगान् भ्रमान् पित्तं नेत्राणां दृष्टिगोचरम् । अमृतं मात्रतश्चैव ज्वराणां जीर्णिनामपि ॥ अस्थिगतं ज्वरं चैव मेहज्वरप्रशांतये । सर्वांगे मर्दनं चैव मंगलस्नानमाचरेत् ॥ शिवोदितमिदं तैलमश्विभ्यां गोचरीकृतम् । सर्वरोगहरं चैव दुर्लभं भिषजैर्भुवि ॥ साधयेद्गुरुमुखेनैव सिद्धिर्भवति नान्यथा ॥

अर्थ—श्वेत पुनर्नवा अर्थात् विषखपरा की जड ४०० तोले को काली गौ के २५६ तोले घी और दूध में पीसे तथा ४०० तोले तिलों का तेल और धूप १६, काली मिरच और राल ८ भाग, कचूर, खस, नेत्रवाला, मजीठ, करथा, चंदन, लालचंदन, काली अगर और रुद्राक्ष ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इन सब के चूर्ण को उस तेल में डालके मेहारी नामक लकडी की अग्नि के योग से मंदाग्निपर पचन करे जब तैल सिद्ध हो जावे तब उस को उतार लेवे इस तेल को रात्रि में देह में मालिस करे तो देह का शूल, अंगदाह, नेत्ररोग, पीनस, पांडुरोग, कामला, गरमी, प्रसूत के रोग, संनिपात, हाथ पैरों का दाह, तंद्रा, कमर की वादी, क्षय, कुष्ठ, खुजली, गजकर्ण , मस्तकरोग, भ्रम (भौर), पित्त, नेत्ररोग, दृष्टिरोग, जीर्णज्वर, अस्थिज्वर और मेहज्वर इन रोगों में इस तेल को सब देह में मालिस करके मंगलस्नान करे. यह तैल प्रथम शिव ने कहा है और अश्विनीकुमारों ने प्रसिद्ध करा है यह संपूर्णरोगनाशक है. यह वैद्यों को पृथ्वीपर दुर्लभ है. इस तेल को सिद्ध करने से प्राणी सिद्ध होता है. इस को गुरु के बताये हुए मार्ग से बनावे तो सिद्ध होय और विनागुरु के बताए इसकी सिद्धी नहीं होवे. इस में संदेह नहीं है ॥

तंदूलीयकमूलादिपान

तंदुलीयकमूलानि धान्यजीरकजं पयः ।
तुलसीस्वरसं टंकं तापेपि पिबतो हितम् ॥

अर्थ–चौलाई की जड और धनिया तथा जीरा इन के जल तथा तुलसी का रस इन सब को मिलाय एक तोला पिलावे तो यह दाहपर और संतापपर परम हितकारी है ॥

लेप

फलिनीलोध्रसेव्यांबु हेमपत्रं कुटंनटम् ।
कालीयकरसोपेतं दाहे शस्तं प्रलेपनम् ॥

अर्थ–मेहदी, लोध, नेत्रवाला, खस, धतूरे के पत्ते, मोथा और पीला चंदन ये समानभाग लेकर जल से पीस लेप करे तो दाह शांत होवे ॥

स्नान

ह्रीबेरपद्मकोशीरचंदनक्षोदवारिणा ।
संपूर्णामवगाहेत द्रोणीं दाहार्दितो नरः ॥

अर्थ–नेत्रवाला, कमल, खस और चंदन इन के चूर्ण को पानी में घोर उस पानी से भरे हुए हौद में या पीपा आदि में रोगी गोता मारे तो दाह दूर हो ॥

बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टकस्य वा ।
सुरा मंडांबु दध्यम्लं मातुलिंगरसो मधु ॥

अर्थ–बेर के कोमल २ पत्तों का झाग अथवा नीम के पत्तों के झाग, मद्य का ऊपरला जल, दही का तोड और बिजोरे का रस तथा सहत में से किसी एक का देह में मालिस करे तो दाह नष्ट होवे ॥

दाहहरणकर्त्ता योग

वाप्यः कमलहासिन्यो जलयंत्रगृहाः शुभाः ।
नार्यश्चंदनदिग्धांग्यो दाहदैन्यहरा मताः ॥

अर्थ–जिन बावडी (पुष्करणी) आदि में कमल खिल रहे हों तथा जिन में अनेक फुहारे बने हों ऐसे घर तथा जिन के देह में चंदन लग रहा हो ऐसी स्त्रियें दाह के क्लेश के हरण करनेवाली हैं ॥

धान्यहिम

प्रातः पर्युषितं धान्यं लुलितं सितया युतम् ।
अंतर्दाहं हरेत्पीतं दुःखं मृत्युंजयो यथा ॥

अर्थ—रात्रि में कोरकुहूडे में कूटे हुए धनिये को भिगोय देवे प्रातःकाल उस को मलके कपडे में छान लेवे इस जल में मिश्री मिलायके पीवे तो देह के भीतर का दाह नष्ट होवे जैसे मृत्युंजय के स्मरण से दुःख ॥

घृतलेप

सहस्रधौतेन घृतेन दिग्धदेहस्य दाहः कृशतां बिभर्ति ।
अन्यांगनासंगमसादरस्य स्वीयेषु दारेषु यथाभिलाषः ॥

अर्थ—हजारवार धुले हुए घी की मालिस देह में करे तो दाह नष्ट होवे. इस में दृष्टांत है कि जैसे परस्त्री से जिस का मन लगा है उस का अपनी घर की स्त्री में जैसे इच्छा नष्ट हो जाती है ॥

निंबप्रवाललेप

तृड्दाहमोहाः प्रशमं प्रयांति निम्बप्रवालोत्थितफेनलेपात् ।
यथा नराणां धनिनां धनानि समागमाद्वारविलासिनीनाम् ॥

अर्थ—नीम के कोमल २ पत्तों को पीस जल में गेरके रई से मथ डाले उस में जो झाग उठे उन का लेप देह में करे तो तृषा, दाह और मोह ये दूर हों. जैसे वेश्या-गामी धनी मनुष्य का धन चला जाता है ॥

दाहेतिशिशिरं तोयं क्रिया कार्या सुशीतला ॥

अर्थ—अतिशीतल जल पीवे और शीतल ही उपचार करे तो दाह शांत होवे ॥

अन्य उपाय

सर्वांगे चंदनालेपश्चंद्रकस्तूरिकायुतः ।
सितनीरजलेपो वा धारागारनिवेशनम् ॥

अर्थ—कपूर और कस्तूरीयुक्त चंदन का सर्व देह में लेप करे. अथवा सपेद कमल को पीस के लेप करे और तलगृह (तहखाने) में रहे तो दाहशांति होय ॥

बालआलिंगन

सहजस्नेहसोत्साहमुग्धमंजुलल्लापिनाम् ।
बालकानां समाश्लेषस्तापं निर्वापयेज्जवात् ॥

अर्थ–स्वाभाविक प्रीतियुक्त और उत्साह करके भोरे और मनोहर बोलनेवाले बालकों के आलिंगन करने से ताप शांत होय॥

उशीरागारशयनं तालवृंतानुवर्तनम्।
साहित्यसरसा वाणी कवीनां तापहृत्त्रयम्॥

अर्थ–खसखस के पडदे पडे हों ऐसे घर में शयन करना तथा ताड के पंखे की पवन, कवी के साहित्ययुक्त वचन, सुरस भाषण ये तीनों वस्तु ताप को शमन करे हैं॥

पानीयामलकी द्राक्षा नारिकेलं सुशर्करम्।
गायनं सुकुमारीणां दाहमूर्च्छां हरेद् द्रुतम्॥

अर्थ–जलआंवला और दाख इन का रस पीवे. अथवा नारियल का जल मिश्री मिलायके पीवे. सुकुमार स्त्रियों का गान सुनना ये सब ताप मूर्च्छा इन को हरण करे॥

सेवनाय हितं तापे कोमलं मूत्रलं फलम्॥

अर्थ–जिस के अधिक दाह होता हो वे यह मूत्रकारी (खीरा, ककडी आदि) फलों का सेवन करे॥

दूसरा चंद्रकलारस

प्रत्येकं तोलमादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम्। द्विगुणं गंधकं चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम्॥ मुस्तादाडिमदूर्वोत्थैः केतकीस्तनजद्रवैः। सहदेव्याः कुमार्याश्च पर्पटस्यापि वारिणा॥ रामशीतलिकातोयैः शतावर्या रसेन च। भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक्॥ तिक्तागुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी। श्रीगंधं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम्॥ द्राक्षादिककषायेण सप्तधा परिभावयेत्। ततो धान्याश्रयं कृत्वा वट्यः कार्याश्चणोपमाः॥ अयं चंद्रकलानाम्ना रसेंद्रः परिकीर्तितः। सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः। ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते॥ कुरुते नाग्निमांद्यं च महातापज्वरं हरेत्। भ्रमं मूर्च्छां हरत्याशु स्त्रीणां रक्तं महास्रुतिम्॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवांतिं विशेषतः। मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः॥

अर्थ–पारा, तामे की भस्म और अभ्रक की भस्म ये प्रत्येक एक २ तोले लेय गंधक २ तोले इन की बारीक कजली करके फिर नागरमोथा, अनार, दूब, केतकी, सहदेई, घीगुवार, पित्तपापडा, आराम, शीतला और सतावर इन के रसों की एक२ दिन पृथक् २ भावना देय. फिर कुटकी, पित्तपापडा, नेत्रवाला, माधवी, चंदन, सारिवा इन का चूर्ण और गिलोय का सत्व इन को समान भाग लेकर भावना दिये हुए औषधों में मिलाय फिर द्राक्षादि काढे की सात भावना देवे फिर इस को धान की राशि में रख देवे जब गाढी हो जावे तब निकालके गोली चने के समान बनाय लेवे. यह **चंद्रकलानामक** सर्वरसों का राजा है. यह सब पित्त के विकारों को तथा वातपित्त के विकारों को अंतर्दाह और बाहर का दाह इन सब को नष्ट करे. इस को गरमियों में और शरद ऋतु में सेवन करे. यह मंदाग्नि नहीं करे घोरज्वर के ताप को हरण करे. भ्रम, मूर्छा, स्त्रियों के रुधिर का जाना, ऊर्ध्वगामी और अधोगामी रक्तपित्त, वमन और सर्व प्रकार के मूत्रकृच्छ्र इन सब रोगों को नष्ट करे इस में संदेह नहीं है ॥

मर्माभिघातज दाह

मर्माभिघातजोप्यस्ति सोसाध्यः सप्तमो मतः ॥

अर्थ–मर्मस्थान (हृदय, शिर, बस्ति) में चोट लगने से जो दाह होय सो सातवां असाध्य है अर्थात् और जो छः दाह हैं सो साध्य हैं ॥

असाध्य लक्षण

सर्वे एव च वर्ज्याः स्युः शीतगात्रस्य देहिनः ॥

अर्थ–सब दाहों में शीतल देहवाला रोगी त्याज्य है ॥

दाह रोग में पथ्य

शालयः षष्टिका मुद्गा मसूराश्चणका यवाः। धन्वमांसं रसा-लाजमंडं वै सक्तुवासिता ॥ शतधौतं घृतं दुग्धं नवनीतं पयो-द्भवम्। कूष्मांडं कर्कटी मोचा पनसः स्वादुदाडिमम् ॥ पटोलं पर्पटी द्राक्षा धात्रीफलपरूषकम्। बिंबी तुंबी पयःपेटी खर्जूरं धान्यकं मिशी ॥ बालतालं प्रियालं च शृंगाटं च कसेरुकम्। मधूकपुष्पं ऱ्हीबेरं पथ्या तिक्तानि सर्वशः ॥ शीताः प्रदेहा भूवेश्म सेकोभ्यंगोवगाहनम्। फुल्लोत्पलदलक्षौमशय्याशी-तलकाननम् ॥ कथा विचित्रा गीतानि वाद्यं मंजुलभाषणम्।

उशीरचंदनो लेपः शीतांशुः शिशिरोऽनिलः ॥ धारागृहं प्रियास्पर्शः प्रतीरं हिमवालुकम् । सुधांशुरश्मयः स्नानं मणयो मधुरो रसः ॥ पुरो यानि विधेयानि पित्तहारीणि तानि च । इति दाहवतां नृणां पथ्यवर्ग उदाहृतः ॥

अर्थ–शाली धान्य, साँठी चावल, मूंग, मसूर, चने, जों, जंगली जीवों के मांस का रस, खील, सत्तू [खांड], वासित (सुगंधित) मंड, सौवार धुला हुआ घृत, दूध, दूध का मक्खन, पेठा, ककडी, केला, फनस, मीठा अनार, परवल, पापडी, दाख, आंवले, फालसे, कंदूरी (गुलकांख), तुंबी, नारियल का जल, खिजूर, धनिया, सोंफ, छोटा ताडफल, चिरोंजी, सिंघाडे, कसेरू, महुए का फूल, नेत्रवाला, हरड, कुटकी ये सब पदार्थ, तथा शीतल चंदनादि लेप और मालिस, तहखाने में रहना, स्नान, उबटना, जल में धसके स्नान, फूल कमल के पत्ते, रेसमी कपडे, शीतल सेज, शीतल ही वन, चित्र विचित्र कथा, गीत (गान), मनोहर बाजे और सुंदर मिष्ट भाषण, खस, चंदन का लेप, कपूर [शीतल जल] शीतल पवन, फुहारों का घर, प्यारी का स्पर्श, नदी का तीर, शीतल बालुका, शीतल चंद्रमा की चांदनी, स्नान, हीरा आदि मणि, मिष्ट रस और जो पहले पित्तहरण कर्त्ता पदार्थ कह आये हें ये सब दाहरोगवाले को पथ्य कहा है ॥

दाहरोग में अपथ्य

विरुद्धान्यन्नपानानि क्रोधो वेगविधारणम् । श्रमं व्यवायमाध्मानं क्षारं पित्तकराणि च ॥ व्यायाममातपं तक्रं तांबूलं मधु रामठम् । व्यवायं कटुतिक्तोष्णं दाहवान् परिवर्जयेत् ॥

अर्थ–विरुद्ध अन्न पान, क्रोध, वेगों का धारण करना, परिश्रम, मैथुन, अफरा करनेवाले पदार्थ, खार के पदार्थ, पित्तकारी पदार्थ, व्यायाम, धूप, छाछ, तांबूल, सहत, हींग, चरपरे, कडुए और गरम पदार्थ ये सब दाहरोगवाले को वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे दाहरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

उन्मादरोगकर्मविपाकः ।

मोहयित्वा परान्यस्तु भुंक्ते वस्तु विगर्हितम् । सोन्मादवातयुक्तः स्यात्कृच्छ्रं चांद्रायणं तथा ॥ कुर्यात्सारस्वतं नाम जपेद्ब्राह्मणतर्पणम् ॥

अर्थ–जो प्राणी दूसरे को मोहित (बेहोस) करके निंद्य वस्तु (जो नहीं खाने योग्य है उस) को खाय वह उन्माद तथा वायु इनकरके पीडित होता है. इस पाप के दूर करने के वास्ते चांद्रायण और कृच्छ्रचांद्रायण प्रायश्चित्त करे अथवा सरस्वतीमंत्र का जप करे और ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥

उन्माद व भूतोन्मादनिदान

मदयंत्युद्धता दोषा यस्मादुन्मार्गमाश्रिताः।
मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्त्यते ॥

अर्थ–दोष कहिये (वात, पित्त, कफ) बढकर अपने अपने मार्ग को छोड अन्य मार्ग अर्थात् मनोवह धमनियों में प्राप्त होकर मन को उन्मत्त करे और यह व्याधि मानसी है अत एव इस को (उन्माद) ऐसे कहते हैं ॥

उन्मादभेद व निदान के हेतु कहते हैं

एकैकशः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थमुच्छ्रितैः। मानसेन च दुःखेन स पंचविध उच्यते ॥ विषाद्भवति षष्ठश्च यथास्वं तत्र भेषजम्।
स चाप्रवृद्धस्तरुणो मदसंज्ञां बिभर्ति च ॥

अर्थ–अत्यन्त कुपित भये पृथक् पृथक् दोषों से ३ सन्निपात और मानसिक दुःख से यह रोग पांच प्रकार का और विष खाने से ६ छटा इन में यथादोषानुसार औषध देनी चाहिये, जबतक यह रोग बढे नहीं और जबतक तरुण रहे तबतक इस रोग को मद ऐसे कहते हैं ॥

विरुद्धदुष्टाशुचिभोजनानि प्रधर्षणं देवगुरुद्विजानाम्।
उन्मादहेतुर्भयहर्षपूर्वो मनोविघातो विषमाश्च चेष्टाः ॥

अर्थ–विरुद्ध दुष्ट कहिये जहर मिला अन्न आदि, अशुचि चांडालादि से स्पर्श करा ऐसा भोजन, देवता, गुरु, ब्राह्मण इन का तिरस्कार करने से भय और हर्ष के होने से मन को बिगडा, सब चेष्टा विपरीत करे (अर्थात् टेढा तिरछा चले बलवान से वैर करे बकने लगे) इस श्लोक में पूर्व शब्द करण का है और चकारसे काम क्रोध लोभादिक भी उन्माद रोग के कारण हैं यह जैयट का मत है ॥

संप्राप्तिकथन

तैरल्पसत्त्वस्य मलाः प्रदुष्टा बुद्धेर्निवासं हृदयं प्रदुष्य।
स्रोतांस्यधिष्ठाय मनोवहानि प्रमोहयंत्याशु नरस्य चेतः ॥

अर्थ–इन में कहे जो कारणों से अल्प (थोडा) मल गुण पुरुष के वातादिक दोष कुपित होकर बुद्धि का निवासस्थान (रहने का ठिकाना) को हृदय कहिये मन उस को बिगाड मन के वहनेवाली नसों में प्राप्त हो मनुष्य के अंतःकरण को मोहित करे ॥

उन्माद का रूप

धीविभ्रमः सत्वपरिप्लवश्च पर्याकुला दृष्टिरधीरता च ।
अबद्धवाक्यं हृदयं च शून्यं सामान्यमुन्मादगदस्य चिह्नम् ॥

अर्थ–बुद्धी में भ्रम, मन का चञ्चल होना, दृष्टि का सर्वत्र चलना, अधीरजपना (डरपना), कुछ का कुछ बोलना, हृदय शून्य हो जाय, (अर्थात् विचार शक्ति का नाश होना) ये उन्माद रोग के सामान्य लक्षण हैं ॥

वातोन्मादलक्षण

रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोतिवृद्धः । चिंतादि दुष्टं हृदयं प्रदुष्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहंति शीघ्रम् ॥ अस्थान-हासस्मितनृत्यगीतवागंगविक्षेपणरोदनानि । पारुष्यकार्श्यारु-णवर्णता च जीर्णे बलं चानिलजस्वरूपम् ॥

अर्थ–रूखा, थोडा और ‘ शीतल ’ ऐसा अन्न ‘ विरेक ’ इस शब्द से इस जगह दस्त और वमन जानना, धातुक्षय और उपवास इन कारणों से अत्यन्त बढी जो वायु, सो चिन्ता शोकादि करके युक्त होकर हृदय (मन को) अत्यंत दुष्ट कर, बुद्धि और स्मरण इन का शीघ्र नाश करे और हँसने के कारण विना हंसे, मंद मुसकान करे, नाचे विना प्रसंग के गीत और बोलना करे, हाथों को सर्वत्र चलावे, रोवे और शरीर रूखा तथा कृश और लाल हो जाय और आहार का परिपाक भये-पर ज्यादा जोर होय, यह वातज उन्माद के लक्षण हैं ॥

पित्तोन्मादनिदान

अजीर्णकट्वम्लविदाह्यशीतैर्भोज्यैश्चितं पित्तमुदीर्णवेगम् । उन्मा-दमत्युग्रमनात्मकस्य हृदि स्थितं पूर्ववदाशु कुर्यात् ॥ अमर्ष-संरंभविनग्नभावाः संतर्जनाभिद्रवणौष्ण्यदोषाः । प्रच्छायशी-तान्नजलाभिलाषाः पीतास्यता पित्तकृतस्य लिंगम् ॥

अर्थ–अधकच्ची, कडवी, खट्टी, दाह करनेवाली और गरम ऐसा भोजन करने से, संचित भया जो पित्त सो तीव्र वेग होकर अजितेंद्रिय पुरुष के हृदय में प्रवेश कर

पूर्ववत् अति उग्र उन्माद तत्काल उत्पन्न करे. इस उन्माद से असहनशील, हाथ पैरों को पटकना, नग्न हो जाय, डरपे, भाजने लगे, देह गरम हो जाय, क्रोध करे, छाया में रहे, शीतल अन्न और शीतल जल इन की इच्छा, पीला मुख हो जाय, यह लक्षण पित्तज उन्माद के हैं ॥

कफोन्माद

सम्पूरणैर्मन्दविचेष्टितस्य सोष्मा कफो मर्मणि संप्रवृद्धः। बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहन्ति चित्तं प्रमोहयन्संजनयेद्विकारम् ॥ वाक्चेष्टितं मंदमरोचकश्च नारी विविक्तप्रियताऽतिनिद्रा । छर्दिश्च लाला च बलं च भुंक्ते नखादिशौक्ल्यं च कफात्मके स्यात् ॥

अर्थ–मंद भूख में पेटभर भोजन कर कुछ परिश्रम न करे, ऐसे पुरुष के पित्तयुक्त कफ हृदय में अत्यन्त बढकर बुद्धि, स्मरण और चित्त इन की शक्ति का नाश करे और मोहित कर उन्मादरूप विकार को उत्पन्न करे, उस विकार से वाणी का व्यापार कहिये बोलना इत्यादि मन्द होय, अरुचि होय, स्त्री प्यारी लगे, एकांत वास करे, निद्रा अत्यंत आवे, वमन होय, मुख से लार वहे, भोजन करे पिछाडी इस रोग का जोर हो, नख, आदिशब्द से त्वचा, मूत्र नेत्रादिक यह सफेद होंय यह लक्षण कफ के उन्माद के हैं ॥

सन्निपातज उन्मादनिदान

यः सन्निपातप्रभवोऽतिघोरः सर्वैः समस्तैरपि हेतुभिः स्यात् । सर्वाणि रूपाणि बिभर्ति तादृक् विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः ॥

अर्थ–जो उन्माद वातादिक दोषकरके अथवा तीनों दोषों के कारणकरके होय, वह सन्निपातजन्य उन्माद बहुत भयंकर होय है. उस में सब दोषों के लक्षण होते हैं. इस में विरुद्ध औषध की विधि वर्जित है. यह उन्माद वैद्योंकरके त्याज्य है कारण यह कि असाध्य है ॥

दुःखोन्मादलक्षण

चौरैर्नरेन्द्रपुरुषैररिभिस्तथान्यैर्वित्रासितस्य धनबांधवसंक्षयाद्वा । गाढं क्षते मनसि च प्रियया रिरंसोर्जायेत चोत्कटतमो मनसो विकारः ॥ चित्रं ब्रवीति च मनोनुगतं विसंज्ञो गायत्यथो हसति रोदिति चापि मूढः ॥

अर्थ-चोरों ने, राज के मनुष्यों ने अथवा शत्रुओं ने, उसी प्रकार सिंह, व्याघ्र, हाथी आदि किसी ने त्रास दिया होय, अथवा धन, बंधु के नाश होने से, ऐसे पुरुष का अन्तःकरण अत्यन्त दूखे, अथवा प्यारी स्त्री से संभोग करने की इच्छावाले पुरुष के मन में भयंकर विकार उत्पन्न होय, वह पुरुष गुप्त बात को भी कहने लगे और अनेक प्रकार का बोले, विपरीत ज्ञान होय, वह गावे, हंसे और रोवे तथा मूर्ख हो जाय ॥

विषजउन्मादलक्षण

रक्तेक्षणो हतबलेन्द्रियभाः सुदीनः श्यावाननो विषकृतेन भवेद्विसंज्ञः॥

अर्थ-विष से प्रगट उन्माद में नेत्र लाल होंय, बल इन्द्री और शरीर की कान्ति नष्ट हो जाय, अति दीन हो जाय, उस के मुखपर कालोंच आ जाय और संज्ञा जाती रहे ॥

असाध्यलक्षण

अवाङ्मुखस्तून्मुखो वा क्षीणमांसबलो नरः ।
जागरूको ह्यसन्देहमुन्मादेन विनश्यति ॥

अर्थ-जिस का मुख नीचे को होय अथवा ऊपर को होय और जिस का मांस और बल क्षीण हो गया होय, तथा जिस की निद्रा जाती रही हो, ऐसा मनुष्य निश्चय इस उन्मादकरके नाश को प्राप्त हो ॥

उन्मादशास्त्रार्थ

कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालोभसंभवात् ।
परस्परप्रतिद्वंद्वैरेभिरेव शमं नयेत् ॥

अर्थ-काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष, ईर्षा, लोभ इन से प्रगट हुए उन्माद (बावले पने) को उस के विपरीत जो कामशांति आदि उपायों से निवारण करे जैसे कामज्वर में कामशांति होने से चला जाता है ऊसी प्रकार शोक को हर्षादिक कर्मों से दूर करे॥

सामान्य उपचार

वातिके स्नेहपानं प्राग्विरेकः पित्तसंभवे ।
कफजे वमनं कार्यं परो बस्त्यादिकः क्रमः ॥

अर्थ-वादी के उन्माद में प्रथम स्नेहपान, पित्तोन्माद पर विरेचन (जुलाब देना) और कफोन्माद पर वमन और जो उन्माद हैं उनपर बस्तिक्रिया इत्यादि कर्म करे ॥

सामान्यचिकित्सा

यच्चोपदिश्यते किंचिदपस्मारे चिकित्सितम् ।
उन्मादे तच्च कर्तव्यं सामान्याद्दोषदूष्ययोः ॥

अर्थ–जो कायचिकित्सा अपस्मार (मृगीरोग) पर कही है वह सब उन्मादरोग पर करे इस का यह कारण है कि इन दोनों रोगों में दोष और दूष्य पदार्थ एक ही हैं इस वास्ते दोनोंपर एकसा यत्न करे ॥

सामान्यउपचार

स्नेहादिना क्रमेणादावुन्मादे समुपाचरेत् ।
बस्तिभिः स्नेहकल्कैश्च निरूहैः स्वेदनांजनैः ॥

अर्थ–स्नेहपानादिक क्रम करके, बस्ति, स्नेह और कल्क निरूहबस्ति पसीने निकालना तथा अंजन इत्यादि उपचार करना उन्मादरोग पर हितकारी है ॥

शास्त्रार्थ

आश्वासयेत्सुहृद्वाक्यैर्ब्रूयादिष्टविनाशनम् ।
दर्शयेदद्भुतं कर्म ताडयेच्च कशादिभिः ॥

अर्थ–जो प्राणी बावला हो गया हो उस को मीठे २ हितभरे वाक्यों को कहकर आश्वासन (दिलासा) देवे. तथा उसी की प्यारी वस्तु का नाश कहे अथवा अद्भुत चेष्टा तथा कोडेन पीटना इत्यादि उपचार करे ॥

सुबद्धं विजने गेहे त्रासयेदहिभिर्धिया ।
बद्धं सर्षपतैलाक्तं न्यसेदुत्तानमातपे ॥

अर्थ–उन्मादी (बावले) मनुष्य को एकांत स्थान में बांधके त्रास देवे. सर्प दिखायके डरावे तथा देह में सरसों का तेल लगायके धूप में चीता लेटावे तो उन्माद दूर हो ॥

कपिकच्छाथ वा तप्तलोहतैलजलैः स्पृशेत् ।
वक्राभिधाने कूपे वा सततं च निवेशयेत् ॥

अर्थ–बावले मनुष्य को कौंछ की फली अथवा तपाये हुए लाल लोह की सलाई, गरमतेल, जल इन का स्पर्श करावे अथवा मुख में तपे हुए लोहादिक डालने का भय दिखावे तो रोगी अच्छा होवे ॥

सततं धूपयेच्चैनं गोमांसैश्च सपूतिभिः ।
कामशोकभयक्रोधहर्षेर्ष्यालक्षसंभवात् ॥

अर्थ–उन्मादरोगी को गौ के मांस की तथा दूषित मांस की धूनी देवे तथा काम, शोक, भय, क्रोध, हर्ष और ईर्षा इत्यादि मनोविकार उत्पन्न करावे तो यह रोग दूर हो ॥

परस्परप्रतिद्वंद्वैरेभिरेव शमं नयेत्। जलाग्निद्रुमशैलेभ्यो विषमेभ्यश्च तं सदा ॥ रक्षेदुन्मादिनं चैव सद्यः प्राणहरं हि तत् ॥

अर्थ–ऊपर कही हुई परस्पर विरुद्ध चेष्टाओं करके उस को अपने आधीन कर लेना और जल, अग्नि, वृक्ष, पर्वत तथा विषमस्थान (पहाड चोटी आदि) इन से उस बावले मनुष्य का संरक्षण करे. क्योंकि ये स्थान तत्काल उन्मादरोगी के प्राण हरणकर्ता हैं ॥

लशुनादिघृत

लशुनस्य विनष्टस्य तुलार्धं निस्तुषीकृतम्। तदर्धं दशमूल्यास्तु चाढके वा विपाचयेत् ॥ पादशेषे घृते प्रस्थं लशुनस्य रसं तथा । कोलामलकवृक्षाम्लमातुलिंगार्द्रकै रसैः ॥ दाडिमांबु सुरा मस्तु कांजिकाम्लैस्तदर्धकैः। साधयेत्त्रिफलादारुलवणव्योषदीप्यकैः ॥ यवानीचव्यहिंग्वाम्लवेतसैश्च पलार्धकैः। सिद्धमेतत्पिबेच्छूलगुल्माशोंजठरापहम् ॥ व्रणपांड्वामयप्लीहयोनिदोषकृमिज्वरान्। वातश्लेष्मामयं चान्यमुन्मादं चापकर्षति ॥

अर्थ–उत्तम लहसन छिली हुई २००तोले और दशमूल १००तोले दोनों को एकत्र कर १०२४ तोले जल में डालके चतुर्थांश काढा करे. फिर इस को छानके इस में घी और लहसन का रस प्रत्येक ६४ तोले तथा बेर, आवले, अमलवेत, बिजोरा, अदरख और अनार इन का रस प्रत्येक ३२ तोले तथा त्रिफला, देवदारु, निमक, सोंठ, मिरच, काली पीपल, अजमोद, अजमायन, चव्य, हींग और अमलवेत ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का कल्क करके डाले फिर घृत सिद्ध करे. इस घृत के खाने से शूल, गोला, बवासीर, उदर, व्रण, पांडुरोग, प्लीहा, योनिदोष, कृमि, ज्वर और वायु तथा कफ इन के रोग और उन्माद इन को नाश करे ॥

चंदनादितैल

चंदनांबु नखं याव्यं यष्टीशैलेयपद्मकम्। मंजिष्ठा सरलं दारु षड्बला पूतिकेसरम् ॥ पत्रं तैलं सुरामांसी कंकोलं वनितांबुदम्। हरिद्रे सारिवा तिक्ता लवंगागरुकुंकुमम् ॥ त्वग्रेणुनलि-

काश्चेति तैलान्मस्तु चतुर्गुणम्। लाक्षारसं समं सिद्धं ग्रहघ्नं परमं मतम् ॥ अपस्मारहरोन्मादकृत्यालक्ष्मीविनाशनम् । आयुःपुष्टिकरं चैव वशीकरणमुत्तमम् ॥

अर्थ-चंदन, नेत्रवाला, नख (सुगंधद्रव्य), जवाखार, मुलहटी, शिलाजीत, पद्माख, मजीठ, सरल, देवदारु, षट्बला (छः प्रकार की बला), जवाद, नागकेशर, पत्रज, लोध, मुरा, जटामांसी, कंकोल, प्रियंगु, नागरमोथा, हलदी, दारुहलदी, सारिवा, कुटकी, लौंग, अगर, केशर, दालचीनी, पित्तपापडा, नलिका और तिलि का तेल तथा तेल से चौगुनी छाछ का जल और लाख का रस इन सब को डालके तेल बनावे. यह ग्रह, अपस्मार, कृत्या उन्माद अलक्ष्मी इन को नाश करे और आयुष्य, पुष्टि तथा लोक को वशीभूत करे है ॥

अंजन

त्र्यूषणं हिंगु लवणवचाकटुकरोहिणी। शिरीषनक्तमालानां बीजं श्वेताश्च सर्षपाः ॥ गोमूत्रपिष्टैरेतैस्तु वर्तिर्नेत्रांजने हिता। चातुर्थिकमपस्मारमुन्मादं च नियच्छति ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, सैंधानिमक, वच, कुटकी, सिरस, कंजे के बीज तथा सपेद सरसों इन सब को गोमूत्र में पीस उस में बत्ती को भिगोयके उस बत्तीसे नेत्रों में अंजन करे तो चातुर्थिक ज्वर, अपस्मार और उन्माद इन को दूर करे ॥

शिरीषादिनस्य

शिरीषं लशुनं हिंगु नागरं मधुकं वचा।
कुष्ठं च बस्तमूत्रेण पिष्टं स्यान्नावनांजनम् ॥

अर्थ-सिरस के बीज, लहसन, हींग, सोंठ, मुलहटी, वच और कूठ इन सब को बकरे के मूत्र में पीस के नस्य अथवा अंजन करे तो उन्मादरोग दूर हो ॥

व्योषाद्यंजन

तद्व्योषं हरिद्रे द्वे मंजिष्ठा गौरसर्षपाः।
शिरीषबीजमुन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

अर्थ-उसी प्रकार सोंठ, मिरच, पीपल, दारुहलदी, हलदी, मजीठ, सफेद सरसों और सिरस के बीज इन को पीसके अंजन करे तथा नस्य देवे तो उन्माद, ग्रह और अपस्मार इन को नाश करे ॥

धूप

कर्पासास्थिमयूरपिच्छबृहतीनिर्माल्यापिंडीतकत्वङ्मांसीवृषदंश-विट्तुषवचाकेशाहिनिर्मोचनैः । नागेंद्रद्विजशृंगहिंगुमरिचैस्तुल्यैस्तु धूपः कृतः स्कंदोन्मादपिशाचराक्षससुरावेशज्वरघ्नः स्मृतः ॥

अर्थ–कपास के बीज (विनोले), मोर की पांख, कटेरी, शिवनिर्माल्य, मैनफल, दालचीनी, जटामांसी, बिल्ली की सूखी विष्टा, तुस, वच, मनुष्य के बाल, सांप की कांचली, हाथीदांत, साबरसींग, हींग और काली मिरच समान भाग लेके धूप बनावे. इस धूनी से स्कंदोन्माद, पिशाचोन्माद, राक्षसोन्माद देवोन्माद, तथा ज्वर इन सब का नाश होवे ॥

पर्पटीरस

कृष्णाधत्तूरजैर्बीजैः पंचभिः पर्पटीरसः ।
साज्यो योज्यः प्रशांत्यर्थमुन्मादस्य शुभानने ॥

अर्थ–पीपल, धतूरे के पांच बीज और पर्पटीरस इन को घी में मिलायके देवे तो हे शुभानने ! उन्माद रोग का नाश करे ॥

शिरीषाद्यंजन

सिद्धार्थकवचाहिंगुकरंजो देवदारु च । मंजिष्ठा त्रिफला श्वेता कटभी त्वक् कटुत्रिकाः ॥ समांशं च प्रियंगुश्च शिरीषो रजनीद्वयम् । बस्तमूत्रेण पिष्ट्वदमगदं पानमंजनम् ॥ नस्यमालेपनं चैव स्नानमुद्वर्तनं तथा । अपस्मारविषोन्मादकृत्यालक्ष्मीज्वरापहम् ॥ भूतेभ्यश्च भयं हंति राजद्वारे च शस्यते । सर्पिरेतेन सिद्धं वा सगोमूत्रं तदर्थकृत् ॥

अर्थ–सपेदसिरसों, वच, हींग, कंजे के बीज, देवदारु, मजीठ, हरड, बहेडा, आवला, फिटकरी, छोटी कांगनी, दालचीनी, सोंठ, मिरच, पीपल, प्रियंगु, सिरस के बीज, दारुहलदी इन सब को बकरे के मूत्र में पीसके पीवे तथा अंजन, नस्य, लेप और स्नान करे तथा अंग में लगावे तो अपस्मार, विष, उन्माद, कृत्या, दुर्दशा, ज्वर और भूतबाधा इन का नाशक है और राजा के सन्मुख जाय तो इस योग को करे इन्हीं औषधों से सिद्ध करा हुआ घी गोमूत्र के साथ सेवन करने से गुण करे हैं ॥

ब्राह्म्यादिरस

ब्राह्मीकूष्मांडविलपड्ग्रंथाशंखपुष्पिकास्वरसाः ।
दृष्टा उन्मादहराः पृथगेते कुष्ठमधुमिश्राः ॥

अर्थ–ब्राह्मी, पेठा, वच और शंखाहूली इन की पृथक् रस कूठ और सहत इन में मिलायके सेवन करे तो उन्माद को दूर करे ॥

ब्राह्म्यादिकल्क

ब्राह्मीरसः स्यात्सवचः सकुष्ठः सशंखपुष्पः ससुवर्णचूर्णः। उन्मादिनामुन्मदमानसानामपस्मृतो भूतहतात्मनां हि ॥ नस्येंजने पानविधौ च शस्तो ब्राह्मीरसोयं सवचादिचूर्णः ॥

अर्थ–ब्राह्मी के रस को वच, कूठ, शंखाहूली और नागकेशर, इन के चूर्ण करके युक्त कर उस के नस्य, अंजन किंवा पीना इन में देवे तो उन्माद, अपस्मार और भूतोन्माद ये रोग दूर हों ॥

सितकुसुमबलादियोग

सितकुसुमबलायाः सार्धकर्षत्रयं यः शिखरिचरणकेन क्षीरपाकेन पक्कम्। पिबति तदनु नित्यं प्रातरुत्थाय शीतं जयति झटिति घोरं व्याधिमुन्मादसंज्ञम् ॥

अर्थ–सपेद फूल का बरियारा ३॥ तोले का चूर्ण करके दूध में डाल उस दूध को ओंगा की जड के साथ औटावे. जब शीतल हो जावे तब नित्य प्रातःकाल पीवे तो उन्मादरोग को तत्काल पराजय करे ॥

दशमूलादियोग

दशमूलांबु सघृतं युक्तं मांसरसेन वा ।
ससिद्धार्थकचूर्णं वा केवलं नावनं घृतम् ॥

अर्थ–दशमूल का काढा घृतयुक्त अथवा मांसरस युक्त उन्मादपर हितकारक है अथवा सपेद सरसों का चूर्ण घी में मिलायके नस्य देवे तो हितकारी होय ॥

उन्मादशांतये पेयो रसो वा कालशाकजः ।
प्रयोज्यं सार्षपं तैलं नस्याभ्यंजनयोः सदा ॥

अर्थ–उन्मादरोग शांत करने को शंखपुष्पी का रस पीवे अथवा सरसों के तेल की नस्य और देह में मालिस करे ॥

भूतोन्मादलक्षण

अमर्त्यवाग्विक्रमवीर्यचेष्टाज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ।
उन्मादकालो नियतश्च यस्य भूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम् ॥

अर्थ–वाणी, पराक्रम, शक्ति, देह का व्यापार, तत्त्वज्ञान, शिल्पादि ज्ञान अथवा ज्ञान कहिये शास्त्रज्ञान और विज्ञान नाम तदर्थ निश्चय आदिशब्द से स्मृत्यादिक ये जिसकी मनुष्य की सी न होय और जिस का उन्मत्त होने का काल निश्चय होय, ऐसे उन्माद को भूतोन्माद कहते हैं. भूतशब्द से यहां आगे कहेंगे सो सब देवता जानने ॥

देवजुष्टउन्मादलक्षण

सन्तुष्टः शुचिरतिदिव्यमाल्यगंधो निस्तंद्रिस्त्ववितथसंस्कृत-प्रभाषी । तेजस्वी स्थिरनयनो वरप्रदाता ब्रह्मण्यो भवति नरः स देवजुष्टः ॥

अर्थ–सदा संतोषयुक्त रहे, पवित्र रहे, देह में दिव्यपुष्प के समान सुगंध, नेत्रों के पलक लगे नहीं, सत्य और संस्कृत का बोलनेवाला हो, तेजस्वी, स्थिरदृष्टी, वर का देनेवाला, (तेरा कल्याण हो ऐसे बर देय) ब्राह्मण से प्रीति राखे, ऐसा मनुष्य (देवग्रह) पीडित जानना, देवशब्द से गण मात्रिकादि ग्राह्य है सो विदेह ने कहा भी है ॥

असुरउन्माद

संस्वेदी द्विजगुरुदेवदोषवक्ता जिह्माक्षो विगतभयो विमार्गदृष्टिः ।
संतुष्टो न भवति चान्नपानजातैर्दुष्टात्मा भवति स देवशत्रुजुष्टः ॥

अर्थ–पसीने युक्त देह, ब्राह्मण, गुरु और देव, इन में दोषारोपण करनेवाला, टेढी दृष्टि से देखनेवाला, निर्भय, वेदविरुद्ध मार्ग का चलनेवाला और बहुत अन्न जल से भी जिस को संतोष न होय और दुष्टबुद्धि, ऐसा मनुष्य दैत्यग्रह पीडित जानना ॥

गंधर्वजुष्टउन्माद

हृष्टात्मा पुलिनवनांतरोपसेवी स्वाचारः प्रियपरिगीतगंधमा-ल्यः । नृत्यन्वै प्रहसति चारु चाल्पशब्दं गंधर्वग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥

अर्थ-गंधर्व ग्रह से पीडित मनुष्य प्रसन्नचित्त, पुलिन और बाहर बगीचा में रहनेवाला, अनिंदित आचार का करनेवाला, गान, सुगंध और पुष्प, ये जिस को प्यारे लगें वह पुरुष नाचे हंसे, सुन्दर बोले, थोडा बोले ॥

यक्षग्रस्त उन्मादलक्षण

ताम्राक्षः प्रियतनुरक्तवस्त्रधारी गम्भीरो द्रुतगतिरल्पवाक् सहिष्णुः । तेजस्वी वदति च किं ददामि कस्मै यो यक्षग्रहपरिपीडितो मनुष्यः ॥

अर्थ-यक्षग्रह से पीडित मनुष्य के नेत्र लाल हों, सुंदर बारीक ऐसे रक्त वस्त्र का धारण करनेवाला, गंभीर, बुद्धिवान्, जलदी चलनेवाला, प्रमाण का बोलनेवाला, सहनशील, तेजस्वी, किस को क्या देऊं ऐसे बोलनेवाला ऐसा होय ॥

पितृग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण

प्रेतानां स दिशति संस्तरेषु पिंडान्भ्रान्तात्मा जलमपि चापसव्यवस्त्रः । मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकामस्तद्भक्तो भवति पितृग्रहाभिजुष्टः ॥

अर्थ-कुशा के ऊपर प्रेतों को (पितरों को) पिंड देय, चित्त में भ्रांति रहे और उत्तरीय वस्त्र अपसव्य करके तर्पण भी करे, मांस खाने की इच्छा होय, तथा तिल, गुड, खीर इनपर मन चले (इस कहने का प्रयोजन यह है कि जिस की जिस पदार्थपर इच्छा होय उस को उसी पदार्थ की बली देने से उस ग्रह की शांति होती है ऐसे ही सर्वत्र जानना) ये डल्लन का मत है, और वह मनुष्य पितरों की भक्ति करे ये लक्षण पितृग्रहपीडित मनुष्य के हैं ॥

सर्पग्रहग्रस्त उन्मादलक्षण

यस्तूर्व्यां प्रसरति सर्पवत्कदाचित्सृक्किण्यौ विलिहति जिव्हया तथैव । क्रोधालुर्मधुगुडदुग्धपायसेप्सुर्विज्ञेयो भवति भुजंगमेन जुष्टः ॥

अर्थ-जो मनुष्य सर्प के समान पृथ्वी से लोटा करे, अर्थात् छाती के बल चले, तथा सर्प के समान अपने ओष्ठप्रांत (होठों को) चाटा करे, सदा क्रोधी रहे, सहत, गुड, दूध और खीर की इच्छा रहे वह सर्पग्रहग्रस्त जानना ॥

राक्षसजुष्ट उन्मादलक्षण

मांसासृग्विविधसुराविकारलिप्सुर्निर्लज्जो भृशमतिनिष्ठुरोऽति-

शूरः । क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविहारी शौचद्विट् भवति च राक्षसैर्गृहीतः ॥

अर्थ—जो मनुष्य मांस, रुधिर, नानाप्रकार के मद्य पीने की इच्छा करे और निर्लज्ज, अतिनिष्ठुर, अत्यन्त शूर, क्रोधी, बडा बली, रात्रि में डोलनेवाला, अपवित्र ऐसा होय वह राक्षस करके ग्रस्त जानना ॥

ब्रह्मराक्षस उन्मादलक्षण

देवविप्रगुरुद्वेषी वेदवेदांगनिंदकः ।
आशु पीडाकरोऽहिंस्रो ब्रह्मराक्षससेवितः ॥

अर्थ—देव, ब्राह्मण, गुरू से द्वेषकर्त्ता, वेद और वेद के अंग (शिक्षा, कल्प व्याकरणादि) का निंदक, शीघ्र पीडा का कर्त्ता, हिंसा करे नहीं ये लक्षण ब्रह्मराक्षस सेवी मनुष्य के हैं ॥

पिशाचजन्य उन्माद लक्षण

उद्धस्तः कृशपरुषश्चिरप्रलापी दुर्गंधो भृशमशुचिस्तथाऽतिलोलः । बह्वाशी विजनवनांतरोपसेवी व्याचेष्टन्भ्रमति रुदन्पिशाचजुष्टः ॥

अर्थ—जो अपने हाथ ऊपर को करे, उद्वस्त्र, ऐसा भी पाठ है उस जगह उद्वस्त्र नाम (नंगा हो जाय) तेजरहित, बहुत देरपर्यंत बकनेवाला, जिस के देह में दुर्गंध आवे, अपवित्र, तथा अति चंचल कहिये सब अन्नपान में इच्छा करनेवाला, खाने को मिले तो बहुत भोजन करे, एकांत वनांतरों में रहनेवाला, विरुद्ध चेष्टा करनेवाला, रुदन करता, डोलनेवाला ऐसा मनुष्य पिशाचग्रस्त जानना ॥

असाध्य लक्षण

स्थूलाक्षो द्रुतमटनः सफेनलेही निद्रालुः पतति च कंपते च योऽति । यश्चाद्रिद्विरदनगादिविच्युतः स्यात्सोऽसाध्यो भवति तथा त्रयोदशेऽब्दे ॥

अर्थ—नेत्र भयानक हो जाय, शीघ्र चले, मुख में जो झाग हैं उनको चाटनेवाला और जिसको निद्रा बहुत आवे, तथा गिर पडे, काँपे और जो पर्वत, हाथी, अथवा नग नाम वृक्ष आदिशब्द से भीत्ति, मन्दिर आदि जानने, इनसे गिरकर ग्रहग्रस्त

होय, वह असाध्य हैं, तैसे ही तेरवें वर्ष में सर्व देवादि उन्मादी असाध्य जानने, (विदेह) ने विशेष लक्षण कहे है सो ग्रन्थान्तरों से जान लेने ॥

देवादीनामावेशसमयः

देवग्रहाः पौर्णमास्यामसुराः संध्ययोरपि ।
गन्धर्वाः प्रायशोऽष्टम्यां यक्षाश्च प्रतिपद्दिने॥

अर्थ–देवग्रह पूर्णमासी को प्रवेश करते हैं, असुरग्रह, सायंकाल में अपिशब्दसे पूर्णमासी को भी प्रवेश करते हैं, गंधर्वग्रह बहुधा अष्टमी को, प्रायःशब्द से संध्या को भी गंधर्व ग्रह प्रवेश करते हैं, यक्ष ग्रह पडवा को ॥

पितृग्रहास्तथा दर्शे पंचम्यामपि चोरगाः ।
रक्षांसि रात्रौ पैशाचाश्चतुर्दश्यां विशंति हि॥

अर्थ–पितृग्रह अमावास्या को सर्पग्रह पंचमी को अपिशब्द से अमावास्या को भी प्रवेश करते हैं, राक्षस रात्रि में और पिशाच चतुर्दशी को, मनुष्य के देह में प्रवेश करते हैं, तिथि कहने का यह प्रयोजन है कि जिस जिस तिथि को जो ग्रह मनुष्य को ग्रस्त करे उस को उसी उसी तिथि में शांति के निमित्त बलिदानादिक कराने चाहिये । * शंका–क्योंजी जब ग्रहग्रस्त मनुष्यों को उन्माद होता है तौ वह ग्रह मनुष्य की देह में प्रवेश करते क्यों नहीं दीखते हैं इस वास्ते कहते हैं ॥

दर्पणादीन्यथा छाया शीतोष्णं प्राणिनो यथा । स्वमणौ भास्करांशुश्च यथा देहं च देहधृक् ॥ विशंति न च दृश्यंते ग्रहास्तद्वच्छरीरिणाम् ॥

अर्थ–जैसे दर्पण में मनुष्य का प्रतिबिंब पडे है, आदिशब्द इस जगह प्रकारवाची है, अर्थात् जल, तैल आदि में जैसे छाया पडती है और सरदी, गरमी जैसे मनुष्यों को लगती है अथवा जैसे सूर्यकिरण सूर्यकान्त मणि (आतसीकाच) में प्रवेश करे है अथवा जैसे जीव देह में प्रवेश करे हैं, इसी प्रकार सब ग्रह मनुष्य के शरीर में प्रवेश करते हैं परंतु दीखते नहीं हैं, इस श्लोक के पोषक दृष्टांत जयट आचारी ने बहुत दीने हैं, परंतु हम ने ग्रन्थ बढने के भय से नहीं लिखे. इस उन्मादरोग में सर्वत्र देवशब्दकरके देवतान के से आचरणवाले देवतान के अनुचर (दास) जानने चाहिये, क्योंकि देवतान को मनुष्यन के अपवित्र देह में प्रवेश होना असंभव है सो (सुश्रुत) में लिखा है ॥

निशादिघृत

निशायुक्त्रिफलाश्यामावचासिद्धार्थहिंगुभिः । शिरीषकटभि-

श्वेतामंजिष्ठाव्योषदारुभिः ॥ समैः कृतं घृतं मूत्रे सिद्धमुन्माद-नाशनम् ॥

अर्थ—हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला, सारिखा, वच, सपेद सरसों, हींग, सिरस, मालकांगनी, सपेद कचनार, मजीठ, सोंठ, मिरच, पीपल और देवदारु ये सब समान भाग ले. गोमूत्र में डाल इस में घी डालके सिद्ध करे यह निशादिघृत उन्मादरोग को नाश करे ॥

कल्याणघृत

विशाला त्रिफला कौन्ती देवदार्व्यैलवालुकम् । स्थिरानंता हरिद्रे द्वे सारिवे द्वे प्रियंगुका॥नीलोत्पलैलामंजिष्ठा दंती दाडिमवल्कलम् ॥ विडंगं पृश्निपर्णी च कुष्ठचंदनपद्मकैः ॥ तालीसं बृहतीपत्रं मालत्याः कुसुमं नवम् । एतैः कर्षसमैः कल्कैर्विंशत्यष्टाभिरेव च ॥ चतुर्गुणं जलं दत्त्वा घृतप्रस्थं विपाचयेत् । अपस्मारे ज्वरे शोषे कासे मंदानले क्षये ॥ वातरक्ते प्रतिश्याये तृतीयकचतुर्थके । वातार्शे मूत्रकृच्छ्रे च विसर्पोपहतेषु च ॥ कंडूपांड्वामयोन्मादविषमेहगदेषु च । भूतोपहतचित्तानां गंडदानामचेतसाम् ॥ शस्तं स्त्रीणां च वंध्यानां धन्यमायुर्बलप्रदम् । अलक्ष्मीपापरक्षोघ्नं सर्वग्रहनिवारणम् ॥ कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंस्त्वप्रदं नृणाम् ॥

अर्थ—इन्द्रायन, हरड, बहेडा, आवला, रेणुकबीज, देवदारु, एलवालुक, सालपर्णी, धमासा, हरदी, सपेद कोयल, कोयल, फूलप्रियंगु, नीला कमल, इलायची, मंजीठ, दंती की जड, अनार की छाल, वायविडंग, पृष्ठपर्णी, कूठ, चंदन, पद्माख, तालीसपत्र, कटेरी, पत्रज और चमेली के ताजे फूल ये प्रत्येक तोले २ लेवे. सब का कल्क कर और कल्क से चौगुना जल डाल उस में ६४ तोले घी डालके औटावे. जब सब रसादिक जलके घृतमात्र शेष रहे तब उतार ले. यह अपस्मार, ज्वर, शोष, खांसी, मंदाग्नि, क्षय, वातरक्त, पीनस, तृतीयक, चातुर्थिकज्वर, वादी की बवासीर, मूत्रकृछ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, उन्माद, विष, प्रमेह, भूतोन्माद इत्यादि रोगों का नाशक तथा वंध्या स्त्री को संतान का देनेवाला, आयुष्य और बलको देवे, तथा दरिद्र, पाप और राक्षसादि सर्व ग्रह इन को दूर करे इस को कल्याणघृत कहते हैं यह बहुत श्रेष्ठ हैं पुरुषों को पुरुषार्थ देता है ॥

हिंग्वादिघृत

हिंगुसौवर्चलव्योषद्विपलांशैर्घृतं शृतम् ।
चतुर्गुणे गवां क्षीरे सिद्धमुन्मादनाशनम् ॥

अर्थ—हींग, संचरनिमक और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) सब मिलायके ८ तोले लेवे और घी तथा घी से चौगुना गौ का दूध लेवे इन सब को एकत्र करके घी सिद्ध करे यह हिंग्वादिघृत उन्माद को दूर करे ॥

सारस्वतघृत

त्रिफला लक्ष्मणानंता समंगा सारिवा वचा । ब्राह्मी पाठा बृहतिका द्विः स्थिरा द्विः पुनर्नवा ॥ सहदेवी सूर्यवल्ली वयस्था गिरिकर्णिका । तोयकुंभे पचेदेतत्पलांशं पादशेषिते ॥ न तं कौंति वचा कुष्ठं कृष्णा सैंधवसर्पिषम् । नीरुक्सवर्णवत्सायाः संसिद्धं पयसा च गोः ॥ पुष्ययोगे घृतप्रस्थं सुस्नेहकलशे स्थितम् । पानाभ्यंजनतो मेधास्मृत्यायुःपुष्टिवर्धनम् ॥ रक्षोघ्नं च विषघ्नं च सारस्वतमिदं घृतम् ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आवला, लक्ष्मणा (सपेद कटेरी), धमासा, मजीठ, सारिवा, वच, ब्राह्मी, पाढ, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, सपेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, सहदेई, सूर्यवल्ली, हरड, सपेद कोयल इन सब को चार २ तोले लेवे १ घडे जल में काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतार लेवे. इस को कपडे में छान लेवे. फिर छड, रेणुक, वच, कूठ, पीपल, सैंधा निमक, सरसों और रोगरहित तथा जीवित बछडेवाली एक वर्ण गौ का दूध डालके उस में ६४ तोले घी डालके पुष्य नक्षत्र में इस घी को बनावे और चिकने पात्र में भरके रख देवे. फिर इस को पीवे अथवा लगावे तो वाणी, बुद्धि, स्मृति, आयुष्य और पुष्टि इन को बढावे. तथा राक्षसबाधा और विषबाधा इन को नाश करे इस को सारस्वत घृत ऐसे कहते हैं ॥

उन्मादगजकेसरीरस

सूतगंधं शिलातुल्यं स्वर्णबीजं विचूर्ण्य च । भावयेदुग्रगंधायाः क्वाथे मुनिदिनं पृथक् ॥ रास्नाक्वाथेन सप्तैव भावयित्वा विचूर्णयेत् । रसः संजायते नूनमुन्मादगजकेसरी ॥ अस्य माषः

ससर्पिष्को लीढो हंति हठाद्गदम् । उन्मादाख्यमपस्मारं भूतो-
न्मादमपि ज्वरम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, मनसिल और इन सब की बराबर धतूरे के बीज इन सब को एकत्र खरल करके वच और रास्ना इन के काढे की पृथक्‌ २ सात २ भावना देवे फिर सुखायके चूर्ण कर लेवे तो उन्मादगजकेसरी नामक रस बने इस को घी में मिलायके १ मासे के अनुमान चाटे तो घोर उन्माद, अपस्मार, भूतोन्माद और ज्वर इन को हठपूर्वक दूर करे ॥

उन्मादे पर्पटीं दद्यात्सा चाविपयसान्विताम् ।
अपस्मारेपि तत्प्रोक्तमेतत्पाराशरेण च ॥

अर्थ–उन्मादरोग पर पर्पटी रस को बकरी के दूध में देवे तो मृगी और उन्माद रोग (बावलापना) नाश होवे ॥

विगतोन्मादलक्षण

प्रसादश्चेंद्रियार्थानां बुद्ध्यात्ममनसामपि। धातूनां प्रकृतिस्थत्वं
विगतोन्मादलक्षणम् ॥ यच्चोपदेशतः किंचिदपस्मारे चिकित्सि-
तम् । उन्मादे तच्च कर्तव्यं दोषसामान्यदूष्ययोः ॥

अर्थ–अपस्मार और उन्माद इन दोनों के दोष और दूष्य एकसे हैं इस वास्ते अपस्मार को जितने यत्न कहे हैं वह सब उन्मादरोग पर करने चाहिये ॥

भूतोन्मादपर अंजन व नावन

शिरीषपुष्पं लशुनं शुंठी सिद्धार्थकं वचा । मंजिष्ठरजनी कृष्णा
बस्तमूत्रेण पेषयेत् ॥ वटी छायासु शुष्का या सा हिता ना-
वनांजने ॥

अर्थ–सिरस के फूल, लहसन, सोंठ, सपेद सरसो, वच, मजीठ, हलदी और पीपर इन सब को बकरे के मूत्र में पीसके गोली बनावे और छाया में सुखाय ले. इस को नस्य अथवा अंजन रस विषय में योजना करे तो हितकारी होवे ॥

भूतभैरवरस

रसः सतालः सशिलः सलोहः स्रोतोंजनं सार्कमिदं हि गंधम्।
पिष्ट्वाजमूत्रेण समं समस्ताद्दयो द्विभागोथ बलिः पचेच्च ॥ लो-
हेक्षणं हंति घृतेन माषोपस्मारमस्योन्मदमानसत्वम् । पिबेदनु

त्र्यूषणहिंगुयुक्तं सर्पिर्नृमूत्रं रुचकेन सार्द्धम् ॥ भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोयं भूतभैरवः । स्वर्णजैः पंचभिर्बीजैर्देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥

अर्थ–पारा, हरताल, मनसिल, लोहे का भस्म, सुरमा, तामे की भस्म और गंधक इन सब को समान भाग लेके बकरे के मूत्र में खरल करे और सब से दूनी गंधक लोहे के पात्र में डालके और इन सब औषधों को मिलायके अग्नि पर रखके थोडी देर पचावे फिर एक मासे भर ले घी के साथ खाय तो अपस्मार और उन्माद इन को नाश करे यह औषध सेवन करने त्रिकुटा और हींग इनका चूर्ण घी में मिलायके खाय अथवा मनुष्य के मूत्र में संचरनिमक डालके पिलावे· यह सर्वभूतोन्मादोंपर भूतभैरवरस धतूरे के पांच बीज का चूर्ण और घी इन के साथ खाय ॥

भूतरावघृत

फलत्रिकव्योषकलिंगजोग्रा निशाद्वयैला चविका सुराह्वा । तुत्थं प्रियंग्वामपकालमेषी मनःशिलापद्मककंटकार्याः ॥ यवाव्हयष्टीकटुकुंकमांभोरिष्टाव्हसिद्धार्थपुगच्छदानि । रसांजनं ग्रंथिमधूकसारं बला रसोनाह्वनतानि चूर्णात् ॥ एषामजामूत्रदधिप्रयुक्तात्संजातमाज्यं ननु भूतरावम् । लोकेषु नाम्ना विदितं समस्तैर्वैद्यैः समुक्तं जगतां हिताय ॥ पानेन नस्येन च मर्दनेनानेकोग्रभूतग्रहजातिपीडाम् । निहंति रक्षांसि च डाकिनीनां मंत्रा यथा तारकंनामधेयम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, इन्द्रजो, वच, हलदी, दारुहलदी, इलायची, चविका, सुराह्व (देवदारु), लीलाथोथा, फूलप्रियंगु, कूठ, मजीठ, मनसिल, पद्माख, कटेरी, धमासा, मुलहटी, परवल, केशर, नेत्रवाला, रीठा, सपेद सरसों, रसोत, पीपरामूल, महुए के फूल, कत्था, वरियारा, लहसन और तगर इन के चूर्ण और बकरी का मूत्र और दही इन को एकत्र कर तथा इस में घी मिलायके पाक करे· जब सिद्ध हो जावे तब इसे भोजन नस्य और मर्दन इत्यादि प्रयोगों में देवे तो भूत, ग्रहजाति, राक्षस और डाकिनी इन की पीडा को नाश करे यह वैद्यों ने संसार के कल्याण करने को प्रसिद्ध करा है और यह अनुभव करा हुआ है ॥

धूप

ऋक्षजंबुकरोमाणि शल्लकीलसमं तथा । हिंगु मूत्रं च बस्तस्य धूपमस्य प्रयोजयेत् ॥ धूपेन शाम्यति क्षिप्रं बलवानपि यो ग्रहः ॥

अर्थ-रीछ, स्यार इन के बाल, सेह के कांटे, हींग और बकरे का मूत्र इन की धूनी से तत्काल बलवान् भी ग्रह शांति होवे ॥

ये च स्युर्भुवि गुह्यकाश्च प्रमथास्तेषां समाराधनम् ।
देवब्राह्मणपूजनं च शमयेदुन्मादमागंतुकम् ॥

अर्थ-इस पृथ्वी में गुह्यक, प्रमथ इत्यादिकों के आराधन तथा देव, ब्राह्मण इन का पूजन करे तो उन का आगंतुक उन्माद की शांति शीघ्र होवे ॥

शिरीषनक्तमालानां बीजानि मधुसर्पिषा ।
भक्ष्याश्च सर्वे सर्वेषां सामान्यो विधिरुच्यते ॥

अर्थ-सिरस के बीज और कंजा के बीज इन को सहत और घी के साथ खाय और भक्ष पदार्थ संपूर्ण आरोग्य करते हैं यह सामान्य विधि कही है ॥

भूतोन्मादचिकित्साशास्त्रार्थ

बुद्ध्वा दोषं वयःसात्म्यं देशं कालं बलाबलम् ।
चिकित्सितमिदं कुर्यादुन्मादे भूतदोषजे ॥

अर्थ-वैद्य को उचित है कि भूतोन्माद रोगी का दोष अवस्था और प्रकृति को माने ऐसे देश, काल, बल और अशक्तता इन को विचारके भूतोन्माद की चिकित्सा करे ॥

देवर्षिपितृगंधर्वैरुन्मत्तेषु च बुद्धिमान् । त्यजेन्नस्यांजनादीनि तीक्ष्णानि क्रूरकर्म च ॥ सर्पिःपानं सूर्यजपहोममंत्रादिरिष्यते ॥

अर्थ-देव, ऋषि, पितर और गंधर्व इन की बाधा से उत्पन्न हुए मनुष्य को नस्य और अंजन इत्यादि क्रूर कर्म कदाचित् न करे. उस को घृतपान करावे तथा सूर्य का जप, होम, गायत्रीमंत्र इत्यादिक कर्म करे ॥

पूजाबल्युपहारशांतिविषयो होमेष्टिमंत्रक्रियादानं स्वस्त्ययनं व्रतादिनियमः सम्यग् जपो मंगलम् । प्रायश्चित्तविधानमंजलिरथो रत्नौषधीधारणं भूतानामधिपस्य विष्टरपतेर्गौरीपतेरर्चनम् ॥

अर्थ-पूजा, बलि (भेट), नैवेद्य शांतिनिमित्त होम, मंत्र, दान, पुण्याहवाचन, व्रत, नियम, जप, मंगल, प्रायश्चित्त, नमस्कार, मणि और औषधी इन का धारण विष्णु और शिव का पूजन इत्यादि भूतोन्माद पर उपचार करे ॥

महापैशाचिकघृत

जटिला पूतना केशी चारटी मर्कटी वचा । त्रायमाणा जया वीरा चोरकंकटुरोहिणी॥कायस्था सूकरी छत्रा सातिपत्रा पलंकषा । महापुरुषदंता च वयस्था नाकुलीद्वयम् ॥ कटंभरा वृश्चिकाली स्थिरा चैतैर्घृतं पचेत् ॥ तत्तु चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥ महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथामृतम् । बुद्धिमेधास्मृतिकरं बालानां चांगवर्धनम् ॥

अर्थ–जटामांसी, सुगंध जटामांसी, छोटी नीली, कौछ के बीज, वच, त्रायमाण, सेवती, भूयआवला, मडोता, कुटकी, हरड, बाराहकंद, सोंफ, सालवृक्ष, गोखरू, बडी सतावर, ब्राह्मी, दो प्रकार की नाकुली, कटंभरा, छोटी किवाच और सालपर्णी इन सब के कल्क में घी डालके सिद्ध करे यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रहबाधा और अपस्मार इन को नाश करे यह महापैशाचघृत अमृत के समान है यह बुद्धि, मति और स्मृति को उत्पन्न करे तथा बालकों के देह को पुष्ट करे है ॥

कल्याणकघृत

कल्याणकं प्रयुंजीत महद्वा चोत्तमं घृतम् ।
तैलं नारायणं वापि बृहन्नारायणं तथा ॥

अर्थ–कल्याण घृत अथवा नारायण तैल अथवा बृहन्नारायण तैल ये उन्मादरोग पर देने चाहिये ॥

उन्मादपथ्य

गोधूममुद्गारुणशालयश्च धारोष्णदुग्धं शतधौतसर्पिः । घृतं नवीनं च पुरातनं च कूर्मामिषं धन्वरसा रसाला ॥ पुराणकूष्मांडफलं पटोलं ब्राह्मीदलं वास्तुकतंदुलीयम् । द्राक्षा कपित्थं पनसं च वैद्यैर्विधेयमुन्मादगदेषु पथ्यम् ॥

अर्थ–गेहूं, मूंग, लाल चावल, धारोष्ण अर्थात् तत्काल का दुहा हुआ दूध, सौ वार धुला हुआ घी, नवीन घी अथवा पुराना घी, कछुए का मांस, जंगली जीवों का मांसरस, सिखरन, पुराना पेठा, पटोलपत्र, ब्राह्मी के पत्ते, वथुए का साग, चौलाई का साग, दाख, कैथ, कटहर, सब फल वैद्यों ने उन्मादरोगों में पथ्य कहे हैं ॥

उन्माद अपथ्य

मद्यं विरुद्धाशनमुष्णभोजनं निद्राक्षुधातृट्कृतवेगधारणम् ।
तिक्तानि तीक्ष्णानि भिषक्समादिशेदुन्मादरोगेषु विगर्हितानि ॥

अर्थ-मद्य, विरुद्ध पदार्थ भोजन, उष्ण पदार्थ भोजन, निद्रा, भूँख, प्यास इन के वेगों को रोकना, चरपरे पदार्थ सब उन्मादरोग में वर्जित कहे हैं ॥

इतिश्री बृहन्निघंटुरत्नाकरे उन्मादरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

अपस्मारकर्मविपाकः ।

गुरौ स्वामिनि वस्ते यः प्रतिकूलं समाचरेत् ॥
सोपस्मारी भवेत्तत्र कुर्याच्चांद्रायणं नरः ॥

अर्थ-जो प्राणी गुरु और स्वामी इन के समीप रहकर इन के प्रतिकूल कार्य करे अर्थात् इन की आज्ञा पालन न करे किंतु इन का अहित करे है उस को अपस्मार (मृगी) रोग होता है इस के दूर करने को चांद्रायण व्रत करे ॥

ब्राह्मणश्वासरोधेन ह्यपस्मारी भवेन्नरः ।
वक्ष्ये तस्य प्रतीकारं दानहोमक्रियाविधिः ॥

अर्थ-जो प्राणी ब्राह्मण की श्वास रोकता है वह अपस्मार रोगी होता है उस के दूर करने को यत्न और दान होम आदि क्रिया कहता हूं ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

शनिभूसुतदिननाथा निधनस्था यस्य जन्मकाले स्युः । नानाव्याधिवधाद्यैः पीडां चापस्मारसंभवां तस्य ॥ अष्टमस्थानस्थशनिमंगलसूर्यजनितापस्मारशांतये ग्रहप्रीतये पूर्वोक्तमेव सकलं जपादि कुर्यात् ॥

अर्थ-जिस के जन्मकाल में शनि, मंगल और सूर्य ये अष्टमस्थान में पडे हों तो उस के अनेक प्रकार की व्याधि किंवा अपस्मार इन में से कोई पीडा हो. उस प्राणी को अष्टम स्थानस्थ शनि, मंगल और सूर्य इन से उत्पन्न हुए अपस्मार की शांति करने को तथा ग्रहों की प्रसन्नता के अर्थ पूर्वोक्त जपादिक सर्व उपचार करे ॥

अपस्मारनिदान

तमःप्रवेशः संरंभो दोषोद्रेकहतस्मृतिः।
अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विधः॥

अर्थ–अन्धकार में प्रवेश करने के समान ज्ञान का नाश होना, नेत्र टेढे बांके फिरे, दोषों के बढने से ज्ञान का नष्ट होना, ये लक्षण जिस रोग में होंय ऐसा यह भयंकर (अपस्मार) रोग चार प्रकार का है इस को लौकिक में मिरगी ऐसे कहते हैं॥

पूर्वरूप

हृत्कंपः शून्यता स्वेदो ध्यानं मूर्च्छा प्रमूढता।
निद्रानाशश्च तस्मिंस्तु अपस्मारे भविष्यति॥

अर्थ–जब अपस्मार होनेवाला होय है तब ये लक्षण होते हैं. हृदय कांपे और शून्य पड जाय (कुछ सूझे नहीं), चिंता, मूर्च्छा, पसीना आवे, ध्यान लग जाय, मूर्च्छा कहिये मन का मोह और प्रमूढता कहिये इन्द्रिय का मोह होय, निद्रा जाती रहे॥

वातजन्य अपस्मार

कंपते प्रदशेद्दंतान्फेनोद्वामी श्वसत्यपि।
परुषारुणकृष्णानि पश्येद्रूपाणि चानिलात्॥

अर्थ–वात के अपस्मार से रोगी कांपे, दांतों को चंवावे, मुख से झाग गेरे और श्वास भरे तथा कर्कश अरुणवर्ण और काले वर्ण मनुष्यों को देखे अर्थात् कोई नीलवर्ण का मनुष्य मेरे पास दौडा आता है. इसी प्रकार पित्त से पीले वर्ण का पुरुष दौडा आता है और कफ में सपेद रंग का पुरुष मेरे सामने दौडा आता है ऐसे जानना॥

पैत्तिक अपस्मार

पीतफेनांगवक्राक्षः पीतासृग्रूपदर्शनः।
सतृष्णोष्मानिलव्याप्तलोकदर्शी च पैत्तिकः॥

अर्थ–पित्त की मिरगीवाले के झाग, देह, मुख और नेत्र पीले होते हैं और वह पीले रुधिर के रंग की सी सब वस्तु देखे, प्यासयुक्त और गरमी के साथ अग्नि से व्याप्त भया ऐसा सब जगत को देखे॥

कफापस्मार

शुक्लफेनांगवक्राक्षः शीतहृष्टांगजो गुरुः।
पश्येच्छुक्लानि रूपाणि मुच्यते श्लैष्मिकश्चिरात्॥

अर्थ–कफ की मृगीवाले के झाग, अंग, मुख और नेत्र सपेद होय, देह शीतल होय, तथा देह के रोमांच खडे रहें, भारी होय और सब पदार्थ सपेद दीखें यह अपस्मार (मिरगी) रोग देर में छोडे या से यह सूचना करी कि वातपित्त की मृगी जलदी रोगी को छोड देती है ॥

संन्निपातापस्मारनिदान

सर्वैरेतैः समस्तैश्च लिंगैर्ज्ञेयस्त्रिदोषजः ।
अपस्मारः स चासाध्यो क्षीणश्चानश्नतश्च यः ॥

अर्थ–जिस में तीनों दोषों के लक्षण मिलते हों वो त्रिदोषज अपस्मार जानना यह असाध्य है और जो क्षीण पुरुष के होय वहभी असाध्य है तथा पुराना पड गया होय वहभी अपस्मार (मिरगी) रोग असाध्य है ॥

असाध्य लक्षण

प्रस्फुरन्तं च बहुशः क्षीणं प्रचलितभ्रुवम् ।
नेत्राभ्यां च विकुर्वाणमपस्मारो विनाशयेत् ॥

अर्थ–वारंवार कंपयुक्त होय, क्षीण हो गया हो, भ्रुकुटी (भोंह) को चलानेवाला और नेत्र टेढे बांके करनेवाला ऐसा अपस्मारी रोगी जीवे नहीं ॥

अपस्मार का कालनियम कहते हैं

पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः ।
अपस्माराय कुर्वन्ति वेगं किंचिदथोत्तरम् ॥

अर्थ–कोप को प्राप्त भये जो दोष सो पंद्रहवें दिन अथवा बारहवें दिन अथवा महीनाभर में मिरगी रोग प्रगट करे, तिन में पैत्तिक १५ दिन, वातिक १२ दिन और श्लैष्मिक ३० दिन में आती है. इस जगह बारहवें दिन के पिछाडी पक्ष कहना ठीक था फिर पहिले पक्ष धरने का यह प्रयोजन है कि अधिक काल करके ही दोष वेग करते हैं यह कहा. ' किंचिदथोत्तरम् ' इस पद से यह सूचना करी है कि जिस जिस दोष का जो जो काल कहा है उससे पहिले भी दोषों के तारतम्य से मिरगी रोग होय है ऐसे जानना. शंका–वेग उत्पन्न करे अपस्मार के प्रगट कर्त्ता दोष देह में सदा रहते हैं, फिर वह सर्वकाल में वेग क्यों नहीं करते द्वादशादि दिन में क्यों करते हैं ? इस विषय में दृष्टांतरूप समाधान कहते हैं ॥

देवे वर्षत्यपि यथा भूमौ बीजानि कानिचित् ।
शरदि प्रतिरोहन्ति तथा व्याधिसमुच्छ्रयः ॥

अर्थ–जैसे चातुर्मास में इन्द्र वर्षे भी है परंतु कोई जब गेहूं चना आदि बीज शरदऋतु में ही ऊगते हैं तैसे ही सर्व रोग के बीजरूप वातादिक दोष कदाचित् किसी अपस्मारादि व्याधिविशेष के निदानादिक का संगम होने से उस रोग को प्रगट करते हैं अथवा इस को मुख्य प्रयोजन यह है कि बीज के अंकुर फूटने में तेज, वायु, पृथ्वी, जल ये सहायक भी हैं परन्तु वे सब कालविशेष की प्रतीक्षा (इच्छा) करते हैं. अंकुर आने को काल ही सहाय चाहिये अर्थात् जिस काल में जिस अंकुर का बीज आता है वह उसी काल में आवेगा बीच में कभी नहीं आनेवाला यही न्याय चातुर्थिक ज्वरादि कों में भी जानना ॥

मधुकघृत

मधूकद्विपले कल्के द्रोणे चामलकीरसे ।
तस्मिन् सिद्धं घृतप्रस्थं पित्तापस्मारभेषजम् ॥

अर्थ–आठ तोले मुलहटी का चूर्ण और १०२४ तोले आवले का रस इस में ६४ तोले घृत को मिलायके पक्क करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके छान लेवे. यह पित्त के अपस्मार रोग को नाश करे ॥

काशघृत

काशक्षीरेक्षुरसयोः काश्मर्यष्टगुणे रसे । कार्षिकैर्जीवनीयैश्च सर्पिः प्रस्थं विपाचयेत् ॥ वातपित्तोद्भवं क्षिप्रमपस्मारं नियच्छति ॥

अर्थ–काससंज्ञक तृण का काढा और ईख का रस इन से अठगुना कंभारी का रस ले इन में जीवनीयगणोक्त प्रत्येक औषध का चूर्ण तोले २ भर मिलावे. फिर इस में ६४ तोले घी डालके औटावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके सेवन करे. यह वातपित्त से प्रगट हुए अपस्मार रोग को तत्काल नाश करे ॥

कफअपस्मारपर वचाद्यघृत

वचाशम्याककैडर्यवयस्थाहिंगुचोरकैः ।
सिद्धं पलं कषायुक्तं वातश्लेष्मात्मिकं घृतम् ॥

अर्थ–बच, अमलतास, कैंडर्य (कंजा का भेद), आवला, हींग, गटोना और और छोटे गोखरू इन के कल्क के साथ सिद्ध करा हुआ घी अपस्मारनाशक है ॥

मधुवचायोग

यः खादेत्क्षीरभक्ताशी माक्षिकेन वचारजः ।
अपस्मारं महाघोरं सुचिरोत्थं जयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ–दूधभात का भोजन करनेवाला मनुष्य यदि वच के चूर्ण को सहत में मिलायके चाटे तो बहुत दिन का घोर अपस्मार निश्चय दूर हो परंतु वच को देखके ले इधर मथुराआदि देश में नहीं मिलती. इस में सुगंध आती है और रंग में कुछ २ काली होती है ॥

मुस्तकमूलयोग

उत्तरदिग्गतमुस्तकमूलं बुद्ध्यासमुद्धृतं पेष्य ।
पीतं पयसा हन्यादपस्मृतिं गोः सवर्णवत्सायाः ॥

अर्थ–नागरमोथे के उत्तर के तरफ की जड को बछरेवाली और एकरंग की गौ के दूध में पीसके पीवे तो अपस्मार (मृगी) का नाश करे ॥

कूष्मांडकादियोग

कूष्मांडकगिरोत्थेन रसेन परिपेषितम् ।
अपस्मारविनाशाय यष्ट्याह्वं स पिबेत्त्र्यहम् ॥

अर्थ–कुह्मडे के गीर के रस में जेठीमध घिसके पीवे तो तीन दिन में अपस्मरा का नाश होता है ॥

भैरवरसायन

वचामृताव्योषमधूकसाररुद्राक्षसिंधूद्भवबार्हतानि । फलं समुद्रस्य रसोनकल्कं ध्मातं हि नासापुटमध्यदेशे ॥ अपस्मृतिःश्लेष्ममरुच्छिरोरुक्प्रलापतंद्राभ्रमजाड्यमोहान् । ससंनिपातश्रुतिकाक्षिभंगान् सपीनसं हंति हलीमकं च । रसायनं भैरवनामधेयं ज्ञातं विचारात्कविविठ्ठलेन ॥

अर्थ–वच, गिलोय, सोंठ, मिरच, पीपल, महुए का गोंद, रुद्राक्ष, सैंधा निमक, कटेरी के फल, समुद्रफल और लहसन इन सब को पीसके कल्क कर लेवे. इस को नाक में टपकावे तो अपस्मार रोग नष्ट होय तथा वादी, कफ, मस्तकपीडा, प्रलाप, तंद्रा, भ्रम, जडता, मोह, सन्निपात, कर्णरोग, नेत्रभंग, पीनस और हलीमक इन सब को नाश करे इस को भैरवरसायन ऐसे कहते हैं इस को विठ्ठलवैद्य ने विचार करके जाना है ॥

स्मृतिसागररस

रसगंधकतालानां सशिलाताम्रभस्मनाम् । शुद्धानां मूर्छितानां च चूर्णं भाव्यं वचामृतैः ॥ एकविंशतिधा पश्चाद्ब्राह्मी

वारा तथैव च । कटभीबीजतैलेन भावयेदेकवारकम् ॥ स्मृतिसागरनामायं रसोपस्मारनाशनः । सर्पिषा माषमात्रोयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, हरताल, मनसिल और तामे की भस्म ये शुद्ध मूर्च्छित कर इन के चूर्ण में वच और ब्राह्मी इन प्रत्येक की इक्कीस २ भावना देवे. फिर मालकांगनी के तेल की एक भावना देय तो यह स्मृतिसागर नामक रस अपस्मार नाशक बने इस को १ मासे के अनुमान घी के साथ नित्य भक्षण करे तो अपस्मार रोग निवारण होवे ॥

पानीयकल्याणघृत आपस्मारादिकों पर

त्रिफला द्वे निशे कौंती सारिवे द्वे प्रियंगुका । शालपर्णी पृष्ठपर्णी देवदार्व्यैलवालुकम् ॥ न तं विशाला दंती च दाडिमं नागकेशरम् । नीलोत्पलैलामंजिष्ठा विडंगं कुष्ठपद्मकम् ॥ जातीपुष्पं चंदनं च तालीसं बृहती तथा । एतैः कर्षसमैः कल्कैर्जलं दत्त्वा चतुर्गुणम् ॥ घृतप्रस्थं प्रचेद्धीमानपस्मारे ज्वरे क्षये ॥ उन्मादे वातरक्ते च कासे मंदानले तथा । प्रतिश्यायकटीशूले तृतीयकचतुर्थके ॥ मूत्रकृच्छ्रे विसर्पे च कंडूपांड्वामये तथा ॥ विषद्वये प्रमेहेषु सर्वथैवोपयुज्यते ॥ वंध्यानां पुत्रदं भूतयक्षरक्षोहरं स्मृतम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, हलदी, दारुहलदी, रेणुकबीज, सारिवा, कालीसर फूल प्रियंगु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, देवदारु, एलवालुक, तगर, इन्द्रायन की जड, अनार, की छाल, दंती की जड, नागकेशर, नीला कमल, इलायची, मजीठ, वायविडंग, कूठ, पद्माख, चमेली के फूल, चंदन, तालीसपत्र और कटेरी ये प्रत्येक एक २ तोले लेकर कल्क करे और कल्क से चौगुना जल ले तथा घी ६४ तोले डाले सब को एकत्र कर मंदाग्नि से पचावे. जब जल जर जावे केवल घृत रहे तब उतार ले. वह मृगी, ज्वर, क्षई, उन्माद, वातरक्त, खांसी, मंदाग्नि, पीनस, कमर का शूल, तृतीय और चातुर्थिक ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्प, खुजली, पांडुरोग, सर्पादिक जंगम विष और बच्छनागादिक स्थावर विष और प्रमेह ये सब रोग दूर हों. वंध्यास्त्रियों को संतान देवे. तथा भूत, यक्ष, राक्षस के दोष को हरण करे है ॥

शंखपुष्पीघृत

शंखपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसे घृतम् ।
पुराणं हंत्यपस्मारं मेध्यमुन्मादनाशनम् ॥

अर्थ-संखाहूली, वच, कूठ और ब्राह्मी का रस इन के कल्क में घृत मिलायके बनावे. यह पुराने अपस्मार को नष्ट करे बुद्धि बढावे और उन्माद रोग को दूर करे॥

सैंधवादि घृत

घृतसैंधवहिंगुभ्यो कर्षैर्वातैश्चतुर्गुणैः ।
मूत्रैः सिद्धमपस्मारं हृद्ग्राहग्रामनाशनम् ॥

अर्थ-घृत, सैंधा निमक और हींग ये एक एक तोले और गोमूत्र बारह तोले ले सब को एकत्र कर सिद्ध करे जब मूत्र जल जावे तब उतार ले. यह घी अपस्मार रोग और हृदय रोग इन का नाश करे ॥

ब्राह्मीघृत

ब्राह्मीरसे वचाकुष्ठशंखपुष्पीभिरेव च ॥
पक्कं पुरातनं सर्पिरपस्मारहरं घृतम् ॥

अर्थ-ब्राह्मी के रस में वच, कूठ, संखाहूली, पुराना घी मिलायके सिद्ध करे. यह घी अपस्माररोग को हरण करता है ॥

कूष्मांडघृत

कुष्मांडकरसे सर्पिरष्टादशगुणे पचेत् ।
यष्टयाव्हकल्कैस्तत्पानादपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ-एक भाग घी और अठारह भाग पेठे का रस इस प्रकार लेकर अग्निपर पक्क करे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके मुलहटी के चूर्ण से भक्षण करे तो अपस्मार को नाश करे ॥

पंचगव्यघृत

गोशकृद्रसदध्यम्लक्षीरमूत्रैः समं घृतम् ।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ॥

अर्थ-गौ के गोबर का पानी, दही खट्टा, दूध और गौ का मूत्र तथा इन सब की बराबर गौ का घी लेवे सब को मिलायके अग्निपर घी सिद्ध करे तो यह चातुर्थिक ज्वर, उन्माद, ग्रह और अपस्मार रोग इन को दूर करे ॥

अपस्मारनस्य

अरण्यत्रपुसीचूर्णं नस्येनापस्मृतिं जयेत् ॥

अर्थ-वन के खीरे के चूर्ण की नस्य लेने से मृगीरोग दूर होवे ॥

निर्गुंडीभवमक्रूरं नावनांजनयोगतः।
उपैति सहसा नाशमपस्मारो न संशयः॥

अर्थ-निर्गुंडी के रस में अखरोट को पीस नस्य अथवा अंजन करने से तत्काल अपस्माररोग को नाश करे इस में संशय नहीं है॥

श्वशृगालबिडालानां कपिलानां गवामपि।
पित्तातिनस्यतो हन्युरपस्मारं पृथक् पृथक्॥

अर्थ-कुत्ता, स्यार, बिलाव, कपिला गौ इन प्रत्येक के पित्त को पीसके नस्य देवे तो अपस्मार नाश होय परंतु इन सब को एक न करे॥

अंजन

पुष्योद्धृतं शुनः पित्तमपस्मारघ्नमंजनम्।
तदेव सर्पिषा युक्तं धूपनं परमं हितम्॥

अर्थ-पुष्यनक्षत्र में कुत्ते का पित्त निकालके अंजन करे अथवा घी मिलायके धूनी देवे तो अपस्मार को नाश करे॥

मनोव्हा तार्क्ष्यकं चैव शकृत्पारावतस्य च।
अंजनं हंत्यपस्मारमुन्मादं च विशेषतः॥

अर्थ-मनसिल, रसोत और कबूतर की वीट इन का अंजन अपस्मार और उन्मादरोग इन को नाश करे॥

यष्टिहिंगुवचावज्रीशिरीषलशुनामयैः।
साजमूत्रैरपस्मारे सोन्मादे नावनांजने॥

अर्थ-मुलहटी, हींग, वच, थूहर का दूध, सिरस के बीज, लहसन और कूठ इन को बकरे के मूत्र में पीस अंजन और नस्य देवे तो अपस्मार और उन्मादरोग दूर हो॥

करंजदारुसिद्धार्थकठभी रामठं वचा। समंगा त्रिफला व्योषप्रियंगुश्च समांशकः॥ बस्तमूत्रेण संपिष्टा नस्यपानांजनादिषु।
योज्यो योगोयमुन्मादेपस्मारे भूतरोगिषु॥

अर्थ-कंजा, देवदारु, सपेद सरसों, मालकांगनी, हींग, वच, मजीठ, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, फूलप्रियंगु ये सब समान भाग लेवे. सब को बकरे के मूत्र में पीसके पीवे तो वा नस्य करे अथवा अंजन करे तो ग्रहयोग, अपस्मार, उन्माद तथा भूतोन्माद इन पर देवे॥

नकुलोलूकमार्जारगृध्रकीटाहिकाकजैः ।
तुंडैः पक्षैः पुरीषैश्च धूपनं कारयेद्भिषक् ॥

अर्थ--नोला, घूघू, बिलाव, गीध, कीडा, सांप और कौआ इन के मुख, पाख और विष्टा की धूनी अपस्माररोगनाशक है ॥

दुश्चिकित्स्यो ह्यपस्मारश्चिरकारी महागदः । तस्माद्रसायनैरेतैः प्रायशः समुपाचरेत् ॥ हृत्कंपोक्षिरुजा यस्य स्वेदो हस्तादिशीतता । दशमूलीजलं तस्य कल्याणाज्यं च योजयेत् ॥

अर्थ–अपस्माररोग कष्टसाध्य, बहुत दिन रहनेवाला है. इसी वास्ते अपस्मार रोग प्रकरण पर जो जो रसायन कही है उन को बहुधा उपचार करे तथा हृदय का कंप, नेत्रों की पीडा, देह में पसीने, हाथ पैरों का ठंडा होना ऐसे लक्षण होवें उस को दशमूल का काढा और कल्याणघृत पीने को देवे ॥

त्रिकत्रयलेह

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं तथा ।
हंत्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तराम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज और जीवनीयगण की सब औषध इन का अवलेह करे तो अपस्मार, उन्माद और दुस्तर वातरोग इन का नाश करे ॥

कल्याणचूर्ण

पंचकोलं समरिचं त्रिफलाबिडसैंधवम् । कृष्णा विडंगपूतीकयवानीधान्यजीरकम् ॥ पीतमुष्णांबुना चूर्णं वातश्लेष्मामयापहम् । अपस्मारे तथोन्मादे दुर्नामग्रहणीगदे ॥ एतत्कल्याणकं चूर्णं नष्टस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपलामूल, चव्य, चित्रक की छाल, त्रिफला, बिड निमक, सैंधा निमक, पीपल, वायविडंग, कंजा, अजमायन, धनिया और जीरा इन सब का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो वातकफ का रोग, अपस्मार, उन्माद, बवासीर, संग्रहणी इन को नाश करे और अग्निदीपक है इस को कल्याणचूर्ण कहते हैं ॥

लेप व दाग

गोमूत्रयुक्तैः सिद्धार्थैः प्रलेपोद्वर्तनं हितम् ।
धूमस्तीक्ष्णानि नस्यानि दाहः सूच्या कपोलयोः ॥

अर्थ-अपस्माररोगवाले के गोमूत्र में सपेद सरसों पीसके देह में लेप करे अथवा मालिस करे अथवा धूप, तीक्ष्णनस्य अथवा कपोल (गालों) के ऊपर सूई का दाग देना ये उपचार करने चाहिये ॥

द्वौ कीटमेषौ विधिवदानीय रविवासरे ।
कंठे भुजे वा संधार्य जयेदुग्रामपस्मृतिम् ॥

अर्थ-मेढा के बाल में से दो कीडों को रविवार के दिन ले उन को कंठ में अथवा भुजा में यंत्र में रखके बांधे तो वे अपस्मार रोग को जीतते हैं ॥

चंदनादि अवलेह

चंदनं तगरं कुष्ठं त्रिसुगंधी च वास्तुकम् । मंजिष्ठाभीरुमृद्वीकापाठाश्यामाप्रियंगुभिः ॥ स्वयंगुप्ता पीलुपर्णी विषरास्ना गवादनी । कंकोली जीवकोमेदपुष्करं घनवालकम् ॥ शाल्मली तस्य निर्यासस्तुगा कालीयकं तथा । तित्तिडीकं च वृक्षाम्लं त्रिफला काश्मरीफलम् ॥ जातीफलं तु गोक्षीरी कृष्णागरु च नागरम् । खर्जूरं च समांशानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ भावितं बीजपूरस्य स्वरसेन च सप्तधा । समशर्करया युक्तमाटरूषरसेन तु ॥ भावितं सप्तधा तत्तु नात्र कार्या विचारणा । एष लेहः सदा शस्तो ह्यपस्मारे सुदारुणे॥उन्मादे कामलारोगे पांडुरोगे हलीमके । रक्तपित्ते राजरोगे पित्तातीसारपीडिते ॥ रक्तातिसारशोथे च शिरोरोगे सदाज्वरे। तमके स्तन्यरोगे च च्छर्दौ दाहे मदात्यये ॥ अष्टादशसु मेहेषु कासे श्वासे सपीनसे । बालानां च हितं तच्च शृणु मात्रामतःपरम् ॥ उत्तमा कर्षमात्रा तु पादहीना तु मध्यमा । बलवीर्यकरी प्रोक्ता सद्यः सर्वगुणा भवेत् ॥ नरकुंजरवाहानां चोपयुक्तो हितो मतः । चंदनाद्यो महायोगः कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

अर्थ-चंदन, तगर, कूठ, दालचीनी, इलायची, पत्रज, बथुआ, मजीठ, सतावर, दाख, पाढ, हरड, फूलप्रियंगु, कौंच के बीज, मूर्वा, अतीस, रास्ना, इन्द्रायन, कंकोल, जीवक, मेदा, पुहकरमूल, नागरमोथा, नेत्रवाला, सेमर का गोंद, मोचरस, वंशलो-

चन, दारुहलदी, तंतडीक, अमलवेत, त्रिफला, कंभारी का फल, जायफल, तवाखीर, काली अगर, सोंठ और खजूर ये समान भाग लेवे सब का बारीक चूर्ण कर बिजोरे के रस की सात भावना देवे और अडूसे के रस की सात भावना देवे परंतु सब चूर्ण के समान मिश्री मिलायके भावना देवे. यह अवलेह दारुण अपस्मार रोग, उन्माद, कामला, हलीमक, रक्तपित्त, राजरोग, पित्तातिसार, रक्तातिसार, शोथ, मस्तकरोग, सदैव रहनेवाला ज्वर, तमक श्वास, स्त्री के दूध का विकार, छर्दि, दाह, मदात्यय, अठारह प्रकार का कुष्ठरोग, प्रमेह, खांसी, श्वास, पीनस इन को दूर करे है. यह बालकों को हितकारी है. इस की उत्तम मात्रा १० मासे की है ७॥ मासे की मध्यम है यह मात्रा बल वीर्य करे तत्काल सर्वगुणदायक है. यह मनुष्य, हाथी, घोडे इन सब को परमोपयोगी है. यह चंदनादि अवलेह कृष्णात्रेय महर्षि करके पूजित है ॥

द्राक्षाद्यवलेह

द्राक्षादारुनिशायुतं समधुकं कृष्णा विशाला त्रिवृत्पृथ्वीका त्रिफला विडंगकटुकं श्रीचंदनं बालकम् । चातुर्जातकनिंबकांचनतुगातालीसपत्रं घनं मेदौ द्वौ सुरदारुकुष्ठकमलं धात्री समंगा बला ॥ भार्ङ्गी कोलकदाडिमाम्लसहितं काश्मर्यशृंगाटकं काचाह्वामलघंटिकालघुतरा क्षुद्रा च रास्ना युतम् । चूर्णं शर्करया समं मधु घृतं खर्जूरकैः संयुतं लिह्यात्कर्षमिदं समस्तबलवान् हन्यादपस्मारकम् ॥ उन्मादं च सुदारुणं क्षयमथो गुल्मं सपांडुं तथा कासश्वासमसृक्प्रवाहमुदरं स्त्रीणां हितं शस्यते ॥

अर्थ–दाख, दारुहलदी, मुलहटी, पीपल, इन्द्रायन, निसोथ, इलायची, हरड, बहेडा, आवला, वायविडंग, कुटकी, चंदन, नेत्रवाला, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नीम की छाल, कचनार की छाल, वंशलोचन, तालीसपत्र, नागरमोथा, मेदा, महामेदा, देवदारु, कूठ, कमल, आवले, मजीठ, खिरेटी, भारंगी, बेर, अनार, कंभारी, सिंघाडे, हलदी, कपूर, सन, बडा सन, कटेरी और रास्ना ये सब पदार्थ समान भाग लेके चूर्ण करे और चूर्ण के समान मिश्री मिलावे तथा सहत, घी और खजूर मिलायके अवलेह के समान करके धर रखे. इस में से १० मासे खाने को देवे तो बलवान् अपस्मार, उन्माद, क्षय, गोळा, पांडुरोग, खांसी, श्वास, प्रदर, उदर, और प्रदररोग इन को दूर करे ॥

शास्त्रार्थ

पूर्वं युंज्यादपस्मारे बुद्धिमान् छर्दनादिकम् । वातिकं बस्तिभिः प्रायः पैत्तिकीयं विरेचनैः ॥ कफजं वमनप्रायैरपस्मारमुपाचरेत् ॥

अर्थ—अपस्माररोग पर प्रथम बुद्धिमान् वैद्य को वमनादिक कर्म कर्त्तव्य है. वातिक अपस्मार पर बस्तिकर्म करे. पैत्तिक अपस्मार में विरेचन देवे और कफ के अपस्मार में वमन प्रायः देना चाहिये ॥

पलंकषातैल

पलंकषावचापथ्यावृश्चिकाल्यर्कसर्षपैः । जटिला पूतना केशी लांगली हिंगुरोचकैः ॥ लशुनातिरसश्चित्रः कुष्ठैरेभिश्च पक्षिणाम् । मांसाशिनां यथालाभं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ॥ सिद्धमभ्यंजनं तैलमपस्मारविनाशनम् ॥

अर्थ—लाख, वच, पथ्या, कौच, आक, सरसों, जटामांसी, सुगंध जटामांसी, कलियारी, हींग, संचरनिमक, लहसन, मूर्वा, चित्रक और कूठ इन का काढा वा कल्क करके तथा मांस खानेवाला पक्षियों का मांसरस और बकरी का मूत्र सब से चौगुना मिलाय उस में तेल डालके सिद्ध करे तो अपस्मार को नाश करे ॥

कटभ्यादितैल

कटभीनिंबकट्वंगमधुशिग्रुत्वचारसे ।
सिद्धं मूत्रयुतं तैलमभ्यंगार्थं प्रशस्यते ॥

अर्थ—मालकांगनी, नीम की छाल, सहजना मीठा और दालचीनी इन के काढे तथा गोमूत्र इन में तेल डालके सिद्ध करे तो यह तेल अपस्मार रोगपर मालिस करने पर उत्तम है ॥

शिग्रुतैल

शिग्रुकुष्ठवचाजाजिलशुनव्योषहिंगुभिः ।
बस्तमूत्रे शृतं तैलं नावनं स्यादपस्मृतौ ॥

अर्थ—सहजना, कोष्ठ, वचा, जीरा, लहसन, त्रिकटु, (सोंठ, मिरच, पीपल,) हींग ये सब समभाग लेकर मेढे के मूत्र में डालकर उस में तेल औटावे इस तेल का नस्य करने से अपस्मार दूर होता है ॥

तैलप्रस्थं घृतप्रस्थं जीवनीयैः प्रलेपनैः ।
क्षीरद्रोणे पचेत्सिद्धमपस्मारविमोक्षणम् ॥

अर्थ–तेल अथवा घी ६४ तोले लेकर जीवनीय गणोक्त औषधों के साथ १०२४ तोले दूध में औटायके सिद्ध करे तो यह अपस्मार रोग को दूर करे ॥

अभ्यंगे सार्षपं तैलं बस्तमूत्रे चतुर्गुणे ।
सिद्धं स्याद्गोशकृन्मूत्रे स्नानाच्छादनमेव च ॥

अर्थ–सरसों के तेल को बकरे के मूत्र में अथवा गौ के गोबर में अथवा गौमूत्र के साथ पचायके सिद्ध करे फिर इस की मालिस करे तो अपस्मार को नष्ट करे ॥

अपस्मार पथ्य.

लोहिताः शालयो मुद्गा गोधूमाः प्रतनं हविः । कूर्मामिषं धन्वरसो दुग्धं ब्राह्मीजलं वचा ॥ पटोलं वृद्धकूष्मांडं वास्तुकं स्वादु दाडिमम् । सौभांजनं पयःपेटी द्राक्षा धात्री परूषकम् ॥ अपस्मारे गदे नृणां पथ्यमेतदुदीरितम् ॥

अर्थ–लाल चांवल, मूंग, गेहूं, पुराना घी, कछुए का मांस, धमासे का जल, दूध, ब्राह्मी, खस, वेखंड, परवल, पुराना कुम्हडा, चाकवत, अनारदाना, शेवगा, पयःपेटी, दाख, आंवला और फालसा यह अपस्माररोग पर पथ्य कहा है ॥

अपस्मार अपथ्य

चिंताशोकभयक्रोधमद्भुतं दर्शनानि च । मद्यमत्स्यविरुद्धान्नं तीक्ष्णोष्णगुरुभोजनम् ॥ अतिव्यवायमायासं पूज्यपूजाव्यतिक्रमम् । पत्रशाकानि सर्वाणि बिंबीमाषाढकं फलम् ॥ तृषानिद्राक्षुधावेगानपस्मारी नरस्त्यजेत् ॥

अर्थ–चिंता, शोक, भय, क्रोध, अद्भुत प्रकार की वस्तु का दर्शन, मद्यपान, मछली, विरुद्ध अन्न, तीखा, गरम, भारी भोजन, अत्यंत मैथुन, परिश्रम करना, गुरु ब्राह्मण माता पिता आदि पूज्यों की पूजा न करना और भूत प्रेतादि दुष्ट देवों का पूजन करना, सब पत्ते के साग, कंदूरी, आषाढ महिने में होनेवाले फल, सोने और भूंख के बेग को रोकना ये सब अपस्मार (मृगी) रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अपस्माररोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

वातव्याधिकर्मविपाकः ।
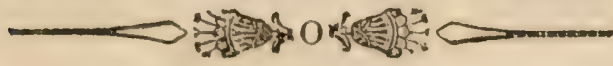
देवानां ब्राह्मणानां वा धनापहरणात्तथा ।
स्वामिद्रोहाद्वातरोगी भवेदस्यापि निष्कृतिः ॥

अर्थ–जो प्राणी देवता, ब्राह्मण इन के धन को हरण (चोरी) करे अथवा देव, ब्राह्मण और अपने स्वामी से द्रोह (वैर) करे उस के इस पाप के प्रभाव से वातरोग होता है उस की भी निष्कृति इस प्रकार करे ॥

वातरोगहर

गुरुप्रत्यर्थितां यातो वातरोगी भवेन्नरः ।
नाममंत्रेण कुर्वीत जपं होमं च शांतये ॥

अर्थ–ग्रंथांतर में लिखा है कि जो अपने गुरु से द्वेष (वैर) करता है वह वात-रोगी होय उस को उस वात रोग के शमन करने के वास्ते अच्युत, हरि, नारायण इत्यादि नाममंत्र का जप करे अथवा षडक्षरी, अष्टाक्षरी, द्वादशाक्षरी मंत्र से जप करे और होम करे ॥

धनुर्वातहर

अनिच्छंत्यक्षतां यस्तु उपभुंक्ते परस्त्रियम् । बलादाक्रम्य स नरः सर्वसंधिषु वेदनाम् ॥ तीव्रामाप्नोत्यरुचिमान्धनुर्वातयुतो भवेत् । ज्वरी तदुपशांत्यर्थं महिषीदानमाचरेत् ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ कुर्वीत चांद्रायणमथापरम् । सूर्यनामजपं चैव शक्त्या ब्राह्मण-तर्पणम् ॥ नामत्रयं जपेन्मर्त्यो रोगशांत्यर्थमात्मनः । सहस्रना-मकं चापि स्तोत्रं सम्यग्विधानतः ॥ अच्युतानंत गोविंदेत्ये-तन्नामत्रयं द्विजः । अयुतात्रितयावृत्त्या जपेद्रोगस्य शांतये ॥

अर्थ–विना इच्छा करनेवाली स्त्री से जो बलात्कार मैथुन करे अथवा अक्षता योनि (जिस ने किसी से मैथुन न कराया हो) ऐसी परस्त्री से जो बलात्कार मैथुन करे उस के सर्व संधियों में घोर पीडा और अरुचि धनुर्वायु तथा ज्वर ये रोग होते हैं. उस की शांति के अर्थ-माहिषीदान, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र और चांद्रायण व्रतों का करना तथा सूर्यनारायण के नाम का जप, गायत्रीजप, ब्राह्मण भोजन कराना,

विष्णुसहस्रनाम का पाठ ये विधिपूर्वक करे तथा अच्युत, अनंत और गोविंद इन नामों को तीस हजार जपे तो यह प्राणी वादी के रोग से मुक्त होय ॥

पक्षवातहर

सभायां पक्षपाती च जायते पक्षघातवान् । निष्कत्रयमितं हेम स दद्याच्च द्विजातये ॥ श्राद्धं च वैष्णवं कुर्यादात्मनो हितमिच्छता । सप्त धान्यानि दद्याच्च गोदानं तत्र कारयेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी सभा में बैठकर पक्षपात करे, धर्म को न कहे वह पक्षाघातरोगी होता है. उस के दूर करने को तीन निष्क सुवर्ण वेदसंपन्न ब्राह्मण को दान करे. तथा विष्णुश्राद्ध तथा सप्त धान्य (सतनजा) और गौ दान करे ॥

रक्तवातहर

रक्तवस्त्रप्रवालानां हारी स्याद्रक्तवातवान् ।
सवस्त्रां महिषीं दद्यात्पद्मरागसमन्विताम् ॥

अर्थ–जो प्राणी लाल वस्त्र और मूंगा इत्यादिक चुराता है वह वातरक्तरोगी होय वह पद्मराग(पुखराज)के साथ वस्त्रसहित भैंस का दान करे तो वातरक्तरोग दूर हो ॥

रक्तवातपित्तहर

सवर्णागमने वातरक्तवान् जायते नरः । सवर्णागमने वातपित्तवानपि जायते ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं सुवर्णेन प्रकल्पयेत् । पलेन वा तदर्धेन तदर्धेनाथ वा पुनः ॥ लक्ष्मीनारायणं रूपं सर्वदा सर्वकामिकम् ॥

अर्थ–अपने जाति की परस्त्री से जो गमन करता है वह वातरक्त अथवा वातपित्तरोगी होता है उस को चार तोले वा दो तोले अथवा एक तोले सुवर्ण की लक्ष्मीनारायण की मूर्ति बनायके दान करे. तथा यह लक्ष्मीनारायण की मूर्ति सदैव और सर्वकामना के देनेवाली है ॥

वातपित्तहर

लशुनं गृंजनं तालफलं वाश्नाति यो द्विजः ।
स वातपित्तरोगी च भवेच्चांद्रायणं चरेत् ॥

अर्थ–लहसन, गाजर, ताड के फल इन को जो ब्राह्मण खाता है वह वातपित्तरोगी होता है वह चांद्रायण प्रायश्चित्त करे तो यह रोग दूर होय ॥

ज्योतिःशास्त्राभिप्रायेण वातव्याधिनिदान

अतिमारुतरोगार्तः परस्वहारी विलोलमतिचेष्टः ।
कर्कटसंस्थे भानौ स्वपुत्रदृष्टे पुमान् पिशुनः ॥

अर्थ–जन्मकाल में सूर्य कर्कराशि पर स्थित हो और शनैश्वर देखता होय तो वह प्राणी पिशुन (चुगल) अत्यंत वादी से पीडित पराये धन का चुरानेवाला और चंचल मतिवाला होता है ॥

वातपित्तोद्भवा पीडा हीनजैरुग्रविग्रहः ।
विदेशगमनं चापि सौरीमध्ये यदा शिखी ॥

अर्थ–जन्म के समय शनि की दशा में केतु का अंतर आता है तब इस प्राणी के वात्तपित्त के रोग, हीनजाति से लडाई, परदेश में डोलना इत्यादि फल होता है ॥

वायुरायुर्बलं वायुर्वायुर्धाता शरीरिणाम् । वायुर्विश्वमिदं सर्वं प्रभुर्वायुः प्रकीर्तितः ॥ अशीतिवातजा रोगा जायंते तत्प्रकोपतः। सामान्यं भेषजं तेषां स्नेहनं स्वेदनं तथा ॥ विशेषेण तु यद्दृष्टमुच्यतेत्र समासतः ॥

अर्थ–प्राणियों की वायु (पवन) आयु है वायु बल, आधार, पालन पोषणकर्त्ता सर्वविश्व का आत्मा तथा प्रभु (सामर्थ्यवान्) ऐसा है इसी वायु के कुपित होने से प्राणियों की देह में अस्सी प्रकार के वातरोग होते हैं उन की सामान्यचिकित्सा स्नेहन स्वेदन करना है. परंतु मैं ने जो विशेष देखा है उस को कहता हूं ॥

वातव्याधिनिदान

रूक्षशीताल्पलघ्वन्नव्यवायातिप्रजागरैः । विषमादुपचाराच्च दोषासृक्स्रवणादपि ॥ लंघनप्लवनात्यध्वव्यायामातिविचेष्टनैः । धातूनां संक्षयाच्चिन्ताशोकरोगार्त्तिकर्षणात् ॥ वेगसंधारणादामादभिघातादभोजनात् । मर्मबाधाद्गजोष्ट्राश्वशीघ्रयानादिसेवनात् ॥ देहे स्रोतांसि रिक्तानि पूरयित्वाऽनिलो बली । करोति विविधान्व्याधीन्सर्वांगैकांगसंश्रयान् ॥

अर्थ–रूखा, शीतल, थोडा और हलका ऐसे अन्न खाने से, अति मैथुन करने से, बहुत जागने से, विषम उपचार करने से दोष (कफ, पित्त, मल, मूत्र इत्यादि) और रुधिर इन के निकलने से, अर्थात् वमन विरेचन से. लंघन, अर्थात्

अखाडे आदि में कला खेलने से, नदी आदि में तैरने से, बहुत चलने से, अति दंड, कसरत आदि श्रम के करने से, अत्यंत विरुद्ध चेष्टा करने से, रस रुधिर आदि धातुन के क्षय होने से, चिन्ता, शोक और रोगद्वारा कृश होने से मल मूत्रादिकों के वेग रोकने से, आगे सू लकडी आदि की चोट लगने से, उपवास (व्रत) के करने से आदि ले सब मर्मस्थानों में के लगने से, हाथी, ऊंट, घोडा इत्यादि जल्दी चलनेवाली सवारीपर बैठने से, कोप को प्राप्त भई जो बलवान् वायु सो देह में खाली जो नस उन में प्राप्त हो सर्वांग अथवा एक अंग में व्याप्त होनेवाली ऐसी अनेक प्रकार की वातव्याधि उत्पन्न करे ॥

वायुका पूर्वरूप

अव्यक्तं लक्षणं तेषां पूर्वरूपमिति स्मृतम्॥

अर्थ–उस वक्ष्यमाण वातव्याधि के जो प्रगट लक्षण उस को पूर्वरूप ऐसे कहते हैं ज्वरादिकों के सदृश विशिष्ट नहीं है और जो रूप प्रगट होय अर्थात् दोषादि भेदकरके यथार्थ दीखे उस को उस व्याधि का लक्षण जानना ॥

रूपकथन

आत्मरूपं तु तद्व्यक्तमपायो लघुता पुनः । संकोचः पर्वणां स्तंभो भंगोऽस्न्थां पर्वणामपि ॥ लोमहर्षः प्रलापश्च पार्श्वपृष्ठशिरोग्रहः । खांज्यपांगुल्यकुब्जत्वं शोथोंगानामनिद्रता ॥ गर्भशुक्ररजोनाशः स्पंदनं गात्रसुप्तता । शिरोनासाक्षिजत्रूणां ग्रीवायाश्चापि हुंडनम् ॥ भेदस्तोदार्तिराक्षेपो मोहश्चायास एव च। एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोनिलः ॥ हेतुस्थानविशेषाच्च भवेद्रोगविशेषकृत् ॥

अर्थ–अपानवायु को चंचल होने से स्तंभ संकोच कंपादिक का कदाचित् अभाव होय है और लघुता (शरीर की उस वायुकरके धातु शोषण करने से) अथवा अपायलघुता कहिये सब वातविकारों का अपाय कहिये अभाव होय और वातविकारों की लघुता कहिये अल्पत्वकरके जो स्थिति है सो निःशेष निवृत्ति नहीं होय. अब नानाप्रकार की व्याधि करे है ये जो कहि आये हैं उस को आगे के श्लोक में कहते हैं संधीन का संकोच और स्तंभ हड्डीन की और संधीन की फूटने की सी पीडा, रोमांच, वाह्यात् बकना, हाथ पैर और मुख इन का जकड जाना, खंजत्व, पांगुरा होना, कुबडापना, अंगों का सूजना, निद्रा का नाश, गर्भ का न रहना, शुक्र और रज (स्त्री का आर्त्तव)

इन का नाश, कंप, अंगों में शून्यता, मस्तक, नाक, मुख, जत्रु और नाड इन का भीतर जाना, अथवा टेढे हो जाय, भेदसदृश पीडा, नोचने की सी पीडा, शूल, आक्षेपरोग जो आगे कहेंगे, मोह, श्रम, कुपित भई जो वायु या प्रकार लक्षण करे है, वह वायु हेतु और स्थान इन भेद से विशिष्ट रोग उत्पन्न करनेवाली होती है. जैसे कफावृत होने से मन्यास्तंभ रोग करे यदि पक्वाशय में वात स्थित होय तौ आंतों का गूंजना इत्यादि रोग करे है ॥

वातचिकित्सोपक्रम

अभ्यंगं स्वेदनं बस्तिर्नस्यं लेहो विरेचनम् । स्निग्धाम्ललवण-स्वादुवृष्यं वातामयापहम् ॥ स्वाद्वम्ललवणैः स्निग्धैराहारैर्वात-रोगिणः । अभ्यंगस्नेहबस्त्याद्यैः सर्वानेवोपपादयेत् ॥ पित्ते सा-वरणे वातरोगे शीतोष्णभेषजम् । कफसावरणे वायौ रूक्षोष्णं भक्ष्यभेषजम् ॥ केवले पवनव्याधौ स्निग्धोष्णं भक्ष्यभेषजम् । स्निग्धोष्णरूक्षशीताद्यैर्वातजो यो न शाम्यति ॥ विकारास्तत्र विज्ञेया दुष्टशोणितसंभवाः ॥

अर्थ–देह में तैलादिक लगाना, पसीने निकालना, बस्तिकर्म, नस्य, अवलेह, जुलाब कराना, यह तथा चिकने, खट्टे, खारी, और मिष्ट ये रस, वृष्यपदार्थ तथा वातनाशक पदार्थ, मीठे, खट्टे, खारी और स्निग्ध पदार्थों का भोजन तथा देह में तेल की मालिस, स्नेहन तथा बस्ति इत्यादिक उपचार करे और पित्तयुक्त वायु होय तो शीतोष्ण (मातदिल) औषध देवे. यदि वह वातकफाधिक होवे तो रूक्ष और गरम ऐसी औषध और आहार वैद्य देय केवल वातविकारपर स्निग्ध और उष्ण ऐसे अन्न और औषध देवे. जो वातव्याधि स्निग्ध, उष्ण, रूक्ष, शीतल इत्यादि उपचारों से शांति नहीं हो तो उस को वैद्य दुष्टरक्ताश्रित विकार जाने ॥

दूसरा प्रकार

मधुरलवणमम्लं स्निग्धमस्योष्णनिद्रागुरुरविकरबास्तिस्वेदसंत-र्पणानि । दहनदलविशेषाभ्यंगसंमर्दनानि प्रकुपितपवमानं शांत-मेतानि कुर्युः ॥

अर्थ–मिष्ट, लवण, खट्टे, स्निग्ध , उष्ण, निद्रा, धूप, बस्ति, पसीने, तर्पण, अग्नि, गरम जल, मालिस और अंगमर्दन ये उपचार कुपितवायुके शांत करने को करे ॥

तीसरा प्रकार

वातरोगस्त्वसाध्योयं दैवयोगात्सुसिद्ध्यति ।
अनुमानेन कुर्वंति वैद्यकं तत्प्रतिज्ञया ॥

अर्थ-वादी का रोग असाध्य है यह दैवेच्छासे दूर होता है वैद्य इस का यत्न अनुमान (अंदाजन) से करते हैं कोई प्रतिज्ञापूर्वक औषधी नहीं देते ॥

कोष्ठगत वातलक्षण

वाते कोष्ठाश्रिते दुष्टे निग्रहो मूत्रवर्चसोः ।
वर्ध्महृद्रोगगुल्मार्शःपार्श्वशूलं च मारुते ॥

अर्थ-कोठे में स्थित वायु दुष्ट होने से मलमूत्र का अवरोध होय. बदरोग, हृदयरोग, गोला, बवासीर और पसवाडों में पीडा इतने रोग उत्पन्न करे ॥

कोष्ठलक्षण

स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च ।
हृदुंडुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते ॥

अर्थ- आमाशय, पक्वाशय, अग्न्याशय, मूत्राशय, रुधिराशय, हृदय, उदुक (पेट) और फुप्फुस इन को कोष्ठ ऐसी संज्ञा है ॥

आमाशयोक्त

अत्र द्वितीयं दिनमारभ्य षड्दिनपर्यंतमामाशयोक्तषट्चरणयोगो देयः ॥

अर्थ-दूसरे दिन से लेकर इस व्याधिपर आमाशयोक्त षट्चरणयोग देना चाहिये ॥

कोष्ठवातचिकित्साक्रम

विशेषतस्तु कोष्ठस्य वाते क्षीरं पिबेन्नरः । व्योषसौवर्चलाजाजीपथ्यालवणपंचकम् ॥ सारिवा बृहती पाठा कलिंगाग्नियवाग्रजम् । चूर्णीकृतं दधिसुरातन्मंडोष्णांबुकांजिकैः ॥ पिबेदग्निविवृद्धयर्थं कोष्ठवातहरं परम् ॥

अर्थ-कोष्ठगत वातविकार के होने से विशेषता करके दूध पिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल, संचरानिमक, जीरा, हरड, निमक, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनोन, संचरनोन, सारिवा, कटेरी, पाढ, इन्द्रजो, चित्रक और जवाखार इन का चूर्ण दही, मद्य, दहीका

तोर, गरम जल और कांजी इन से किसी एक के साथ पीवे तो अग्नि को वृद्धि करे और कोष्ठाश्रित वायु का नाश करे है ॥

चिकित्सा

पाचनीयै रसैर्युक्तैरन्यैर्वा पाचयेन्मलान् ।
विशेषतः पिबेत्क्षीरं नरः कोष्ठगतेऽनिले ॥

अर्थ–पाचन करनेवाले रसों में से कोईसी पाचन औषध देकर मल को पचावे. परंतु कोष्ठाश्रित वातविकार होय तो विशेषता करके दूध पिलावे ॥

आमाशयगतलक्षण

हृत्पार्श्वोदरनाभिरुक्तृष्णोद्गारविषूचिकाः ।
कासः कंठास्यशोषश्च श्वासश्चामाशयेनिले ॥

अर्थ–आमाशयगत वातविकार होवे तो हृदय, पार्श्वभाग, उदर और नाभि इन में पीडा, तृषा, डकारें, जुलाब, खांसी, गला और मुख इन में शोष और श्वास ये विकार होते हैं ॥

आमाशयलक्षण

नाभिस्तनांतरं जंतोराहुरामाशयं बुधाः ॥

अर्थ–नाभि और स्तन इन में आमाशय रहता है ऐसा पंडित लोग कहते हैं ॥

आमाशयगतवातचिकित्सा

आमाशयस्थे त्वनिले प्रशस्तं प्राग्भोजनं दीपनपाचनं च ।
प्रच्छर्दनं तीक्ष्णविरेचनं च मुद्गा यवाः शालियुताः पुराणाः ॥

अर्थ–आमाशयगत वायुपर भोजन के पूर्व दीपन और पाचन औषध देवे और वांती तथा तीक्ष्ण रेचक औषध देय तथा पुराने मूंग, जौ और पुराने चावल इत्यादि पदार्थ भोजन करने को देय ॥

आमाशयगतवात

आमाशयगते वाते छर्दिः स्वापो यथाक्रमम् ।
देयः षट्चरणो योगः सप्तरात्रमथांबुना ॥

अर्थ–आमाशयाश्रित वादी के होने से वांति और निद्रा इत्यादि उपचार करे किंवा षट्चरणयोग जो आगे लिखा है वह सात दिन पर्यंत जल के साथ देवे ॥

षट्चरणयोग

चित्रकेंद्रयवा पाठा कटुकातिविषाभया ।
महाव्याधिप्रशमनो योगः षट्चरणः स्मृतः ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, इन्द्रजो, पाढ, कुटकी, अतीस और हरड यह षट्चरण-योग महान् व्याधि को शमन करे है ॥

तीन काढे

भूतीकपथ्याशठिपुष्कराणि बिल्वामृतादारुकनागराणि ।
उग्रा विषा मागधिका बिडानि क्वाथास्त्रयः सामसमीरणघ्नाः ॥

अर्थ–अजमायन, हरड, कचूर और पुहकरमूल इन का अथवा बेलगिरी, गिलोय, देवदारु और सोंठ इन का अथवा वच, अतीस, पीपल और बिडनोन इन का काढा देवे. ये तीन काढे आमवातनाशक हैं ॥

प्रातः पिबेदुष्णजलेन यत्नाच्छिन्नामरीचं हृदयानिलघ्नम् ।
गुडेन वा नागरदारुचूर्णं हृद्वातपीडापरिपीडितस्तु ॥

अर्थ–गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को प्रातःकाल गरम जल के संग पीवे अथवा सोंठ, देवदारु इन का चूर्ण गुड के साथ खाय तो हृदय वायु की पीडा को नाश करे ॥

पक्काशयवायु

पक्काशयस्थोऽन्त्रकूजं शूलाटोपौ करोति च ।
मूत्रकृच्छ्रपुरीषत्वमानाहं त्रिकवेदनाम् ॥

अर्थ–वायु पक्काशय में होय तौ आंतों का गूंजना, शूल, आटोप (गुडगुडाशब्द) मलमूत्र कष्ट से निकले, अफरा, त्रिकस्थान में पीडा इन लक्षणों को करे ॥

चिकित्सा

वह्नेः संवर्धनं कार्यं कर्मौदावर्तिकं तथा ।
देयः स्नेहविरेकश्च पक्काशयगतेनिले ॥

अर्थ–पक्काशयगत वायु के कुपित होने से अग्नि को प्रदीप्त करके उदावर्त्तरोगपर जो उपचार कहे हैं वे करने चाहिये तथा स्निग्ध विरेचन देवे ॥

वाते जठरगे दद्यात्क्षारचूर्णादिदीपनम् ।
शुंठीकुटजबीजाग्निचूर्णं कोष्णांबु कुक्षिगे ॥

अर्थ–उदर का वायु कुपित होने से क्षार चूर्णादिक दीपन औषध देवे तथा कुक्षिगत वादी के कुपित होने से सोंठ, इन्द्रजो और चित्रक इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे ॥

पक्काशयगते वाते हितं स्नेहैर्विरेचनम् ।
बस्तयः शोधनीयाश्च प्राश्याश्च लवणोत्तराः ॥

अर्थ–पक्काशयगत वादी के कुपित होने से स्निग्ध, विरेचन, शोधन करनेवाले, बस्ती और लवणयुक्त प्राश्यसंज्ञक औषध देवे ॥

हृदयवात

हृदयानिलनाशाय गुडूचीं मरिचान्विताम् ।
पिबेत्प्रातः प्रयत्नेन सुखतप्तांभसा सह ॥

अर्थ–हृदय की वादी दूर करने को गिलोय, काली मिरच इन के चूर्ण को गरम जल के साथ प्रातःकाल पीवे तो पीडा दूर हो ॥

पिबेदुष्णांभसा पिष्टं साश्वगंधं बिभीतकम् ।
गुडयुक्तं प्रयत्नेन हृदयानिलनाशनम् ॥

अर्थ–असगंध, बहेडा और गुड इन को गरम जल में पीसके पीवे तो हृदय में रहनेवाले दुष्ट वायु नष्ट होवे ॥

देवदारुसमायुक्तं नागरं परिपेषितम् ।
हृद्वातवेदनायुक्तः पीत्वा सुखमवाप्नुयात् ॥

अर्थ–देवदारु और सोंठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो हृदय में रहनेवाले दुष्ट वायु की पीडा दूर होकर सुख पावे ॥

सर्वांगवातलक्षण

सर्वांगपवने क्रुद्धे गात्रस्फुरणभंजनम् ।
वेदनाभिः परीतस्य स्फुटंतीवास्य संधयः ॥

अर्थ–सब अंग की वायु कुपित होने से अंगों का फरकना, जंभाई और संधि वेदनायुक्त हो, फूटने की सी पीडा होय ॥

चिकित्सा

सर्वांगगतमेकांगगतं वास्य समीरणम् ।
तैलावगाहनं हंति तोयवेगमिवाचलः ॥

अर्थ–दुष्ट वात सर्वांग में होय अथवा एकांग में होय उसपर देह में तेल की मालिस करायके गरम जल से स्नान करे तो सर्वांग तथा एकांगवादी दूर हो. जैसे पर्वत जल के वेग को रोक देता है ॥

अवशिष्टवात

प्रलापे भीरुतापे च प्रसुप्तौ चित्तवैकृते ।
स्वेदनाशे बलक्षैण्ये कौशिकः सघृतो हितः ॥

अर्थ–प्रलाप (बकवाद), भीरु (डरना), ताप (ज्वर), प्रसुप्ति (सो जाना), चित्त की विकृति, स्वेदनाश तथा बलक्षीणता इन रोगोंपर घृतयुक्त शुद्ध गूगल का सेवन करना हितकारी है ॥

शब्दाज्ञतामये चापि लेहः कल्याणको हितः । शीततां रोमहर्षं च शिरापूरणमेव च ॥ कटुतिक्तैर्जयेद्द्रव्यैः स्नेहस्वेदनमर्दनैः ॥

अर्थ–शब्द को न जानना इस रोगपर पूर्वोक्त कल्याणावलेह हितकारी है और शीत का लगना, रोमहर्ष, शिरापूरण इनपर कटु (चरपरा), तिक्त, (कडुआ) ऐसे स्नेह और स्वेदन इत्यादि औषधी तथा मर्दन ये उपचार करे ॥

वाताप्रवृत्तिरुद्गारमंत्रकूजनमेव च ।
निरूहबस्तिनाथांगकाठिन्यं स्नेहगाहनात् ॥

अर्थ–अधोवायु का न निकालना, डकारों का आना और आंतों का बोलना इनपर निरूहबस्ति देवे. तथा शरीर की कठिनता स्निग्धपदार्थों से स्नान करके दूर करे॥

कुरंटकादिकाढा

सहचरामरदारु सनागरं क्वथितमंभसि तैलविमिश्रितम् ।
पवनपीडितदेहगतिः पिबन् द्रुतविलंबितगो भवतीच्छया ॥

अर्थ–पियावांसा, देवदारु और सोंठ इन के काढे में अंडी का तेल मिलायके पीवे तो जिस का देह वादी से जकड गया हो वह तत्काल खुल जावे और शीघ्र अथवा मंद जैसी इच्छा हो ऐसा चलने लगे ॥

महारास्नादिकाढा

रास्नैरंडामृतोग्रासहचरचविकारामसेनाब्दभार्ङ्गीदीप्यानंतायवानीवृक्षिसुरकृमिजिच्छृंगिशुंठीबलाभिः । मूर्वातिक्तासमंगाद्रिविषशाठिवरापिप्पलीयावशुकै रक्तश्रीखंडकारग्वधकटुकफलैर्वत्स-

वृश्चीकयुक्तैः ॥ सर्वैरेतैर्दशांघ्रिप्रयुतसमलवैः साधितोष्टावशेषः क्वाथो रास्नादिरादौ महदुपपदवान्कौशिकोक्तो निहंति । सर्वांगैकांगवातान् श्वसनकसनहृत्स्वेदशैत्यातितंद्राशूलं तूनीं प्रतूनीं गलगदनिखिलांगव्यथाकंपखल्लीः ॥विश्वाचीश्लीपदामानिलनिखिलमहासूतिकारोहसुप्तिर्जिह्वास्तंभापतानं स्फुटनविमथनः क्लीबताक्षेपकौब्जम् ।शोभाटोपापतंत्रार्दितखुडनहनुगृध्रसीपादशूलं वायुं श्लेष्मोत्थरोगानपि गिरितनयावल्लभेनोपदिष्टः ॥

अर्थ-रास्ना, अंड की जड, गिलोय, वच, पीयावांसा, चव्य, कौच के बीज, नागरमोथा, भारंगी, किरमानी अजमायन, धमासा, अजमायन, पाढ, देवदारु, वायविडंग, काकडासिंगी, सोंठ, खिरेटी, मूर्वा, कुटकी, मजीठ, काली और सपेद अतीस, कचूर, हरड, बहेडा, आवला, पीपल, जवाखार, लाल चंदन, अमलतास का गूदा, कायफल, इन्द्रजो, लालघंटाली और दशमूल ये सब समान भाग ले जल में डालके अष्टमांश काढा करे यह महारास्नादि क्वाथ कौशिकऋषि ने कहा है यह सर्वांगवात, एकांगवात, श्वास, खांसी, पसीना, शीत का लगना, अतितंद्रा, शूल, तूनी, प्रतूनी, गले का रोग, सर्वांग की पीडा, कंपवात, खल्लीवात, विश्वाची, श्लीपद, आमवात संपूर्ण प्रसूत के रोग, सुप्तिवात, जिव्हास्तंभ, अपतान वायु, हडफूटन, मथने की सी पीडा, क्लीबवात, आक्षेपक, कुब्जवात, सूजन, आटोप, अपतंत्र, अर्दित, खुडवात, हनुग्रह, गृध्रसी, पादशूल और वातश्लेष्मव्याधि इन को नाश करे इस प्रकार श्रीशिव ने कहा है॥

दूसरा प्रकार

रास्ना द्विगुणभागा स्यादेकभागास्तथापरे । धन्वयासबलैरंडदेवदारुशठी वचा ॥ वालको नागरं पथ्या चव्यमुस्ता पुनर्नवा । गुडूची वृद्धदारुश्च शतपुष्पा च गोक्षुरः ॥ अश्वगंधा प्रतिविषा कृतमालः शतावरी । कृष्णा सहचरश्चैव धान्याकं बृहतीद्वयम् ॥ एभिः कृतं पिबेत्क्वाथं शुंठीचूर्णेन संयुतम् । कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथवा ॥ अजमोदादिना वापि तैलेनैरंडजेन वा । सर्वांगकंपे कुब्जत्वे पक्षाघातेवबाहुके ॥ गृध्रस्यामामवाते च श्लीपदे चापतानके । अंत्रवृद्धौ तथाध्माने जंघाजानुगदे-

र्दिते ॥ शुक्रामये मेढ्रवाते वंध्यायोन्यामयेषु च। महारास्नादिरा-
ख्यातो ब्रह्मणा गर्भधारणे ॥

अर्थ–रास्ना २ भाग, धमासा १ भाग, खिरेटी, अंड की जड, देवदारु, कचूर, वच, अडूसा, सोंठ, हरड, चव्य, नागरमोथा, पुनर्नवा, गिलोय, विधायरा, सोंफ, गोखरू, असगंध, अतीस, अमलतास, सतावर, पीपल, पियावासा, धनिया, कटेरी और बडी कटेरी ये सब समानभाग लेवे अर्थात् एक २ भाग लेवे. सब कूटकरके काढा करे जब अष्टमांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस में सोंठ का अथवा पीपल का चूर्ण अथवा योगराज गूगल, अजमोदादि चूर्ण, किंवा अंड का तेल डालके पीवे तो सर्वांगकंप, कुब्जवात, पक्षाघात, अवबाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्लीपद, अपतानवायु, अंत्रवृद्धि, अफरा, जंघा की वादी, जानु की वादी, अर्दित (लकवा), शुक्रदोष, मेढ्रवात, वंध्या के योनिरोग इनपर यह महारास्नादि काढा कहा है, यह गर्भधारक है इस प्रकार ब्रह्मदेव ने कहा है॥

महाबलादिकाढा

महाबलामूलमहौषधाभ्यां क्वाथं पिबेन्मिश्रितपिप्पलीकम् ।
शीतं सकंपं परिदाहयुक्तं विनाशयेत् द्वित्रिदिनप्रयुक्तः ॥

अर्थ–कगही की जड और सोंठ इन के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे तो शीतवात, कंपवात और दाह ये दो तीन दिन में नष्ट हो जावें ॥

पंचमूलादियोग

पंचमूलीकृतः क्वाथो दशमूलीकृतोथ वा ।
रूक्षस्वेदस्तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रशस्यते ॥

अर्थ–पंचमूल का काढा अथवा दशमूल का काढा, रूक्ष, स्वेद तथा नस्य ये मान (गरदन) के जकड जानेपर यत्न करे ॥

वाजिगंधादि काढा

वाजिगंधाबलास्तिस्रो दशमूली महौषधम् ।
गृध्रनख्यौ च रास्ना च गणो मारुतनाशनः ॥

अर्थ–असगंध, खिरेटी, कंगही, गगेरन, दशमूल, सोंठ, गृध्रनखी, छोटा बेर, रास्ना इन का काढा वादी को नाश करनेवाला है ॥

समीरदावानल

भल्लातकानां शकलानि कृत्वा त्रिकोलमानं परिगृह्य वैद्यः । चतुःपलं तोयसमन्वितोयं क्वाथो चतुर्थांशमितं प्रगृह्य ॥ सिता हविर्गोपयमिश्रितं च कोलं पलार्धं पलमेकयुक्तम् । क्रमेण पीतो खलु हंति वातान् समीरदावानलनामधेयः ॥

अर्थ–भिलाए के टुकडे १॥ तोला और जल ४ तोले इन का काढा चतुर्थांश रहनेपर उतार ले. इस काढे में मिश्री छः मासे, घी २ तोले, गौ का दूध ४ तोले डालके फिर औटावे फिर इस में पंचकोल का चूर्ण डालके पीवे तो सर्ववात नाश करे. इस को समीरदावानल अवलेह कहते हैं ॥

गुदस्थितवायुकार्य

ग्रहो विण्मूत्रवातानां शूलाध्मानाश्मशर्कराः ।
जंघोरुत्रिकहृत्पृष्ठरोगशोफो गुदे स्थिते ॥

अर्थ–वायु गुदा में स्थित होने से मल मूत्र और वायु का रुकना, शूल, अफरा, पथरी, जंघा ऊरू त्रिकस्थान हृदय पीठ इन में पीडा और सूजन ये रोग होते हैं ॥

चिकित्सा

वाते गुदाश्रिते दुष्टे कर्मौदावर्तिकं हितम् ॥

अर्थ–गुदाश्रित वादी के दुष्ट होनेपर जो उदावर्तरोग में चिकित्सा कही है वह चिकित्सा करे ॥

चिकित्सा

दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन वा ।
पिबेदेरंडतैलं वा बस्तिकुक्षिगुदे श्रिते ॥

अर्थ–दशमूल के काढे से अथवा बिजोरे के रस के साथ अंडी का तेल पीवे तो बस्ति, कांख और गुदा की दूषित पवन को नष्ट करे ॥

श्रोत्रादिगतलक्षण

श्रोत्रादिष्विंद्रियवधं कुर्यात्क्रुद्धः समीरणः ॥

अर्थ–कर्णादिक इन्द्रियों में क्रुद्ध हुई वायु इन्द्रियों का नाश करे ॥

चिकित्सा

श्रोत्रादिष्वनिले दुष्टे कार्यो वातहरः क्रमः ।
स्नेहाभ्यंगोपनाहश्च मर्दनालेपनानि च ॥

अर्थ—कर्णादिक इन्द्रियों में दुष्ट हुई वायुपर वातनाशक उपचार करे जैसे, स्नेहपान, अभ्यंग, उपनाह, मर्दन और लेप इत्यादिक जानो ॥

जृंभा (जंभाई)

पीत्वैकं श्वासमलिनः पुनस्त्यजति वेगवान् ।
आलस्यनिद्रायुक्तश्च स जृंभ इति कथ्यते ॥

अर्थ—एकदफे श्वास लेके वह शांत हुआ न हुआ इतने में दूसरा श्वास आ जावे तिस से रोका हुआसा छोड देवे और आलस्य, निद्रा इन से युक्त हो उस को जृंभा कहते हैं ॥

चिकित्सा

शुंठी पिप्पल्यूषणं दीप्यकश्च सिंधूद्भूतं चेति सर्वं पृथग्वा ।
तद्रूपं वा सूक्ष्मचूर्णीकृतं वा जृंभाभंगस्तत्कृतस्यात्तदैव ॥

अर्थ—सोंठ, पीपल, मिरच, अजमायन, सैंधानिमक ये सब अथवा एक २ का चूर्ण कर सब का सेवन करे तो तत्काल जंभा (जंभाई) के वेग को नाश करे ॥

जृंभावेगे समुत्पन्ने शोभने शयने नरम् ।
स्वापयेत्तेन नियमाज्जृंभावेगः प्रशाम्यति ॥

अर्थ—जंभा वेग के उत्पन्न होनेपर उस प्राणी को उत्तम शय्यापर सुलावे तो निश्चय करके जंभाई का वेग शांत होवे ॥

जृंभाचिकित्सा

जृंभावेगः क्षयं याति कटुतैलेन मर्दनात् ।
भोजनात्स्वादुभोज्यानां तथा तांबूलभक्षणात् ॥

अर्थ—सरसों के तेल की देह में मालिस करने से जंभाइयों का आना दूर होवे. अथवा स्वादु पदार्थों के भोजन से अथवा तांबूल (पान की वीडी) खाने से जंभाई दूर हो ॥

प्रलापक

स्वहेतुकुपिताद्वातादसंबद्धं निरर्थकम् ।
वचनं यन्नरो ब्रूते स प्रलापः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ—अपने हेतुन से कुपित भई जो वात तिस से असंबद्ध (अर्थरहित) वाणी बोले, अर्थात् बकवाद करे अथवा बडबड शब्द करे उस को प्रलाप कहते हैं ॥

चिकित्सा

सतगरवरतिक्ता स्वेतांभोदतिक्ता नलदतुरगगंधा भारती हार-
हूराः। मलयजदशमूलाशंखपुष्प्यः सुपक्काः प्रलपनमतिहन्युः
पानतो नातिदूरात् ॥

अर्थ-तगर, पित्तपापडा, अमलतास, नागरमोथा, कुटकी, नेत्रवाला, असगंध, ब्राह्मी, दाख काली, चंदन, दशमूल और शंखाहुली इन का काढा लेय तो तत्काल प्रलापक का नाश करे ॥

रसाज्ञाननिदान

भुंजानस्य नरस्यान्नं मधुरप्रभृतीन्रसान् ।
रसना यन्न जानाति रसाज्ञानं तदुच्यते ॥

अर्थ-जो मनुष्य भोजन करे उस की जीभ को मधुर (मीठा) खट्टा इत्यादिक रसों का ज्ञान न होय उस रोग को रसाज्ञान कहते हैं ॥

चिकित्सा

घर्षेज्जिव्हां जडां सिंधुत्र्यूषणैः साम्लवेतसैः। आम्लवेतसका-
भावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥ किराततिक्तकः कट्वी कुटकस्य
फलं त्वचा। ब्राह्मी फलं च पालाशं राजिकां कृष्णजीरकम् ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रं नागरमूषणम्। एषां कल्कैर्मुहुर्घ-
र्षेज्जिह्विकामार्द्रिकारसैः ॥ तेन सम्यग्विजानाति रसना सक-
लान् रसान् ॥

अर्थ-जीभ के जकडने पर सैंधा निमक, त्रिकुटा और अमलवेत इन के चूर्ण से जीभ को रगडे. यदि अमलवेत न मिले तो चूका लेवे. अथवा कडुआ चिरायता, कुटकी, इन्द्रजो, कुडा की छाल, ब्राह्मी, पलासपापडा, राई, काला जीरा, पीपल, पीपरामूल, चित्रक, सोंठ और काली मिरच इन के चूर्ण से अथवा कही हुई औषधों का अदरख के रस में कल्क करके उस से वारंवार जीभ को घिसे. तो जिव्हा सब रसों को जानने लगे ॥

किरातादिकल्क

कल्कः किराततिक्तादिर्जिह्वायाः शून्यतां हरेत् ॥

अर्थ-किराततिक्तादि कल्क जो पिछाडी कह आए हैं वह जिह्वा की शून्यता को हरण करे है ॥

त्वक्शून्यतानिदान

स्पृश्यमाना त्वचा या तु शीतोष्णं मृदु कर्कशम् ।
न जानाति बुधैस्त्वक्सा शून्येति परिकीर्त्यते ॥

अर्थ–त्वचा को स्पर्श करने से शीत, गरम, मृदु और कठीण इन का ज्ञान नहीं होता, इस को त्वक्छून्यता कहते हैं ॥

चिकित्सा

सुप्तवाते त्वसृङ्मोक्षं कारयेद्बहुशो भिषक् ।
दिह्याच्च लवणागारधूमैस्तैलसमन्वितैः ॥

अर्थ–सुप्त वातपर वारंवार रुधिर को निकलवावे और सैंधानिमक, घर का धुंआ और तेल इन को मिलायके लेप करे ॥

रसगतवायु के लक्षण

त्वग्रूक्षा स्फुटिता सुप्ता कृशा कृष्णा च तुद्यते ।
आतन्यते सरागा च मर्मरुक्त्वग्गतेऽनिले ॥

अर्थ–वायु त्वग्गत अर्थात् धातुरूप त्वचा में प्राप्त होने से त्वचा रूखी और फटी, शून्य, पतली और काली हो जाय और उस में चमका चले, तथा तन जाय, कुछ तांबे के समान लाल रंग हो जाय और हृदयादि मर्मों में पीडा होय ॥

रक्तगतवायु के लक्षण

रुजस्तीव्राः ससंतापा वैवर्ण्यं कृशतारुचिः ।
गात्रे चारूंषि भुक्तस्य स्तंभश्चासृग्गतेऽनिले ॥

अर्थ–वायु रुधिरमिश्रित होने से सन्तापयुक्त तीव्र वेदना होय, देह का विवर्ण होय, कृशता, अरुचि और देह में फोडा तथा भोजन करने के उपरांत देह का जकड जाना ये लक्षण हैं ॥

मांसगत वायु

गुर्वंगं तुद्यते स्तब्धं दंडमुष्टिहतं यथा ।
सरुक् स्तिमितमत्यर्थं मांसमेदोगतेऽनिले ॥

अर्थ–मांस और मेद में वायु के पहुंचने से अंग भारी हो जाय, चोटने के समान पीडा होय, अथवा निश्चल हो जाय, अथवा मुक्का मारने की सी तथा लकडी मारने की सी पीडा होय ॥

मेदाश्रित वातलक्षण

तथा मेदाश्रितः कुर्याद्ग्रंथीन् मंदरुजो व्रणान् ॥

अर्थ–वायु मेदगत हुआ हो तो अंगपर गांठ अथवा अल्प दुःख देनेवाले व्रण को उत्पन्न करे है ॥

अस्थिवातलक्षण

मेदोऽस्थिपर्वणां सन्धिशूलं मांसबलक्षयः ।
अस्वप्नं संततारुक् च मज्जास्थिकुपितेऽनिले ॥

अर्थ–मज्जा और हड्डी इन ठिकानेपर वायु कोप होने से हडफूटनी हो, संधि-संधि में पीडा होय मांस और बल ये क्षीण हो जाय, निद्रा आवे नहीं और निरन्तर पीडा होय, इस जगह सुश्रुत ने कुछ विशेष लिखा है ॥

मज्जागत वातलक्षण

वाते मज्जागते पीडा न कदाचित्प्रशाम्यति ॥

अर्थ–दुष्ट वात मज्जाश्रित हुआ हो तो अंग की वेदना कभी भी शांत नहीं होती है ॥

शुक्रगत वातलक्षण

क्षिप्रं मुंचति बध्नाति शुक्रं गर्भमथापि वा ।
विकृतिं जनयेच्चापि शुक्रस्थः कुपितोऽनिलः ॥

अर्थ–शुक्रस्थान की वायु का कोप होने से वह शुक्र को जल्दी पतन करे और बंधन करे, अथवा गर्भ को जलदी छोडे और बंधन करे और गर्भ का अथवा शुक्र का विकार प्रगट करे ॥

सप्तधातुगत वातचिकित्सा

वायौ त्वगाश्रिते स्नेहाभ्यंगः स्वेदश्च कारयेत् ।
रक्तस्थे शीतलाँल्लेपान्विरेकं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ–त्वचागत वायु के दुष्ट होने से, स्नेहपान, अभ्यंग और पसीने निकालना. ये उपचार करे रक्तगतवातपर शीतल लेप, विरेचन और रक्तमोक्ष ये उपचार करे ॥

मांसमेदोगत

मांसमेदोगते वाते सविरेकं निरूहणम् ॥

अर्थ–मांसगत और मेदोगत वायु कुपित होने से विरेक, निरूहबस्ति ये उपचार करे ॥

अस्थिमज्जागत

अस्थिमज्जागते स्नेहं बहिरंतश्च योजयेत् ॥

अर्थ—अस्थिगत तथा मज्जागत वायु कुपित होने से स्नेहपान तथा स्नेहमर्दन ये उपचार करने चाहिये ॥

केतकादि तैल

केतकनागबलातिबलानां यद्बहुलेन रसेन विपक्कम् ।
तैलमनल्पतुषोदकसिद्धं मारुतमास्थिगतं विनिहंति ॥

अर्थ—केतकी, खिरेटी और गगेरन इन का पुष्कल रस और तुसों का पुष्कल (बहुतसा) जल में तेल डालके सिद्ध करे यह तेल अस्थिगत वायु का नाश करे ॥

शुक्रगत

हर्षोन्नपानं शुक्रस्थे बलशुक्रकरं हितम् ॥

अर्थ—शुक्रगत वायु कुपित होने से हर्षोत्पादन और बल तथा धातु इन के बढानेवाले ऐसे अन्न और पान देवे तो हितकारी होय ॥

शिरागतवायु

कुर्याच्छिरागतः शूलं शिराकुंचनपूरणम् ।
स बाह्याभ्यंतरायामं खल्लीं कुब्जत्वमेव च ॥

अर्थ—वायु शिरा (नाडी) गत होने से शूल, नाडी का संकोच और स्थूलत्व करे और बाह्यायाम आभ्यंतरायाम, खल्ली और कुबडापना इन रोगों को उत्पन्न करे ॥

चिकित्सा

स्नेहाभ्यंगोपनाहांश्च मर्दनालेपनानि च ।
वाते शिरागते कुर्यात्तथा चासृग्विमोक्षणम् ॥

अर्थ—शिरागत वायु पर स्नेहपान, अंग में तेल की मालिस, उपनाह, मर्दन, लेप और रुधिर निकालना ये उपचार करे ॥

स्नायुगत वातलक्षण

शूलमाक्षेपकः कंपः स्तंभः स्नाय्वनिले भवेत् ॥

अर्थ—स्नायुगत वात में शूल, वातरोग, कंप और स्तंभ यह लक्षण होते हैं ॥

सर्वांगैकांगरोगांश्च कुर्यात्स्नायुगतोनिलः ॥

अर्थ—वायु स्नायुगत होने से सर्वांग और एकांग रोगों को करे ॥

चिकित्सा

स्वेदोपनाहाग्निकर्मबंधनोन्मर्दनानि च ।
क्रुद्धे स्नायुगते वाते कारयेत्कुशलो भिषक् ॥

अर्थ—स्नायुगत वायुपर पसीने निकालना, उपनाह, दाग देना, बांधना, मर्दन करना ये संपूर्ण उपचार करे ॥

संधिगतवातनिदान

हंति संधिगतः संधीन् शूलशोथौ करोति च ॥

अर्थ—संधिगत होने से संधि का विश्लेष (जुदा जुदा होना) और संधि का जकड जाना तथा शूल और सूजन इन रोगों को प्रगट करे ॥

सामान्यचिकित्सा

कुर्यात्संधिगते वाते दाहस्वेदोपनाहनम् ॥

अर्थ—संधिगत वादीपर दागना, पसीने निकालना तथा उपनाहन कर्म करना चाहिये॥

इंद्रवारुणिचूर्ण

इंद्रवारुणिकामूलं मागधीगुडसंयुतम् ।
भक्षयेत्कर्षमात्रं तत्संधिवातं व्यपोहति ॥

अर्थ—इन्द्रायन की जड, पीपल औ गुड इन को एकत्र कर इस में से एक तोले भर सेवन करे तो संधिवात को नष्ट करे ॥

पित्तकफाश्रित प्राण

प्राणे पित्तावृते छर्दिर्दाहश्चैवोपजायते ।
दौर्बल्यं सदनं तंद्रा वैरस्यं कफकावृते ॥

अर्थ—प्राणवायु पित्तसंयुक्त होने से वमन और दाह उत्पन्न हो और कफसंयुक्त होने से दुर्बलपना, ग्लानि, तंद्रा और मुख में विरसता ये होंय ॥

पित्तकफाश्रित उदान

उदाने पित्तयुक्ते तु दाहो मूर्छा भ्रमः क्लमः ।
अस्वेदहर्षौ मंदाग्निः शीतता च कफावृते ॥

अर्थ—उदानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, मूर्च्छा, भ्रम, अनायास, श्रम ये होंय और कफयुक्त होय तौ पसीना नहीं आवे, रोमांच, अग्नि मंद होय और शीत लगे ॥

पित्तकफाश्रित समान

स्वेददाहौष्ण्यमूर्छाः स्युः समाने पित्तसंयुते ।
कफेन संगो विण्मूत्रे गात्रहर्षश्च जायते ॥

अर्थ–समानवायु पित्तयुक्त होने से पसीना, दाह, गरमी और मूर्च्छा ये होते हैं. पित्तकफयुक्त होने से मलमूत्र का रुकना और रोमांच होय ॥

पित्तकफाश्रित अपान

अपाने पित्तयुक्ते तु दाहौष्ण्यं रक्तमूत्रता ।
अधःकाये गुरुत्वं च शीतता च कफावृते ॥

अर्थ–अपानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, उष्णता और लाल मूत्र होय तथा कफ-युक्त होने से कमर के नीचे के भाग में भारीपना और सरदी का लगना होते हैं ॥

पित्तकफाश्रित व्यान

व्याने पित्तावृते दाहो गात्रविक्षेपणं क्लमः ।
स्तंभनो दंडकश्चापि शोथशूलौ कफावृते ॥

अर्थ–व्यानवायु पित्तयुक्त होने से दाह, गात्रों का विक्षेप अर्थात् इधर उधर को फेरना और श्रम होय, कफयुक्त होने से शरीर लकडी के समान स्तंभ होय, सूजन और शूल होय, इस जगह प्राणादि पंच वायुन के परस्पर मिलने से वीस प्रकार के आवर्ण चरकोक्त जान लेने और वाग्भट के मत से आवर्ण बाईस प्रकार के हैं हम ने ग्रंथ के विस्तारभय से छोड दिये हैं ॥

चिकित्सा

वाते सपित्ते कुर्वीत वातपित्तहरीं क्रियाम् ।
सकफे तत्र कुर्वीत वातश्लेष्महरीं क्रियाम् ॥

अर्थ–पित्तयुक्त वात का कोप होने से वातपित्तनाशक क्रिया करे और वही वायु कफाश्रित दुष्ट होने से वातकफनाशक चिकित्सा करनी चाहिये ॥

आक्षेप के सामान्य लक्षण

यदा तु धमनीः सर्वाः कुपितोऽभ्येति मारुतः । तदाक्षिपत्याशु मुहुर्मुहुर्देहं मुहुश्चरः ॥ मुहुर्मुहुस्तदाक्षेपादाक्षेपक इति स्मृतः ॥

अर्थ–जिस काल में वायु कुपित होकर सब धमनी (नाडीन) में जायकर प्राप्त होय, तब उस जगे वह वारंवार संचार करके देह को वारंवार आक्षिप्त करती है,

अर्थात् हाथीपर बैठनेवाले पुरुष के समान सब देह को चलायमान करे उस देह के वारंवार चलाने को आक्षेपक रोग कहते हैं ॥

आक्षेप के चार भेद

पित्तश्लेष्माचितो वायुर्वायुरेव च केवलः।
कुर्यादाक्षेपकं चान्यश्चतुर्थमभिघातजः ॥

अर्थ-पित्तवात, श्लेष्मवात और केवल वात इन से उत्पन्न भये तीन आक्षेप और चौथा अभिघात से उत्पन्न हुआ ऐसे चार आक्षेप हैं ॥

केवल वातजाक्षेप

पाणिपादशिरःपृष्ठश्रोणीः स्तभ्नाति मारुतः।
दंडवत् स्तब्धगात्रस्य दंडकः सोनुपक्रमः ॥

अर्थ-हाथ, पांव, पीठ, शिर, कमर इन को वायु स्तब्ध करता है और दंड के माफिक अंग को ऐंठाता है यह दंडक नाम आक्षेप चिकित्सा करने योग्य है ॥

सामान्य चिकित्सा

आक्षेपके शिरां विध्येत्कुर्याद्वातहरीं क्रियाम्।
तीक्ष्णैः प्रधमनैर्नस्यैस्तथा संज्ञां स विंदति ॥

अर्थ-आक्षेपक वायुपर फस्त खोले और वातनाशक तथा तीक्ष्ण ऐसी औषधी नाक में फूंके तथा प्रधमन नस्य करे तो उस को संज्ञा हो आवे ॥

आक्षेपक चिकित्सा

बलामूलकषायस्य दशमूलीशतस्य च। यवकोलकुलित्थानां क्वाथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ स्मृता भागास्तैलादेकस्तदेकतः। पचेदवाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ तथागुरुं सर्जरसं सरलं देवदारु च। मंजिष्ठां पद्मकं कुष्ठमेलां कालां च सारिवाम् ॥ मांसीं शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवां वचाम्। शतावरीमश्वगंधां शतपुष्पां पुनर्नवाम् ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णे राजते मृन्मयेपि वा। प्रक्षिप्य कलशे सम्यक् स्वनुगुप्तं निधापयेत् ॥ एतन्महाबलातैलं प्रयुक्तमविलंबितम्। सर्वानाक्षेपकादींस्तु वातव्याधीन्व्यपोहति ॥ हिक्कां श्वासमधीमंथं गुल्मं कासं

सुदुस्तरम् । षण्मासादुपयुक्तं तदंत्रवृद्धिं च नाशयेत् ॥ यथा-बलमलं मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् । या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् ॥ वातक्षीणे मर्मंहते मथितेभिहते तथा । भग्ने श्रमाभिपन्ने च सर्वथैतत्प्रयुज्यते ॥ एतद्धि राज्ञा कर्तव्यं कर्तव्यं राजपूजितैः । सुखिभिः सुकुमारैश्च धनिभिर्मानवैः सदा ॥

अर्थ–खिरेटी की जड का काढा, दशमूल का काढा, जौं, बेर और कुलथी इन के काढे और दूध ये सब आठ २ भाग लेवे. तेल १ भाग, मधुर गण, सैंधा निमक, अगर, राल, सरल, देवदारु, मजीठ, पद्माख, कूठ, इलायची, नागबला, सारिवा, जटामांसी, शिलाजीत, तमालपत्र, तगर, कालीसर, वच, शतावर, असगंध, सौंफ, पुनर्नवा ये प्रत्येक एक २ तोले लेवे. इन सब का काढा करके मिलावे. फिर इस में तेल डालके पचावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके इस को सुवर्ण के अथवा चांदी के अथवा मिट्टी के चिकने बरतन में भरके रख देवे इस **महाबलादितैल** के सेवन करने से तत्काल संपूर्ण आक्षेपक वायु तथा वातव्याधि इन को नाश करे तथा हिचकी, श्वास, अधिमंथ, गोला और घोर खांसी इन को दूर करे इस को छः महिने पर्यंत मालिस करने से अंत्रवृद्धि को नाश करे. तथा प्रसूता स्त्री का बल और दोष काल विचारके मात्रा देवे. जिस स्त्री को गर्भ की इच्छा होवे और क्षीणवीर्य पुरुष किंवा वायु से क्षीण हुआ, मर्मस्थान में जिस के चोट लगी हो, जिस के हड्डी मुड गई हो तथा परिश्रमी इन सब को यह तैल देवे, यह तैल राजाओं को अथवा राजपुरुष हैं उन को तथा सुखी पुरुष, सुकुमार, धनवाले इत्यादि को देना चाहिये ॥

आक्षेप के भेद अपतंत्रक

क्रुद्धः स्वैः कोपनैर्वायुः स्थानादूर्ध्वं प्रवर्तते । पीडयन् हृदयं गत्वा शिरःशंखौ च पीडयेत् ॥ धनुर्वन्नामयेत् गात्राण्याक्षिपे-न्मोहयेत्तथा । स कृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापि स्तब्धाक्षोऽथ निमीलकः ॥ कपोत इव कूजेच्च निःसंज्ञः सोपतंत्रकः ॥

अर्थ–रूक्षादि स्वकारणों से कोप को प्राप्त भई जो वायु सो अपने स्वस्थान को छोड ऊपर जायकर प्राप्त हो और हृदय में जायकर पीडा करे, मस्तक और कन-पटी इन में पीडा करे और देह को धनुष के समान नवाय देवे और चले तो मूर्च्छित कर दे, वो रोगी बडे कष्ट से श्वास लेय, नेत्र मिच जावें, अथवा टेढे हों जाय कबूतर के समान गूंजे, तथा बेहोस होय, इस रोग को अपतंत्रक कहते हैं ॥

चिकित्सा

अथापतंत्रकेनार्तमातुरं नापतर्पयेत्। निरूहबस्तिं वमनं सेवयेन्न कदाचन ॥ श्वसनाः कफवाताभ्यां रुद्धास्तस्य विमोक्षयेत्। तीक्ष्णैः प्रधमनैः संज्ञां तासु मुक्तासु विंदति ॥

अर्थ–अपतंत्र वात से पीडित मनुष्य को रेचन, निरूह बस्ति और वमन ये कदाचित् न करावे कफ वायु से रुके हुए श्वास के वहनेवाले मार्गों को तीक्ष्ण नस्य आदि से शुद्ध करे जब श्वास लेने के मार्ग खुल जाते हैं तब इस प्राणी को होस होता है ॥

हरीतक्यादि लेह

हरीतकी वचा रास्ना सैंधवं साम्लवेतसम्। घृतमार्द्रकसंयुक्तम-पतंत्रकनाशनम् ॥ अम्लवेतसकाभावे चुक्रं दातव्यमीरितम् ॥

अर्थ–हरड, बच, रास्ना, सैंधानिमक, अमलवेत और घी. तथा अदरख इन का अवलेह अपतंत्रक वायु को नाश करे है यदि अमलवेत न मिले तो चूका डाले ॥

मरीचादि चूर्ण

मरिचं शिग्रुबीजानि विडंगं च फणिज्जकम्।
एतानि सूक्ष्मचूर्णानि दद्याच्छीर्षविरेचनम् ॥

अर्थ–काली मिरच, सहजने के बीज, वायविडंग और फणिज्जग इन का चूर्ण मस्तकरेचनार्थ देवे ॥

दंडापतानक

कफान्वितो यदा वायुर्धमनीष्वेव तिष्ठति।
स दंडवत्स्तंभयति कृच्छ्रो दंडापतानकः ॥

अर्थ–वायु अत्यंत कफयुक्त होकर सब धमनी (नाडी) में प्राप्त होय तब सब देह को दंड (लकडी) के समान तिरछा कर दे यह दंडापतानक कष्टसाध्य है ॥

अपतानक

दृष्टिं संस्तभ्य संज्ञां च हत्वा कंठेन कूजति। हृदि मुक्ते नरः स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः ॥ वायुना दारुणं प्राहुरेके तम-पतानकम् ॥

अर्थ–दृष्टीका स्तंभन हो जाय, संज्ञा जाती रहे, गले में घुरघुर शब्द होय, वायु जब हृदय को छोडे तब रोगी को होश होय और वायु हृदय को व्याप्त करै तब फेर मोह हो जाय इस भयङ्कर रोगी को कोई अपतानक ऐसे कहते हैं ॥

असाध्यत्व कहते हैं

गर्भपातनिमित्तश्च शोणितातिस्रवाच्च यः ।
अभिघातनिमित्तश्च न सिद्ध्यत्यपतानकः ॥

अर्थ–गर्भपात के होने से अथवा अतिरक्तस्राव के होने से अथवा अभिघात कहिये दंडादिकों की चोट लगने से जो प्रगट अपतानक रोग सो असाध्य है ॥

चिकित्सा

अथापतानकेनार्तमस्रस्ताक्षमवेपनम् ।
अखट्वापातिनं चैव त्वरया समुपाचरेत् ॥

अर्थ–जो रोगी अपतानकवायु से व्याप्त तथा जिस के नेत्र शिथिल और कंप रहित. तथा जो खाट में न पडा हो ऐसे रोगी का बहुत जल्दी यत्न करे देरी करने से रोगी असाध्य हो जाता है ॥

अपतानकिने शस्तं दशमूलीशृतं जलम् ।
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तं जीर्णे मांसरसौदनम् ॥

अर्थ–अपतान रोग पर दशमूल के काढे में पीपल का चूर्ण डालके पीवे जब काढा पच जावे तब मांसरस पथ्य में देवे तो अपतानवायु नष्ट हो ॥

चिकित्साप्रक्रिया

तैलेन मर्दनं स्वेदस्तथा तीक्ष्णेन नावनम् ।
स्रोतोविशोधनं पश्चात्सर्पिःपानं हितं स्मृतम् ॥

अर्थ–अपतानवातवाले रोगी के तेल का मर्दन करे, पसीने निकाले. तीक्ष्ण औषधों की नस्य देवे. फस्त खोले फिर घृतपान करावे ॥

हंत्यभुक्तवता पीतमम्लं दध्यपतानकम् ।
मरीचेन समायुक्तं स्नेहवस्तिरथापि च ॥

अर्थ–भोजन के प्रथम खट्टे दही में कालीमिरचों का चूर्ण डाल के पीवे. किंवा स्नेह बस्ती करे. तो अपतानक वायु नष्ट होवे ॥

धनुस्तंभलक्षण

धनुस्तुल्यो नमेद्यस्तु स धनुस्तंभसंज्ञितः । विवर्णबद्धवदनः स्रस्तांगो नष्टचेतनः ॥ प्रस्विद्यंश्च धनुस्तंभी दशरात्रं न जीवति ॥

अर्थ–धनु के समान टेढे होने को धनुस्तंभ कहते हैं. उस में वर्णका बदलना, दांतों का जकडना, अंग शिथिल होना, मूर्छित होना और खेद ये विकार होते हैं. धनुस्तंभरोगी दश दिनतक बचता नहीं. इस में अंतरायाम और बाह्यायाम इन के लक्षण न होनाही पहलेसे विशेष कहा है ॥

दूसरा प्रकार

कंठावरोधो धनुराकृतिः स्याद्धृदि व्यथा दंतनिबंधनं च ।
मुखस्य शोषः शिशिरस्य कांक्षा यस्मिन् धनुर्वायुरुदाहृतःसः॥

अर्थ–कंठ का अवरोध, धनु के समान टेढा होना, हृदय में शूल, दांतों का जकडना, मुखशोष और ठंडी की इच्छा ये लक्षण जिस में हों वह धनुर्वात कहलाता है॥

कुब्जलक्षण

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमशः सरुक् ।
क्रुद्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ–वायु कुपित होकर जब हृदय या पीठ को वेदना के साथ ऊंचा करे तब वह कुब्ज कहलाता है ॥

वातघ्नैर्दशमूल्या च नवं कुब्जमुपाचरेत् ।
स्नेहैर्मांसरसैश्चापि प्रवृद्धं तं विवर्जयेत् ॥

अर्थ–वातनाशक औषध, दशमूल का काढा, स्नेहपान और मांसरस इत्यादिक उपचार करे. परंतु जो अत्यंत बढा होवे उस का यत्न न करे ॥

अंतरायामलक्षण

अंगुलीगुल्फजठरहृद्वक्षोगलसंश्रितः । स्नायुप्रतानमनिलो यदा क्षिपति वेगवान् ॥ विष्टब्धाक्षः स्तब्धहनुर्भग्नपार्श्वः कफं वमन् । अभ्यंतरं धनुरिव यदा नमति मानवः ॥ तदासौऽभ्यन्तरायामं कुरुते मारुतो बली ॥

अर्थ–पैर की उंगली, घोंटू, हृदय, पेट, उरःस्थल और गला इन ठिकानों में रहे जो वायु वो वेगवान् होकर जो वहां नसों के जाल उस को सुखाय बाहर निकाल

दे, उस मनुष्य के नेत्र स्थिर हो जांय, मेडो रहिजाय, पसवाडों में पीडा होय, मुख से कफ गिरे और जिस समय मनुष्य धनुष के सदृश नीचे को नमजाय तब वह बली वायु (अंतरायाम) रोग को करे ॥

बाह्यायामलक्षण

महाहेतुर्बली वायुः शिराः सस्नायुकंडराः । मन्यापृष्ठाश्रिता बाह्याः संशोष्यानामयेद्बहिः ॥ यत्र तं बहिरायामं प्रवदंति भिषग्वराः । तमसाध्यं बुधाः प्राहुर्वक्षःकट्यूरुभंजनम् ॥

अर्थ–बडे कारणों से कुपित हुआ वायु कंधरा और पीठ इन के स्नायु और कंडरों को सुखाकर टेढा करता है. इसी से वैद्यलोग इस वायु को बहिरायाम कहते हैं. यह उर, कमर और जंघा इन को नष्ट करता है. यह असाध्य है ॥

सामान्य

बाह्यायामेंतरायामे विधेयार्दितवत् क्रिया ॥

अर्थ–बाह्यायाम और अंतरायाम वायु पर अर्दितवायु पर जो चिकित्सा कही है वह करे ॥

दूसरा प्रकार

बाह्यायामांतरायामपार्श्वशूलकटिग्रहान् ।
खल्लीदंडापतानौ च स्नेहस्वेदपुरैर्जयेत् ॥

अर्थ–बाह्यायाम, अंतरायाम, पसवाडे का शूल, कटिग्रह (कमर का रह जाना), खल्लीवात और दंडापतानक इन को स्नेहन तथा पसीने निकालना इत्यादि उपायों से जीते ॥

चिकित्सा

बाह्यायामेंतरायामे धनुस्तंभे च कुब्जके । योज्यं प्रसारिणीतैलं तेन तेषां शमो भवेत् ॥ वातव्याधिषु सामान्या याः क्रियाः कथिताः पुरा । कर्तव्या एव ताः सर्वास्तैलमेतद्विशेषतः ॥

अर्थ–बाह्यायाम, अंतरायाम, धनुस्तंभ और कुब्जकवात इन पर आगे कही प्रसारणीतैल की मालिस करे तो इन की शांति होवे. तथा वातव्याधि की सामान्य चिकित्सा जो पहले लिख आये हैं वो करे, परंतु प्रसारणी तैल की मालिस विशेष करके करनी चाहिये ॥

सर्जतैल

धनुर्वायुः शमं याति सर्जतैलस्य मर्दनात् ।
दशमूलीकषायो वा पाने नस्ये च शस्यते ॥

अर्थ–राल से बने हुए तेल की मालिस करने से धनुर्वात दूर हो, अथवा दशमूल के काढे को पीवे अथवा दशमूल के काढे की नस्य देवे तो धनुर्वात दूर हो ॥

एरंडादिकाढा

एरंडबिल्वं बृहतीद्वयं च सौवर्चलं व्योषविरामठं च ।
समातुलुंगीलवणोत्तमं च क्वाथं धनुर्वातहरं प्रशस्तम् ॥

अर्थ–अंड की जड, बेलगिरी, छोटी कटेरी, बडी कटेरी, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, बिजोरे की जड और सैंधानिमक इन का काढा करके पीवे तो धनुर्वात दूर होवे ॥

पक्षवध

गृहीत्वार्धं तनोर्वायुः शिराः स्नायूर्विशोष्य च । पक्षमन्यतरं हंति संधिबंधान्विमोक्षयन् ॥ कृत्स्नोर्धकायस्तस्य स्यादकर्मण्यो विचेतनः । एकांगरोगं तं केचिदन्ये पक्षवधं विदुः ॥

अर्थ–वायु आधे शरीर को पकड सब शरीर की नसों को सुखायकर दहने अंग को अर्धनारीश्वर के समान कार्य करने को असामर्थ्य कर दे और संधि के बंधनों को शिथिल कर दे, पीछे उस रोगी के सब वा आधे अङ्ग हलें चलें नहीं और उस को थोडा भी देखने का स्पर्शआदि का ज्ञान नहीं रहे इस को एकांगरोग कहते हैं। दूसरे पक्षवध कहते हैं इसी को पक्षाघात कहते हैं ॥

सर्वांगरोगलक्षण

सर्वांगरोगं तं केचित्सर्वकायास्थितेनिले ॥

अर्थ–तद्वत् कहिये शिरास्नायुविशोष्य इत्यादि सम्प्राप्तिलक्षण इस से जानने. सर्व शिरा (नाडी) में वायु प्राप्त होने से उस को सर्वांगरोग कोई कहते हैं. अब साध्यासाध्य के ज्ञानार्थ और दोषों का सम्बन्ध कहते हैं ॥

दाहसंतापमूर्च्छाः स्युर्वायौ पित्तसमन्विते । शैत्यशोथगुरुत्वानि तस्मिन्नेव कफान्विते॥शुद्धवातहतं पक्षं कृच्छ्रसाध्यतमं विदुः । साध्यमन्येन संसृष्टमसाध्यं क्षयहेतुकम् ॥ गर्भिणीसूतिकाबाल-वृद्धक्षीणेष्वसृक्स्रुतौ । पक्षाघातं परिहरेद्वेदनारहितो यदि ॥

अर्थ–पक्षवध की वायु कफपित्तयुक्त होय तौ दाह, संताप और मूर्च्छा होय और वही वायु कफयुक्त होय तौ शीत, सूजन, भारीपन ये लक्षण होंय। और केवल वायु से प्रगट पक्षाघात अत्यंत कष्टसाध्य होय है और दोषों से संसृष्ट होने से साध्य होय है। क्षय से प्रगट भया पक्षाघात असाध्य होय है। गर्भिणी, बालक, बृद्ध और क्षीण इन के भया तथा रुधिर के स्राव से प्रगट पक्षाघात पीडारहित होय तौ उस को वैद्य त्याग दे अर्थात् असाध्य जानकर चिकित्सा न करे॥

माषादि काढा

माषात्मगुप्तावातारिवाट्यालकजलाश्रितम्। हिंगुसैंधवसंयुक्तं प-
क्षाघातं विनाशयेत्॥ माषके हिंगुसिंधूत्थे जरणाद्यास्तु शाणिकाः॥

अर्थ–उडद, कौंच के बीज, अंड की जड और खिरेटी की जड इन का काढा करके उन में हींग और सैंधानिमक डाल के पीवे तो पक्षाघात का नाश करे इस में हींग और सैंधानिमक ये एक २ मासे तथा जीरा और जीरे आदि तीन २ मासे डाले. (परंतु मूल में जीरे आदि का नाम भी नहीं है)॥

ग्रंथिकादि तैल

ग्रंथिकाग्निकणाशुंठीरास्नासैंधवकल्कितम्।
माषक्काथाश्रितं तैलं पक्षाघातं व्यपोहति॥

अर्थ–पीपरामूल, चित्रक, पीपल, सोंठ, रास्ना और सैंधानिमक इन का कल्क करके उडदों के काढे से अथवा पूर्वोक्त कल्क में तेल सिद्ध करे इस को देह में लगावे तो पक्षाघात वायु को नष्ट करे॥

माषादि तैल

माषात्मगुप्तातिविषारूबूकरास्नाशताव्हालवणैः सुपिष्टैः।
चतुर्गुणे माषबलाकषाये तैलं शृतं हंति हि पक्षघातम्॥

अर्थ–उडद, कौंच के बीज, अतीस, अंड की जड, रास्ना, शतावर, सैंधानिमक उडद और खिरेटी इन के काढे में चतुर्थांश तेल डालके सिद्ध कर तो वह पक्षाघात को दूर करे॥

माषादि सप्तक

माषबलाशूकशिंबीकट्टृणरास्नाश्वगंधोरुबूकाणाम्। क्वाथः प्रातः
पीतो रामठलवणान्वितः कोष्णः॥ अपनयति पक्षघातं म-
न्यास्तंभं सकर्णनादरुजम्। दुर्जयमर्दितवातं सप्ताहाज्जयति
चावश्यम्॥

अर्थ-उडद, खिरेटी, कौंच के बीज, रोहिष तृण, रास्ना, असगंध और अंड की जड इन का काढा हींग और सेंधानिमक डालके प्रातःकाल पीवे तो पक्षाघात, मन्यास्तंभ, कर्णनाद तथा अर्दितवायु इन को सात दिन में जीत लेवे ॥

माषतैल

ग्रंथिकाग्निकणारास्नाकुष्ठं नागरसैंधवम् ।
माषं क्काथेन तत्तैलं पक्षाघातविनाशनम् ॥

अर्थ-पीपरामूल, चित्रक की छाल, पीपल, रास्ना, कूठ, सोंठ, सैंधानिमक और उडद इन के काढे में सिद्ध करा हुआ तेल पक्षाघात नाश करे ॥

कपिकच्छ्वादि काढा

कपिकच्छुबलैरंडमाषनागरसाधितम् । ससैंधवं पिबेत्क्काथं नासारंध्रेण मानवः ॥ पक्षाघातं निहंत्याशु शिरोरोगं हनुग्रहम् । अर्दितं संधिवातं च मन्यास्तंभं सुदारुणम् ॥

अर्थ-कौंच के बीज, खिरेटी, अंड की जड, सोंठ, उडद इन का काढा सैंधानिमक डालके नाक के द्वारा पीवे तो पक्षाघात, मस्तकरोग, हनुग्रह, अर्दित, संधिवात और दारुण मन्यास्तंभ इन को नाश करे ॥

गुग्गुल पक्षाघातपर

कृष्णाजटानागरचव्यवह्निपाठाविडंगेंद्रयवैः समांशैः । हिंगूग्रग्रंथाद्विजयष्टिकौंतीमातंगकृष्णातिविषान्वितश्च ॥ ससर्षपाजाजियुगाजमोदान्वितैः समस्तैस्त्रिफला द्विभागा । एभिः समो गुग्गुलुराजमिश्रो भुक्तो हरेत्पक्षभवानिलार्तिम् ॥

अर्थ-पीपरामूल, सोंठ, चव्य, चित्रक, पाढ, वायविडंग, इन्द्रजौ, हींग, वच, भारंगी, रेणुकबीज, गजपीपल, अतीस, सरसों, जीरा, काला जीरा और अजमोद ये सब समान भाग लेवे और सब औषधों से दूना त्रिफला, तथा सब के समान गूगल मिलायके गोली बनाय लेवे इस को बलाबल विचारके देवे तो पक्षाघातवायु को नष्ट करे ॥

रालतैल

समुद्धरेत्सर्जतैलं यंत्रे च नलिकाभिधे ।
विमर्दनं तेन तनौ पक्षाघातं विनाशयेत् ॥

अर्थ—राल का चूर्ण करके उस का नलिकायंत्रद्वारा तेल निकाल लेवे और देह में मालिस करे तो पक्षाघात वायु को नाश करे ॥

पक्षाभिघाते कटुतुंबिबीजं तैलं तथा निंबफलोद्भवं च ।
गोमायुपारावतकुक्कुटानां पित्तैः प्रलेपः प्रशमाय वायोः ॥

अर्थ—पक्षाघात वादी पर कडुए सपेद (तुंबा) के बीजों को पीस उन का अथवा निबोरी के तेल का अथवा स्यारिया, कबूतर और मुरगा इन के पित्ते का लेप करे तो पक्षाघात दूर होवे ॥

शुंठीचूर्ण

लघुशुंठीकृतं चूर्णं पलसप्तमितं बुधैः । तत्समं गोघृतं दत्त्वा भर्जयित्वा ततो बुधः ॥ शुंठीसमं रसोनं च पिष्ट्वा तत्र विनिक्षिपेत् । पक्षाघातं हनुस्तंभं कटिभंगं तथैव च ॥ बाहुपीडां जयेत्तीव्रां वातरोगं च नाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ का चूर्ण २८ तोले, गौ का घी २८ तोले डालके उस सोंठ को भून लेवे. फिर लहसन को छील और पीसके २८ तोले ले, उस सोंठ में मिलाय देवे फिर बलाबल विचारके खाने को देवे तो यह सोंठ पक्षाघात, हनुस्तंभ, कटिभंग, बाहुपीडा औंर वातरोग इन को नाश करे ॥

अर्दितनिदान

उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थं खादतः कठिनानि च । हसतो जृंभमाणस्य विषमाच्छयनासनात् ॥ शिरोनासौष्ठचुबुकललाटेक्षणसंधिगः । अर्दयत्यनिलो वक्त्रमर्दितं जनयेत्ततः ॥ वक्री भवति वक्त्रार्धं ग्रीवा चास्यात्प्रवर्त्तते । शिरश्चलति वाक्स्तंभो नेत्रादीनां च वैकृतम् ॥ ग्रीवाचुबुकदंतानां तस्मिन्पार्श्वे सवेदना । तमर्दितमिति प्राहुर्व्याधिं व्याधिविशारदाः॥ वातात्पित्तात्कफाच्चास्यात्त्रिविधं तं समासतः ॥

अर्थ—ऊंचे स्वर से वेदादिक का पाठ करने से अथवा कठिन पदार्थ सुपारी आदि के खाने से, बहुत हँसने से, बहुत जंभाई के लेने से, ऊंचे नीचे स्थान में सोने से, विषमाशन (भोजन) के करने से कोप को प्राप्त भई जो वायु मस्तक, नाक, होठ, ठोडी, ललाट और नेत्र इन की सन्धीन में प्राप्त हो मुख में पीडा करे

अर्थात् अर्दित रोग को उत्पन्न करे उस पुरुष का मुख आधा टेढा हो जाय, उस की नाड मुडे नहीं, मस्तक हिला करे, अच्छीतरह बोल्यो जाय नहीं, नेत्र, भृकुटी, गाल इन की विकृति कहिये पीडा, फरकना, टेढा होना, इत्यादि होय. और जिस-तरफ अर्दित रोग होय उस तरफ नार, ठोडी और दांत इन में पीडा होय. व्याधि जानने में जो कुशल वैद्य है वह इस व्याधि को अर्दितरोग ऐसे कहते हैं. शंका-क्योंजी अर्दितरोग में और पक्षाघात में क्या भेद हैं ? उत्तर-अर्दित से गर्भ में भी पीडा होय है कभी नहीं होय है और पक्षाघात में सदा पीडा होती है । अर्दितरोग चार प्रकार का है ॥

वातार्दित

लालास्रावो व्यथा कंपः स्फुरणं हनुवाग्ग्रहः ।
ओष्ठयोः श्वयथुः स्थूलश्चार्दिते वातजे भवेत् ॥

अर्थ-लार गिरना, पीडा होना, कंप, फुरफुरना, टोडी और भाषण इन का प्रतिबंध व ओष्ठ को बहुत सूजन इतने लक्षण वातार्दित के जानने ॥

पित्ताश्रित व कफाश्रित अर्दितलक्षण

पीतमास्यं ज्वरस्तृष्णा पित्तजे मोहधूपने ।
गंडे शिरसि मन्यायां शोथः स्तंभः कफात्मके ॥

अर्थ-पित्ताधिक अर्दितवायु में मुख को पीलापन, ज्वर, तृषा, मोह और कफ ये विकार होते हैं और कफात्मक अर्दित में गाल, मस्तक और गरदन इनपर सूजन और स्तंभ ये विकार होते हैं ॥

चिकित्सा

स्नेहपानानि नस्यं च भोज्यान्यनिलहंति च ।
उपनाहाश्च शस्यंते स्वेदनं च तथार्दिते ॥

अर्थ-स्नेहपान, नस्य, वातनाशक भोजन के पदार्थ तथा पसीने निकालना इत्यादिक उपचार अर्दितवादी पर करे ॥

दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन वा ।
बलायाः पंचमूल्या वा क्षीरं वातात्मके हितम् ॥

अर्थ-दशमूल के काढे के साथ अथवा बिजोरे के रस के साथ अथवा खिरेटी के काढे के साथ अथवा पंचमूल के काढे के साथ दूध पीवे तो वातात्मक अर्दित रोगपर हित करे ॥

पिष्टं माषकृतं जग्ध्वा नवनीतेन सोर्दितो ।
क्षीरं मांसरसैर्भुक्त्वा दशमूलीरसं पिबेत् ॥

अर्थ-उडद का चूरन मक्खन के साथ खाकर अथवा मांसरस के साथ दूध पीकर दशमूल का काढा पीवे तो अर्दितवातपर परमोत्तम है ॥

पित्तार्दित

अर्दिते पित्तजे शीतान्स्नेहोत्थांश्चैव निर्दिशेत् ।
घृतबस्तिप्रसेकं च रक्तस्रावं तथैव च ॥

अर्थ-पित्तजन्य अर्दितवातपर स्निग्ध पदार्थों से उत्पन्न हुए शीतल उपचार करे और घृत से बस्ति तथा सिंचन अथवा रक्तस्राव करे ॥

जिह्मीभूताननो मूको दाहवान्योर्दितो भवेत् ।
कुर्यात्प्रतिक्रियां तस्य वातपित्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ-अर्दितवात करके जिस का मुख टेढा हो गया हो और गूंगा हो गया हो तथा दाह होता हो इन उपद्रवों के नाश करने को वातपित्तनाशक उपचार करे ॥

कफार्दित

श्लेष्मभागे क्षयं नीते बृंहणैः समुपाचरेत् ।
अर्दिते शोथसंयुक्ते वमनं च प्रशस्यते ॥

अर्थ-अर्दितवायुकरके कफ क्षीण होने से बृंहण उपचार करे और शोथयुक्त अर्दितवातपर वमन कराना उत्तम है ॥

रसोनकल्कं तिलतैलमिश्रं खादेन्नरो योर्दितरोगयुक्तः ।
तस्यार्दितं नाशमुपैति शीघ्रं वृंदं घनानामिव वायुवेगात् ॥

अर्थ-लहसन के कल्क में तिल का तेल मिलायके खाय तो अर्दित वायु नष्ट हो. जैसे मेघों का समुदाय पवन के वेग से नष्ट होता है ॥

फलत्रिकं निंबफलो रसश्च वासापटोलीक्वथितं तु सर्वम् ।
सकौशिकं रात्र्यवसानकाले पीतं भवेदर्दितवातहारि ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आवला, निबोरी का रस, अडूसा और पटोलपत्र इन का काढा करके उस में गूगल मिलायके प्रातःकाल देवे तो अर्दितवायु का नाश होय ॥

अर्दितसाध्यासाध्य

क्षीणस्याऽनिमिषाक्षस्य प्रसक्ताव्यक्तभाषिणः।
न सिद्ध्यत्यर्दितं गाढं त्रिवर्षं वेपनस्य च ॥

अर्थ–क्षीण पुरुष के, पलक नहीं लगें ऐसे पुरुष के, अत्यंत शुद्ध बोले नहीं ऐसे पुरुष के, अर्दित रोग को प्रगट भये तीन वर्ष व्यतीत हो गये हों, अथवा त्रिवर्ष कहिये मुख, नाक और नेत्र इन तीनों का स्राव होय ऐसा और कंपयुक्त पुरुष का अर्दित रोग साध्य नहीं होय ॥

गते वेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्वाक्षेपकादिषु ॥

अर्थ–सब आक्षेपकादि वायु में वात का वेग न्यून होने से रोगी स्वस्थ अर्थात् प्रसन्न होता है ॥

दूसरा प्रकार

नवनीतेन संयुक्तां खादेन्माषेंडरीं नरः।
दुर्वारमर्दितं हंति सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ मक्खन के साथ उडद के बडा खाय तो दुर्निवार अर्दितरोग सात दिन में दूर होवे इस में संदेह नहीं है ॥

लशुनविधि

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम्। हिंगुजीरकसिंधूत्थ-सौवर्चलकटुत्रिकैः ॥ चूर्णितैर्माषकोन्मानैरवचूर्ण्य विलोडितम्। यथाग्निभक्षितं प्राता रुबुक्काथानुपानतः ॥ दिने दिने प्रयोक्तव्यं मासमेकं निरंतरम्। वातामयं निहंत्येव मर्दितं चापतंत्रकम् ॥ एकांगरोगिणां रोगं तथा सर्वांगरोगिणाम्। ऊरुस्तंभं गृध्रसीं च शूलद्वंद्वं कृमीनपि ॥ कटिपृष्ठामयं हन्याज्जाठरं च समीरणम् ॥

अर्थ–चार तोले अथवा दो तोले लहसन के रस में हींग, जीरा, सैंधानिमक, संचरानिमक और त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) ये प्रत्येक एक एक मासे ले चूर्ण करके डाले. फिर यथाशक्ति भक्षण करे इस का अनुपान अंड की जड का काढा है यह प्रातःकाल नित्य एक महिने पर्यंत सेवन करने से सामान्य वातरोग, अर्दित, अपतंत्रक, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, शूल, द्वंद्वजरोग, कृमि, कमर का रोग, पीठ का रोग तथा पेठ का वायु इन को नाश करे ॥

हनुग्रहनिदान

जिह्वानिर्लेखनाच्छुष्कभक्षणादभिघाततः। कुपितो हनुमूलस्थः स्रंसयित्वाऽनिलो हनुम्॥ करोति विवृतास्यत्वमथवा संवृतास्यताम्। हनुग्रहः स तेन स्यात्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणम्॥

अर्थ—जिव्हा के अतिघर्षण करने से, चना आदि सूखी वस्तु के खाने से अथवा किसी प्रकार चोट के लगने से, हनुमूल (कपोल) के अर्थात् डाढ की जड में रहे जो वायु सो कुपित होकर हनुमूल को नीचेकर मुख को खुला ही रख दे अथवा मुख को बंद कर दे, उस से हनुग्रहरोग कहते हैं तब उस मनुष्य को खाना, बोलना, कठिनता से होय॥

हनुग्रहे हनुस्तंभे मन्यास्तंभेऽर्दिते पिबेत्।
दशमूल्या समा कृष्णा अश्वत्थस्वरसेन च॥

अर्थ—हनुग्रह, हनुस्तंभ, गरदन का रह जाना और अर्दित वायु इन पर दशमूल और पीपल इन का काढा देवे· अथवा पीपल के वृक्ष के छाल के काढे में पीपल का चूर्ण डालके देवे॥

चिकित्सा

संवृतं चुबुकं स्निग्धं स्विन्नमुन्नमयेद्भिषक्।
विवृतं नमयित्वा तु कुर्यात्प्राप्तामिह क्रियाम्॥

अर्थ—मिचे हुए मुख को वैद्य स्निग्धपदार्थों को चुपडकर बफारा देकर उघाड देवे और यदि रोगी का मुख खुला रह गया हो तो पूर्वोक्त उपचारों से उस के मुख को दाब देवे अर्थात् बंद करे॥

पिप्पली चार्द्रकं चापि संचर्व्य च मुहुर्मुहुः।
निष्ठीवेत्तप्ततोयेन शोधयेद्वदनांतरी॥

अर्थ—पीपल और अदरख इन को वारंवार चावकर थूक देवे तथा गरम जल से मुख को धोवे तो मुख का खुलना बंद होना ठीक २ होने लगे॥

हनुग्रह चिकित्सा

निष्कुष्य लशुनं सम्यक् संक्षुद्य तिलतैलके।
सैंधवेनांचितं खादेद्धनुस्तंभार्दितो नरः॥

अर्थ—लहसन को छीलके तिल के तेल में पीस सैंधानिमक मिलायके खाय तो हनुस्तंभ रोग दूर होवे॥

रसोनवटक

रसोनगुटिकां माषविदलं परिषेच्य च। योजयेत् पिष्टिकां कांतां सैंधवार्द्रकहिंगुभिः ॥ ततस्तु वटकान्कृत्वा तिलतैले पचेच्छनैः। भक्षयेत्तान्यथावह्नि हनुस्तंभी सुखी भवेत् ॥

अर्थ–लहसन का गोला और उडद की पीसी हुई दाल इन को एकत्र करके उस में सैंधानिमक, हींग और अदरख डालके तेल में वडे बनावे ये वडे खाने से हनुस्तंभ (ठोडी का जकड जाना) नाश होय ॥

अभ्यंजन

अभ्यज्य पक्वतैलेन स्वेदयेन्मृदुनाग्निना ।
बस्तिं विधारयेन्मूर्ध्नि तैलेन परिपूरयेत् ॥

अर्थ–औटाए हुए तेल से देह में मालिस करे और मंद २ सेके अर्थात् पसीने निकाले और शिरोबस्ति देवे तो हनुस्तंभ दूर हो ॥

प्रसारणीतेल वातकफजन्यवायुपर

प्रसारणीपलशतं जलद्रोणेन पाचयेत्। पादशिष्टः शृतो ग्राह्यस्तैलं दधि च तत्समम् ॥ कांजिकं च समं तैलात्क्षीरं तैलाच्चतुर्गुणम्। तैलात्तथाष्टमांशेन सर्वकल्कानि योजयेत् ॥ मधुकं पिप्पलीमूलं चित्रकः सैंधवं वचा । प्रसारणी देवदारु रास्ना च गजपिप्पली ॥ भल्लातः शतपुष्पा च मांसी चैभिर्विपाचयेत् । एतत्तैलं वरं पक्कं वातश्लेष्मामयान् जयेत् ॥ कौब्जत्वं खंजपंगुत्वं गृध्रसीमर्दितं तथा। हनुपृष्ठशिरोग्रीवाकटिस्तंभं च नाशयेत् ॥ अन्यांश्च विषमान्वातान् सर्वानाशु व्यपोहति ॥

अर्थ–प्रसारणी १०० पल को एक द्रोण जल में डालके औटावे जब काढा चौथाई रहे तब उतारके उस को कपडे में छान लेवे. फिर इस में तेल, दही और कांजी काढे के समान मिलायके तेल से चौगुना गौ का दूध मिलावे फिर इस में कल्क करके डालने की जो औषध हैं उन को मैं लिखता हूं. मुलहटी, पीपरामूल, चित्रक की छाल, सैंधानिमक, प्रसारणी, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, भिलाये, सोंफ और जटामांसी ये बारह औषध तेल से अष्टमांश ले कल्क करके उस तेल में मिलाय देवे फिर तेल को अग्निपर चढाके मंद २ अग्नि से तेलमात्र शेष करे फिर इस को उतारके

छान लेवे और उत्तम शीशी आदि में भरके धर रखे. इस के लगाने से वातश्लेष्म-जन्य विकार, कुब्जवायु, खंजवायु, पंगुवायु, गृध्रसी, अर्दित, हनुस्तंभ, पीठ की वायु, मस्तक, ग्रीवा, कमर इन की वायु को नाश करे इस के सिवाय दूसरे जो विषम छोटे बडे वादी के रोग हैं वे सब इस तेल लगाने से दूर होते हैं ॥

मन्यास्तंभ

दिवा स्वप्नाशनस्नानविकृतोर्ध्वनिरीक्षणैः ।
मन्यास्तंभं प्रकुरुते स एव श्लेष्मणा युतः ॥

अर्थ–दिन में सोने से, अन्न, स्नान, ऊंचे को विकृतिपूर्वक देखने से इन कारणों से कोप को प्राप्त भई जो वात सो कफयुक्त होकर मन्या (नाडी) स्तंभन करे इस रोग को मन्यास्तंभन रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

दशमूलीकृतं क्वाथं पंचमूल्यापि कल्पितम् ।
रूक्षं स्वेदं तथा नस्यं मन्यास्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–दशमूल का अथवा पंचमूल का कल्क देवे और रूक्षपदार्थों से स्वेदन कर्म करे, नस्य देवे. ये उपाय मन्यास्तंभ (गरदन का जकड जाने) पर करने चाहिये ॥

तैलेनाज्येन वा ग्रीवामभ्यज्यार्कदलैरथ ।
एरंडपत्रैर्वाच्छाद्य स्वेदयेद्बहुशो भिषक् ॥

अर्थ–गरदनपर तेल अथवा घी लगाय आक के पत्ते अथवा अंड के पत्तों को आगपर सेकके बहुतवार सेके तो मन्यास्तंभ दूर हो ॥

कुक्कुटांडद्रवैरुष्णैः सैंधवाज्यसमन्वितैः ।
ग्रीवां संमर्दयेत्तेन मन्यास्तंभः प्रशाम्यति ॥

अर्थ–मुरगे के अंडे का रस, सैंधानिमक और घी इन को गरम करके गर्दनपर मले तो मन्यास्तंभ दूर होवे ॥

जिह्वास्तंभ

वाग्वाहिनी शिरासंस्थो जिह्वां स्तंभयतेऽनिलः ।
जिव्हास्तंभः स तेनान्नपानवाक्येष्वनीशता ॥

अर्थ–वायु वाणी के वहनेवाली नाडीन में प्राप्त हो जिव्हा का स्तंभन कर दे, उस को जिव्हास्तंभरोग कहते हैं. यह अन्नपान की तथा बोलने की सामर्थ्य का नाश करे ॥

चिकित्सा

जिव्हास्तंभे यथावस्थं वातव्याधिचिकित्सितम् ।
सामान्योक्ताः क्रियाश्चात्रार्दितस्यापि हिता मताः ॥

अर्थ–जिव्हास्तंभपर जैसे दोष होवे उसी को विचारके वातव्याधि के ऊपर जो चिकित्सा कही है वो करे और वातव्याधिपर तथा अर्दित वादीपर जो सामान्य क्रिया कही है वह हितकारी है ॥

दूसरा प्रकार

जिह्वास्तंभे क्रिया श्रेष्ठा सामान्योक्ता तु यार्दिते ॥

अर्थ–जो अर्दितवायुपर सामान्य क्रिया कही वह जिव्हास्तंभपर श्रेष्ठ है ॥

कल्याणकावलेह

सहरिद्रा वचा कुष्टं पिप्पली विश्वभेषजम् । अजाजी चाजमोदा च यष्टीमधुयुतं घृतम् ॥ एकविंशतिरात्रेण भवेच्छ्रुतधरो नरः । मेघदुंदुभिनिर्घोषो मत्तकोकिलनिःस्वनः ॥ जडवागादिमूकत्वं लेहो कल्याणको जयेत् ॥

अर्थ–हलदी, वच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहटी और घी इन का अवलेह २१ दिन सेवन करे तो बहरापना, तोतलापना और गूंगापना दूर होय तथा मेघ के समान अथवा दुदुंभी (नौबत) के समान गंभीर तथा कोकिल के समान प्रिय बोलनेवाला होय और सर्वशास्त्रों का धारणकर्त्ता होवे ॥

शिरोग्रह

रक्तमाश्रित्य पवनः कुर्यान्मूर्धधराः शिराः ।
रूक्षाः सवेदनाः कृष्णाः सोऽसाध्यः स्याच्छिरोग्रहः ॥

अर्थ–वायु रुधिर का आश्रय कर मस्तक के धारण करनेवाली नाडी को रूखी पीडायुक्त और काली कर दे यह शिराग्रहरोग असाध्य है. शिरोग्रह ऐसा भी पाठ है॥

चिकित्सा

शिरोग्रहे तु कर्तव्या शिरागतमरुत्क्रिया । दशमूलीकषायेण मातुलुंगरसेन च ॥ शतेन तैलेनाभ्यंगः शिरोबस्तिश्च युज्यते ॥

अर्थ–शिरोग्रह वायुपर शिरागत वायु का उपचार करे और दशमूलकाढा तथा बिजोरे का रस इन के साथ तेल को औटायके उस की मालिस अथवा शिरोबस्ति करे॥

गृध्रसीलक्षण

स्फिक्पूर्वाकटिपृष्ठोरुजानुजंघापदं क्रमात् । गृध्रसीस्तंभरुक्तोदैर्गृह्णाति स्पंदते मुहुः ॥ वाताद्वातकफात्तन्द्रा गौरवारोचकान्विता ॥

अर्थ–प्रथम स्फिक् कहिये कमर के नीचे का भाग जिस को कूला कहते हैं उस को स्तंभित कर दे, पीछे क्रम से कमर, पीठ, ऊरू, जानू, जंघा और पग इन को स्तंभित कर दे अर्थात् ये रह जाय, वेदना और तोद कहिये चोंटने की सी पीडा होय और वारंवार कम्प होय, यह गृध्रसीरोग वादी से होय है और वातकफ से होय तो इस में तंद्रा और भारीपना और अरुचि ये विशेष होंय. इस प्रकार गृध्रसी रोग दो प्रकार का है ॥

वातज गृध्रसीनिदान

वातजायां भवेत्तोदो देहस्यातीव वक्रता ।
जानुजंघोरुसंधीनां स्फुरणं स्तंभता भृशम् ॥

अर्थ–वातजगृध्रसी में वेदना, देह की वक्रता, जंघा, पींडरी और ऊरु इन के संधि में स्फुरण और स्तब्धता होती है ॥

वातश्लेष्मज गृध्रसीनिदान

वातश्लेष्मोद्भवायां तु गौरवं वह्निमार्दवम् ।
तंद्रा मुखप्रसेकश्च भक्तद्वेषस्तथैव च ॥

अर्थ–कफ से उत्पन्न गृध्रसी में भारीपन, अग्निमांद्य, तंद्रा, लार का गिरना, अन्न का द्वेष ये लक्षण होते हैं ॥

गृध्रसीचिकित्सा

गृध्रस्यां तु नरं सम्यग्रेकेण वमनेन वा ।
ज्ञात्वा निरामं दीप्ताग्निं बस्तिभिः समुपाचरेत् ॥

अर्थ–गृध्रसीरोगवाले को प्रथम रेचन और वमन देवे जब वमन विरेचन से दीप्ताग्नि हो जावे तब बस्त्यादिक उपचार करने चाहिये ॥

नादौ बस्तिविधिः कुर्याद्यावदूर्ध्वं न शुद्ध्यति ।
स्नेहो निरर्थकः स स्यात् भस्मन्येव हुतं तथा ॥

अर्थ-गृध्रसीरोग में जबतक ऊर्ध्वभाग की शुद्धि न होवे तबतक बस्तिकर्म न

करे यदि प्रमाद वैद्य करे तो स्नेहबस्ति निरर्थक होती है जैसे भस्म में हवन करा हुआ व्यर्थ जाता है ॥

एरंडतैलयोग

तैलमेरंडजं प्रातर्गोमूत्रेण पिबेन्नरः।
मासमेकं प्रयोगोयं गृध्रस्यूरुग्रहापहः ॥

अर्थ–गोमूत्र में अंडी का तेल डालके प्रातःकाल १ महिने पर्यंत नित्य पीवे तो गृध्रसी तथा ऊरुस्तंभ इन को नाश करे ॥

तैलं घृतं सार्द्रकमातुलुंगं रसं सचुक्रं सगुडं पिबेद्वा।
कट्युरुपृष्ठत्रिकशूलगुल्मगृध्रस्युदावर्तहरः प्रयोगः ॥

अर्थ–तेल अथवा घी इन में से कोई एक के साथ अदरख और बिजोरे का रस अमलवेत और गुड इन सब को एकत्र करके पीवे तो कमर, जांघ, पीठ, त्रिकस्थान इन में होनेवाला दर्द, गोला, उदावर्त्त और गृध्रसी वायु इन को नष्ट करे ॥

निष्कुष्यैरंडबीजानि पिष्ट्वा क्षीरे विपाचयेत्।
तत्पायसं कटीशूले गृध्रस्यां परमौषधम् ॥

अर्थ–अंडीन को छीलके कूट डाले. फिर इस को दूध में डालके औटावे जब लपसी हो जाय तब सेवन करे तो कमर का शूल और गृध्रसी इन पर उत्कृष्ट औषधी है॥

गृध्रसीहरतैल

द्वे पले सैंधवात्पंच शुंठ्या ग्रंथिकचित्रकात्। द्वे पले भल्लकास्थीनि विंशति द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्यैतैरपत्यदम्। गृध्रस्यूरुग्रहार्शोंतःसर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ–सैंधानिमक ८ तोले, सोंठ, पीपरामूल और चित्रक ये प्रत्येक २० तोले भिलाए की गुठली ८ तोले, कांजी ८८ तोले और तेल ६४ तोले सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे. इस को यथाशक्ति पीवे तो यह संतान देवे तथा गृध्रसी, ऊरुस्तंभ, बवासीर और सर्ववात के विकारों को नाश करे ॥

शिरावेध गृध्रसीपर

विध्येच्छिरां मेढ्रबस्तेरधस्ताच्चतुरंगुले।
यदि नोपशमं गच्छेद्दहेत्पादकनिष्ठिकाम् ॥

अर्थ–लिंगबस्ति के नीचे चार अंगुलपर शिरावेध करे तो गृध्रसी नष्ट होय यदि नष्ट न होवे तो पैर की छोटी उंगली में दाग देवे तो गृध्रसी अवश्य दूर हो ॥

निंबकल्क

महानिंबजटाकल्को गृध्रसीनाशनः स्मृतः ॥

अर्थ–बकायन के पत्तों का कल्क गृध्रसीवातनाशक है ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तंभनिवारणः ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल और भिलाए इन का कल्क सहत के साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभ को दूर करे ॥

पंचमूलीकषायं तु सुखोष्णं त्रिवृतायुतम् ।
गृध्रसीं गुल्ममूलं च सद्यः पीतो नियच्छति ॥

अर्थ–पंचमूल के काढे में निसोथ का चूर्ण डालके पीवे तो गृध्रसी और गोले का रोग इन को तत्काल नाश करे ॥

गृध्रसीचिकित्सा

एरंडमूलं बिल्वं च बृहती कंटकारिका । कषायो रुचकोपेतः
पीतो वृषणबस्तिजम् ॥ गृध्रसीजं हरेच्छूलं चिरकालानुबंधि च॥

अर्थ–अंड की जड, बेल की जड, कटेरी बडी, कटेरी छोटी इन के काढे में संचरनिमक डालके पीवे तो वृषण (अंडकोश), बस्ति गृध्रसीवात इन में होनेवाले बहुत दिन के दर्द को नाश करे ॥

गोमूत्रैरंडतैलाभ्यां कृष्णाचूर्णं पिबेन्नरः ।
दीर्घकालस्थितां हंति गृध्रसीं कफवातजाम् ॥

अर्थ–गोमूत्र, अंडी का तेल और पीपल का चूर्ण सब को एकत्र करके पीवे तो बहुत दिन की कफवातजन्य गृध्रसी को नाश करे ॥

सिंहास्यदंतीकृतमालकानां पिबेत्कषायं ऋभुतैलमिश्रम् ।
यो गृध्रसीनष्टगतिः प्रसुप्तः स शीघ्रगः स्याद्धि किमत्र चित्रम् ॥

अर्थ–अडूसा, दंती और अमलतास इन का काढा करके उस में अंडी का तेल मिलायके पीवे तो जिस का चलना हलना बंद हो गया हो, स्पर्श प्रतीत न हो ऐसा गृध्रसी का रोगी शीघ्र गमन करनेवाला होवे इस में आश्चर्य नहीं ॥

बृहन्निंबतरोः सारो वारिणा परिपेषितः ।
स पीतो नाशयेत्क्षिप्रमसाध्यामपि गृध्रसीम् ॥

अर्थ–बकायन के सार को जल में पीसके पीवे तो असाध्य भी गृध्रसी रोग शीघ्र नष्ट होय ॥

शेफालिकादलैः क्वाथो मृद्वग्निपरिपाचितः।
दुर्वारं गृध्रसीरोगं पीतमात्रः प्रणाशयेत् ॥

अर्थ–काली निर्गुंडी के पत्तों का काढा मंदाग्निपर करके पीवे तो दुर्निवार गृध्रसी रोग तत्क्षण दूर हो ॥

रास्नागुग्गुलु

रास्नायास्तु पलं चैकं पंचकर्षाणि गुग्गुलोः।
सर्पिषा वटिकां कृत्वा भक्षयेद्गृध्रसीहरीम् ॥

अर्थ–रास्ना ४ तोले और गूगल ५ तोले दोनों को खरल करके गोली करके शक्तिप्रमाण खाय तो गृध्रसीरोग को नष्ट करे ॥

रास्नाकाढा

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंटकैरंडपुनर्नवानाम्।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंड की जड और पुनर्नवा इन के काढे में सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो जंघा, ऊरु, पीठ, त्रिकस्थान इन के शूल को दूर करे ॥

पथ्यागुग्गुलु

पथ्याबिभीतामलकीफलानां शतं क्रमेण द्विगुणाभिवृद्धम्। प्रस्थेन युक्तं च पलं कषाणां द्रोणे जले संस्थितमेकरात्रम् ॥ अर्धावशेषं क्वथितं कषायं भांडे पचेत्तत्पुनरेव लोहे। अमूनि वह्नेरवतार्य दद्याद् द्रव्याणि संचूर्ण्य पलार्धकानि ॥ विडंगदंती-त्रिफलागुडूचीकृष्णात्रिवृन्नागरकोषणानि। यथेष्टचेष्टस्य नरस्य शीघ्रं हिमांबुपानानि च भोजनानि ॥ निषेव्यमाणो विनिहंति रोगान् सगृध्रसीं नूतनखंजतां च। प्लीहानमुग्रं जठराणि पंगु-पांडुत्वकंडूवमिवातरक्तम् ॥ पथ्यादिको गुग्गुलुरेष नाम्ना ख्यातः क्षितावप्रतिमप्रभावः। बलेन नागेंद्रसमं मनुष्यं जवेन

कुर्यात्तुरगेन तुल्यम् ॥ आयुःप्रकर्षं विदधाति चक्षुर्बलं तथा पुष्टिकरो विषघ्नः । क्षतस्य संधानकरो विशेषाद्रोगेषु शस्तः सकलेषु तज्ज्ञैः ॥

अर्थ—हरड १००, बहेडा २००, आवले ४००, शुद्ध गूगल ६४ तोले इन को १०२४ तोले जल में रात्रि के समय भिगो देवे. प्रातःकाल चूल्हेपर चढायके औटावे. जब जल आधा रहे तब इस काढे में वायविडंग, दंती, त्रिफला, गिलोय, पीपल, निसोथ, सोंठ और काली मिरच, इन प्रत्येक का चूर्ण दो दो तोले डाले. जब गाढा हो जावे तब घी से गूगल को कूटके गोली बनाय लेवे तो यह गूगल तयार हो. यह यथेष्ट आचरण तथा यथेष्ट भोजन करनेवाले मनुष्य के सेवन करने से रोग नाश करे. यह गृध्रसी, नवीन खंजता का रोग, प्लीहा, उग्रजठर, पंगुता, पांडुत्व, कंडु, वमन और वातरक्त इन को नाश करनेवाला है. पथ्यादि गुग्गुल पृथ्वीपर अद्वितीय सामर्थ्य रखनेवाली है और बल में हाथी के समान वेग में घोडे के समान मनुष्य को करे. आयुष्य, चक्षुर्बल और पुष्टि को करे. तथा विषनाशक, घाव को भरनेवाला तथा सर्व रोगोंपर उत्तम है ऐसा वैद्यों ने कहा है ॥

तुरंगगंधा सितखंडयुक्ता घृतेन भुक्ता कटिपृष्ठहन्त्री ॥

अर्थ—असगंध और मिश्री इन का चूर्ण घृत के साथ देने से कटिशूल का नाश करता है ॥

एरंडतैलयोग

वाजिगंधा बला विश्वा दशमूलं विसाधितम् ।
गृध्रस्यां तैलमैरंडं बस्तौ पाने च शस्यते ॥

अर्थ—असगंध, खिरेटी, सोंठ और दशमूल इन के काढे में अथवा कल्क में अंडी का तेल डालके सिद्ध करे यह गृध्रसीवायुपर बस्तीविषय में किंवा पीने में उत्तम है ॥

विश्वाचीलक्षण

तलं प्रत्यंगुलीनां याः कंडरा बाहुपृष्ठतः ।
बाव्होः कर्मक्षयकरी विश्वाचीतीह सोच्यते॥

अर्थ—बाहु के पिछाडी से लेकर हाथ के ऊपरले भागपर्यंत प्रत्येक उंगली के नीचे मोटी नस हैं उन को दुष्ट कर हाथ से लेना, देना, पसारना, मुट्ठी मारनी इत्यादिक कार्यों का नाशकर्त्ता जो रोग होय उस को विश्वाची रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

दशमूलीबलामाषक्काथं तैलाज्यमिश्रितम् ।
सायं भुक्त्वा चरेन्नस्यं विश्वाच्यामवबाहुके ॥

अर्थ–दशमूल, खिरेटी और उडद इन का काढा, तेल अथवा घी मिलायके सायंकाल के समय भोजन करने के पश्चात् नस्य देवे तो विश्वाची तथा अपबाहुक इन को नाश करे ॥

माषतैल

माषसिंधुबलारास्नादशमूलकहिंगुभिः । वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥ ऊर्ध्वं भक्ताशनाद्धन्याद्बाहुशोषावबाहुकौ । विश्वाचीमुद्धतां चापि पक्षाघातं तथार्दितम् ॥

अर्थ–उडद, सैंधानिमक, खिरेटी, रास्ना, दशमूल, हींग, वच और शतावर इन के काढे के साथ सिद्ध करा हुआ तेल सोंठ के साथ भोजन करके सेवन करे तो बाहुशोष, अपबाहुक, विश्वाची, पक्षाघात और अर्दितवायु इन को नष्ट करे ॥

क्रोष्टुशीर्षलक्षण

वातशोणितजः शोथो जानुमध्ये महारुजः ।
ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षस्तु स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ॥

अर्थ–वातरक्त से जानु, घेंटू इन दोनों की संधि में अत्यंत पीडाकारक सूजन हो और स्यार के मस्तकसमान मोटी हो उन को क्रोष्टुशीर्ष ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा

गुग्गुलुं क्रोष्टुशीर्षे तु गुडूचीं त्रिफलांभसा ।
क्षीरेणैरंडतैलं वा पिबेद्वा वृद्धदारुकम् ॥

अर्थ–क्रोष्टुशीर्षपर गिलोय और त्रिफला इन के काढे में गूगल डाल पीवे अथवा ४ तोले दूध में १ तोले अंडी का तेल डालके पीवे अथवा वृद्धदारु का चूर्ण सेवन करे ॥

सामान्यचिकित्सा

रसैस्तित्तिरिमांसस्य पीतैर्गुग्गुलुसंस्थितैः ।
वातरक्तक्रियाभिश्च जयेज्जंबुकमस्तकम् ॥

अर्थ–तीतर के मांसरस में गूगल डालके पीवे तथा वातरक्त पर जो उपाय कहे हैं वह इसपर करे तो क्रोष्टुशीर्षक नाश होय ॥

खंज व पंगु के लक्षण

वायुः कट्याश्रितः सक्थ्नः कंडरामाक्षिपेद्यदा ।
खंजस्तदा भवेज्जंतुः पंगुः सक्थ्नोर्द्वयोर्वधात् ॥

अर्थ–कमर में रहे जो वात सो जंघा की नसों को ग्रहण कर एक पग को स्तंभित कर देय, उस को खोडारोग कहते हैं और दोनों जंघान की नसों को पकड दोनों पैरों को स्तंभित कर दे उस को पांगुला कहते हैं ॥

चिकित्सा

उपाचरेदभिनवं खंजं पंगुमथापि वा ।
विरेकस्थापनस्वेदगुग्गुलुस्नेहबस्तिभिः ॥

अर्थ–खंज और पंगु यदि नवीन होवे तो विरेचन आस्थापन करावे, पसीने निकाले, गूगल, स्नेहपान और बस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

कलायखंजलक्षण

कंपते गमनारंभे खंजन्निव च लक्ष्यते ।
कलायखंजं तं विद्यान्मुक्तसंधिप्रबंधनम् ॥

अर्थ–जो पुरुष चलते समय थरथर कांपे और खंज अर्थात् एक पैर से ही न मालूम होय, इस रोग में संधि के बंधन शिथिल होते हैं इस रोग को कलाय-खंज कहते हैं ॥

चिकित्सा

क्रमः कलायखंजस्य खंजपंग्वोरिव स्मृतः ।
विशेषात्स्नेहनं कर्म कार्यमत्र विचक्षणैः ॥

अर्थ–कलायखंजपर खंज और पंगुपर जो चिकित्सा कही है वह करे तथा विच-क्षण वैद्य को विशेषकरके स्निग्ध उपचार करे ॥

चिकित्साक्रम

जयेत्कलायखंजं तु हेतुत्यागरसोनतः ॥

अर्थ–कलायखंजवादीवाले को निदान परिवर्जन करे अर्थात् जिस कारण से हुआ होवे उस को त्याग देवे. तथा लहसन भक्षण से जीते ॥

वातकंटकनिदान

रुक्पादे विषमे न्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ।
वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकंटकम् ॥

अर्थ–उंची नीची जगह में पैर पडने से अथवा श्रम के होने से वायु कुपित टकना में प्राप्त होकर पीडा करे तौ इस रोग को वातकंटक ऐसे कहते हैं ॥

चिकित्सा

रक्तावसेचनं कुर्यादभीक्ष्णं वातकंटके ।
पिबेदेरंडतैलं वा दहेत्सूचीभिरेव च ॥

अर्थ–वातकंटक रोग में वारंवार रुधिर को निकाले, अंडी का तेल पीवे तथा सुई से दाग देना चाहिये यह उपाय वातकंटक रोग के नाश करनेवाले हैं ॥

पाददाहलक्षण

पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक्सहितोऽनिलः ।
विशेषजश्चंक्रमणात् पादहर्षं तमादिशेत् ॥

अर्थ–जिस के पैर हर्षयुक्त (कहिये झनझनाहट पीडायुक्त) होय और अत्यंत सोय जावे, उस को पादहर्ष रोग कहते हैं यह कफवात के कोप से होय है ॥

चिकित्सा

वातरक्तक्रमं कुर्यात्पाददाहे विशेषतः । मसूरविदलैः पिष्टैः शृतशीतेन वारिणा ॥ चरणौ लेपयेत्सम्यक् पाददाहप्रशांतये । नवनीतेन संलिप्तौ वह्निना परितापितौ ॥ मुच्येते चरणौ क्षिप्रं परितापात्सुदारुणात् ॥

अर्थ–पाददाहपर विशेषताकरके वातरक्त का क्रम करे और मसूर की डाल को औटायके शीतल करे हुए जल में पीसके पैरों के लेप करे अथवा पैरों में मक्खन को चुपडके अग्नि से तपावे तो एक क्षणमात्र में पैरों का दाह शांत होय ॥

पाददाहपर लेप

गुडूच्यैरंडबीजानि दध्ना पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ।
पाददाहे हितं प्रोक्तं महानिंबफलानि च ॥

अर्थ–गिलोय और अंडी के बीजों को दही में पीसके इन का अथवा बकायन के फलों को जल में पीसके पैरों में लेप करे तो पाददाह शांत होवे ॥

पादहर्षलक्षण

हृष्येते चरणौ यस्य भवतश्च प्रसुप्तकौ ।
पादहर्षः स विज्ञेयः कफवातप्रकोपजः ॥

अर्थ—चरण रोमांचयुक्त होके स्पर्श न समझा जाय उस को पादहर्ष कहते हैं वह कफवात के कोप से होता है ॥

चिकित्सा

पादहर्षे तु कर्तव्यः कफवातहरो विधिः ॥

अर्थ—पादहर्ष रोगपर वातकफनाशक यत्न करने चाहिये ॥

बाहुशोषनिदान

अंसदेशे स्थितो वायुः शोषयेदंसबंधनम् ।
शिराश्चाकुंच्य तत्रस्थो जनयेदपबाहुकम् ॥

अर्थ—कंधा में रहे जो वायु सो कुपित होकर उस के बंधन को सुखाय दे, तब अंसशोषरोग प्रगट होय और कंधा में रहे जो वायु सो नसों को संकोच करके अपबाहुकरोग प्रगट करे ॥

चिकित्सा

बाहुशोषे पिबेद्भुक्त्वा सर्पिः कल्याणकं महत् । बलामूलशृतं तोयं सैंधवेन समन्वितम् ॥ बाहुशोषकरे वाते मन्यास्तंभे च शस्यते ॥

अर्थ—बाहुशोष रोग होनेपर भोजन करके पश्चात् बृहत्कल्याणक घृत पीवे अथवा खिरेटी के जड का काढा करके उस में सैंधानिमक मिलायके पीवे यह बाहुशोष और मन्यास्तंभ नामक वादीपर उत्तम है ॥

रसोनकल्क

क्षीरेण तैलेन घृतेन वापि मांसेन सार्धं लशुनानि खादेत् ।
शाल्योदनेनापि च षष्टिकेन पलार्धवृद्ध्या दिवसानि सप्त ॥
वातोत्थरोगान् विषमज्वरांश्च शूलान् सगुल्मान् दहनस्य मांद्यम् । प्लीहानमुग्रं भुजपार्श्वशूलं शिरोऽव्यथां कृंतति शुक्रदोषान् ॥

अर्थ–दूध, तेल, घी अथवा मांस इन में से किसी एक के साथ अथवा सांठी चांवल के भात के संग दो दो तोले लहसन को चाटे इस प्रकार सात दिन भक्षण करे तो वादी से हुए रोग, विषमज्वर इन का शूल, गोला, मंदाग्नि, प्लीहा और भुजा, पीठ और मस्तक इन का शूल और शुक्रदोष इन को नाश करे ॥

बाहुशोषचिकित्सा

बलामूलभवक्काथः सैंधवेन समन्वितः ।
बाहुशोषगदं नस्याद्धन्यान्माषरसोथ वा ॥

अर्थ–खिरेटी के जड का काढा करके उस में सैंधानिमक डालके देवे. अथवा उडदों के काढे की नस्य देवे तो बाहुशोषवात को नष्ट करे ॥

अवबाहुकलक्षण

शिराः संकोच्य बाहुस्थः स कुर्यादवबाहुकः ॥

अर्थ–बाहु का आश्रय करके जो शिराओं का संकोचन करता है उस को अवबाहुक कहते हैं ॥

चिकित्सा

परमौषधमवबाहुकमन्यास्तंभोर्ध्वजत्रुगतरोगे ।
शीतलजलेन नस्यं तदुपशमे जिंगिनी च पुरः ॥

अर्थ–अवबाहुक, मन्यास्तंभ और हसली के ऊपर के रोग इनपर मंजीठ और गूगल को शीतल जल में पीसके उस की नस्य देवे. यह उत्तम औषधी है ॥

मूलं बलायास्त्वथ पारिभद्रात्तथात्मगुप्तास्वरसं पिबेद्वा ।
युंजीत यो माषरसेन नस्यं भवेदसौ वज्रसमानबाहुः ॥

अर्थ–खिरेटी की जड और नीम की छाल इन का काढा अथवा कौंच का रस पीवे. अथवा उडदों के काढे की नस्य देवे तो वज्र के समान भी बाहुशोष को नष्ट करे॥

माषतैल

माषातसीयवकुरंटककंटकारीगोकंटटुंटुकजटाकपिकच्छुतोयैः । कार्पासकास्थिशणबीजकुलत्थकोलक्काथेन बस्तपिशितस्य रसेन चापि ॥ शुंठ्या समागधिकया शतपुष्पया च सैरंडमूलकपुनर्नवया हरण्या । रास्नाबलामृतलताकटुकैर्विपक्कं माषाख्यमेतदवबाहुहरं हि तैलम् ॥

अर्थ–उडद, अलसी, जौं, पीयावांसा, कटेरी, गोखरू, टेंटू, जटामांसी, कौंछ, नेत्रवाला, कपास के बीज (विनाला), सन के बीज, कुलथी और बेर इन का काढा बकरे के मांस का रस, सोंठ, पीपल, सोंफ, अंड की जड, पुनर्नवा, हरणवेल, रास्ना, खिरेटी, गिलोय और कुटकी इन का कल्क करे. इस कल्क में तेल डालके सिद्ध करे तो यह **माषाख्यतैल** अपबाहुक हरण करे. इस को तैल बनाने की क्रिया से वैद्य बनावे ॥

अतसीखल्लिविश्वरजोगुडेन संमर्द्य मोदको भुक्तः ।
अपहरत्यवश्यमवबाहुकृतकौतुकं नात्र संदेहः ॥

अर्थ–अलसी, देवदारु और सोंठ इन का चूर्ण गुड में मिलायके इस की गोली करके खाय तो अवश्य अवबाहुक वादी का नाश करे यह कौतुक (तमासा) है इस में संदेह नहीं ॥

माषतैलादिमर्दन

माषतैलरसोनाभ्यां बाह्वोश्च परिमर्दनात् ।
दशांघ्रिमाषक्काथेन जयेद्वैद्योवबाहुकम् ॥

अर्थ–पूर्वोक्त माषतैल और लहसन इन को एकत्र कर भुजा (हाथ) पर मालिस करे अथवा दशमूल और उडद इन का काढा पीवे तो अवबाहुक का नाश होय ॥

मूक मिम्मिण व गद्गदनिदान

आवृत्य वायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः ।
नरान्करोत्यक्रियकान्मूकमिम्मिणगद्गदान् ॥

अर्थ–कफयुक्त वायु शब्द के वहनेवाली नाडी में प्राप्त होकर मनुष्यों का वचन क्रियारहित मूक, मिम्मिण और गद्गद, ऐसा कर दे मूक कहिये जिस से बोला न जाय, मिम्मिण कहिये गिनगिनायकर नाक से बोले और गद्गद बोलते समय बीच के पद और व्यंजनों को न बोले और मंद बोले इन रोगों के कारण सदृश होकर रोगों के भिन्न भिन्न प्रकार होते हैं वह दोषों के उत्कर्षकरके अथवा प्रारब्धवश से होते हैं ऐसा जानना ॥

सारस्वतघृत

प्रस्थं घृतस्य पलिकैः शिग्रुवचालवणधातकीलोध्रैः । आजे पयसि विपक्कं सिद्धं सारस्वतं नाम्ना ॥ विधिवदुपयुज्यमानं जडगद्गदमूकतां क्षणाज्जित्वा । स्मृतिमतिमेधाप्रतिमाः कुर्यात्स स्पष्टवाग्भवति ॥

अर्थ–घी ६४ तोले और सहजना, वच, सैंधानिमक, धाय के फूल और लोध ये प्रत्येक ४ तोले ले सब को कूट पीसके घी में डाले तथा घी की बराबर बकरी का दूध डालके पक्व करे तो यह सारस्वत घृत सिद्ध होय. इस को यथाविधि सेवन करने से सर्ववाणी के दोष दूर करके बुद्धि, स्फूर्त्ती तथा स्पष्ट भाषण को करे ॥

दशमूलस्य निर्यूहो हिंगुपुष्करचूर्णितः।
शमयेत्परिपीतस्तु वाणीं मिम्मिणसंज्ञिताम् ॥

अर्थ–दशमूल के काढे में हींग और पुहकरमूल इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो वाणी का मिम्मणता दोष (गिनगिनायके बोलना) दूर होय ॥

तूनीलक्षण

अधो या वेदना याति वर्चोमूत्राशयोत्थिता।
भिन्दतीव गुदोपस्थं सा तूनी नामतो मता ॥

अर्थ–पक्वाशय और मूत्राशय से उठी जो पीडा सो नीचे जायकर प्राप्त हो और गुदा तथा उपस्थ कहिये स्त्रीपुरुषों के गुह्यस्थान इन में भेद करे, अर्थात् पीडा करे उस को तूनीरोग कहते हैं ॥

प्रतूनीलक्षण

गुदोपस्थोत्थिता चैव प्रतिलोमं विधाविता।
वेगैः पक्वाशयं याति प्रतूनी चेह सोच्यते ॥

अर्थ–गुदा और उपस्थ इन से उठी जो पीडा उलटी ऊपर जायकर प्राप्त हो और जोर से पक्वाशय में प्राप्त हो और तूनी के समान पीडा करे उस को प्रतूनी कहते हैं ॥

इन दोनोंपर चिकित्सा

तून्यां च प्रतितून्यां च प्रशस्ताः स्नेहबस्तयः। पिबेद्वा स्नेहलवणं पिप्पल्यादिमथांबुना ॥ उष्णेन रामठक्षारप्रगाढमथ वा घृतम् ॥

अर्थ–तूनी और प्रतूनी वादीपर स्नेहबस्ति देवे. अथवा निमक और घी ये पीवे अथवा पीपल के चूर्ण को पानी के साथ पीवे अथवा गरम जल के साथ हींग और सैंधानिमक सेवन करे अथवा घृत पीना चाहिये ॥

आध्मानलक्षण

साटोपमत्युग्ररुजमाध्मातमुदरं भृशम्।
आध्मानमिति जानीयाद्घोरं वातनिरोधजम् ॥

अर्थ–गुडगुड शब्दयुक्त अत्यंत पीडायुक्त ऐसा उदर (पक्वाशय) अत्यंत फूल अर्थात् वादी से भरकर चाम की थैली के समान हो जाय इस भयंकर रोग को आध्मानरोग कहते हैं. यह वातके रुकने से होय है ॥

चिकित्सा

आध्माने लंघनं पूर्वं दीपनं पाचनं ततः ।
फलवर्तिक्रियां कुर्याद्बस्तिकर्म च शोधनम् ॥

अर्थ–अफरा रोग में प्रथम लंघन करे फिर दीपन और पाचन देवे तथा फलवर्त्ती बस्तीकर्म तथा दस्त करावे ये उपाय करने चाहिये ॥

नाराचचूर्ण

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृता स्यात्पलोन्मिता । खंडादपि पलं ग्राह्यं चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ मधुनाक्षमितं लिह्याच्चूर्णमाध्माननाशनम् ॥

अर्थ--पीपल १ तोले, निसोथ ४ तोले, मिश्री ४ तोले इस प्रकार ले चूर्ण करके तीन मासे के अनुमान सहत के साथ सेवन करे तो पेट का फूलना दूर होय ॥

दारुषट्कलेप

दारुहैमवतीकुष्ठशताव्हाहिंगुसैंधवैः ।
लिंपेत्कोष्णैरम्लपिष्टैः शूलाध्मानयुतोदरम् ॥

अर्थ–देवदारु, चोक, कूठ, सतावर, हींग और सैंधानिमक ये पदार्थ निंबू के रस में पीस गरम करके पेटपर लेप करे तो शूल और पेट का फूलना इन को नाश करे॥

महानाराचरस

अभयारग्वधो धात्री दंती तिक्ता स्नुही त्रिवृत् । मुस्ता प्रत्येकमेतानि ग्राह्याणि पलमात्रया ॥ तानि संक्षुद्य सर्वाणि जलाढकयुगे पचेत् । तत्र तोयेष्टमं भागं कषायमवशेषयेत् ॥ निस्त्वग्जैपालबीजानि नवानि पलमात्रया । तनुवस्त्रधृतान्येव तस्मिन्क्वाथे शनैः पचेत् ॥ ज्वालयेदनलं मंदं यावत् क्वाथो घनो भवेत् । ततः खल्वे क्षिपेद्भागानष्टौ जैपालबीजतः ॥ भागांस्त्रीन्नागराद् द्वौ च मरिचाद्द्वौ च पारदात् । गंधकाद् द्वौ च तानीह यावद्यामं विमर्दयेत् ॥ रसो नाराचनामायं भक्षितो

रक्तिकामितः । जलेन शीतलेनैव रोगानेतान्विनाशयेत् ॥ आध्मानं शूलमानाहं प्रत्याध्मानं तथैव च । उदावर्तं तथा गुल्ममुदराणि हरत्यसौ ॥ वेगे शांते च भुंजीत शर्करासहितं दधि । ततस्तत्सैंधवेनापि ततो दध्योदनं मनाक् ॥

अर्थ–हरड, अमलतास का गूदा, आमले, जमालगोटा, कुटकी, थूहर, निसोथ और नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले सब को कूटके ५१२ तोले जल में डालके काढा करे जब अष्टावशेष काढा हो जावे तब उतारके छान लेय. फिर इस काढे में जमालगोटे के बीज छिले हुए ४ तोले कपडे की पोटली में बांधके दोलायंत्र की विधिसे लटकाय देवे और मंद २ अग्निसे सिजावे जबतक काढा गाढा होवे तबतक औटावे. फिर खरल में उन जमालगोटे के ८ भाग, सोंठ ३ भाग, काली मिरच, पारा और गंधक ये दो दो भाग लेवे. सब को एकत्र करके एक प्रहर खरल करे. यह **नाराच-रस** शीतल जल के साथ एक रत्ती सेवन करे तो अफरा, शूल, वादी का अवरोध, प्रत्याध्मान, उदावर्त्त, गोले का रोग तथा सर्व प्रकार के उदररोग इन को नाश करे। जब दस्त हो चुके तब दहीभात भोजन करे अथवा दहीभात और सैंधानिमक ये पथ्य में थोडे देवे. जब दस्त बंद करने होय तो गरम जल पिलाय देवे ॥

प्रत्याध्माननिदान

विमुक्तपार्श्वहृदयं तदेवामाशयोत्थितम् ।
प्रत्याध्मानं विजानीयात्कफव्याकुलितानिलम् ॥

अर्थ–और वही आध्मान रोग आमाशय में उत्पन्न होय तो उस को प्रत्याध्मान कहते हैं. इस में पसवाडे और हृदय इन में पीडा नहीं होय और वायु कफकरके व्याकुल हो ॥

चिकित्सा

प्रत्याध्माने समुत्पन्ने कुर्याद्वमनलंघने ।
दीपनादीनि युंजीत पूर्ववद्बस्तिकर्म च ॥

अर्थ–प्रत्याध्मान रोग उत्पन्न होने से वमन और लंघन करे. फिर दीपनादिक उपचार तथा बस्ति इत्यादिक उपचार करे ॥

वाताष्ठीलानिदान

नाभेरधस्तात्संजातः संचारी यदि वाऽचलः। अष्ठीलावद्घनो ग्रंथि-

रूर्ध्वमायत उन्नतः ॥ वाताष्ठीलां विजानीयाद्बहिर्मार्गावरोधिनीम् ॥

अर्थ—नाभी के नीचे उत्पन्न भई और इधर उधर फिरे, अथवा अचल अष्ठीला (गोलपाषाण) के समान कठिन और ऊपर का भाग कुछ लंबा होय और आडी कुछ उंची होय और बहिर्मार्ग कहिये अधोवायु मल मूत्र इन का अवरोध कहिये (रुकना) हो ऐसी गाठ को वाताष्ठीला कहते हैं ॥

प्रत्यष्ठीला

एतामेव रुजोयुक्तां वातविण्मूत्ररोधिनीम् ।
प्रत्यष्ठीलामिति वदेज्जठरे तिर्यगुत्थिताम् ॥

अर्थ—वाताष्ठीला अत्यंत पीडायुक्त वात मूत्र मल के रोध करनेवाली और जो तिरछी प्रगट भई होय उस को प्रत्यष्ठीला कहते हैं ॥

हिंग्वादिचूर्ण

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचाचव्याग्निपाठाशठीवृक्षाम्लं लवणत्रयं
त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्यापौष्करवेतसाम्लहपुषाजा-
ज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसैः स्याद्बीजपूरद्रवैः ॥

अर्थ—भूनी हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रक की छाल, पाढ, कचूर, इमली, सैंधानिमक, बिडनिमक, काला निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, अनारदाना, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हौऊबेर और जीरा इन के चूर्ण में अदरख के रस की तथा बिजोरे के रस की भावना देवे और यथायोग्य अनुपान के साथ अष्ठीलारोग पर वैद्य देवे ॥

प्रत्यष्ठीलादि चिकित्सा

प्रत्यष्ठीलाष्ठीलकयोर्गुल्मेभ्यंतरविद्रधौ ।
क्रिया हिंग्वादिचूर्णं च शस्यतेत्र विशेषतः ॥

अर्थ—प्रत्यष्ठीला, अष्ठीला, गुल्म और अंतरविद्रधि इनपर हिंग्वादि चूर्ण जो ऊपर लिख आये हैं सो देय. विशेषता करके यही क्रिया उत्तम है ॥

दूसरा प्रकार

हिंग्वाम्लत्रिकटूग्रषट्कटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यज-
गंधमूलहपुषाद्विक्षारसाराभया । हिध्माध्मानविबंधवर्ध्मकसन-
श्वासाग्निसादारुचिप्लीहार्शोखिलशूलगुल्मगदहृद्रोगाश्मपांडुप्रणुत्॥

अर्थ-भूनी हींग, अमलवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, वच, षट्कटु (सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल,) कचूर, चूक, अजमायन, कंकोल, पाढ, जीरा, असगंध, पुहकरमूल, हौऊबेर, सज्जीखार, जवाखार, चिरोंजी और हरड इन का समान भाग चूर्ण करे इस के सेवन से हिचकी, अफरा, मलबद्धता, बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, बवासीर, गोले के रोग, हृदयरोग, पथरी और पांडुरोग इन सब को दूर करे ॥

हिंग्वादियोग

हिंगूग्रगंधाविडशुंठ्यजाजीहरीतकीचित्रकमूलकुष्ठम्।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराष्ठीलविषूचिकासु॥

अर्थ-भूनी हींग, वच, बिडनोन, सोंठ, जीरा, हरड, चीते की छाल और कूठ ये सब औषध भागोत्तर वृद्धि से लेके चूर्ण करे यह गोला, उदर, अष्ठीला और विषूचिका इनपर हितकारी है ॥

नादेयादिकाढा

नादेयीकुटजार्कशिग्रुबृहतीस्नुग्बिल्वभल्लातकव्याघ्रीकिंशुकपारिभद्रकरजोपामार्गनीपाग्निकान्। वासामुस्तकपाटलासलवणान् जग्ध्वा रसं पाचितं हिंग्वादिप्रतिवापमेतदुचितं गुल्मोदराष्ठीलिषु ॥

अर्थ-भूयजामुन, कूडे की छाल, आक, सहजना, कटेरी बडी, थूहर, बेलगिरी, भिलाए, छोटी कटेरी, पलासपापडी, नीम की छाल, पित्तपापडा, ओंगा, कदंब, चित्रक, अडूसा, नागरमोथा, पाढ इन का काढा करके इस में सैंधानिमक और हींग डालके पीवे. यह गोला, उदर और अष्ठीला इन पर उत्तम है ॥

विडंगासव

विडंगं पिप्पलीमूलं पाठा धान्यैलवालुकम्। कुटजत्वक्फलं रास्ना भार्ङ्गी पंचपलोन्मितान् ॥ अष्टद्रोणेंभसः पक्त्वा द्रोणशेषं तु कारयेत्। पूते शीते क्षिपेत्तस्मिन् माक्षिकस्य शतत्रयम् ॥ धातक्या विंशतिपलं चूर्णं कृत्वा तु दापयेत्। व्योषस्य च तुलान्वाष्टौ त्रिजातं द्विपलं तथा ॥ फलिनीहेमतोयानां सलोध्राणां पलं पलम्। घृतभांडे समाधाय मासमेकं विधा-

रयेत् ॥ एष योगो हरत्येव प्रत्यष्ठीलाभगंदरान् । ऊरुस्तंभा- श्मरीमेहगंडमालां सविद्रधिम् ॥ आढ्यवातं हनुस्तंभं विडं- गाख्यो महासवः ॥

अर्थ–वायविडंग, पीपरामूल, पाढ, आवले, एलवालुक, कूडा की छाल, इन्द्रजो, रास्ना, भारंगी ये प्रत्येक वीस २ तोले लेवे. इस में १४ मन १३ सेर जल डालके औटावे जब ३६ सेर १६ तोले जल बाकी रहे तब उतारके छान लेय. फिर इस में ३०० तोले सहत, धाय के फूल ८० तोले, सोंठ, मिरच, पीपल ये ३२०० तोले तथा दालचीनी, इलायची, पत्रज ये प्रत्येक आठ २ तोले लेके और फूलप्रियंगु, धतूरे के बीज, नेत्रवाला और लोध ये प्रत्येक चार २ तोले, डालके इन सब को घी के चिकने बासन में भरके एक महिनेपर्यंत दाबके धरा रहने दे यह प्रयोग प्रत्यष्ठीला, भगंदर, ऊरुस्तंभ, पथरी, प्रमेह, गंडमाला, विद्रधि, आढ्यवात और हनुस्तंभ इन को नाश करे. इस को **विडंगासव** कहते हैं ॥

बस्तिवातलक्षण

मारुते विगुणे बस्तौ मूत्रं सम्यक्प्रवर्त्तते ।
विकारा विविधाश्चापि प्रतिलोमे भवंति हि ॥

अर्थ–बस्ती (मूत्रस्थान) में वायु अनुलोमगति से गमन करे तौ मूत्र अच्छी रीति से उतरे ऐसे प्रतिलोम से गमन करे तौ अनेक प्रकार के पथरी मूत्रकृच्छ्रादि विकार उत्पन्न होय ॥

चिकित्सा

बलामूलत्वचश्चूर्णं ससितं कर्षसंमितम् ।
पिबेत्कुडवदुग्धेन मुहुर्मूत्रेण शांतये ॥

अर्थ–खिरेटी की जड की छाल का चूर्ण एक तोले और मिश्री एक तोले इन को १६ तोले दूध के साथ पीवे तो वारंवार मूतना दूर होय ॥

हरीतक्यादिचूर्ण

पथ्याबिभीतधात्रीणां चूर्णं चूर्णं मृतायसः ।
मधुना सह संलीढं मुहुर्मूत्रस्य शांतिकृत् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला इन का चूर्ण करके इस में लोहभस्म मिलाय सहत में मिलायके चाटे तो वारंवार मूतने को बंद करे ॥

यवक्षारचूर्ण

यवक्षारस्य चूर्णं तु संयोज्य सितया सह।
भक्षयेन्नियतं तस्य प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः॥

अर्थ–जवाखार के चूर्ण में मिश्री मिलायके सेवन करे तो मूत्रग्रह (मूत्र का रुकना) शांति होवे॥

कूष्मांडबीजयोग

कूष्मांडस्य तु बीजानि बीजानि त्रपुसस्य च।
बस्तौ संधारयेत्तेन प्रशाम्येन्मूत्रनिग्रहः॥

अर्थ–पेठे के बीज और कांकडी के बीज इन दोनों को एकत्र पीसके बस्ती (मसाने) पर लगावे तो मूत्र की रुकावट दूर हो॥

आमलक्यादि योग

आमलक्याश्च कल्केन बस्तिभागं प्रलेपयेत्।
तेन प्रशाम्यति क्षिप्रं नियमान्मूत्रनिग्रहः॥

अर्थ–आंवले का कल्क करके बस्तीपर गाढा २ लेप करे तो निश्चय करके मूत्र की रुकावट दूर होय॥

चंदनादिवर्ति

मेहनस्याथ वा योनेर्मुखस्याभ्यंतरे शनैः।
घनसारयुतां वर्तिं धारयेन्मूत्रनिग्रहे॥

अर्थ–मूत्र की रुकावट दूर करने को लिंग में अथवा योनि के मुख में चंदन में भीगी हुई बत्ती को धारण करे तो मूत्र उतरे॥

बस्तिगतवायुचिकित्साक्रम

अथ बस्तिगते वाते कार्यो बस्तिविशोधनः॥

अर्थ–बस्तिगत वात कुपित होने से बस्ती का शोधन करे॥

कंपवायु

सर्वांगकंपः शिरसो वायुर्वेपथुसंज्ञकः॥

अर्थ–सब अंगों को और मस्तक को जो कंपाये उस वायु को वेपथु (कंप) वायु कहते हैं॥

खल्ली के लक्षण

खल्ली तु पादजंघोरुकरमूलावमोटनी ॥

अर्थ–और जो वायु पैर, जंघा, ऊरू और हाथ के मूल में कंपन करे उस को खल्ली (मूलामना) रोग कहते हैं ॥

चिकित्सा

कुष्ठसैंधवयोः कल्कश्चुक्रतैलसमन्वितः ।
सुखोष्णो मर्दने योज्यः खल्लीशूलनिवारणः ॥

अर्थ–कूट और सैंधानिमक इन का कल्क चुक्रतैल (जो पीछे लिख आए हैं) उस के साथ मिलाय गरम करके सुहाता २ लगायके मालिस करे तो खल्ली वात और शूल इन को दूर करे ॥

स्थान नाम लक्षण वातव्याधिनिदान

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैः शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्गं पित्तादेरुपलक्षयेत् ॥

अर्थ–स्थान और नाम इन के अनुरूप कहिये तुल्य ऐसे लक्षणों से शेष वातव्याधि जाननी. स्थानानुरूप कहिये जैसे कुक्षिशूल, नखभेद इत्यादिक. नामानुरूप कहिये जैसे शूल के कहने से कीलनिखालवत् पीडा जाननी उसी प्रकार तोदभेदादिक करके भी पीडा विशेष जाननी चाहिये और पित्त, कफ, रुधिर इन के संसर्ग से द्विदोषजव्याधि जाननी चाहिये ॥

प्रथमं ह्रस्वकेशत्वं ततो वाचालतापि च । आटोपः पार्श्वशूलं च पुरीषस्यातिगाढता ॥ तथा मलाप्रवृत्तिश्च कंपः स्तंभश्च रूक्षता । काश्यं कार्ष्ण्यं च शैत्यं च लोमहर्षो व्यथा तथा ॥ तोदोभेदः शिरास्फूर्तिरंगमर्दोंगशुष्कता । संकोचश्चांगविभ्रंशो मोहश्चंचलचित्तता ॥ निद्रानाशः स्वेदनाशो बलहानिश्च भीरुता । शुक्रक्षयो रजोनाशो गर्भनाशः परिश्रमः ॥ एवंविधानि रूपाणि करोति कुपितोनिलः । हेतुस्थानविशेषेण भवेद्रोगविशेषकृत् ॥

अर्थ–अब वातभेद कहता हूं. केश छोटे होना, बकवाद करना, गुडगुड शब्द, पार्श्वशूल, मल दृढ हो जाना, मल का अवरोध, कंप, निश्चल रहना, रूखापन,

कृशपन, कालेपन, शीत होना, रोमांच, वेदना, शूल, भेद, शिराओं का फुरना, अंग का मर्दन, अंग सूख जाना, अंग सकोडना, अंगभ्रंश, मोह, मन की चंचलता, निद्रा का नाश, पसीने का नाश, बल की हानि, भय पाना, वीर्यक्षय, शुक्रक्षय, गर्भ का नाश, श्रम इस प्रकार वायु कुपित होने से हेतु और स्थान इन के योग से अनेक प्रकार की व्याधि उत्पन्न करता है ॥

चिकित्सा

सामान्यवातरोगाणां या चिकित्सा प्रवर्तते ।
एषां सैव विधातव्या ततस्ते यांति संक्षयम् ॥

अर्थ–सामान्यवातरोगों पर जो चिकित्सा कही है वोही चिकित्सा ह्रस्वकेशादि वातोंपर करे तो इन सब का नाश होय ॥

लशुनसेवन

अन्नप्रकारैः पललप्रकारैर्गोधूमकैर्वा यवसक्तुभिर्वा ।
दुग्धेन तैलेन घृतेन चापि युक्तानि शीते लशुनानि खादेत् ॥

अर्थ–भोजन करने के जो पदार्थ (रोटी, दाल, भात इत्यादिक) अथवा मांस के पदार्थों से किंवा गेहूं, जौ, सत्तू, दूध, तेल और घी इन के साथ शीत दूर करने को लहसन भक्षण करे ॥

शुंठ्यादिकाढा

विश्वैरंडशिफादारुगुडूचीसहचरास्तथा ।
एतत्क्वाथोस्ति संधिस्थं वातं हंति निषेवितः ॥

अर्थ–सोंठ, अंड की जड, देवदारु, गिलोय और पियावांसा इन का काढा सेवन करने से अस्थिगत और संधिगत वायु को नाश करे ॥

दशमूलादिकाढा

दशमूलीकषायेण पिबेद्वा नागरांभसा ।
कटिशूलेषु सर्वेषु तैलमेरंडसंभवम् ॥

अर्थ–दशमूल के काढे से अथवा सोंठ के काढे से अंडी का तेल पीवे तो कमर में जो दर्द होता है वह सब नष्ट होय ॥

कटिवातपर लड्डू

आलिवं खाखसं खाद्यं खर्जूरं मेथिका तिलाः । मिशिद्वयं च

भल्लास्थि वातामं बञ्जुलं तथा ॥ सारं चैव पलं ग्राह्यं गुडो द्विकुडवस्तथा । घृतं द्विकुडवं चैव लड्डुकान् कारयेद्भिषक् ॥ द्विकर्षं भक्षयेत्प्रातः कटिवातविनाशनम् । धातुस्तंभं धातुवृद्धिं कुरुते नात्र संशयः ॥

अर्थ–आलिव, खसखस, खजूर, मेथी, तिल, सोंफ, बडीसोंफ, भिलाए की गुठली, बदाम, गोंद और चिरोंजी प्रत्येक चार २ तोले लेवे. गुड और घी ये प्रत्येक ३२ तोले डाले. सब को एकजीव कर दो दो तोले के लड्डू बनावे. इस में से प्रातःकाल एक भक्षण करे तो कमर की वायु को नाश करे तथा धातु का स्तंभन करे और धातु की वृद्धि करे इस में संदेह नहीं है ॥

ऊरुस्तंभपर सामान्यविशेषचिकित्सा

ऊरुस्तंभं जयेद्रूक्षस्वेदमर्दनकौशिकैः । पिप्पली पिप्पलामूलं भल्लातकफलानि च ॥ एतत्कल्कश्च सक्षौद्र ऊरुस्तंभनिवारणः ॥

अर्थ–ऊरुस्तंभ व्याधिको रूक्षस्वेद, मर्दन और गूगल सेवन करना इन उपायों से शमन करे. तथा पीपल, पीपरामूल और भिलाए इन के कल्क को सहत के साथ देवे तो उरुस्तंभ को दूर करे ॥

सामान्यसंज्ञा

वामनत्वांगसंकोचभंगभेदग्रहव्यथाः । मर्दनैर्बस्तिभिः क्वाथैः स्वेदनैश्च भिषक् जयेत् ॥ अपतानव्रणायामौ सस्नेहैर्व्रणचिकित्सितैः । अंगरौक्ष्यस्तंभकंपकार्श्यं कपिशतोदनैः ॥ दौर्बल्यस्फुरणे भ्रंशे स्नेहैर्मर्दनमिष्यते । शुक्रकार्श्ये शुक्रनाशे शुक्रस्यातिप्रवर्तने ॥ विड्ग्रहे बद्धविट्के च स्नेहपानं हितं मतम् ॥

अर्थ–वामन (वोनापना), अंगों का संकोच (कुबडापना), देह में पीडा तथा अंगों का जकड जाना इत्यादिकों को मर्दन, बस्ति, काढे इत्यादिक देना पसीने निकालना इत्यादि उपायों से जीते और अपतान, तथा व्रणायाम इन को स्नेह और व्रणचिकित्सा करके दूर करे तथा अंगों की रूक्षता, अंगस्तंभ, कंप, कृशता, देह की कालौंच, पीडा, दुर्बलता, अंगस्फुरण और अंगभ्रंश इनपर स्नेहादिक का मर्दन करे और धातुक्षीण, धातुनाश, धातु का अत्यंत गिरना, विड्ग्रह और बद्धविट्क इनपर स्नेहपान हितकारी तथा मान्य है ॥

ऊर्ध्ववातलक्षण

अधः प्रतिहतो वायुः श्लेष्मणा मारुतेन च।
करोत्युद्गारबाहुल्यमूर्ध्ववातः स उच्यते॥

अर्थ–कफवात करके पीडित नीचे की वायु डकार बहुत लावे उस वात को ऊर्ध्व कहते हैं, परंतु टोडरानंद ने कुछ विलक्षण लिखा है॥

शुंठ्यादिचूर्ण

भागा दश विश्वायास्तत्तुल्या वृद्धदारुकस्यापि। पथ्यात्र पंचभागा चतुरंशं हिंगु संभृष्टम्॥ एकः सैंधवभागस्तत्तुल्यं चित्रकं चात्र। संवृद्धमूर्ध्ववातं हंत्येतच्चूर्णितं भुक्तम्॥

अर्थ–सोंठ और विधायरो दोनों दश दश तोले, हरड पांच तोले, भूनी हींग चार तोले, सैंधानिमक, और चित्रक एक २ तोले इन सब का चूर्ण तयार करके सेवन करे तो अत्यंत बढी हुई ऊर्ध्ववात (बहुत डकरों का आना) नाश होय॥

शामामूलं क्षीरपिष्टं निपीतं वासायुक्तं नाशयेदूर्ध्ववातम्॥

अर्थ–पीपरा के मूल को दूध में पीसके उस में अडूसे का रस डालके देवे तो ऊर्ध्ववात का नाश करे॥

त्रिकशूललक्षण

स्फिक्सक्थ्नोः पृष्ठवंशास्थ्नोर्यः संधिस्तात्त्रिकं स्मृतम्।
तत्र वातेन या पीडा त्रिकशूलं तदुच्यते॥

अर्थ–गले के समीप और कटि के त्रिक में जो वायु से शूल होता है उस को त्रिकशूल कहते हैं॥

चिकित्सा

कारयेद्वालुकास्वेदं त्रिकशूली प्रयत्नतः।
खट्वाधस्तत्करीषाग्निं धारयेत्सततं नरः॥

अर्थ–त्रिकशूल रोगवाले रोगी के वालू से सेक करे और खाट के नीचे अग्नि रखकर सोवे कि जिस से कमर में सेक पहुँचे इस प्रकार करने से त्रिकपीडा दूर होय॥

आभादित्रयोदशांगगुग्गुलु

आभाश्वगंधा हपुषा गुडूची शतावरी गोक्षुरकश्च रास्ना। श्यामा शताह्वा च शठी यवानी सनागरा चेति समं विचूर्ण्य॥

सर्वैः समं गुग्गुलुमत्र दद्यात्क्षिपेदिहाज्यं च तदर्धभागम् । तद्भक्षयेदर्धपिचुप्रमाणं प्रभातकाले सुरयाऽथ यूषैः ॥ मद्येन वा कोष्णजलेन वाथ क्षीरेण वा मांसरसेन वापि । त्रिकग्रहे जानुहनुग्रहे च वाते भुजस्थे चरणस्थिते च ॥ संधिस्थिते चास्थिगते च तस्मिन्मज्जास्थिते स्नायुगते च कोष्ठे । रोगान् हरेद्वातकफानुविद्धान्वातेरितान्हृद्ग्रहयोनिदोषान् ॥ भग्नास्थिविद्धेषु च खंजतायां सगृध्रसीके खलु पक्षवाते । महौषधं गुग्गुलुमेतमाहुस्त्रयोदशांगं भिषजः पुराणाः ॥

अर्थ—बबूर के बीज, असगंध, हौंउबेर, गिलोय, सतावर, गोखरू, रास्ना, पीपल, सोंफ, कचूर, अजमायन, और सोंठ इन सब का समान भाग चूर्ण करे और सब चूर्ण के बराबर शुद्ध करी हुई गूगल डाले और गूगल से आधा घी डाले तो यह सिद्ध होय. इस में से एक २ तोले की गोली बनावे. एक गोली प्रातःकाल सुरा (मद्य) के साथ अथवा यूष के साथ अथवा मद्य के साथ गरमजल, दूध अथवा मांसरस इन से कीसी एक साथ सेवन करे तो त्रिकपीडा, जानुग्रह (घोटुओं का रह जाना), भुज की वात, चरण की वात, स्नायुगत, कोष्ठगत और वातकफ से उत्पन्न व्याधि, वातजन्य हृदय का शूल, योनिदोष, भग्नास्थि, टूटी हुई हड्डी, खंजवात, गृध्रसी, पक्षवात इन सब को नाश करे यह त्रयोदशांग गूगल महौषधी है. ऐसे पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥

रसोनाष्टक

रसोनपक्वकंदस्य गुलिका निस्तुषीकृताः। पाटयित्वा च मध्यस्थं दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ निश्युग्रगंधनाशाय दध्ना संनीय रक्षयेत् । ततः प्रक्षाल्य संशोष्य शिलायां परिपेषयेत् ॥ कल्कस्य पंचमं भागं चूर्णमेषां विनिःक्षिपेत् । सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंगु सैंधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागं विचूर्णयेत् । तिलतैलं च कल्कस्य तुर्यांशं तत्र मिश्रयेत् ॥ खादेत्कर्षमितं प्रातः किंवा दोषाद्यपेक्षया । अनुपानं प्रकुर्वीत वातारिशृतमन्वहम् ॥ सर्वांगैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम् । अपस्मारं तथोन्मादमूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडां कृमीन्ह-

रेत् । मद्यं मांसं तथाम्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥ व्यायाममातपं रोषमतिनीरं गुडं स्त्रियम् । रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतान्निरंतरम् ॥ वर्जयेत्तदतीसारी प्रमेही पांडुरोगवान् । अरोचकी गर्भिणी च मूर्छार्शोरोगसंयुतः ॥ रक्तपित्ती च शोषी च यक्ष्मी छर्द्यर्दितो नरः । पित्ते तु पथ्यया कुर्यात् प्रयोगांते विरेचनम् ॥ अन्यथा तस्य जायंते कुष्ठपांड्वामयादयः । स्त्रीस्तन्यांतरितं दद्याद्बालानामप्यनिच्छताम् ॥ तथापि लभते सिद्धिं महावीर्याद्रसोनतः ॥

अर्थ–पकी हुई लहसन की गांठ के छिलके दूर कर टुकडे करे और भीतर जो उन के अंकुर हैं उस को निकालके फेंक देवे. फिर इस की घोर गंध नाश करने को रात्रि के समय दही में भिगोय देवे. प्रातःकाल धोय स्वच्छ करके पौछ लेवे. फिर इस को सिलापर पीसके कल्क कर लेवे. इस कल्क में संचरनिमक, अजमायन, भूनी हुई हींग, सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल और जीरा इन का समान भाग चूर्ण करके कल्क का पंचमांश मिलावे. तथा तिल का तेल कल्क का चतुर्थांश डाल के सब को एकत्र करके प्रातःकाल एक तोले भक्षण करे अथवा दोष और बल विचार करके मात्रा देवे. और ऊपर से अंड की जड का काढा पीवे तो सर्वांग तथा एकांगगत वात, अर्दित, अपतंत्रक, अपस्मार, उन्माद, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, उर, पीठ, कमर, पसवाडा और कूख, इन की पीडा तथा कृमिरोग इन का नाश करे. इस औषध के सेवन करनेवाले को मद्य, मांस, अम्ल (खट्टा) रस ये जरूर २ सेवन करने चाहिये और व्यायाम, धूप, क्रोध, बहुत जल का पीना, गुड, स्त्रीसेवन ये लहसन खानेवाले को कदाचित् नहीं करने चाहिये. यह औषध अतिसारी, प्रमेही, पांडुरोगी, अरोचकी, गर्भिणी, मूर्च्छावान्, अर्शरोगी, रक्तपित्तवान्, क्षयरोगी, शोषवाला, वमन का रोगी इन को कदाचित् नहीं खानी चाहिये. यदि इस औषध के सेवन करने से पित्त की प्रबलता होवे तो छोटी हरड खायकर दस्त करावे. यदि बढे हुए पित्त में यदि दस्त न लेवे तो कुष्ठ और पांडु इत्यादि रोग होते हैं स्त्री के दूध से जो बालक न पीता हो उस को पिलावे. इस रसोनाष्टक औषध सेवन करने से रोगशांति होय ॥

व्रणायाम कहते हैं

मर्माश्रितं व्रणं प्राप्य वायुर्यः सर्वदेहगः ।
वेगैरानामयेद्देहं व्रणायामं तु तं त्यजेत् ॥

अर्थ—सर्वशरीरगत वात मर्मस्थान के व्रण में जाकर अपने वेग से देह को नम्र करता है तिस को व्रणायाम कहते हैं. वह असाध्य समझना ॥

हृदयं यदि वा पृष्ठमुन्नतं क्रमितः सह।
क्रुद्धो वायुर्यदा कुर्यात्तदा तं कुब्जमादिशेत् ॥

अर्थ—हृदय वा पीठ ये क्रुद्ध होके ऊंचे होते हैं उस को कुब्ज कहते हैं ॥

कृच्छ्रसाध्यत्व

हनुस्तंभार्दिताक्षेपपक्षाघातापतानकाः । कालेन महता वाता यत्नात्सिध्यंति वा न वा ॥ नवान्बलवतस्त्वेतान्साधयेन्निरुपद्रवान् ॥

अर्थ—हनुस्तंभ, अर्दित, आक्षेप, पक्षाघात, अपतानक ये वातव्याधि बहुत दिन में बडे परिश्रम से और यत्न से साध्य होती हैं. अथवा कभी साध्य नहीं होय. परंतु बलवान् पुरुष के ये वातव्याधि नई प्रगट भई हो और उपद्रवरहित होय तौ उस की चिकित्सा करनी चाहिये ॥

वातरोग के असाध्यत्व

विसर्पदाहरुक्संगमूर्च्छारुच्यग्निमार्दवैः । क्षीणमांसबलं वातात् घ्नंति पक्षवधादयः॥शूनं सुप्तत्वचं भग्नं कंपाध्मानानिपीडितम् । रुजार्तिमंतं च नरं वातव्याधिर्विनाशयेत् ॥ अव्याहतगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतिस्थितः । वायुः स्यात्सोधिकं जीवेद्वीतरोगः समाः शतम् ॥

अर्थ—विसर्परोग, दाह, शूल, मलमूत्र का निरोध, मूर्च्छा, अरुचि, मंदाग्नि इन लक्षणयुक्त जो होय और बलक्षीण होय ऐसे पुरुषों को पक्षवधादिक विकार मारक अर्थात् प्राण के हरणकर्त्ता होते हैं ॥ सूजनवाला, जिस की त्वचा सोइ गई होय अर्थात् जिस को स्पर्श होने का ज्ञान न होय, जिस की हड्डी टूट गई होय, कंप और अफरा इन से अत्यन्त पीडित होय, रुजा और आर्त्ति कहिये शूलयुक्त ऐसे मनुष्य को यह वातव्याधिरोग नाश करता है जिस पुरुष की वायु अव्याहतगति और अपने आश्रय से रहनेवाली और प्रकृतिस्थित कहिये न वृद्ध न क्षीण होय, वह पुरुष निरोगी होकर (अधिकं समाः शतं) कहिये एक सो वीस वर्ष और पांच दिन पर्यंत जीवे ॥

बत्तिसीकाढा

रास्ना गुडूची ह्येरंडो देवाह्वा चाभया सठी। वलोग्रगंधा पाठा च शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ पंचमूली विषा मुंडी सौर्यकश्च दुरालभा। यवानी पौष्करं मूलमश्वगंधा प्रसारिणी ॥ गोक्षुरं चाटरूषं च वपुषा वृद्धदारुकम्। शतावरी तथा ब्राह्मी गुग्गुली क्षीरकंचुका ॥ समभागैरिमैः सर्वैः कषायमुपकल्पयेत्। कृष्णाचूर्णेन वा योगराजगुग्गुलुनाथ वा ॥ अजमोदादिना वापि तैलेनैरंडजेन वा। वातरोगेषु सर्वेषु कफशोषेपतानके ॥ मन्यास्तंभे तथा शोषे पक्षाघाते सुदारुणे। अर्दिताक्षेपकुब्जे च्च हनुग्रहस्वरग्रहे ॥ आढ्यवाते तथा मूके खंजे चैवावबाहुके। गृध्रस्यां जानुभेदे च गुल्मे शूले कटिग्रहे ॥ सामे चैव निरामे च सप्तधातुगतेनिले। आवृते चानावृते च वातरक्ते विशेषतः ॥ एष द्वात्रिंशकः क्वाथः कृष्णात्रेयेण भाषितः ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंड की जड, देवदारु, हरड, कचूर, खिरेटी, वच, पाढ, सौंफ, पुनर्नवा, पंचमूल, अतिविष (अतीस), गोरखमुंडी, विजसार, धमासा, अजमायन, पोहकरमूल, असगंध, प्रसारणी, गोखरू, अडूसा, कांटेदार खिरनी, विधायरो, शतावर ब्राह्मी, गूगल, और क्षीरकंचुका इन सब को समानभाग लेकर क्वाथ बनावे. इस में पीपल का चूर्ण अथवा योगराजगूगल अथवा अजमोदादि चूर्ण अथवा अंडी के तेल के साथ पीवे. यह संपूर्णवादी के रोग, कफशोष, प्रतानकवायु, मन्यास्तंभ, शोष, घोरपक्षाघात, अर्दितरोग, आक्षेपक, कुब्ज, हनुग्रह, स्वरग्रह, आढ्यवात, मूल, खंज, अवबाहुक, गृध्रसी, घोटुओं की पीडा, गोले का रोग, शूलरोग, कमर का दर्द, साम और निराम ऐसी सप्तधातुगत वायु, आवृत अनावृत और वातरक्त इनपर देवे तो सब को नष्ट करे. यह द्वात्रिंशक काढा कृष्णात्रेयनामक ऋषि ने कहा है॥

लघुरास्नादिकाढा

रास्नागुडूचीवातारिदेवदारुमहौषधैः।
पिबेत्सर्वांगिके वाते समज्जास्थिसमांसगे ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंड की जड, देवदारू और सोंठ इन को समभाग ले, काढा करके पीवे तो सर्वांगवात, मज्जागत वात, अस्थिगत वात और मांसगत वात को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

रास्नैरंडशिफा दारु वचा शुंठी दुरालभा । अभयातिविषा मुस्ता शतमूली वृषा तथा ॥ अमीषां क्वाथपानेन कासामश्लेष्मसंधिगः । मज्जास्थिस्नायुसर्वांगवायुर्नश्यति निश्चितम् ॥

अर्थ–रास्ना, अंड की जड, देवदारु, वच, सोंठ, धमासा, हरड, अतीस, नागरमोथा, शतावर और अडूसा इन का काढा पीने से खांसी, आमवात, श्लेष्मबात, संधिवात और मज्जा, अस्थि और स्नायु इन की वायु और सर्वांगवायु ये सब निश्चय दूर हों ॥

रास्नादिचूर्ण

रास्ना कुष्ठनतद्रुषट्कटुशठी पाठा वचा सारिवा भूनिंबत्रिफला तथा दशजटा निर्गुंडिकैरंडकम् । हिंग्वाम्लार्द्रकवस्तगंधकबरी क्षारौ पटूनां त्रयं चूर्णं पुष्करतैलयुक्तमखिलान्वातानशीतिंजयेत् ॥

अर्थ–रास्ना, कूठ, छड, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, पीपरामूल, कचूर, पाढ, वच, सारिवा, चिरायता, त्रिफला, दशमूल, निर्गुंडी, एरंड की जड, हींग, अमलवेत, अदरख, वनतुलसी, बबूर, जवाखार, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनिमक और काला निमक इन सब के चूर्ण को पुहकरमूल के काढे से सिद्ध करे तेल के साथ सेवन करे तो अस्सी प्रकार की वादी नष्ट होवे ॥

आभादिचूर्ण

आभा रास्ना गुडूची च शतावर्यो महौषधम् । शतपुष्पाश्वगंधा च हपुषा वृद्धदारुकम् ॥ यवानी चाजमोदा च समभागानि कारयेत् । सूक्ष्मचूर्णमिदं कृत्वा बिडालपदकं पिबेत् ॥ मद्यैर्मांसरसैर्यूषैस्तक्रैरुष्णोदकेन वा । सर्पिषा वा पिबेद्यस्तु दधिमंडेन वा पुनः ॥ अस्थिसंधिगतं वायुं स्नायुमज्जाश्रितं च यत् । कटिग्रहं गृध्रसीं च मन्यास्तंभं हनुग्रहम् ॥ ये च कोष्ठगता रोगास्तां च सर्वान्विनाशयेत् । आभाद्यो नाम चूर्णोयं सर्वव्याधिनिबर्हणः ॥

अर्थ–बबूर के बीज, रास्ना, गिलोय, शतावर, सोंठ, सोंफ, असगंध, हौउबेर, विधायरो, अजमायन, अजमोद ये सब समानभाग लेवे. सब का चूर्ण कर मद्य, मांस-

रस, यूष, छाछ, गरम जल, घी, दही का पानी इन में से किसी एक के साथ २ तोले पीवे तो अस्थि, संधि, स्नायु, मज्जा और कमर इन स्थान की वायु, गृध्रसी, मन्यास्तंभ, हनुग्रह और कोष्ठगत रोग इन सब को नाश करे इस को आभादिचूर्ण कहते हैं. यह सर्व को नाश करे. इसे आभादिचूर्ण कहते हैं ॥

रास्नादिचूर्ण

रास्ना शतावरी दारु कंकोलं लांगली कणा। रक्तचंदनमंजिष्ठा वृद्धिसैंधवपद्मकः॥अश्वगंधामृता पाठा मुस्तैला शालिपर्णिका। शतपुष्पाजमोदा च शुंठी कुष्ठं समांशतः॥ संघृष्टं चूर्णमेतेषां भक्षितं तप्तवारिणा। त्वगस्थिस्नायुसंभूतं मारुतं हंति वेगतः॥

अर्थ–रास्ना, शतावर, देवदारु, कंकोल, कलियारी, पीपल, लालचंदन, मजीठ, वृद्धि, सैंधानिमक, पद्माख, असगंध, गिलोय, पाढ, नागरमोथा, इलायची, सालिपर्णी, सोंफ, अजमोद, सोंठ, कूठ ये सब समानभाग लेवे सब एकत्र कर चूर्ण करे गरम जल के साथ देवे तो त्वचा, अस्थि और स्नायु इन में जो वातव्याधि का वेग है उस को नाश करे॥

शिग्रुमूलादिचूर्ण

शिग्रुमूलं कणा रास्ना शुंठी गोक्षुरसैंधवम्। वह्निश्चैरंडमूलं च अमीषां चूर्णसंभवा॥ गुटिकां प्रत्यहं तासामेकैकामदति ध्रुवम्। सर्वांगकुपितो वायुः शमं यात्यतिवेगतः॥

अर्थ–सहजने की जड, पीपल, रास्ना, सोंठ, गोखरू, सैंधानिमक, चीते की छाल, अंड की जड इन का चूर्ण करके गोली बनाय लेवे. इस में से नित्यप्रति एक भक्षण करे तो संपूर्ण अंग में वात के कोप को दूर करे॥

अजमोदादिचूर्ण

अजमोदा कणा रास्ना गुडूची विश्वभेषजम्। शतपुष्पाश्वगंधा च शतमूली समांशतः॥ सुश्लक्ष्णं चूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह। हृत्कुक्षिकोष्ठकंठस्थं मारुतं हंति वेगतः॥

अर्थ–अजमोद, पीपल, रास्ना, गिलोय, सोंठ, सोंफ, असगंध, शतावर ये समानभाग लेके चूर्ण करे इस को घी के साथ सेवन करे तो हृदय, कूख, कोठा और कंठ, इन स्थानों में कुपित हुई वात को शीघ्र नष्ट करे॥

कुष्ठादिचूर्ण

कुष्ठेंद्रयवा पाठा पावकोतिविषा निशा ।
एतेषां चूर्णमुष्णांबुपीतं हंत्यनिलान्बहून् ॥

अर्थ–कूठ, इंद्रजो, पाढ, चित्रक की छाल, अतीस और हलदी इन का बारीक चूर्ण करके गरम जल के साथ पीवे तो अनेक प्रकार की वायु दूर करे ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

शुंठीमरिचदारूणां चूर्णं क्काथस्य पानतः ।
सर्वे वाता विनश्यंति देहोपद्रवकारिणः ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच और देवदारू इन का चूर्ण कर इन्हीं के काढे के साथ देवे तो देह में उपद्रव करनेवाले संपूर्ण वादियों को नष्ट करे ॥

रास्नादिचूर्ण

रास्ना पुनर्नवा शुंठी गुडूच्येरंडजं शृतम् ।
सप्तधातुगते वाते वाते सर्वांगगे पिबेत् ॥

अर्थ–रास्ना, पुनर्नवा, सोंठ, गिलोय और अंड की जड इन का काढा सप्तधातुगत वात, आमवात और सर्वांगवात इनपर देवे ॥

द्वात्रिंशकगुग्गुलु

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगं चव्यचित्रकौ । वचैला पिप्पलीमूलं हपुषा सुरदारु च ॥ तुंबरुः पौष्करं कुष्ठं विषा च रजनीद्वयम् । बाष्पिका जीरकं शुंठी शतपत्रा दुरालभा ॥ सौवर्चलं विडंगं च क्षारौ द्विरदपिप्पली । सैंधवं च समानेन तुल्यं दत्त्वा च गुग्गुलुम् ॥ साधयित्वा विधानेन कोलमात्रां वटीं चरेत् । घृतेन मधुना वापि भक्षयेत्तामहर्मुखे ॥ आमं हन्यादुदावर्तमंत्रवृद्धिं गुदकृमीन् । महाज्वरोपसृष्टानां भूतोपहतचेतसाम् ॥ आनाहोन्मादकुष्ठानि पार्श्वशूलहृदामयान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं पक्षाघातापतानकान् ॥ शोफप्लीहानमत्युग्रं कामलामपचीं तथा । नाम्ना द्वात्रिंशको ह्येष गुग्गुलुः कथितो महान् ॥ धन्वंतरिकृतो योगः सर्वरोगनिकृंतनः ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य, चित्रक, दालचीनी, इलायची, पीपरामूल, हऊबेर, देवदार, तुंबरू, पोहकरमूल, कूठ, अतीस, दारुहलदी, हलदी, बबूर, जीरा, सोंठ, कमल, धमासा, संचरनिमक, वायविडंग, सज्जीखार, जवाखार, गजपीपल और सैंधानिमक ये सब एक २ भाग लेवे और सब की बराबर गूगल लेय सब विधिपूर्वक सिद्ध करके बेर के गुटिका समान करके इस को घृत अथवा सहत के संग प्रातःकाल खाय तो आम, उदावर्त्त, अंत्रवृद्धि, गुदा की कृमि इन को नाश करे तथा महाज्वर से पीडित, भूतबाधावाला, अनाह, उन्माद, कोढ, पसवाडे का शूल, हृदयरोग, गृध्रसी, हनुस्तंभ, पक्षाघात, अपतानक, शोफ, प्लीहा, कामला और अपची इन सब रोगवालों को हितकारी है. इस को बडा द्वात्रिंशनामा गुग्गुल कहते हैं. यह धन्वंतरि का करा हुआ है ॥

योगराजगुग्गुल वातादिरोगोंपर

नागरं पिप्पली चव्यं पिप्पलीमूलचित्रकैः । भृष्टं हिंग्वजमोदं च सर्षपा जीरकद्वयम्॥रेणुकेंद्रयवाः पाठा विडंगं गजपिप्पली। कटुकातिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वेति भागतः ॥ प्रत्येकं शाणिकानि स्युर्द्रव्याणीमानि विंशतिः ॥ द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ एभिश्चूर्णीकृतैः सर्वैः समो देयस्तु गुग्गुलुः । वंगं रौप्यं च नागं च लोहसारं तथाभ्रकम् ॥ मंडूरं रससिंदूरं प्रत्येकं पलसंमितम् । गुडपाकसमं कृत्वा इमं दद्याद्यथोचितम् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने । गुटिकाः शाणमात्रास्तु कृत्वा ग्राह्या यथोचिताः ॥ गुग्गुलुर्योगराजोयं त्रिदोषघ्नो रसायनः । मैथुनाहारपानानां त्यागो नैवात्र विद्यते॥ सर्वान्वातामयान्कुष्ठानर्शांसि ग्रहणीगदम् । प्रमेहं वातरक्तं च नाभिशूलं भगंदरम् ॥ उदावर्तं क्षयं गुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥ मंदाग्निश्वासकासांश्च नाशयेदरुचिं तथा ॥ रेतोदोषहरः पुंसां रजोदोषहरः स्त्रियाम् । पुंसामपत्यजनको वंध्यानां गर्भदस्तथा॥ रास्नादिक्काथसंयुक्तो विविधं हंति मारुतम् ॥ कांकोल्यादिशृतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीशृतेन मेहांश्च गोमूत्रेणैव पां-

डुताम् । मेदोवृद्धिं च मधुना कुष्ठं निंबशृतेन वा ॥ छिन्नाक्काथेन वातास्रं शोथं शूलं कणाश्रितात् । पाटलाक्काथसहितो विषं मूषकजं जयेत् ॥ त्रिफलाक्काथसहितो नेत्रार्तिं हंति दारुणाम् । पुनर्नवादेः क्काथेन हन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ–सोंठ, पीपल, चव्य, पीपरामूल, चित्रक, भुनी हींग, अजमोद, सरसो, दोनों जीरे, रेणुक, इन्द्रयव, पाठ, वायबिडंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मूर्वा ये वीस औषध एक एक शाण लेवे. और सब औषधों से दूना त्रिफला लेवे. इन सब का चूर्ण करे तथा सब चूर्ण के बराबर शुद्ध हुआ गूगल मिला के सब को बारीक करके गुड के पाक के समान पतला करके पूर्वोक्त चूर्ण मिलाय दे. फिर वंगभस्म, रौप्यभस्म, नागभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मंडूरभस्म और रससिंदूर ये सात भस्म एक एक पल लेवे. सब को उस गूगल में मिलाय देवे फिर सब को कूटके एक जीवकर गोला बनाय लेवे फिर उस में से एक एक शाण की गोली बनावे इन को घी के चिकने बरतन में भरके रख देवे इस को योगराज गूगल ऐसे कहते हैं. यह गूगल के सेवन करने से त्रिदोष दूर होवे तथा यह रसायन है. इसपर मैथुन और खाने पीने का निषेध नहीं है. विना पथ्य के भी गुण करे है इस से सर्व प्रकार के वादी के रोग, कुष्ठ, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभी का शूल, भगंदर, उदावर्त्तवायु, क्षयरोग, गोला, अपस्मार, उरोग्रह, मंदाग्नि, खासी, श्वास और अरुचि ये रोग दूर हों यह योगराज गूगल पुरुष के धातुविकारों को दूर करे स्त्रियों के रजदोष को दूर करे पुरुषों की धातु बढायके पुत्र देता है. वांझ स्त्रियों को गर्भ देय है रास्नादि काढे के साथ खाय तो अनेक प्रकार की वादी दूर हो. कांकोल्यादि काढे के साथ सेवन करे तो पित्तरोग दूर हो आरग्वधादि काढे के साथ पांडुरोग दूर हो शरीरमें मेद दुष्ट होकर शरीर बढने से सहत में मिलायके देवे कुष्ठरोग में निम के काढे के साथ देवे रक्तवातपर गिलोय के काढे से । शूल और सूजन इनपर पीपल के काढे से, मूषे के विषपर पाढल के काढे में देवे, नेत्ररोगपर त्रिफला के काढे से, पुनर्नवादि काढे के साथ संपूर्ण उदररोगपर सेवन करे इस प्रकार अनुपान जानना ॥

षडशीतिगुग्गुल

सैर्यैयासविषा दारु व्याघ्रीयुक् चविका वृषः । कृष्णाब्दोग्राधनाभीरुवाट्यालमिशिवल्लरी ॥ पथ्या शुंठी छिन्नरुहा शठ्यारग्वधगोक्षुरम् । विशाखा मोदकी तिक्तग्रंथिभार्ङ्गी विदारिका ॥

अलंबुषा हस्तिकर्णी बस्तगंधा विषाणिका । शिवाक्षं मुसली कौंती काकोली दीप्ययुग्मकम् ॥ त्रिवृद्दंती शिखी शृंगी कोकिलाक्षो दुरालभा । पंचमूलं महद्वीरतरुः कुष्ठं च जोंगकम् ॥ जातिपत्रीफलैलं च केसरं त्वक् किरातकम् । कुंकुमं देवकुसुमं विशाला निशिसैंधवम् ॥ मंदारमूलं कृमिजिद्धेमदुग्धा रविप्रिया । गजपिप्पल्यपामार्गवानरी नक्तमूलकम् ॥ एतैः समा रसा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः । सूतगंधकहिंगूलं टंकणं लोहमभ्रकम् ॥ शुल्बं वंगं सूतभस्म नागं ताप्यमयोरजः । मीलितं पुरपादं च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ पचेच्चतुर्गुणे क्वाथे पुरं षट्कटुजे पुरा । तुर्यांशशोषिते क्वाथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥ चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना । यावद्घनतरं तावद्वटिकाः कारयेत्ततः ॥ स्वर्णप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः । सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्नाय्वस्थिसंधिगान् ॥ सामान्निरामान्संसृष्टान् श्लेष्मजान् हंति केवलान् । यक्ष्माणमग्निमांद्यं च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ गुल्मजानूरुकट्यूरोदरहृत्कुक्षिकक्षगान् । अंसमन्याहनुश्रोत्रभ्रूललाटाक्षिशंखगान् ॥ प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च शूलमाध्मानमश्मरीम् । किं पुनर्भेदकान्वातान्प्रत्यंगस्थान् जयत्यलम् ॥ गुग्गुलुः षडशीतिर्वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः । क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनः पुनः ॥ स एष राजयोगोयं न देयो यस्य कस्यचित् । वत्सरेणास्य योगेन षंढोपि प्रमदाप्रियः ॥ वाजीकरणमन्यच्च परं नास्माद्विशेषतः । गुणोस्य सेवनान्नित्यं यः स्यात्स स्याद्ब्रवीमि किम् ॥

अर्थ—सपेद पियावासा, धमासा, अतीस, देवदारु, कटेरी, बडी कटेरी, चव्य, अडूसा, पीपल, नागरमोथा, वच, धनिया, शतावर, कगही, सोंफ, देवदारु, हरड, सोंठ, गिलोय, कचूर, अमलतास का गूदा, गोखरू, पुनर्नवा, मोदकी, कुटकी, पीपरामूल, भारंगी, विदारीकंद, मुंडी, कासालू, अजमोद, कांकडासिंगी, आवळा,

मूसली, रेणुकबीज, काकोली, अजमायन, खुरासानी, अजमायन, निसोथ, दंती, चित्रक, काकडासिंगी, तालमखाना, लाल धमासो, बडा पंचमूल, बेलतर, कूठ, काली अगर, जावित्री, जायफल, इलायची, नागकेशर, दालचिनी, चिरायता, केशर, लौंग, इंद्रायन, हलदी, सैंधानिमक, मंदारमूल, वायविडंग, चोक, प्‍राड, गज-पीपल, औंगा की जड, कौंच के बीज, कंजा की जड, सब औषध समान भाग लेवे और सब को बराबर रास्ना, बबूर के बीज सब से दूने और इन सब की बराबर गूगल, पारा, गंधक, हिंगूल, सुहागा, लोहे की भस्म, अभ्रकभस्म, ताम्र, वंग, रससिंदूर, शीशा, सुवर्णमाक्षिक, मंडूर इन सब की भस्म गूगल की चतुर्थांश इस प्रकार सब का एकत्र कर षट्कटू के काढे में गूगल शोधकर उस काढे को जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में ऊपर की संपूर्ण औषधों के चूर्ण को डालके मंद २ अग्निपर पचन करे. जब गाढा हो जाय तब उतारके गोली बनाय लेवे. फिर इन को बलाबल विचारके सहत और घी इन के साथ देवे. तो सप्तधातुगत वात, शिरा, स्नायु, अस्थि और संधि इन की वायु सामवात, निरामवात, सन्निपातजन्य वात, केवल स्नेहवात, क्षय, मंदाग्नि, धातुगत ज्वर, गोला, जानु, ऊरू, कमर, उर, हृदय, कूख, कंधा, मन्या, हनु, कान, भ्रुकुटि, ललाट, नेत्र, कनपटी, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, अफरा और पथरी इन को नाश करे. तथा यह भेद करने वाली बात को जीते. तथा प्रत्यंग, वात को जीते. इस में संशय नहीं है. यह षडशीति नामक गूगल भोजराज ने अपने शिष्य क्षीण होनेवाले की प्रार्थना से रचा है, यह राजयोगरूप औषध जिस किसी को नहीं देनी चाहिये । एक बर्षपर्यंत सेवन करे तो नपुंसक भी स्त्रियों को प्रिय होय ।इस से परे दूसरा प्रयोग वाजीकरण करता नहीं है । इस औषध के सेवन करने से जो गुण होते हैं उन को मैं क्या कहूं कहे नहीं जावे ॥

विश्वाद्यगुग्गुलु

विश्वैरंडशिफाशुंठीदारुकुष्ठं ससैंधवम् । रास्नामृतोद्भवं चूर्णं गुग्गुलुर्द्विगुणस्तथा ॥ एकैका गुटिका तस्य प्रत्यहं भक्षिता सती । पथ्याशिनोतिवेगेन हंति विभ्रममारुतम् ॥

अर्थ–सोंठ, अंड की जड, सोंठ, देवदार, कूठ, सोंठ, रासना और गिलोय ये सब समान लेवे तथा गूगल दूनी लेवे सब को एकत्र कर तोले २ की गोली बनावे । एक गोली नित्य भक्षण करे और पथ्य सेवन करे तो तत्काल विभ्रमसंज्ञक वात को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

शुंठीकणा कणामूलं विडंगं दारु सैंधवम्। रास्ना वह्नियवानी च मरिचोग्रभया समम् ॥ द्विगुणं गुग्गुलोश्चूर्णमाज्ययुक्तं निहंति तान्। वातं विषूचिकां गुल्मं शूलं कंपं च गृध्रसीम् ॥

अर्थ–सोंठ, पीपरामूल, वायविडंग, देवदार, सैंधानिमक, रासना, चीते की छाल, अजमायन, काली मिरच, वच और हरड ये समानभाग ले और सब से दूनी गूगल ले सब को घी में सान के अनुमानमाफिक सेवन करे तो वादी, विषूचिका (हैजा), गुल्म पांच प्रकार का शूल और गृध्रसी इन को दूर करे ॥

रास्नादिगुग्गुलु

रास्नामृतैरंडसुराह्वविश्वं तुल्येन गाढं पुरुणा विमर्द्य ।
खादेत्समीरी सशिरोगदी च नाडीव्रणी चापि भगंदरी च ॥

अर्थ–रास्ना, गिलोय, अंड की जड, देवदारु और सोंठ समानभाग ले सब की बराबर शुद्ध गूगल डालके खरल करे इस को वादीवाला, मस्तकरोगी, नासूर और भगंदररोगी खाय तो आराम होवे ॥

दूसरी योगराजगुटी

नागरं पिप्पलीमूलं चव्यमूषणचित्रकम्। भृष्टहिंग्वाजमोदा च सर्षपा जीरकद्वयम् ॥ रेणुकेंद्रयवा पाठा विडंगं गजपिप्पली। कटुकातिविषा भार्ङ्गी वचा मूर्वा च पत्रकम् ॥ देवदारु वचा कुष्ठं रास्ना मुस्ता च सैंधवम्। एला त्रिकंटकः पथ्या धान्यकं च विभीतकम् ॥ धात्री च त्वगुशीरं च यवक्षारस्तिलान्यपि। एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ यावंत्येतानि सर्वाणि तावद्देयोत्र गुग्गुलुः। संमर्द्य सर्पिषा पश्चात्सर्वं संमिश्रयेच्च तत् ॥ एकपिंडं ततः कृत्वा धारयेद्घृतभाजने। गुटिकाष्टंकमात्रास्तु खादेत्ताश्च यथोचिताः ॥ गुग्गुलुर्योगराजोयं महान् मुख्यो रसायनम्। मैथुनाहारपानानां नियमो नात्र विद्यते ॥ सर्वान् वातामयान् हन्यादामवातमपस्मृतिम्। वातरक्तं तथा कुष्ठं तथा दुष्टव्रणानपि ॥ अर्शांसि ग्रहणीरोगं प्लीह-

गुल्मोदराण्यपि । आनाहमग्निमांद्यं च श्वासं कासमरोचकम् ॥ प्रमेहं नाभिशूलं च कृमिक्षयमुरोग्रहम् । शुक्रदोषमुदावर्तभगंदरविनाशनः ॥ आदौ शाणोन्मितं खादेत्ततः कर्षार्धमात्रकम् । ततः कर्षमिदं खादेद्गुग्गुलुं क्रमतो नरः ॥ दिनानां सप्तकं पूर्वं गुग्गुलुः शाणमावहेत् । द्वितीये कर्षमर्धं तु पूर्णकर्षं ततः परम् ॥ रास्नादिक्काथसंयुक्तो सर्ववातामयान् हरेत् । कांकोल्यादिशतात्पित्तं कफमारग्वधादिना ॥ दार्वीशतेन मेहांश्च गोमूत्रेण च पांडुताम् । मधुना मेदसो वृद्धिं कुष्ठं निंबशृतेन च ॥ छिन्नाक्काथेन वातास्रं शूलं मूलकजं शृतम् । पाटलाक्काथसहितो विषं मूषकसंभवम् ॥ त्रिफलाक्काथसंयुक्तो दारुणा नेत्रवेदना । पुनर्नवादिक्काथेन हंति सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ–सोंठ, पीपरामूल, चव्य, काली मिरच, चित्रक, भुनी हुई हींग, अजमोद, सरसों, सपेद जीरा, काला जीरा, रेणुक बीज, इन्द्रजों, पाढ, वायविडंग, गजपीपल, कुटकी, अतीस, भारंगी, वच, मूर्वा, पत्रज, देवदारु, वच, कूठ, रास्ना, नागरमोथा, सैंधानिमक, इलायची, गोखरू, हरड, धनिया, बहेडा, आवले, दालचीनी, खस, जवाखार और तिल, ये सब समानभाग लेके बारीक चूर्ण करे और सब की बराबर शोधा हुआ गूगल लेवे. सब को घी डालके कूट लेवे सब एकजीव हो जावे तब एक चार २ मासे की गोली बनायके घी के चिकने बासन में भर के रख देवे. इस को यथोचित भक्षण करे. यह योगराजगूगल महान् मुख्य रसायन है. इसपर मैथुन करना, खट्टा, चिरपर खाने पीने की मनाही नहीं है. यह संपूर्ण वात के विकार, आमवात, अपस्मार, वातरक्त, कोढ, दुष्टव्रण, बवासीर, संग्रहणी, प्लीह, गोला, उदररोग, अफरा, मंदाग्नि, श्वास, खांसी, अरुचि, प्रमेह, नाभीशूल, कृमिरोग, क्षय, उरोग्रह, शुक्र के दोष, उदावर्त्त, और भगंदर, इन को नाश करे. प्रथम इस को ७ दिन चार २ मासे खाय फिर ७ दिन छः मासे फिर एक एक तोले सेवन करे। यह इस के खाने का क्रम है। इस को रास्ना के काढे से खाय तो सर्व वातविकारों को दूर करे कांकोल्यादि काढे के साथ सेवन करे तो पित्तरोगों को, अमलतास के काढे से कफ के रोगों को, दारुहलदी के काढे के साथ संपूर्ण प्रमेहों को, गोमूत्रद्वारा पांडुरोग को, सहत के साथ मेदरोग को नीम के काढे से कोढ को, गिलोय के काढे से वातरक्त को, मूली के काढे से शूल रोग को, पाढल के काढे से सेबन करे

तो मूषे का विष दूर होवे. त्रिफले के काढे के साथ पीवे तो दारुण नेत्र की पीडाको शमन करे और पुनर्नवादि काढे के साथ सर्व उदर के विकारों को नष्ट करे हैं ॥

रसोनसंधान

रसोनस्य तु तत्क्षुण्णं तदर्धं लुंचितास्तिलाः । पादे तु तक्रे गव्यस्य पृष्टे द्रव्यैस्तु संक्षिपेत् ॥ त्रिकटु धान्यकं चव्यं चित्रको हस्तिपिप्पली । त्वगेला ग्रंथिकं पत्रं तालीसं च पलांशकम् ॥ शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि मधूकस्य गुडस्य वा ॥ आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिषोष्टौ प्रकल्पयेत्।तिलतैलस्य तावंतः सूक्तस्यापि च विंशतिः॥ सिद्धार्थकस्य चत्वारि राजिकायास्तथैव च । कर्षप्रमाणं दातव्यं रामठं लवणानि च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यराशौ विनिःक्षिपेत् । द्वादशाहं समुद्धृत्य ततः खादेद्यथाबलम् ॥ सुरा सौवीरकं चैव मधुरं च पिबेदनु । जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टविवर्जितम् ॥ एकमासप्रयोगेण सर्ववातान् व्यपोहति । अशीतिं वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ विंशतिश्लेष्मजांश्चैव प्रमेहानां च विंशतिम् ॥ श्वयथौ योनिशूले च सर्वान्वातान् व्यपोहति ॥ च्युतसंधेश्च भग्नस्य संधानकरणं भवेत् । बलवर्णकरं हृद्यं वृष्यं बीजविवर्धनम् ॥

अर्थ–लहसन को छीलके पीस लेवे फिर लहसन से आधे धुले हुए तिल मिलावे और उस का चतुर्थांश गौ की छाछ मिलावे फिर इन में सोंठ, मिरच, पीपल, धानिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, तज, इलायची, पीपरामूल, पत्रज और तालीसपत्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे, मिश्री ३२ तोले ले, जीरा २० तोले ले, काला जीरा, मुलहटी, गुड और अदरख प्रत्येक १६ तोले लेवे, घी ३२ तोले, तिलों का तेल ३२ तोले, कांजी ४० तोले, सपेद सरसों १६ तोले, राई १६ तोले और हींग तथा सब निमक एक तोले डाले सब को एकत्र कर किसी चिकने बासन में भरके धान की राशि में गाड देवे जब १२ दिन बीत जावे तब निकाल अग्निबलविचार के खाने को देय और इन के ऊपर मद्य अथवा कांजी अथवा मधुर रस पीवे जब यह पच जावे तब दही और पिठी के पदार्थों को त्यागके जो इच्छा होवे सो खाय इस

प्रकार एक महिने पर्यंत सेवन करने से संपूर्ण वादी के रोग नष्ट होवें, तथा अस्सी प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग और वीस प्रकार के कफरोग, वीस प्रकार की प्रमेह, सूजन, योनिशूल और संपूर्ण वातों को नाश करे तथा छूटी हुई संधी, टूटी हुई हड्डी आदि इन को अच्छा करे बल वर्ण इन को उत्पन्न करे तथा हितकारक है तथा यह धातुओं को बढाता और वृष्य है ॥

भुजंगीगुटिका

एषा कर्षमिता वटी सुघटिता जीर्णे गुडे युक्तितो द्विघ्नं दीप्यतुषं पलद्वयमितं शुंठी तथा तेजनी । भक्ष्यैकानिलरोगिणा घृतयुता पथ्याशिना तत्वतो वातव्रातविनाशिनी सुमतिभिः ख्याता भुजंगी वटी ॥

अर्थ—अजमायन का फूल १६ तोले तथा सोंठ और तेजबल ८ तोले इन का चूर्ण करके उस की पुराने गुड से युक्ति के साथ १० मासे की गोली बनावे, यह वातरोगी को घी के साथ खानी चाहिये और पथ्य से रहे तो यह वादी के समूह को नाश करे, इस को पंडितजन भुजंगीवटी कहते हैं ॥

दूसरा प्रकार

तेजोह्वाप्रस्थमेकं पयसि गजगुणे पाकयुक्त्या विपाच्य व्योषं पथ्या शताह्वा कृमिरिपुमनलं ग्रंथिकं चाजमोदाम् ।उग्रा कुष्ठाश्वगंधौ सुरतरुममृतं पालिकानि प्रदद्यात्सर्वान्वातान्वटीयं घृतमधुसहिता नास्ति भावान्करोति ॥

अर्थ—तेजबल ६४ तोले और दूध ५१२ तोले दोनों को मिलायके पाक के समान खोहा करे. उस में सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, शतावर, वायविडंग, चित्रक, पीपरामूल, अजमोद, वच, कूठ, असगंध, देवदार और घी ये प्रत्येक चार २ तोले डालके उस की गोली बनावे इस को सहत और घी इन के साथ बलाबल विचार के देवे तो सर्व वातव्याधियों का नाश करे ॥

निर्गुंड्यादिवटी

निर्गुंडी दीप्यकं वन्हिर्हरिद्रा विश्वभेषजम् ।
तक्रकांजिकसंपक्वं वातघ्नं वन्हिवर्धनम् ॥

अर्थ—निर्गुंडी, अजमायन, चित्रक, हलदी और सोंठ इन के छाछ और कांजीमें पचाय के सेवन करे तो यह वातनाशक और अग्निवर्द्धक है ॥

कणादिगुटी

कणामूलं कणा दारु विडंगं वह्निसैंधवम् । सपुष्पा ह्यजमोदा च मरीचं समचूर्णकम् ॥ गुडाचितस्य तस्याथ गुटिका एकविंशतिः । भक्षितास्तास्त्रिसप्ताहं मारुतं घ्नंति सर्वतः ॥

अर्थ-पीपरामूल, पीपल, देवदारु, वायविडंग, चित्रक, सेंधानिमक, अजमायन का फूल, अजमोद और मिरच ये समान भाग लेवे, चूर्ण करके गुड मिलाय एकजीव करके २१ गोली कर लेवे, नित्यप्रति एक गोली भक्षण करे तो सर्व वातव्याधि को नाश करे ॥

अमरसुंदरवटी

त्रिकटु त्रिफला चैव ग्रंथिका रेणुकानलम् । मृतलोहं चतुर्जातं पारदं गंधकं विषम् ॥ विडंगा कल्लकं मुस्ता सर्वेभ्यो द्विगुणो गुडः । चणकप्रमाणगुटिका नाम्ना अमरसुंदरी ॥ अपस्मारे सन्निपाते श्वासे कासे गुदामये । अशीतिवातरोगेषु उन्मादेषु विशेषतः ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पीपरामूल, रेणुकबीज, चित्रक, लोहे की भस्म, पत्रज, इलायची, दालचीनी, नागकेशर, पारा, गंधक, सिंगियाविष, वायविडंग, अकरकरा और मोथा सब समानभाग ले और सब से दूना गुड डाले, फिर चने के प्रमाण गोली बना ले यह अमरसुंदरी गुटिका अपस्मार, सन्निपात, श्वास, खांसी, गुदा के रोग, अस्सी प्रकार की वादी और उन्मादरोग इन सब को दूर करे ॥

अजमोदादिवटी

अजमोदा कणा वेल्लं शतपुष्पा सनागरम् । मारिचं सैंधवादेव भागैकं च पृथक् पृथक् ॥ पंचभागा हरीतक्याः शुंठी च दशभागिका । वृद्धदारुर्दशांशः स्यात्षट्त्रिंशद्गुडभागिकाः ॥ गुडपाकैर्वटीं कृत्वा मात्रा कर्षप्रमाणतः । संधिवाते प्रदेयं तदामवाते सुदारुणे॥ उष्णोदकानुपानेन सर्ववातान्नियच्छति । आढ्यवाते हनुस्तंभे शिरोवातापतानके ॥ भ्रूशंखकर्णनासाक्षिजिह्वा-

स्तंभे च दारुणे । कलायखंजतापंगुसर्वांगैकांगमारुते ॥ अर्दिते पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते ॥

अर्थ–अजमायन, पीपल, वायविडंग, सोंफ, नागरमोथा, मिरच और सैंधानिमक ये प्रत्येक एक एक भाग, हरड ५ भाग, सोंठ १० भाग, विधायरो १० भाग और भारंगी ३६ भाग इस प्रकार सब औषधी लेकर चूर्ण करके गुडके पाक में मिलायके गोली बनाय लेवे. इस गोली को गरम जल के साथ सेवन करे तो संधिवात, आमवात, संपूर्णवात, आढ्यवात, हनुस्तंभ, शिरोवात, अपतानक वात तथा भ्रुकुट, कनपटी, कान, नाक, नेत्र और जीभ इन का स्तंभ, कलायखंज, पंगुवात, सर्वांगवात, एकांगवात, अर्दितवात, पादहर्ष और पक्षाघात इन के दूर करने में श्रेष्ठ है ॥

लघुराजमृगांक

घृततीक्ष्णयुतः सुरसास्वरसो लघुराजमृगांक इति प्रथितः ।
अपहंत्यनिलान् सबलान् बहलान्निजभक्तमलानिव चक्रधरः ॥

अर्थ–काली मिरचों का चूर्ण, घी और तुलसी का रस इस को लघुराज मृगांक कहते हैं. यह संपूर्ण वातरोगों को नाश करे जैसे भगवान् अपने भक्त के पातक दूर करे इसी प्रकार यह रोगों को नाश करे ॥

चूर्णाः कषाया गुटिका घृतानि तैलानि भाग्येन वियोजितानाम् ।
विलासिनां वातविनाशनाय विलासिनीनां परिरंभणानि ॥

अर्थ–चूर्ण, क्राथ, गोली, घृत और तेल इन की योजना करने से न बन सके तो यह विलासी पुरुषों के वातव्याधि नाश करने को सुंदररूपवती स्त्रियों का आलिंगन करना ही ठीक है ॥

दूसरा एरंडपाक

निस्तुषं बीजमैरंडं पयस्यष्टगुणे पचेत् । तस्मिन् पयसि संशोष्य तद्बीजं परिपेषयेत् ॥ पश्चाद्घृतेन संयुक्तं संपचेन्मृदुवह्निना । कटुत्रिकं लवंगं च एलात्वक् पत्रकेसरम् ॥ अश्वगंधा शिफा रास्ना षड्ग्रंधा रेणुका वरी । लोहं पुनर्नवा श्यामा उशीरं जातिपत्रकम् ॥ जातीफलमभ्रकं च सूक्ष्मचूर्णं तु कारयेत् । शीतीभूतेवलेह्येयं तस्मिन् खंडसमोदयम् ॥ वातारिपाकनामायं प्रातरुत्थाय भक्षयेत् । अशीतिवातरोगांश्च

चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ उदराणि तथा चाष्टौ स्वयं रोगान्निहंति च । विंशतिं मेहजान् रोगान् षष्टिनाडीव्रणानि च ॥ हंत्यष्टादश कुष्ठानि क्षयरोगांश्च सप्त च । पंचैव पांडुरोगांश्च पंच श्वासान् प्रणाशयेत् ॥ चतुरो ग्रहणीरोगान् दृष्टिरोगं गल-ग्रहम् । अनेकवातरोगांश्च तान् सर्वांश्च विनाशयेत् ॥ शुक्र-पाकमिदं ख्यातं सर्वरोगनिवारकम् ॥

अर्थ–छीले हुए अंडी के बीजों को अठगुने दूध में औटावे. जब दूध का खोहा हो जावे तब उतारके उन बीजों को पीस डाले. फिर इन को घी में डालके मधुरी अग्नि से पचावे और सोंठ, मिरच, पीपल, लौंग, इलायची, दालचीनी, पत्रज, नागकेशर, असगंध, रास्ना, षड्ग्रंधा, रेणुकबीज, सतावर, लोहभस्म, पुनर्नवा, हरड, खस, जावित्री, जायफल, अभ्रक की भस्म इन सब को मिलायके बारीक चूर्ण कर उस पाक में डाल देवे. फिर अग्निपर से उतार ले. जब शीतल हो जावे तब उस खोहे को अलग धर ले और खोहे की बराबर मिश्री की चासनी कर इस में पूर्वोक्त खोहा मिलाय के पाक बनाय लेवे. यह वातारिपाक प्रातःकाल उठके नित्य भक्षण करे तो अस्सी प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग, आठ प्रकार के उदर, बीस प्रकार की प्रमेह, साठ प्रकार के नाडी व्रण, अठारह प्रकार के कुष्ठ, सात प्रकार के क्षयरोग, पांच प्रकार के पांडुरोग और श्वासरोग, चार प्रकार की संग्रहणी, दृष्टिरोग, गलग्रह, अनेक प्रकार के वातरोग इन सब को यह दूर करे. इस को शुक्रपाक कहते हैं ॥

एरंडपाक

वातारिबीजं प्रस्थं तु सुपक्वं निस्तुषीकृतम् । क्षीरद्रोणार्द्धसंयुक्तं भिषग्मंदाग्निना पचेत् ॥ घृतप्रस्थार्द्धयुक् पक्वं खंडप्रस्थद्वयं क्षिपेत् । त्र्यूषणं सचतुर्जातं ग्रंथिकं वह्निचव्यकम् ॥ शत्रा मिशी शठी बिल्वदीप्यौ जीरे निशायुगम् । अश्वगंधा बला पाठा हपुषा वेल्लपुष्करम् ॥ श्वदंष्ट्रारुग्वरा दारुवेल्लयौ वालुकावरी । एतानि पिचुमात्राणि चूर्णितानि विनिक्षिपेत् ॥ वातव्याधिं च शूलं च शोफं वृद्धिं तथोदरम् । आनाहं बस्तिरुग्गुल्ममामवातं कटिग्रहम् ॥ ऊरुग्रहं हनुस्तंभं नाशयेदपि योगतः ॥

अर्थ—६४ तोले अंडी के बीज लेकर छील लेवे फिर उन को ५१२ तोले दूध में डालके मंदाग्नि से पचन करे. फिर इस में ३२ तोले घी डालके भून लेवे और १२८ तोले मिश्री की चासनी करके उस खोहे में मिलाय देवे तथा सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, चित्रक, चव्य, सोंठ, कचूर, बेलगिरी, अजमायन, जीरा, काला जीरा, हलदी, दारुहलदी, असगंध, खिरेटी, पाढ, हौउबेर, वायविडंग, पुहकरमूल, गोखरू, कूठ, त्रिफला, देवदारु, विधायरा और सतावर ये सब एक एक तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उसी पाक में डाल देवे. इस पाक के सेवन करने से वातव्याधि, शूल, सूजन, अंत्रवृद्धि, उदरविकार, अफरा, बस्तिशूल, गोला, आमवात, कमर की पीडा, ऊरुग्रह और हनुस्तंभ इन सब को यह नष्ट करे ॥

रसोनपाक

तेषूग्रगंधनाशाय रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत् । प्रातर्निष्कास्य तत्पिष्ट्वा ततो दुग्धे विपाचयेत्॥निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरं प्रस्थचतुष्टयम् । विपाच्य सांद्रीभूतेस्मिन् सर्पिषः कुडवं क्षिपेत् ॥ रास्ना वटी वृषा छिन्ना शठी विश्वा सुरद्रुमम् । वृद्धदारुकदीप्याग्निशताह्वा सपुनर्नवा ॥ फलत्रयं पिप्पली च कृमिघ्नः कर्षसम्मितम् । विचूर्ण्य शीते मधुनः कुडवं तत्र योजयेत् ॥ सितया भक्षयेन्मात्रामाढ्यवाते हनुग्रहे । आक्षेपकादिभग्ने च कटयूरुस्तंभहृद्ग्रहे ॥ सर्वांगे संधिभंगे च वातजाशीतिरोगिणः । पथ्यो लशुनपाकोयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥

अर्थ—लहसन को छील टुकडे करे उन की गंध दूर करने को रात्रि में छाछ में भिगोय देवे प्रातःकाल निकालके स्वच्छ जल से धोयके पीस डाले. फिर उस को गौ के घी में तल लेवे इस प्रकार भूनी हुई लहसन ६४ तोले होवे तो दूध २५६ तोले में डालके औटावे जब गाढा हो जावे तब १६ तोले घी और रास्ना, शतावर, अडूसा, गिलोय, कचूर, सोंठ, देवदारु, विधायरा, अजमायन, चीते की छाल, शतावर, पुनर्नवा, हरड, बहेडा, आंवला, पीपल और वायविडंग ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस में मिलाय देवे. तथा शीतल होने पर १६ तोले सहत डाले. फिर इस को थोडी मिश्री के संग भक्षण करे तो आढ्यवात, हनुग्रह, आक्षेपक, भग्नवात, कटिवात, ऊरुस्तंभ, हृदयरोग, सर्वांगवात, संधिभंगवात और अस्सी प्रकार की वात इन सब को नष्ट करे वह पथ्यरूप लहसनपाक वर्ण, आयुष्य, और पुष्टि इन को करे है ॥

कुबेरपाक

कुबेरं प्रस्थनीरे च क्षिप्त्वा रात्रौ चतुर्गुणम् । क्षीरे प्रातः पचेत्सम्यग्घृतेन मृदुवह्निना ॥ शीतं कृत्वा सुनिष्पन्नं मध्ये मधुनि योजयेत् । चातुर्जातं त्रिकटुकं जातिपत्रफलं तथा ॥ देवपुष्पं विडंगं च मिशी जीरं घनं बला । निशाद्वयं तथा लोहं शुल्बं वंगं पलार्धकम् ॥ प्रत्येकं चूर्णितं क्षिप्त्वा भक्षयेच्च पलं बुधः । सर्वान्वातमयान्हंति अग्निमांद्यं बलक्षयम् ॥ प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रं च अश्मरीगुल्मपांडुनुत् । पीनसं ग्रहणीदोषमतीसारमरोचकम् ॥ मधुपक्कः कुबेरोयं भक्षयेन्नितरां बुधः । कामवृद्धिकरस्तस्य धातुवृद्धिश्च जायते ॥ कांतिपुष्टिकरो बल्यः कुबेराख्यो रसोत्तमः ॥

अर्थ–लताकरंज को रात्रि के समय जल में भिगोय देवे. प्रातःकाल उन को फोड के भीतर की मींगी निकाल लेवे. उन से चौगुना दूध लेके और घी डालके धीरे २ मंद २ अग्नि से पचावे. जब शीतल हो जावे तब उस में शहत, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपर, जावित्री, जायफल, लौंग, वायविडंग, सौंफ, जीरा, नागरमोथा, खिरेटी, हलदी, दारुहलदी, लोहे की भस्म, तामे की भस्म और वंगभस्म ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे सब को उसी पाक में डालके पाक तयार कर लेवे इस में से चार तोले नित्य भक्षण करे तो सम्पूर्ण वादी के रोग, मंदाग्नि, बलक्षय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, गोला, पांडुरोग, पीनस, संग्रहणी, अतिसार और अरुचि इन को नाश करे यह मधुपक्क कुबेरपाक भक्षण करने से कामवृद्धि, धातुवृद्धि, कांति, पुष्टि और बल इन को करे है ॥

लशुनपाक

निस्तुषं लशुनं प्रस्थं क्षीरकुंभे पचेत्सुधीः । घृतं पलचतुष्कं च पचेच्च मृदुवह्निना ॥ सुनिष्पन्नो मधुनिभो खंडं प्रस्थद्वयं क्षिपेत् । त्र्यूषणं च चतुर्जातं ग्रंथिकं चव्यचित्रकम् ॥ विडंगं रजनीयुग्मं हपुषा वृद्धदारुकम् । पौष्करं दीप्यपुष्पं च सुरदारु पुनर्नवा ॥ श्वदंष्ट्रा निंबरास्ना च शतपुष्पा वरी सठी ।

अश्वगंधात्मगुप्ता च द्रव्याणि पिचुमात्रया ॥ शुक्रे यथाबलं सेव्यं रसोनाख्यं रसायनम् । सर्वान्वातामयान् शूलमपस्मार-मुरःक्षतम् ॥ गुल्मोदरवमिप्लीहवर्ध्मवृद्धिकृमीन् जयेत् । विबं-धानाहशोफांश्च वन्हिमांद्यं बलक्षयम् ॥ हिक्कां श्वासं च कासांश्च अपतंत्रकमेव च । धनुर्वातं तथा यामं पक्षघातापतानकम् ॥ अर्दिताक्षेपकं कुब्जं हनुग्रहशिरोग्रहम् । विश्वाची गृध्रसी खल्ली पंगुवातं च संधिजम् ॥ बाधिर्यं सर्वशूलं च नाशयेदतिवेगतः । वातव्याधिगजेंद्रस्य केसरीव कृतः शुभः ॥ कफव्याधिप्रश-मनो बलपुष्टिकरः स्मृतः ॥

अर्थ—उत्तम प्रकार से छीली और कतरी हुई लहसन ६४ तोले को १०२४ तोले दूध में १६ तोले घी डालके मंद २अग्निपर पचावे जब इस का उत्तम पाक हो जावे अर्थात् लाल रंग हो जावे तथा १२८ तोले मिश्री मिलावे और सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक,वायविडंग, हलदी, दारुहलदी, हाउबेर, विधायरा, पुहकरमूल, अजमायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा, गोखरू, नीम, रास्ना, सौंफ, शतावर, कचूर, असगंध, कौंछ के बीज ये प्रत्येक तोले २ले चूर्ण करके उस में डाल पाक सिद्ध करे. यह रसोनाख्य पाक अग्नि और बल को देखकर सेवन करे तौ संपूर्ण वातरोग, शूल, अपस्मार, उरक्षत, गोला, उदर, वमन, प्लीह, बद, अंडवृद्धि, कृमिरोग, विबंध, अफरा, सूजन, मंदाग्नि, बलक्षय, हिचकी, श्वास, खांसी, अपतंत्रकवात, धनुर्वात, अन्तरायाम, पक्षवात, अपतानक वायु, अर्दित वायु, आक्षेपक वायु, कुब्जवात, हनुग्रह, शिरोग्रह, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीवात, पंगु-बात, संधिवात, बधिरत्व और संपूर्ण शूल इन को बहुत जल्दी नाश करे यह लहसन पाक वातव्याधिरूप हाथी को सिंह के समान नाश करे है और कफ व्याधि को शांत करे तथा बल और पुष्टि इन को करे है ॥

लेप

प्रच्छित्त्वा च क्षुरेणांगं केवलानिलपीडितः । तत्र प्रदेहं दद्याच्च पिष्ट्वा गुंजाफलैः कृतम् ॥ तेनाववाहुजा पीडा विश्वाची गृ-ध्रसी तथा । अन्यापि वातजाः पीडाः प्रशमं यांति वेगतः ॥

अर्थ–जिस जगे वादि का उपद्रव होता होय उस जगेपर छुरे से पछना लगायके उसपर घूंघचीन को पीसके उस का लेप करे तो अपबाहुक, विश्वाची, गृध्रसी और अन्य वातसंबंधी रोग तत्काल शांत होवे ॥

मर्दन व नस्य

यवानीचूर्णसंमिश्रः शृंगवेररसस्तनौ ।
मर्दनान्नस्यतो हंति कुपितं मारुतं द्रुतम् ॥

अर्थ–अदरख के रस में अजमायन का चूर्ण मिलायके देह में मालिस करे और नास देवे तो कुपितवात को तत्काल नष्ट करे ॥

स्वेदविधि

कार्पासास्थिकुलत्थकातिलयवैश्चैरंडमाषातसीवर्षाभूशणबीजकांजिकयुतैरेकीकृतैर्वा पृथक् । स्वेदः स्यादतिकूर्परोदरहनुस्फिक्पाणिपादांगुलीगुल्फस्तंभकटीरुजो विजयते सामाः समीरोद्भवाः॥

अर्थ–विनोले, कुलथी, तिल, जो, अंड, उडद, अलसी, पुनर्नवा और सन के बीज इन को कांजी में पीसके अथवा दूसरे योग से पसीने निकाले तो कूर्पर (पहुचे के ऊपर का भाग), पेट, हनु, नितंब, हाथ, पैर इन की उंगली और गुल्फ का स्तंभ, कटिशूल और आमाश्रित वायु इन को नाश करे ॥

पेंड बंधाना

रास्ना शताह्वा सुरदारु कुष्ठं माषार्द्रकं तैलवचाकुलत्थाः ।
एतैः प्रदेहोनिलरोगिणां हितः स्नेहैश्चतुर्भिर्दशमूलयुक्तैः ॥

अर्थ–रास्ना, शतावर, देवदारु, कूठ, उडद, अदरख, तैल, वच, कुलथी और दशमूल इन को पीस गरम करके गाढा लेप करे तो वातरोगी को हितकारी होय ॥

स्वेद व लेप

उष्णोष्णमत्स्यादिकवेसवारैः स्वेदस्तथा वातविनाशनः स्यात् ।
फाणिज्जकोत्थेन रसेन वातं ग्रस्तं प्रदेशं परिलेपयेत्तु ॥

अर्थ–गरम २ मछली और वेसवार इन को सेककर मनुष्य की देह से पसीने निकाले तो वादी को नाश करे. अथवा फणिज्जक के रस से वातयुक्त स्थानपर लेप करे तो वादी जाय ॥

लेप व स्वेद

सारं नवं सैंधवकृष्णबोलं विषं समुद्रस्य फलानि कुष्ठम् । जेपालमज्जा त्वहिजो बला च जंबीरनीरेण विमर्दनीयम् ॥ संस्वेद्य तल्लेपनमात्रकेण अशीतिवातान् सहजान्निहंति ॥

अर्थ—नौसादर, सैंधा निमक, काला बोल, विष, समुद्रफल, कूठ, जमालगोटे की मींगी, अफीम और खिरेटी की जड इन के चूर्ण को जंभीरी नीबू के रस में खरल गरम करके उस का लेप करे तो अस्सी प्रकार की वादी को सहज में ही नाश करे ॥

शतपुष्पादिलेप

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयो गदरामठसिंधुभवं हराति ।
अपि लेपनतोऽस्थिगतं मरुतं कटिसंधिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

अर्थ—सोंफ, देवदारु, कूठ और सैंधा निमक इन के चूर्ण को आक के दूध में भिगोके लेप करे तो अस्थिगत वात, कटिवात और संधिवात इन को तीन दिन में नाश करे ॥

लेप

सुरतरुरामठशुंठीशतपुष्पासैंधववचार्कपयसा ।
अस्थिगतानपि वातान् निहंति चैकेन लेपेन ॥

अर्थ—देवदारु, हींग, सोंठ, सोंफ, सैंधा निमक और वच इन के चूर्ण को आंक के दूध से पीसके लेप करे तो अस्थिगत वादी को नाश करे ॥

वातहा पोटली

पुन्नागैरंडनिंबैर्बकुलधवनटं नारिकेलैः करंजैः कार्पासैः शिग्रुडोलाफलसुनिषणकैः सर्षपाकोलबीजैः । रास्नाकुष्ठैः कुलित्थैस्तिललशुनवचाहिंगुसिद्धार्थविश्वैः सर्वैः स्नेहैः कृतं तत्सकलपटुयुतैः पोटली वातभंजी ॥

अर्थ—पुंनाग, अंड की जड, नीम की छाल, मौलसिरी, धौ और अशोक इन की छाल, नारियल, कंजा, विनोले, सहजने की छाल, दोलाफल, चौपतिया, सरसो, अंकोलफल, रास्ना, कूठ, कुलथी, तिल, लहसन, वच, हींग, सपेद सरसो और सोंठ इन सब का चूर्ण कर इन में निमक डालके घी अथवा तेल में मिलायके उस की पोटली बांधके देवे तो यह वादी को नष्ट करे ॥

महाशाल्वणयोग

कुलित्थमाषगोधूमैरतसीतिलसर्षपैः । शतपुष्पादेवदारुशेफालीस्थूलजीरकैः ॥ एरंडबिल्वमूलैश्च रास्नामूलैश्च शिग्रुभिः । मिशीकृष्णाकुठेरैस्तु लवणैरम्लसंयुतैः ॥ प्रसारण्यश्वगंधाभ्यां बलाभिर्दशमूलकैः । गुडूचीवानरीबीजैर्यथालाभं समाहृतैः ॥ क्षुण्णैः स्विन्नैश्च वस्त्रेण बद्धैः संस्वेदयेन्नरम् । महाशाल्वणसंज्ञोयं योगः सर्वानिलार्तिजित् ॥

अर्थ—कुलथी, उडद, गेहूं, अलसी, तिल, सरसों, सोंफ, देवदारु, निर्गुंडी, कलौंजी, अंड की जड, बेल की जड, रास्ना की जड, सहजना, जटामांसी, पीपल, कुठेर, सैंधानिमक, समुद्रलवण, बिडनिमक, संचरनिमक, अमलवेत, प्रसारणी, असगंध, खिरेटी, कगही, गगेरन, दशमूल, गिलोय और कौंच के बीज इन में से जो जो वस्तु मिले उन को लेकर कूटकर जल में औटावे. फिर इन की पोटली बांधके गरम गरम सेके इस को **महाशाल्वण योग** कहते हैं. यह संपूर्ण वातपीडानाशक है ॥

कढी

प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं चव्यदीपकम् । वरालं चंपकं कुष्ठं मंजिष्ठामिशिसर्षपाः ॥ निर्गुंडी दीप्यकं वह्निर्हरिद्रा विश्वभेषजम् । तक्रकांजिकसंपक्वं वातघ्नं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ—फूलप्रियंगू, पीपरामूल, चंदन, चव्य, चित्रक, लौंग, चंपा, कूठ, मजीठ, सोंफ, सरसों, निर्गुंडी, अजमायन, नीबू, हलदी, सोंठ. छांछ और कांजी इन में ऊपर लिखे पदार्थों को डालके औटावे तो यह कढी वातनाशक तथा वन्हिदीपक है ॥

स्वेदलेपविधि

एरंडार्ककरंजमोरटबलातर्कारिसोमस्नुहीनिर्गुंडीतलपोटशिग्रुलवणास्फोताश्वगंधादिजैः । पत्रैः कांजिकमूत्रचुक्रसहितैः स्विन्नैर्घटस्थैः कृतः स्वेदः क्रुद्धसमीरणार्तवपुषां सद्यः सुखोत्पादकः ॥

अर्थ—अंड, आक, कंजा, मूर्वा, खिरेटी, अरनी, लालचंदन, थूहर, निर्गुंडी, ताड, नरसल, सहजना, चूका, सपेद अपराजिता और असगंध इन औषधों के पत्ते ले कांजी, गोमूत्र, चूका ये एकत्र करके पीस उन पत्तोंपर लेप करे उन को एक

गगरे में भरके चूल्हेपर रखके अग्नि देवे जब गरम हो जावे तब उन पत्तों से सेक करे तो वात कोप शांति होकर रोगी को तत्काल सुख होय ॥

लेप

निर्गुंड्या चोपनाहं च सकरंजैः सपित्तलैः ।
भेषजैः सेकलेपादि अभिषेकादिकं चरेत् ॥

अर्थ-निर्गुंडी का लेप करे अथवा करंज और पित्तकर्त्ता औषध इन से सेचन, लेप और स्नान इत्यादिक उपचार करे ॥

दूसरा रसोनकल्क वातरोग के ऊपर

पक्वकंदरसोनस्य लिका निस्तुषिका कृता।पाटयित्वा च मध्यस्थं दूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ तदुग्रगंधनाशाय रात्रौ तक्रे विनिःक्षिपेत् । अपनीय च तन्मध्याच्छिलायां पेषयेत्ततः ॥ तन्मध्ये पंचमांशेन चूर्णमेषां विनिःक्षिपेत् । सौवर्चलं यवानी च भर्जितं हिंगु सैंधवम् ॥ कटुत्रिकं जीरकं च समभागानि चूर्णयेत् । एकीकृत्य ततः सर्वं कल्कं कर्षप्रमाणतः ॥ खादेदग्निबलापेक्षी ऋतुदोषाद्यपेक्षया । अनुपानं ततः कुर्यादेरंडसृतमन्वहम् ॥ सर्वांगैकांगजं वातमर्दितं चापतंत्रकम् । अपस्मारगदोन्मादमूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडां कृमीन् जयेत् । अजीर्णमातपं रोषमतिनीरं पयो गुडम् ॥ रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतान्निरंतरम् । मद्यं मांसं तथाम्लं च रसं सेवेत नित्यशः ॥

अर्थ-उत्तम पकी हुई लहसन के ऊपर का छिलका दूर कर और उस को चीरके भीतर के अंकुरों को निकाल डाले फिर उस लहसन की वास निकालने को रात्रि को छाछ में भिगो देवे. प्रातःकाल उस को निकालके सिलपर बारीक पीस डाले इस प्रकार कल्क करके फिर संचर निमक, अजमोद, भूनी हींग, सैंधा निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा इन आठ औषधों का चूर्ण उस लहसन के कल्क का पांचवां हिस्सा लेकर उस कल्क में मिलावे. सब को एकत्र करके फिर अंड की जड के काढे में इस कल्क को एक तोले मिलायके पीवे. तथा अपनी शक्ति और ऋतु कौनसी है यह देखके जैसा अपने को हित होवे उसी प्रकार पीवे तो सर्वांगवायु तथा एकांगवायु,

मुख का टेढा होना, ऐसी अर्दितवायु और धनुर्वायु, अपस्मार और उन्मादरोग तथा ऊरुस्तंभवायु और गृध्रसी वायु तथा उर, पीठ, कमर और कूख इन का शूल तथा कृमिरोग ये दूर हों. लहसन खानेवाले को अजीर्ण, धूप, क्रोध, अत्यन्त जल का पीना, दूध, गुड ये त्याग देने चाहिये । और मद्य, मांस तथा खट्टे पदार्थ सदा सेवन करने चाहिये ॥

रसोनकल्क वायु वा विषमज्वर ऊपर

शुद्धकल्को रसोनस्य तिलतैलेन मिश्रितः ।
वातरोगान् जयेत्तीव्रान् विषमज्वरनाशनः ॥

अर्थ—लहसन का कल्क करके उस में तिल का तेल डालके पीवे तो दारुण वादी के रोग और विषमज्वर ये दूर होवें ॥

चौथा लहसनकल्क

पिष्ट्वा तु सूक्ष्मं लशुनं घृतेन विलिह्य हन्यात्पवनोत्थरोगान् ।
तथेंद्रबीजाग्निमहौषधानां चूर्णं हरेद्वातभवान् विकारान् ॥

अर्थ—लहसन को पीसके घी के साथ खाय अथवा इन्द्रजो, चित्रक और सोंठ इन का चूर्ण घी के साथ खाय तो संपूर्ण वात के विकारों को नाश करे ॥

स्वच्छंदभैरवरस

शुद्धसूतं मृतं लोहं ताप्यं गंधकतालकम् । पथ्याग्निमंथनिर्गुंडीत्र्यूषणं टंकणं विषम् ॥ तुल्यांशं मर्दयेत्खल्वे दिनं निर्गुंडिकाद्रवैः । मुंडीद्रावैर्दिनैकं तु द्विगुंजं वटकीकृतम् ॥ भक्षयेद्वातरोगार्तो नाम्ना स्वच्छंदभैरवः । रास्नामृतादेवदारुशुंठीवातारिजं शृतम् ॥ सगुग्गुलुं पिबेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥

अर्थ—शुद्ध पारा, लोहभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, गंधक, हरताल, छोटी हरड, अंड की जड, निर्गुंडी, सोंठ, मिरच, पीपल, सुहागा, सिंगिया विष ये सब समान भाग लेवे सब को १ दिन निर्गुंडी के रस में खरल करे. फिर १ दिन गोरखमुंडी के रस में खरल करके दो रत्ती की गोली बनावे. यह स्वच्छन्दभैरवरस है. यह भैरवरस रास्ना, गिलोय, देवदारु, सोंठ और अंड की जड इन पांच औषधों के काढे में गूगल डालके पीवे तो संपूर्ण वादी के रोग दूर हों ॥

समीरपन्नग

अभ्रगंधविषव्योषरसटंकान् समांशकान् । भावयेत्सप्तधा भृंगर-

सेन स्यात्समीरहा ॥ आर्द्रद्रवेण वल्लो वा खंडव्योषेण योजितः ।
महावातान् जयत्याशु नासाध्मातं सुसंज्ञकृत् ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म, गंधक, सिंगियाविष, सोंठ, मिरच, पीपर, पारा और सुहागा ये सब समान भाग लेकर खरल में डालके भांगरे के रस की सात भावना देवे. तो यह वातनाशक रस सिद्ध होय इस को अदरख के रस से अथवा मिश्री और त्रिकुटा के चूर्ण से एक वल्ल खाय तो घोर वादी को एक क्षणमात्र में जीत लेवे. नास देने से संज्ञाकारक है ॥

वातविध्वंसन

रसं गंधकं नागवंगं च लोहं तथा ताम्रजं व्योम निश्चंद्रिकं च ।
कणा टंकणं त्र्यूषणं नागरं वै पृथक् भागमेकं विमर्द्यैकयामम् ॥
ततो वत्सनाभं चतुःसार्धभागं दृढं मर्दयेद्भावना व्योषजात्रिः ।
वराचित्रकैर्मार्कवैः कुष्ठजात्रिस्त्रिभिर्भावयेन्निर्गुंडीभानुदुग्धैः ॥
महाधात्रिजैश्चार्द्रकैर्निंबुनीरैः समं भावयेद्वातविध्वंसनो यत् । समीरे च शूले महाश्लेष्मरोगे ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढ्ये ॥
स्त्रियाः सूतिकावातरोगेषु दद्यान्निषेवेत गुंजाद्वयं सूतमेनम् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, शीशे की भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, तामे की भस्म, निश्चंद्र अभ्रक की भस्म, पीपल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल और सोंठ ये प्रत्येक एक एक भाग ले एक प्रहर खरल करके इस में सिंगियाविष ४ ॥ भाग मिलायके फिर अधिक खरल करे. पश्चात् इस में त्रिकुटा, त्रिफला, चित्रक और भांगरा तथा कूठ इन प्रत्येक के काढे की तीन २ भावना देवे और निर्गुंडी के रस की तीन, आक के दूध की तीन, बडे आंवले, अदरख और नीबू इन के रस की पृथक् २ भावना देवे तो यह **वातविध्वंसरस** बने यह दो रत्ती के प्रमाण वादी, शूल, कफरोग, संग्रहणी, संनिपात, मौढ्यवात और प्रसूतरोग इनपर देवे ॥

वातराक्षस

मृतं सूतं तथा गंधं कांतं चाभ्रकमेव च। ताम्रभस्म कृतं सम्यङ् मर्दयित्वा समांशकम् ॥ पुनर्नवा गुडूच्यग्निसुरसा त्र्यूषणं तथा।
एतेषां स्वरसेनैव भावयेत्रिदिनं पृथक् ॥ दत्त्वा लघुपुटं सम्यक् स्वांगशीतं समुद्धरेत् । वातराक्षसनामायं वातरोगे प्रयोजयेत्॥

तत्तद्रोगानुपानेन द्विगुंजामात्रसेवनात् । ऊरुस्तंभं वातरक्तं गात्रभंगं तथैव च ॥ आमवातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च । पक्षाघातं कंपवातं सर्वसंधिगतं तथा ॥ सुप्तवातं वातशूलमुन्मादं च विनाशयेत् । तत्तद्रोगानुपानेन वाताशीतिविनाशनः ॥

अर्थ–पारे की भस्म, गंधक, कांतभस्म, अभ्रकभस्म और ताम्रभस्म ये समान भाग लेकर एकत्र कर खरल करे फिर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकुटा इन के स्वरस में तीन दिन भावना पृथक् २ देवे फिर लघुपुट देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल लेय. इसे **वातराक्षस रस** कहते हैं इस को वातरोगपर देवे. पृथक् रोग के अनुपान के साथ दो रत्ती देवे तो ऊरुस्तंभ, वातरक्त, गात्रभंग, आमवात, धनुर्वात, वेदनावात, पक्षवात, कंपवात, सर्वसंधिगत वात, सुप्तवात, वातशूल और उन्माद इन को नाश करे अलग २ अनुपानों के साथ देवे तो अस्सी प्रकार के वातरोगों को दूर करे ॥

वातारिरस

रसो गंधो वराबह्निगुग्गुलुः क्रमवर्धितः । तत्रैकभागः सूतः स्याद्गंधको द्विगुणस्ततः ॥ त्रिभागा त्रिफला योज्या चतुर्भागस्तु चित्रकः । गुग्गुलुः पंचभागः स्याद्रुबुतैलेन मर्दितः ॥ क्षिप्त्वा तत्रोदितं चूर्णं तेन तैलेन मर्दयेत् । गुटिकां कर्षमात्रां तु भक्षयेत्प्रातरेव हि॥नागरैरंडमूलानां कषायं प्रपिबेदनु । अभ्यज्यैरंडतैलेन स्वेदयेत्पृष्ठदेशकम् ॥ विरेकपरिणामेन स्निग्धमुष्णं च भोजयेत् । वातारिसंज्ञको ह्येष रसो निर्वातसेवितः ॥ मासेन मरुतो रोगान्हरेत्सुरतवर्जितः ॥

अर्थ–पारा १, गंधक २, त्रिफला ३, चित्रक ४, गूगल ५ इस प्रकार भाग लेकर चूर्ण करे फिर इस को अंडी के तेल में खरल कर एक २ तोले की गोली बनावे. एक गोली नित्य प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपर से सोंठ और अंड की जड का काढा पीवे. तथा पीठपर अंडी के तैल को लगायके सेक देवे. ऐसा करने से रोगी को दस्त होते हैं जब दस्त हो चुके तब इस को स्निग्ध और गरम भोजन करावे. यह **वातारिसंज्ञकरस** सेवन करनेवाला हवा न खाय, मैथुन न करे तो एक महिनेभर में संपूर्ण वातरोग हरण करे ॥

समीरगजकेसरी

नवाहिफेनं कुचिलं नवानि मरिचानि च । समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥ देयात्समीरे चैतानि पुनस्तांबूलचर्वणम् । कुब्जे च खंजवाते च सर्वजे गृध्रसीग्रहे ॥ अवबाहौ प्रयोक्तव्यः शोफे कंपे प्रतानके । विषूच्यामरुचौ देयमपस्मारे विशेषतः ॥

अर्थ–नई अफीम, कुचला के बीज, नवीन काली मिरच इन को समान भाग लेकर चूर्ण करे फिर एक २ रत्ती की गोली बनाय लेवे एक गोली रोगी को देय और इस को खायके ऊपर से बीडी खाय तो कुब्जवात, खंजवात, सर्वजवात, गृध्रसी, अवबाहुक, सूजन, कंप, प्रतानकवायु, विषूचिका, अरुचि और अपस्मार इन को नाश करे ॥

मृतसंजीवनीरस

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो तदर्धं विषसंयुतम् । टंकणं दंतिबीजं च आर्द्रकस्य रसेन वै ॥ एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे मर्द्यं यामद्वयं भिषक् । भानुदुग्धैर्महोदर्या द्विगुंजं भक्षयेत्सदा ॥ वातव्याधिमुरुस्तंभमामवातं विशेषतः । ग्रहण्यर्शोविकारेषु ज्वरमष्टविधं तथा ॥ निहंति तत्क्षणादेव तमः सूर्योदयो यथा । मृतसंजीवनो नाम प्रख्यातो रससागरः ॥

अर्थ–हिंगुल ३ भाग, सिंगिया विष २ भाग, सुहागा और जमालगोटा एक एक भाग लेवे. इस प्रकार सब को एकत्र करके उस को अदरख के रस से दो प्रहर खरल करे. फिर आक का दूध और सतावर के रस की उस को भावना देवे. यह रस दो रत्ती के प्रमाण देने से वातरोग, ऊरुस्तंभ, आमवात, संग्रहणी, बवासीर और आठ प्रकार के ज्वर इन को नाश करे. इस को मृतसंजीवन रस कहते हैं यह रससागरग्रंथ में लिखा है ॥

वातारिरस

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लोहं च माक्षिकम् । तालं नीलांजनं तुत्थमहिफेनं समांशकम् ॥ पंचानां लवणानां च भागमेकं विमर्दयेत् । वज्रक्षीरैर्दिनैकं तु रुध्वा तं भूधरे पचेत् ॥ माषै-

कमार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वातनाशनम्। पिप्पलीमूलजं क्राथं सकृष्णमनुपानकम् ॥ सर्ववातविकारांस्तु निहन्यात्क्षेपकादिकान् । रसः सर्वत्र विख्यातो नाम्ना वातारि च स्मृतः ॥

अर्थ–पारा, सुवर्ण, हीरा, तामा, लोहा, सुवर्णमाक्षिक, हरताल इन की भस्म, सुरमा, लीलाथोथा और अफीम ये समान भाग लेवे; और पांचों निमक मिलाकर एक भाग लेवे. इस प्रकार सब को एकत्र कर थूहर के दूध में एक दिन खरल करे, फिर संपुट में रख कपडमिट्टी करके भूधरयंत्र में रखके फूंक देवे यह वातारिरस १ मासे अद्रख के रस से देवे और पीपरामूल के काढे में पीपर का चूर्ण डालके ऊपर से पीवे, तो संपूर्ण वात के विकार, आक्षेपकादिकों को नाश करे यह **वातारिरस** सर्वत्र प्रसिद्ध है ॥

वातगजांकुश

मृतं सूतं मृतं लोहं गंधं तालं च माक्षिकम् । पथ्या शृंगी विषं त्र्यूषमग्निमंथं च टंकणम् ॥ तुल्यं खल्वे दिनं मर्द्यं मुंडीनिर्गुंडिजैर्द्रवैः। द्विगुंजां वटिकां खादेत्सर्ववातप्रशांतये ॥ साध्यासाध्यं निहंत्याशु रसो वातगजांकुशः ॥

अर्थ–पारे की भस्म, लोहभस्म, गंधक, हरताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, हरड, कांकडासिंगी, विष, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, सुहागा ये सब समान भाग ले चूर्ण करे फिर गोरखमुंडी और निर्गुंडी इन के रस में एक २ दिन खरल कर दो दो रत्ती की गोली बनावे. इन को खाय तो सर्ववादी के रोग शांति होवे. यह **वातगजांकुशरस** साध्यासाध्यरोगों को दूर करे ॥

व्याधिगजकेसरी

पारदं गंधकं तालं विषं त्र्यूषणकं समम् । त्रिफलाटंकणक्षारं प्रत्येकं शाणमात्रकम् ॥ दंतिबीजं च टंकैकं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्। भृंगराजरसेनैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ काकमाचीरसेनैव निर्गुंडीरसकं तथा। मरिचाभा वटी कार्या दोषमापेक्ष्य दापयेत् ॥ क्षीरेण सह दातव्या चाष्टज्वरनिवृत्तये। अशीतिर्वातजान्हंति निर्गुंडीवस्तुकेन वा ॥ गुडेन सह दातव्या चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् । अनुपानेन संयुक्तस्तत्तद्रोगहरः स्मृतः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, हरताल, सिंगियाविष, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, सुहागा ये प्रत्येक आधे २ तोले और जमालगोटा १ तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करके उस को भांगरा, काकमाची (मकोय), निर्गुंडी इन के रस में सात २ दिन खरल करे. फिर मिरच के बराबर गोली बनावे और दोषों को विचारके देवे जैसे आठ प्रकार ज्वरों में दूध के साथ, अस्सी प्रकार की वायुपर निर्गुंडी और नागरमोथा इन के काढे से, चालीस प्रकार के पित्तव्याधिपर गुड के साथ और सर्वव्याधिपर योग्य अनुपान के साथ देने से उसी २ व्याधि का नाश करे॥

सूर्यप्रभा गुटी

चित्रकं त्रिफला निंबं पटोलं मधुयष्टिका। वरांगं केसरं चैव यवानी चाम्लवेतसम् ॥ भूनिंबकं च दार्व्येला मुस्ता पर्पटकं तथा। तुत्थकं कटुका भार्ङ्गी चव्यपद्मकदीप्यकैः ॥ पिप्पली मरिचं दंती शठी शुंठी सपुष्करम्। विडंगं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ पत्रकं कुटजं रास्ना दुरालंभामृता त्रिवृत्। लता-रुष्करतालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ धान्यकं चाजमोदा च कारवी धातुमाक्षिकम्। जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगंधा सदा-डिमम् ॥ कंकोलकमुशीरं च द्विक्षारं मरिचं तथा । एतानि पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः। प्रस्थमेकं सितायाश्च घृतस्य कुडवं तथा ॥ गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य च । सर्वमेकत्र सं-मिश्र्य स्निग्धभांडे निधापयेत् ॥ वातव्याधिमुरुस्तंभमर्दितं गृध्रसीं तथा । विद्रधिं श्लीपदं गुल्मं पांडुरोगं हलीमकम् ॥ कासं पंचविधं घोरं मूत्रकृच्छ्रं गलग्रहम् । आनाहमश्मरीव-र्ध्मग्रहणीमवबाहुकम् ॥ अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सभगंदरम्। हृद्रोगं शूलमुत्कंपविषमज्वरनाशनम् ॥ उरःक्षते च ये दोषा मुखरोगे च दारुणे। प्राशयेद्गुटिकां चापि चूर्णं पाणितलोन्मि-तम् ॥ विविधान्नानि भुंजीत यथेष्टं च यथासुखम् । गुटिका भास्करी नाम्ना सृष्टा देवेन शंभुना ॥ प्रमेहं रक्तपित्तं च पांडु-

रोगं सकामलम्। अग्निसंदीपनं हृद्यं दीर्घायुःपुष्टिदो भवेत्॥ ये वातप्रभवा रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः। कफरोगाश्च ये केचित् द्वंद्वजाः सान्निपातिकाः॥ ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण तमो यथा। रोगविद्राविणी कार्या गुटिका सूर्यवत्प्रभा॥

अर्थ–चित्रक, हरड, बहेडा, आवला, नीम की छाल, पटोलपत्र, मुलहटी, दालचीनी, नागकेशर, अजमायन, अमलवेत, चिरायता, दारुहलदी, इलायची, नागरमोथा, पित्तपापडा, नीला थोथा, कुटकी, भारंगी, चव्य, पद्माख, खुरासानी अजमायन, पीपल, मिरच, दंती, सोंठ, पुहकरमूल, वायविडंग, पीपरामूल, जीरा, देवदारु, पत्रज, कूडा की छाल, रास्ना, धमासा, गिलोय, निसोथ, कौंच के बीज, तालीसपत्र, चूका, सेंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक, धनिया, अजमोद, सोंफ, सुवर्णमाक्षिक, जायफल, वंशलोचन, असगंध, अनार की छाल, कंकोल, खस, जवाखार, सज्जीखार और काली मिरच ये प्रत्येक चार २ और शिलाजीत ३२ तोले, गूगल शुद्ध ८ तोले, लोहे की भस्म ३२ तोले, सुवर्णमाक्षिक भस्म ८ तोले इन सब का एकत्र चूर्ण कर इस में मिश्री ६४ तोले और घी १६ तोले डाले सब को एकत्र मिलाय घी के चिकने बासन में भरके रख देवे. इस में से १ तोले अथवा बलाबल विचारके न्यूनाधिक मात्रा देवे तो वातव्याधि, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, विद्रधि, श्लीपद, गोला, पांडुरोग, हलीमक, पांच प्रकार की खांसी, मूत्रकृच्छ्र, गलग्रह, अफरा, पथरी, बद का रोग, संग्रहणी, अवबाहुक, अरुचि, पसवाडे का शूल, उदर, भगंदर, हृदयरोग, शूल, कंप, विषमज्वर, उरक्षत, मुख के रोग, प्रमेह, रक्तपित्त, पांडुरोग, कामला, वादी के रोग, पित्तजन्य रोग, कफ के रोग, द्वंद्वज, सन्निपातजन्य रोग इत्यादिक रोग इस सूर्यप्रभागुटिका के प्रभाव से नष्ट होंय. रोगों को भगानेवाली इस का प्रभाव सूर्य के समान है. एक तोले की गोली बनावे अथवा एक तोले इस के चूर्ण को ही भक्षण करे इस के ऊपर अनेक प्रकार के यथेष्ट अन्न भोजन करने चाहिये इस को श्रीशिव ने निर्माण करी है॥

लघुवातविध्वंसमात्रा

पारदष्टंकणो गंधपाषाणभिद्वत्सनागो वराटस्तथा तालकश्च। त्र्यूषणं हेमनीरेण तन्मर्दयेद्रक्तिकाभा वटी वातविध्वंसकः॥ सन्निपातके मारुते कफे शीतमांद्यके श्वाससंभवे। संग्रहाभिधे शूलजे गदे काससंसृतौ योजयेत्सदा॥

अर्थ-पारा, सुहागा, गंधक, पाषाणभेद, वत्सनागविष, कौडी की भस्म, हरताल, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब का चूर्ण करके धतूरे के रस से खरल करे और एक

२ रत्ती की गोली बनावे इस को **वातविध्वंसनी** कहते हैं. यह सन्निपात, कफ, वायु, शीत, मंदाग्नि, श्वास, संग्रहणी, शूल और खांसी इनपर देनी चाहिये ॥

वह्निकुमार

टंकणः पारदो गंधशंखौ कपर्दः समो वत्सनाभस्त्रिभागस्तथा । वह्निजं अष्टभागं वह्निपूर्वः कुमारः स्मृतो भृंगनीरेण संमर्दितः ॥ वातरोगेषु सर्वेषु श्वसने वह्निमांद्यके । कफामये प्लीहकासे शूले त्वग्निकुमारकः ॥

अर्थ–सुहागे का चूर्ण, पारा, गंधक, शंखभस्म और कौडी की भस्म ये समान लेवे तथा सिंगियाविष ३ भाग और काली मिरच ८ भाग सब को एक करके भांगरे के रस में खरल करे इस को **वन्हिकुमाररस** कहते हैं. यह संपूर्ण वातरोग, श्वास, मंदाग्नि, कफ, प्लीहा, खांसी और शूल इन पर देवे ॥

वातविध्वंस

रसं गंधं विषं चैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम् । एतत्सर्वं समं योज्यं विषं च द्विगुणं भवेत् ॥ जेपालं तालकं चैव रसेन सह योजयेत् । त्र्यूषणं च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ निर्गुंडीसूरणद्रावैर्भानोश्च पयसस्तथा । तर्कारी भृंगराजश्च तथोन्मत्तरसस्य च ॥ भावना खलु दातव्या सप्तसप्तक्रमादितः । द्विगुंजं भक्षयेत्प्रातर्मरिचैश्च समन्वितम् ॥ जानुजंघाकटिस्थूणपादगुल्फौष्ठशीर्षकम् । मन्यास्तंभं हनुस्तंभं त्रिकस्तंभं च शुष्ककम् ॥ जिह्वास्तंभं बाहुभवं त्रिकस्तंभं च पादजम् । अधोभागे च ये वाताः सर्वांगे विचरंति ये ॥ सर्वान्वातान् जयेदाशु दैत्यं नारायणो यथा ॥

अर्थ–पारा१, गंधक १, बच्छनाग विष २, तामे की भस्म १, लोहे की भस्म १, सुवर्णमाक्षिक की भस्म १, जमालगोटा १, हरताल १, सोंठ, मिरच, पीपल सब मिलायके १ भाग लेवे. इन सब औषधों को एकत्र करके इस में निर्गुंडी, जमींकंद, आक, अरनी, भांगरा और धतूरा इन प्रत्येक की सात २ भावना देवे. यह **वातविध्वंसन** दो रत्ती के अनुमान काली मिरचों के चूर्ण के साथ देवे तो जानु, जंघा, कमर, पीठ, पैर, होंठ, मस्तक और गरदन इन का स्तंभ, हनुस्तंभ, त्रिकस्तंभ,

शुष्कवात, जिव्हास्तंभ, बाहुस्तंभ, पादस्तंभ और अधोभाग में होनेवाली वादी तथा सर्वांग में संचार करनेवाली वायु इस प्रकार संपूर्ण वातरोगों का नाश करे. जैसे भगवान् भक्तों की दीनता को हरण करते हैं ॥

दूसरा समीरपन्नग

सूतं तालकमाक्षिकायसरजो गंधं समांशं कृतं पथ्या त्र्यूषण-वह्निमंथसुरसाशृंगी विषं टंकणम् । क्षिप्त्वा खल्वतले च वारि-सुरसामुंडीरसे मर्दितं मात्रा वल्लमिता ससैंधवयुता शुंठ्या तथा चित्रकैः ॥

अर्थ–पारा, हरताल, सुवर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, गंधक, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, रास्ना, कांकडासिंगी, विष, सुहागा ये समानभाग ले. सब को तुलसी और गोरखमुंडी के रस में खरल कर इस की दो दो रत्ती की गोली करे. इस को सैंधवनिमक, सोंठ और चित्रक के साथ वादी पर देवे ॥

वातारिरस

रसभस्म च भागैकं गंधको द्विगुणो भवेत् । त्रिगुणं च विषं ग्राह्यं कणा चैव चतुर्गुणा ॥ वृंताात्रयं तथा प्रोक्तं सर्वमेकत्र कारयेत् । गुंजा मात्रा प्रदातव्या सर्ववातविकारिणाम् ॥

अर्थ–पारे की भस्म १ भाग, गंधक २ भाग, सिंगिया विष ३ भाग, पीपल ४ भाग और रेणुकबीज ३ भाग ये सब पदार्थ एकत्र करके चूर्ण करे इस को वादी के विकारों पर १ रत्ती देय ॥

दूसरा प्रकार

भागैकं च विषं चैव द्विभागं टंकणं तथा । चतुर्भागं च मरिचं सहैकत्र प्रयोजयेत् ॥ आर्द्रकस्य रसैर्मर्द्यं वल्लमेकं प्रमाणतः । मरिचैश्च समायुक्तं सर्ववातनिकृंतनम् ॥

अर्थ–सिंगिया विष १ भाग, सुहागा २ भाग और काली मिरच ४ भाग ले सब को एकत्र कर अदरख के रस में खरल कर इस में से २ रत्ती रस मिरचों के साथ देवे तो सर्व वायु के रोग नाश करे ॥

रसेंद्रचिंतामणि

सूतात्पंचार्कतश्चैकं कृत्वा पिष्टं सगंधकम् । सूतांशं नागव-

ल्याश्च द्रवैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ॥ ताम्रपृष्ठे प्रलिप्यैतां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् । द्विगुंजं त्र्यूषणेनार्धं वपुवातं सकंपकम् ॥ निहंति दाहसंतापं मूर्छापित्तसमन्विताः ॥

अर्थ—पारा ५ भाग, तांबे के पत्र १ भाग और गंधक ५भाग इन की कजली करके नागरवेल के पान के रस में खरल कर तामे के पत्रोंपर लेप कर एक के ऊपर दूसरा जमाय संपुट में रख गजपुट में रखके फूंक देवे. इस भस्म को २ रत्ती ले और सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण से देवे तो अर्धांगवात, कंपवात, दाह, संताप, मूर्च्छा और पित्त इन को नाश करे ॥

कालकंटकरस

वज्रसूताभ्रहेमार्कतीक्ष्णमंडं क्रमोत्तरम् । मारितं मर्दयेदम्लवर्गेण दिवसत्रयम् ॥ त्रिक्षारं पंचलवणं मर्दितस्य समं समम् । दत्त्वा निर्गुंडिकाद्रावैर्मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥ शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषं चास्याष्टमांशतः । टंकणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जंबीरजैर्द्रवैः ॥ भावयेद्दिनमेकं तु रसोयं कालकंटकः । दातव्यः सर्वरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ द्विगुंजमार्द्रकद्रावैर्घृतैर्वा वातरोगिणाम् । निर्गुंडीमूलचूर्णं तु माहिषाख्यं च गुग्गुलुम् ॥ समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसंमिता । अनुयोज्या घृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णं च भोजनम् ॥ मंडलान्नाशयेत्सर्वान्वातरोगान्न संशयः । सन्निपाते पिबेच्चानु रविमूलकषायकम् ॥

अर्थ—हीरा, पारा, अभ्रक, सुवर्ण, तांबा, खेडीलोह और मुंडलोह इन की भस्म एक से दूसरी अधिक २ के क्रम से लेवे फिर इस को तीन दिन अम्लवर्ग की भावना देवे. फिर तीनों क्षार और पांचों निमक ये उक्त भस्मों के समान मिलायके फिर निर्गुंडी के रस में उस को तीन दिन खरल करे जब सूख जावे तब अष्टमांश सिंगियाविष और सुहागा डालके नींबू के रस में १ दिन खरल करे इस को कालकंटकरस कहते हैं यह संपूर्ण रोगों पर देवे परंतु विशेषकरके सन्निपातपर देना चाहिये अदरख के रस से अथवा घी के साथ दो रत्ती वातरोगपर देवे निर्गुंडी की जड के चूर्ण और भैंसा गुग्गुल ये समान ले घी से खरल करके एक तोले की गोली के साथ देवे और स्निग्ध तथा उष्ण भोजन करे तो यह ४० दिन में संपूर्ण वात के

रोगों को नाश करे तथा इस रस को खायके ऊपर से आंक की जड का काढा पीवे तो सन्निपात को नष्ट करे ॥

त्रिगुणाख्यरस

गंधकाष्टगुणं सूतं शुद्धं मृद्वग्निना क्षणम् । पक्त्वावतार्य संचूर्ण्य चूर्णतुल्याभयायुतम्॥सप्तगुंजमिदं खादेद्वर्धयेच्च दिने दिने । गुंजैकैकं क्रमेणैव यावत्स्यादेकविंशतिः ॥ क्षीराज्यशर्करामिश्रं शाल्यन्नं पथ्यमाचरेत् । कफवातप्रशांत्यर्थं निर्वाते निवसेत्सदा ॥ त्रिगुणाख्यो रसो नाम त्रिपक्षात्कफवातनुत् ॥

अर्थ–गंधक आठ भाग लेकर उस को मंदाग्निपर पतली कर लेवे फिर इस में पारा १ भाग मिलावे थोडी देर अग्नि पर रहने दे फिर पारे गंधक की बराबर हरड का चूर्ण मिलायके प्रथम दिन सात रत्ती देवे और २१ रत्ती होनेपर्यंत नित्यप्रति एक २ रत्ती बढाता जावे और दूध, घी, खांड और भात ये पथ्य में देवे और पवन में रहे नहीं तो यह त्रिगुणाख्यरस तीन पक्ष में कफ वादी को नाश करे ॥

अर्केश्वर

रसस्य गंधं द्विगुणं विमर्द्य ताम्रस्य चक्रेण सुतापितेन । आच्छादयित्वा च ततः प्रयत्नाच्चक्रे विलग्नं च ततः प्रगृह्य ॥ संचूर्ण्य च द्वादशधार्कदुग्धैः पुटेत वह्नित्रिफलाजलेन । संभावितार्केश्वर एष सूतो गुंजाद्वयं चास्य फलत्रयेण ॥ ददेत मानत्रितयेन सुप्तिवाताद्विमुक्तो हि भवेद्धिताशी । क्षारं सुतीक्ष्णं दधिमांसमाषं वृंताकमध्वादि विवर्जनीयम् ॥

अर्थ–पारा १ भाग और गंधक २ भाग दोनों को एकत्र करके तामे के पात्र को गरम करके उस में घोटे फिर ढक देवे. फिर तामे के चक्र में लगे उस को निकास लेवे फिर खरल में डालके उस को आंक के दूध और चित्रक तथा त्रिफला इन के काढे की दश दश भावना देवे. इस को अर्केश्वररस कहते हैं. यह दो रत्ती त्रिफला के साथ देवे और पथ्य हितकारी अन्न भोजन करे तथा खारी, तीक्ष्ण, दही, मांस, उडद, बैंगन और सहत ये पदार्थ खाय नहीं तो सुप्तिवात दूर होय ॥

एकांगवीर

शुद्धगंधं मृतं सूतं कांतं वंगं च नागकम् । ताम्रं चाभ्रं मृतं

तीक्ष्णं नागरं मरिचं कणा ॥ सर्वमेकत्र संचूर्ण्य भावयेच्च पृथक्
त्रयम् । वराव्योषकनिर्गुंडीवह्निमार्द्रकजैर्द्रवैः ॥ शिग्रुकुष्ठद्रवे-
णापि ततो धात्र्या द्रवेण च । विषमुष्टचार्कहटैश्च आर्द्रकस्य
रसैस्तथा ॥ रसश्चैकांगवीरोसौ सुसिद्धो रसराड् भवेत् । पक्ष-
घातं चार्दितं च धनुर्वातं तथैव च ॥ अर्धांगं गृध्रसीं वापि
विश्वाचीमवबाहुकम् । सर्वान्वातामयान्हंति सत्यं सत्यं न संशयः ॥

अर्थ–शुद्ध गंधक, पारे की भस्म, कांतलोह, वंग, शीशा, तामा, अभ्रक, पोलाद लोह इन की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब को एकत्र चूर्ण करके त्रिफला का काढा, त्रिकुटे का काढा, निर्गुंडी, अदरख, चित्रक, सहजना, कूठ, आवले, कुचला, आक, थूहर और अदरख इन प्रत्येक की तीन तीन भावना देवे तो यह एकांग-वीर रस सिद्ध होय. यह पक्षाघात, धनुर्वात, अर्धांगवात, गृध्रसी, विश्वाची, अवबाहुक और सर्व प्रकार के वातरोग इन को नाश करे इस में संशय नहीं है ॥

वातरक्तपर रस

पारदं च क्रियाशुद्धं तत्तुल्यं शुद्धगंधकम् । अभ्रकं तु द्वयोस्तु-
ल्यं त्रिभिस्तुल्यं तु गुग्गुलुम् ॥ सर्वांशममृतासत्वं भावयेदौषधैः
पृथक् । निर्गुंडीगोक्षुरच्छिन्नाकोकिलाख्यांघ्रिजै रसैः ॥ सप्तवारं
ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकिलाख्यस्य मूलानां
पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ–पारा, शुद्ध गंधक समान भाग ले और दोनों की बराबर अभ्रकभस्म तीनों की बराबर गूगल और सब की बराबर गिलोयसत्व इन सब को एकत्र कर निर्गुंडी, गोखरू, गिलोय, काकोली इन के काढे की सात २ भावना देवे फिर इस में से ६ रत्ती की मात्रा वातरक्तरोग पर देवे और ऊपर से काकोली की जड का काढा पीवे॥

तालकभस्म

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुबाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसे विमर्द्य ।
दत्त्वा शरावयुगले प्रविधाय मुद्रां दद्याद्गजाह्वपुटमस्य भवे-
त्सुभस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिं प्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च
बहुधा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमितां हरितालमात्रां विद्या
मया यतिवरादियमाप यत्नात् ॥

अर्थ—हरताल ३, पारा १ और फिटकरी ६ भाग ये शुद्ध ले सब को एकत्र करके सपेद पुनर्नवा के रस में खरल करे. जब सूख जाय तब इस की टिकिया बनाय ले इस को खिपडे की पेंदी में रखके उस के ऊपर दूसरा औंधा खिपडा ढक देवे फिर संधीलेप करके गजपुट में फूंक देवे तो सुंदर भस्म होय. यह हरताल की मात्रा जिस रोगी को देनी होय उस की आकृति, प्रकृति और रोग की सर्व अवस्था वारंवार विचारके चावल के बराबर देवे. यह विद्या मैं ने एक महान् संन्यासी के पास से बडे यत्न से सीखी है ॥

गंधकरसायन

शुद्धो बलिर्गोपयसा विभाव्य ततश्चतुर्जातगुडूचिकाभिः। पथ्याक्षधात्र्यौषधभृंगराजैर्भाव्योष्टवारं पृथगार्द्रकेण॥ सिद्धे सितां योजय तुल्यभागां रसायनं गंधकपूर्वकं स्यात्। कर्षोन्मितं सेवितमेति मर्त्यो वीर्यं च पुष्टिं दृढदेहवह्निम्॥ कुष्ठं सकंडुं विषदोषमुग्रं मासद्वयं योजयती च योगः। घोरातिसारं ग्रहणीगदं च सवातरक्तं सहशूलयुक्तम्॥ जीर्णज्वरं मेहगणं च तीव्रं वातामयानां ग्रहणे समर्थः। प्रज्ञाकरं केशमतीव कृष्णं ससोमरोगं सहमुष्कवृद्धिम्॥ हरति सकलरोगान् गंधकाख्योतियोगो मृतसदृशनराणां प्राणदो दीर्घमायुः। तदनुविहितयोगं भस्म सूतं सहेम रमयति त्रिदशानां दीप्तिरूपं सुखं च॥

अर्थ—शुद्ध गंधक को गौ का दूध, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, गिलोय, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, भांगरा और अदरख इन प्रत्येक की आठ २ भावना देवे. जब सिद्ध हो जावे तब बराबर की मिश्री मिलाय ले इस को गंधकरसायन कहते हैं. यह दश मासे नित्य सेवन करने से वीर्यपुष्टी, देह की दृढता, अग्निदीप्ति इन को करे तथा कुष्ठ, खुजली, विषदोष, घोर अतिसार, संग्रहणी, वातरक्त, शूल, जीर्णज्वर, सर्व प्रमेह, तीव्रवातव्याधि, अंडवृद्धि, सोमरोग और संपूर्ण रोगों का नाश करे है. तथा बुद्धि, आयुष्य, केशों का कालापना और सर्व रोगों के नाश करे. यह मनुष्यों को प्राण और आयुष्य देने में समर्थ है और इस में पारे को भस्म का योग करने से कांति करे और अनेक स्त्रियों के भोगने की सामर्थ्य करे ॥

लघुविषगर्भतैल

तैलाढकं समतुषांबुहयारिहेमनिर्गुंडिभास्करशिफासृतया तु

सिद्धम् । धत्तूरकुष्ठफलिनीविषहेमदुग्धारास्ना हयारिकटभी मरिचोपचित्रा ॥ मांसी वचा दहनसर्षपदेवदारु दार्वी निशा ऋबुजतुत्रिफला समंगा । पिष्ट्वा क्षिपेत्पलमितां विषगर्भमेतत्तैलं समस्तपवनामयनाशनं स्यात् ॥

अर्थ–२५६ तोले तेल में इस के बराबर को तुष की कांजी और कनेर, धतूरा, निर्गुंडी और आंक की जड का काढा डालके तेल सिद्ध करे. फिर धतूरे के बीज, कूठ, कलियारी, सिंगिया विष, गूलर, रास्ना, कनेर, मालकांगनी, मिरच, बडी दंती, जटामांसी, वच, चित्रक, सरसो, देवदारु, दारुहलदी, अंड की जड, लाख, त्रिफला, मजीठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे सब का चूर्ण करके उस तेल में डाल देवे तो यह विषगर्भतैलं बने. यह सर्व वातरोगनाशक है ॥

दूसरा प्रकार

धत्तूरस्य रसस्य पंच कुडवं तैलं तथा कांजिकं प्रस्थानां च चतुष्टयं गदवचाचित्रात्परं शाणकाः । हृद्धात्रीमरिचात्पृथङ् नवविषात्षट् स्वर्णबीजात्पटोः स्युः सप्ताधिकविंशतिः परिमितं तीव्रानिलध्वंसनम् ॥ पक्षाघातं हनुस्तंभं मन्यास्तंभं कटिग्रहम् । पृष्ठत्रिकशिरःकंपं सर्वांगग्रहणं तथा ॥

अर्थ–धतूरे का रस ८० तोले, तेल८०तोले, कांजी ८० तोले, कूठ, वच, चित्रक ये प्रत्येक एक एक तोले लेवे. हितवल्ली, मिरच, दोनों नौ नौ तोले ले, सिंगिया विष ६ तोले, धतूरे के बिज २७ तोले और सैंधानिमक २७ तोले इन सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे. यह तीव्र वादी, पक्षाघात, हनुस्तंभ, गर्दन का स्तंभ, कटिग्रह, पीठ, त्रिक और मस्तक इन का कंप और सर्वांगग्रह वात इन को नाश करे ॥

महाविषगर्भतैल

कनकं तु च निर्गुंडी तुंबिनी च पुनर्नवा । वातारिश्चाश्वगंधा च प्रपुन्नाटं सचित्रकम् ॥ सौभांजनं काकमाची कलिकारी च निंबकम् । महानिंबेश्वरी चैव दशमूलं शतावरी ॥ कारवेल्ली सारिवा च श्रावणी च विदारिका । वन्ध्यकर्कोटी मेषशृंगी च करवीरद्वयं वचा ॥ काकजंघा त्वपामार्गबला चातिबलाद्वयम् । व्याघ्री महाबला वासा सोमवल्ली प्रसारिणी ॥ पलोन्मितानि

चैतानि द्रोणेंभसि विनिःक्षिपेत् । पचेत्पादावशेषेस्मिन्कल्कस्य कुडवं क्षिपेत् ॥ त्रिकटुं विषतिंदुं च रास्ना कुष्ठं विषं घनम् । देवदारुर्वत्सनाभो द्वौ क्षारौ लवणानि च ॥ तुत्थकं कट्फलं पाठा भार्ङ्गी च नवसागरम् । त्रायंती धन्वयासं च जीरकं चेंद्रवारुणी ॥ तैलप्रस्थं समादाय पाचयेन्मृदुवह्निना । विषगर्भमिदं नाम्ना सर्वान्वातान्व्यपोहति ॥ वक्षोरुकटिजंघानां संधानं श्रेष्ठमेव च । गृध्रसीं च महावातान्सर्वांगग्रहणं तथा ॥ दंडापतानकं चैव कर्णनादं च शून्यताम् । वनमध्ये यथा सिंहात्पलायंते यथा मृगाः ॥ तथाश्वगजभग्नानां नराणां च चतुष्पदाम् । नाशयेन्नात्र संदेहो विषगर्भप्रलेपनात् ॥

अर्थ–धतूरा, निर्गुंडी, सपेद तुंबी, पुनर्नवा, अंड, असगंध, पवाड, चित्रक, सहजना, मकोय, बहेडा, नीम की छाल, बकायन, वांझ ककोडी, दशमूल, शतावर, करेला, सारिवा, सपेद कोयल, मुंडी, विदारीकंद, थूहर, आक, मेढासिंगी, लाल और सपेद कनेर, वच, काकजंघा, ओंगा, बला, अतिबला, नागबला, कटेरी, महाबला, अडूसा, सोमवल्ली और प्रसारणी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब को जोंकूट करके १०२४ तोले जल में औटायके जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे और इस में त्रिकुटा, कुचला, रास्ना, कूठ, अतीस, नागरमोथा, देवदारु, सिंगिया विष, जवाखार, सुहागा, सैंधानिमक, बिडनिमक, संचरनिमक, समुद्रनिमक, लीला थोथा, कायफल, पाढ की जड, नोसदर, त्रायमाण, धमासा, जीरा और इन्द्रायण इन का चूर्ण प्रत्येक १६ तोले डालके इस में ६४ तोले तेल डाल मंदाग्निपर पक्क करे. इस को विषगर्भतैल कहते हैं. यह सब वातरोगों को नाश करे और ऊरु, वक्षस्थल, जंघा तथा संधि इन ठिकाने की वायु, आढ्यवात, गृध्रसी, महावात, सर्वांगवात, दंडापतानक, कर्णनाद तथा शून्यता इन को नाश करे और जैसे वन में सिंह से मृग डरकर भाग जाते हैं उसी प्रकार घोडा और हाथी इन से गिरने से टूटे हुए हाड अथवा पशु इन की व्याधि को नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

प्रसारिणीतैल

समूलपत्रां पुष्पाढ्यां जातसारां प्रसारिणीम् । कुट्टयित्वा पलशतं कटाहे समधिश्रयेत् ॥ दध्नस्तत्राढकं दद्यात् द्विगुणं चा-

म्लकांजिकम् । भेषजानि तु पेष्याणि तत्रेमानि समावपेत् ॥ शुंठी पलानि पंचैव रास्नायाश्च पलद्वयम् । प्रसारिणीपले द्वे च द्वे पले मधुकस्य च ॥ एतत्सर्वं समालोड्य शनैर्मृद्वग्निना पचेत् । एतत्प्रभंजने श्रेष्ठं नस्यकर्मणि शस्यते ॥ एकांगग्रहणं वापि सर्वांगग्रहणं तथा । अपस्मारं तथोन्मादं विद्रधिं मंदवह्निताम् ॥ त्वग्गताश्चापि ये वाताः शिरासंधिगताश्च ये । अस्थिसंधिगता ये च ये च शुक्रार्त्तवे स्थिताः ॥ सर्वान्वातामयान्नूनं नाशयत्येव सर्वथा । हयं नरं गजं वापि वातजर्जरितं भृशम् ॥ सद्यः प्रशमयेत्तैलमेतन्नात्र विचारणा । इंद्रियस्य प्रजननं वंध्यानां च प्रजाकरम् ॥ वृद्धानां बालकानां च स्त्रीणां राज्ञां हितं परम् । पंगुर्वा पीठसर्पिर्वा पीत्वैतत्संप्रधावति ॥

अर्थ—जड, पत्ता और फूलसहित तथा जिस में सत्व हो गया हो ऐसी प्रसारणी ४०० तोले को कूट एक कडाही में सिजावे. उस में २५६ तोले दही, ५१२ तोले खट्टी कांजी डालके फिर सोंठ २० तोले, रास्ना ८ तोले, प्रसारणी ८ तोले, मुलहटी ८ तोले इस प्रकार उस में डालके मिलाय देवे. फिर इस में तेल डालके मंदाग्निपर पक्क करे. यह वादीपर नस्य करने में उत्तम है. एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, अपस्मार, उन्माद, विद्रधि, मंदाग्नि, त्वचा, मस्तक, शिरा, अस्थि, शुक्र, आर्तव इतने ठिकाने की पवन, सर्व वादी के रोग इन को निश्चय करके नाश करे. तथा घोडा, हाथी, मनुष्य इन में से कोई भी वादी से जर्जरित होवे तो तत्काल यह तेल आरोग्य करे. इस में संशय नहीं है. इन्द्रियजनक, वंध्या स्त्री के संतान देनेवाला, वृद्ध, बालक, स्त्री और राजा इन को हितकारी है. तथा पांगुला किंवा कूख को टेढा करके चलनेवाला ऐसा मनुष्य इस तेल को पीकर दौडने लगे ॥

नारायणतैल

बिल्वोऽग्निमंथः स्योनाकपाटलापारिभद्रकाः । प्रसारिण्यश्वगंधा च बृहती कंटकारिका ॥ बला चातिबला चैव श्वदंष्ट्रा सपुनर्नवा । एषां दश पलान् भागान् चतुर्द्रोणांभसा पचेत् ॥ पादशेषं परिस्राव्य तैलपात्रे प्रदापयेत् । शतपुष्पा देवदारु मांसी

शैलेयकं वचा ॥ चंदनं तगरं कुष्ठमेलापर्णीचतुष्टयम्। रास्ना तुरगगंधा च सैंधवं सपुनर्नवम् ॥ एषां द्विपलिकान् भागान् पेषयित्वा विनिःक्षिपेत्। शतावरीरसं चैव तैलतुल्यं प्रदापयेत् ॥ आजं वा यदि वा गव्यं क्षीरं दत्त्वा चतुर्गुणम्। पाने बस्तौ तथाभ्यंगे भोज्ये नस्ये प्रयोजयेत् ॥ अश्वो वा वातभग्नो वा गजो वा यदि वा नरः। पंगुर्वा भग्नहस्तो वा भग्नपादोथ वा नरः ॥ अधोभागे च ये वाताः शिरामध्यगताश्च ये। दंतशूले हनुस्तंभे मन्यास्तंभेपतंत्रके ॥ एकांगग्रहणे वापि सर्वांगग्रहणे तथा। क्षीणेंद्रिया नष्टशुक्रा ज्वरक्षीणाश्च ये नराः ॥ लालजिह्वाश्च बधिरा विस्वरा मंदमेधसः। मंदप्रजा च या नारी या च गर्भं न विंदति ॥ वातार्तौ वृषणौ येषामंत्रवृद्धिश्च दारुणा। एतत्तैलं वरं तेषां नाम्ना नारायणं स्मृतम् ॥

अर्थ–बेलगिरी, अरनी, टेंटू, पाढ, नीम की छाल, प्रसारिणी, असगंध, बडी कटेरी, छोटी कटेरी, बला, अतिबला, गोखरू, पुनर्नवा ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेकर ४०९६ तोले जल में डालके औटावे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके जल को छान लेवे और इस को तेल के पात्र में डाल देवे फिर इस में सोंफ, देवदारु, जटामांसी, शिलाजीत, वच, चन्दन, तगर, कूट, इलायची, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, रास्ना, असगंध, सैंधानिमक, सपेद पुनर्नवा इन प्रत्येक को आठ २ तोले चूर्ण करके डाले तथा तेल की बराबर शतावर का रस डाले. बकरी का अथवा गौ का दूध तेल से चौगुना डाले इस प्रकार सब को एकत्र करके तेल को सिद्ध करे यह सिद्ध हुआ तैल पान, बस्ती, मालिस, भोज्य पदार्थ के साथ सेवन तथा नस्य इन में योजना करने से घोडा, हाथी, मनुष्य, पंगुए अथवा हाथ पैर जिस के मुंड गये हों वह अच्छा होय और अधोभाग की वादी, शिरामध्यगत, दंतशूल, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, अपतंत्रक, एकांगग्रहण, सर्वांगग्रहण, क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, ज्वर से क्षीण, लालजिह्व, बहरे, बुरे स्वरवाले, अल्पबुद्धि, अल्पप्रजा स्त्री, वन्ध्या स्त्री, वृषणवात, अन्त्रवृद्धि इन पर यह नारायण तैल अतिहितकारी है ॥

दूसरा प्रकार

अश्वगंधा बला बिल्वं पाटला बृहतीद्वयम्। श्वदंष्ट्रातिबला निंबः

स्योनाकं च पुनर्नवा ॥ प्रसारिणीमग्निमंथः कुर्याद्दशपलं पृथक् । चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं सृतं नयेत् ॥ तैलाढकेन संयोज्य शतावर्या रसाढकम् । क्षिपेत्तत्र च गोक्षीरं तैलात्तस्माच्चतुर्गुणम्॥शनैर्विपाचयेदेभिः कल्कैर्द्विपलिकैः पृथक् । कुष्ठैला चंदनं मूर्वा वचा मांसिससैंधवैः ॥ अश्वगंधा बला रास्ना शतपुष्पेंद्रदारुभिः । पर्णीचतुष्टयेनैव तगरेणैव साधयेत् ॥ तत्तैलं नावनेभ्यंगे पाने बस्तौ च योजयेत् । पक्षघातं हनुस्तंभं मन्यास्तंभं गलग्रहम् ॥ खल्लत्वं बधिरत्वं च गतिभंगं गलग्रहम् । गात्रशोषेंद्रियध्वंसे असृक्शुक्रे ज्वरे क्षये ॥ अंडवृद्धिकुरंडं च दंतरोगं शिरोग्रहम् । पार्श्वशूलं च पांगुल्यं बुद्धि हानिं च गृध्रसीम् ॥ अन्यांश्च विषमान्वातान् जयेत्सर्वांगसंश्रयान् । अस्य प्रभावाद्वंध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते॥मर्त्यो गजो वा तुरगस्तैलाभ्यंगात्सुखी भवेत् । यथा नारायणो देवो दुष्टदैत्यविनाशनः ॥ तथैवं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

अर्थ–असगंध, खिरेटी, बेलगिरी, पाठ, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, अतिबला, नीम की छाल, टेंटू, पुनर्नवा, प्रसारिणी, अरनी ये तेरह औषध दश दश पल लेवे. जौ कूटकर चार द्रोण जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय और तिल का तेल इस में एक आढक डाले तथा सतावर का स्वरस एक आढक तथा गौ का दूध चार आढक उस तेल में डालके इस में कल्क करके डालने की दवाई इस प्रकार डाले. कूठ, इलायची, सपेद चंदन, वच, जटामांसी, सैंधानिमक, असगंध, खिरेटी की जड, रास्ना, सौंफ, देवदारु, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, ताम्रपर्णी और तगर ये सत्रह औषधि दो दो पल लेवे. सब का कल्क करके उस काढे में डाल देवे. फिर इस को भट्टी पर चढाय मंद अग्नि से परिपक्क करे. जब केवल तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इस को **नारायण तैल** कहते हैं. यह तैल नाक में डालना, देह में लगाना तथा पीना और बस्तिकर्म इन में देना चाहिये. इस से पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ और गलग्रह, देह का सूखना, इन्द्रियों का नाश, रुधिर वीर्य के क्षय में तथा ज्वर के क्षय में, खल्ली, बहरा, गतिभंग, गलग्रह, अंडवृद्धि, कुरंड, दंतरोग, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, पांगुलापन, बुद्धि की हानि, गृध्रसी

और जो अन्य विषमवात है उन सब को यह दूर करे इस के प्रभाव से वन्ध्या के पुत्र होय हाथी, घोडे, मनुष्य इस तेल की मालिस करने से सुखी होवे. जैसे नारायण देव दुष्ट दैत्यों का नाश करे है उसी प्रकार वह नारायण तैल सर्व दुष्ट रोगों का नाश करे है॥

शतावरीतैल

शतावरी बलायुग्मं पर्ण्यौ गंधर्वहस्तकः। अश्वगंधाश्वदंष्ट्रा च बिल्वः काशः कुरंटकः॥ एतान् सार्धपलान् भागान् कल्पयेच्च विपाचयेत्। चतुर्गुणेन नीरेण पादशेषं सृतं नयेत्॥ नियोज्य तैलप्रस्थे च क्षीरप्रस्थं विनिःक्षिपेत्। शतावरीरसप्रस्थं जलप्रस्थं च योजयेत्॥शतावरी देवदारु मांसी तगरचंदनम्। शतपुष्पा बला कुष्ठमेला शैलेयमुत्पलम्॥ ऋद्धिर्मेदा च मधुकं कांकोली जीवकस्तथा। एषां कर्षसमैः कल्कैस्तैलगोमयवन्हिना॥ पचेत्तेनैव तैलेन स्त्रीषु नित्यं वृषायते। नारी च लभते पुत्रं योनिशूलं च नश्यति॥ अंगशूलं शिरःशूलं कामलां पांडुतां गरम्। गृध्रसीं प्लीहशोषांश्च मेहान् दंडापतानकम्॥ सदाहं वातरक्तं च वातपित्तगदार्दितम्। असृग्दरं तथाध्मानं रक्तपित्तं च नश्यति॥ शतावरीतैलमिदं कृष्णात्रेयेण भाषितम्॥

अर्थ—शतावर, खिरेटी, गगेरन, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, अंड की जड, असगंध, बेलगिरी, कास, कुश, पियावासा ये ग्यारह औषध डेढ२पल लेवे. सब औषधों से चौगुना जल डालके काढा करे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस काढे में तिली का तेल १ प्रस्थ मिलावे और गौ का दूध १ प्रस्थ तथा शतावर का रस १ प्रस्थ, एवं जल १ प्रस्थ उस तेल में डालके उस में कल्क करके डालने की औषध आगे लिखी है उन को डाले. जैसे शतावर, देवदारु, जटामांसी, तगर, सपेद चंदन, सोंफ, खिरेटी की जड, कूठ, इलायची, पत्थर का फूल, कमल, ऋद्धि के अभाव में वाराहीकंद, मेदा के अभाव में मुलहटी, महुआ की छाल, कंकोली के अभाव में असगंध और जीवक इन सब का तोले २ भर कल्क करके तथा इन से चौगुना अंडी का तेल लेकर उस में उस कल्क को डालके पाक करने के वास्ते कल्क से चौगुना जल डाले. जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके तैल को छान लेवे. यह तेल जिस मनुष्य के वातरक्त होय उस के देह में मालिस करे तो वातरक्त दूर होय॥

माषतैल

माषप्रस्थं समावाप्य पचेत्सम्यग्जलाढके। पादशेषे रसे तस्मिन् क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ प्रस्थं च तिलतैलस्य कल्कं दत्त्वाक्षसंमितम् । जीवनीयानि यान्यष्टौ शतपुष्पा ससैंधवा ॥ रास्नात्मगुप्ता मधुकं बला व्योषं त्रिकंटकम् । पक्षघातार्दिते वाते कर्णशूले च दारुणे ॥ मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च विदोषजे। हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुशोषेवबाहुके ॥ शस्तं कलायखंजे च पानाभ्यंजनबस्तिभिः । माषतैलमिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम् ॥

अर्थ–उडद ६४ तोलों को २५६ तोले जल में डालके औटावे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उस में चौगुना दूध तथा तिलों का तेल ६४ तोले और जीवनीयगण की आठ औषधी, सोंफ, सैंधानिमक, रास्ना, कौंच के बीज, मुलहटी, खिरेटी, सोंठ, मिरच, पीपल और गोखरू ये तोले २ भर लेवे. सब का कल्क करके उस तेल में डालके तेल सिद्ध करे. यह पक्षाघात, अर्दितवायु, दारुण कर्णशूल, बहरापना, तिमिररोग, संनिपातज रोग, हस्तकंप, शिरःकंप, बाहुशोष, अपबाहुक और कलायखंज इन रोगों पर इस तेल को पीवे तथा लगावे. बस्तिकर्म इन में योजना करे यह माषतैल संपूर्ण ऊर्ध्वजत्रु के रोगों का नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

चौथा विषगर्भतैल

तैलं कृष्णतिलोद्भूतं सर्षपैरंडसंभवम् । उभावपि च तुल्यांशं सर्वं द्रोणमितं पचेत् ॥ वक्ष्यमाणौषधीभिस्तु लोहपात्रे क्रमाग्निना। पश्चान्मानद्रवं क्वाथे वस्त्रपूतं विधाय च ॥ गर्भे विषं प्रदातव्यं तस्मात्तद्विषगर्भकात् । धत्तूरकरवीरार्कं लांगल्यं कोष्णवज्रकम् ॥ महानिंबात्रिवृद्दंती देवदाली प्रसारिणी । ज्योतिष्मती शिग्रुमूलं केतकी च पुनर्नवा ॥ कुलित्थमाषकार्पासबीजं भृंगरसान्वितम्। लाक्षारसं छागमांसं शणबीजं समं पृथक् ॥ व्याघ्रवाराहजंबूकवसाप्रस्थद्वयं द्वयम् । विषमष्टपलं ज्ञेयमन्यत्सर्वं पलद्वयम् ॥ प्रत्येकमौषधं ग्राह्यं मंजिष्ठाया द्विप्र-

स्थकम् । त्रिकटु त्रिफला कुष्ठं रास्ना मांसी सठी वचा॥ चित्रकं देवदारुश्च बाकुचींद्रियवामृता । विडंगं रेणुका मुस्तं पंचकोलं यवानिका ॥ शम्याकं खदिरं सारं मधूकद्रुमबीजयोः । अजमोदा च तगरं सैंधवं रक्तचंदनम् ॥ हरिद्राद्वयसिक्थं च चतुर्जातं सचंदनम् । लोहभस्माभ्रकं वंगं पाकं कौसीसमेव च ॥ मनःशिला लेदरदकृष्णागरुनखांडिकम् । सिल्हारं रसगोधूमं कुंकुमेदमृगांडजम् ॥ सर्वमेतत्सुगंधार्थं सिद्धतैले विनिःक्षिपेत् । अशीतिर्वातजान्रोगानामवातान्सुदुस्तरान् ॥ वातश्लेष्मसमुद्भूतान् कटिजानूरुजंघजान् । गृध्रसीं च हनुस्तंभं मन्यास्तंभं प्रकंपनम् ॥ पक्षघातं पंगुतां च नाशयेदवबाहुकम् ॥

अर्थ—काले तिलों का तेल, सरसों का तेल और अंडी का तेल इन सब को मिलायके १०२४ तोले लेय. फिर उस को लोह के कढाव में डालके उस में धतूरा, कनेर, आक, कलयारी, कूठ, थूहर, बकायन, निसोथ, जमालगोटा, वंदाल, प्रसारणी, मालकांगनी, सहजने का कंद, केतकी, पुनर्नवा, कुलथी, उडद, विनोले ये प्रत्येक आठ २ पल लेवे सब का काढा और भांगरे का रस, लाख का सीरा, बकरे का मांस तथा सन के बीज ये प्रत्येक १२८ तोले तथा बघेरा, सूअर और स्यार इन प्रत्येक की चर्बी १२८ तोले और सिंगियाविष ८ तोले, मजीठ १२८ तोले और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, कूठ, रास्ना, जटामांसी, कचूर, वच, चित्रक, देवदार, बावची, इंद्रजो, गिलोय, वायविडंग, रेणुकबीज, नागरमोथा, पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अजमायन, अमलतास का गूदा, खैरसार, मौआ की छाल, अजमोद, तगर, सैंधानिमक, लालचंदन, हलदी, दारुहलदी, मोम, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, सपेद चंदन ये प्रत्येक आठ २ तोले लेवे. इन के काढे में तेल मिलायके सिद्ध करे. उस में लोहभस्म, वंगभस्म, सैंधानिमक, हीराकसीस, मनसील, हींगलू, काली अगर, नख, जवाद, शिलारस, गेंहू, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ सुगंधार्थ उस सिद्ध तेल में डाले. यह तेल अस्सी प्रकार की वादी, आमवात, वातकफ, कमर, जानू, ऊरु, जंघा इन में रहनेवाली वादी, गृध्रसी, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, कंप, पक्षाघात, पांगुला (लंगडा) पना और अपबाहुक इन को नाश करे ॥

लघुनारायणतैल

एलाबलानतकुचंदनदारुसौम्याशैलेयकुष्ठकुटिलावरुणश्रितेन ।
तैलं सदुग्धमिति सिद्धमभीरुकंदतोयेन तेन लुलितेन समीरणघ्नम् ॥

अर्थ–इलायची, खिरेटी,तगर, लालचंदन, दारुहलदी, इन्द्रायन, पत्थर का फूल, कूठ, कुलिंजन, मूर्वा और वर्ना इन के काढे से तिल के तेल दूध मिलायके पकावे. जब सिद्ध हो जावे तब उतार ले. इस में शतावर के कंद का रस डालके उपयोग करे तो वादी का नाश करे ॥

शतावरी नारायणतैल

शतावरी चांशुमती पृश्निपर्णी सठी बला । एरंडस्य च मूलानि बृहत्यौ पूतिकस्य च ॥ गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च । एतान्दशपलान्भागान् जलद्रोणे पचेद्बुधः ॥ पादावशेषे पूते च गर्भे चैतान्समावपेत् । पुनर्नवा वचा दारु शताह्वा चंदनागरुः॥शैलेयं तगरं कुष्ठं त्रुटी मांसी स्थिरा बला । अश्वाह्वा सैंधवं रास्ना मंजिष्ठा घनचोरकम् ॥ कौंतीप्रियंगुस्थौणेयं पलार्धं कल्पयेत्पृथक् । गव्याजपयसोः प्रस्थौ द्वौ द्वावत्र प्रयोजयेत् ॥ शतावरीरसप्रस्थं तैलप्रस्थं भिषक् पचेत् । लवंगनखकंकोलवेल्लकं जीरकं भिषक् ॥ त्वक्कटूकं च कर्पूरं तुरुष्कश्रीनिवासकम् । स्पृक्का कुंकुमकस्तूरी दद्यादत्रावतारिते ॥ अश्वतैलस्य सिद्धस्य शृणु वीर्यमतः परम् । अश्वानां वातरुग्णानां कुंजराणां तथा नृणाम्॥तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत् । आयुष्मांश्च नरः पीत्वा निश्चयेन दृढो भवेत्॥गर्भमश्वतरी विंद्यात्कि पुनर्मानुषी तथा । हृच्छूलं पार्श्वशूलं च तथैवार्धावभेदकम् ॥ अपचीं गंडमालां च वातरक्तं हनुग्रहम् । कामलामश्मरीं पांडुमुन्मादं च नियच्छति ॥ नारायणेन गदितं तैलमेतत्कृपालुना । नारायणमिति ख्यातं नाम्ना तस्मादिदं भुवि ॥

अर्थ–शतावर, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी,कचूर, खिरहटी,अंड की जड,कटेरी, बडी कटेरी, कंजा, कसोंदी की जड, पियावासे की जड ये प्रत्येक४०तोले लेवे. जल५०२४ तोले

इस में डालके काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय और इस में पुनर्नवा, वच, दारुहलदी, शतावर, चंदन, काली अगर, शिलाजीत, तगर, कूठ, छोटी इलायची, जटामांसी, तुलसी, खिरेटी की जड, असगंध, सैंधानिमक, रास्ना, मजीठ, नागरमोथा, गठोना, रेणुकबीज, फूलप्रियंगु, स्थौणेय (ग्रंथिपर्णी का भेद) ये प्रत्येक ५ पांच तोले लेवे. इन का कल्क, गौ का और बकरी का दूध प्रत्येक दो दो सेर, शतावर का रस १ सेर और तेल १ सेर लेवे. इन सब को एकत्र करके तेल सिद्ध करे. फिर उतारके इस में लौंग, नख, कंकोल, वायविडंग, जीरा, दालचीनी, कुटकी, कपूर, शिलारस, सरल का गोंद, स्पृक्का, केशर, कस्तूरी ये औषध डाले तो यह तेल सिद्ध होवे. यह वादी से पीडित घोडा, हाथी और मनुष्य इन को देने से सर्व वातविकार नाश करे. जो पुरुष इस को पीवे तो दीर्घायु होकर बली होय. इस तेल से घोडी के गर्भ रहे. फिर मनुष्यों की क्या कहना है. यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आधासीसी, अपची, गंडमाला, वातरक्त, हनुग्रह, कामला, पथरी, पांडुरोग, उन्माद इन को नाश करे. यह तेल कृपालु नारायण ने कहा है इसी वास्ते इस को नारायणतैल कहते हैं ॥

दूसरा शतावरीतैल

रुग्दारु द्रविडी प्रियंगु तगरत्वक्पत्रकौंतीनखैर्मत्सी सर्जरसांबु चंदनवचाशैलेयलामज्जकैः । मंजिष्ठा सरलागुरु द्विपबला रास्नाश्वगंधा वरी वर्षाभूमिसिसिंधुभिश्च सकलैरेभिः पचेत्कल्कितैः॥ तुल्यं गोपयसा वरीरससमं तैलं विपक्वं मुदु स्याद्वातघ्नमिदं नृणामिति वरीतैलं भिषक्पूजितम् ॥

अर्थ—कूठ, दारुहलदी, इलायची, प्रियंगु, तगर, दालचीनी, पत्रज, रेणुकबीज, नख, जटामांसी, सर्जरस, नेत्रवाला, चंदन, वच, शिलाजीत, लामज्जक (पीला सुगंधित तृण), मजीठ, देवदारु, अगर, नागबला, रास्ना, असगंध, शतावर, पुनर्नवा, सौंफ और सैंधानिमक इन का कल्क करके उस में शतावर का रस और उतना ही गौ का दूध डालके पचन करे तो मनुष्य को उत्तम वातनाशक है. यह वैद्यों-करके पूजित हो गया है ॥

दशमूलादितैल

दशमूलकषायविपक्वमथो पयसा च समेन बलाङ्गनलैः । त्रुटिचंदनदारुलतानलदैररुणाजतुकुष्ठवचाकुटिलैः ॥ इति

पक्कमिदं तिलजं जयति प्रसभं पवनामयमाशु नृणाम् । बल-
शुक्रविभारुचिवह्निकरं नृपवृद्धशिशुप्रमदासु हितम् ॥

अर्थ–दशमूल का काढा और दूध दोनों समान भाग ले. बला, नागरमोथा, तालीसपत्र, इलायची, चंदन, दारुहलदी, मालकांगनी, वाला, मजीठ, लाख, कूठ, वच और तगर इन का कल्क, तिलों का तेल इन सब को एकत्र करके पचावे तो तेल सिद्ध होय. यह तेल अपने बल से संपूर्ण वातरोगों को नष्ट करे और बल, धातु, कांति, रुचि और अग्नि इन को बढावे तथा राजा, वृद्ध, बाल और स्त्रियों को हितकारी है ॥

तीसरा प्रसारिणीतैल

समूलदलशाखायाः प्रसारण्याः शतत्रयम् । शतमेकं शतावर्या अश्वगंधाशतं तथा ॥ केतकीनां शतं चैकं दशमूलं शतं शतम् । वाट्यालकस्यापि शतं शतं सहचरस्तथा ॥ जलद्रोण-शतं दत्त्वा शतभागावशेषतः । ततस्तेन कषायेण कषायद्वि-गुणेन च ॥ सुव्यक्तेनारनालेन दधिमंडाढकेन तु । क्षीरशुक्तेक्षु-निर्यासछागमांसरसाढकैः ॥ तैलद्रोणसमायुक्तं दृढे पात्रे निधा-पयेत् । द्रव्याणि यानि क्षेप्याणि तानि वक्ष्याम्यतः परम् ॥ भल्लातकं नतं शुंठी पिप्पली चित्रकं सठी । वचा स्पृक्का प्रसा-रिण्या पिप्पलीमूलमेव च ॥ देवदारु शताह्वा च सूक्ष्मैला त्वचफालकम् । कुंकुमं मंदमजिष्ठारुष्करं नखिकागुरु ॥ कर्पूरं कुंदरुनिशालवंगं ध्यामचंदनम् । कंकोलं नलिका मुस्ता का-लियोत्पलपत्रकम् ॥ सठी हरेणुशैलेयं श्रीवासं च सकेतकम् । त्रिफला कच्छुरा भीरु सरलं पद्मकेसरम् ॥ प्रियंगूशीरबलदं जीवकाद्यं पुनर्नवा । दशमूलानि गंधं च नागपुष्पं रसांजनम् ॥ कटुका जातिपुन्नागो फलानि सल्लकीरसम् । भागांस्त्रिपलिकान् दत्त्वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥ विस्तीर्णे सुदृढे पात्रे पाच्यैषा तु प्रसारिणी । प्रयोगः षड्विधश्चात्र रोगार्त्तानां प्रशस्यते ॥ अभ्यं-गात्त्वग्गतं हंति पानात्कोष्ठगतं तथा । भोजनात्सूक्ष्मनाडी-

स्थानस्यादूर्ध्वगतांस्तथा ॥ पक्षाश्रयगते बस्तिर्निरूहः सार्व-
कायिके । एताद्धि बटुकार्तानां किशोराणां यथामृतम् ॥ एतदेव
मनुष्याणां कुंजराणां गवामपि । अनेनैव च तैलेन शुष्यमाणा
महाद्रुमाः ॥ सिक्ताः पुनः प्ररोहंति भवंति फलशालिनः ।
वृद्धोप्यनेन तैलेन पुनश्च तरुणायते ॥ न प्रसूयेत या नारी पाय-
यित्वा प्रसूयते । अप्रजाः पुरुषो यस्तु पीत्वाशु लभते सुतम् ॥
अशीतिं वातजान् रोगान् पैत्तिकान् श्लैष्मिकानपि । सन्निपात-
समुत्थांश्च नाशयेत्क्षिप्रमेव च ॥ एतेनांधकवृष्णीनां कृतं पुंस-
वनं महत् । कृत्वा विष्णोर्बलिं चापि तैलमेतत्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-प्रसारणी का पंचांग ३०० तोले, शतावर ४०० तोले, असगंध ४०० तोले, केतकी ४०० तोले, दशमूल की औषधि प्रत्येक ४०० तोले, खिरेटी ४०० तोले, पियावासा ४०० तोले और जल १०० द्रोण लेवे. सब को जल में डालके काढा करे जब जल का शतांश शेष रहे अर्थात् १०२४ तोले जल बाकी रहे तब उस काढे में काढे से दूनी कांजी डाले. दही का पानी १०२४ तोले, दूध, सपेद ईख का रस और बकरे का मांसरस ये प्रत्येक १०२४ तोले और तिलों का तेल १०२४ तोले डालके फिर उस में भिलाए, तगर, सोंठ, पीपल, चित्रक, कचूर, वच, मूर्वा, लजालू, पीपरामूल, देवदारु, शतावर, इलायची, दालचीनी, नेत्रवाला, केशर, कस्तूरी, मजीठ, भिलाए, नखद्रव्य, अगर, कपूर, कुंदरू, हलदी, लौंग, रोहिषतृण, चंदन, कंकोल, नलिका द्रव्य, नागरमोथा, दारुहलदी, कूठ, पत्रज, कचूर, रेणुकबीज, शिलारस, काली अगर, केतकी, हरड, बहेडा आमला, कपूरकचरी, शतावर, सरल, देवदारु, कमल की केशर, प्रियंगु, खस, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, सपेद मुसली, काली मुसली, पुनर्नवा, दशमूल, लाल बोल, नागकेशर, रसोत, कुटकी, जाई, पुन्नाग के फल, सल्लकी का रस ये प्रत्येक बारह २ तोले लेवे. इन सब का कल्क करके उस में मिलाय देवे. फिर भट्टीपर चढायके मंद २ अग्नि से पचन करे. जब सब रस जलके केवल तेलमात्र आय रहे तब उतारके छान लेवे. इस के मालिस करने से त्वचागत वात, पीने से कोष्ठगत वात, भोजन के साथ सेवन करने से नाडीगत, नस्य से ऊर्ध्वगत, बस्तीद्वारा पक्षाश्रित और निरूहबस्तिद्वारा सर्वांतर्गतवायु इस प्रकार छः प्रकार की वायु को उपयोगी है. तथा बालक, किशोरों को अमृत के समान है. तथा यह हाथी, घोडा, गौ इन को भी देवे तथा जो वृक्ष सूख गया हो उस के इस को लगावे तो

फिर उत्तम रीति से हरा हो जावे तथा फलपुष्पयुक्त हो. वृद्ध पुरुष इस के लगाने से तरुण होय. जिस के बालक न होता होय उस के बालक प्रगट करे. लगाने से जिस के पुत्र न होता हो वह पीवे तो उस के पुत्र होय. यह वात, पित्त, कफ और सन्निपात संबंधी व्याधि को तत्काल नाश करे. इसी तैल के प्रताप से अंधक, वृष्णी-जाति के यादवों को पुत्रोत्पत्ति हुई इस तेल को प्रथम विष्णुबली करके तयार करे ॥

चौथा प्रसारिणीतैल

प्रसारिणीक्काथपयोंबु तक्रं मस्त्वारनालं दधिभिस्तु तैलम् । कल्कीकृतं विश्वघनांबु कुष्ठं मांसी शताह्वामरदारुसेव्यैः ॥ शै-लेन रास्नागुडसारिवाभिः सिंधूत्थबिल्वानिलमंथमोचैः । सामृ-ग्लतां सोजपुनर्नवाख्यस्योनाकयष्ट्याह्वकुटंनटैश्च ॥ छिन्नोद्भवा दार्व्यभयाकरंजमेदा निशा द्वे सफलत्रयैश्च । एरंडमेकं कटुजी-विताश्च तत्साधितं हंत्यनिलोत्थरोगान् ॥ सर्वांश्च दीप्तानपि पक्षघातान्वाताश्रितानाहहनुग्रहादीन् । सगृध्रसीविश्वविबाहु-शोषं हृन्मूर्धसंस्थांश्च गदांश्च तांस्तान् ॥ संशुष्कभग्नं प्रबलां-गयष्टिं योसाध्यतामुल्बणमारुतेन । नीतः पुमांस्तस्य भवेद-वश्यं प्रसारिणीतैलमिदं हिताय ॥

अर्थ—प्रसारणी का काढा, दूध, छाछ, दही का जल, कांजी, दही और तेल ऐसे एकत्र करे फिर सोंठ, नागरमोथा, नेत्रवाला, कूठ, जटामांसी, शतावर, देवदारु, खस, शिलाजीत, रास्ना, गुड, सारिवा, सैंधानिमक, बेलगिरी, अंड की जड, मोचरस, मुद्गप-र्णी, पुनर्नवा, रुद्राक्ष, अमलतास का गूदा, मुलहटी, टेंटू, गिलोय, दारुहलदी, हरड, कंजा, मेदा, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आमला, अंडी और चित्रक इन का कल्क करके तेल सिद्ध करे. यह वातरोग, संपूर्ण पक्षवात, वातसंबंधी व्याधि, अफरा, हनुग्रह, गृध्रसी, विश्वाची, अपबाहुक, शोष और हृदय मस्तक इन के रोग, शुष्क-वात, भग्नवात और मोडनेवाली वात तथा उल्बण वात रोग इन पर हितकारी है ॥

पंचम प्रसारिणीतैल

चतुःप्रस्थं प्रसारिण्याः पचेत्तोयार्मणे शुभे । पादे शिष्टे समं तैलं दधि दद्यात्सकांजिकम् ॥ द्विगुणं च पयो दद्यादन्येषां क-ल्ककांस्तथा । चित्रकं पिप्पलीमूलं मधुकं सैंधवं वचा ॥ शत-

पुष्पा देवदारु रास्ना वारणपिप्पली। प्रसारिण्याश्च मूलानि मांसीभल्लातकानि च ॥ पचेन्मृद्वग्निना तैलं वातश्लेष्मामयाञ्जयेत्। अशीतिर्नरनार्युत्थान्वातरोगान्व्यपोहति ॥ कुब्जं स्तिमितपंगुं च गृध्रसीं खंडकार्दितम्। हनुपृष्ठशिरोग्रीवास्तंभं चापि नियच्छति ॥

अर्थ–प्रसारणी २५६ तोले को १०२४ तोले जल में काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उस के समान भाग तेल, दही, कांजी ये मिलायके दूध के काढे से दूना डाले और चित्रक, पीपरामूल, मुलहटी, सैंधानिमक, सोंफ, देवदारु, रास्ना, गजपीपल, प्रसारणी की जड, जटामांसी और भिलाए इन का कल्क डालके तैल को सिद्ध करे यह वात के रोग स्त्रियों के और पुरुषों के वात के रोग इन को नाश करे ॥

छठा विषगर्भतैल

विषं च पुष्करं कुष्ठं वचा भार्ङ्गी शतावरी। शुंठी हरिद्रा लशुनं विडंगं देवदारु च ॥ अश्वगंधाजमोदा च मरिचं ग्रंथिकं बला। रास्ना प्रसारिणी शिग्रु गुडूची हपुषाभया ॥ दशमूलानि निगुंडी मिशी पाठा च वानरी। निशाला शतपुष्पा च प्रत्येकं पलिकानिमान् ॥ चतुर्गुणे जले पक्त्वा पादशेषं समुद्धरेत्। पलमेकं विषं चात्र सूक्ष्मं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु सदाभ्यंगो विधीयते। संधिवाते सन्निपाते त्रिकपृष्ठकटिग्रहे ॥ पक्षाघाते तथार्धांगे गात्रकंपेतिदारुणे। कुब्जके च धनुर्वाते गृध्रस्यां चापतानके ॥ विषगर्भमिदं तैलं योजनीयं सदा बुधैः ॥

अर्थ–सिंगियाविष, पुहकरमूल, कूठ, वच, भारंगी, शतावर, सोंठ, हलदी, लहसन, वायविडंग, देवदारु, असगंध, अजमोद, काली मिरच, पीपरामूल, खिरेटी, रास्ना, प्रसारणी, सहजने की छाल, गिलोय, हंसपदी, हरड, दशमूल, निर्गुंडी, कलौंजी, पाढ, कौंच के बीज, इन्द्रायन और सोंफ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन को चौगुने जल में डालके काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय. फिर इस में सिंगिया विष ४ तोले को बारीक करके डाले और तेल मिलायके सिद्ध करे; इस का संपूर्ण वातरोगोंपर मालिस करे तो संधिवात, सन्निपात, त्रिकग्रह, पृष्ठग्रह, कटिग्रह, पक्षाघात, अर्द्धांग, कंप, कुब्जक, धनुर्वात, गृध्रसी और अपतानक इन को नाश करे, इस को **विषगर्भतैल** कहते हैं ॥

सातवां विषगर्भतैल

निर्गुंडिकारसप्रस्थं प्रस्थमार्कवजाद्रसात् । रसो धत्तूरजः प्रस्थो गोमूत्रं प्रस्थसंमितम् ॥ वचा कुष्ठं हेमबीजं तेजोह्वा कट्फलं तथा । पलार्धांशानि सर्वैस्तु वत्सनागः समो मतः ॥ तैलप्रस्थं पचेद्युक्त्या वातरोगेषु शस्यते । हेमंते हरिणाक्षीणां गाढमालिंगनं तथा ॥

अर्थ—निर्गुंडी का रस, भांगरे का रस, धतूरे का रस, गोमूत्र ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे और वच, कूठ, धतूरे के बीज, कांगनी के बीज और कायफल ये प्रत्येक औषध दो दो तोले लेय तथा वच्छनाग विष सब के समान भाग लेकर डाले इन के काढे में तथा कल्क में तिल का तैल ६४ तोले डालके युक्ति से पचावे तो यह वातव्याधि को दूर करे ॥

दार्व्यादितैल

दारु कुष्ठं कणा रास्ना विश्वाग्निबृहतीपुरम् । भागोत्तरमिदं सर्वं रंभानिर्यासपाचितम् । संक्वाथ्य दुग्धतैलाभ्यां पक्वस्याभ्यंगतो ध्रुवम् । सर्वे वाता विनश्यंति प्रत्यंगं भंगकारिणः ॥

अर्थ—देवदारु, कूठ, पीपल, रास्ना, सोंठ, चित्रक, कटेरी और गूगल भागवृद्धि के क्रम से लेकर काढा करे. फिर केले का रस, दूध और तेल इन को एकत्र करके तैल बनावे. इस तेल की मालिस करने से संपूर्ण वात के रोग दूर होवे ॥

दशमूलतैल

श्रीपर्णी वह्निमंथश्च बिल्वः स्योनाकपाटला । गोक्षुरः शालिपर्णी च बृहती कंटकारिका ॥ पृष्टिपर्णी च एतेषां दशमूलानि तद्युतम् । तैलं पक्वं प्रलेपेन हंति वाताननेकधा ॥

अर्थ—कंभारी, अरनी, वेल, टेटू, पाटल, गोखरू, शालपर्णी, बडी कटेरी, छोटी कटेरी और पृष्ठपर्णी इन दश औषधों की जड का काढा अथवा कल्क में तेल डालके सिद्ध करे. इस की मालिस देह में करे तो अनेक प्रकार के वायुरोग नाश करे ॥

चरणैरंडवातारिमुंडिशिग्रु शतावरी । कांडवेली बृहत्यौ द्वे नागकर्णी शिफा दश ॥ एषां तैलप्रलेपेन त्वगस्थिस्नायुसंभवम् । सर्वांगकुपितो वायुर्विनश्यति हि वेगतः ॥

अर्थ–अंड की जड, निर्गुंडी का रस, मुंडी, सहजने की जड, शतावर, कोडवेल, कटेरी, बडी कटेरी तथा लाल अंड की जड ये प्रत्येक दश २ तोले लेवे. इन के काढे में तिलों का तेल डालके सिद्ध करे. इस की मालिस करे तो त्वचा, हाड, वायु और सर्वांग में कुपित वात का नाश होय ॥

ज्योतिष्मती चंद्रसूरा कलाजाजी यवानिका । मेथी तिलांश्च संपिष्य यंत्रे तैलं समुद्धरेत् ॥ अभ्यंगान्मारुतव्याधिं समस्तं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ–मालकांगनी, हालो, काला जीरा, अजमायन, मेथी और तिल इन का चूर्ण करके इस को यंत्र में डालके तेल काढे और अंग में लगावे तो सर्व वातव्याधियों का नाश करे ॥

लघुमाषादितैल

माषसिंधुबलारास्नादशमूलकहिंगुभिः ।
वचाशतजटाख्याभिः सिद्धं तैलं सनागरम् ॥

अर्थ--उडद, सैंधानिमक, खिरेटी, दशमूल, हींग, वच, शतावर और सोंठ इन सब का कल्क कर तेल डालके सिद्ध करे तो यह तैल सर्ववातनाशक होय है ॥

विजयभैरवतैल

रसं गंधं शिलां तालं सर्वं कुर्यात्समांशकम् । चूर्णयित्वा ततः श्लक्ष्णमारनालेन पेषयेत् ॥ तेन कल्केन संलिप्य सूक्ष्मवस्त्रं ततः परम् । तैलाक्तां कारयेद्वर्तिमूर्ध्वभागे च वापयेत् ॥ वर्त्यधः स्थापयेत्पात्रं तैलं पतति शोभनम् । लेपयेत्तेन गात्राणि भक्षणाय च दापयेत् ॥ नाशयेत्तत्सुखं तैलं वातरोगानशेषतः । बाहुकंपं शिरःकंपं जंघाकंपं ततः परम् ॥ एकांगं च तथा वातं हंति लेपान्न संशयः । रोगशांत्यै प्रदातव्यं तैलं विजयभैरवम् ॥ द्रव्यतस्तिलजं तैलं दातव्यं च चतुर्गुणम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, मनसिल और हरताल ये सब समान भाग लेकर इन का बारीक चूर्ण करे और कांजी में पीसके इस कल्क को बारीक वस्त्रपर लेप कर देवे. फिर उस कपडे को सुखायके बत्ती बनावे. उस बत्ती को पारे आदि द्रव्यों से चौगुने तेल में डुबोकर औंधी कर देवे और आग जलाय देवे तो उस बत्ती में से तेल

टपक २ कर नीचे के पात्र में गिरेगा. इस तेल को देह में मालिस करने से अथवा खाने से अनेक वातव्याधि, बाहुकंप, शिरःकंप, जंघाकंप तथा एकांगवात इन को नाश करे. इस को विजयभैरव तेल कहते हैं ॥

दूसरा प्रसारिणीतैल

समूलपत्रामुत्पाद्य शरत्काले प्रसारिणीम् । शतं वाट्यालकांतं द्वे शतावर्याः शतं तथा ॥ बलाश्वगंधात्मगुप्ता केतकीनां शतं शतम् । चतुर्द्रोणेन तोयेन द्रव्यैस्तैलाढकं पचेत् ॥ मस्तुमांसरसैर्युक्तं दधि दुग्धं तथाढकम् । एतैः सर्वैः समायुक्तं पाचयेन्मृदुनाग्निना ॥ द्रव्याणां च प्रदातव्या मात्रा चार्धपलोन्मिता। तगरं मदनं कुष्ठं केसरं मुस्तकं वचा ॥ रास्नासैंधवपिप्पल्यो मांसीमंजिष्ठयष्टिका । जीवकर्षभकौ मेदा महामेदा तथा नतम् ॥ शतपुष्पा व्याघ्रनखं शुंठी देवाह्वमेव च । कांकोली क्षीरकांकोली बला भल्लातकं तथा ॥ पेषयित्वा समं चैतान्साधनीया प्रसारिणी । नातिसिद्धं नातिपक्कं सिद्धं पूतं निधापयेत् ॥ यत्र यत्र प्रदातव्यं तन्मे निगदतः शृणु । कुब्जानामथ पंगूनामवतानां तथैव च ॥ यस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधिजाः । वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम् ॥ स्त्रीभिश्च क्षीणशुक्राणां वाजीकरणमुत्तमम् । पाने बस्तौ तथाभ्यंगे भोज्ये चैव प्रदापयेत् ॥ प्रयुक्तं शमयत्याशु वातजान्विविधान् गदान् ॥

अर्थ–शरदऋतु में प्रसारणी का पंचाग ४०० तोले लेवे और महाबला ४०० तोले, शतावर ८०० तोले तथा खिरेटी की जड, असगंध, कौंच के बीज और केतकी ये प्रत्येक चार २ सौ तोले लेवे. इन को ९०९६ तोले जल में डालके काढा करे उस में २५६ तोले तेल और दही का पानी, मांसरस, दही और दूध ये प्रत्येक २५६ तोले और तगर, मैनफल, कूठ, नागकेशर, नागरमोथा, वच, रास्ना, सैंधानिमक, पीपल, मजीठ, मुलहटी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, छड, सोंफ, थूहर, सोंठ, देवदारु, कांकोली, क्षीरकांकोली, खिरेटी और भिलाए ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का कल्क करके उस तेल में डाल देवे. फिर इस को न अधिक पक्क हो न न्यून ऐसे मध्य प्रकार से मंदाग्निपर तैल सिद्ध करे यह तैल कुब्जवात, पंगुवात,

धनुर्वात, शुष्कांगवात, संधिभग्नवात, वातरक्त और वादी इन को नाश करे. तथा क्षीणशुक्रवालों को स्त्रीप्रसंग में उत्तम वाजीकरण करता है. इस को पीना, बस्तिकर्म, मालिस और भोजन में देवे तो शीघ्र सर्व प्रकार की वादियों को शमन करे इस में संदेह नहीं है ॥

व्याघ्रतैल

व्याघ्रं शिरः समादाय कुट्टयित्वा जले बहु। क्वाथ्य पादावशेषं तु रसं नीत्वा सुगालितम् ॥ तैलमर्धजलं दत्त्वा छागगव्यपयोन्वितम्। मदिरा मस्तु धान्याम्लं तैलमानेन दापयेत् ॥ दत्त्वा कटाहे सुदृढे पचेत्पाकविधानतः। द्रव्याण्येतानि मतिमान् पादमानेन दापयेत् ॥ देवदारु वचा कुष्ठं तगरं चंदनं घनम्। मंजिष्ठा पौष्करं रास्ना चतुर्जातं च सैंधवम् ॥ पिप्पली मरिचं शुंठी मांसी सहचरं जलम्। अश्वगंधात्मगुप्ता च चित्रकं वंशजं बरी ॥ श्वदंष्ट्रा केतकी मूर्वा यष्टी मधुगिरेर्मृदा। जातीफलं च सुमनः पत्रिकं कटुरोहिणी ॥ ग्रंथिकं शुक्लकंदा च शतपुष्पा पुनर्नवा। जीवनीयो गणश्चैव रालं बोलं सकेसरम् ॥ नखं च कृष्णसारं च वत्सनागं सुचूर्णितम्। अस्य तैलस्य पक्वस्य शृणु वीर्यमतः परम्॥अशीतिवातजान् रोगान् हन्यादाशु जरामपि। अश्वानां वातभग्नानां गजानां शुष्यतामपि ॥ वृष्यं तुष्टिप्रदं पुष्टिमेधाग्निबलवर्धनम्। श्रुतिभ्रंशे खंजवाते क्रोष्टुशीर्षे कटिग्रहे॥मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वाते मेदस्तथांतरे। वंध्यानां पुत्रजननं षंढानां कामवर्धनम् ॥ अश्विभ्यां निर्मितं चैतत्प्रजानां हितकाम्यया। अनेनैव विधानेन मृताक्षं विपचेद्भिषक् ॥

अर्थ—व्याघ्र (बघेरे) के सिर को कूटकर उस को जल में औटावे फिर उस का चतुर्थांश काढा हो जावे तब उस को छान लेवे फिर उस जल में उस जल से आधा तेल डालके बकरी और गौ इन का दूध, मद्य, दही का पानी, कांजी ये सब तेल के बराबर मिलावे. फिर कढाई में चढायके देवदारु, वच, कूठ, तगर, चंदन, नागरमोथा, मजीठ, पुहकरमूल, रास्ना, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर,

सैंधानिमक, पीपल, मिरच, सोंठ, जटामांसी, पियावांसा, नेत्रवाला, असगंध, कौंच के बीज, चित्रक, वंशलोचन, शतावर, गोखरू, केतकी, मूर्वा, मुलहटी, गेरू, जायफल, लौंग, तेजपात, कुटकी, पीपरामूल, सफेद अतीस, सोंफ, पुनर्नवा, जीवनीय गण की संपूर्ण औषध, राल, बोल, नागकेशर, नख, काली अगर और वच्छनाग विष इन का कल्क तैल का चतुर्थांश लेवे. सब को एकत्र कर मंदाग्निपर रखके परिपक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम शीशी आदि में भरके धर रखे. यह अस्सी प्रकार की वायु तथा वृद्धपना इन को नाश करे. तथा वायु से जकडे हुए घोडे, सूखे हाथी इन को देवे तो वह वृष्य, तुष्टि, पुष्टि, बुद्धि और अग्निबल इन को बढावे और यह श्रुतिभ्रंश, खंजवात, कोष्टुशीर्ष, कटिग्रह, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ तथा स्वेदगत वायु इन सब को तथा वंध्या स्त्री को पुत्र देवे. षंढ (नपुंसक) को कामबुद्धि करे, यह व्याघ्र तैल लोकहितार्थ अश्विनीकुमारों ने उत्पन्न करा इसी प्रकार मृत रीछ का भी तैल बनावे॥

महाबलातैल

बलामूलकषायस्य दशमूलीशृतस्य च । यवकोलकुलित्थानां क्राथस्य पयसस्तथा ॥ अष्टावष्टौ शुभान्भागान् तैलादन्यं तदेकतः । पचेदावाप्य मधुरं गणं सैंधवसंयुतम् ॥ तथागरुं सर्जरसं सरलं देवदारु च । मंजिष्ठा चंदनं कोष्ठमेला कालांजनं वरा ॥ मांसी शैलेयकं पत्रं तगरं सारिवा वचा । शतावरीमश्वगंधं शतपुष्पा पुनर्नवा ॥ तत्साधु सिद्धं सौवर्णे राजते वाथ मृन्मये । प्रक्षिप्य सकलं सम्यक् सुगुप्तं स्थापयेद्बुधः ॥ बलातैलमिदं ख्यातं सर्ववातविकारनुत् । यथाबलं भिषङ्मात्रां सूतिकायै प्रदापयेत् ॥ या च गर्भार्थिनी नारी क्षीणशुक्रश्च यः पुमान् । क्षीणे वांते मर्महते मथिते पीडिते तथा ॥ भग्नेस्थिन्यभिपन्ने च सर्वथैव प्रयोजयेत् । सर्वानाक्षेपकादींश्च वातव्याधीन्व्यपोहति ॥ प्रत्युग्रधातुपुरुषो भवेच्च स्थिरयौवनः । राज्ञामेतद्धि कर्तव्यं राजमान्यैस्तथा नरैः ॥

अर्थ—खिरेटी की जड का काढा तथा दशमूल का काढा और जों, बेर तथा कुलथी इन का काढा और दूध इन प्रत्येक के आठ २ भाग ले. तैल १, मधुरगण और सैंधानिमक डालके फिर अगर, राल, सरल, देवदारु, मजीठ, चंदन, कूठ,

इलायची, बेर, अंजनवृक्ष, हरड, बहेडा, आवला, जटामांसी, शिलारस, तमालपत्र, तगर, सारिवा, वच, शतावर, असगंध, सोंफ और पुनर्नवा इन का कल्क डालके तेल को पचावे जब सिद्ध हो जावे तब उतारके किसी उत्तम सोने, चांदी के मिट्टी के पात्र में भरके बडे यत्न से धर रखे. यह महाबलातैल संपूर्ण वातविकारों का नाश करे. इस को प्रसूता स्त्री का बलाबल विचारके मात्र देवे. तथा वंध्या स्त्री तथा धातुक्षीण पुरुष, क्षयी, वमन कराया हुआ, मर्म में जिस के चोट लगी हो, हत, मथित, पीडित, हड्डी टूटा हुआ ऐसे रोगियों को देवे यह संपूर्ण आक्षेपकादि वादियों को नाश करे, तथा इस का सेवन करने से धातुपुष्ट और तरुणता होती है. यह तेल राजा को अथवा राजमान्य पुरुष (सेठ, साहूकारों) को बनावे ॥

दूसरा शतावरीतैल

बव्हंघ्रिकामूलरसोथ तैलं दुग्धं पलं प्रस्थयुतं क्रमेण। सश्वेतपुष्पा नवदेवदारु शैलेयमांसीमिलितं समांशम् ॥ तैलावशेषं कथितं समस्तं नारायणं तैलमिदं वदंति। नानानिलापीडितमानुषाणामभ्यंगयोगाद्धितमेतदेव ॥

अर्थ—शतावर की जड का रस, तेल और दूध ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे और वरना, टेंटू, देवदारु, शिलाजीत और जटामांसी ये प्रत्येक चार २ तोले ले कल्क करके तेल में मिलाय तेल सिद्ध करे. इस को नारायण तैल कहते हैं. यह अनेक प्रकार के वातव्याधिपर मालिस करने से हितकारी होवे ॥

तीसरा प्रकार

दुग्धं प्रस्थद्वयं तैलमेकप्रस्थं तथा रसम्। शतावरी वचा कुष्ठं चंदनं देवदारु च ॥ कांकोली धिंटुला रास्ना मंजिष्ठैलारुदंतिका। शैलेयमश्वगंधा च मांसी चिकणिका खिलम् ॥ अर्धार्धपलमानं स्यात्पक्वं मृद्वग्निना शनैः। एकांगयुग्मभग्नास्थिभग्नसंधिं तृषां तथा ॥ कुब्जवामनपंगूनां पानादभ्यंगतस्तथा। वातान्नानाविधान्हंति तैलमेतन्न संशयः ॥ शतावरीतैलमिदं प्रोक्तं बुद्धिविशारदैः ॥

अर्थ—दूध १२८ तोले, तेल ६४ तोले और शतावर का रस ६४ तोले तथा वच, कूठ, चंदन, देवदारु, काकोली, धिंटुली, रास्ना, मजीठ, इलायची, रुदंती, शिला-

जीत, असगंध, जटामांसी और खिरेटी ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. इन का काढा अथवा कल्क करके अर्ध २ पल डालके मंदाग्नि से पचन करावे तो एकांगगत वात, सर्वांगगत वात, भग्नास्थि, संधिभग्न, तृषा, कुब्जवात, वामनत्व तथा पंगुवात इन के पीने से तथा अभ्यंग करने से नाश होय. यह शतावरी तैल अनेक प्रकार के वायु को नाश करे ॥

चौथा प्रकार

शतावरीजातरसं गृहीयाद्यंत्रपीडितम् । प्रभूतं तद्रसं लीढ्वा तैलस्याढकमेव च ॥ दधिक्षीरेण विपचेत् द्रव्याण्येतानि दापयेत् । शतपुष्पा वचा कुष्ठमांसीशैलेयचंदनैः ॥ प्रियंगु पद्मकं मुस्तं ह्रीबेरोशीरकट्फलम् । सैंधवं मधुकं लोध्रं व्रणेयककुचंदनम् ॥ चंडा एला मुरा स्पृक्का नालिकं पद्मकेशरम् । श्रीवेष्टकं सर्जरसं जीवकर्षभकौ सठी ॥ पतंगरेणुका दार्वी कर्चूरं सारिवा तथा । मंजिष्ठा मधुकं चैव द्रव्यैरेतैः पलोन्मितैः ॥ मध्यपादं विजानीयात्तत्र तदवतारयेत् । पथ्ये पाने तथाभ्यंगे नस्ये भोज्ये च दापयेत् ॥ पीड्यमाने तथा वायौ पक्षाघाताधिमंथके । अर्दिते कर्णशूले च ऊरुस्तंभे कटिग्रहे ॥ पवने च शिरःकंपे सूतिकायां प्रदापयेत् । मन्यास्तंभे धनुःकंपे अस्थिभंगे च दारुणे ॥ तथा सर्वांगगे वायौ शुष्यमाणेषु धातुषु । अनार्तक्षीणरेतस्सु वंध्यायां गर्भिणीषु च ॥ वृष्यं पुनर्नवकरं बल्यमारोग्यदं महत् । शतावरीतैलमिदं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ-शतावर की जड का यंत्र में निकाला रस बहुतसा लेकर उस में २५६ तोले तेल, दही, दूध और वच, कूठ, जटामांसी, शिलाजीत, चंदन, प्रियंगु, पद्माख, मोथा, नेत्रवाला, खस, कायफल, सैंधानिमक, मुलहटी, लोध, कलियारी, लालचंदन, मूषाकर्णी, इलायची, एकांगीमुरा, स्पृका, भसींडा, कमल की केशर, श्रीवेष्टक (धूप), राल, जीवक, ऋषभक, कचूर, पतंग, रेणुकबीज, दारुहलदी, कचूर, सारिवा, मजीठ, मुलहटी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. इन का कल्क अथवा काढ को मिलायके मध्यम भाव से तैल सिद्ध करे. यह तेल वादी की पीडा को, पक्षाघात, अधिमंथ, अर्दित, कर्णशूल, ऊरुस्तंभ, कटिग्रह, कंपवायु,

प्रसूत, मन्यास्तंभ, धनुर्वात, कंपवात, अस्थिभंग, सर्वांगवात, धातु का सूखना, धातु-क्षीणत्व तथा वंध्यात्व इनपर पथ्य के साथ पीने से देह में मालिस करने से नस्य और भोजन इन में देवे तथा यह शतावरीतैल वृष्य, वयस्थापक, बल और आरोग्य का देनेवाला तथा गर्भिणी को हितकारी है॥

चंदनादितैल

चंदनं पद्मकं कुष्ठमुशीरं देवदारु च। नागकेसरपत्रैलात्वङ् मांसी तगरं जलम्॥ जातीफलं घोटफलं कुंकुमं जातिपत्रिका। नखं कुंदरु कस्तूरी चंडा शैलेयमार्द्रकम्॥ पतंगं पुष्करं मुस्ता रक्त-चंदनसारिवा। सठी कर्पूरमंजिष्ठा लाक्षा यष्टिप्रियंगुभिः॥ श-तपुष्पा वरी मूर्वा अश्वगंधा महौषधम्। पद्मकेसरश्रीवेष्टरसा-गरुहरेणुभिः॥ स्पृक्कालवंगकंकोलद्रव्यैरेभिर्द्विकार्षिकैः। दश-मूलकषायस्य षड्भागाः पयसस्तथा॥ यवकोलकुलित्थानां बलामूलस्य चैकतः। निक्काथ्य क्काथो भागश्च तैलस्य च च-तुर्दश॥ ततः पक्कं विजानीयात् क्षिप्रं तदवतारयेत्। शुभे पात्रे विनिक्षिप्यमौषधैः ससुगंधिभिः॥ प्रतिवासं ततः कार्यमेषां संयोजने विधिः। प्रायोयं सुकुमारीणामीश्वराणां सुखात्मनाम्॥ स्त्रीणां स्त्रीवृंदगर्भाणामलक्ष्मीकलिनाशनम्। अशीतिं वातजा-न्रोगान्वातरक्तं विशेषतः॥ सूतिकाबालमर्मास्थिहतक्षीणेषु पूजितम्। जीर्णज्वरं सदाहं वा शीतं वा विषमज्वरम्॥ शो-षापस्मारकुष्ठघ्नं वंध्यायां च सुखप्रदम्। व्याधितानां हितार्थाय ये तु कंडूतिपीडिताः॥ विशेषाद्रूक्षदेहानां श्वित्रिणां च विशे-षतः। सर्वकालप्रयोगेण कांतिलावण्यपुष्टिदम्॥ विनिर्मित-मिदं तैलमात्रेयेण महर्षिणा। न चास्मात्सहसा रोगः प्रभव-त्यूर्ध्वजत्रुजः॥ अस्य प्रयोगात्तैलस्य जरा न लभते नरम्। चंदनाद्यमिदं तैलं लोकानां च हितं मतम्॥

अर्थ—चंदन, पद्माख, कूठ, खस, देवदारु, नागकेशर, पत्रज, इलायची, तज, जटामांसी, तगर, नेत्रवाला, जायफल, घोटफल, केशर, जावित्री, नख, कुंदरू,

कस्तूरी, अजमायन, पत्थर का फूल, अदरख का रस, पतंग, पुहकरमूल, नागरमोथा, लाल चंदन, सारिवा, कचूर, कपूर, मजीठ, लाख, मुलहटी, कुटकी, सोंफ, शतावर, मूर्वा, असगंध, सोंठ, कमल की केशर, श्रीवेष्ट, पाढ, काली अगर, रेणुकबीज, स्पृक्का, लौंग और कंकोल ये प्रत्येक दो दो तोले लेय. इन के काढे में दशमूल का काढा छः भाग, दूध ६ भाग और जौं, बेर, कुलथी और खिरेटी ये एक एक भाग. तथा काढे का चौथा भाग तेल डाले. सब को एकत्र कर अग्निपर पचन करे तो यह तैल सिद्ध होय. इस को उतारके उत्तम पात्र में भरके रख देवे बहुधा यह चंदनादि तैल सुकुमार, धनाढ्य (सेठ साहूकार) और सुखी मनुष्यों को, स्त्रियों को तथा स्त्रियों के गर्भ के विषय में उत्तम है. यह अस्सी प्रकार के वातरोग, वातरक्त, प्रसूतरोग, बालक, मर्महत, अस्थी जिस की टूट गई हों और क्षीण इन को हितकारी है. तथा जीर्णज्वर, दाहज्वर, शीतज्वर, विषमज्वर, शोष, मृगी और कुष्ठ इन को नाश करे. तथा वंध्या स्त्रियों को हितकारी, व्याधि, खुजली, देह की रूक्षता और सपेद कोढवाला इन को विशेष करके हितकारक है. इस का सर्वकाल उपयोग करने से लावण्य और पुष्टि इन को देवे. यह आत्रेय ऋषि ने निर्माण करा है इस तेल के सेवन करने से गरदन के ऊपर के भाग के रोग और बुढापा ये कदाचित् नहीं होते. यह लोकों को परमहितकारी है॥

माषादितैल

माषस्याद्धाढकं देयं तुलार्द्धं दशमूलतः । पलानि छागमांसस्य त्रिंशद् द्रोणेंभसः पचेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तं कषायमवतारयेत् । प्रस्थे द्वे तिलतैलस्य पयो दद्याच्चतुर्गुणम् ॥ जीवनीयानि मंजिष्ठचव्यचित्रककट्फलम् । सव्योषं पिप्पलीमूलं रास्नामलकगोक्षुरम् ॥ आत्मगुप्ता तथैरंडः शताह्वा लवणत्रयम् । देवदार्वमृता कुष्ठमश्वगंधा वचा शठी ॥ एतैरक्षमितैः कल्कैः पाचयेन्मृदुनाग्निना । पक्षाघातार्दिते पुंसि हनुस्तंभे तथार्दिते ॥ कर्णशूले शिरःशूले तिमिरे च त्रिदोषजे । पाणिपादशिरोग्रीवाश्रवणे मंद एव च ॥ कलायखंजे पंगौ च गृध्रस्यामवबाहुके । पाने बस्तौ तथाभ्यंगे नस्ये कर्णादिपूरणे ॥ तैलमेतत्प्रशंसंति सर्ववातविकारनुत् । महामाषादिनामेदं भाषितं मुनिभिः पुरा ॥

अर्थ–उडद १२८ तोले, दशमूल ५१२ तोले, मेंढे का मास १२० तोले इन को १०२४ तोले जल में डालके काढा करे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके

छान लेवे. फिर इस में तिली का तेल १२८ तोले, दूध २५६ तोले, जीवनीयगण की औषधी, मजीठ, चव्य, चित्रक, कायफल, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, रास्ना, आवले, गोखरू, कौंच के बीज, अंड की जड, शतावर, सैंधानिमक, बिड, कचिया-निमक, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध, वच और कचूर ये प्रत्येक औषध एक२ तोले ले इन का कल्क करके इस को तेल में मिलाय देवे. फिर इस को मंदाग्निपर रखके पचन करे तो यह तेल सिद्ध होय यह पक्षाघात से पीडित रोगी को हितकारी है. तथा हनुस्तंभ, अर्दितरोग, कर्णशूल, मस्तकशूल, त्रिदोष, तिमिर, हाथ, पैर, मस्तक, मन्या, कान का बधिरपना, कलायखंज, पंगुवात, गृध्रसी और अपबाहुक इनपर हितकारी है तथा यह पीने में बस्तिकर्म, अभ्यंग, नस्य और कान में डालना इन में इस तेल की बहुत प्रशंसा करते हैं यह संपूर्ण वातविकारनाशक है. यह महामाषा-दिनामक तैल पहले मुनियों ने कहा है ॥

महानारायणतैल

तिलतैलं समादाय चतुराढकसंमितम् । पंचपल्लवकल्केन शोध-येद्दोषशांतये ॥ तत्राजं दुग्धमथवा गव्यं तैलसमं पचेत् । शता-वरीरसं चापि तैलतुल्यं पचेद्भिषक् ॥ दशमूली बला रास्ना शि-ग्रूत्पलपुनर्नवाः । शेफालिका नागबलातिबला च प्रसारिणी ॥ अश्वगंधासहचरौ दर्भमूलं करंजकः । खदिरश्चंदनो लोध्रं वचा शनपलांशकम् ॥ ककुभैरंडवरुणशालयुग्मकटंभराः । शि-रीषः शिखरी वासा हिंस्राजंबु बिभीतकम् ॥ कांचनारः कपि-त्थश्च पारिभद्रः प्रियालकम् । पाषाणभेदसंपाकदुग्धिका दा-डिमीफलम् ॥ उदुंबरः सतला च कन्यका मालती त्वचा । मा-धवी नरमूलं च यवकोलकुलत्थकम् ॥ आत्मगुप्तार्ककार्पासबीजं वत्सादनी स्नुही । केतकी मूलधत्तूरलांगली गर्दभांडकम् ॥ चि-त्रकं च महानिंबं पंचवल्कलमेव च । मुंडी टंकारिमुसली हंसपा-दी विशल्यकम् ॥ एषां दश पलान् भागान् वारिण्यष्टगुणे पचे-त् । पादशेषं परिस्राव्य तत्र तैलं पुनः पचेत् ॥ छागो मेषश्च ह-रिण एणश्च बहुशृंगकः । शशः शल्यः शिवा गोधा सिंहो व्या-घ्रश्च भल्लुकः ॥ वन्यो वराहः खड्गी च माहिषो घोटकस्तथा ।

कपिर्बभ्रुर्बिडालश्च मूषकश्चोरुदर्दुरः ॥ वर्तिकास्तित्तिरिर्लावः खंजरीटश्चकोरकः । उलूको नीलकंठश्च वनकुक्कुट एव च ॥ गृध्रश्च गरुडो हंसश्चक्रः कारंडवोपि च । कपोतः सारसः क्रौंचो वन्यः पारावतस्तथा ॥ रोहितो मद्गुरश्चापि शिलींध्रः शृंगकस्तथा । इल्लिसो गर्गरो वर्मिः क्रथिका कविकापि च ॥ महामत्स्यः कच्छपश्च शिशुमारश्च सांकुचिः । मकरो घंटिकाकारस्तदलाभे तु गोधिका ॥ यथालाभममीषां च क्वाथं तैलसमं पचेत् । रास्नाश्वगंधा मिशिदारु कुष्ठपर्णी चतुष्कागुरुकेसराणि ॥ सिंधूत्थमांसी रजनीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंदनं च । एला सयष्टी तगराब्दपत्रं भृंगोष्टवर्गस्तु वचा पलाशी ॥ स्थौणेयवृश्चीवकचोरकाख्यं मूर्वा त्वचं कट्फलपद्मकं च । मृणालजातीफलकेतकाख्यं सनागपुष्पं सरलं मुरा च ॥ जीवंतिकोशीरवरास्तथैव दुरालभा वानरिका नखश्च । कैवर्तमुस्तार्जुनतिक्तकं च वाताम खर्जूरकतुंबराश्च ॥ सधातकीग्रंथिकपर्पटाश्च पटोलहेमाह्वजयंतिका च । त्रायंतिकालंबुषशक्रवीजरसांजनाभात्रिवृतारुणाश्च ॥ द्राक्षाकणाद्रोणपुनर्नवाश्च कौंती कृमिघ्नो हयमारकश्च । नीलोत्पलं पद्मककारवीभ्यां रंभानलो गोक्षुरकः क्षुरश्च ॥ कंकोलकालीयकुसुंभपुष्पं तुरुष्ककाश्मीरकासिक्थकं च । लवंगकर्पूरसपालकांडकस्तूरिकावालकमंबरं च ॥ कल्कानमीषां विपचेत्सुवैद्यः पृथक् पृथक्कर्षयुगोन्मितानाम् । शुभे च नक्षत्रमुहूर्तलग्ने संतोष्य विप्रांश्च भिषग्वरांश्च ॥ संपूज्य नारायणनामधेयं देवं त्रिनेत्रं जगतामधीशम् । पात्रे तु हेम्नः खलु राजते वा ताम्रेथ वा लोहमयेपि रक्षेत् ॥ अभ्यंजनेंजने नस्ये निरूहे चावगाहने । पाने चैतद्यथाव्याधि प्रयुंजीत चिकित्सकः ॥ बहुनात्र किमुक्तेन तैलमेतत्प्रयोजितम् । अवश्यं वातजान् व्याधीनाशितीनपि नाशयेत् ॥ एतस्याभ्यासतो जंतोर्जरा जातु

न जायते । पतंति वलयो नांगे पलितं नैव जायते ॥ नेत्रे तेजश्च नितरां गरुडस्येव जायते । नोच्चैः श्रुतिर्न बाधिर्यं कर्णनादो न जायते ॥ पाणिकंपः शिरःकंपः प्रलापश्च न जायते । बुद्धिभ्रंशो न जायेत तस्य स्यात्कर्मपाटवम् ॥ यथा जलेन सिक्तस्य शाखिनः पल्लवादयः । वर्धंते धातवस्तद्वद्देहिनोनेन नित्यशः ॥ आमगर्भं त्यजेद्या तु सूतिकासृक्स्रुता च या । या बहुप्रसवक्षीणा ताभ्य एतद्धितं परम् ॥ वंध्या च लभते पुत्रं गर्भपातो न जायते । योनिरोगाः प्रणश्यंति प्रदरश्च प्रशाम्यति ॥ अस्मात्तैलवरादन्यत् कुत्रचिन्नास्ति भेषजम् । बल्यं वृष्यं बृंहणं च रसायनमिदं महत् ॥ पुरा देवासुरे युद्धे दैत्यैरभिहतान्सुरान् । भिन्नान्भग्नास्थिकान्विद्धान्पिच्चितान्व्यथयार्दितान् ॥ दृष्ट्वा हिताय देवानां नराणां चाब्रवीदिदम् । तैलं नारायणो देवो महानारायणाभिधम् ॥

अर्थ–तिल्ली का तेल १०२४ तोले लेकर उस को वड, पीपल, आंब, जामुन और पापरी इन के कल्क से शुद्ध करे फिर तेल में गौ का अथवा बकरी का दूध शतावर का रस तेल के बराबर मिलावे तथा दशमूल, खिरेटी, प्रसारणी, रास्ना, सहजना, कमल, पुनर्नवा, निर्गुंडी, नागबला, अतिबला, असगंध, पियावासा, डाभ की जड, कंजा, खैर, चंदन, लोध, वच, विजयसार, पलास, कोह की छाल, अंड की जड, वरना की छाल और बडा शाल, कुटकी, सिरस, ओंगा, अडूसा, जटामांसी, जामुन, बहेडा, कचनार, कैथ, नीम की छाल, चिरोंजी, पाषाणभेद, अमलतास, दुद्धी, अनार, गूलर, थूहर का भेद, सातला, ग्वारपट्ठा, चमेली, दालचीनी, मधुमालती, नरकचूर, जौं, बेर, कुलथी, कौंच के बीज, आक, कपास के बीज (बिनोले), गिलोय, थूहर, केतकीमूल, धतूरे के बीज, कलियारी, पारसपीपल, चित्रक, बकायन, पीपल, बड, पाखर, गूलर और बेत, गोरखमुंडी, टंकारी, मुसली, हंसपदि (छुई मुई), गुलघोटी ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेवे. इन का अठगुने जल में काढा करके जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस में उस तेल को मिलायके बकरा, मेढा, हरिण, काला हरिण, साबरसींग, शशा, सेह, गीदड (स्यार), गोधा, सिंह, बघेरा, रीछ, जंगली सूअर, गेंडा, भैंसा, घोडा, बंदर, नौला, बिलाव, मूषा, बडा मेडका, बटेर,

तीतर, लवा, खंजन, चकोर, घूघू, नीलकंठ, वनमुरगा, गीध, गरुड (गीध का भेद), हंस, चकवा, कारंडव, कपोत (पिंडुकिया), सारस, क्रौंच, वन का कबूतर ये पक्षी, रोहित, मुद्गर, शिलींध्र, सिंगिया, इल्लिस, गर्गर, वर्मि, क्वथिक, कविक और महामच्छ ये सब जात की मछली, कछुआ, सूस, सांकुची, मगर, घडियाल (इस के न मिलने में गोह लेवे) इन में से जो जो जीव मिले इन के मांसरस को तेल के साथ पचावे. तथा रास्ना, असगंध, सोंफ, दारुहलदी, कूठ, सालपर्णी, पृष्ठपर्णी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, अगर, केशर, सैंधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, शिलाजीत, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहटी, तगर, नागरमोथा, पत्रज, भांगरा, अष्टवर्ग की सब औषध (जीवक, ऋषभ, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, कांकोली, क्षीरकांकोली), वच, पलास, गठिवन, पुनर्नवा, कचूर, मूर्वा, दालचीनी, कायफल, पद्माख, कमल की जड, जायफल, केतकी, नागदौन, सरल, एकांगी, मुरा, गिलोय, खस, हरड, बहेडा, आवला, धमासा, कौंछ के बीज, नखद्रव्य, बकायन, कैवटीमोथा, कोह, चिरायता, बदाम, खजूर, तुंबरू, धाय के फूल, पीपरामूल, पित्तपापडा, पटोलपत्र, लाल कमल, हलदी, त्रायमाण, लजालू, इन्द्रजो, सुरमा, बबूर के बीज, निसोथ, वरना, दाख, पीपल, द्रोण का निमक, पुनर्नवा, रेणुकबीज, वायविडंग, कनेर, नीले कमल, पद्माख, कलौंजी, केले का कंद, चित्रक, गोखरू, तालमखाने, कंकोल, दारुहलदी, कसूम, शिलारस, केशर, मोम, लौंग, कपूर, पालकांड, कस्तूरी, नेत्रवाला, अंबर ये प्रत्येक औषध दो दो तोले ले इन का कल्क पृथक् २ करके उस तेल में डालके मंदाग्नि से पचन करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके वस्त्र में छान उत्तम दिन (अर्थात् शुभ घडी, लग्न, वार, तिथि, नक्षत्र) में देव ब्राह्मण और वैद्य इन का पूजन कर तथा श्रीमन्नारायण और महादेव का पूजन कर इस तेल को सुवर्ण के, चांदी के, तांबे के अथवा लोहे के पात्र में भरके उस पात्र को जापते से रक्षणपूर्वक एकांत में रख देवे. इस को देह में लगाना, अंजन, नस्य, निरूहबस्ती, स्नान और पीना इन में जैसी व्याधि होवे. उसी के अनुसार देवे. बहुधा करके इस तेल से अवश्य ही अस्सी प्रकार के वादीन का नाश होय. इस तेल के निरंतर सेवन करने से उस को वृद्धावस्था कदाचित् नहीं आवे. तथा अंग की बली (गुजलट) और बाल कभी सपेद नहीं होवे. गरुड के समान नेत्रों में तेज होवे. धीरे बोलने से सुननेवाला, बहरा नहीं हो. कर्णनाद रोग नहीं हो. हाथ, शिर इन का हिलना कदाचित् नहीं हो. प्रलापक कदाचित् न होवे. बुद्धिभ्रंश नहीं हो. कर्म करने में कुशल होवे. जैसे जल के सींचने से वृक्ष के पत्ते, डाली आदि बढते हैं उसी प्रकार इस तेल के लगाने से नित्य देह की धातु बढते हैं,

जिस स्त्री के गर्भपात होता है. तथा जिस स्त्री के प्रसूतसमय रुधिर अधिक और जो बहुत बालकों के होने से क्षीण हो गई ऐसी स्त्रियों को परम हित है. वंध्या स्त्री गर्भ को प्राप्त हो और इस के प्रताप से कदाचित् गर्भपात नहीं होवे. योनिरोग और प्रदर नष्ट होवे. इस तेल से परे दूसरी उत्तम औषधी नहीं है. यह बल, वृष्य, बृंहण और अत्यन्त रसायन है, पहले देव और दैत्यों के संग्राम में दैत्योंकरके मारे गये जो देवता तथा जिन की हड्डी टूट गई तथा जो पिच गये और व्यथा करके पीडित उन देवताओं के हित के वास्ते और संपूर्ण प्राणियों की दया विचारके श्रीमन्नारायण ने यह **महानारायण** तैल कहा है ॥

दूसरा प्रकार

बलाश्वगंधा बृहती श्वदंष्ट्रा स्योनाकवात्याल्कपारिभद्रा। क्षुद्रा कठिल्लातिबलाग्निमंथरास्नारणीकः कणिकच्छुराश्च ॥ निर्गुंडि-कैरंडकुरंटकानां मूलानि वर्षासरणीयुतानि। मूलं विदध्याद्द-शपाटलानां संकुट्य पादांशवतोद्धृतानाम् ॥ द्रोणैरपामष्टभिरेव पक्त्वा पादावशेषेण रसेन तेन। तैलाढकाभ्यां समदुग्धमत्र गव्यानि दद्यादथ वाज्यदुग्धम् ॥ दद्याद्रसं चैव शतावरीणां तैलं च तुल्यं पुनरेव तत्र। पक्त्वा दिनैकं कृतवस्त्रपूतं कल्कानि चैषां हि समावपेच्च ॥ रास्नाश्वगंधामिशिदारुकुष्ठपर्णीतुरुष्का-गरुकेसराणि। सिंधूत्थमांसी रजनीद्वयं च शैलेयकं पुष्करचंद-नानि॥ एला सयष्टी तगरांबुपत्रं भृंगाष्टवर्ग्यं च जया पलाशम्। वृश्चीव ऐलेयकचोरकाख्यं मूर्वा त्वचा पुष्करपद्मकं च ॥ मृ-णालजातीफलकेतकी च सनागपुष्पं सरलं सुरा च। जीवंतिका चंदनकं ह्युशीरं दुरालभा वान्नरिका नखं च ॥ कैवर्तकं ताल-शिरः सतिक्तं खर्जूरिमुस्तं समभागमेषाम्। एतैः समैः सार्ध-पलप्रमाणैर्भागानथाष्टौ किल कालमेष्यः॥ एणः कुरंगो हरिणो मयूरो गोधा शशः शक्रकचक्रवाकौ। वर्तीरलावौ वरतित्तिरी च सत्सारचक्रौ चककंबुवर्णः ॥ आनूपकूर्मा इह मांसपुष्टाः क्रमात्क्षिपेच्चात्र यथैव लाभम्। रोहीतकोथो शववेत्रनामा

कसाढवौ मुद्गरशृंगिके च ॥ पाठीनकालीयकतोडिका च सरोखरा ये कुरुदादयश्च । ये चापि तोये शिशुमारमुख्या लभ्याश्च येश्व भ्रमता भुजंगाः॥अन्येपि ये भूचरखेचराश्च पूर्णा अमीषां क्रमशोत्र योज्याः । सुताम्रपात्रेप्यथ मृत्तिका च कर्पूरकाश्मीरमृगांडजं वा ॥ दद्यात्सुगंधाय वदंति केचित्प्रक्केददौर्गंध्यविनाशनाय । वदंति केचिद् द्विपदः समेतं शुभे निधायाथ मुहूर्तलग्ने ॥ संतोष्य विप्रान् भिषजोर्थिनश्च सुभोजने यज्ञघृतं तथैव । पाने च नस्ये च निरूहणे च भोज्यं प्रदेयं तत एव नूनम् ॥ अभ्यंगमादौ च सदा प्रशस्तं निर्वाप्यते कर्मसु केषु चिद्वम्।उन्मादशोषक्षतरक्तपित्तश्वासाभ्रमूर्च्छादिषु मूर्च्छितेषु॥ कासाग्निवाता हनुमूलदंतकूर्मीष्ठग्रुम्नीहिसतोददाहान् । सतालुमूलं श्रवणाक्षिशूलं बाधिर्यमुच्चज्वरपीडितं च ॥ मंदेंद्रियत्वं च तथाग्निमांद्यं नष्टप्रशुक्रत्वमथांगकंडूः । निहंति सत्वं न गुणप्रभावात्कटिग्रहापस्मृतिगृध्रसीं च ॥ पक्षाभिघातं चरणाभिघातं हस्ताभिघातं च शिरोग्रहं च । प्रक्षीणमुग्रं सकलप्रमेहान् नासाक्षिकर्णप्रभवान् विकारान् ॥ वातादिजातान् किल भूतजातान् कृत्यादिजातान् ग्रथितान्विकारान् । रोगः स नास्त्येव नरस्य देहे नानेन शांतिं समुपैति मोहः ॥ सद्योव्रणानस्थि विचूर्णितं वा नाडीव्रणान्वापि च योजयित्वा । सुवर्णवर्णं वितनोति रूपं नारायणाख्योखिलतैलराजः ॥ वंध्यः पुमान् वापि वरांगना वा सुपुत्रमाप्नोति विलेपतोस्य । सिद्ध्यत्यनेनैव नियोजितेन निदाघदग्धः प्रहतोपि वृक्षः ॥ अन्यस्य का का भाणितिर्निरस्य रोगस्य जंतोरपरस्य चापि । नारायणोक्तं तदिदं तु तैलं नारायणं नाम ततः प्रसिद्धम् ॥

अर्थ—बला (खिरेटी, वरियारा) की जड, असगंध, बडी कटेरी, गोखरू, टेंटू, सहदेई, नीम, छोटी कटेरी, करेला, अतिबला (कंगही), अरनी, रास्ना, दूसरी

अरनी, कौंच के बीज, निर्गुंडी, अंड की जड, पियावांसा, काला जीरा, प्रसारणी, दशमूल और पाढ इन की जड इन को कूटकर ८१९२ तोले जल में उन का काढा करके जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. इस में५१२तोले तेल मिलावे और इतना ही गौ तथा बकरी का दूध मिलावे. फिर अग्निपर रखके औटावे. जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान ले और इस में रास्ना, असगंध, सौंफ, दारुहलदी, कूठ, शालपर्णी, शिलारस, काली अगर, नागकेशर, सैंधानिमक, जटामांसी, हलदी, दारुहलदी, पत्थर का फूल, पुहकरमूल, चंदन, इलायची, मुलहटी, तगर, नेत्रवाला, पत्रज, भांगरा, जीवक, ऋषभक, मेदा. महामेदा, ऋद्धि, वृद्धि, काकोली, क्षीरकाकोली, जया (अरनी), पलास, पुनर्नवा, एकवालुक, चोरक, मूर्वा, दालचीनी, कमलकंद, पद्माख, कमल की जड, जायफल, केतकी, नागदौन, देवदारु, सरल, सुरा (चावलों की बनी हुई दारु), जीवकशाक, पीला चंदन, खस, धमासा, कौंच के बीज, नख, बकायन, ताड के मस्तक का गाभा, चिरायता, खजूर, भद्रमोथा ये प्रत्येक छः छः तोले लेय तथा तगर आठ तोले, मजीठ ८ तोले इन सब का कल्क करे इस को तथा हिरन, कुरंग, काला हिरन, मोर, गोधा, ससा, शक्रक, चकवा, बटेर, लवा, तीतर, सारस, क्रौंच, बगला और जल समीप रहनेवाले जीव, कछुआ तथा रोहिस, मद्गुर, शवनेत्र, कस, आढव, सिंगिया, पाठीन, कालीयक, तोडिका इत्यादि सरोवर की मछली तथा उस २ स्थान के कुरुदादि मत्स्य तथा सूंस से आदि ले मिले जो जल के जीव, बिल में रहनेवाले जीव (सर्पादिक) तथा आकाश में विचरनेवाले पक्षी और पृथ्वी में विचरनेवाले जीव इन में से जो मिल सके उन सब का मांसरस ले उस तेल में मिलायके तेल सिद्ध करे जब सिद्ध हो चुके तब छानके तांबे के पात्र में भरके रख देवे. अथवा मिट्टी के चिकने बासन में भरके रख देवे और उस पात्र में सुगंध करने के वास्ते और दुर्गंध दूर करने को कपूर, केशर और कस्तूरी ये पदार्थ डालके शुभ मुहूर्त देख ब्राह्मण, देवता और याचक जन इन का पूजन करके फिर इस तेल को पान, नस्य, निरूहबस्ति इन में देवे. यह मालिस करने में बहुत श्रेष्ठ है और उन्माद, शोष, क्षत, रक्तपित्त, श्वास, भ्रम, मूर्छा, खांसी, अग्निवात, हनुमूल, दंतमूल, कृमि, इष्टद्युम्नी, पीडा, दाह, तालुशूल, कर्णशूल, नेत्रशूल, बहरापना, बढा हुआ ज्वर, इन्द्रियों की मंदता, धातुक्षय, खुजली, कटिग्रह, अपस्मार, गृध्रसी, अर्धांगवायु, हस्ताभिघात, पादाभिघात, मस्तकशूल, कृशत्व, सर्वप्रमेह, नाक, कान और नेत्र इन की व्याधि, सर्ववातव्याधि, भूतोन्माद, कृत्या का उन्माद, गांठविकार, सद्योव्रण, अस्थिभंग और नाडीव्रण इत्यादिकों को नष्ट करे. इस तेल के लगाने से न जानेवाली असाध्य व्याधिभी दूर होवे. तथा यह सुवर्ण के समान कांति करे और पुरुष तथा स्त्रियों का वंध्यापना नष्ट

करे. बहुत कहने से क्या है यह तैल गरमी से जले हुए वृक्षों को सिंचन करने से तथा उन के लगाने से सजीवन हो जावे. फिर अन्य और ही प्रकार के रोग नाश करे इस में कहना ही क्या है. यह तेल श्रीमन्नारायण ने अपने श्रीमुख से कहा है. इसी वास्ते इस की **नारायणतैल** नाम करके प्रसिद्धि है ॥

जंबूकाद्यतैल

वृद्धं शृगालमादाय पादोक्तोदरमध्यगा। त्यक्त्वा शेषं च संगृह्य दत्त्वा वारि चतुर्गुणम् ॥ चतुर्भागावशेषं च ग्राह्यं तैलसमं पचेत्। अजश्चर्मविनिर्मुक्तो त्यक्त्वा शृंगशिरादिकम् ॥ चरणायुधमांसं च जले द्रोणद्वये पचेत्। तेन पादावशेषं च पाचयेच्च पृथक् पृथक् ॥ शतावरीणां च रसं तैलतुल्यं प्रदापयेत्। छागं गव्यं पयः शुक्तं मस्तु वारुणि चोत्तमम् ॥ पात्रमात्रेण संग्राह्यं ततोनंतरमौषधम्। शालिपर्णी पृष्ठपर्णी बला च बहुपुत्रिका ॥ एरंडस्य च मूलानि बृहत्या पूतिकस्य च। गवेधुकस्य मूलानि तथा सहचरस्य च ॥ प्रसारिण्याश्वगंधा च तालमूली पुनर्नवा। रास्ना गोक्षुरकं पाठा पाटला पारिभद्रकम् ॥ अर्कमूलं बृहद्दंती कटभी कांचनारिका। चक्रमर्दमपामार्गमंकोटबैल्वमूलकम् ॥ स्योनाकनक्तमालाब्दवासानंतापटोलकम्। मेग्रुडी मुंडिका तुंबी लांगली शिग्रु पीलुका ॥ खर्जूरी कासमर्द च गुंजामूलं विधारकम्। अमृता शंखपुष्पी च भृंगराजककुंदरैः ॥ वटश्च कुटजोदीच्यमदनं वान्नरी स्नुही। महानिंबो विशाला च शिरीषः करवीरका ॥ पलं पलं च संगृह्य कषायं साधयेत्सुधीः। चतुर्भागावशेषं तु तैलं तुल्यं च दापयेत् ॥ चंदनं देवकाष्ठं च कुष्ठं मांसी पुनर्नवा। पूतीकरास्ना त्रिवृता रेणुका शिग्रुगुग्गुलुः ॥ चातुर्जातकमंजिष्ठा हरिद्रे द्वे च पुस्तकम्। धातकीपुष्पपतंगं तथा क्षारद्वयं वचा ॥ एला शैलेयकं व्योषं लवणानि च पंचकम्। एभिर्द्रव्यैः पलार्द्धं स्याच्छनैर्मृद्वग्निना पचेत् ॥ सौगंधार्थं

च दातव्यं लवंगं जातिकाफलम्। कस्तूरी घनसारं च सिह्लारं नखवालकम्॥ कृष्णागरु नतं चैव पत्रकं जातिपत्रिका। यथालाभं च संगृह्य योजयेत्तत्र तद्बुधः॥ तैलेनानेन नश्यंति सर्वरोगाः समीरणाः। अशीतिर्वातजा रोगाः शोफशूलकटिग्रहाः॥ कुब्जानामथ पंगूनां वामनानां तथैव च। अधोभागे च ये वाताः शिरोमध्यगताश्च ये॥ मन्यास्तंभे हनुस्तंभे वातरोगे गलग्रहे। यस्य शुष्यति चैकांगं ये च भग्नास्थिसंधयः॥ पक्षाघातेषु सर्वेषु आर्दिते च हनुग्रहे। मंदश्रुतौ च श्रवणे तिमिरे च त्रिदोषजे॥ हृच्छूले पार्श्वशूले च बाधिर्ये मूकमिम्मिणे। कामलापांडुरोगे च खल्लीशूलकटिग्रहे॥ हस्तकंपे शिरःकंपे गात्रकंपे शिरोग्रहे। कलायखंजगृध्रस्यामवबाहुं च नाशयेत्॥ बाधिर्यै कर्णनादे च सर्ववातविकारनुत्। दंडापतानकश्चैव मन्यास्तंभे विशेषतः॥ हनुस्तंभे प्रशस्तं स्यात्सूतिकावातनाशनम्। बाल्ये मांसप्रदं चैव शुक्राग्निबलवर्धनम्॥ अंत्रवृद्धिमंडवृद्धिमपचीं नाशयेत्ततः। योनिशूलमसृग्दोषमाध्मानं विनिहंति च॥ वातशोणितदुष्टानां वातोपहतचेतसाम्। अश्वानां वातभग्नानां कुंजराणां नृणां तथा॥ तैलमेतत्प्रयोक्तव्यं सर्ववातविकारनुत्। अस्थिमेदोगता वाता क्षीणाश्चाशोभगंदराः॥ भूतग्रहपिशाचाश्च तथा दुष्टग्रहानपि। दद्रूविचर्चिकापामाकुष्ठकंडूव्रणापहम्॥ शृगालाद्यमिदं ख्यातं बहुपीडां च नाशयेत्। एतत्तैलेन नश्यंति रोगाः सर्वे विशेषतः॥

अर्थ–एक स्यार को मार उस के हाथ, पैर और पेट की आंतडी निकालके पटक देवे. फिर उस मांस के बारीक २ टुकडे करके उस में मांस से चौगुना जल डालके उस में से चतुर्थांश रस छानके लेवे. उस में उस रस के समान तेल डालके पचावे फिर बकरे का चमडा, मस्तक, पांव निकाल के उस के काढे में और मुरगे के मांस के रस में अलग २ पचावे. फिर शतावर का रस तैल के समान, भेड का दूध, छाछ का पानी, उत्तम मद्य ये सब तैल के समान डालके शालिपर्णी, पृष्ठिपर्णी, बला, छोटी

शतावर, अंड की जड, बृहती, पूतिक और गवेधुक की जड, सहचर की जड, प्रसारिणी, अश्वगंधा, काली मुसली, पुनर्नवा, रास्ना, गोखरु, पाठा, पाटला, नीम, आक की जड, बडी दंती, कटभी, नागकेशर, चक्रमर्द, ओंगा, अंकोट व बेल की जड, स्योनाक, करंज, नागरमोथा, अडूसा, धमासा, कडुआ परवल, निर्गुंडी, मुंडी, कडुआ कद्दू, लांगली, शिग्रु, पीलुका, खिजूर, कासिवदा, चोंटली की जड, विधारक, गिलोय, शंखपुष्पी, भृंगराज, कुंद, वट, कुट, वाला, मदन, कौंच, स्नुही, महानिंब, वृंदावन, शिरीष, करवीर (मनशील) ये प्रत्येक चार २ तोले लेके इन का चतुर्थांश काढा करके तेल के समान डाले. फिर चंदन, देवदारु, कोष्ठ, जटामांसी, पुनर्नवा, करंज, रास्ना, त्रिवृता, रेणुकबीज, शिग्रु, गुग्गलु, दालचीनी, इलायची, तमालपत्र, नागकेशर, मजीठ, हलदी, दारुहलदी, नागरमोथा, धातकीपुष्प, पतंग, जवाखार, टंकणखार, वच, इलायची, शिलारस, सोंठ, काली मिरच, पीपल, पाचों निमक ये प्रत्येक दो २ तोले लेके इन का कल्क करके उस तेल में डालके मंदाग्नि से पचाके सिद्ध करे और सुगंधि के वास्ते लौंग, जायफल, कस्तूरी, कपूर, शिलारस, नख, वाला, काला अगर, तगर, तमालपत्र और जायपत्री इन में से जो मिल जाय उस तेल में डाले. यह तेल सब रोग, अस्सी तरह के वायु, अफरा, शूल, कटिग्रह, कुब्जवात, पांगलपना, वामनवात, अधोभागगत वातरोग, मस्तक का वातरोग, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ, वातरोग, गलग्रह, एकांगवात, अस्थिभंग, संधिभंग, पक्षघात, अर्दित, हनुग्रह, बहरापन, मूकवात, मिम्मिणवात, कामला, पांडुरोग, खल्लीवात, शूल, कटिग्रह, हस्तकंप, शिरःकंप, गात्रकंप, मस्तकशूल, कलायखंजवात, गृध्रसी, अवबाहुक, बहरापन, कर्णनाद, संपूर्णवात, दंडापतानक, मन्यास्तंभ, हनुस्तंभ व सूतिकावात इन का नाश करता है. बालपन में देह में मांस को बढाता है, बल, शुक्र इन को बढाता है, अंडवृद्धि, अंत्रवृद्धि, अपची, योनिशूल, रक्तदोष, आध्मान, वातरक्त, वातरोग, वायु से बिगडे हुए हाथी, घोडे और गौ इन के वातविकार को नष्ट करता है, अस्थिगत व मेदगतवायु, क्षय, अर्श, भगंदर, भूतबाधा, ग्रहबाधा, पिशाचबाधा, दुष्टग्रह, दद्रुपामा, विचर्चिका, कोढ और व्रण इन का नाश यह शृगालतैल करता है. इस तेल के सेवन से विशेष करके सब रोग नष्ट होते हैं ॥

तीसरा माषतैल

माषक्काथे बलाक्काथे रास्नाया दशमूलजे । यवकोलकुलित्थानां छागमांसरसे पृथक् ॥ प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दद्याच्चतुर्गुणम् । रास्नात्मगुप्तासिंधूत्थशताह्वैरंडमुस्तकैः ॥ जीवनीय-

बलाव्योषपचेदक्षमितैः पृथक्। हस्तकंपे शिरःकंपे बाहुकंपेव-बाहुके॥ बस्त्यभ्यंजनपानेषु नावने च प्रयोजयेत्। माषतैल-मिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रुगदापहम्॥

अर्थ–उडद, खिरेटी, रास्ना, दशमूल, जों, बेर और कुलथी इन का पृथक् २६४ तोले काढा करके लेवे. मांसरस ६४ तोले, इन सब में ६४ तोले तेल को पृथक् २ पक्व करके फिर तेल के चौगुना दूध डालके रास्ना, कौंच के बीज, सैंधानिमक, शतावर, अंड की जड, नागरमोथा, जीवनीयगण, खिरेटी और त्रिकुटा इन का तोले २ चूर्ण करके गेरे फिर पक्व करके इस को रख लेवे. इस को माषतैल कहते हैं. यह हस्तकंप, बाहुकंप, अवबाहुक इन रोगोंपर, बस्ति, अभ्यंजन, नस्य और पान इन में देवे. यह हसली के ऊपर के रोगों को नाश करे॥

रास्नापूतीकतैल

दशमूलबला दारु अश्वगंधा शतावरी। वरुणैरंडनिर्गुंडी तर्का-री शिग्रु मोरटम्॥ सहचरं चित्रमूलं करंजा कोलमूलकम्। पुनर्नवं च भूपीलु अर्कपुंखी दुरालभा॥ जीवंती विषतिंदुश्च वातारिहिंस्राशिग्रुकम्। अलर्कयवकोलं च कुलित्थानां कषायकम्॥ एतेषां च समं रास्ना पूतीकं च तयोः समम्। अष्टभागावशेषं तु कषायमवतारयेत्॥ तत्पादं तिलतैलं च अजाक्षीरं च तत्समम्। गुग्गुलं तगरं मांसी त्रिकटु त्रिफ-लानि च॥ चातुर्जातं कचोरं च विडंगामरदारु च। हिंगु रास्ना वचा तिक्ता पाठा यष्टिकचित्रकम्॥ प्रियंगु पिप्पलीमूलं चंदनं चव्यदीपकम्। वरालं चंपकं कुष्ठं मंजिष्ठा मिशिसर्षपाः॥ जा-तीफलं सुगंधं च पाठोशीरं समांशकम्। एतत्तैलस्य षष्ठांशं कल्कद्रव्याणि दापयेत्॥ सुमुहूर्ते सुनक्षत्रे नववस्त्रेण पीडयेत्। पानलेपननस्याद्यैः शिरोबस्तिषु योजितम्॥ धनुर्वातांतरायामं गृध्रसीमवबाहुकम्। आक्षेपके व्रणायामे विष्वाच्यामपतंत्रके॥ आढ्यवाते हनुस्तंभे शिरावातापतानके। भ्रूशंखकर्णनासा-क्षिजिह्वास्तंभे च दारुके॥ कलायखंजता पंगु सर्वांगैकांगमा-

स्यते । अर्दिते पादहर्षे च पक्षाघाते प्रशस्यते ॥ ऊरुस्तंभं सुप्त-
वातं नाशयेन्नात्र संशयः । रास्नापूतीकनामैतत्तैलमात्रेयनिर्मितम् ॥

अर्थ–दशमूल, खिरेटी, दारुहलदी, असगंध, शतावर, वरना, अंड की जड, निर्गुंडी, अरनी, सहजने की छाल, ईख की जड, पियावासा, चीते की छाल, कंजा, बेर की जड पुनर्नवा, भूपिलू, अर्कपुंखी, दुरालभा (धमासो), जटामांसी, कुचला, लाल अंड, लाल आक, जों, बेर और कुलथी इन औषधों की बराबर रास्ना लेवे और सब की बराबर कंजा इस प्रकार सब औषध लेके काढा करे जब जल अष्टमांश शेष रहे तब उतारके उस में उस का चतुर्थांश तेल मिलावे और इतना ही बकरी का दूध और गूगल, तगर, जटामांसी, त्रिकुटा, त्रिफला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, कचूर, वायविडंग, देवदारु, हींग, रास्ना, वच, कुटकी, पाढ, मुलहटी, चित्रक, प्रियंगु, पीपरामूल, चंदन, चव्य, अजमायन, लौंग, चंपा, कूठ, मजीठ, सोंफ, सरसो, जायफल, रोहिषतृण, पाढ की जड और खस इन सब औषधों का चूर्ण तेल से छठा भाग लेवे. इस को तेल में डालके सब को एकत्र कर मंदाग्नि पर रखके औटावे जब तेल सिद्ध हो जावे तब उतारके उत्तम दिन में उसे किसी उत्तम पात्र में भरके धर देवे. इस को पीने से लेप, शिरोबस्ति इन में देवे तो धनुर्वात, अंतरायाम, गृध्रसी, अपबाहुक, आक्षेपक, व्रणायाम, विश्वाची, अपतंत्रक, आढ्यवात, हनुस्तंभ, शिरावात, अपतानक, भौंह, कनपटी, कान, नाक, नेत्र और जिह्वा इन का स्तंभ, दारुक, कलायखंजता, पंगुता, सर्वांगवात, एकांगवात, आर्दित, पादहर्ष, पक्षाघात, ऊरुस्तंभ और सुप्तवात इन सब को नाश करे इस में संदेह नहीं है इस को रास्नापूतिक नामक तेल कहते हैं. यह आत्रेयऋषि का निर्माण करा है ॥

बलातैल वातादिकोंपर

बलामूलकषायेण दशमूलश्रृतेन च । कुलित्थयवकोलानां क्वा-
थेन पयसस्तथा ॥ अष्टाष्टभागयुक्तेन भागमेकं च तैलकम् ।
गणेन जीवनीयेन शतावर्यैंद्रदारुणा ॥ मंजिष्ठाकुष्ठशैलेयतगरा-
गुरुसैंधवैः । वचापुनर्नवामांससासारिवाहयपत्रकैः ॥ शतपु-
ष्पाश्वगंधाभ्यामेलया च विपाचयेत् । गर्भार्थिनीनां नारीणां
पुंसां च क्षीणरेतसाम् ॥ व्यायामक्षीणगात्राणां सूतिकानां च
युज्यते । राजयोग्यमिदं तैलं सुखिनां च विशेषतः ॥ बलातै-
लमिति ख्यातं सर्ववातामयापहम् ॥

अर्थ–खिरेटी आठ प्रस्थ को बत्तीस प्रस्थ जल में डालके औटावे जब चौथाई रहे तब उतारके उस काढे को छान लेवे इसी प्रकार दशमूल ८ प्रस्थ में बत्तीस प्रस्थ जल डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय तथा कुलथी, जों, बेर के भीतर की गुठली, पृथक् २ औषध आठ २ प्रस्थ लेकर एक एक में बत्तीस प्रस्थ जल डालके पूर्वोक्त क्रम से पृथक् २ काढा कर लेवे फिर इन पांचों काढों को एकत्र मिलायके इन में गौ का दूध आठ प्रस्थ डालके तथा तिल का तेल १ प्रस्थ डाले इस में चूर्ण करके डालने की औषधी इस प्रकार लेवे. जीवनीय गण की औषध, शतावर, मजीठ, देवदारु, कूठ, पत्थर का फूल, तगर, अगर, सेंधानिमक, वच, पुनर्नवा, जटामांसी, सपेद कोयल, कोयल, पत्रज, सोंफ, असगंध और इलायची ये चौवीस औषध तेल के चतुर्थांश ले कल्क करके उसी तेल में मिलाय देवे. फिर तेल को अग्निपर रखके औटावे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे. इस को बलातैल कहते हैं. यह तैल जिस स्त्री को गर्भ की इच्छा होवे उस की देह में मालिस करे और जिस पुरुष की धातु क्षीण होवे उन को तथा जो बहुत आने जाने से थक गये हो उन को देना चाहिये तथा प्रसूता स्त्री को देवे तथा यह तैल विशेष करके राजाओं के और सुखी मनुष्य (सेठ साहूकारों) के योग्य है. इस तेल से वादी के संपूर्ण विकार दूर होते हैं ॥

माषादितैल ग्रीवास्तंभादि के ऊपर

माषा यवातसी क्षुद्रा मर्कटी च कुरंटकः। गोकंटहुंटुकश्चैषां कुर्यात्सप्तपलं पृथक् ॥ चतुर्गुणांबुना पक्त्वा पादशेषं सृतं नयेत् । कार्पासास्थीनि बदरं शणबीजं कुलित्थकम् ॥ पृथक् चतुर्दशपलं चतुर्गुणजले पचेत् । चतुर्थांशावशिष्टं च गृह्णीयात्क्वाथमुत्तमम् ॥ प्रस्थैकं छागमांसस्य चतुःषष्टिपले जले । निःक्षिप्य पाचयेद्धीमान् पादशेषं रसे नयेत् ॥ तैलप्रस्थं ततः क्वाथान् सर्वानेतान् विनिःक्षिपेत् । कल्कैरेभिश्च विपचेदमृताकुष्ठनागरैः॥ रास्नापुनर्नवैरंडैः पिप्पल्या शतपुष्पया । बलाप्रसारिणीभ्यां च मांसीकटुकया तथा ॥ पृथगर्धपलैरेतैः साधयेन्मृदुवह्निना । हन्यात्तैलमिदं शीघ्रं ग्रीवास्तंभापबाहुकौ ॥ अर्धांगशोषमाक्षेपमूरुस्तंभापतानकौ । शाखाकंपं शिरःकंपं विश्वाचीमर्दितं तथा ॥ माषादिकमिदं तैलं सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ–उडद, जों, अलसी के बीज, कटेरी, कौंच के बीज, पियावासा, गोखरू, टेंटू ये आठ औषध सात २ पल लेय सब औषधों से चौगुना जल डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे. तथा बिनेला, बेर की गुठली, सन के बीज और कुलथी ये चार औषध चौदह २ पल लेय इन में चौगुना पानी डालके काढा करके छान ले फिर बकरे का मांस एक प्रस्थ में ६४ पल जल डाल चतुर्थांश जल रहने पर्यंत काढा कर छान लेवे. फिर तिलों का तेल एक प्रस्थ डालके पूर्वोक्त संपूर्ण काढे मिलाय देवे. फिर गिलोय, कूठ, सोंठ, रास्ना, पुनर्नवा, अंड की जड, पीपल, सोंफ, खिरेटी, प्रसारणी, जटामांसी, कुटकी ये बारह औषध आधा २ पल ले सब का कल्क कर तेल में मिलाय मंदाग्नि से पचावे फिर तेल को छान लेय इस को **माषादितैल** कहते हैं. यह तेल देह में लगाने से ग्रीवास्तंभ वायु, अपबाहुक वायु, अर्द्धांगवायु, आक्षेपक वायु, ऊरुस्तंभ वायु, अपतानक वायु, हाथपैरों का कापना, मस्तककंप, विश्वाची और अर्दित (लववा) इत्यादि समस्त वायु दूर हो ॥

सुगंधतैल

तगरागरुकुंकुमकुंदुरुभिः सलवंगवरांगकुरंगमदैः । सरलामरदारुदलद्रविडीनखकेशररुङ्नलिनीनलदैः ॥ सतुरुष्कहरेणुबलाक्कथनैरिति तैलमिदं पयसा विपचेत् । नृपतिप्रमदाशिशुभिः स्थविरैरुपयोज्यमिदं पवनामयजित् ॥

अर्थ–तगर, अगर, केशर, कुंदरू, लौंग, दालचीनी, कस्तूरी, सरल, देवदारु, इलायची, नख, नागकेशर, कूठ, कमलिनी, नेत्रवाला, शिलारस, रेणुकबीज और खिरेटी इन का काढा और दूध एकत्र करके तेल बनाय लेवे इस को राजा की स्त्री, पुत्र और बुड्ढों को सेवन करावे. यह वातविकार का नाश करे ॥

एलादितैल

एलामुरासरलशैलजदारुकौंतीचंडाशठीनलदचंपकहेमपुष्पम् । स्थौणेयगंधरसपूतिदलं मृणालश्रीवासकुंदुरुनखांबु लवंगकुष्ठम् ॥ कालीयकं जलदकर्कटचंदनश्रीजात्याः फलं सविकसं सह कुंकुमेन । स्पृक्का तुरुष्कलघुकांबु तथा विनीय तैलं बलाक्कथनदुग्धदधिप्रपक्कम् ॥ मंदानलेन हितमेतदुदाहरंति वातामयेषु बलवर्णहुताशकारी ॥

अर्थ–इलायची, मुरा, सरल, पत्थर का फूल, देवदारु, रेणुकबीज, गठोना, कचूर, खस और सुवर्णचंपा, थूनेर, लाल बोल, पीली लोध, कमल का कंद, श्रीवास, कुंदरू, नख, नेत्रवाला, लौंग, कूठ, दारुहलदी, नागरमोथा, ईख, चंदन, बेलगिरी, जायफल, लाल पुनर्नवा, केशर, मूर्वा, शिलारस और पीले रंग का खस इन का चूर्ण कर खिरेटी के काढे में दूध और दही इन से युक्त मंदाग्नि पर पकाया हुआ तेल वादी के रोगपर हितकारी है. तथा बल, वर्ण, आग्नि इन को बढावे ॥

महालक्ष्मीनारायणतैल

दशशतांघ्रिशिवेतरमल्लिका दहननागबला ऋबुबाष्पिका । कितवलांगलकीवनमल्लिकाकुटजहेंदुवृकीखरशृंगिका ॥ मधुकबीजकचंपकमालतीस्नुहिबलाकृमिहा प्रपुन्नाटकाः । शतदलाश्ववराहकवासनीऋबुकधन्वनपिप्पलिरक्तिका ॥ अतिबला द्विविषा शकदाडिमी शिखरिशाल्मलिसिंधुकतुंडिका । सुषिरफंगुलकाशसुमर्कटी वरककुंभनिकुंभजयंतिका ॥ कुसरिपिच्छलिका करमर्दिका कसनमर्दककेवणिरूषिका । अतसिवत्सकगृध्रमहीरुहो विदुलकुंजलिका द्वितयोच्चटा ॥ दधिफलस्नुववृक्षमृगादनी मधुरसा मगधा जलपत्रिका । रुदंतिका पृथगेभ्य जटा सुधी समनुगृह्य दशांघ्रिकम् ॥ मुनितरुमलयतपनापामार्गबीजनक्तमालशृंगाटी । प्रपुंनाटो हेमदुग्धा कलेरुहाणां तु बीजानि ॥ धात्री शिग्रु करंजबब्बुलमधुष्ठीलेंगुदीनेपतीनीपारग्वधरक्तसारबदरीविस्फूर्जनः कांचनः । चिंचोदुंबरतापसीद्रुमयुगांकोलद्वयं सल्लकी गायत्री कलिवृक्षभंडिकदराश्वत्थाभयापादपाः ॥ भल्लीकिंशुकमेषशृंगिकिहिनीभूतांकुशः शल्यकः कोशाम्रार्जुनपारिभद्रकमहावृक्षाः कुमार्यासनैः । कुंभी रक्तधनंजयो नियमनो वातारिमोखाह्वया एतेषां परिगृह्य वल्कलमथो रंभा विदारी वरी ॥ आलूकेक्षिरकंदवाजिसुवहा कर्कोटिका गृष्टिका खर्जूरी सुरसूरणप्रभृतिकान्कंदांश्च साधूनपि । छिन्नाटरूषकाशिवप्रियमाषपर्णी ज्योतिष्मती गुग्गुलपर्पटमेषवल्ली ॥ भूपर्णिकास्नजटि-

कामृगराजमुंडीयुक्तर्तरीकुलकयुग्मफलार्कभक्ता । भूनिंबव-
ह्लिदमनो गिरिकर्णिकायुक् चिल्हारका खदिरका विजया
कुमार्यः ॥ गंगावतीयुगकवैष्णविका सुगंधा लंबा सुपर्णलतिका
सहदेविका च । गोपीयुगं मृगखुरी सरणी च कंगुमोर्यश्च
नागदमनी मधुपुष्पिका च ॥ एतानि गृह्य निखिलानि तथा-
ब्दयुग्मं चूतास्थितो तरुरुहो वटसंप्ररोहान् । भूशर्करा मदकरा
कुसुमं च पीलुबर्हिः शिखा कनककेतकिसंप्ररोहान् ॥ व्या-
घ्राटिकांघ्रिकरकं तिनिरोत्थसारं कंडूकपित्थभवलोहजटा गृ-
हीत्वा । मुष्टिप्रमाणं विधिनोद्धृतानि द्रोणैर्जलानां त्रिसृभिर्वि-
पक्त्वा ॥ पादावशेषं परिगृह्य पोतं प्रस्थत्रयं तच्च तिलोत्थ-
तैलम् । हिंस्रा रक्ता वरिष्ठा सुररजनियुगं सैंहलं गंधसारं शृं-
गारं नागपुष्पं पलितकटुफलं रक्तकाष्ठं नतं च ॥ षड्ग्रंथा
जोंगकाश्वा रुचककररुहं रोचना रक्तसारं कोरंजी पालकाह्वं
कृमिरिपुमधुकं सिंधुजं स्निग्धदारु ॥ तालीसं जातिसस्यं मलय-
जममृतं पद्मकं जातिपत्री सेव्यं पद्मं यवानी कतकुतुरवती
केशरं पद्मकस्य । पाठीनो राजपुत्री जलधरचविका सोमवल्को
मधूकं पाक्यः स्वर्जी शताह्वा वनजमगधजा मत्स्यपित्ता शठी
च ॥ कारुंची पुत्रजीवास्तपनकनकजं बीजभृंगाररेची वृक्षाम्लं
देवधूपो जरणरसरसाकल्कराकुट्टिमं च । मृद्वीका साकुरंडं
नियमनधनिका धन्वयासं च ब्राह्मी विश्वं कैरातकेक्षुरकरिक-
णामोदकं बस्तमोदा ॥ शक्राह्वा तिलवलाख्यइक्षुरपुरसुषवी
मेथिका शृंगिका च प्रत्येकं संगृहीत्वा पिचुदलतुलिता मुंच-
चासकृत् प्रपिष्टा । ता निःक्षिप्याशु पात्रे शुचि जनविहृतं
निर्मलं वैद्यवर्यो गव्यं वा दुग्धमाजं युगपरिगणितं पूर्वमुक्ताच्च
तैलात् ॥ नारायण्यस्वरसकमथो रंगमातारसं च तैलोन्मानं

विपचरविजे भाजनं प्रत्यहं वा। तस्मिन्पाकं गतवति यथाविध्यनुप्रक्षिपेच्च सौगंधार्थं शिशिरकिरणं कुंकुमं वेधमुख्यम्॥ गोधूमाख्यं सुसुरभियुतं गंधकर्चूरकं च जातीपुष्पं शतदलसमं मल्लिकं चंपकं च। लोबानेन त्वतिसुरभिते काचभांडे निधाय तैलं चैतन्नृपतिसदने धारयेद्वैद्यवर्यः॥ पाने बस्तौ विहितमशने नावनाभ्यंजने च मातंगे वा मनुजघनयोर्वातरोगाभिभूते। वाताष्ठीलां गलहनुशिरो गृध्रसीं पादशूलं पक्षाघातं श्रवणनयनभ्रूललाटेषु शूलम्॥ ऊरुस्तंभार्दितबधिरतैकांगरोगापतानं मन्यास्तंभं त्रिकहृदयरुङ् मूकताक्षेपखांज्यम्। जिह्वास्तंभं गतिविकलतां कुब्जतां दंतशूलं स्तन्यो गुल्मद्वयं वा गुदकटिचरणभ्रंशगुल्फौ च सुप्तिम्॥ विश्वाचीं वा वृषणपवनं धातुवातापतानं मूकं कंपं जयति सकलान् वातरोगाननुक्तान्। रेतोवृद्धिं जनयति नवं यौवनं पौंस्त्ववृद्धिं बुद्धिं प्राणं वितरति तथा पुष्टिमायुष्यकारी॥ वंध्यायाः पुत्रदं स्यात् ज्वरविहिततनौ शोषदौर्भाग्यहंतृ तैलं भूपोपयोग्यं विनिगदितमिदं नाम नारायणं च॥

अर्थ—शतावर, बेर, मल्लिका, चित्रक, नागबला, अंड, बबूर, धतूरा, भटेउर, कलियारी, वनमल्लिका, इंद्रजो, हेदीवृक्ष, पाढ, खरसिंगा, मुलहटी, बिजोरा, चंपा, चमेली, थूहर, खिरेटी, वायाविडंग, पवाड, सोंफ, असगंध, वाराहीकंद, वासनी, लाल अंड, धामन, पारस पीपल, पतंग, अतिबला, काली और सफेद वाघेटी, शक, (?) अनार, ओंगा, सेमल, निर्गुंडी, कडुई कंदूरी, नरसल, पांगली, कांस, कौंच के बीज, भारंगी, निसोथ, दंती, अरनी, कुसरी, पिच्छलिका,(?)करंद, कसोंदी, कमरख, केवणी, आक, जवासा, काला कूडा, बेर, वेत, साल, बडा साल, सपेद घूंघची, लाल घूंघची, कैथ, ढाक, इन्द्रायन, मूर्वा, पीपल, कमलिनी, रुदंती, दशमूल इन सब की जड लेवे. अगस्तिया, चंदन, भिलाए, ओंगा, कंजा, सिंघाडे, पवाड, चौक, करंज इन के बीज लेवे. आवला, सहजना, कंजा, बमूर, महुआ, गोंदी, नेपती, जलकदंब, अमलतास, सीसों, बेर, विस्फूर्जन,(?)धतूरा, इमली, गूलर, सपेद और लाल अगस्तिया, अंकोल, दोनों रायआवले, खैर, बहेडा, भेंडी, सपेद खैर, पीपलवृक्ष और हरड इन सब औषधों के पंचांग लेवे. भिलाए, पलास, मेढासिंगी, सपेद ओंगा, नकछि-

कनी, मैनफल का वृक्ष, कोशाम्र (कोकम्), कोह, कडुआ नीम, थूहर, घीगुवार, विजयसार, गोमा, लाल चित्रक, वरना, अंड, मोखा वृक्ष इन वृक्षों की छाल लेवे. केरा, विदारीकंद, शतावर, आडू, क्षीरकंद, असगंध, ककोडा, वांझ ककोडा, खजूर, मूसलीकंद और जमीकंद इत्यादि कंद लेवे. गिलोय, अडूसा, बेलगिरी, माषपर्णी, कांगनी, मालकांगनी, पित्तपापडा, मेढासिंगी, वासनवेल, घूंघची, भांगरा, मुंडी, निर्गुंडी, काली निर्गुंडी, परवल, मीठा परवल, हुलहुल इन के पंचांग लेवे. चिरायता, चित्रक, दवना, सपेद और काली कोयल, लजालू, खैर, भांग, घीगुवार, गंगावतीद्वय, वृद्धदारु, तेरडा, कडुई वीया, कांडवेल, सहदेई, सारिवा, कृष्णसारिवा, छोटी बडी हरनखुरी, हरनवेल, कांगनी, मूर्वा, नागदौन, महुआ के फूल इन के भी पंचांग लेय. नागरमोथा, भद्रमोथा, आम की गुठली, बांदा, वड की कोपल, सक्करकंद, धाय के फूल, अखरोट, मोरसिखा, सुवर्ण केवडा की कोपल, धतूरा, केतकी इन की नई कोपल, अनार, कौंच के पत्ते, कैथ की जड, लोहे की कीटी ये प्रत्येक औषध चार २ तोले लेवे. इन को जौंकूट करके ३०७२ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेय. फिर इस में १९२ तोले तिलों का तेल डाले और जटामांसी, मजीठ, खस, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, दालचीनी, चंदन, लौंग, नागकेशर, गूगल, कायफल, पतंग, तगर, वच, काली अगर, असगंध, संचरनिमक, नखद्रव्य, गोरोचन, लाल चंदन, फिटकरी, कूठ, वायविडंग, मुलहटी, सैंधानिमक, तेलिया देवदारु, तालीसपत्र, जायफल, धनिया, चंदन, बच्छनाग, कमलाक्ष, जावित्री, नेत्रवाला, कमल, अजमायन, लवलीफल के बीज, फिटकरी, कमल की केशर, चित्रक, रेणुकबीच, भद्रमोथा, चव्य, बावची, मुलहटी, जवाखार, सज्जीखार, सौंफ, चिरफल, पीपल, कुटकी, कचूर, कारुची, जीयापोता, भिलाए, धतूरे के बीज, भांगरा, निसोथ, इमली, गूगल, जीरा, रार, रास्ना, अकरकरा, अनार की छाल, दाख, अखरोट, नीम की छाल, धनिया, धमासा, ब्राह्मी, सोंठ, चिरायता, तालमखाने, गजपीपर, अजमायन, अजमोद, इन्द्रायन, लोध, कौंच की जड, गूगल, वनकरेला, मेथी, काकडासिंगी, गौ का अथवा बकरी का दूध तेल से दुगुना लेवे. तथा इतना ही शतावर का रस और इतना ही लाख का काढा, इन सब को एकत्र करके तामे के पात्र में पचन करे और उस में सुगंध होने के वास्ते कपूर, केशर, कचूर, प्रियंगु, कपूरकचरी, चमेली, सेवती, मल्लिका और चंपा इन के फूल डाले. फिर कांच के पात्र में लोहवान की धूनी देकर भरके धर रखे. इस को पीने के अर्थ, बस्ति, भोजन, नस्य, देह में लगाना, हाथी अथवा मनुष्य इन के वातरोग होने से और वातष्ठीला, गलग्रह, शिरोग्रह, गृध्रसी, पादशूल, पक्षाघात, कान, नाक, भौंह और ललाट इन के शूल को, ऊरुस्तंभ, अर्दित, बधिरता, एकांगरोग, अपतानक, मन्यास्तंभ, त्रिक, उर इन में

दर्द का होना, गूंगापना, आक्षेपक, खंज, जिह्वास्तंभ, लंगडापना, कुबडा, दाँतों का दर्द, स्तनरोग, गोला, गुदा, कमर और पैर इन का भ्रष्ट होना, खल्ली, सुप्ति, विश्वाची, अंडकोशों की वात, धातुगत वादी, अपतानक, मूकता, कंप और संपूर्ण कहे अथवा नहीं कहे ऐसे वादी के रोगों को जीते. वीर्य बढे, यौवन देवे. पुरुषार्थ की वृद्धि करे. प्राण, बल, पुष्टि और आयुष्य इन को करे. वंध्या को पुत्र देवे. ज्वर, क्षय और दुर्भगता इन को नाश करे. यह तेल राजाओं के योग्य इस को **महालक्ष्मीनारायण** कहते हैं. (हमारी समझ में किसी मूर्ख वैद्य ने इस के श्लोक गढे हैं सो इसपर वैद्य बनाने का साहस न करे) ॥

रास्नाद्यघृत

रास्ना पौष्करशिग्रुमूलदहनं सिंधूत्थगोक्षूरकं पिष्ट्वा पिप्पलिसंयुतं चलगदे पेयं सदा सर्पिषा । संपाच्याथ चतुर्गुणेन पयसा वा वाजिगंधायुतं सर्पिः पेयमसाध्यवातगदजे शुक्रक्षये दारुणे ॥

अर्थ–रास्ना, पुहकरमूल, सहजने की जड, चित्रक, सैंधानिमक, गोखरू और पीपल इन का कल्क, घृत और चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे और असगंध चूर्ण के साथ असाध्य वायु और शुक्रक्षयपर खाने को देवे ॥

पंचतिक्तघृत

निंबामृतावृषपटोलनिदिग्धिकानां भागान्पृथग्दश पलानि पचेद्धटेपाम् । अष्टावशेषितरसेन पुनश्च तेन प्रस्थं घृतस्य विपचेत्पिचुतुल्यकल्कैः ॥ रास्नाविडंगसुरदारुगजोपकुल्याद्विक्षारनागरनिशामिशिचव्यकुष्ठैः । तेजोवती मरिचवत्सकदीप्यकाग्निरोहिण्यपुष्करवचाकणमूलयुक्तैः ॥ मंजिष्ठया तु विषया त्रिवृता यवान्या संशुद्धगुग्गुलुपलैरपि पंचसंख्यैः । तत्सेवितं घृतमतिप्रबलं समीरसंध्यस्थिमज्जगतमप्यथ कुष्ठमीदृक् ॥ नाडीव्रणार्बुदभगंदरगंडमालाजत्रूर्ध्ववातगदगुल्मगुदोत्थमेहान् । यक्ष्मारुजश्वसनपीनसकासशोफहृत्पांडुरोगमथ विद्रधिवातरक्तम् ॥

अर्थ–नीम की छाल, गिलोय, अडूसा, पटोलपत्र और कटेरी ये प्रत्येक चालीस २ तोले लेवे. सब को जोकूट करके १०२४ तोले जल डाल के जब अष्टावशेष काढा हो जावे. तब उतारके छान लेय और इस में ६४ तोले घी डालके उस में

रास्ना, वायविडंग, देवदारु, गजपीपल, जवाखार, सुहागा, सोंठ, हलदी, सौंफ, चव्य, कूठ, मालकांगनी, काली मिरच, कूडा की छाल, अजमायन, चित्रक, कुटकी, पुहकरमूल, वच, पीपरामूल, मजीठ, अतीस, निसोथ और किरमानी अजमायन ये प्रत्येक एक २ तोले लेय इन का कल्क कर उस घी में मिलाय और गूगल, पांच तोले डालके घृत को सिद्ध करे इस के सेवन करने से अत्यंत बढा हुआ वायु, संधि, अस्थि, मज्जा इन का वायु, कुष्ठ, नाडीव्रण, अर्बुद, भगंदर, गंडमाला, हसली के ऊपर के भाग की वादी, गोला, बवासीर, प्रमेह, क्षय, श्वास, खांसी, पीनस, सूजन, पांडुरोग, विद्रधि और वातरक्त इन रोगों को नाश करे ॥

वातरोगपर पथ्यापथ्य

कुलित्था माषगोधूमा रक्ताभाः शालयो हिताः । पटोलं शिग्रु वार्ताकं दाडिमं च परूषकम् ॥ मत्स्यंडिका घृतं दुग्धं किलाटं दधिकूर्चिका । बदरं लशुनं द्राक्षा तांबूलं लवणं तथा ॥ चटकः कुक्कुटो बर्हिस्तित्तिरश्चेति जांगलाः । शिलींध्रः पर्वतो नक्रो गर्गरः खुडिशो झषः ॥ यथाश्रमं यथावश्यं यथाचरणमेव हि । वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ–कुलथी, उडद, गेहूं, लाल चावल, पटोल, सहजना, बैंगन, अनार, फालसा, खांड, घी, दधिकूर्चिका (दूध और दही इन दोनों को समान लेके एकत्र पकाया हुआ पदार्थ), किलाट, बेर, लहसन, दाख, बिड निमक, चिडिया, मुरगा, मोर, तीतर, अरण्यपशु, भूच्छत्र, चिरायता, सुसर, गर्गर, खुडिश, झष इन जाति के मत्स्य इतने पदार्थ श्रम, आवश्यकता और आचार के अनुसार विचारपूर्वक वातव्याधि पर पथ्य में देवे ॥

अपथ्य

चिंताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोनशनता चणकाः कलायाः । श्यामाकचूर्णकुरबिंदुनिवारकंगुमुस्तास्तडागतटिनीसलिलं करीरम् ॥ क्षौद्रं कषायकटुतिक्तरसा व्यवायो हस्त्यश्वयानमपि चंक्रमणं च खट्वा । आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशेषात्स्नानं प्रदुष्टसलिलैर्द्विजघर्षणं च ॥ निःशेषतंत्रपरिकीर्तित एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते ॥ वातरोगस्त्वसाध्योयं दैवयोगात्सुसिध्यति । अनुमानेन कुर्वंति वैद्यकं न प्रतिज्ञया ॥

अर्थ–चिंता, जागर, वेगधारण, कै का दबा, श्रम, उपवास, चना, मटर, श्यामक का आटा, बडी शाली, नीवार, नागली, काङ्ग, मुस्ता, तालाव व नदी का पानी, वांस का अंकुर, सहत, कषैला, तीखा, कडुवा इतने रस, मैथुन, हाथी व घोडा इन पर बैठना, बहुत फिरना, खाट पर सोना ये सब वातव्याधि पर अपथ्य हैं और आध्मान व अर्दितरोग जिस के होय वह विशेषतः बूरे पानी का स्नान और दंतौन न करे. मैं ने सर्व ग्रंथ देखकर ये अपथ्य पदार्थ निकाले हैं. वातरोग तो असाध्य है, परंतु दैवगति से साध्य होता है. अत एव वैद्यों को अनुमान से चिकित्सा करनी चाहिये. प्रतिज्ञापूर्वक चिकित्सा सिद्ध नहीं होती ॥

वातरोग पर पथ्य

अभ्यंगो मर्दनं बस्तिः स्नेहं स्वेदोऽवगाहनम् । संवाहनं संशमनं प्रवृत्तिर्वातवर्जनम् ॥ अग्निकर्मोपनाहश्च भूशय्या स्नानमासनम् । तैलद्रोणी शिरोबस्तिः शमनं नस्यमातपः ॥ संतर्पणं बृंहणं च कीलाटं दधिकूर्चिका । सर्पिस्तैलं वसा मज्जा स्वाद्वम्ललवणा रसाः ॥ नवीनास्तिलगोधूममाषाः संवत्सरोषिताः । शालयः षष्टिकाश्चापि कुलित्थानां रसाः पुरः ॥ ग्राम्यानूपखरोष्ट्राश्च रासभच्छागलादयः । आरूषाः कोलमहिषन्यंकुखड्गिगजादयः ॥ औदका हंसकादंबचक्रमर्दबकादयः । बिलेशया भेकगोधा नकुलश्च द्विजादयः ॥ चटकः कुक्कुटो बर्हिस्तित्तिरश्चेति जांगलाः । शिलींध्रः पर्वतो नक्रो गर्गरः कवयीलिशः ॥ एरंडचुलकी कर्मशिशुमारास्तिमिंगिलः । रोहितो मद्गुरः शृंगी वर्मी च खुडिशो झषः ॥ पटोलं शिग्रु वार्त्ताकं लशुनं दाडिमद्वयम् । पक्कं तालं रसालं च ललदंबु परूपकम् ॥ जंबीरं बदरं द्राक्षा नागरं गोमधूकजम् । प्रसारणी गोक्षुरकः शुक्लाक्षी पारिभद्रकः ॥ पयांसि च पयःपेटी रुबुतैलं गवां जलम् । मत्स्यंडिका च ताम्बूलं धान्याम्लं तिंतिडीफलम् ॥ स्निग्धोष्णानि च भोज्यानि स्निग्धोष्णं चानुलेपनम् । विशेषाद्धमनार्तानामामाशयमुपागते ॥ पक्काशयस्थे मांसस्थे तथा स्निग्धं

विरेचनम् । प्रत्याध्मानाध्मानयोर्वावर्तिलंघनदीपनम् ॥ अ-ष्ठीलाख्ये मूत्रविधिः शुक्रस्थे क्षयजित् क्रिया । त्वङ्मांसासृक् शिराप्राप्ते हितं शोणितमोक्षणम् ॥ यथाश्रमं यथावस्थं यथाच-रणमेव हि । वातव्याधौ समुत्पन्ने पथ्यमेतन्नृणां भवेत् ॥

अर्थ—उवटना, वातनाशक तेल आदि की मालिस करना, बस्तिकर्म, स्नेहनकर्म, पसीने निकालना, गरम जल से स्नान, मीडना, संशमन औषधों में प्रवृत्ति, वायु का त्याग, अग्निकर्म, उपनाह, धरती में सोना, स्नान, बैठना, तेल की कुप्पी, शिरबस्ती, शमन, नस्य, धूप, संतर्पण, बृंहण, किलाट (छाछ का भेद), दही की कूर्चिका, घृत, तैल, वसा, मज्जा, मीठे, खट्टे, निमकीन रस, नवीन तिल, गेहूं, उडद, वर्षदिन के पुराने चावल, साँठी चावल, कुलथी का रस, गूगल, गाम के अनूप के संचारी जीव, गधा, ऊंट और बकरी आदि का मांस, आरूष (सांप का भेद), सूअर, भैंसा, बारहसींगा, गेंडा और हाथी आदि का मांस, जल के जीव. हंसों का समूह, चकवा, बगला आदि बिले में रहनेवाले, मेंडका, गोह, नौला, पक्षी—चिडा, मुरगा, मोर, तीतर इत्यादि जांगलजीव. शिलींध्र, पर्वत, नक्र, गर्गर, कवयी और इल्लिश जाति की मछली, एरंड, चुलकीकर्म, सूस, बडी मछली, रोहू मच्छली, मद्गुर, शृंगी, वर्मी, खुड्डिश आदि मछली. परवल, सहजना, बैंगन, लहसन, खट्टे मीठे अनार, पक्का तालफल, आंब, स्वच्छ जल, फालसे, जंभीरी, बेर, दाख, सोंठ, महुआ, प्रसारणी, गोखरू, काकोली, नीम, दूध, नारियल का जल, गोमूत्र, खांड, पान, धान्याम्ल, इमली, चिकने गरम भोजन, चिकने और गरम ही लेप जो वादी की वमन से पीडित हैं. आमाशयगत वात, पक्वाशयगत वात, मांसगत इन में स्निग्ध **विरेचन** देवे. **आध्मान** और **प्रत्याध्मान** वात में वर्ती करना, लंघन और दीपनकर्त्ता विधि करे. **अष्ठीलावात** में मूत्र कराना. **शुक्रस्थ वात** में उस के नाशक क्रिया करे. त्वचा, मांस, रुधिर और शिरागत वात में **रुधिरमोक्षण** कर्म करना हित है. जैसे उस रोगी को श्रम हो और जैसी उस की अवस्था हो उस के अनुसार तथा उस रोगी के आचरण के अनुसार यह पथ्य कही है ॥

अपथ्य

चिंताप्रजागरणवेगविधारणानि छर्दिः श्रमोऽनशनता चणकाः कलायाः । नीवारकंगुशरवैणवकोरदूषश्यामाकचूर्णकुरुविंदमुखानि यानि ॥ धान्यानि तालतृणजानि च राजमाषा मुद्गा गुडा-गरुनदीजलशीतलं च । जंबूकसेरुकमलं क्रमुकं मृणालं निष्पा-

वबीजमपि तालफलास्थि मज्जा ॥ शिंबी च पत्रभवशाकमुदुंबरं च शीताम्बु रासभपयोऽपि विरुद्धमन्नम् । क्षारोपि शुष्कपललं रुधिरस्रुतिश्च क्षौद्रं कषायकटुतिक्तरसा व्यवायो, हस्त्यश्वयानमपि चंक्रमणं च खट्वा ॥ आध्मानिनोर्दितवतोपि पुनर्विशेषात्स्नानं प्रदुष्टसलिलं द्विजघर्षणं च । निःशेषतस्तु परिकीर्तित एष वर्गो नृणां समीरणगदेषु मुदं न दत्ते ॥

अर्थ–चिंता करना, जागना, मल मूत्र आदि वेगों को रोकना, वमन, परिश्रम, भोजन त्याग (उपवास). चने, मटर, सामखिया, कांगनी, सरपत्ते और बांस के चांवल, कोरदूष (कोदों), सामखिया, चूना, कुरुविंद (मोटे चावल) आदि धान्य, ताल तृणजाति के अन्न, चौरा, मूंग, गुड, काली अगर, नदी का जल, जामन, कसेरू, कमलगट्टे, सुपारी, भसीडे (चौरा के बीज), ताल के फल की गुठली, कमलकंद, तेंदू, करेले, नवीन ताल का फल, सेम के साग, पत्रशाक, गूलर, शीतल जल, गद्धी का दूध, विरुद्ध अन्न, क्षार, सूखा मांस, रुधिर का निकलना, सहत, कषेले, चरपरे और कडवे रस, मैथुन, हाथी, घोडे की सवारी, डोलना, खरदरी खाट, दूषित जल से दाँतों का घिसना (माँझना) और अफरा रोग तथा लकवावाले को विशेषकरके स्नान इत्यादिक यह संपूर्ण वस्तु वातव्याधि रोगी को सुखकारी अर्थात् पथ्य नहीं है किंतु अपथ्य हैं ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे वातव्याधिकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्य परिपूर्णतामगात् ।

वातरक्तकर्मविपाकः।

वातरक्त का ज्योतिःशास्त्राभिप्राय

व्योमस्थाने महीपुत्रः शनिदृष्टो यदा भवेत् ।
जन्मकाले यस्य जंतोः स वातरुधिरार्दितः ॥

अर्थ–जिस प्राणी के जन्मसमय दशम स्थान में मंगल बैठा होय और शनैश्चर की उस पर दृष्टि होय तो वह पुरुष वातरक्त रोगी होवे ॥

शमन

व्योमस्थानस्थितशनिदृष्टभौमजनितरक्तदोषोपशांतये मंगल-प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ-दशमस्थानस्थित और शनिदृष्ट मंगल का दोष नाश करने को पूर्वोक्त जप-हवनादिक करे तो वातरक्तरोग दूर हो ॥

वातरक्तनिदान

लवणाम्लकटुक्षारस्निग्धोष्णाजीर्णभोजनैः । क्लिन्नशुष्कांबुजानूपमांसपिण्याकमूलकैः ॥ कुलित्थमाषनिष्पावशाकादिलवलेक्षुभिः । दध्यारनालसौवीरसूक्ततक्रसुरासवैः ॥ विरुद्धाध्ययनक्रोधदिवास्वप्नप्रजागरैः । प्रायशः सुकुमाराणां मिथ्याहारविहारिणाम् ॥ स्थूलानां सुखिनां चाथ वातरक्तं प्रकुप्यति ॥

अर्थ-नोन, खटाई, कडवी, खारी, चिकना, गरम, कच्चा ऐसे भोजन से सडे और सूखे ऐसे जलसंचारी जीवों के और जल के समीप रहनेवाले जीवों के मांस से, पिण्याक (खर), मूली, कुलथी, उडद, निष्पाव (सेम), शाक (तरकारी), पलल (तिल की चटनी), ईख, दही, कांजी, सौवीर मद्य, सुक्त (सिरका आदि), छाछ, दारु, आसव (मद्यविशेष), विरुद्ध (जैसे दूध, मछली), अध्यशन (भोजन के ऊपर भोजन), क्रोध, दिन में निद्रा, रात में जागना इन कारणों से विशेषकरके सुकुमार पुरुषों के और मिथ्या आहार विहार करनेवाले पुरुषों के और जो मोटा होय तथा सूखा होय ऐसे मनुष्यों के वातरक्त रोग होय है ॥

वातरक्तरोग की संप्राप्ति

हस्त्यश्वोष्ट्रैर्गच्छतश्चाश्नतश्च विदाह्यन्नं सविदाहाशनस्य । कृत्स्नं रक्तं विदहत्याशु तच्च स्रस्तं दुष्टं पादयोश्चीयते तु ॥ तत्संयुक्तं वायुना दूषितेन तत्प्राबल्यादुच्यते वातरक्तम् ॥

अर्थ-हाथी, घोडा, ऊंट इन पर बैठकर जाने से, (यह वायु के बढने का और विशेषकरके रुधिर के उतरने का कारण है) विदाहकारी अन्न के खानेवाले पुरुष के (इसी से दग्धरुधिर की वृद्धि होती है) गरमागरम अन्न के खानेवाले ऐसे पुरुष के सब शरीर का रुधिर दुष्ट होकर पैरों में इकट्ठा होय और वह दुष्ट वायु से दूषित होकर मिले, इस रोग में वायु प्रबल है. इसी से इस रोग को वातरक्त ऐसे कहते हैं॥

वातरक्त में अन्यदोषसंबंधी लक्षण

तद्वत् पित्तं दूषितेनासृगात्कं श्लेष्मा दुष्टो दूषितेनासृगात्कः। स्पर्शोद्विग्नौ भेदतोदप्रशोषस्वापोपेतौ वातरक्तेन पादौ ॥ पित्तासृग्भ्यामुग्रदाहौ भवेतामत्यर्थोष्णौ रक्तशोफौ मृदू च। कंडूमंतौ स्वेदशीतौ सशोफौ पीनौ स्तब्धौ श्लेष्मदुष्टौ तु रक्ते॥ सर्वैर्दुष्टैः शोणितैर्वापि दोषाः स्वं स्वं रूपं पादयोर्दर्शयंति ॥

अर्थ–वायु के योग से पित्त और कफ दूषित होकर दुष्ट रक्त के साथ मिल जाते हैं तब पांव स्पर्श होते ही दुखते हैं और फूटन, वेदना, शुष्कता और झिरझिरी से युक्त होते हैं. रक्तपित्त से रक्त दूषित होने से पांव उग्रदाह से युक्त और उष्ण स्पर्श से युक्त होते हैं और उन पर लाल व मृदु सूजन होती है. कफ से रक्त दूषित होके पांव में जम जाने से पांव कंडुयुक्त, जड, पसीने से युक्त, थंडे, मोटे और स्तब्ध होते हैं. त्रिदोष से युक्त होने से वह वातरक्त सब दोषों के लक्षणों से युक्त होता है ॥

पूर्वरूप

स्वेदोऽत्यर्थं न वा कार्ष्ण्यं स्पर्शाज्ञत्वं क्षतेऽतिरुक्। संधिशैथिल्यमालस्यं सदनं पिटिकोद्गमः॥ जानुजंघोरुकट्यंशहस्तपादांगसंधिषु । निस्तोदः स्फुरणं भेदो गुरुत्वं सुप्तिरेव च॥ कंडुः संधिषु रुग्दाहो भूत्वा नश्यति चासकृत् । वैवर्ण्यं मंडलोत्पत्तिर्वातासृक्पूर्वलक्षणम् ॥

अर्थ–पसीना बहुत आवे, अथवा नहीं आवे, शरीर काला हो जाय, शरीर में स्पर्श का ज्ञान जाता रहे और थोडी सी चोट लगने से पीडा अधिक होय, संधि ढीली हो जाय, आलस्य आवे, ग्लानि हो, शरीर में फुनसी उठें, घोंटू, जंघा, ऊरू, कमर, कंधा, हाथ, पैर, सन्धि और अंगों में सुई के चुभाने की सी पीडा होय, स्फुरण (फरकना), तोडने की सी पीडा, भारीपना, बधिरता ये लक्षण होते हैं और संधियों में खुजली चले और शूल होकर वारंवार नाश हो जाय, शरीर का विवर्ण हो जाय, रुधिर के चकत्ता देह में पड जाय. ये वातरक्त के पूर्वरूप होते हैं॥

वातरक्त में अन्यसंसर्ग होने से उपद्रव

वाताधिकेऽधिकं तत्र शूलस्फुरणतोदनम् । शोथश्च रौक्ष्यं

कृष्णत्वं श्यावता वृद्धिहानयः ॥ धमन्यंगुलिसंधीनां संको-
चोंऽगग्रहोऽतिरुक् । शीतद्वेषानुपशयस्तंभवेपथुसुप्तयः ॥

अर्थ--वाताधिक वातरक्त में शूल, अंगों का फरकना, चोटने की सी पीडा ये अधिक होते हैं. सूजन, रूखापना, नीलापना अथवा श्यामवर्णता एवं वातरक्त के लक्षणों की वृद्धि होय और क्षणभर में ह्रास (कम हो) धमनी और अंगुलियों की संधियों में संकोच होय. शरीर जकडबंध होय, अत्यंत पीडा होय, सर्दी बुरी लगे और शीत के सेवन करने से दुःख होय, स्तंभ होय, कंप और शून्यता होय. ये लक्षण होते हैं ॥

रक्ताधिक वातरक्त तथा पित्ताधिक वातरक्त

रक्ते शोफोऽतिरुक्क्लेदस्ताम्रश्चिमचिमायते । स्निग्धरूक्षैः शमं
नैति कंडूक्लेदसमान्वितः ॥ पित्ते विदाहः संमोहः स्वेदो मूर्च्छा
मदः सतृट् । स्पर्शासहत्वं रुग्रागः शोफः पाको भृशोष्णता ॥

अर्थ--रक्ताधिक वातरक्त में सूजन, अत्यन्त पीडा और उस में से तामे के रंग का क्लेद वहे, उस सूजन में चिमचिम वेदना होय, स्निग्ध अथवा रूखे पदार्थ से शांति न होय. उस सूजन में खुजली और पानी निकले. पित्ताधिक वातरक्त में अत्यन्त दाह, इन्द्रियों को मोह, पसीना, मूर्च्छा, मस्तपना, प्यास, स्पर्श बुरा मालुम हो, पीडा, लाल रंग, सूजन, छोटे छोटे पीरे फोडा, अत्यन्त गरमी यह लक्षण होते हैं ॥

कफरक्तनिदान

कफे स्तैमित्यगुरुतासुप्तिस्निग्धत्वशीतताः ।
कंडूर्मन्दा च रुग्द्वंद्वे सर्वलिङ्गं च सङ्करात् ॥

अर्थ--कफाधिक वातरक्त में स्तैमित्य (गीले कपडा से आच्छादित समान), भारीपना, शून्यता, चिकनापना, शीतलता, खुजली और मन्द पीडा ये लक्षण होते हैं. दो दोषों के वातरक्त में दो दोषों के लक्षण और तीनों दोषों के वातरक्त में तीन दोषों के लक्षण होते हैं. पैरों में वातरक्त हुआ होय उस की अपेक्षा करने से हाथों में होय है उस को कहते हैं ॥

अंगों में प्रसरणत्वकथन

पादयोर्मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयोरपि ।
आखोर्विषमिव क्रुद्धं तद्देहमनुसर्पति ॥

अर्थ--वह वातरक्त पैरों के मूल में होकर कदाचित् हाथों में भी होय है. सो आखु (मूसे) के विषसदृश रुवदेह में मंद मंद फैल जाय. यह वातरक्त चरक ने

दो प्रकार का कहा है, एक उत्तान, दूसरा गंभीर, त्वचा और मांस इन में होय सो उत्तान और गंभीर इस की अपेक्षा भीतरी होय है ॥

वातरक्त के असाध्य लक्षण

आजानु स्फुटितं यच्च प्रभिन्नं प्रस्रुतं च यत् ।
उपद्रवैर्यच्च जुष्टं प्राणमांसक्षयादिभिः ॥
वातरक्तमसाध्यं स्याद्याप्यं संवत्सरोषितम् ॥

अर्थ- आजानु (जंघा के नीचे के भाग) पर्यन्त गया भया वातरक्त असाध्य है. जिस की त्वचा फट गई होय, चिर गया होय और जो स्रावयुक्त होय ऐसा वातरक्त अप्राण मांसक्षयादि उपद्रवयुक्त होय, आदिशब्द से जो आगे (श्रम, अरोचक, श्वास) इत्यादिक कहेंगे वह भी लक्षण होय सो भी असाध्य है. वातरक्त प्रगट भये वर्षदिन व्यतीत हो गया होय सो याप्य होय है. वर्षदिन के पहले साध्य होय है परंतु उस में स्फुटितादि लक्षण न होय तौ साध्य है ॥

वातरक्त के उपद्रव

अस्वप्नारोचकश्वासमांसकोथशिरोग्रहाः । संमूर्छाऽमन्दरुक्तृ-
ष्णाज्वरमोहप्रवेपकाः ॥ हिक्कापांगुल्यवीसर्पपाकतोदभ्रमक्लमाः।
अंगुलीवक्रतास्फोटदाहमर्मग्रहार्बुदाः ॥ एतैरुपद्रवैर्वर्ज्यं मोहेनै-
केन चापि यत् ॥

अर्थ–निद्रानाश, अरुचि, श्वास, मांस का सडना, मस्तक का जकडना, मूर्च्छा, अत्यन्त पीडा, प्यास, ज्वर, मोह, कंप, हिचकी, पांगुरापना, विसर्परोग, पकना, नोचने की सी पीडा, भ्रम, अनायासश्रम, उंगली टेढी हो जाय, फोडा, मर्मस्थानों में पीडा, अर्बुद (गांठ) हो इन उपद्रव युक्त वातरक्तवाला रोगी असाध्य है अथवा एक मोहयुक्त ही होय तौ भी असाध्य जानना ॥

साध्यासाध्यत्व

अकृत्स्नोपद्रवं याप्यं साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ।
एकदोषानुगं साध्यं नवं याप्यं द्विदोषजम् ॥
त्रिदोषजमसाध्यं स्याद्यस्य च स्युरुपद्रवाः ॥

अर्थ–जिस वातरक्त में सब उपद्रव होय नहीं वह याप्य है और निरुपद्रव साध्य है और जो एक दोष का होय वह साध्य है और द्विदोषज याप्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त होय तौ वातरक्त असाध्य है. यह श्लोक क्षेपक है माधव का नहीं है।

वातरक्त पर सामान्य चिकित्सा

वातशोणितिनो रक्तं स्निग्धस्य बहुशो हरेत् ।
अल्पाल्पं रक्षयेद्वायुं यथादोषं यथाबलम् ॥

अर्थ–वातरक्त रोगी को प्रथम स्नेहपान कराकर वारंवार दोष, बल को विचारके थोडा २ रुधिर निकाला करे और वादी से रोगी की रक्षा करता रहे तो यह रोग दूर होवे ॥

उग्रांगदाहतोदेषु जलौकाभिर्विनिर्हरेत् ।
शृंगतुंबैश्चिमिचिमाकंडुरुग्वेदनान्वितम् ॥
प्रच्छन्नेन शिराभिर्वा देशाद्देशांतरं व्रजेत् ॥

अर्थ–वातरक्तरोग में देह में घोर दाह और दर्द यदि होने लगे तो उस के रुधिर को जोंक लगायके निकाल डाले तथा उस में चिमचिमाहट (चरचराने लगे), खुजली, पीडा और दुःख होता होय तो उस के तूंबी अथवा सिंगी लगाके रुधिर को निकाले. यदि ऐसे दुष्ट रुधिर को रोगी के देह से न निकाला जावे तो वह गुप्तमार्ग से अथवा नाडियों के मार्ग से इस जगे से दूसरी जगे चला जाता है ॥

अंगे म्लाने तु न स्राव्यं रूक्षं वातोत्तरं च यत् ।
गंभीरश्वयथुस्तंभकंपग्लानिशिरामयान् ॥
रोगानन्यांश्च वातोत्थान् कुर्याद्वायुररक्षितः ॥

अर्थ–वातरक्तरोगी का अंग म्लान किंवा रूक्ष होने से किंवा वाताधिक रक्तपित्त का रुधिर न निकाले. यदि भूल से ऐसे रोगी का रुधिर निकाल लिया जावे तो और वादी का संरक्षण न करे तो गंभीर सूजन, स्तंभ, कंप, ग्लानि, मस्तकरोग और अनेक प्रकार के वातरोगों को उत्पन्न करे है ॥

पिंडतैलादिनाभ्यंगं पानं तिक्तादिसर्पिषा ।
सेकलेपाह्यसृङ्मुक्तिः शोधनं चोभयोर्हितम् ॥

अर्थ–रक्तबोल डालके तेल सिद्ध करे उस तेल की देह में मालिस करे और कुटकी इत्यादिक योग्य पदार्थ और घी इन का पान, जल का छिडकना, लेप करना, रुधिर निकालना तथा दस्त कराना, वमन कराना ये सब कर्म वातरक्तरोगवाले को हितकारी हैं ॥

विविधान्वातरोगान्वा मृत्युं वात्यवसेचितम्।
रक्तं कुर्य्यात्ततः स्निग्धास्तत्प्रमाणेन निर्हरेत् ॥

अर्थ—अत्यंत रुधिर निकालने से अनेक प्रकार के वातरोग अथवा मृत्यु होती है. इस वास्ते रोगी को स्निग्ध करके प्रमाण का ही रुधिर निकाले अधिक न निकाले॥

विरेचयेच्च पित्तादौ स्नेहयुक्तैर्विरेचनैः।
बाह्यमालेपनाभ्यंगपरिषेकोपनाहनैः ॥
विरेकास्थापनस्नेहपानैर्गंभीरमाचरेत् ॥

अर्थ—पित्ताधिक वातरक्त पर स्नेहयुक्त विरेचन देवे. बाह्य वातरक्त पर लेप, अभ्यंग, जल का छिडकना तथा उपनाह ये उपचार करे और गंभीर वातरक्त पर विरेचन, निरूहबस्ती और स्नेहपान ये उपचार करे ॥

भोजन और रस

पुराणयवगोधूमशाल्यः षष्टिकास्तथा।
भोजनार्थे रसार्थे तु विष्किराः प्रतुदा हिताः ॥

अर्थ—पुराने जों, गेहूं, चावल, साठी चावल ये भोजन के वास्ते देवे तथा पक्षियों के मांस में चिडा, मुरगा आदि और तोता, मैना आदि का मांसरस देवे तो हितकारी होवे ॥

यूष

आढक्यश्चणका मुद्गा मसूराः सकुलित्थकाः।
यूषार्थे बहुसर्पिष्काः प्रशस्ता वातशोणिते ॥

अर्थ—वातरक्त पर अरहर, चना, मूंग, मसूर, कुलथी इन के यूष में अधिक घी डालके देवे ॥

शाक

सुनिषण्णकवेत्राग्रं काकमाची शतावरी।
वास्तूकोपादिका शाकं शाकं सौवर्चलं तथा ॥
घृतमांसरसैर्भृष्टं शाकसात्म्याय दापयेत् ॥

अर्थ—चौपतिया, वेत की कोंपल, मकोय, शतावर, बथुआ, पोई, हुरहुर, वरना, संचरनिमक, घी में भुने मांस तथा मांसरस ये पदार्थ शाक खाने की इच्छा होवे तो उन रोगियों को देना चाहिये ॥

छिन्नोद्भवाकषायेण सेव्यं सिद्धं शिलाजतु ।
पंचकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशांतये ॥

अर्थ-पहिले वमन रेचकादि पांचों कर्म से शुद्ध करके फिर गिलोय के काढे में शुद्ध शिलाजीत डालके पीवे तो वातरक्त शांत होय ॥

वासादि क्काथ

वासागुडूचीचतुरंगुलानामेरंडतैलेन पिबेत्कषायम् ।
क्रमेण सर्वांगजमप्यशेषं जयेदसृग्वातभवं विकारम् ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और अमलतास इन के काढे में अंडी का तेल डालके पीवे तो वातरक्त का विकार यदि सर्व अंग में होय तो उस को भी क्रम २ से दूर करे ॥

मंजिष्ठादि क्काथ

मंजिष्ठा कुटजामृता घनवचा शुंठी हरिद्राद्वयं वासा पर्पटसारिवा प्रतिविषानंता विशालाजलम्।क्षुद्रारिष्टपटोलकोष्ठकटुका भार्ङ्गी विडंगाग्निकं मूर्वा दारुकलिंगभृंगमगधा त्रायंति पाठा वरी ॥ गायत्री त्रिफला किरातकमहानिंबो सनारग्वधश्यामावल्गुज-चंदनं सवरुणं पूतीकशाकोटकम् । मंजिष्ठादिममुं कषायविधिना नित्यं पुमान्यः पिबेत्त्वग्दोषा ह्यचिरेण यांति विलयं कुष्ठानि चाष्टादश ॥ वातरक्ते प्रसुप्ते च विसर्पे विद्रधौ तथा । सर्वेषु रक्त-दोषेषु मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

अर्थ-मजीष्ठ, कुडा की छाल, गिलोय, नागरमोथा, वच, सोंठ, हलदी, दारु-हलदी, अडूसा, पित्तपापडा, सारिवा, अतीस, धमासा, इन्द्रायन की जड, नेत्रवाला, कटेरी, नीम की छाल, पटोलपत्र, कूठ, कुटकी, भारंगी, वायविडंग, चित्रक, मूर्वा, देवदारु, इन्द्रजो, भांगरा, पीपल, त्रायंती, पाढ, सतावर, खैरसार, त्रिफला, चिरा-यता, बकायन की छाल, विजेसार, अमलतास का गूदा, निसोथ, बावची, लाल चंदन, वरना, कंजा और सहोडा ये सब समानभाग औषध लेके २ तोले का काढा करे इस को पीने से त्वचा के दोष, अठारह प्रकार के कोढ, वातरक्त, सुन्नवात, विसर्परोग, विद्रधि और संपूर्ण रुधिर के विकार, तत्काल नाश करे ॥

लघुमंजिष्ठादि क्काथ

मंजिष्ठा त्रिफला तिक्ता वचा दारु निशामृता । निंबश्चैषां कृतः

क्वाथो वातरक्तविनाशनः ॥ पामाकपालिकाकुष्ठरक्तमंडल-
जिन्मतः ॥

अर्थ-मजीठ, हरड, बहेडा, आवला, कुटकी, वच, दारुहलदी, गिलोय और नीम की छाल इन का काढा वातरक्त, खाज, कापालिक, कुष्ठ और रुधिर के चकत्तों को नाश करे ॥

पटोलादि क्वाथ

पटोली त्रिफला तिक्ता गुडूची च शतावरी ।
एष क्वाथो जयेत्पीतो वातास्रं दाहसंयुतम् ॥

अर्थ-पटोलपत्र, हरड, बहेडा, आंवला, कुटकी, गिलोय और शतावर इन का काढा पीवे तो दाहयुक्त वातरक्त को जीते ॥

वासादि क्वाथ

क्वाथो वासामृतातिक्ताभवो वातास्रनोदनः ॥

अर्थ-अडूसा, गिलोय और कुटकी इन का काढा वातरक्तनाशक है ॥

एरंडतैलयोग

एरंडतैलेन गुडूचिकायाः क्वाथोथ वा वर्धितपिप्पली वा ।
गुडेन पथ्याखिलवातरक्तं विनाशयेत्पथ्ययुतस्य पुंसः ॥

अर्थ-गिलोय के काढे में अंडी का तेल डालके पीवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा हरड के चूर्ण को गुड में मिलाय के देवे और पथ्य से रहे तो वातरक्त दूर होय॥

दार्व्यादि क्वाथ

दार्वीगुडूचीकुटकोग्रगंधामांजिष्ठनिंबत्रिफलाकषायः ।
वातास्रमुच्चैर्नवकार्षिकाख्यो जयेच्च कुष्ठान्यखिलानि पुंसाम् ॥

अर्थ-दारुहलदी, गिलोय,कुटकी, वच, मजीठ, नीम, हरड, बहेडा, आवला इन नौ औषधों को तोले २ लेवे सब का क्वाथ करके पीवे. यह **नवकार्षिकगूगल** उग्र वातरक्त तथा संपूर्ण कुष्ठ को नाश करे ॥

वत्सादिन्यादि क्वाथ

वत्सादिन्युद्भवः क्वाथः पीतो गुग्गुलुमिश्रितः ।
समीरेण समायुक्तं शोणितं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ-गिलोय के काढे में गूगल डालके पीवे तो वातरक्त को नाश करे ॥

पित्ताधिक वातरक्तपर

पित्तोत्तरे तु काश्मर्यद्राक्षारग्वधचंदनैः । मधुरक्षीरकाकोली-युक्तैः क्वाथं सुशीतलम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं वातरक्ते पिबेन्नरः॥

अर्थ–कंभारी की छाल, दाख, अमलतास, लाल चंदन, काकोली और क्षीरका-कोली इन के काढे में सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो वातरक्त को दूर करे ॥

काकोल्यादि क्वाथ

काकोलाख्यामृताक्वाथं पिबेत्कोष्णं यथाबलम् ।
पथ्यभोजी त्रिसप्ताहान्मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ–काकोली और गिलोय इन का काढा बलाबल विचारके कुछ गरम करके पीवे और पथ्य से रहे तो सात दिन में यह प्राणी वातरक्तरहित होय ॥

समधूच्छिष्टमंजिष्ठससर्जरससाधितम् ।
पिंडतैलादिनाभ्यंगो वातरक्तरुजापहः ॥

अर्थ–मोम, मजीठ, रार इन के तेल से अथवा लाल बोल के तेल का मालिस करने से वातरक्त की पीडा दूर होवे ॥

गुडूचीयोग

गुडूच्याः स्वरसं कल्कं चूर्णं वा क्वाथमेव वा ।
सेवते यो नरो नित्यं वातरक्तात्स मुच्यते ॥

अर्थ–गिलोय का स्वरस, कल्क, चूर्ण अथवा काढा इन में कोई वस्तु का सेवन करे तो वातरक्त नष्ट होय ॥

गुडूच्यादि क्वाथ

गुडूची वाकुची चक्रमर्दश्च पिचुमंदकः । हरीतकी हरिद्रा च धात्री वासा शतावरी ॥ वालं नागबला यष्टी मधूकं क्षुरकोपि च । पटोलस्थलतोशीरं मंजिष्ठा रक्तचंदनम् ॥ गुडूच्यादिरयं क्वाथो वातरक्तांतकारकः । कुष्ठानामपि संहर्त्ता कंडूमंडलखं-डनः ॥ वातिकान् रौधिरान्सर्वान् विकारानाशु नाशयेत् । मुनिभिः करुणाकीर्णैः कषायोयं प्रकाशितः ॥

अर्थ-गिलोय, बावची, चकवड, नीम की छाल, हरड, हलदी, आंवला, अडूसा, शतावर, नेत्रवाला, कगही, मुलहटी, महुआ के फूल, तालमखाने, पटोलपत्र, खस, मजीठ और लाल चंदन इन का काढा करके पीवे तो वातरक्त, कुष्ठ, खुजली, चकत्ते, वातसंबंधी रोग, रुधिर के विकार इन को तत्काल दूर करे· यह गुडूच्यादिकाढा कृपालु मुनियों ने कहा है ॥

वृषादि क्वाथ

क्वाथो वृषारग्वधकुंडलीनामेरंडतैलेन समं निपीतः।
जयेदसृग्वातभवं विकारं सर्वांगशोफप्रविदाहयुक्तम् ॥

अर्थ-अडूसा, अमलतास का गूदा और गिलोय इन का काढा करके उस में अंडी का तेल डाउके पीवे तो सर्वांग की सूजन और दाह इन करके युक्त वातरक्त का नाश होय ॥

त्रिवृतादि क्वाथ

त्रिवृद्विदारीक्षुरजः कषायोथ वा गुडूच्याः स्वरसो हितश्च ॥

अर्थ-निसोथ, विदारीकंद और काला ईख (काला पौडा) इन का काढा अथवा गिलोय का रस देवे तो हितकारी होय ॥

पथ्यायोग तथा गुडूच्यादि क्वाथ

तिस्रः पंचाथ वा पथ्याः पिष्ट्वा दग्धा गुडेन तु।
पिबेच्छिन्नरुहाक्वाथं वातरक्तार्दितो नरः ॥

अर्थ-तीन अथवा पांच हरडों को भूनके चूर्णकर गुड के साथ देवे अथवा गिलोय का काढा करके देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

वातरक्त पर काढा

रतिकेलिकलाकुशले विलसद्वलये वलयेन समानकुचे।
अमृतव्रतती रुबुतैलयुता, तथैरंडसिंहास्यवत्सादिनीनाम् ॥

अर्थ-गिलोय के काढे में अंड का तेल डालके देवे या अंड की जड अडूसा और गिलोय इन का काढा देवे ॥

वातरक्त पर पिंडादि क्वाथ

मधूत्थारुणागोपिकादेवधूपैः शृतं वातरक्तापहं पिंडतैलम्।
कषायः सहैरंडतैलेन युक्तस्तथैरंडसिंहास्यवत्सादनीनाम् ॥

अर्थ–मोम, मजीठ, सारिवा और रार इन के काढे में तेल डालके तयार करे यह पिंडतैल वातरक्तनाशक है तथा अंड की जड, अडूसा और गिलोय इन के काढे में अंडी का तेल डालके देवे तो यह भी वातरक्तनाशक है ॥

मंजिष्ठादि क्वाथ

मंजिष्ठोग्रा वरा तिक्ता निशा निंबामृतामरैः ।
सत्रिवृत्खदिरैः क्वाथः सर्वकुष्ठानिलास्रजित् ॥

अर्थ–मजीठ, वच, हरड, बहेडा, आंवला, कुटकी, हलदी, नीम की छाल, गिलोय, देवदारु, निसोथ और कत्था इन का काढा करके देवे. यह कुष्ठ और वातरक्त इन का नाश करे ॥

द्वितीय मंजिष्ठादिक्वाथ

मंजिष्ठारिष्टवासात्रिफलदहनकं द्वे हरिद्रे गुडूची भूनिंबो रक्तसारः सखदिरकटुका बाकुची व्याधिघातैः । मूर्वानंता विशाला कृमिरिपुसहितैस्त्रायमाणैः सपाठैः पीतो हन्यात्समस्तान् सकलतनुगतान् वातरक्तप्रकोपान् ॥

अर्थ–मजीठ, नीम की छाल, अडूसा, हरड, बहेडा, आवला, चित्रक, हलदी, दारुहलदी, गिलोय, चिरायता, लालचंदन, कत्था, कुटकी, बावची, अमलतास का गूदा, मूर्वा, धमासा, इन्द्रायण, वायविडंग, त्रायमाण और पाढ इन का काढा पीवे तो संपूर्ण वातरक्तविकारों का नाश करे ॥

खदिरक्वाथ

देयं द्विकालमपि पथ्यघृतौदनं च निर्वातमंडलमकुष्टगदं निहंति ।
कुष्ठादिसर्वसकलामयमामवातकृच्छ्रादनेन विधिना खदिरोदकेन ॥

अर्थ–खैर का काढा करके प्रातःकाल और सायंकाल दोनों बेर पीवे और ऊपर से घी भात भोजन करे तथा पवन न खाय तो यह काढा कुष्ठादि सर्व रोगों का नाश करे ॥

मंजिष्ठादि काढा

मंजिष्ठा मुस्तकुटजो गुडूची कुष्ठनागरैः । भार्ङ्गी क्षुद्रा वचा निंबनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥ पटोलकटुका मूर्वा विडंगासनचित्रकैः । शतावरी त्रायमाणा कृष्णेंद्रे यववासकैः ॥ भृंगराजमहा-

दारुपाठाखदिरचंदनैः । त्रिवृद्वरुणकैरातबाकुचीकृतमालकैः ॥ शाखोटकमहानिंबकरंजातिविषाजलैः । इंद्रवारुणिकानंतासारिवापर्पटैः समैः ॥ एभिः कृतं पिबेत्काथं कणागुग्गुलसंयुतम् । अष्टादशेषु कुष्ठेषु वातरक्तार्दिते तथा ॥ उपदंशे श्लीपदे च प्रसुप्तौ पक्षघातके । मेदोदोषे नेत्ररोगे मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥

अर्थ–मजीठ, नागरमोथा, कूडा की छाल, गिलोय, कूठ, सोंठ, भारंगी, कटेरी, वच, नीम की छाल, हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला, पटोलपत्र, कुटकी, मूर्वा, वायविडंग, विजेसार, चीते की छाल, शतावर, त्रायमाण, पीपल, इन्द्रजो, अडूसा, भांगरा, देवदारु, पाढ, खैरसार, लालचंदन, निसोथ, वरना, चिरायता, बावची, अमलतास का गूदा, सहोडा, बकायन, कंजा, अतीस, नेत्रवाला, इन्द्रायन की जड, जबासों, सारिवा और पित्तपापडा इन को समानभाग ले २ तोले का काढा करे. उस में पीपल का चूर्ण डालके और गूगल डालके पीवे तो अठारह प्रकार के कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, श्लीपद, सुन्नवात, पक्षाघात, मेददोष और नेत्ररोग इन पर यह मंजिष्ठादिकाढा उत्तम है ॥

अमृतादि कल्क

अमृता कटुका शुंठी यष्टिकल्कं समाक्षिकम् ।
गोमूत्रपीतं जयति सकफं वातशोणितम् ॥

अर्थ–गिलोय, कुटकी, सोंठ और मुलहटी इन का चूर्ण सहत और गोमूत्र में मिलायके पीवे तो कफयुक्त वातरक्त का पराजय करे ॥

लांगल्यादि चूर्ण

लांगल्याः कंदचूर्णं त्रिकटुकलवणो योगराजोभिमिश्रं गव्येनालिह्य चूर्णं मधुघृतसहितं चाक्षमात्रं हिताशी । नानारुक्पाददोषस्फुटनविमथनैर्मर्मजं तत्प्रकृष्टैर्दुःसाध्यं वातरक्तं जयति स नियतं कुष्ठमत्युग्ररूपम् ॥

अर्थ–कलयारी का कंद, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इन का चूर्ण एकत्र करके इस में से १० मासे चूर्ण सहत और गौ के घी में मिलायके देवे और पथ्य से रहे तो अनेक रक्तविकार, पाददोष, पैरों का फूटना, मर्मों का दूखना, असाध्य वातरक्त और कुष्ठ इन को नाश करे ॥

मुंड्यादि चूर्ण

लीढ्वा मुंडीतिक्ताचूर्णं मधुसर्पिःसमन्वितम् ॥

अर्थ—गोरखमुंडी और कुटकी इन का चूर्ण सहत और घी इन में मिलाय के देवे तो वातरक्त दूर होय ॥

पद्मकाद्य तैल

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वं रजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठावीराकाकोलिचंदनम् ॥
पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ—पद्माख, खस, मुलहटी और हलदी इन का काढा और राल, मजीठ, घीगुवार, कांकोली और सपेद चंदन इन का कल्क इन दोनों में तेल मिलायके सिद्ध करे तो यह तेल वाररक्त और दाह इन को दूर करे ॥

गुडूच्यादि तैल

गुडूचीक्वाथकल्काभ्यां तैलं लाक्षारसेन वा ।
सिद्धं मधुककाश्मर्यसेवनाद्वातरक्तनुत् ॥

अर्थ—गिलोय का काढा और कल्क इन में तेल मिलायके तथा लाख का सीरा, मुलहटी, कंभारी का रस ये सब डालके तेल बनाय ले. यह तेल वातरक्तरोग को नाश करे ॥

मरीचादि तैल

मरिचालशिरार्कपयः फलिनी विषमुष्टिनिशामरनिंबघनैः ।
कुटजं रसचतुर्गुणगोंबुसृतं किल तैलमसृक्पवनापहरम् ॥

अर्थ—काली मिरच, हरताल, नारियल, आक का दूध, कलयारी, कुचला, हलदी, नदीवड, नीम की छाल, नागरमोथा और कूडा की छाल इन का काढा और काढे से चौगुना गोमूत्र इन सब की बराबर तेल लेकर अग्निपर सिद्ध करे तो यह तेल वातरक्त को नाश करे ॥

बृहन्मरिच्यादि तैल

मरिचं त्रिवृता दंतीक्षीरमार्कं शकृद्रसः । देवदारु दरिद्रे द्वे मांसिकुष्ठं सचंदनम् ॥ विशालं करवीरं च हरितालं मनःशिलाम् ।

चित्रकं लांगलीं चापि विडंगं चक्रमर्दकम् ॥ शिरीषं कुटजो निंबः सप्तपर्णोऽमृता स्नुही । शम्याको नक्तमालश्च खदिरं पिप्पली वचा ॥ ज्योतिष्मती च पलिका विषस्य द्विपलं मतम् । आढकं कटुतैलस्य गोमूत्रं च चतुर्गुणम् ॥ मृत्पात्रे लोहपात्रे वा शनैर्मृद्वग्निना पचेत् । एतत्तैलं विशेषेण नाशयेत् कुष्ठजान् व्रणान् ॥ वातरक्तभवान् व्याधीन् पामाविस्फोटचर्चिकाः ॥

अर्थ-काली मिरच, निसोथ, दंती, आंक का दूध, गोबर का पानी, देवदारु, हलदी, दारुहलदी, जटामांसी, कूठ, चंदन, इंद्रायन, कनेर की जड, हरताल, मनसिल, चित्रक, करियारी, वायविडंग, पमार के बीज, सिर के बीज, कूडा की छाल, नीम की छाल, सतोना, गिलोय, थूहर, अमलतास का गूदा, कंजा, खैर, पीपल, वच और मालकांगनी ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे और सिंगियाविष ८ तोले इस प्रकार लेकर २५६ तोले सरसों के तेल में चौगुना गोमूत्र मिलावे और पूर्वोक्त औषधों का कल्क मिलायके एकत्र करे. इस को मिट्टी के बरतन में अथवा लोहे के पात्र में डालके मंदाग्नि से पचन करे. यह तेल विशेष करके कुष्ठ के व्रण, वातरक्त की व्याधी, खुजली, विस्फोटक, विचर्चिका इन को नाश करे ॥

पिंडतैल

मंजिष्ठा सारिवा सर्ज यष्टिसिक्थपयोन्वितैः ।
पिंडाख्यं साधयेत्तैलमभ्यंगाद्वातरक्तनुत् ॥

अर्थ-मजीठ, सारिवा, रार, मुलहटी और मोम तथा दूध इन के योग से बोल का तेल निकाले इस के मालिस करने से वातरक्त रोग दूर होय ॥

गुडूच्यादि तैल

तुलां पचेद्गुडूच्यास्तु जलद्रोणचतुष्टये । पादशेषः कषायस्तु गोदुग्धं द्रोणसंमितम् ॥ तिलतैलाढकं ताभ्यां पचेन्मृद्वग्निना भिषक् । वक्ष्यमाणैस्ततो द्रव्यैः सम्यक्कल्कीकृतैः पचेत् ॥ मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं जीवनीयगणस्तथा । एला रुचकमृद्वीका मांसी व्याघ्रनखो नखी ॥ हरेणुः श्रावणी व्योषं स्थिरा तामलकी तथा । शृंगी श्यामा शताह्वा च विष्णुक्रांता च पत्रकम्॥

नागकेशरवालत्वक् पद्मकोत्पलचंदनम् । एतानि कल्कवस्तूनि कथितानीह कोविदैः ॥ पानेभ्यंगेनुवासे च तैलमेतान्निषेवितम् । वातरक्तं तदुद्भूतोपद्रवांश्चाशु नाशयेत् ॥ धन्यं पुंसवनं स्त्रीणां गर्भदं वातपित्तनुत् । स्वेदकंडुरुजापामाशिरःकंपार्दितामयान्॥हन्याद् व्रणकृतान् दोषान् गुडूचीतैलमुत्तमम् ॥

अर्थ–गिलोय चार सौं तोले ले उस को ४०९६ तोले जल में डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश रहे तब उस को उतारके छान लेय. उस काढे में २०२४ तोले दूध और २५६ तोले तेल डालके औटावे और मजीठ, मुलहटी, कूठ, जीवनीय गण की औषधी, इलायची, बिजोरा, दाख, जटामांसी, थूहर, लघुनख और नखी, रेणुकबीज, मुंडी, त्रिकुटा, सालपर्णी, भुई आंवला, कांकडासिंगी, पीपल, शतावर, कोयल, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, दालचीनी, कमल, पद्माख और चंदन इन का कल्क करके उस तेल में मिलाय देवे. जब तेल सिद्ध होवे तब उतारके रख लेय. यह तेल पान, अभ्यंग, अनुवासन, बस्ति इन में उपयुक्त करने से वातरक्त तथा उस के उपद्रव इन को तत्काल नाश करे. उत्तम पुत्र, स्त्रियों को गर्भ का देनेवाला तथा वात, पित्त, पसीना, खुजली, पामा, शिरःकंप, अर्दितवायु और व्रणदोष इन को नाश करे. इस को गुडूचीतैल कहते हैं ॥

पद्मकादि तैल

पद्मकोशीरयष्ट्याह्वरजनीक्वाथसाधितम् ।
स्यात्पिष्टैः सर्जमंजिष्ठा वीरा काकोलिचंदनैः ॥
पद्मकाद्यमिदं तैलं वातासृग्दाहनाशनम् ॥

अर्थ–पद्माख, खस, मुलहटी और हलदी इन का काढा और रार, मजीठ, शतावर, काकोली और चंदन इन का कल्क इन के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्त के दाह को नाश करे. इस को पद्मकाद्य तैल कहते हैं ॥

गुडूच्यादि तैल

गुडूचीक्वाथसंयुक्तं तैलं लाक्षारसेन वा ।
सिद्धं मधुककाश्मर्यरसे वा वातरक्तनुत् ॥

अर्थ–गिलोय का काढा अथवा लाख का काढा अथवा मुलहटी और कंभारी के फल इन का काढा इन में से किसी एक के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्तनाशक है ॥

शताह्वादि तैल

शताह्वया च कुष्ठेन मधुकेन नवेन वा ।
एकैकं साधितं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ-शतावर, कूठ, नवीन मुलहटी इन में से किसी एक के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्त नाश करे ॥

वातरक्त तैल

सारिवासर्जमंजिष्ठयष्टीपिंडपयोन्वितम् ।
तैलं पक्त्वा प्रयोक्तव्यं पिंडाख्यं वातशोणिते ॥

अर्थ-सारिवा, राल, मजीठ, मुलहटी और लाल बोल इन के काढे के साथ सिद्ध करा हुआ तेल वातरक्तनाशक है. इस को पिंडाख्य तैल कहते हैं ॥

पिंडतैल

सारिवासर्ज्जयष्टयाह्वमधूच्छिष्टैः पयोन्वितैः ।
सिद्धमेरंडजं तैलं वातरक्तरुजापहम् ॥

अर्थ-सारिवा, राल, मुलहटी, मोम और जल इस में अंडी का तेल डालके तेल सिद्ध करे यह वातरक्त की पीडा को नाश करनेवाला है ॥

दशपाक बलातैल

बलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरं चतुर्गुणम् । दशपाकं भवेदेत-द्वातासृग्वातरक्ताजित् ॥ धन्यं पुंसवनं चैव नराणां शुक्रवर्धनम् । रेतोयोनिविकारघ्नमेतद्वातविकारनुत् ॥

अर्थ-खिरेटी का काढा और कल्क तेल और तेल से चौगुना दूध इस प्रकार सब को एकत्र करके औटावे इस को दशपाक तेल कहते हैं. यह वातरक्तनाशक, उत्तम पुत्र देनेवाला, वीर्यवर्द्धक, शुक्रविकार, योनिविकार और वातविकार इन को दूर करे है ॥

बलातैल

कलाकषायकल्काभ्यां तैलं क्षीरसमं पचेत् । सहस्रशतपाकं च वातरक्तहरं परम् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठमिंद्रियाणां प्रसाधनम् । जीवनं बृंहणं स्वर्यं शुक्रासृग्दोषनाशनम् ॥

अर्थ–खिरेटी के जड का काढा और कल्क में तेल और दूध ये समानभाग डालके तेल को पचावे यह सहस्रपाक अथवा शतपाक वातरक्त का नाश करे. यह श्रेष्ठ रसायन है. तथा इन्द्रियों को बल देनेवाला, जीवन, पुष्टि करे तथा स्वर को सह्मारे और शुक्र के दोष तथा रुधिर के दोष इन को नाश करे ॥

नागबलातैल

सिद्धां पचेन्नागबलातुलां च जलार्मणे पादकषायशिष्टम् । पाच्यं तुलैलाजकमत्र शस्तमजापयस्तुल्यविमिश्रितं च ॥ न तस्य यष्टीमधुकस्य कल्कं दत्त्वा पृथक् पंचपलं विपक्कम् । तद्वातरक्तं शमयत्युदीर्णं बस्तिप्रदानेन हि सप्त रात्रात् ॥ दशाहयोगेन करोत्यरोगं पीतं च तैलोत्तममश्विजुष्टम् ॥

अर्थ–बला की जड ४०० तोले और जल १०२४ तोले लेकर चतुर्थांश काढा करे फिर उतारके छान लेय तथा इस में इस के बराबर बकरी का दूध, नेत्रवाला, मुलहटी और महुआ इन का २० तोले कल्क डालके तेल को पचावे और इस की बस्ती देवे तो सात दिन में वातरक्त को नाश करे. दश दिन पीने से नैरोग्य होय ॥

आरनालतैल

आरनालाढके तैलं पादसर्जरसं शृतम् ।
प्रस्थस्थे निर्जिते तोये ज्वरदाहार्तिनुत्परम् ॥

अर्थ–कांजी २५६ तोले, तेल ६४ तोले तथा रार का काढा ६४ तोले डालके तेल सिद्ध करे यह ज्वर और दाह इन को नष्ट करे ॥

बलादि घृत

बलामतिबलां मेदीमात्मगुप्तां शतावरीम् । काकोलीं क्षीरकाकोलीं रास्नां मृद्वीं च पेषयेत् ॥ घृतं चतुर्गुणं क्षीरं तत्सिद्धं वातरक्तनुत् ॥

अर्थ–बला, अतिबला, मेहदी, कौंछ, शतावर, काकोली, क्षीरकाकोली, रास्ना, दाख इन का कल्क और घी, घी से चौगुना दूध डालके घृत सिद्ध करे यह वातरक्तनाशक है ॥

गुडूच्यादि घृत

गुडूचीक्काथकल्काभ्यां सपयस्कं घृतं शृतम् ।
हंति वातं तथा रक्तं कुष्ठं जयति दुस्तरम् ॥

अर्थ–गिलोय का काढा तथा इसी का कल्क और दूध इन के साथ औटायकर सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त और कोढ इन को नाश करे ॥

अमृतादि घृत

अमृतायाः कषायेण कल्केन च महौषधम्। मृद्वग्निना घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम्॥ आमवाताढ्यवातादीन्कृमिकुष्ठव्रणानपि। अर्शांसि गुल्मांश्च तथा नाशयत्याशु योजितम्॥

अर्थ–गिलोय का काढा और कल्क इन की बराबर मंदाग्नि से सिद्ध करा हुआ घी वातरक्त नाश करने में बडी भारी औषध है. तथा यह आमवात, कृमि, कुष्ठ, व्रण, बवासीर और गोला इत्यादिकों का नाश करे ॥

शतावरीघृत

शतावरीकल्कगर्भं रसे तस्याश्चतुर्गुणे।
क्षीरतुल्यं घृतं सिद्धं वातरक्तहरं परम्॥

अर्थ–शतावर का कल्क, घी, घी के बराबर दूध और घी से चौगुना सतावर का रस इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी वातरक्तनाशक है ॥

अमृतास्वरसविपक्वं सर्पिस्तत्कल्कसाधितं पीतम्।
अपहरति वातरक्तं उत्तानं चावगाढं च ॥

अर्थ–गिलोय के स्वरस में सिद्ध करे हुए घी को गिलोयसत्व के साथ पीवे तो उत्तान तथा अवगाढ ऐसे वातरक्त को नाश करे ॥

अमृतादिघृत

अमृतायाः पलशतं जलद्रोणे सुशोषितम्। घृतप्रस्थं विपक्तव्यं कल्कानष्टौ पलानि च॥ चतुर्गुणेन पयसा वातासृक्कुष्ठनाशनम्। कामलापांडुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम्॥

अर्थ–गिलोय ४०० तोले को १०२४ तोले जल में औटायके छान लेवे उस में ६४ तोले घी और ३२ तोले गिलोयसत्व डालके फिर मंदाग्नि पर चौगुने दूध के साथ पक्व करे फिर इस को भक्षण करे तो वातरक्त, कुष्ठ, कामला, पांडुरोग, प्लीहा, खांसी, ज्वर इन को नाश करे ॥

अमृतादि घृत

अमृता मधुकं द्राक्षा त्रिफला नागरं बला। वासारग्वधवृश्ची-

वदेवदारु त्रिकंटकम् ॥ कटुका रोहिणी कृष्णा काश्मर्याश्च फलानि च । रास्ना क्षुरकगंधर्वदेवदारुबलोत्पलैः ॥ कल्कैरेभिः समैः कृत्वा सर्पिःप्रस्थं विपाचयेत्। धात्रीरसः समो देयो पयस्त्रिगुणसंयुतः ॥ सम्यक् सिद्धं तु विज्ञाय भोज्ये पाके च शस्यते । बहुदोषोत्थितं वातरक्तेन सह मूर्च्छितम् ॥ उत्तानं वापि गंभीरं त्रिकजंघोरुजानुजम् । कोष्टुशिर्षे महाशूले आमवाते सुदारुणे ॥ महारोगोपसृष्टस्य वेदना चातिदुस्तरा । मूत्रकृच्छ्रमुदावर्तं प्रमेहं विषमज्वरान् ॥ एतान् सर्वान्निहंत्याशु वातपित्तकफोत्थितान् । सर्वकालोपयोगेन वर्णायुर्बलवर्धनम् ॥ अश्विभ्यां निर्मितं श्रेष्ठं घृतमेतदनुत्तमम् ॥

अर्थ–गिलोय, मुलहटी, दाख, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, बला, अडूसा, अमलतास, पुनर्नवा, देवदारु, गोखरू, कुटकी, पीपल, कंभारी के फल, रास्ना, तालमखाने, अंड, दारुहलदी, अतिबला, कमल ये सब समानभाग लेवे इन का कल्क करे. इस में ६४ तोले घी डालके और आंवले का रस घी के बराबर डाले और दूध घी से तिगुना मिलायके घृत सिद्ध करे. इस को भोजन में अथवा पदार्थ में मिलायके भक्षण करे. यह अनेक दोषों से उत्पन्न हुई मूर्च्छा, रुधिर, उत्तान अथवा गंभीर, त्रिक, जंघा, ऊरू और जानु इन की पीडा, क्रोष्टुशीर्ष, महाशूल, दारुण आमवात, महारोग की दुस्तर पीडा, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त्त, प्रमेह, विषमज्वर इन सब रोगों को दूर करे. तथा वातपित्त, कफ इन से उत्पन्न हुए रोग इन को नष्ट करे यह सर्वकाल उपयोग में लाने से आयुष्य, बल इन को बढावे यह अत्युत्तम घृत अश्विनीकुमार ने निर्माण करा है ॥

अश्वगंधापाक

पूर्वं कृत्वाश्वगंधायाश्चूर्णं दश पलानि च । तदर्धं नागरं चूर्णं तस्यार्धं पिप्पली शुभा ॥ मरिचानां पलं चैकं सूक्ष्मं चूर्णं तु कारयेत् । त्वगेलापत्रपुष्पाणि चैकैकं तु पलं पलम् ॥ तुलार्धं महिषीदुग्धं तस्यार्धस्य च माक्षिकम् । माक्षिकार्धं घृतं गव्यं खंडा त्रिंशत्पलानि च ॥ पयःखंडाज्यमाक्षिक्यं चत्वार्यैकत्र कारयेत् । पूर्वं कथितदुग्धेन क्षिप्त्वा चूर्णं पचेद्भिषक् ॥ दर्वी-

प्रलेपे संजाते चातुर्जातं विमुंचयेत्। यज्जातं तंदुलाकारं ताव-न्निष्पन्नमाचरेत् ॥ पयोमुक्तं घृतं दृष्ट्वा तावदुत्तारयेत्ततः। ग्रंथिकं जीरकं छिन्ना लवंगं तगरं तथा ॥ जातीफलमुशीरं च वालकं मलयोद्भवम्। श्रीफलांभोरुहं धान्यं धातकी वंशलोचनम् ॥ धात्री खदिरसारं च घनसारं तथैव च। पुनर्नवाजगंधा च हुताशनशतावरी ॥ मात्रागद्याणकं चैव द्रव्याणामेकविंशतिः। सूक्ष्मं चूर्णं कृतं चैव योगो ह्यस्मिन्विनिर्दिशेत् ॥ पश्चात्सुशीतलं कृत्वा स्निग्धभांडे निधापयेत्। पलार्धमपि भुंजीत यदृच्छाहारभोजनः ॥ कासं श्वासं तथा हन्यादजीर्णं वातशोणितम्। प्लीहां मदं च मेदं च आमवातं च दुर्जयम् ॥ शोफं शूलं च वातार्शः पांडुरोगं च कामलाः। ग्रहणीं गुल्मरोगं च अन्यं वातकफोद्भवम् ॥ विकारो विलयं याति यथा सूर्योदये तमः। एकमासप्रयोगेण वृद्धः संजायते युवा ॥ मंदाग्नीनां हितं बल्यं बालानां चांगवर्धनम्। स्त्रीणां च कुरुते पुष्टिं प्रसवे स्तन्यवर्धनम् ॥ यावत्स्तन्यं भवेत्स्तोकं तावद्दुग्धयुतं पिबेत्। क्षीणानां चाल्पवीर्याणां हितं कामाग्निदीपनम् ॥ सर्वव्याधिहरं श्रेष्ठं योगं सर्वोत्तमं विदुः ॥

अर्थ–असगंध ४० तोले, सोंठ २० तोले, पीपल १० तोले और काली मिरच, दालचीनी, इलायची, पत्रज और लवंग ये प्रत्येक चार २ तोले, भैंस का दूध २०० तोले, सहत १०० तोले, गौ का घी ५० तोले और मिश्री १२० तोले इन सब को मिलाय प्रथम दूध को औटावे फिर इस में ऊपर कही हुई सब औषधों का चूर्ण डालके पचावे और उस में दूसरा दूध, मिश्री, सहत और घी मिलायके फिर पचावे. जब गाढा होने पर आवे तब दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इन का चूर्ण डालके पचावे जब चावल के समान दाने पडने लगे और घी छूटने लगे तब उतारके उस में पीपरामूल, जीरा, गिलोय, लौंग, तगर, जायफल, नेत्रवाला, खस, चंदन, श्रीफल, कमलगट्टा, धनिया, धाय के फूल, वंशलोचन, आंवले, खैरसार, कपूर, पुनर्नवा, असगंध, चित्रक और शतावर ये इक्कीस औषध आधे २ तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस चासनी में डाल देवे जब शीतल हो जावे तब उतारके घी के

चिकने बासन में भरके रख देवे. इस को अश्वगंधा पाक कहते हैं. इस में से दो तोले नित्यप्रति एक महिनेपर्यंत भक्षण करे और ऊपर से यथेच्छ भोजन करे तो खांसी, श्वास, अजीर्ण, वातरक्त, प्लीहा, उन्माद, मेदरोग, आमवात, सूजन, शूल, वातार्श, पांडुरोग, कामला, संग्रहणी, गुल्मरोग और वातकफजनित रोग इन को नाश करे. एक महिने सेवन करने से बुड्ढा भी जवान होय यह मंदाग्निवालों को और बालक इन को हितकारी है. बलकारी तथा पौष्टिक ऐसा है. तथा स्त्रियों को पुष्ट करे है. प्रसूत होने पर यदि दूध न रहे तो जबतक दूध थोडा रहे तबतक इस पाक को प्रसूता स्त्री दूध के साथ पीवे तो स्तनों में अधिक दूध हो जावे. अल्पवीर्यवालों को हितकारी और काम तथा अग्नि इन को बढावे तथा संपूर्ण व्याधियों को नाश करे. ऐसा यह सर्वोत्तम योग है ॥

प्रपौंडरीकादि लेप

प्रपौंडरीकं मंजिष्ठा दार्वी मधुकचंदनैः । सीतोपलैलासक्तूभिर्मसूरोशीरपद्मकैः ॥ लेपो रुग्दाहवीसर्परोगशोफनिवारणः ॥

अर्थ–पुंडरीक वृक्ष (कमल की एकजाति), मजीठ, दारुहलदी, मुलहटी, चंदन, मिश्री, इलायची, जौं, मसूर, खस और पद्माख इन का लेप करे तो पीडा, दाह, विसर्प और सूजन इन को नाश करे ॥

लेप और अभ्यंग

लेपः पिष्टास्तिलास्तद्वत् भ्रष्टाः पयसि निर्वृताः । क्षीरपिष्टमुपालेप एरंडस्य फलानि च ॥ कुर्याच्छूलनिवृत्त्यर्थं शताह्वां चाधिकेनिले । मूत्रक्षीरसुरासिद्धं घृतमभ्यंजने हितम् ॥ सिद्धं तु मधुसूक्तं तु सेकाभ्यंगः फलोत्तरे । गृहधूमं वचा कुष्ठं शताह्वा रजनीद्वयम् ॥ प्रलेपः शूलनुद्वातरक्ते वातकफोत्तरे । प्रभूतकालमासेव्यं मुच्यते वातशोणितात् ॥

अर्थ–तिलों को बारीक पीसके भून लेवे. फिर उन को दूध में औटावे इन का अथवा अंडी को पीस के भूनके दूध में औटावे इन का अथवा इसी प्रकार शतावर की जड का लेप करे तो वातादिक शूल को शमन करे. तथा गोमूत्र, दूध और सहत इन में सिद्ध करे हुए घृत की मालिस करना हितकारी होती है तथा मधुसूक्त को सिद्ध करके उस का सेवन करे अथवा मालिस करे तो यह सन्निपाताधिक रक्तपित्त

पर उत्तम है अथवा घर का धूआ, वच, कूट, शतावर, हलदी और दारुहलदी इन का लेप बहुत दिनपर्यंत कफादिक वातरक्त पर करे तो यह रोग दूर हो ॥

शताह्वादि लेप

उभे शताह्वे मधुकं विशाला बलाप्रियाले च कसेरुयुग्मम् ।
घृतं विदारीं च शिलोपलां च कुर्यात्प्रदेहं पवने सरक्ते ॥

अर्थ–कलौंजी, सौंफ, मुलहटी, इन्द्रायन की जड, बला, चिरोंजी, कचूर, मोथा, घी, विदारीकंद और मिश्री इन सब को पीसके वातरक्त रोग पर लेप करे तो हितकारी होवे ॥

सहस्रधौत घृत तथा राळयोग

सहस्रशतधौतेन घृतेन रुधिरोत्तरे ।
लेपनं चोष्णशीतेन घृतसर्जरसेन वा ॥

अर्थ–रक्ताधिक वातरक्तवाले के हजार वार का धुला हुआ घी का लेप करे अथवा रार और घी को औटायके लेप करे तो वातरक्त दूर होय ॥

नवनीतमर्दन

माहिषं नवनीतं तु गोमूत्रक्षीरसैंधवैः । खल्वेनैकत्र संलोड्य
वह्निना तापयेच्छनैः ॥ गात्रमुद्वर्त्तयेत्तेन देहस्फुटनशांतये ॥

अर्थ–भैंस का मक्खन, गोमूत्र, दूध और सैंधानिमक ये खरल पीसके एकत्र करे फिर इन को गरम करके देह में मालिस करे तो अंगों का फूटकर बहना बंद होय ॥

सर्षपादि और वरुणादि लेप

गौरसर्षपकल्केन प्रलेपो वातरक्तनुत् ।
लेपो वरुणशिग्रूत्थकांजिकेन रुजापहः ॥

अर्थ–सफेद सरसों को पीसके इस का अथवा वरना तथा सहजना इन को कांजी में पीसके लेप करे तो वातरक्त का नाश करे ॥

कनकादि लेप

कनकभुजगवल्लीमालतीपत्रमूर्वादनरसकुनटीभिर्मर्दितं तैलयोगात् । अपहरति रसेंद्रः कुष्ठकंडूविसर्पस्फुटितचरणवक्त्रं श्यामलत्वं नराणाम् ॥

अर्थ–धत्तूरे के पत्ते, नागरवेल के पान, मालती के पत्ते, मूर्वादन और मनसिल इन के चूर्ण को तेल में घोटके इस का लेप कोठ, खुजली, विसर्प, पैरों का फूटना और मुख के काले दाग इन का नाश करे ॥

पंचामृतरस

पारदं च क्रियाशुद्धं तुल्यं शुद्धं च गंधकम् । अभ्रकं तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु गुग्गुलुः ॥ सर्वांशममृतासत्वं भावयेदौषधैः पृथक् । निर्गुंडी गोक्षुरच्छिन्ना कोकिलाख्यांघ्रिजै रसैः ॥ सप्तवारं ततो युंज्याद्वातरक्ते त्रिवल्लकम् । कोकिलाख्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥

अर्थ–शुद्ध पारा १, शुद्ध गंधक १, अभ्रकभस्म २, गूगल ४, गिलोय का सत्व ८ भाग इस प्रकार सब को एकत्र कर उस में निर्गुंडी, गोखरू, गिलोय और तालमखाने इन औषधों की पृथक् २ सात २ भावना देवे. फिर इस में से ६ रत्ति के अनुमान नित्य देकर ऊपर से तालमखाने की जड का रस पीवे तो वातरक्त रोग दूर हो ॥

हरतालभस्म

तालं रसं तुवरिकां नयनेंदुबाणभागैर्विशुद्धवसुजातरसैर्विमर्द्य । दत्त्वा शरावयुगुले प्रविधाय मुद्रां दत्त्वा गजाह्वपुटमस्य भवेत्सुभस्म ॥ दृष्ट्वाकृतिं प्रकृतिमप्यखिलामवस्थां दृष्ट्वा पुनश्च बहुधा बहुधा विचार्य । दद्याच्च तंदुलमिता हरितालमात्रा प्राप्ता मया यतिवराद्धि महाप्रयत्नात् ॥

अर्थ–हरताल शुद्ध २, पारा १ और फिटकरी ५ भाग इस प्रकार लेकर इन को खरल करके इस में सफेद पुनर्नवा के जड की भावना देवे. फिर इस का गोला बनाय शरावसंपुट में रखे ऊपर से कपड मिट्टी करके गजपुट में धरके फूंक देवे तो हरताल की भस्म होय इस को रोगी की आकृति, बल और काल इन को वारंवार विचार करके १ चावल भर की मात्रा खाने को देवे तो वातरक्त को नष्ट करे. यह भस्म मुझ को बडी भारी सेवा करने से योगिराज से प्राप्त हुई है ॥

कैशोरगुग्गुलु

नवमहिषलोचनोदरसन्निभवर्णस्य गुग्गुलोः प्रस्थम् । प्रक्षिप्य तोयराशौ त्रिफलाममृतां यथोक्तपरिमाणाम् ॥ संसाधयेत्प्रय-

त्नाद्दर्व्या संघट्टयेच्च तद्यावत्। अर्धक्षपितं जातं तोयं ज्वलनस्य संसर्गात्॥ अवतार्य वस्त्रपूतं पुनरपि संसाधयेदापः। सांद्रीभूते तस्मिन्नवतार्य हिमोपस्पर्शे॥ पथ्याचूर्णे द्विपलं त्रिकटुकचूर्णं षडक्षपरिमाणम्। कृमिरिपुचूर्णार्धपलं कर्षं कर्षं त्रिवृद्दंत्योः॥ पलमेकं छिन्नरुहां दत्त्वा संचूर्ण्य यत्नेन। संस्थापयेच्च गुप्तं स्निग्धे भांडे घृतेन सुरभीणाम्॥ आदाय तस्य मात्रां विहितातिथिदेवताप्रणतिः। खादेद्यथाग्नि मनुजो व्याधिबलापेक्षया सम्यक्॥ इच्छाहारो भेषजकालश्च सर्व एवात्र। तनुरोधिवातशोणितमेकद्वित्र्युल्बणं चिरोत्थमपि॥ भग्नस्रुतिपरिशुष्कं स्फुटितमपि निहंति यत्नेन। व्रणकासकुष्ठगुल्मश्वयथूदरपांडुरोगमेदांसि॥ मंदाग्नित्वविबंधं प्रमेहदोषांश्च नाशयति। सततं निषेव्यमाणः कालेन निहंति रोगगणम्॥ आभिभूय जरादोषं करोति कैशोरकं रूपम्॥

अर्थ—नवीन उत्पन्न हुए भैंसे के नेत्र के पेटे के समान जिस का रंग ऐसा गूगल ६४ तोले लेवे. उस को गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला लेवे. इन सब को जल में डालके औटावे और कलछी से चलाता रहे जब आधा जल रह जावे तब उतारके छान लेय और फिर इस को भट्टीपर रखके औटावे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल होने पर आगे लिखी हुई औषधों का चूर्ण डाले. जैसे—हरड ८, सोंठ २, काली मिरच २, पीपल २, वायविडंग ४, निसोथ और दंती ये एक २ तोले तथा गिलोय ८ तोले डाले और बहुत देरतक सब को एकजीव होय तबतक घोटे. फिर इस को गौ के घी से चिकने पात्र में भरके उस का मुख बांधके धर देवे. फिर देवता, अतिथि इन का पूजन कर अपना अग्निबल और रोग का बल विचारके उसी के अनुसार मात्रा भक्षण करे तथा इच्छानुसार आहार करे और जो समय औषध का है उसी समय औषध खाने को देवे. यह औषध शरीर में व्यापक ऐसे वातरक्त एकाधिक दोष अथवा दो तीन दोष जिस में अधिक हों ऐसे बहुत दिन का स्राव जिस का बंद हो गया हो शुष्क तथा फूटनेवाले वातरक्त का नाश करे और व्रण, खांसी, गोला, कुष्ठ, सूजन, उदर, पांडुरोग, मेद, मंदाग्नि, पेट का फूलना और प्रमेह इन का नाश करे. तथा निरंतर इस के सेवन करने से कालकरके सर्वरोगों का नाश करे और वृद्धावस्था दूर कर तारुण्यता लाता है॥

माहिषाख्य गुग्गुलु

प्रस्थमेकं गुडूच्याश्च सार्धप्रस्थं तु गुग्गुलुः। प्रत्येकं त्रिफलायाश्च तत्प्रमाणं विनिर्दिशेत् ॥ सर्वमेकत्र संक्षिप्य क्वथयेदुल्बणेंभासि । पादशेषं परिश्राप्य कषायं ग्राहयेद्भिषक् ॥ पुनः पचेत्कषायं वा यावत्सांद्रत्वमाप्नुयात् । दंतीव्योषविडंगानि गुडूचीत्रिफला-त्वचः ॥ ततश्चार्धपलं चूर्णं गृह्णीयात्तु प्रति प्रति । चूर्णं कर्षं त्रिवृत्तायाः सर्वं तत्र विनिःक्षिपेत् ॥ तस्मिन्सुसिद्धं विज्ञाय कोष्णं पात्रे विनिःक्षिपेत् । ततश्चाग्निबलं ज्ञात्वा तस्य मात्रां प्रयोजयेत् ॥ वातरक्तं तथा कुष्ठं गुदजानग्निसादनम् । दुष्टव्रणं प्रमेहं च ह्यामवातं भगंदरम् ॥ नाड्याढ्यवातान् श्वयथून् सर्वा-न्वातामयान् जयेत् । अश्विभ्यां निर्मितः पूर्वं माहिषाख्यश्च गुग्गुलुः ॥

अर्थ–गिलोय, हरड, बहेडा और आंवला हर एक चौंसठ तोले लेवे और गूगल ७२ तोले इन को एकत्र कर बहुत से जल में औटावे. जब जल चतुर्थांश रहे तब उतार-के छान लेवे. फिर इस को गाढा होने पर्यंत औटावे और इस में दंती, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, गिलोय, हरड, बहेडा, आंवला और दालचीनी ये प्रत्येक दो दो तोले तथा निसोथ १ तोले ले सब का चूर्ण करके उस काढे में डाल देवे और कलछी से मिलाय देवे. जब भले प्रकार सीज जावे तब कुछ २ गरम को ही चिकने बासन में भर देवे फिर अग्नि बल विचारके मात्रा देवे तो वातरक्त, कुष्ठ, बवासीर, मंदाग्नि, दुष्टव्रण, प्रमेह, आमवात, भगंदर, नाडीवात, सूजन और संपूर्ण वातरोग इन को जीते इस को **माहिषगूगल** कहते हैं. यह अश्विनीकुमार ने निर्माण करा है ॥

तालकेश्वर रस

तालकस्य तु यस्येह पत्राणि स्युः पृथक् पृथक् । अभ्रकस्येव तत् ग्राह्यं हरितालं विचक्षणैः ॥ पुनर्नवायाः स्वरसे तालकं तावद्विमर्द्दयेत् । दिनमेकं ततस्तस्मिन् घनत्वं गमिते सति ॥ कुर्वीत चक्रिकां तां तु शोषयेत्सम्यगातपे । पुनर्नवासमस्तां-गक्षारैः स्थालीं गलावधि ॥ पूरयेत्तु ततः क्षारं दृढयेत्पीडनेन

हि । क्षारस्योपरि तां सम्यक् दत्त्वा तत्तालचक्रिकाम् ॥ तत आच्छादनं दत्त्वा मुद्रां कृत्वा विशोषयेत् । स्थालीं चुल्यां निधायाग्निममंदं ज्वालयेद्भिषक् ॥ निरंतरमहोरात्रपंचकं तेन सिध्यति । स्वांगशीतं समुत्तार्य गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ॥ तालकेश्वरनामायं रसो गुंजामितोशितः । गुडूच्यादिकषायेण गदानेतान्विनाशयेत् ॥ सोपद्रवं वातरक्तं कुष्ठान्यष्टादशापि च । फिरंगदेशजं जंतोर्हंति रोगं सुदुस्तरम् ॥ विसर्पं मंडलं कंडूं पामां विस्फोटकं तथा । वातरक्तकृतान् रोगानन्यानपि विनाशयेत् ॥ एतद्भेषजसेवी तु लवणाम्लौ विवर्जयेत् । तथा कटुरसं वह्निमातपं दूरतस्त्यजेत् ॥ लवणं यः परित्यक्तुं न शक्नोति कथंचन । स तु सैंधवमश्नीयान्मधुरोपरसो हितः ॥

अर्थ–जिस हरताल के अभ्रक के से पत्ते अलग २ हो जावे उस को लेकर पुनर्नवा के स्वरस में एक दिन खरल करे जब गाढी हो जावे तब उस की छोटी २ टिकिया बनायके धूप में सुखाय लेवे. फिर पुनर्नवा के पंचांग की राख को एक मटके में भरके बीच में उन टिकियाओं को रखके ऊपर से उसी पुनर्नवा की राख को खूब दाब २ के मुखपर्यंत भर देवे. फिर इस के ऊपर मुद्रा देकर सुखाय लेवे. इस मटके को चूल्हे पर चढाय नीचे पांच दिनरात्रि तीव्राग्नि देवे तो यह तालकेश्वर रस सिद्ध होय इस को स्वांगशीतल होनेपर युक्तिपूर्वक उस में से निकाल लेवे. यह रस गिलोय के काढे से १ रत्ती भक्षण करे तो उपद्रवसहित वातरक्त, अठारह प्रकार के कुष्ठ तथा फिरंगोपदंश, विसर्प, मंडल, खुजली, पामा, विस्फोटक और वातरक्त से उत्पन्न हुए उपद्रव इन सब रोगों का नाश करे. यह तालकेश्वर भक्षण करनेवालों को खारी, खट्टा, चरपरा, अग्नि से तापना, धूप में डोलना इन को त्याग दे जिस से विना निमक के न रहा जाय वह थोडा सैंधानिमक खाय और मीठा रस सेवन करे ॥

अमृतभल्लातकावलेह

निमज्जंति जले यास्तु भल्लातक्यश्च ता हिताः । ताश्च सर्वा विधातव्याः संछिन्नमुखमुद्रिकाः ॥ तासां प्रस्थद्वयं छित्त्वा जलद्रोणे परिक्षिपेत् । प्रस्थद्वयं गुडूच्याश्च क्षुण्णं तत्रांभसि क्षिपेत् ॥ चतुर्थांशावशेषं तु कषायमवतारयेत् । वस्त्रपूते

कषाये च वक्ष्यमाणानि निक्षिपेत् ॥ सर्वाण्येकत्र भांडे तु पचेन्मृद्वग्निना शनैः । सर्वद्रव्ये घनीभूते पावकादवतारयेत् ॥ तत्र क्षेप्याणि चूर्णानि ब्रूमो विश्वामृताऽमृता । बाकुची चक्रमर्दश्च पिचुमंदो हरीतकी ॥ धात्री रात्रिश्च मंजिष्ठा मरिचं नागरं कणा । यवानी सैंधवं मुस्तं त्वगेला नागकेसरम् ॥ पर्पटः पत्रकं वालमुशीरं चंदनं तथा । गोक्षुरस्य च बीजानि कर्चूरो रक्तचंदनम् ॥ पृथक् पलार्धमानानामेषां चूर्णमिदं क्षिपेत् । सम्यक् संमिश्र्य तद्रक्षेद्भाजने मृन्मये नवे ॥ प्रभाते भक्षिते जीर्णेऽमृतभल्लातकाभिधम् । अवलेहं समश्नीयात्पलमात्रं जलेन हि ॥ प्रकृत्या देहिनो यस्य सहतेरुष्करो न चेत् । सोरुष्करस्य संसर्गं सदा दूरात्परित्यजेत् ॥ भल्लातकावलेहोयं वातरक्तांतकृन्मतः । वातरक्तसमुद्भूतान् विकारानाशु नाशयेत् ॥ कुष्ठानि सकलान्येव दुर्नामानि हरेदरम् । विसर्पं मंडलं कंडूं शमयेदेष सेवितः ॥ विकारान्वातिकान्सर्वास्तथा रुधिरसंभवान् । हरत्येव प्रयोगोयं यत्नतः सेवितः सदा ॥ व्यायाममातपं वह्निमम्लं मांसं दधि स्त्रियम् । तैलाभ्यंगं तथाध्यानं नरो भल्लातके त्यजेत् ॥

अर्थ–पानी में डूब जावे ऐसे भिलाए ५१६ तोले को दो दो टुकडे कर २०४८ तोले जल में डाले और इतनी ही गिलोय को टुकडे करके डाल देय फिर इस को अग्निपर चढायके काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में सोंठ, गिलोय, बावची, चकवड, नीम की छाल, हरड, आंवले, हलदी, लाल निसोथ, मजीठ, मिरच, सोंठ, पीपल, अजमायन, सैंधानिमक, नागरमोथा, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, पित्तपापडा, तालीसपत्र, नेत्रवाला, खस, चंदन, गोखरू, कचूर और लाल चंदन, इन सब के दो दो तोले चूर्ण डाले और गाढा होने पर्यंत उस को अग्निपर मंदाग्नि से पक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके नवीन मिट्टी के बरतनमें भरके धर रखे. यह अमृतभल्लातक अवलेह जल से एक पल प्रमाण सेवन करे. जिन को भिलाए न हितकारी हो वह इस अवलेह को न खाय यह सविकारक वातरक्त को नाश करे तथा संपूर्ण कुष्ठ, बवासीर, विसर्प, मंडल, खुजली,

संपूर्ण वातविकार और रुधिर से उत्पन्न वात के विकार इन को नाश करे. इसपर दंड, कसरत, धूप, अग्नि, खटाई, मांस, दही, स्त्रीसंग, तैल की मालिस और मार्गगमन इन को त्याग देवे ॥

योगसारामृत

शतावरी नागबला उच्चटा वृद्धदारुकम् । पुनर्नवामृता कृष्णा वाजिगंधा त्रिकंटकम् ॥ पृथक् दश पलान्येषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् । तदर्धं शर्करायुक्तं चूर्णं तन्मर्दयेद्बुधः ॥ स्थापयेत्तु दृढे भांडे मध्वाधाढकसंयुतम् । घृतप्रस्थेनावलोड्य त्रिसुगंधिपलेन च ॥ यः खादेन्नष्टचेष्टाग्नौ यथा च विकलेंद्रियः । वातरक्तं क्षयं कुष्ठं पित्तं पित्तास्रसंभवम् ॥ वातपित्तकफोत्थांश्च रोगानन्यांश्च तद्विधान् । हत्वा करोति पुरुषं वलीपलितवर्जितम् ॥ योगसारामृतो नाम्ना लक्ष्मीकांतिविवर्धनः ॥

अर्थ–शतावर, नागबला, घूंघची की जड (अथवा उटंगण की जड), विधायरो, पुनर्नवा, गिलोय, पीपल, असगंध और गोखरू ये प्रत्येक ४० तोले लेवे. इन का बारीक चूर्ण करे और चूर्ण से आधी मिश्री और सहत १२८ तोले मिलावे. तथा घी ६४ तोले डालके सब को एकत्र करे सब दृढपात्र में भरके रख देवे. यह नष्टेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय ऐसे रक्तपित्ताधिक वातरक्त पर देवे और वात, पित्त और कफ इन से उत्पन्न हुई ऐसी अनेक व्याधियों को अथवा वातरक्त के समान व्याधियों को नाश कर रोगी को वलीपालित रहित करके शोभा और कांति इन को बढावे. इस को **योगसारामृत** कहते हैं. यह टोडरानंद ग्रंथ में लिखा है ॥

सर्वेश्वर रस

रसहिंगुललोहानां त्रयः कर्षाः पलद्वयम् । ताम्रगंधकयोः सर्वं जंबीराद्भिर्विमर्दयेत् ॥ विषमुष्टयर्कहेमस्नुक्करवीरजलैः पुनः । सप्तधा गोलकं कृत्वा स्वेदयेद्दिवसद्वयम् ॥ वालुकायंत्रमध्यस्थं शीते निष्कं विषस्य च । कर्षं कणानां सूतः स्यात्सर्वेशो वातरक्तजित् ॥ गुंजामात्रास्य दातव्या द्वयं वा मत्तवारिणा । रक्तप्रकोपनं तीव्रं पित्तलं परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा, हींगलू, लोहे की भस्म ये प्रत्येक तोले २ भर और ताम्रभस्म तथा गंधक ये आठ २ तोले इन सब को एकत्र करके नीबू के रस में खरल करे और इस को कुचला, आक, धतूरा, थूहर और कनेर इन के रस की सात २ भावना देवे फिर इस का गोला बनायके दो दिन वालुकायंत्र में पुट देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके इस में सिंगियाविष आधा तोला और पीपल १ तोले इन का चूर्ण मिलावे तो यह **सर्वेश्वर रस** तयार होवे. इस के सेवन करने की मात्रा एक रत्ती से लेकर दो रत्ती पर्यंत की है. इस को धतूरे के रस से देवे तथा रुधिर को कुपित करनेवाले, दाहक, गरम और पित्त कुपित करता ऐसे पदार्थों से पथ्य करना चाहिये ॥

अर्केश्वर रस

पलानि रसचत्वारि बलेर्द्वादशतावती । ताम्रस्य चक्रिका देया रसस्यार्धशरावकम् ॥ दत्त्वा निरुद्ध्वा तद्भांडे पूरयेद्भस्मना दृढम् । अग्निं प्रज्वालयेद्यामद्वयं शीतं विचूर्णयेत् ॥ पुटे द्वादशधा सूर्यदुग्धेनालोडितं पुनः । वरापावकशृंगाणां द्रवैस्त्रिस्त्रिश्च भावयेत् ॥ अयमर्केश्वरो वातरक्तमण्डलसुप्तिजित् । गुंजाद्वयं ददीतास्य लवणादि विवर्जयेत् ॥

अर्थ—पारा १६ तोले, गंधक ४८ तोले और तांबे के पत्र १ तोले इस प्रकार लेकर प्रथम पारे गंधक की कजली करके फिर इन को एक पात्र में भरके उस के ऊपर पत्र से बंदकर फिर राख को खूब दाबके भर देवे. ऊपर से पात्र के मुखपर ढकना दे कपडमिट्टी कर देवे. इस को चूल्हे पर चढाय दो प्रहर की अग्नि देवे. जब शीतल हो जावे तब निकालके आक के दूध में खरल करे और पुट देवे इस प्रकार बारह पुट देवे फिर त्रिफला, चीते की छाल, कांकडासिंगी इन की तीन २ पुट देवे. यह **अर्केश्वर रस** दो रत्ती देवे तो वातरक्तसंबंधी चकत्ते और शून्यता इन को नाश करे इस पर लवणादिक वर्जित पथ्य देवे ॥

वातरक्तरोग में पथ्य

उत्तानेऽभ्यंजनं सेकः सोपनाहः प्रलेपनम् । गंभीरे स्नेहपानं च स्थापनं च विरेचनम् ॥ सर्वत्रास्रस्रुतिः सूचीजलौकाशृंग्यलाबुभिः । शतधौतघृताभ्यंगो मेषीदुग्धावसेचनम् ॥ यवषष्टिकनीवारकलमारुणशालयः । गोधूमाश्चणका मुद्गास्तुवर्योऽपि मकु-

ष्टकाः ॥ अजाव्यमाहिषीणां च गवामपि पयांसि च । उपोदिका काकमाची वेत्राग्रं सुनिषण्णकम् ॥ वास्तुकं कारवेल्लं च तंदुलीयं पटोलकम् । धात्रीफलं शृंगबेरं सुरणं श्वेतशर्करा ॥ मृद्वीकावृद्धकूष्माडं नवनीतं नवं घृतम् । लावतित्तिरवार्तीक-ताम्रचूडविविष्किराः ॥ प्रतुदाः शुकदात्यूहकपोतचटकादयः । शिंशपागरुदेवाह्वसरलस्नेहमर्दनम् ॥ तिक्तं च पथ्यमुद्दिष्टं वात-रक्तगदे नृणाम् ॥

अर्थ–चित्त सोना, उबटना, जल का तरडा देना, पसीने निकालना, लेप करना, गंभीर वातरक्त में स्नेहपान, आस्थापन बस्ती, दस्त कराने, सुई, जोख, सिंगी और तूंबी आदि से रुधिर का निकालना, सौवार धुले हुए घी की मालिस, भेड के दूध का सेचन, जों, सांठी चावल, सामखिया, कलमी चाँवल, लाल चावल, गेंहूं, चना, मूंग, अरहर, मोठ ये अन्न, भेड, बकरी, भैस और गौ का दूध, लवा, तीतर, बटेर, मुरगा और विष्कर (अन्न को विखेरके खानेवाले), प्रतुद, तोता, पपैया अथवा जलकाक, पिंडुकिया, चिडा आदि का मांस· पोई का साग, मकोय, वेत की कोंपल और चौपतिये का साग, बथुआ, करेला, चौलाई, प्रसारणी, धतूरा, पुराना पेठा, घृत, अमलतास के पत्ते, पटोलपत्र, अंडी का तेल, दाख, सपेद खांड, मक्खन, सोमल-ता, कस्तूरी, सपेद चंदन, सीसो, अगर, देवदार, तेल की मालिस और कडवा रस ये सब वातरक्तरोग में पथ्य कहे हैं ॥

अपथ्य

दिवास्वप्नाग्निसंतापव्यायामातपमैथुनम् । माषाः कुलित्था निष्पावाः कलायाः क्षारसेवनम् ॥ अण्डजानूपमांसानि विरुद्धा-नि दधीनि च । इक्षवो मूलकं मद्यं पिण्याकोऽम्लानि काञ्जि-कम् ॥ कटूष्णं गुर्व्वभिष्यादि लवणानि च सक्तवः । एतानि वातरक्तेषु नैव युंज्याद्भिषग्वरः ॥

अर्थ–दिन में सोना, अग्नि से तापना, दंड कसरत करना, धूम में डोलना, फिरना, मैथुन करना, उडद, कुलथी, चौरा, मटर, जवाखार आदि का सेवन, अंडे से होने-वाले जीव और अनूपदेशसंचारी जीवों का मांस, विरुद्ध पदार्थ, दही, ईख, मूली का साग, मद्य, खल, खट्टे पदार्थ, कांजी, चरपरे, गरम, भारी, अभिष्यंदी पदार्थ, लवण

के पदार्थ, सत्तु, इन वस्तुओं को वैद्य वातरक्तरोग पर कदाचित् प्रयोग न करे अर्थात् न देवे यह वातरक्त में अपथ्य है ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे वातरक्तकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्यं समाप्तम् ।

ऊरुस्तंभकर्मविपाकः ।

ऊरुस्तंभनिदान

शीतोष्णद्रवसंशुष्कगुरुस्निग्धैर्निषेवितैः । जीर्णाजीर्णात्तथाया-ससंक्षोभस्वप्नजागरैः ॥ सश्लेष्ममेदः पवनः साममत्यर्थसंचि-तम् । अभिभूयेतरं दोषमूरू चेत्प्रतिपद्यते ॥ सक्थ्यस्थीनि प्रपूर्यांतः श्लेष्मणा स्तिमितेन च । तदा स्तभ्नाति तेनोरू स्त-ब्धौ शीतावचेतनौ ॥ परकीयाविव गुरू स्यातामतिभृशव्यथौ । ध्यानाङ्गमर्दस्तैमित्यतंद्राच्छर्द्यरुचिज्वरैः ॥ संयुतौ पादसदन-कृच्छ्रोद्धरणसुप्तिभिः । तमूरुस्तंभमित्याहुराढ्यवातमथापरे ॥

अर्थ–शीतल, गरम, पतले, शुष्क, भारी, चिकने ऐसे परस्पर विरुद्ध भोजन से, जीर्ण, अजीर्ण, उसी प्रकार दंड कसरत के करने से, चित्त के क्षोभ से, दिन में सोने से, रात्रि में जागना, इन कारणों से कफ मेदयुक्त अत्यन्त संचित भया आमयुक्त वात इतर दोषों को अर्थात् पित्त को आच्छादित कर ऊरू में आयकर प्राप्त होय और ऊरू के हाडों को आर्द्रकफ से परिपूर्ण करे, तब उस के ऊरू स्तंभित हो (जकड जाय) और शीतल तथा निर्जीव हो जाय और दूसरे पुरुष के ऊरू के समान उछरके चलना इस विषय में असमर्थ होय और भारी, अत्यन्त पीडायुक्त होय, चिंता, अंगों का तोडना, आर्द्रता (गीला), तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरसहित मनुष्य के दोनों ऊरू जकड जांय, बडे कष्ट से चले और शून्यता होय इस रोग को ऊरुस्तंभ ऐसे कहते हैं और कोई आढ्यवात कहते हैं ॥

ऊरुस्तंभ के पूर्वरूप

प्राग्रूपं तस्य निद्राऽतिध्यानं स्तिमितता ज्वरः ।
लोमहर्षोऽरुचिश्छर्दिर्जंघोर्वोः सदनं तथा ॥

अर्थ–निद्रा बहुत आवे, अत्यन्त चिंता, मंदता, ज्वर, रोमांच, अरुचि, वमन, जंघा और ऊरू इन में पीडा होय, यह ऊरुस्तंभ के पूर्वरूप होते हैं ॥

ऊरुस्तंभ के लक्षण

वातशंकिभिरज्ञानात्तस्य स्यात्स्नेहनात्पुनः । पादयोः सदनं सुप्तिः कृच्छ्रादुद्धरणं तथा ॥ जंघोरुग्लानिरत्यर्थं शश्वच्चानाहवेदना । पदं च व्यथतेऽत्यर्थं शीतस्पर्शं न वेत्ति च ॥ संस्थाने पीडने गत्यां चालने चाप्यनीश्वरः । अन्यस्येव हि संभग्नावूरू पादौ च मन्यते ॥

अर्थ–पैरों का सोना, संकोच होना इत्यादिक वातरोग के समान चिन्ह मिलने से उस मनुष्य को वातरोग की शंका होय तब वह मनुष्य तैलादिक स्नेहन चिकित्सा करे तौ उस के दूना रोग बढे, पैरों में पीडा होय तथा पैर सोंय जावें, बडे कष्ट से पैर उठाया और धरा जाय, जंघा और ऊरू इन में अधिक पीडा होय और निरन्तर दाह तथा वेदना होय, पैरों में व्यथा होय, शीतल पदार्थ का स्पर्श मालूम न होय तथा पैर के उठाने में रगडने में अथवा चलने में अथवा हलाने में असमर्थ होय, पैर और ऊरू ये टूटे से तथा अन्य मनुष्य के से मालूम हो ये लक्षण ऊरुस्तंभ के हैं. व्याधि के स्वभाव से यह ऊरुस्तंभ त्रिदोष का एक ही है. वातादि भेदों से अनेक प्रकार का नहीं है ॥

ऊरुस्तंभ के असाध्य लक्षण

यदा दाहार्तितोदार्तो वेपनः पुरुषो भवेत् ।
ऊरुस्तंभस्तदा हन्यात्साधयेदन्यथा नवम् ॥

अर्थ–जिस समय पुरुष दाह, शूल और तोद (नोचने की सी पीडा) इन से पीडित होकर कंपयुक्त होय उस समय वह ऊरुस्तंभरोग उस का नाश करे है और ये लक्षण न होंय और रोग नया होय तौ यह रोग साध्य है ॥

ऊरुस्तंभ की सामान्य चिकित्सा

यत्स्यात्कफप्रशमनं न च मारुतकोपनम् ।
तत्सर्वं सर्वदा कार्यमूरुस्तंभस्य भेषजम् ॥

अर्थ–कफ को शमनकर्त्ता और जो वादी को कुपित करे नहीं ऐसी औषध ऊरुस्तंभ रोग पर सदैव करनी चाहिये ॥

स्नेहासृक्स्राववमनं बास्तिकर्म विरेचनम् । वर्जयेदाढ्यवाते तु यतस्तैस्तस्य कोपनम् ॥ तस्मादत्र सदा कार्यं स्वेदलंघनरूक्षणम् । आममेदःकफाधिक्यात् मारुतं नयता समम् ॥

अर्थ-आढ्यवात में स्नेह, रुधिरमोक्ष, स्नान, वमन, बस्तिकर्म और विरेचन ये क्रिया करना वार्जित है. क्योंकि ये स्नेहादिक कर्म करने से वात कुपित होती है परंतु उस वायु में आम, मेद और कफ इन की आधिक्यता रहती है इस वास्ते वादी के शमन की इच्छा करनेवाले वैद्य को ऊरुस्तंभ पर सदैव स्वेद, लंघन और रूक्ष ये क्रिया करनी चाहिये ॥

सर्वो रूक्षः क्रमः कार्यस्तत्रादौ कफनाशनः ।
पश्चाद्वातविनाशाय विधातव्याखिला क्रिया ॥

अर्थ-ऊरुस्तंभ रोग में प्रथम सर्व क्रम रूक्ष तथा कफनाशक करने चाहिये फिर वातनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये ॥

अन्न

भोज्याः पुराणाः श्यामाककोद्रवोद्दालशालयः ।
जांगलैरघृतैर्मांसैः शाकैश्चालवणैर्हितैः ॥

अर्थ-पथ्य में पुराने सामखिया, पुरानी कोदो, पुरानी वनकोदो, पुराने चावल, जंगली जीवों का मांस और शाक ये पदार्थ निमक और घी के विना देवे ॥

दद्याद्वास्तुकशाकेन हीनेन लवणेन तु ।
जीर्णशाल्योदनं रूक्षमूरुस्तंभवते भिषक् ॥

अर्थ-निमक के विना बथुए का शाक, पुराने चावलों का भात और रूक्ष ऐसे पदार्थ ऊरुस्तंभरोग पर देवे ॥

रूक्षणाद्वातकोपश्चेन्निद्रानाशादिसंभवः ।
स्नेहस्वेदक्रमस्तत्र कार्यो वातामयापहः ॥

अर्थ-रूक्ष क्रिया करके वादी का कोप होने से निद्रानाशादिकों का संभव होता है. इसवास्ते उस पर स्नेह और स्वेद इत्यादि वातरोगनाशक उपचार करे ॥

प्रतारयेत्प्रतिस्रोतः सरितं शीतलोदकाम् ।
सरश्च विमलं शीतं स्थिरतोयं पुनः पुनः ॥

अर्थ-ऊरुस्तंभवाले रोगी को वहनेवाली नदी में वेग के सामने चलावे अथवा जिस तलाव पुष्करणी का जल स्थिर होवे उस में अथवा शीतलजल में चलना चाहिये ॥

भल्लातादि क्काथ

भल्लातकुल्यामगधाजटानां कृतः कषायो मधुसंप्रयुक्तः।
ऊरुग्रहं घोरमपि प्रवृद्धं निहंति गोमूत्रयुता कणा वा ॥

अर्थ-भिलाए, पीपल और पीपरामूल, इन का काढा करके उस में सहत मिलायके देवे तो घोर कठिन भी यादि ऊरुस्तंभ रोग होवे तो उस को दूर करे अथवा गोमूत्र में मिलायके पीपल का चूर्ण देना चाहिये ॥

ग्रंथिकादि क्काथ

ग्रंथिकारूक्षकृष्णानां क्काथं क्षौद्रान्वितं पिबेत् ॥

अर्थ-पीपरामूल, धामन और पीपल इन का काढा देवे तो ऊरुस्तंभ रोग को नाश करे ॥

भल्लातकादि क्काथ

भल्लातकामृता शुंठी दारु पथ्या पुनर्नवा।
पंचमूलीद्वयं मिश्रमूरुस्तंभनिवर्हणम् ॥

अर्थ-भिलाए, गिलोय, सोंठ, देवदारु, हरड, पुनर्नवा, दशमूल इन का काढा करके पीवे तो ऊरुस्तंभ रोग को नाश करे ॥

पुनर्नवादि क्काथ

पुनर्नवा नागरदारु पथ्या भल्लातकच्छिन्नरुहाकषायः।
दशांघ्रिमिश्रः परिपेय ऊरुस्तंभेथ वा मूत्रपुरःप्रयोगः ॥

अर्थ-पुनर्नवा, सोंठ, देवदारु, हरड, भिलाए, गिलोय और दशमूल इन का काढा करके ऊरुस्तंभ पर केवल काढा मात्र अथवा गोमूत्र डालके पीवे ॥

शेफालिकादि क्काथ

शेफालिकादलक्काथं कणायुक्तं पिबेन्नरः।
कफघ्नं यच्च तत्सर्वमूरुस्तंभे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-ऊरुस्तंभ पर काली निर्गुंडी के पत्तों का काढा करके उस में पीपल का चूर्ण डालके देवे तथा जो कफनाशक उपचार हैं वे करने चाहिये ॥

वचादि क्वाथ

वचा प्रतिविषा कुष्ठं चित्रकं देवदारु च । पाठा तेजोवती मुस्ता स्वर्णक्षीरी निदिग्धिका ॥ वत्सको नक्तमालश्च मूर्वा कटुकरोहिणी । तर्कारी प्रग्रहश्चैव पीलु निंबफलानि च ॥ आसनः सप्तपर्णश्च त्रिफलामरिचेन च । एतानि समभागानि कषायमुपसाधयेत् ॥ मधुयुक्तं कषायं च प्रयोगेण पिबेन्नरः । ऊरुस्तंभं जयेदेव वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥ एतान्येव च चूर्णानि माक्षिकेण विलेहयेत् । अनेन च कषायेण भोजयेत्सिद्धमोदनम् ॥

अर्थ-वच, अतीस, कूठ, चित्रक, देवदारु, पाढ, मालकांगनी, नागरमोथा, चोक, कटेरी, इन्द्रजों, कंजा, मूर्वा, कुटकी, अरनी, अमलतास, अखरोट, नीम की छाल, खिरेटी, विजेसार, सतोना, हरड, बहेडा, आंवला और काली मिरच ये औषध समभाग लेके काढा करे जब शीतल हो जावे तब सहत डालके पीवे अथवा इसी औषधों के चूर्ण को सहत मिलायके सेवन करे अथवा इसी काढे से अन्न भक्षण करे तो जैसे वज्र वृक्षों का नाश करे उसी प्रकार यह ऊरुस्तंभ का नाश करे है ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला चव्यकटुका ग्रंथिकं मधुना लिहेत् ।
ऊरुस्तंभविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिबेत् ॥

अर्थ-त्रिफला, चव्य, कुटकी, पीपलामूल इन का चूर्ण सहत में सानके चाटे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय अथवा गोमूत्र में गूगल डालके पीवे तो ऊरुस्तंभरोग को दूर करे ॥

दूसरा प्रकार

त्रिफलाग्रंथिकव्योषचूर्णं लिह्यात्समाक्षिकम् ।
ऊरुस्तंभविनाशाय पुरं मूत्रेण वा पिबेत् ॥

अर्थ-त्रिफला, पीपरामूल और त्रिकुटा इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय अथवा गोमूत्र और गूगल मिलायके पीवे ॥

वृद्ध्यादि तैल

वृद्धिर्महौषधं दारु चूर्णमेषां समांशतः ।
पीतमुष्णांभसा शीघ्रमूरुस्तंभविनाशनम् ॥

अर्थ-वृद्धि, सोंठ और देवदारु इन का समानभाग चूर्ण एकत्र कर गरम जल से देवे तो ऊरुस्तंभ का शीघ्र नाश करे ॥

त्रिफलाचूर्ण

लिह्याद्वा त्रिफलाचूर्णं क्षौद्रेण कटुकायुतम् ।
सुखांबुना पिबेद्वापि चूर्णं षट्चरणं नरः ॥

अर्थ-त्रिफला, कुटकी, इन का चूर्ण सहत में मिलायके खाय अथवा सुखोष्ण गरम जल से षट्चरण चूर्ण देवे ॥

शिलाजतुयोग

शिलाजतुं गुग्गुलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
ऊरुस्तंभे पिबेन्मूत्रैर्दशमूलीजलेन वा ॥

अर्थ-शिलाजीत, गूगल, पीपल अथवा सोंठ इन में से किसी एक को गोमूत्र के साथ अथवा दशमूल के काढे के साथ देवे तो ऊरुस्तंभ का नाश होय ॥

ग्रंथिकादि कल्क

चव्याभयाग्निदारूणां कल्कं वा मधुसंयुतम् ॥

अर्थ-चव्य, हरड, चित्रक और देवदारु इन के कल्क में सहत डालके देवे तो ऊरुस्तंभ का नाश करे ॥

पिप्पल्यादि कल्क

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
कल्कं मधुयुतं पीत्वा ऊरुस्तंभात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, भिलाए इन को कूट पीस गोली बनावे फिर इस को सहत के साथ खाय तो ऊरुस्तंभ से मुक्त होवे ॥

पिप्पलीयोग

पिप्पलीं वर्धमानां वा माक्षिकेण गुडेन वा ।
ऊरुस्तंभे प्रशंसंति गंडिरारिष्टमेव च ॥

अर्थ-वर्धमान पीपल, सहत अथवा गुड इन के साथ देवे अथवा जमीकंद का आसव देवे तो ऊरुस्तंभ पर प्रशस्त है ॥

ऊरुस्तंभ पर योग

सक्षारमूत्रस्वेदांश्च रूक्षान्नस्वेदनानि च ।
कुर्याद्देहे च मूत्राद्यैः करंजफलसर्षपैः ॥

अर्थ–गोमूत्र में जवाखार आदि खारों को मिलायके उस से पसीने निकाले, रूक्षान्न देवे और देह में कंज के बीज अथवा सब रसों को गोमूत्र में पीसके गरम करके लेप करे ॥

प्रकारांतर

मूलैर्वा ह्यश्वगंधाया मूलैरर्कस्य वा भिषक् । पिचुमंदस्य वा मूलैरथ वा देवदारुणा ॥ क्षौद्रसर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतैर्भिषक् । गाढमूर्द्धंधनं कुर्यादूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्थ–असगंध, आक अथवा नीम इन की जड, देवदारु, सहत और सरसों इन का चूर्ण और बांबी की मट्टी इन सब को एकत्र मिलाय गरम करके उस की गाढी २ पिंडी बांधे तो ऊरुस्तंभ की शांति होय ॥

ऊरुस्तंभ पर लेप

क्षौद्रं सर्षपवल्मीकमृत्तिकासंयुतं भिषक् ।
गाढमुत्सादनं कुर्यादूरुस्तंभे प्रलेपनम् ॥

अर्थ–सहत, सरसों और बांबी की मिट्टी इन को एकत्र जल से पीस लेप करे. इस को उत्सादन कहते हैं यह ऊरुस्तंभनाशक है ॥

कुष्ठादि तैल

कुष्ठं श्रीवेष्टकोदीच्यसरलं दारु केसरम् । अजगंधाश्वगंधा च तैलं तैः सार्षपं पचेत् ॥ सक्षौद्रं मात्रया तस्मादूरुस्तंभार्दितः पिबेत् ॥

अर्थ–कूठ, श्रीवेष्ट, खस, सरल, देवदार, नागकेशर, वनतुलसी, और असगंध इन के काढे में अथवा कल्क में सरसों का तेल डालके पचावे. इस को ऊरुस्तंभ-रोगवाले को सहत डालके प्रकृति अनुसार पिवावे तो यह रोग दूर होय ॥

सैंधवादि तैल

द्वे पले सैंधवाद्यं च शुंठीग्रंथिकचित्रकान् । द्वे द्वे भल्लातकास्थीनि विंशतिर्द्वे तथाढके ॥ आरनाले पचेत्प्रस्थं तैलस्येत्थं पिबेत्पलम् । गृध्रस्योरुग्रहस्येति सर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ–सैंधा निमक, सोंठ, पीपरामूल और चित्रक की छाल ये प्रत्येक आठ २ तोले,

मिलाए ८८ तोले और कांजी २२६ तोले इसमें ६४ तोले तेल डालके पचन करे. सिद्ध होनेपर इस को पीवे तो गृध्रसी, ऊरुस्तंभ और संपूर्ण वातविकार इन को नाश करे ॥

कटुतिक्ततैल

बलाभ्यां पिप्पलीमूलं नागरो उष्ट्रकट्वराः। तैलप्रस्थे समो दध्ना गृध्रस्यूरुग्रहापहम् ॥ उष्ट्रकट्वरतैले तु तैलं सार्षपमुच्यते। पिप्पलीनागरायाश्च प्रत्येकं द्विपलं स्मृतम् ॥

अर्थ–बला, नागबला, पीपरामूल और सोंठ ये प्रत्येक आठ २ तोले ले ऊटकरे, राल ३२ तोले. इन का कल्क तथा दही सब के बराबर डालके तेल सिद्ध करे, यह गृध्रसी और ऊरुस्तंभ इन का नाश करे ॥

त्रिफलादि गुग्गुलु

त्रिफला त्रिवृता दंतीनीलिनीचतुरंगुलैः। पंचविंशतिसंख्यातैः प्रत्येकं पलमात्रया ॥ क्वथिते कुट्टिते चैभिश्चतुर्द्रोणे प्रमाणतः। पचेत्तत्सलिले तावद्यावद्द्रोणावशेषितम् ॥ पंचांशं तत्र निक्षिप्य गुग्गुलुस्तु पलान्यपि। क्वाथयेद्धि घनं यावत्तावत्तत्पूर्ववत्पचेत् ॥ तावतास्मिन्घनीभूते त्वगेला नागकेसरम्। त्रिकटु त्रिफला पत्रं यवानी जीरकाणि च ॥ पिप्पली दहनं चैव हपुषा कृष्णजीरकम्। बाष्पिका साजमोदा च तिंत्तिडी चाम्लवेतसौ ॥ सौवर्चलयुता कृत्वा श्लक्ष्णचूर्णं विनिःक्षिपेत्। प्रत्येकमेकपलिकैर्भागैः सम्यक् विचक्षणैः ॥ ततोक्षमात्रा गुटिका भक्षयेत्तु दिने दिने। ऊरुस्तंभोरुग्रथितगंडमालोदरार्दितः ॥ अनेन चैव विधिना गिरिजं वा प्रयोजयेत् ॥

अर्थ--हरड, बहेडा, आंवला, निसोथ, जमालगोटा, नीली और अमलतास का गूदा ये प्रत्येक सो २ तोले ले सब को कूटके ४०९६ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश काढा रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में २०० तोले गूगल डालके फिर पचावे जब गाढा हो जावे तब उस में दालचीनी, इलायची, नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, पत्रज, अजमायन, जीरा, गजपीपल, चीते की छाल, होऊबेर, काला जीरा, कलौंजी, अजमोद, इमली, अमलवेत और संचरनिमक ये प्रत्येक औषधी चार २ तोले लेय सब का चूर्ण करके उसी पाक में

डाल देवे. सब को मिलाय के एक जीव करे. फिर इस में से १० मासे की गोली बनायके नित्य प्रति एक २ देवे तो ऊरुस्तंभ, गांठ, गंडमाला और उदर इन पर उत्तम है तथा इसी विधि से शिलाजीत को देना चाहिये ॥

गुंजागर्भरसायन

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादशगंधकम् । गुंजाबीजं विषं निष्कं निंबबीजं जया तथा ॥ प्रत्येकं निष्कमात्रं तु माषं जेपालबीजकम् । जातीजंबीरधत्तूरकाकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ मर्द्यं सर्वं वटीं कुर्यात् घृतैर्गुंजाद्वयं पिबेत् । गुंजागर्भो रसो नाम हिंगुसैंधवसंयुतः ॥ समंडं दापयेत्पथ्यमूरुस्तंभप्रशांतये ॥

अर्थ–पारा १ तोले, गंधक ४ तोले और गुंजा (घूंवची), बच्छनाग विष, निबोरी और अरनी ये प्रत्येक चार २ मासे ले और जमालगोटा १ मासे इन सब को एकत्र करके चमेली, जभीरी नींबू, धतूरा और मकोय इन के रस में एक २ दिन खरल करे इस की दो २ रत्ती की गोली बनाय ले एक गोली को घी, हींग और सैंधानिमक इन के साथ सेवन करे तो ऊरुस्तंभ को शांति करे. इस पर मंड और भात ये पथ्य में देवे ॥

लशुनयोग

पलमर्धपलं वापि रसोनस्य सुकुट्टितम् । हिंगुजीरकसिंधूत्थसौवर्चलकटुत्रिकम् ॥ एभिः संचूर्णितैः सर्वैस्तुल्यं तैलेन संयुतम् । यथाग्नि भक्षयेत्प्राज्ञो रुबुक्काथानुपानतः ॥ मासैकस्य प्रयोगेण सर्वान्वातामयान् जयेत् । एकांगसर्वांगगतमूरुस्तंभं च गृध्रसीम् ॥ कटिपृष्ठास्थिसंधिस्थमर्दितं चापतंत्रकम् । ज्वरं धातुगतं जीर्णं नित्यशैत्यं करांघ्रिजम् ॥

अर्थ–कूटी हुई लहसन, हींग, जीरा, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण ४ तोले अथवा २ तोले लेकर उस की बराबर अंड का तेल लेवे फिर अग्निबल विचारके खाने को देय और ऊपरसे अंड की जड का काढा देवे इस प्रकार १ महिने पर्यंत करे तो संपूर्ण वात के रोग, एकांगवात, सर्वांगवात, ऊरुस्तंभ, गृध्रसी, कमर, पीठ, हड्डी और संधि इन की वादी, अर्दित और अपतंत्रक वायु, धातुगत और जीर्णज्वर, हाथ पैरों का शीत इन सब का नाश करे ॥

ऊरुस्तंभरोग पर पथ्य

रूक्षः सर्वो विधिः स्वेदः कोद्रवा रक्तशालयः । यवाः कुलित्थाः श्यामाका उद्दालाश्च पुरातनाः ॥ सौभांजनं कारवेल्लं पटोलं वास्तुकं तथा । सुनिषण्णं काकमाचीं वेत्राग्रं तप्तवारि च ॥ जांगलैरघृतैर्मांसैः शाकैश्चालवणैर्हितैः । एतत्पथ्यं समुद्दिष्ट-मूरुस्तंभविकारिणाम् ॥

अर्थ–सब रूक्षण कर्त्ता विधि, पसीने निकालने, कोदों अन्न, लाल चावल, पुराने जों, कुलथी, सामखिया, वनकोदों, सहजना, करेला, परवल, लहसन, चोपतिया, मकोय, वेत की अग्रभाग, उष्ण जल, विना घी डाली हुई जंगल की मछली, लवण विना साग ये पदार्थ पथ्य कहे हैं ॥

ऊरुस्तंभरोग पर अपथ्य

गुरुशीतद्रवस्निग्धविरुद्धासात्म्यभोजनम् । विरेचनं स्नेहनं च वमनं रक्तमोक्षणम् ॥ बस्तिं च न हितं प्राहुरूरुस्तंभविकारिणाम् ।

अर्थ–भारी, शीतल, पतले, चिकने, विरुद्ध और आत्मा को अहित ऐसे पदार्थों का सेवन, जुल्लाब, स्नेहनकर्म, वमन, रुधिर का निकालना, बस्तीकर्म, ये सब ऊरुस्तंभ विकारवालों को हित नहीं हैं ॥

इति श्रीकृष्णलालमाथुरतनुजदत्तरामनिर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे ऊरुस्तंभकर्मविपाकनिदानचिकित्सापथ्यापथ्यं समाप्तम् ।

आमवातकर्मविपाकः ।

हुताग्निनिर्वापक आमवातवानिति वचनात् ।
तदुक्तदोषशांतये अयुतसंख्याको गायत्रीजपः ॥

अर्थ–जो प्राणी हवन करी हुई अग्नि का विसर्जन करे विना शांति कर देता है वह आमवातरोगी होय है. उस प्राणी को उस दोष की शांति करने को दश हजार गायत्रीजप करना चाहिये ॥

आमवात पर वैदिककर्म

तिलैराज्येन च होमं सुवर्णान्नदानं यत्र असंकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः तत्र तिलैर्होमो गायत्र्या वा जपस्तथेति स्मरणात् ॥

अर्थ–तिलों का अथवा घी का हवन करे और सुवर्ण तथा अन्न इन का दान करे. जिस जगे कर्त्ता अपना अपरिपूर्ण मनोरथ माने उस काल में उस को तिलों का होम अथवा गायत्री का जप करे. इस प्रकार कहा है ॥

ज्योतिश्शास्त्राभिप्रायमाह

अष्टमो गुरुरामस्य कर्ता चेति वचनात् अष्टमस्थानस्थितगुरुजनितामवातरोगोपशांतये तत्प्रीतये पूर्वोक्तमेव जपहोमपूजादानादिकं कुर्यात् तेनोपशाम्यति ॥

अर्थ–जन्मकाल में यदि अष्टम स्थान में गुरु बैठा होय तो वह प्राणी आमरोगी होय. इस वास्ते अष्टमस्थानस्थित बृहस्पति के होने से उत्पन्न आम की शांति करने को तथा गुरु की प्रसन्नता के वास्ते पूर्वोक्त कहा जप करे. होम, पूजा और दान इत्यादि करे तो आमरोग नष्ट होय ॥

आमवातनिदान

विरुद्धाहारचेष्टस्य मन्दाग्नेर्निश्चलस्य च । स्निग्धं भुक्तवतो ह्यन्नं व्यायामं कुर्वतस्तथा ॥ वायुना प्रेरितो ह्यामः श्लेष्मस्थानं प्रधावति । तेनात्यर्थं विदग्धोऽसौ धमनीः प्रतिपद्यते ॥ वातपित्तकफैर्भूयो दूषितः सोन्नजो रसः । स्रोतांस्यभिस्पंदयाति नानावर्णोतिपिच्छिलः ॥ युगपत्कुपितावेतौ त्रिकसंधिप्रवेशकौ । स्तब्धं च कुरुते गात्रमामवातः स उच्यते ॥

अर्थ–विरुद्ध आहार (क्षीर मत्स्यादि), और विरुद्ध विहार करनेवाले मनुष्य के, मंदाग्निवाले के, जो दंड कसरत न करे और चिकना अन्न खायकर दंड कसरत करनेवाले ऐसे पुरुष का आम वायु से प्रेरित होकर कफ के आमाशयादि स्थान के प्रति जायकर प्राप्त होय और उस कफ से अत्यन्त दूषित हो कर वही आम, धमनी नाडीन में प्राप्त होकर भीतर वह अन्न का रस (आम) वात और कफापित्त से दूषित होकर नाडीन के छिद्रों में भर जाय, वह अनेक प्रकार के रंग का अतिगाढा होय है. पीछे ये वात कफ एक ही काल में कुपित होकर त्रिकसंधीन में जायके प्रवेश करे, तब जडकीसी देह हो जाय, इस रोग को **आमवात** ऐसे कहते हैं ॥

आमवात के सामान्य लक्षण

अङ्गमर्दोऽरुचिस्तृष्णा आलस्यं गौरवं ज्वरः ।
अपाकः शून्यताऽङ्गानामामवातः स उच्यते ॥

अर्थ-अंगों का टूटना, अरुचि, प्यास, आलकस, भारीपना, ज्वर, अन्न का न पचना और देह में शून्यता हो जाय इस रोग को आमवात कहते हैं ॥

अत्यंत बढे हुए आमवात के सामान्य लक्षण

स कष्टः सर्वरोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत् । हस्तपादशिरोगुल्फत्रिकजानूरुसंधिषु ॥ करोति सरुजं शोथं यत्र दोषैः प्रपद्यते । स देशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः ॥ जनयेत्सोऽग्निदौर्बल्यं प्रसेकारुचिगौरवम् । उत्साहहानिर्वैरस्यं दाहं च बहुमूत्रताम् ॥ कुक्षौ कठिनतां शूलं तथा निद्राविपर्ययम् । तृट्छर्दिभ्रममूर्च्छाश्च हृद्ग्रहं विड्विबंधताम् ॥ जाड्यांत्रकूजमानाहं कष्टांश्चान्यानुपद्रवान् ॥

अर्थ-यह आमवात जिस समय बढे उस समय सब रोगों में कष्टकर्त्ता होती है, अर्थात् सब रोगों से बढकर कष्टदायक है । हाथ, पैर, मस्तक, घोंटू, त्रिकस्थान, जानू, जंघा इन की संधिन में पीडायुक्त सूजन करे और जिस जिस ठिकाने आम जाय उसी उसी ठिकाने वीचू के डंक मारने की सी पीडा करे. यह रोग मंदाग्नि, मुख से पानी का गिरना, अरुचि, देह भारी, उत्साह का नाश, मुख में विरसता, दाह, बहुत मूत्र का उतरना, कूख में कठिनता, शूल, दिन में निद्रा आवे, राति में जागे, प्यास, वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदय में दुःख, मल का अवरोध, जडता, आंतों का गूंजना, अफरा तथा अत्यंत उपद्रव कहिये वातव्याधि में कहे कलाप खंजादि कों को करे ॥

आमवात के विशेष लक्षण

पित्तात्सदाहरागं च सशूलं पवनानुगम् ।
स्तैमित्यं गुरुकंडूं च कफजुष्टं तमादिशेत् ॥

अर्थ-पित्त से जो आमवात होय उस में दाह और लाल रंग होय है. वादी के आमवात में शूल होय है. कफसंबंधी आमवात में देह में आर्द्रता (गीला) और भारीपना तथा खुजली चले है ॥

आमवात में साध्यासाध्य विचार

एकदोषानुगः साध्यो द्विदोषो याप्य उच्यते ।
सर्वदेहचरः शोथः स कृच्छ्रः सान्निपातिकः ॥

अर्थ-एक दोष का आमवातरोग साध्य है, दो दोषों का याप्य है, और सर्व देह में विचरनेवाली सूजन अथवा त्रिदोष से प्रगट आमवातरोग कष्टसाध्य जानना ॥

आमवात की सामान्य चिकित्सा

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनि च । विरेचनं स्नेहपानं बस्तयश्चाममारुते ॥ रूक्षः स्वेदो विधातव्यो वालुकापोटलै-स्तथा । उपनाहाश्च कर्तव्यास्तेपि स्नेहविवर्जिताः ॥

अर्थ-लंघन, पसीने निकालना, कडवी, दीपन, तीक्ष्ण ऐसे पदार्थ, विरेचन स्नेहपान, बस्ति, वालू की पोटली का रूक्ष सेक तथा रूक्ष उपनाहविधि इत्यादि उपचार आमवात पर करने चाहिये ॥

रास्नादि क्काथ

रास्नामरदारुराजवृक्षत्रिकटैरंडपुनर्नवामृतानाम् ।
क्कथितं जलमामवात एषां शमयेन्नागरकल्कमिश्रमाशु ॥

अर्थ-रास्ना, देवदारु, अमलतास का गूदा, सोंठ, मिरच, पीपल, अंड की जड, पुनर्नवा और गिलोय इन के काढे में सोंठ का कल्क डालके देवे तो आमवात का नाश करे ॥

रास्नादि क्काथ

रास्नामृतानागरवातशत्रुकटंकटेरीजनितः कषायः ।
एरंडतैलेन समन्वितोयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, सोंठ, अंड की जड और दारुहलदी इन का काढा कर उस में अंडी का तेल डालके पीवे तो आमवात को नाश करे ॥

रास्नादि क्काथ

रास्नामृतारग्वधदेवदारुपंचांघ्रियुग्मेंद्रयवैः कषायः ।
एरंडतैलेन समन्वितोयं भेत्ता भवेदामसमीरणस्य ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, अमलतास का गूदा, देवदारु, दशमूल और इन्द्रजौं इन का काढा अंडी का तेल डालके पीवे तो आमवात का नाश होवे ॥

महौषधादि क्वाथ

महौषधामृताभवः कषायकश्च सेवितः।
हिनस्ति चाममारुतं चिराय संधिसंश्रितम् ॥

अर्थ–सोंठ वाडकी और गिलोय इन का काढा करके सेवन करने से बहुत दिनके भी आमवातरोग का नाश होय ॥

महारास्नादि क्वाथ

रास्ना वातारिमूलं च वासकः सदुरालभः। शठी दारु बला मुस्तं नागरातिविषाभयाः ॥ श्वदंष्ट्रा व्याधिघातश्च मिशिधान्यं पुनर्नवा। अश्वगंधामृता कृष्णा वृद्धदारुः शतावरी ॥ वचा सहचरश्चैव चविका बृहतीद्वयम्। समभागानि सर्वाणि रास्ना तु त्रिगुणा मता ॥ पिबेत्कषायमेतेषामष्टभागावशेषितम्। क्षिप्त्वा नागरचूर्णं च प्रक्षेपोत्र यथाबलम् ॥ सर्वेषु वातरोगेषु सामेषु तु विशेषतः। पक्षाघातेऽर्दिते कंपे कुब्जे संधिगतेनिले ॥ जानुजंघास्थिपीडासु गृध्रस्यां च हनुग्रहे। ऊरुस्तंभे वातरक्ते विश्वाच्यां क्रोष्टुशीर्षके ॥ हृदामये च दुर्नाम्नि योनिशुक्रामयेषु च। पुंसां मेढ्रगते वाते स्त्रीणां वंध्यामये तथा ॥ योषितां गर्भदं मुख्यं नास्त्यस्मादौषधं परम्। महारास्नादिकः क्वाथो वेधसायं विनिर्मितः ॥

अर्थ–रास्ना ३ भाग और अंड की जड, अडूसा, धमासो, कचूर, दारुहलदी. खिरेटी, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हरड, गोखरू, अमलतास, सोंफ, धनिया, पुनर्नवा, असगंध, गिलोय, पीपल, विधायरा, शतावर, वच, पियावांसा, चव्य, कटेरी और बडी कटेरी ये सब एक एक भाग लेवे. जल में अष्टावशेष काढा करके पीवे. इस को पीने के समय इस में रोगी के बलाबल विचारके सोंठ का चूर्ण डाल लेना चाहिये. यह सर्ववात के रोग, विशेषकरके आमवात, पक्षाघात, अर्दित, कंप, कुब्ज, संधिगत, जानु, जंघा और अस्थि इन में रहनेवाला वायु, गृध्रसी, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्त, विश्वाची, क्रोष्टुशीर्षक, हृद्रोग, बवासीर, योनिरोग, शुक्ररोग, मेढ्रगत वात तथा वंध्यापना इन पर हितकारी है. स्त्रियों के गर्भ देनेवाली ऐसी दूसरी औषध नहीं है. यह महारास्नादिक क्वाथ प्रथम ब्रह्मदेव ने निर्माण करा है ॥

रास्नादि क्वाथ

रास्नारग्वधदेवदारुऋतुभूच्छिन्नोद्भवागोक्षुरैरेरंडेन युतैः कषायकवरो विश्वारजोमिश्रितः । नानासंधिरुजान्वितं विजयते घोरामवातामयं स्वर्णांगीकुचपद्मकुड्मलरुचिर्दीपोंधकारं यथा ॥

अर्थ-रास्ना, अमलतास का गूदा, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय, गोखरू और अंड की जड इन औषधों का काढा करके उस में सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो अनेक संधीन में दर्द होय तो भी भयंकर आम दूर होवे. जैसे सुवर्णसमान देहवाली के कुचकमलकली के समान देदीप्यमान जो दीपक वह जैसे अंधकार को दूर करता है उसी प्रकार यह औषध आमवात को नष्ट करे ॥

रास्नाद्वादशकाढा

रास्ना शतावरी वासा गुडूच्यतिविषाभया । शुंठी दुरालभैरंडदेवदारुवचाघनैः ॥ क्वाथः पीतो जयत्याशु आमवातं सुदारुणम् । कटचूरुत्रिकजंघांघ्रिगुल्फजानुसमाश्रितम् ॥

अर्थ-रास्ना, शतावर, अडूसा, गिलोय, अतीस, हरड, सोंठ, धमासो, अंड की जड, देवदारु, वच और नागरमोथा इन का काढा कमर, ऊरू, त्रिक, जंघा, पैर, एडी और घोटू इन स्थानों की वादी और दारुण आमवात को नाश करे ॥

रास्नासप्तक क्वाथ

रास्नामृतारग्वधदेवदारुत्रिकंटकैरंडपुनर्नवानाम् ।
क्वाथं पिबेन्नागरचूर्णमिश्रं जंघोरुपृष्ठत्रिकपार्श्वशूली ॥

अर्थ-रास्ना, गिलोय, अमलतास, देवदारु, गोखरू, अंड की जड, पुनर्नवा इन का काढा सोंठ का चूर्ण डालके पीवे तो जंघा, पीठ, पीठ का हाड और कूख इन ठिकाने का शूल दूर होवे ॥

शुंठ्यादि क्वाथ

शुंठीगोक्षुरकक्वाथः प्रातः प्रातर्निषेवितः ।
आमवातं कटीशूलं पाचनो रुक्प्रणाशनः ॥

अर्थ-सोंठ और गोखरू इन का काढा नित्य सेवन करने से आमवात और कमर का शूल इन को नाश करे. पाचक है और पीडा को शमन करनेवाला है ॥

शठ्यादि क्वाथ

शठी शुंठ्यभया चोग्रा देवाह्वातिविषामृता ।
कषायमामवातस्य पाचनं रूक्षभोजनम् ॥

अर्थ–कचूर, सोंठ, हरड, वच, देवदारु, अतीस और गिलोय इन का काढा करके आमवात पर पाचन देवे और रूक्ष भोजन करे ॥

पिप्पल्यादि क्वाथ

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्याचित्रकनागरम् ।
क्वथितं वारयत्येवमामवातं सुदारुणम् ॥

अर्थ–पीपर, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन का काढा दारुण आमवात रोग को दूर करे ॥

दशमूलादि काढा

दशमूलकषायमिश्रितं वा ललने विश्वकषायमिश्रितं वा ।
प्रपिबेत्कटिकुक्षिबस्तिशूले ध्रुवमेरंडजमेकमेव तैलम् ॥

अर्थ–दशमूल के काढे में अथवा सोंठ के काढे में अंडी का तेल मिलायके पीवे तो कमर, कूख और बस्ति इन ठिकाने के शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण

अजमोदा विडंगानि सैंधवं देवदारु च । चित्रकः पिप्पलीमूलं शतपुष्पा च पिप्पली ॥ मरिचं चेति कर्षांशं प्रत्येकं कारयेद्बुधः । कर्षास्तु पंच पथ्याया दश स्युर्वृद्धदारुकात् ॥ नागराच्च दशैव स्युः सर्वाण्येकत्र कारयेत् । पिबेत्कोष्णजलेनैव चूर्णं श्वयथुनाशनम् ॥ आमवातरुजं हंति संधिपीडां च गृध्रसीम् । कटिपृष्ठगुदस्थां च जंघयोश्च रुजं जयेत् ॥ तूनीं प्रतूनीं विश्वाचीं कफवातामयान् जयेत् । समेन वा गुडेनास्य वटकान् कारयेत्सुधीः ॥

अर्थ–अजमोद, वायविडंग, सैंधानिमक, देवदारु, चीते की छाल, पीपरामूल, सोंफ, पीपल, और काली मिरच ये नौ औषध एक २ कर्ष लेवे· तथा छोटी हरड ५ कर्ष, विधायरो १० कर्ष, सोंठ १० कर्ष ले. फिर सब औषधों का चूर्ण कर गरम

जल के साथ पीवे तो सूजन, आमवायु, संधियों का दूखना और गृध्रसी वायु (कमर से लेकर पैरपर्यंत जो होता है) तथा कमर, पीठ, गुदा और जंघा इन का शूल होता है वह तथा तूनी वायु, प्रतूनी वायु, विश्वाची वायु तथा कफवायु के विकार ये सब रोग दूर होवें अथवा इस चूर्ण के समान गुड डालके गोली बनाय ले. इन गोलियों के सेवन करने से जो रोग चूर्ण के खाने से दूर होंय वेही इन गोलियों के खाने से दूर होते हैं ॥

पंचसमचूर्ण

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा। समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम्। आध्मानजठराशोंघ्नमामवातहरं स्मृतम् ॥

अर्थ-सोंठ, हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक इन को समान भाग लेकर चूर्ण करे इस को गरम जल के साथ पीवे तो शूल, अफरा, उदर, बवासीर और आमवात इन को नाश करे. इस को पंचसमचूर्ण कहते हैं ॥

पंचकोलचूर्ण

**पंचकोलकचूर्णं च पिबेदुष्णेन वारिणा।
मंदाग्निशूलगुल्मामकफारोचकनाशनम् ॥**

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य और चित्रक की छाल इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो मंदाग्नि, शूल, गोला, आम, कफ और अरुचि इन का नाश करे ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला नागरं चैव सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्। मस्त्वारनालतक्रेण पेया मांसरसेन वा ॥ आमवातं निहंत्याशु श्वयथुं संधिसंस्थितम् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ इन का चूर्ण करके दही के मंड (जल) से, कांजी, छाछ, पेया और मांसरस इन में से किसी एक के साथ पीवे तो तत्काल आमवात और संधि गत सूजन को दूर करे ॥

आरग्वधपत्र चूर्ण

**आरग्वधस्य पत्राणि भृष्टानि कटुतैलतः।
आमवातप्रशांत्यर्थं खादेद्भक्तावृतानि च ॥**

अर्थ-अमलतास के पत्तों को सरसों के तेल में तलके आमवात दूर करने के लिये इन को भात में मिलायके भक्षण करे ॥

पुनर्नवादि चूर्ण

पुनर्नवा छिन्नरुहा शताह्वा मुंडी सठी दारुक नागराणाम् ।
चूर्णं हि हन्यात्किल कांजिकेन दुष्टामवातं चिरगृध्रसीं च ॥

अर्थ–पुनर्नवा, गिलोय, शतावर, गोरखमुंडी, कचूर, देवदारु और सोंठ इन का चूर्ण करके कांजी के साथ देवे तो दुष्ट आमवात का और बहुत दिन की गृध्रसी वायु का नाश करे ॥

त्रुट्यादि चूर्ण

त्रुटिलवंगविडंगकटुत्रिकं घनशिवाशिवपत्रजकं समम् ।
त्रिगुणितं त्रिवृता च सिता समा अदत आम पतिष्यति कामतः ॥

अर्थ–बडी इलायची, लौंग, वायविडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, हरड, गूगल और पत्रज ये समान भाग लेवे तथा निसोथ तिगुना ले एवं सब चूर्ण के समान मिश्री मिलायके चूर्ण तयार करे इस के सेवन करने से संपूर्ण आम गिर जावे ॥

अलंबुषादि चूर्ण

अलंबुषा गोक्षुरकास्त्रिफला नागरामृता ।
यथोत्तरं भागवृद्ध्या श्यामाचूर्णं च तत्समम् ॥
पिबेत्सुरा मस्तु तक्र कांजिकोष्णोदकेन वा ।
आमवातं जयत्याशु सशोफं वातशोणितम् ॥

अर्थ–गोरखमुंडी १, गोखरू २, हरड ३, बहेडा ४, आवले ५, सोंठ ६ और गिलोय ७ भाग लेवे सब की बराबर निसोथ लेवे और चूर्ण करके मद्य (दारु), दही का तोड, छाछ, कांजी और गरम जल इन में से किसी एक के साथ सेवन करे तो आमवात, सूजन और वातरक्तरोग इन को शीघ्र नाश करे ॥

भल्लातादि चूर्ण

भल्लाततिलपथ्यानां चूर्णं गुडसमन्वितम् ।
आमवातं कटीशूलं हन्याद्वा गुडनागरम् ॥

अर्थ–भिलाए, तिल और हरड इन का चूर्ण गुड के साथ खाय अथवा सोंठ और गुड मिलायके खाय तो आमवात तथा कमर का शूल इन को नाश करे ॥

वैश्वानरचूर्ण

मणिमंथस्य भागौ द्वौ यवक्षारश्च तत्समः । तथाजमोदभागश्च

नागराद्भागपंचकम् ॥ दश चैव हरीतक्याः सूक्ष्मं चूर्णं कृतं शुभम् । मस्त्वारनालमूत्रैश्च सुरयोष्णोदकेन वा ॥ पीतं जयेदामवातं गुल्महृद्वास्तिजान् गदान् । प्लीहानमथ शूलादीनानाहं चार्शसां हितम् ॥ वातानुलोमनमिदं चूर्णं वैश्वानरं स्मृतम् ॥

अर्थ–सैंधानिमक २ भाग, जवाखार २ भाग, सोंठ ५ भाग और हरड १० भाग इन का बारीक चूर्ण कर दही का तोर, कांजी, गोमूत्र, मद्य, गरम जल इन में से किसी एक के साथ पीवे तो आमवात, गोळा, हृदयरोग, बस्ती के रोग, प्लीहा, शूल, अफरा, और बवासीर इन को नष्ट करे तथा वात को अनुलोमन करे. इस को **वैश्वानर चूर्ण** इस प्रकार कहते हैं ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगु चव्यं विडं शुंठी कृष्णाजाजी सपुष्करम् ।
भागोत्तरमिदं चूर्णं पीतं वातामजिद्भवेत् ॥

अर्थ–हींग, चव्य, बिडानिमक, सोंठ, पीपल, जीरा और पुहकरमूल ये क्रम से १-२-३-४-५-६-७ इस प्रकार भाग लेवे. इन का चूर्ण करके सेवन करे तो आमवात को दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण

चित्रकं कटुका पाठा कलिंगातिविषामृता ।
देवदारु वचा मुस्ता नागरातिविषाभया ॥
पिबेदुष्णांबुना नित्यं चूर्णमाममरुत्प्रणुत् ॥

अर्थ–चित्रक, कुटकी, पाढ, इन्द्रजो, अतीस, गिलोय, देवदारु, वच, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हरड इन का चूर्ण कर गरम जल के साथ पीवे तो आमवात को नाश करे ॥

नागरचूर्ण

कर्षं नागरचूर्णस्य कांजिकेन पिबेत्सदा ।
आमवातप्रशमनं कफवातविनाशनम् ॥

अर्थ–दस मासे सोंठ का चूर्ण नित्य कांजी के साथ पीवे तो आमवात, कफवात इन को नाश करे ॥

अजमोदादि गुटिका वा चूर्ण

अजमोदमरिचपिप्पलीविडंगसुरदारुचित्रकशताह्वाः । सैंधवमागधिमूलं भागानवकस्य पलिकाः स्युः ॥ शुंठी दश पलिका स्यात्पलानि तावंति वृद्धदारस्य । अभयापलानि पंच श्लक्ष्णं चूर्णं विधाययेदेषाम् ॥ समगुडवटकानदतश्चूर्णं वा कोष्णवारिणा पिबतः । नश्यंत्यामानिलजाः सर्वे रोगाः सुदारुणाः शीघ्रम् ॥ आनाहशूलतूनीप्रतितूनीगृध्रसीगुल्माः । कटिपृष्ठपरिस्फुटनं स्फुटनं चैवास्थिजंघयोस्तीव्रम् ॥ श्वयथुस्तथांगसंधिषु ये चान्येप्यामवातजा रोगाः । सर्वे प्रयांति शांतिं तम इव सूर्यांशुविध्वस्तम् ॥

अर्थ—अजमोद, मिरच, पीपल, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, शतावर, सैंधानिमक और पीपलामूल ये प्रत्येक चार २ तोले, सोंठ ४० तोले, विधायरा ४० तोले, हरड २० तोले इस प्रकार सब को लेकर बारीक चूर्ण करे फिर चूर्ण के समान गुड मिलायके इस को अनुमान माफिक खाय अथवा इस को गरम जल के साथ पीवे तो आमवात से उत्पन्न घोर भयंकर रोगों का नाश होय तथा अफरा, शूल, तूणी, प्रतूणी, गृध्रसी, गोला, कमर, पीठ, हाड और जंघा इन का फूटना, सूजन, अंग, संधि इन में पीडा ये सब नाश होय. जैसे सूर्योदय होने से अंधकार नष्ट होता है ॥

सिंहनादगूगल

पलत्रयं वा ताप्यस्य त्रिफलायाः सुचूर्णितम् । सौगंधिकं पलं चैव कौशिकस्य पलं तथा ॥ कुडवं चोरुबूकस्य तैलमादाय यततः । पाचयेत्पाकविद्वैद्यः पात्रे लोहमये दृढे ॥ हंति वातं तथा पित्तं श्लेष्माणं खंजपंगुताम् । श्वासं सुदुर्जयं हंति कासं पंचविधं तथा ॥ कुष्टानि वातरक्तं च गुल्मशूलोदराणि च । आमवातं जयेदेतदपि वैद्यैर्विवर्जितम् ॥ एतदभ्यासयोगेन जरापलितवर्जितम् । सर्पिस्तैलरसोपेतमश्नीयाच्छालिषष्टिकम् ॥ सिंहनाद इति ख्यातो रोगवारणदर्पहा । वह्नेर्वृद्धिकरः पुंसां भाषितो दंडपाणिना ॥

अर्थ–सुवर्णमाक्षिक १२ तोले, त्रिफला का चूर्ण, गंधक ४ तोले, गूगल ४ तोले, अंडी का तेल १६ तोले इन सब को एकत्र कर लोहपात्र में पाक के सदृश पचायके धर लेवे. फिर घी, तेल अथवा मांसरस इन के साथ शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो वात, पित्त, कफ, लंगडापना, पांगुलापना, दुर्जय श्वास, पांच प्रकार की खांसी, कोढ, वातरक्त, गोला, शूल, उदर, दुःसाध्य आमवात इन को नाश करे. यह अभ्यास के प्रताप से बुढापे को दूर करे. इस को सिंहनाद गूगल कहते हैं यह रोगरूप हाथी के मारने को सिंह स्वरूप है और अग्नि को प्रदीप्त करे है. यह योग दंडपाणी भैरव ने कहा है. इस पर पथ्य सांठी चावल का भात खाय ॥

हरीतकीगूगल

हरीतकी नागरं च वृद्धदारुसमं समम् । द्विगुणं गुग्गुलं दत्त्वा तैलमेरंडजं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातनुत् ॥

अर्थ–छोटी हरड, सोंठ, विधायरो ये समान भाग लेवे और गूगल सब से दूनी डालके इस को अंड के तेल में एक दिन खरल करे तो यह हरीतकी गूगल आमवातरोग का नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

योगराजगूगल

चित्रकं पिप्पलीमूलं यवानी कारवी तथा । विडंगमजमोदा च जीरकं सुरदारु च ॥ चव्यैला सैंधवं कुष्ठं रास्ना गोक्षुरधान्यकम् । त्रिफला मुस्तकं व्योषं त्वगुशीरं यवाग्रजम् ॥ तालीसपत्रं पत्रं च सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । यावंत्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं च गुग्गुलुः ॥ संमर्द्य सर्पिषा गाढं स्निग्धभांडे निधापयेत् । ततो मात्रां प्रयुंजीत यथेष्टाहारवानपि ॥ प्लीहगुल्मोदरानाहदुर्नामानि विनाशयेत् । अग्निं च कुरुते दीप्तं तेजोवृद्धिं बलं तथा ॥ मर्दयेद्दिनमेकं तु भक्षयेदामवातहा ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, पीपरामूल, अजमायन, सोंफ, वायविडंग, अजमायन, जीरा, देवदारु, चव्य, इलायची, सैंधानिमक, कूठ, रासना, गोखरू, धनिया, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, खस, जवाखार, तालीसपत्र और पत्रज इन सब का समानभाग चूर्ण करे तथा इस चूर्ण के समान गूगल डालके और घी मिलायके एक दिन खूब कूट पीस एकजीव करके घी के चिकने बासन में भरके रख देवे. इस में से अग्निबल विचारके मात्रा देवे और पथ्य जैसा

चाहिये ऐसे भोजन करे तो प्लीहा, गोला, उदर, अफरा और बवासीर इन को नाश करे और तेज तथा बल इन को बढावे. अग्नि को प्रदीप्त करे ॥

सिंहनादगूगल

गुग्गुलोः पिंडितं प्रस्थं कटुतैलं पलं घृतम्। प्रत्येकं त्रिफलाप्रस्थे सार्धद्रोणे जले पचेत्॥ पादावशेषं पूतं च पुनरग्नावधिश्रयेत्। त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडंगामरदारु च॥ गुडूच्यग्नित्रिवृद्दंती चव्यं सूरणमानकम्। पारदं गंधकं चैव प्रत्येकं शुक्तिसंमितम्॥ पुनः सहस्रं प्रत्यग्रं जयपालफलं बुधः। त्वगंकुरविनिर्मुक्तं सिद्धं संचूर्ण्य निक्षिपेत्॥ ततो माषद्वयं जग्ध्वा पिबेत्तप्तजलादिकम्। अग्निं च कुरुते दीप्तं वडवानलसन्निभम्॥ धातुवृद्धिं बुद्धिवृद्धिं बलं च विपुलं तथा। आमवातं शिरोवातं ग्रंथिवातं भगंदरम्॥ जानुजंघास्थिजं वातं सकटिग्रहमेव च। अश्मरीमूत्रकृच्छ्रं च भग्नं बस्तिमितोदरे॥ आम्लपित्तं तथा कुष्ठं प्रस्वेदं स्वेदनिर्गमम्। कासं पंचविधं श्वासं क्षयं च विषमज्वरम्॥ श्लीपदं पंक्तिशूलं च पांडुरोगं सकामलम्। शोथांत्रवृद्धिशूलानि गुदजानि विनाशयेत्॥ सिंहनाद इति ख्यातो योगोयममृतोपमः॥

अर्थ—बारीक करा हुआ गूगल ६४ तोले, शिरस का तेल, घी ये चार २ तोले लेवे हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले. सब को जोकूट करके १५३६ तोले जल में डालके काढा करे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस काढे को चूल्हे पर चढाय उस में सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा, वायविडंग, देवदारु, गिलोय, चित्रक, निसोथ, दंती, चव्य, जमीकंद, पारा २ और गंधक २ इन की कजली करके इस को और जमालगोटा १००० ले उन की भीतर की जिव्हा निकालके लेवे. इन सब का चूर्ण करके उस में डाल देवे. जब तयार हो जावे तब २ मासे की गोली बनायके देवे ऊपर से गरम जल पीवे तो अग्नि को प्रदीप्त करे. धातुवृद्धि और बल इन को बढावे. आमवात, शिरोवात, वातग्रंथी, वातभगंदर और कमर, जानु, जंघा और हड्डी इन की बादी और पथरी, मूत्रकृच्छ्र, भग्नरोग, बस्तिवात, पेट की जडता, अम्लपित्त, कुष्ठ, पसीनों का

आना, पांच प्रकार की खांसी, श्वास, क्षय, विषमज्वर, श्लीपद, पंक्तिशूल, पांडुरोग, कामला, सूजन, अंत्रवृद्धि, शूल और बवासीर इन को नाश करे. यह **सिंहनाद गुग्गुलयोग** अमृत के समान है ॥

अभयादि गुटी

अभया सैंधवं शम्या विशालां विश्वभेषजम् । इंद्रवारुणिका मज्जा तथा सर्वं विमर्दयेत् ॥ लोहभांडे विनिक्षिप्य दद्यादग्निं शनैः शनैः । बदराभा प्रमाणेन वटी कार्या भिषग्वरैः ॥ उष्णोदकानुपानेन भुक्त्वा दोषाद्यपेक्षया । पथ्यं दध्योदनं देयं आमरोगं विनाशयेत् ॥

अर्थ–हरड, सैंधानिमक, अमलतास का गूदा, इंद्रायन की जड, सोंठ और इन्द्रायन का गूदा, इन सब को एकत्र कर मर्दन करे फिर लोहे के पात्र में भरके चूल्हे पर चढावे. मंद २ अग्नि से पचावे गाढी होने पर बेर की बराबर गोली बनावे. इस को गरम जल के साथ दोषानुसार देवे और पथ्य में दहीभात खाने को देय तो आमरोग का नाश करे ॥

एरंडादि गुटी

एरंडबीजमज्जा समविश्वशर्करासहिता ।
गुटी कृता प्रभाते भुक्ता सामानिलं जयति ॥

अर्थ–अंडी, सोंठ और मिश्री ये समान भाग लेवे. सब को कूट पीस गोली बनावे. प्रातःकाल भक्षण करे तो आमवात को नष्ट करे ॥

आमवातारि गुटिका

रसगंधकलोहार्कतुत्थटंकणसैंधवान् । समभागान् विचूर्ण्याथ चूर्णाद्द्विगुणगुग्गुलुः ॥ गुग्गुलोः पादिकं ज्ञेयं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् । तत्समं चित्रकस्याथ घृतेन वटिकां कुरु॥ खादेन्माषद्वयं चेदं त्रिफलाजलयोगतः । आमवातारिगुटिका पाचिका भेदिका तथा ॥ आमवातं निहंत्याशु गुल्मशूलोदराणि च । यकृत्प्लीहानमष्ठीलां कामलां पांडुकामलाम् ॥ हलीमकाम्लपित्ते च श्वयथुं श्लीपदार्बुदम् । ग्रंथिशूलं शिरःशूलं गृध्रसीवातरोगहा ॥ गलगंडं गंडमालां कृमीन्कुष्ठं विनाशयेत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, लीला थोथा, सैंधानिमक ये सब दवा समान भाग ले चूर्ण करे और चूर्ण से दूनी गूगल डाले गूगल की चतुर्थांश त्रिफले का चूर्ण मिलावे और इतना ही चित्रक का चूर्ण लेवे. इन सब को घी में घोटके उडद के समान गोली बनावे. दो गोली त्रिफला के चूर्ण में मिलाय गरम जल के साथ सेवन करे. इस को **आमवातारि गुटिका** कहते हैं यह पाचक है, भेदनी है और आमवात को शीघ्र दूर करे तथा शूल, गोला, उदर, यकृत, प्लीहा, अष्ठीला, कामला, पांडुकामला, हलीमक, अम्लपित्त, सूजन, श्लीपद, अर्बुद, ग्रंथिशूल, शिर का दर्द, गृध्रसी, वातरोग, गलगंड, गंडमाला, कृमिरोग और कुष्ठ इन सब रोगों को दूर करे ॥

एरंडयोग

विशोध्यैरंडबीजानि पिष्ट्वा तत्पायसं पिबेत् ।
आमवाते कटीशूले गृध्रस्यां चौषधं परम् ॥

अर्थ-अंडी को पीसके उस की दूध में खीर बनावे इस के भक्षण करने से आमवात, कमर का दर्द और गृध्रसी इन को दूर करे ॥

एरंडयोग

आमवातगजेन्द्रस्य शरीरवनचारिणः ।
एक एवाग्रणीर्हंता एरंडस्नेहकेसरी ॥

अर्थ-देहरूपी वन में फिरनेवाले आमरूप हाथी को मारनेवाला एरंडतैलरूप सिंह बडा बलवान् कहा है ॥

हरीतकी योग

एरंडतैलयुक्तां हरीतकीं भक्षयेद्विधिवत् ।
आमानिलार्तियुक्तो युक्तो वृद्धया च गृध्रस्या ॥

अर्थ-अंडी के तेल में हरड को भक्षण करे तो आमवात, अंत्रवृद्धि और गृध्रसी-वात इन को सर्वथा दूर करे ॥

अहिंस्रादियोग

अहिंस्रा केमुकामूलं शिग्रु वल्मीकमृत्तिका ।
मूत्रपिष्टश्च कर्तव्यो उपनाहोनिलामजित् ॥

अर्थ-अहिंस्रा (थूहर का भेद), कोची के बीज, सहजना और बंबई की मिट्टी इन को गोमूत्र में पीसके इस की पिंडी बांधे तो आमवात दूर होय ॥

जल

आमवाताभिभूताय पीडिताय पिपासया ।
पंचकोलेन संसिद्धं पानीयं हितमुच्यते ॥

अर्थ–आमवात से तथा तृषा से पीडित मनुष्य को पंचकोल का काढा करके पिलावे तो हितकारी होय अर्थात् प्यास दूर करे ॥

एरंडमूलयोग

एरंडमूलं त्रिफला गोमूत्रं चित्रकं विषम् ।
गुंजैका घृतसंबद्धा आमवातान् विनाशयेत ॥

अर्थ–अंड की जड, त्रिफला, गोमूत्र, चित्रक की छाल और सिंगियाविष इन के एक रत्ती चूर्ण को घी में मिलायके खाय तो आमवात का नाश करे ॥

रसोनयोग

रसोनस्य पलं हिंगु व्योषसैंधवजीरकम् । सौवर्चलं विडंगं च पिष्ट्वा तैलेन मिश्रयेत् ॥ कर्षैकं भक्षयेत्प्रातरामवातार्दितो नरः ॥

अर्थ–लहसन ४ तोले, हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, जीरा, संचरानिमक और वायविडंग इन को एकत्र कर तेल में मिलायके १ तोले प्रातःकाल नित्य भक्षण करे तो आमवात को हितकारी होय ॥

पारदभस्मप्रयोग

शरावनिहितं सूतं द्विघ्नवंगं मुहुर्मुहुः । दत्त्वाग्निं सूर्ययामांतं निंबकाष्ठेन घट्टयेत् ॥ एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भूतिका । यथानुपानं रोगेषु प्रदद्यात् भिषगुत्तमः ॥ अर्जितं विविधोपायैर्जंगमाद्भिषजान्मया । इदं तत्त्वं प्रलब्धं तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥

अर्थ–पारा १ भाग, रांगा २ भाग दोनों को खिपडे में डाल अग्नि पर रखके नीम की लकडी से वारंवार घोटे इस प्रकार १२ प्रहर की अग्नि देवे. इस प्रकार करने से पारद की पीले रंग की भस्म होय. इस को रोगों में अनुपान विचारके देवे. मैंने यह औषध एक बडे भारी वैद्य से अनेक उपाय से प्राप्त करी है. यह वैद्यों को अपने संग्रह में रखनी चाहिये ॥

आमवातविध्वंस रस

प्रक्षिप्य गंधं रसपादभागं कलाप्रमाणं च विषं समस्तात् ।
कृशानुतोयेन च भावयित्वा वल्लं ददीतास्य मरुत्प्रशांत्यै ॥
अपस्मारे तथोन्मादे सर्वांगव्यथनेपि च । एकांगवाते सामे
वा दंष्ट्राबंधे हिमे तथा ॥ देयोयं वल्लमात्रं तु सर्ववातनिवृत्तये ॥

अर्थ–पारा ४ भाग, गंधक १ भाग और सब का षोडशांश सिंगियाविष ले चित्रक के काढे में खरल करके २ रत्ती की गोली वात दूर करने को देवे. इस को **वातविध्वंस रस** कहते हैं. यह अपस्मार, उन्माद, सर्व अंगों की व्यथा, एकांगवात, आमवात, हनुस्तंभ और सरदी इत्यादिक संपूर्ण वायु दूर होने के वास्ते वैद्य रोगी को देवे ॥

आमवातारिरस

रसो गंधो वरा वह्निर्गुग्गुलुः क्रमवर्धितः । एतदेरंडपत्रेण श्लक्ष्णचूर्णं विमर्दयेत् ॥ कर्षांशैरंडतैलेन हंत्युष्णजलपायिनः ।
आमवातवते देयं दुग्धमुद्गादि वर्जयेत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, त्रिफला, चित्रक की छाल, गूगल ये औषध क्रमवृद्धि से लेकर अंड के पत्तों के रस में खरल करके गोली बनाय लेवे. एक गोली अंडी के तेल से आमवात रोगी को देवे और ऊपर से गरम जल पीवे तथा दूध और मूंग के पदार्थ को त्यागके पथ्य देवे तो यह आमवात रोग दूर करे ॥

उदयभास्कर रस

पारदं गंधकं व्योषं द्वौ क्षारौ लवणानि च । टंकणं चेति तुल्यानि
जेपालं सकलैः समम् ॥ भावना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् । संग्राह्यं रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम् ॥ गोदुग्धं केवलं
पथ्यं देयं मुद्गपयोथ वा । अन्नं च वर्जयेत्तावदामशोफं निवारयेत् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक, सुहागा और जमालगोटा ये सब समान भाग ले विजोरे के रस की भावना देवे और बारीक चूर्ण करके रख छोडे इस में से दो रत्ती के अनुमान रोगी को देवे तो आमवात का नाश करे इस पर केवल पथ्य में गौ का दूध और मूंग की दाल देवे तथा आमवात संबंधी सूजन जाने पर्यंत अन्न खाने को न देवे ॥

शतपुष्पादि लेप

शतपुष्पा वचा विश्वा श्वदंष्ट्रा वरुणत्वचः। पुनर्नवा सदेवाह्वा शठी मुंडीतिकाः समाः ॥ प्रसारणी च तर्कारी फलं च मदनस्य च। सूक्तकांजिकपिष्टास्तु सुखोष्णालेपने हिताः ॥

अर्थ—सोंफ, वच, सोंठ, गोखरू, वरना की छाल, पुनर्नवा, देवदारु, कचूर, मुंडी, प्रसारणी, अरनी और मैनफल इन को समान भाग ले सूक्त अथवा कांजी में पीस गरम करके उस को सुखोष्ण लेप करे तो आमवात की सूजनवाले को हितकारी होवे ॥

रसोनाद्य तैल

दधि मस्तु गुडक्षीरपोतका माषपिष्टकम्। लशुनस्य तुलामेकां जलद्रोणे विपाचयेत् ॥ चतुर्भागावशेषं तु कर्षयेदवतारयेत्। तत्कषायं परिश्राव्य विपचेत्ताम्रभाजने ॥ चित्रतैलाढकं दद्याद्भेषजानि प्रदापयेत्। त्रिफला त्र्यूषणं हिंगु सूक्ष्मैला चित्रकं बिडम् ॥ सौवर्चलं विडंगानि दीप्यकं ग्रंथिकं तथा ॥

अर्थ—दही, छाछ का जल, गुड, दूध, पोई, उडद का चून और लहसन ये ४०० तोले लेवे. इन को ४०९६ तोले जल में डालके चतुर्थांश रहने पर्यंत काढा करे जब तयार हो जावे तब उतारके छान लेवे. फिर इस को तांबे के पात्र में भर इस में २५६ तोले अंडी का तेल और हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, इलायची, चित्रक की छाल, संचरनिमक, बिडनिमक, वायविडंग, अजमायन और पीपरामूल इन का कल्क मिलायके तेल सिद्ध कर लेवे. इस का आमवातरोग पर उपयोग करे ॥

रसोनासव

पलं शतं रसोनस्य तिलं च कुडवं तथा। हिंगु त्रिकटुकाक्षारौ द्वौ पंचलवणानि च ॥ शतपुष्पा तथा कुष्ठं पिप्पलीमूलचित्रकौ। अजमोदा यवानी च जीरकं चापि बुद्धिमान् ॥ प्रत्येकं च पलं तेषां सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्। घृतभांडे दृढे धान्ये स्थापयेद्दिनषोडश ॥ प्रक्षिपेत्तैलमानेन प्रस्थार्धं कांजिकस्य च।

खादेत्कर्षप्रमाणं तु तोयं मद्यं पिबेदनु ॥ आमवाते तथा वाते सर्वांगैकांगसंश्रिते । अपस्मारेनले मांद्ये कासे श्वासे ज्वरेषु च ॥

अर्थ–लहसन ४०० तोले, तिल १६ तोले और हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सेंधानिमक, पांचों निमक, कूठ, पीपलामूल, चित्रक, अजमोद, अजमायन और जीरा ये प्रत्येक ४ तोले ले सब का बारीक चूर्ण करे, इस को घी के बासन में भरके इस में अंडी का तेल ३२ तोले तथा कांजी ३२ तोले डालके उस पात्र का मुख बंदकर १६ दिन धान की राशि में गाड देवे. पश्चात उस में से निकालके इस में से १ तोले औषध पीवे और इस के ऊपर मद्य अथवा जल पीवे तो एकांग-आमवात अथवा सर्वांग की आमवात, मृगी, मंदाग्नि, खांसी और ज्वर इन को नाश करे ॥

लशुनरस

रसो रसोनस्य पिचुप्रमाणः क्षिपेच्च तत्राक्षमितं घृतं गोः ।
पिबेदुभे तेन दहत्यवश्यं शिखीव तूलं हिमहामवातम् ॥

अर्थ–लहसन का रस १ तोले, गौ का घी १ तोले, दोनों को मिलायके पीवे यह कपास को जैसे अग्नि भस्म कर देती है उसी प्रकार यह शीत और आमवात को जलाय देवे है ॥

रसोनासव

तुला क्षुण्णा रसोनस्य तदर्धं लुंचितास्तिलाः । पात्रे तु गव्यतक्रस्य पिष्टद्रव्यैः समं क्षिपेत् ॥ त्र्यूषणं धान्यकं चव्यं चित्रकं गजपिप्पली । अजमोदा त्वगेला च ग्रंथिकं च पलांशकम् ॥ शर्करायाः पलान्यष्टौ पंचाजाज्याः पलानि च । कृष्णाजाज्याश्च चत्वारि राजिकायास्तथैव च ॥ पलप्रमाणं दातव्यं हिंगोर्लवणपंचकम् । आर्द्रकस्य च चत्वारि सर्पिश्चाष्टौ पलानि च ॥ तिलतैलस्य तावंति सूक्तस्यापि च विंशतिः । सिद्धार्थकस्य चत्वारि द्विगुणं मधुकस्य च ॥ एकीकृत्य दृढे भांडे धान्यराशौ निधापयेत् । द्वादशाहात्समुद्धृत्य प्रातः खादेद्यथाबलम् ॥ सुरां सौवीरकं चाथ मधु वापि पिबेन्नरः । जीर्णे यथेप्सितं भोज्यं दधिपिष्टकवर्जितम् ॥ एकमासोपयोगेन सर्वव्याधिहरो

भवेत् । अशीतिर्वातजा रोगाश्चत्वारिंशच्च पित्तजाः ॥ विंशतिश्लेष्मजास्तद्वत् नश्यंते तस्य सेवनात् । योनिशूलं प्रमेहांश्च कुष्ठोदरभगंदरान् ॥ अर्शोगुल्मक्षयांश्चापि जयेद्रुचिबलप्रदः ॥

अर्थ–लहसन का कल्क चार सौ तोले, तिल का कल्क दो सौ तोले, त्रिकुटा, धनिया, चव्य, चित्रक, गजपीपल, अजमोद, दालचीनी, इलायची और पीपरामूल ये प्रत्येक चार २ तोले. पांचों निमक प्रत्येक ४ तोले, काला जीरा १६ तोले, राई १६ तोले, हींग ४ तोले, मिश्री ३२ तोले, जीरा २० तोले, अदरख १६ तोले और घी ३२ तोले, तिलों का तेल ३२ तोले, कांजी ८० तोले, सपेद सरसों १६ तोले और मुलहटी ३२ तोले लेवे. इस प्रकार सब औषधों को ले चूर्ण करे फिर एक पात्र में गौ की छाछ डालके उस में ये सब औषधी भरके उस घडे के मुख को बांध धान की राशि में गाड देवे. १२ दिन बीतने के उपरांत उस को निकाल शक्ति के अनुसार प्रातःकाल पीवे. ऊपर से मद्य कांजी अथवा सहत भक्षण करे. जब यह पच जावे. तब यथेष्ट भोजन करे और दही तथा चून के पदार्थ अथवा पिट्ठी के पदार्थ खाना इस पर वर्जित है. यह एक महिने पर्यंत सेवन से सर्वव्याधियों को नाश करे. अस्सी प्रकार के वातरोग, चालीस प्रकार के पित्तरोग, वीस प्रकार के कफरोग, योनिशूल, प्रमेह, कुष्ठ, उदर, भगंदर, बवासीर, गोला और क्षय इन सब रोगों का नाश करे. तथा रुचि और बल को करे है ॥

बृहत्सैंधवादि तैल

सैंधवं श्रेयसी रास्ना शतपुष्पा यवानिका । स्वर्जिका मरिचं कुष्ठं शुंठी सौवर्चलं बिडम् ॥ वचाजमोदा जरणः पौष्करं मधुकं कणा । एतान्यर्धपलांशानि सूक्ष्मकल्कानि कारयेत् ॥ प्रस्थमेरंडतैलस्य प्रस्थांबु शतपुष्पजम् । कांजिकं द्विगुणं दत्त्वा मस्तु च द्विगुणं तथा ॥ एतत्संभृत्य संभारं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् । सिद्धमेतत्प्रयोक्तव्यमामवातहरं परम ॥ पात्रे चाभ्यंजने बस्तौ कुरुतेग्निबलं भृशम् । वातार्तं वंक्षणे शूले कटीजानूरुसंधिजे ॥ तथा हृत्पार्श्वजे शूले शस्तं श्लेष्मनिपीडिते । अन्यांश्चानिलजान्रोगान्नाशयत्याशु देहिनाम् ॥

अर्थ–सैंधानिमक, हरड, रास्ना, अजमायन, सज्जीखार, काली मिरच, कूठ, सोंठ, संचरनिमक, बिडनोन, वच, अजमोद, जीरा, पुहकरमूल, मुलहटी और पीपल

ये प्रत्येक दो दो तोले लेवे. सब का बारीक चूर्ण करे फिर इस में ६४ तोले अंडी का तेल, सोफ का काढा ६४ तोले, कांजी १२८ तोले, दही का जल १२८ तोले इस प्रकार लेकर सब को एकत्र कर मंदाग्नि में परिपक्व करे तो यह तेल सिद्ध होय इस तेल को पान और अभ्यंग (उबटना) इस विषय में योजना करने से अत्यंत वातनाशक और अग्निवर्द्धक है उसी प्रकार वंक्षण, कमर, जानु, संधी, हृदय और कूख इन स्थानों की पीडा, कफरोग तथा अन्य वादी के रोग इन सब को शीघ्र नाश करे ॥

एरंडतैल

कटिशूले पिबेत्तैलमेरंडफलसंभवम् ॥

अर्थ—आमवात से कमर रह जाती है उस को अच्छा करने के लिये अंडी का तेल पीवे ॥

शुंठीघृत

पुष्ट्यर्थं पयसा साध्यं दध्ना विण्मूत्रसंग्रहे। दीपनार्थं मतिमता मस्तुना च प्रकीर्तितम् ॥ सर्पिर्नागरकल्केन सौवीरं च चतुर्गुणम्। सिद्धमग्निकरं श्रेष्ठमामवातहरं परम् ॥

अर्थ—सोंठ का चूर्ण और दूध इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी पुष्टिकारी है और दही तथा सोंठ इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी विण्मूत्र प्रतिबंध का नाशक और दही के जल के साथ सोंठ डालके बनाया हुआ घी अग्नि को दीपन करे है. उसी प्रकार कांजी और सोंठ इन के साथ सिद्ध करा हुआ घी अग्निदीपक और आमवातनाशक जानना ॥

शुंठीखंड

नागरस्य पलान्यष्टौ घृतस्य कुडवं तथा। क्षीराढकसमायुक्तं खंडस्यार्धशतं पलम् ॥ व्योषत्रिजातकद्रव्यात्प्रत्येकं च पलं पलम्। निःक्षिपेच्चूर्णितं तत्र खादेदग्निबलं तथा ॥ आमवातप्रशमनं धातुपुष्टिकरं परम्। बल्यमायुष्यमोजस्यं वलीपलितनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ ३२ तोले, घी १६ तोले, दूध २५६ तोले, मिश्री २०० तोले, त्रिकुटा, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक ४ तोले ले. सब का चूर्ण करके दूध में डाल देवे और सब को मिलायके एकत्र कर लेवे. इस में से शक्तचनुसार सेवन करे तो यह आमवात को शमन करे. धातु को पुष्टि करे. बल, आयुष्य और तेज इन को देवे और बुढापे को दूर करे ॥

प्रकारांतर

नागरस्य तुलामेकां घृतस्य पलविंशतिः । क्षीरद्रोण्यर्धके पक्त्वा खंडस्यार्धं शतं क्षिपेत् ॥ व्योषं त्रिजातकं चैव केसरं पिप्पली जटा । जोंगकं जातिपत्रीकं जातीफलकचोरकम् ॥ अश्मभेदस्ताम्रभस्म वंगभस्म तथैव च । स्वर्णमाक्षिकमभ्रं च तथा लोहत्रयं क्षिपेत् ॥ एतान् पृथक् पलान् भागान् प्रत्येकं चूर्णितं क्षिपेत् । मंदानलविपक्कं तु लेहनं साधु साधयेत् ॥ बल्यं वर्ण्यं तथायुष्यं वलीपलितनाशनम् । आमवातप्रशमनं सौभाग्यकरमुत्तमम् ॥

अर्थ–सोंठ चार सों तोले, घी ८० तोले, दूध ८१८२ तोले, मिश्री २०० तोले, सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, पीपरामूल, काली अगर, जावित्री, जायफल, कचूर, पाषाणभेद, तामे की भस्म, वंग की भस्म, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, मंडूर, लोहा, कांतलोह प्रत्येक चार ४ तोले लेवे. सब को मंदाग्नि पर रखके उत्तम अवलेह बनावे. यह बल, वर्ण, आयुष्य, वली (गुजलट), पलित (बालों का सपेद होना) और आमवात इन को नाश करे तथा उत्तम सुंदरता देता है ॥

मेथीपाक

मेथिकायाः पलान्यष्टौ शुंठ्या अष्टपलानि च । तयोश्चूर्णं पटे पूतं दुग्धे मृद्वग्निना पचेत् ॥ दुग्धाढकयुतं गव्यं घृतमष्टपलं क्षिपेत् । तत्तावत्सुपचेद्यावद्भवेदतिघनं पयः ॥ पुनः पचेच्छनैस्तत्र दत्त्वाढकमितां शिताम् । ततः पाके सुविज्ञाते ज्वलनादवतारयेत् ॥ मरिचं पिप्पली शुंठी कणामूलं सचित्रकम् । यवानी जीरको धान्यं कारवी शतपुष्पिका ॥ जातीफलं शठी त्वक्च पत्रकं भद्रमुस्तकम् । गृह्णीयात्पलमेतेषां सर्वेषां च पृथक् पृथक् ॥ षडक्षं नागरं तत्र मरिचं च षडक्षकम् । एषां चूर्णं परिक्षिप्य सर्वं संमिश्र्य रक्षयेत् ॥ एतत्तु भेषजं प्रोक्तं मेथिकापाकसंज्ञितम् । भक्षयेत्पलमात्रं तद्यथा चाग्निबलं तथा॥

आमवातं निहंत्येतत् सर्वांश्च पवनामयान् । ज्वरांश्च विषमान् हंति पांडुरोगं सकामलम् ॥ हंत्युन्मादमपस्मारं प्रमेहान्वातशोणितम् । अम्लपित्तं शिरःपीडां नासारोगं दृगामयम् ॥ प्रदरं सूतिकारोगं हन्यादेतन्न संशयः । वपुषः पुष्टिकृद्बल्यं वीर्यवृद्धिकरं परम् ॥

अर्थ—दाना मेथी और सोंठ प्रत्येक बत्तीस २ तोले. दोनों को कूट पीस कपडछान चूर्ण करे उस को २५६ तोले दूध में ३२ तोले घी डालके पाक करे फिर २५६ तोले मिश्री डालके फिर मंदाग्नि से चासनी कर पूर्वोक्त औषधों का खोहा मिलायके सिद्ध होने पर उतार लेवे फिर काली मिरच, पीपल, सोंठ, पीपरामूल, चित्रक, अजमायन, जीरा, धनिया, कलौंजी, सोंफ, जायफल, कचूर, दालचीनी, तमालपत्र और नागरमोथा ये प्रत्येक चार २ तोले ले. सोंठ ६ तोले, मिरच ६ तोले इन सब का चूर्ण उस चासनी में डाल सब को मिलायके थाल में कतरी जमाय लेवे इस को **मेथीपाक** कहते हैं यह ४ तोले अथवा शक्ति के अनुसार प्रातःकाल भक्षण करे तो यह आमवात और वात के रोग, विषमज्वर, पांडुरोग, कामला, उन्माद, अपस्मार, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, मस्तक का दर्द, नासारोग, नेत्ररोग, प्रदर और प्रसूति के रोग ये सब नाश होवें इस में संशय नहीं है यह देह को पुष्ट करे. बल, वीर्य को बढावे है ॥

सौभाग्यशुंठी

विश्वौषधं पलान्यष्टौ सर्पिषः पलविंशतिः । प्रस्थद्वयं च गोक्षीरं शर्करार्धतुला तथा ॥ त्रिकटु त्रिसुगंधी च प्रत्येकं च पलं पलम् । साधयेत्स्नेहविधिना सम्यक् शुंठीरसायनम् ॥ नाम्ना सौभाग्यशुंठीयं पुनः सौभाग्यदायकम् । आमवातं हरत्याशु त्वचि कांतिं प्रयच्छति ॥ धातुवृद्धिकरं वृद्धिमायुश्च कुरुते चिरम् । वलीपलितनाशं च कुर्याद्वंध्यत्वनाशनम् ॥

अर्थ—सोंठ ३२ तोले और घी ८० तोले इन को १२८ तोले गौ के दूध में डालके खोहा करे फिर मिश्री २०० तोले की चासनी में पूर्वोक्त खोहा मिलाय फिर सोंठ, मिरच, पीपल, दालचीनी, इलायची और पत्रज ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. स्नेहविधि से पाक तयार करे. इस को **शुंठीरसायन** अथवा **सौभाग्यशुंठी** कहते हैं. यह आमवात का नाश करके उत्तम कांति करे है तथा धातुपुष्टि, बल और आयुष्य को बढावे तथा वली और पलित तथा वंध्यात्व इन को नाश करे है ॥

शुंठ्यादि पुटपाक

शुंठीकल्कं विनिष्पिष्य रसैरेरंडमूलजैः। विपचेत्पुटपाकेन तद्रसः क्षौद्रसंयुतः ॥ आमवातसमुद्भूतां पीडां जयति दुस्तरः ॥

अर्थ—सोंठ को अंड के रस में पीस कल्क करे उस को पुटपाक की विधि से पचायके रस निचोड लेवे. इस में सहत डालके पीवे तो आमवात की पीडा को नष्ट करे ॥

आमवातरोग पर पथ्य

रूक्षः स्वेदो लंघनं स्नेहपानं बस्तिर्लेपो रेचनं पायुवर्तिः। अब्दोत्पन्नाः शालयो ये कुलत्था जीर्णं मद्यं जांगलानां रसाश्च ॥ वातश्लेष्मघ्नानि सर्वाणि तक्रं वर्षाभूश्चैरंडतैलं रसोनः। पटोलपत्तूरककारवेल्लवार्त्ताकुशिग्रूणि च तप्तनीरम् ॥ मंदारगोकंटकवृद्धदारुं भल्लातकं गोजलमार्द्रकं च। कटूनि तिक्तानि च दीपनानि स्युरामवातामयिने हितानि ॥

अर्थ—रूक्षणकर्म, लंघन, स्नेहपान, बस्तिकर्म, लेप, रेचन, गुदा में बत्ती डालना, एक वर्ष के पुराने चावल, पुराने कुलथी, पुराना मद्य, जंगली जीवों का मांसरस, वातकफनाशक संपूर्ण पदार्थ, छांछ, सांठ की जड, अंडी का तेल, लहसन, परवल, पत्तों का शाक, करेले, बैंगन, सहजना, गरम जल, आक, गोखरू, विधायरो, भिलाए, गोमूत्र, अदरख और जो पदार्थ चरपरे, कडवे, अग्निदीपनकर्त्ता हैं वे सब आमवात रोगीको हितकारक जानने ॥

आमवातरोग पर अपथ्य

दधि मत्स्या गुडक्षीरोपोदिकामाषपिष्टकम्। दुष्टनीरं पूर्ववातं विरुद्धान्यशनानि च ॥ असात्म्यं वेगरोधं च जागरं विषमाशनम्। वर्जयेदामवातार्तो गुर्वभिष्यंदकारि च ॥

अर्थ—दही, मछली, गुड के पदार्थ, दूध, पोई का साग, उडद, पिष्टपदार्थ, (चून मैदा आदि), दूषित (बिगडा हुआ) जल, पूर्व की पवन, विरुद्ध और असात्म्य भोजन, मलमूत्रादि उपस्थित वेगों का रोकना, जागरण करना, विषम भोजन और भारी तथा अभिष्यंदी पदार्थ ये आमवातवाले रोगी को त्याज्य कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे आमवातनिदानचिकित्सा समाप्ता।

शूलरोगकर्मविपाकः ।

अजीर्णशूल का कर्मविपाक

शूद्रस्यैव तु भुक्त्वान्नमव्रतस्य द्विजस्य च ।
शूलव्याधिर्भवेन्नित्यमजीर्णाच्चातिपीडितः ॥

अर्थ—जो ब्राह्मण शूद्र का अथवा पतित ब्राह्मण का अन्न भोजन करे है. उस प्राणी के नित्यप्रति शूल रोग और अजीर्ण से पीडित रहता है ॥

प्लीहशूल

विश्वस्तविषदाता च प्लीहवान् जायते नरः ॥

अर्थ—जो प्राणी आपने पर विश्वास करनेवाले को विष (जहर) देता है उस के प्लीहा का रोग होता है ॥

जठरशूल

श्रुताध्ययनसंपन्नं याचितारमकिंचनम् । ब्राह्मणं दांतमाहूय दानार्थं न ददाति यः ॥ स भवेज्जठरी शूली तथाध्मानी च कर्हिचित् ॥

अर्थ—पढा हुआ, बहुश्रुत और दरिद्री, भिखारी, शमदमादि साधनयुक्त ब्राह्मण को जो बुलाकर भी दान नहीं देता उस के उदरशूल तथा पेट का फूलना ये उपद्रव होते हैं ॥

शमन

कृच्छ्रातिकृच्छ्रचांद्राणि स कुर्याद्रोगमुक्तये ॥

अर्थ—ऐसे रोगी को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र और चांद्रायण व्रत करने चाहिये ॥

अरुचिशूल

श्रद्धाहीनो धनवान् दानेष्वरतिस्तामसदानी वा यः ।
सोरुचिमान् शूली जायेतात्रैष निस्तारः ॥

अर्थ—जो कोई धनवान् होकर दान में अश्रद्धा करे अथवा तामसी दान करे उस के अरुचि और शूल ये रोग होते हैं उस की शांति कहते हैं ॥

शमन

चांद्रायणं चातिकृच्छ्रं प्राजापत्यमथापरम् ।
होमाद्यपि च कुर्वीत व्याध्यादेरनुरूपतः ॥

अर्थ–अरुचि और शूलरोगी को चांद्रायण, कृच्छ्रचांद्रायण और प्राजापत्य व्रत करने चाहिये अथवा व्याधि के तारतम्य अनुसार होम आदि करे तो यह रोग शांत हो ॥

साक्षाद्धंति गवादीनि यः पुनर्जननांतरे ।
शिरोरोगी श्रोत्ररोगी शूली वारुचिमान् भवेत् ॥

अर्थ–जो कोई गौ और ब्राह्मण इत्यादिक को जो पूर्व जन्म में वध करता है वह मस्तकशूलरोगी होय है तथा कर्णशूल, उदरशूल अथवा अरुचिवाला होता है ॥

शमन

एतन्निवृत्तये वर्षं द्विवर्षं वा त्रिवर्षकम् ।
चरेद् घृतव्रतं चांते गोहिरण्यादिकं दिशेत् ॥

अर्थ–ब्रह्महत्यादि दोष दूर होने के वास्ते एक, दो अथवा तीन वर्ष पर्यंत घृत पीकर रहे और पश्चात् ब्राह्मण को गौ और सुवर्ण का दान देवे ॥

कटिशूल का कर्मविपाक

गोगामी कटिशूली स्यात् तस्य चांद्रायणं तथा ।
कृच्छ्रं चैवातिकृच्छ्रं च जपं सौरं च निर्दिशेत् ॥

अर्थ–जो प्राणी गौ से गमन करता है वह कमर के दर्द से पीडित होता है उस को चांद्रायण, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र अथवा सूर्य के मंत्र (गायत्री आदि) का जप करना चाहिये ॥

कर्णशूल

मैथुनं शृणुयात्पित्रोः कर्णशूली भवेत्तु सः ।
स्याच्चैव बधिरः किंचित्कपालेसह्यशब्दवान् ॥

अर्थ–जो प्राणी अपने मातापिता के मैथुन को सुनता है (अर्थात् अनुमान करता है) वह कर्णशूल (कान की पीडा) वाला होता है अथवा बहरा होय अथवा उस के कपाल में असह्य शब्द होवे ॥

शमन

निष्कविंशतिकं दद्याद्ब्राह्मणाय कुटुंबिने ।
विष्णुप्रकाशकान् मंत्रान् जपेद्रोगोपशांतये ॥

अर्थ-ऊपर लिखे शूल की शांति करने को कुटुंबवाले ब्राह्मण को वीस तोले सुवर्ण का दान करे अथवा विष्णु देवता जिस का ऐसे (द्वादशाक्षरी अष्टाक्षरी) मंत्रों का जप करे ॥

हस्तशूल

पूर्वजन्मनि नास्तिक्यात्संध्यादिरहितो द्विजः ।
हस्तशूली संभवति निष्कद्वादशकं दिशेत् ॥

अर्थ-जो पूर्व जन्म में नास्तिकपने से ब्राह्मण होकर भी संध्यावंदनादिक नहीं करे उस के हाथों में दर्द हुआ करे है वह बारह तोले सुवर्ण का दान करे ॥

शमन

भोजयेद्ब्राह्मणान् शक्त्या जपेत्सौरं हिरण्यदः ॥

अर्थ-हस्तशूलवाला रोगी यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करावे तथा सुवर्ण दान करके सौरमंत्र का जप करे ॥

नेत्रशूल

नग्नां परस्त्रियं दृष्ट्वा सूर्यं वास्तमयोदये ।
नेत्रशूली भवेत्सोपि नेक्षितुं क्षमते दिशः ॥

अर्थ-जो पुरुष परस्त्री को नग्न देखता है अथवा उदय और अस्त होते हुए सूर्य को देखता है वह नेत्रशूलरोगी होता है. इसी से उस से दिशाओं की तरफ देखा भी नहीं जाय ॥

शमन

वर्चो मे देहि मंत्रेण जपः स्यादष्ट चायुतम् ।
वयः सुपर्णा इति च मंत्रैः सिंचेच्च वारिणा ॥

अर्थ-नेत्रशूली रोगी को 'वर्चो मे देहि' इस मंत्र का १०००८ जप करे अथवा 'वयः सुपर्णा' इत्यादि मंत्र से अभिषेक करे ॥

शूलरोग में कर्मविपाक

शूली परोपतापेन जायते वपुषा तनुः ।
सोन्नदानं प्रकुर्वीत तथा रुद्रं जपेद्बुधः ॥

अर्थ-जो प्राणी अन्यजीवों को दुःख देता है इस पाप से वह शूलरोगी होता है तथा शरीर में कृश होता है उस को अन्नदान अथवा रुद्रजप करना चाहिये ॥

शूल निदान

दोषैः पृथक्समस्तामद्वंद्वैः शूलोष्टधा भवेत् ।
सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायेण पवनः प्रभुः ॥

अर्थ–वात, पित्त, कफ इन से तीन प्रकार का, एक सन्निपात से, एक आम से और तीन द्वंद्वज ऐसे सब मिलकर आठ प्रकार का शूलरोग है. इन सब शूलों में प्रायः वादी है. ज्वर के समान शूलरोग की प्रथम उत्पत्ति हारीत में कही है सो इस प्रकार कामदेव के नाश करने के अर्थ शिव ने क्रोधकरके त्रिशूल को फेंका, उस त्रिशूल को अपने सन्मुख आता हुआ देख कामदेव भयभीत होकर विष्णुभगवान् के देह में प्रवेश कर गया. तदनंतर वह त्रिशूल विष्णु की हुंकार से मूर्छित होकर गिरा तो पृथ्वी में शूल इस नाम से प्रसिद्ध भया, तब से वह शूल पंचभूतात्मक देहधारी मनुष्यों को पीडा करने लगा इस प्रकार इस की उत्पत्ति है. शिव के त्रिशूल से उत्पन्न भया तथा शूल के घाव के समान पीडा करे है इसी से इस को शूल ऐसे कहते हैं ॥

व्यायामयानादतिमैथुनाच्च प्रजागराच्छीतजलातिपानात् । कलायमुद्गाढकिकोरदूषादत्यर्थरूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥ कषायतिक्तादिविरूढकान्नविरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् । विट्शुक्रमूत्रानिलवेगरोधाच्छोकोपवासादतिहास्यभाष्यात्॥ वायुः प्रवृद्धो जनयेद्धि शूलं हृत्पार्श्वपृष्ठत्रिकबस्तिदेशे । जीर्णे प्रदोषे च घनागमे च शीते च कोपं समुपैति गाढम् ॥ मुहुर्मुहुश्चोपशमश्च कोपो विण्मूत्रसंस्तंभनतोदभेदैः । सस्वेदनाभ्यंजनमर्दनाद्यैः स्निग्धोष्णभोज्यैश्च शमं प्रयाति ॥

अर्थ–दंड, कसरत, बहुत चलना, अति मैथुन, अत्यंत जागना, बहुत शीतल जल पीना, कांगनी, मूंग, अरहर, कोदों, अत्यन्त रूखे पदार्थ के सेवन से और अध्यशन (भोजन के ऊपर भोजन), लकडी आदि के लगने से, कषेली, कडवी, भीजा अन्न, जिस में अंकुर निकस आये हों, विरुद्ध क्षीर मछली आदि, सूखा मांस, सूखा शाक (कचरिया आदि) इन के सेवन करने से, मल, मूत्र, शुक्र और अधोवायु, इन के वेग को रोकने से, शोक से, उपवास (व्रत) के करने से, अत्यन्त हँसने से, बहुत बोलने से, कोप को प्राप्त भई जो वात सो बढकर हृदय, पसवाडा, पीठ, त्रिकस्थान, मूत्रस्थान में शूल को करे और वह भोजन पचने के पीछे प्रदोषकाल में,

बर्षाकाल में, शीतकाल में इन दिनों में शूल अत्यंत कोप करे और वारंवार कोप होय, मलमूत्र का अवरोध, पीडा और भेद ये लक्षण वातशूल के हैं तथा स्वेदन और अभ्यंजन तथा मर्दन इत्यादिक से और चिकने गरम अन्न से यह शूल शांत होय है ॥

वातशूल की चिकित्सा

ज्ञात्वा तु वातजं शूलं स्नेहस्वेदैरुपाचरेत् ॥ पायसैः कृशरापिंडैः स्निग्धैर्वा पिशितोत्कटैः ॥ आशुकारी हि पवनस्तस्मात्तं त्वरया जयेत्। तस्य शूलाभिपन्नस्य स्वेद एव सुखावहः ॥

अर्थ–वादी से उत्पन्न हुए शूलरोग में स्नेहपान अथवा पसीने निकालने, खीर, खिचडी, स्निग्ध जिस में मांस के पदार्थ अधिक हों ऐसा आहार करना इत्यादिक उपाय करे. तथा प्राणी को तत्काल वादी नष्ट करनेवाली है इस कारण इस को शीघ्र जीते बहुधा शूल से दुखी मनुष्य पसीने निकालने से सुखी होवे ॥

वातशूल में यूष

वातात्मकं हंत्यचिरेण शूलं स्नेहेन युक्तस्तु कुलित्थयूषः।
ससैंधवव्योषयुतः सलावः सहिंगुसौवर्चलदाडिमाढ्यः ॥

अर्थ–अंड के तेल से युक्त कुलथी का मंड, त्रिकुटे का चूर्ण, सैंधानिमक, लवा पक्षी का मांस, हींग, संचरनिमक और अनारदाना इन को मिलायके पीवे तो वातात्मक शूल तत्काल नाश होय ॥

दशमूलादि क्काथ

तैलमेरंडजं वापि दशमूलस्य वारिणा।
पीतं निहन्ति साटोपं हिंगुसौवर्चलान्वितम् ॥

अर्थ–दशमूल के काढे में अंडी का तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो पेट का फूलना और शूल इन को नाश करे ॥

विश्वादि काढा

विश्वमेरंडजं मूलं क्काथयित्वा शृतं पिबेत्।
हिंगुसौवर्चलोपेतं सद्यः शूलनिवारणम् ॥

अर्थ–सोंठ और अंड की जड इन के काढे में हींग और संचरनिमक डालके देवे तो तत्काल शूल रोग को नाश करे ॥

बलादि क्काथ

बलापुनर्नवैरंडबृहतीद्वयगोक्षुरैः ।
क्काथः सहिंगुलवणः पीतो वातरुजं जयेत् ॥

अर्थ–बला, पुनर्नवा, अंडी, कटेरी, बडी कटेरी और गोखरु इन के काढे में हींग और निमक मिलायके पीवे तो वातशूल का नाश होय ॥

वातशूल पर कल्क

तुषवारिविनिष्पिष्टतिलकल्कस्य पोटली ।
भ्रामिता जठरोर्ध्वं चेन्मुहुः शूलं विनाशयेत् ॥

अर्थ–धानके तुष, जल और तिल इन को एकत्र पीसके पोटली बनाय लेवे फिर इस को पेट पर फेरे तो शूल को नाश करे ॥

बीजपूरस्वरस

सुपक्कबीजपूरस्य रसः सैंधवमिश्रितः ।
पीतः पथ्याशिनो हंति हृच्छूलमतिदारुणम् ॥

अर्थ–उत्तम पके हुए बिजोरे के रस में सैंधानिमक डालके पीवे और पथ्य तथा योग्य अन्न भक्षण करे तो अतिदारुण हृदय का शूल नाश होय ॥

तुंबरुआदि चूर्ण

तुंबरून्यभयाहिंगुपौष्करं लवणत्रयम् ।
पिबेद्यवांबुना वातशूलगुल्महरं परम् ॥

अर्थ–तुंबरु, हरड, हींग, पुहकरमूल, सैंधानिमक, बिडनिमक और कचियानिमक इन के चूर्ण को जों के काढे के साथ देवे तो वातशूल और गोला इन को नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकी चातिविषा हिंगु सौवर्चलं वचा । गालितेंद्रयवास्तुल्या
भक्षयेदुष्णवारिणा ॥ कर्षैकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ–हरड, अतीस, हींग, संचरनिमक, वच और इन्द्रजों इन का समान भाग चूर्ण गरम जल के साथ १ तोले देवे तो उत्कृष्ट वातशूल को नाश करे॥

सौवर्चलाद्य चूर्ण

सौवर्चलाम्लवेतसबिडलवणयुतससैंधवातिविषा ।
त्रिकटुकं बीजपुररसान्वितमशितं गुरुगुल्मशूलहरम् ॥

अर्थ—संचरनिमक, अमलवेत, बिडनिमक, सैंधानिमक, अतीस और त्रिकुटा इन के चूर्ण को बिजोरे के रस से देवे तो गोला और शूल इन का नाश करे ॥

उशीराद्य चूर्ण

उशीरं सैंधवं हिंगु मूलमेरंडजं समम् ।
वातशूलं निहन्त्येव भुक्तं तप्तेन वारिणा ॥

अर्थ—खस, सैंधानिमक, हींग और अंड की जड इन का समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जल के साथ पीवे तो वातशूल को नाश करे ॥

श्वेतएरंडादिचूर्ण

श्वेतैरंडशिफाहिंगुसैंधवं समचूर्णितम् ।
तप्तेन वारिणा भुक्तं वातशूलहरं परम् ॥

अर्थ—सपेद अंड की जड, हींग और सैंधानिमक सब समानभाग ले चूर्ण करे. गरम जल से पीवे तो वात के शूल को नाश करे ॥

मंदारमूलिकाद्य चूर्ण

मंदारमूलिकाचूर्णं भुक्तं दुग्धेन मिश्रितम् ।
वातशूलहरं देवीमूलं वा कर्णगोद्भवम् ॥

अर्थ—मंदार की जड का चूर्ण दूध से देवे तो वातशूल को नाश करे अथवा सहदेई की जड अथवा गोकर्णी की जड वात के शूल को नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानी सैंधवं हिंगु क्षारः सौवर्चलाभया ।
पिबेत्कोष्णांबुना वातोद्भवशूलनिवृत्तये ॥

अर्थ—अजमायन, सैंधानिमक, सोरा, संचरनिमक और हरड इन का चूर्ण करके गरम जल के साथ पीवे तो वातशूल का नाश होवे ॥

करंजाद्य चूर्ण

करंजसौवर्चलनागराणां सरामठानां समभागिकानाम् ।

चूर्णं कदुष्णेन जलेन पीतं समीरशूलं विनिहंति सद्यः ॥

अर्थ-कंजा, संचरनिमक, सोंठ, हींग इन को समानभाग ले चूर्ण करे इस को गुनगुने जल के साथ सेवन करे तो वातशूल को तत्काल नाश करे ॥

गुडूच्यादि चूर्ण

पीतमुष्णांभसा चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ।
हृच्छूलं वातशूलं च हंतिपथ्याशनो नरः ॥

अर्थ-गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे और पथ्य से रहे तो हृदयशूल तथा वातशूल इन को नाश करे ॥

प्रकारांतर

मातुलिंगरसं चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ।
हृच्छूलं हंति वेगेन पीतं शीतेन वारिणा ॥

अर्थ-गिलोय और काली मिरच इन के चूर्ण को बिजोरे के रस से अथवा शीतल जल से देवे तो बहुत जल्दी हृदय का शूल नाश होय ॥

उशीरादि चूर्ण

उशीरं पिप्पलीमूलं चूर्णं कृत्वा समांशतः ।
गोघृतेन समं पीतं हंति हृच्छूलमुल्बणम् ॥

अर्थ-खस और पीपरामूल इन का समानभाग चूर्ण कर गौ के घी में मिलायके खाय तो अतिकठिन हृदय का शूल नाश होय ॥

सुवर्चलादि चूर्ण

सुवर्चलाभया हिंगुरजमोदा च सैंधवम् ॥
स्वर्जी यवोद्भवः क्षारः पयोसूक्तं च शूलहृत् ॥

अर्थ-संचरनिमक, हरड, हींग, अजमोदा, सैंधानिमक, सज्जीखार और जवाखार इन का चूर्ण दूध और कांजी में मिलायके पीवे तो शूलरोग को नाश करे ॥

प्रकारांतर

सुवर्चला जीरकमम्लवेतसं समं त्रयं दशमरीचचूर्णकम् ।
सबीजपूरस्य रसेन भावितं जलेन पीतं खलु वातशूलनुत् ॥

अर्थ-सोरा, जीरा और अमलवेत ये समानभाग ले तथा काली मिरच का चूर्ण दशगुना इस प्रकार लेकर इस में बिजोरे के रस की भावना देकर जल के साथ खाय तो वातशूल का नाश करे ॥

एरंडमूलादि चूर्ण

एरंडमूलं तुंबरुबिडलवणसुवर्चलाभया।
हिंगुरेतैरंबुना पीतैर्न याति शूलं च गुरुगुल्मम् ॥

अर्थ-अंड की जड, धनिया, बिडनिमक, सोरा, हरड और हींग इन के चूर्ण को जल से पीवे तो शूल और गोला इन का नाश करे ॥

सौवर्चलादि गुटिका

सौवर्चलाम्लिकाजाजिमरीचैर्द्विगुणोत्तरैः।
मातुलिंगरसैर्बद्धा गुटिका वातशूलहृत् ॥

अर्थ-संचरनिमक, इमली, जीरा और काली मिरच ये प्रत्येक द्विगुणोत्तर वृद्धि के क्रम से लेवे सब को बिजोरे के रस में घोटके गोली बनाय लेवे यह वातशूल का नाश करे है ॥

बिल्वादि गुटिका

बिल्वैरंडतिलैः कृत्वा गुटिकाश्चाम्लपेषिताः।
वातशूलोपशांत्यर्थं प्रयुंज्यादुष्ट्रया तथा ॥

अर्थ-बेल, अंड की जड और तिल इन का चूर्ण नीबू के रस में खरल करके गोली बनावे. इस को लघु मेंढासिंगी के रस में देवे तो वातशूल को शांति करे ॥

सोमाग्निमुखरस गुटि

समांशं पंचलवणं दत्वार्द्रकजले पचेत्।
दिनं पक्षं ततः कुर्याद्वटिका चणमात्रका ॥
भक्षयेद्वातशूलार्तः सोमाग्निमुखनामकः ॥

अर्थ-पांचों निमक समान भाग लेवे सब को अद्रख के रस में पंद्रह दिन पचावे. फिर इस की चने के बराबर गोली करके वातशूलरोगी को देवे इस का **सोमाग्निमुख** यह नाम है ॥

मृगशृंगोद्भव भस्म

बहुशाखं तु यत् शृंगं गृहीत्वा तन्मृगोद्भवम् ॥

अंतर्धूमं विदग्धं तद्भस्म कर्षं घृतैर्लिहेत् ॥
वातशूलहरं सिद्धं जयंतीं वा गुडैर्लिहेत् ॥

अर्थ–साबर के सींग को अग्नि में भूनके भस्म कर ले यह भस्म १ तोले को घी में मिलाय अथवा अरनी के रस और घी के साथ अथवा गुड के साथ सेवन करे तो वात के शूल को नाश करे ॥

अग्निमुख रस

रसबलिगगनार्कं वेतसाम्लं विषं स्यात्सवरमिति पृथक् तद्भावये-द्दस्त्रमेतैः ॥ कनकभुजगवल्लीकंटकारीजयाद्भिः कनकशमिक-वासाऋद्धिरास्नांबुपूरैः ॥ अरुणदशशशांकैर्मातुलान्याथ योज्यैः पटुगण इह तुल्यो भावयेदार्द्रकाद्भिः ॥ दहनवदनसंज्ञो वल्ल-मात्रो निहंति प्रबलपवनशूलं तद्विकारानशेषान् ॥ शिवावचा-हिंगुविषाकलिंगरुचकं समम् ॥ कर्षमुष्णांबुना सेव्यमनुपानं हि शूलिभिः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, अभ्रक, ताम्र, अमलवेत, सिंगियाविष, हरड, बहेडा, आंवला, और पांचों निमक ये समान भाग लेवे. इन को धतुरे, पान, कटेरी, भांग, पलास, छोकरा, अडूसा, ऋद्धि, रासना, लाल ओंजा, कपूर, भांग, और अदरख का रस इन को नित्य एक एक भावना देवे तो यह अग्निमुख रस एक वल्ल देने से वातशूल और वातविकार इन को नाश करे इस का अनुपान हरड, वच, हींग, अतीस, कूडा की छाल और निमक इन औषधों को समान भाग चूर्ण करके यह १ तोले चूर्ण से देवे ॥

उदयभास्कर रस

भस्म सूतं मृतं चाभ्रं शिलागंधकतालकम् ॥ हिंगुकं कुष्ठमुस्तं च तुल्यं चूर्णं विभावयेत् ॥ शुद्धार्कमत्तनिर्गुंडीमहारास्नाद्रवैः पृथक् ॥ प्रतिदिनं द्रवैर्भाव्यं शुष्कं तद्गोलकीकृतम् ॥ वस्त्रे बद्ध्वा मृदा लेप्यं शुष्कं कृत्वा पुटे पचेत् ॥ चतुर्धा बस्तमूत्रेण समा-दाय विचूर्णयेत् ॥ द्वौ गुंजे घृतशुंठीभ्यां लेह्यो ह्युदयभास्करः ॥

वातशूलप्रशांत्यर्थं तिलक्षारं सकुष्ठकम् ॥ मधुना लेहयेच्चानु-
शूलं वा काकतुंडकम् ॥

अर्थ-पारदभस्म, अभ्रकभस्म, मनसिल, गंधक, हरताल, हींग, मुरदासिंग और नागरमोथा ये समान भाग ले इन का चूर्ण करके इस में थूहर, आक, धतूरा, निर्गुंडी और रासना इन के रस में एक एक दिन खरल कर गोला बनाय ले उस को सुखायके फिर बकरी के मूत्र में खरल करे और फिर प्रथम कही हुई औषधों की पुट देवे इस प्रकार चार पुट देवे. फिर इस में से २ रत्ती यह उदयभास्कररस घी और सोंठ के चूर्ण से देवे अथवा वातजन्य शूल पर तिल के खार कूठ और सहत इन के साथ देवे अथवा काकडोडीके चूर्ण के साथ देवे ॥

नाभिशूलपर लेप

नाभिलेपाज्जयेच्छूलं मदनं कांजिकान्वितम् ।
बिल्वैरंडतिलैर्वापि पिष्टैरम्लेन पोटली ॥

अर्थ-मैनफल को कांजी में पीस उस का टुंडी पर लेप करे अथवा बेलगिरी अंडी इन को बिजोरे के रस में खरल कर पोटली बनाय ले इस में सेक करे तो शूल दूर होय ॥

वातशूलपर लेप

राजिकाशिग्रुकल्कं च गोतक्रेण च पेषितम् ।
तेन लेपेन हंत्याशु शूलं वातसमुद्भवम् ॥

अर्थ-राई और सहजने की छाल इन को गौ की छाछ में पीसके लेप करे तो वातशूल को नाश करे ॥

मृत्तिकासेक

मृत्तिकां सजलां पाकात् घनीभूतां पटे क्षिपेत् ।
कृत्वा तत्पोटलीं शूली तया स्वेदं विधापयेत् ॥

अर्थ-मिट्टीको जलमें सानके औटावे. जब गाढी हो जावे तब इस की कपडे में पोटली बांधके पेटको सेक के पसीने निकाले तो शूल होना बंद होय ॥

नाभिलेप

हिंगुतैलं सलवणं गोमूत्रेण विपाचितम् ।
नाभिस्थाने प्रदातव्यं यस्य शूलं सवेदनम् ॥

अर्थ–हींग, तेल और सेंधानिमक इन को गोमूत्र में डालके पचावे फिर इस का नाभि पर लेप करे तो पीडायुक्त शूल का नाश होय ॥

पैत्तिकशूलनिदान

क्षारातितीक्ष्णोष्णविदाहितैलनिष्पावपिण्याककुलित्थयूषैः । कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः क्रोधानलायासरविप्रतापैः ॥ ग्राम्यातियोगादशनैर्विदग्धैः पित्तं प्रकुप्याति करोति शूलम् । तृण्मोहदाहार्तिकरं हि नाभ्यां सस्वेदमूर्छाभ्रमचोषयुक्तम् ॥ मध्यंदिने कुप्याति चार्धरात्रे विदाहकाले जलदात्यये च । शीते च शीतैः समुपैति शांतिं सुस्वादुशीतैरपि भोजनैश्च ॥

अर्थ–यवक्षार आदि खार, मरिच आदि तीखी और गरम विदाहकारक वांस और करील आदि, तेल, सिंबी, खल, कुलथी के यूष से, कडुवा, खट्टा, सौवीर (मद्यविशेष), सुराविकार (कांजी इत्यादिक), क्रोध से, अग्नि के समीप रहने से, परिश्रम से, सूर्य की तीव्र धूप में डोलने से, अतिमैथुन करने से, विदाहकारक अन्न आदि इन कारणों से पित्त कुपित होकर नाभिस्थान में शूल उत्पन्न करे वह शूल तृषा, मोह, दाह, पीडा इन को करे और पसीना, मूर्च्छा, भ्रम, शोष इन को करे, दुपहर के समय, मध्यरात्रि में, अन्न के विदाहकाल में, शरदकाल में शूल अधिक होय शीतकाल में शीतल पदार्थ से और अत्यंत मधुर (मीठा) शीतल अन्न से यह शूल शांति होय ॥

सामान्यचिकित्सा

**वामयेत्पित्तशूलार्तं पटोलेक्षुरसादिभिः ।
पश्चाद्विरेचयेत्सम्यक् पित्तगुल्मविरेचनैः ॥**

अर्थ–पित्तशूलपीडित मनुष्य को पडवल, ईख का रस इत्यादिकों करके वमन करावे फिर पित्तगुल्म पर जो रेचन (दस्तपर औषधी) कही है उन से जुल्लाब देके शुद्ध करे ॥

**पित्ते प्रशस्ताः सलिलेवगाहा भांडानि कांस्यानि जलप्लुतानि ॥
निधाय शूलोपरि शीतलानि प्रशामयेच्छूलमनेन तज्ज्ञः ॥**

अर्थ–पित्तशूल होने से जलमें गोते लगावे. तथा कांसे के पात्र में जल भरके शूल पर धारण करे तो इस की शांति होय ॥

नाभी के ऊपर पात्र धरना

मणीरजतताम्राणां भाजनानि गुरूणि च ।
तोयेन परिपूर्णानि शूलस्योपरि धारयेत् ॥

अर्थ–स्फाटिकादि पाषाणों का वा रूपे का वा तांबे का पात्र लेकर उस में जल भरके जिस स्थान में शूल उत्पन्न होता है उस पर धारण करना. इस से शूल रोग का नाश होता है ॥

सामान्ययत्न

विरेचनं पित्तहरं प्रशस्तं रसाश्च शस्ताः शशलावकानाम् ॥

अर्थ–पित्तशूल पर पित्तनाशक रेचन और ससे के मांस का अथवा लवापक्षी के मांस का रस पीना उत्तम कहा है ॥

शतावर्यादिक्काथ

शतावरीसयष्ट्याह्ववाट्यालकुशगोक्षुरैः । शृतशीतं पिबेत्तोयं सगुडक्षौद्रशर्करम् ॥ पित्तासृग्दाहशूलघ्नं सद्यो दाहरुजापहम् ॥

अर्थ–शतावर, मूलहठी, खिरेटी, डाभ की जड और गोखरू इन के काढे को शीतल होने पर उस में गुड अथवा खांड अथवा सहत डालके पीवे तो पित्तरक्त, दाह, शूल इन को नाश करे. तथा दाह को तत्काल शमन करे ॥

बृहत्यादिक्काथ

बृहतीगोक्षुरैरंडकुशकाशेक्षुवालिकाः ।
पीताः पित्तभवं शूलं सद्यो हन्युः सुदारुणम् ॥

अर्थ–कटेरी, गोखरू, अंड की जड, कुश, कांस और कसोंदी इन का काढा पीवे तो तत्काल शूलरोग को नाश करे ॥

त्रिफलादिक्काथ

त्रिफलारग्वधक्काथः शर्कराक्षौद्रसंयुतः ।
रक्तपित्तहरो दाहपित्तशूलनिवारणः ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला प्रत्येक १-२-३ भाग ले और अमलतास का गूदा ४ भाग इन चारों औषधों का काढा करके उस में मिश्री और सहत डाल के पीवे तो रक्तपित्त और दाह तथा पित्तशूल को दूर करे ॥

त्रिफलादिक्काथ

त्रिफलारिष्टयष्ट्याह्वकटुकारग्वधैः शृतम् ।
पाययेन्मधुसंमिश्रं दाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ–त्रिफला, नीम की छाल, मुलहटी, कुटकी और अमलतास का गूदा इन का काढा कर उस में सहत डाल के पीवे तो पित्तशूल नष्ट होय ॥

त्रायमाणादि क्काथ

त्रायमाणकणामूलं त्रिवृता मधुकं शिवा ।
गिरमाला शिवा द्राक्षा कुरंटः पित्तशूलहृत् ॥

अर्थ–त्रायमाण, पीपलामूल, निसोथ, मुलहटी, हरड, अमलतास का गूदा, आंवले, दाख और पियावांसा इन का काढा करके पीवे तो पित्तशूल को नाश करे ॥

शतावर्यादिरस

शतावरीरसं क्षीरं क्षौद्रं प्रातः पिबेन्नरः ।
दाहशूलोपशांत्यर्थं सर्वं पित्तामयापहम् ॥

अर्थ–शतावर के काढे में दूध और सहत डालके प्रातःकाल पीवे तो दाह और शूलरोग की शांति होय । तथा यह सर्व पित्त के रोगों का नाशक है ॥

धात्र्यादिचूर्ण

प्रलिह्यात्पित्तशूलघ्नं धात्रीचूर्णं समाक्षिकम् ।
सगुडं घृतसंयुक्तं भक्षयेद्वा हरीतकीम् ॥

अर्थ–आंवले के चूर्ण को सहत के साथ चाटे अथवा हरड का चूर्ण गुड और घी इन के साथ सेवन करे तो पित्तशूल नाश होय ॥

धात्र्यादिस्वरस

धात्र्या रसं विदार्या वा त्रायंत्या गोस्तनांबु वा ।
पिबेत्सशर्करं सद्यः पित्तशूलनिवारणम् ॥

अर्थ–आंवले का अथवा विदारिकंद का अथवा मेंदी का अथवा दाख का रस मिश्री डालके पीवे तो तत्काल पित्तशूल का निवारण करे है॥

कफजन्य शूल के लक्षण

आनूपवारिजकिलाटपयोविकारैर्मांसेक्षुपिष्टकृशरातिलशष्कु-

लीभिः । अन्यैर्बलासजनकैरपि हेतुभिश्च श्लेष्मा प्रकोपमुपगम्य करोति शूलम् ॥ हृल्लासकाससदनाऽरुचिसंप्रसेकैरामाशये स्तिमितकोष्ठशिरो गुरुत्वैः । भुक्ते सदैव हि रुजं कुरुतेऽतिमात्रं सूर्योदये च शिशिरे कुसुमागमे च ॥

अर्थ–जल के समीप रहनेवाले पक्षीन का मांस, मछली आदि मांस, दही, घृत, मक्खन आदि दूध के विकार, मांस, ईख का रस, पिसा अन्न, खिचडी, तिल, पुरी, कचौडी आदि और कफकारक पदार्थ खाने से कफ कुपित होकर आमाशय में शूलरोग को प्रगट करे उस में सूखी रद्द, खांसी, ग्लानि, अरुचि, मुख से लार गिरे, बद्धकोष्ठता, मस्तक भारी हो ये लक्षण होंय. भोजन करते समय पीडा होय, सूर्योदय के समय, शिशिरऋतु में और वसंतकाल में शूल बहुत होय ॥

कफशूल के सामान्य चिकित्सा

शाल्यन्नं जांगलं मांसमरिष्टं कटुकं रसम् ।
मद्यानि जीर्णगोधूमं कफशूले प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–साली चावलों का भात, जंगली जीवों का मांस, लहसन, परवल, मांसद्रव, मद्य और पुराने गेहूं इन को कफशूल पर योजना करे ॥

एरंडमूलादि क्वाथ

एरंडमूलं द्विपलं जलेष्टगुणिते पचेत् ।
तत्क्वाथो यावशूकाढ्यः पार्श्वहृत्कफशूलहा ॥

अर्थ–अंड की जड ८ तोले को ले अठगुने जल में डालके अष्टावशेष काढा करे फिर इस में जवाखार डालके पीवे तो पसवाडों का दर्द, छाती का दर्द और कफ के शूल को नष्ट करे ॥

बीजपूररस

बीजपूररसोपेतो गुडः श्लेष्मसमुद्भवम् ।
हृद्रोगं वातशूलं च गुल्मं वा हंति निश्चितम् ॥

अर्थ–बिजोरे के रस में गुड डालके देवे तो कफ से उत्पन्न हुआ शूल, हृदय रोग, वातशूल और गोला इन को नाश करे ॥

कट्फलादि चूर्ण

कट्फलं पौष्करं शृंगी मुस्तकं कटुकं शठी । समस्तानेकशो

वापि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ आर्द्रकस्वरसक्षौद्रैर्लिह्यात्कफ-
विनाशनम् । शूलानिलारुचिच्छर्दिकासश्वासक्षयापहम् ॥

अर्थ–कायफल, पोहकरमूल, कांकडासिंगी, नागरमोथा, सोंठ, काली मिरच, पीपल, कचूर ये नौ औषधी पृथक् २ कूटे अथवा सब को एकत्र कूटके चूर्ण करे फिर अदरख के रस से अथवा सहत के साथ सेवन करे तो इस चूर्ण के प्रभाव से कफ दूर होवे. शूल और वायु, अरुचि, वमनरोग, खांसी, श्वास, क्षयरोग ये दूर होवें ॥

बृहत्कट्फलादि चूर्ण

कट्फलं पौष्करं कृष्णा शृंगी च मधुना सह ।
श्वासकासज्वरहरः श्रेष्ठो लेहः कफांतकृत् ॥

अर्थ–कायफल, पोखरमूल, पीपल, काकडासिंगी इन चारों औषधों को चूर्ण करके सहत से देवे तो श्वास, खांसी और ज्वर ये दूर होवे. जिस किसी को कफ अत्यंत दुःख देता हो उस के वास्ते यह चूर्ण बहुत उत्तम है ॥

पथ्यादि चूर्ण

चूर्णं पथ्या वचा वह्नि कटुरोहिणिरुक्समम् ।
श्लेष्मशूलं हरत्याशु पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥

अर्थ–हरड, वच, चित्रक की छाल, कुटकी इन सब का चूर्ण करके १ तोले के अनुमान ले गोमूत्र के साथ पीवे तो शीघ्र कफशूल को नाश करे ॥

मुस्तादि चूर्ण

मुस्तं वचा तिक्तकरोहिणी च तथाभया निर्दहनं च तुल्यम् ।
पिबेत्तु गोमूत्रयुतं कफोत्थे शूले तथा यस्य च पाचनार्थम् ॥

अर्थ–नागरमोथा, वच, कुटकी, हरड और भिलाए इन को समानभाग लेकर चूर्ण करे फिर इस गोमूत्र से पीवे तो कफजन्य शूल का नाश करे तथा आम को पचावे॥

लवणादि चूर्ण

कफप्रकोपशूलार्तमवश्यमुपवासयेत् । लवणत्रितयं हिंगु पंच-
कोलयुतं पिबेत् ॥ सुखोष्णेनांभसा पीतं कफशूलहरं परम् ॥

अर्थ–कफ के कोप से यदि शूल प्रगट होवे तो अवश्य उपवास करे और सैंधा-निमक, बिडनिमक, संचरनिमक, हींग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन के चूर्ण को गरम २ जल के साथ देवे तो कफशूल को हरण करे ॥

सर्वांगसुंदर रस

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शिलामाक्षिकतालकम् । चूर्णयेल्लवणं पंच एतद्दशकतुल्यकम् ॥ मृतं स्वर्णं च निक्षिप्य सूतांतर्दशमांशकम् । सूततुल्यं वत्सनागं चूर्णं भाव्यं दिनावधि ॥ विषमुष्ट्या जया वासा विजया रक्तशाकिनी । बर्बरी च महाराष्ट्रिद्रवैर्धत्तूरजैस्तथा ॥ रुध्वा तुषपुटे पाच्यं समुद्धृत्य विचूर्णयेत । सर्वांगसुंदरो नाम रसो गुंजाचतुष्टयम् ॥ भक्षयेद्घृतशुंठीभ्यां हन्ति गुल्मं सशूलकम् ॥

अर्थ–पारे की भस्म, तामे की भस्म, मनसिल, सुवर्णमाक्षिक, हरताल, निमक, सुहागा, सैंधानिमक, विडनिमक और संचरनिमक ये दश औषध समानभाग लेवे, प्रथम पारे का दशांश स्वर्णभस्म पारे में मिलाय के घोटे तथा पारे की समान सिंगियाविष लेवे. फिर इन सब को एकत्र करके उस में कुचला, अरनी, अडूसा, भांग, लाल नौरोषे का साग, बनतुलसी, जलपीपल और धतूरा इन प्रत्येक के रसों की अथवा इन के काढों की नित्य प्रति भावना देवे फिर इन की टिकिया बनाय शरावसंपुट में भरके तुषाग्नि देवे. जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकाल लेवे. फिर संपुट में से युक्ति के साथ निकाल लेवे और खरल करे इस को **सर्वांगसुंदर रस** कहते हैं इस चार रत्ती रस को घी और सोंठ इन के संग देवे. तो कफशूल और गोले का रोग इन को नाश करे ॥

आमशूल

आटोपहृल्लासवमीगुरूत्वं स्तैमित्यमानाहकफप्रसेकैः ।
कफस्य लिंगेन समानलिंगमामोद्भवं शूलमुदाहरंति ॥

अर्थ–पेट में गुडगुडाहट शब्द होय, उबाकिओंका आना, रद्द, देह भारी, मंदता, अफरा, मुख से कफ का स्राव इन लक्षणों से तथा कफशूललक्षणों के समान ऐसे शूल को आमशूल कहते हैं ॥

आमशूल की सामान्य चिकित्सा

आमशूले क्रिया कार्या कफशूलविनाशिनी ।
सेव्यमामहरं सर्वं यद्यदग्निविवर्धनम् ॥

अर्थ--आमशूल पर कफशूलनाशक संपूर्ण क्रिया करनी चाहिये तथा आमनाशक और अग्नि को बढानेवाले उपचार करे ॥

चित्रकादि क्वाथ

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीधान्यजलैः शृतम् ।
सहिंगु सैंधवविडमामशूलहरं परम् ॥

अर्थ—चित्रक, पीपरामूल, अंड की जड, सोंठ और धनिया इन का काढा हींग और सैंधानिमक तथा विडनिमक डालके पीवे तो अत्यंत शूल को नाश करे ॥

त्रिफलादिचूर्ण

तिक्ष्णायाश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।
प्रयोज्यं मधुसर्पिर्भ्यां सर्वशूलनिवारणम् ॥

अर्थ—राई और त्रिफला इन के चूर्ण को सहत और घी में मिलाय के देवे तो सर्वप्रकार के शूल दूर होवें ॥

दीप्यादिचूर्ण

दीप्यकं सैंधवं पथ्या नागरं च चतुःपलम् ।
चूर्णं शूलं जयत्याशु मंदस्याग्नेश्च दीपनम् ॥

अर्थ—अजमायन, सैंधानिमक, हरड, सोंठ ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे इन का चूर्ण करके सेवन करे तो शूल और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

बिल्वमूलादि चूर्ण

मूलं बैल्वं तथैरंडं चित्रकं विश्वभेषजम् ।
हिंगुसैंधवसंयुक्तं सद्यः शूलनिवारणम् ॥

अर्थ—बेलगिरी, अंड की जड और चित्रक की जड, सोंठ, हींग, सैंधानिमक इन का चूर्ण करके सेवन करे तो तत्काल शूल को दूर करे ॥

दार्वादि लेप

दारुहैमवतीकुष्ठशताह्वाहिंगुसैंधवैः ।
आम्लपिष्टैः सुखोष्णैश्च लिंपेच्छूलयुतोदरम् ॥

अर्थ—दारुहलदी, हरड, कूठ, शतावर, हींग और सैंधानिमक इन सब को छाछ में पीस कुछ गरम करके पेट पर लेप करे तो शूल का नाश करे ॥

आमशूल पर

एरंडतैलं षड्भागं लशुनस्य तथाष्टकम् ।

एकं हिंगु त्रिसिंधूत्थं सर्वमेकत्र मर्दयेत्।
त्रिनिष्कं भक्षयेत्पश्चादामशूलप्रशांतये॥

अर्थ-अंडी का तेल ६ लहसन ८ हींग १ सैंधानिमक ३ इस प्रकार भाग लेकर सब को एकत्र मर्दन करके इसमें से १ तोले भक्षण करे तो आमशूल शांति होवे॥

हिंग्वादि योग

हिंगुत्रिगुणसैंधवं तस्माच्च शुद्धतैलमैरंडम्।
तत्रिगुणरसोनरसं गुल्मोदावर्तशूलघ्नम्॥

अर्थ-हींग १ भाग, सैंधानिमक ३ भाग अंडी का तेल ९ भाग, लहसन का रस २७ भाग, ये सब एकत्र करके चूर्ण करे यह गोला, उदावर्त्त इन को नाश करे॥

कूष्मांडक्षार

कुष्मांडं तनु कृत्वा तु च्छित्वा घर्मे विशोषयेत्। स्थाल्यां निक्षिप्य तत्सर्वं पिधानेन पिधाय च॥ चुल्यां निवेश्य वह्निं च ज्वालयेत्कुशलो जनः। यथा तन्न भवेद्भस्म किं त्वंगारो दृढो भवेत्॥ तदा निर्वापयेच्छीतं चूर्णितं चूर्णयेत्तु तत्। माषद्वयमितं तावच्छुंठीचूर्णविमिश्रितम्॥ जलेन भक्षयेन्नित्यं महाशूलाकुलो नरः। असाध्यमपि यच्छूलं तदप्येतेन शाम्यति॥

अर्थ-पेठे को छील उस के बीजों को निकाल छोटे २ टुकडे कतर लेवे उन को जल में धोकर धूप में सुखाय ले फिर उनके एक मिट्टी के पात्र में भरके मुख को ढकनेसे ढक देवे इस पात्र को चूल्हे पर चढाय नीचे अग्नि जलावे उन को कुशल वैद्य इस प्रकार जलावे उत्तम कोले हो जावें किंतु वा जलके राख न हो जाय फिर उनको बुझायके शीतल होनेपर चूर्ण कर लेवे. इसमें से दो मासेके अनुमान ले और इतनीहि सोंठ मिलावे. दोनोंको एककर गरम जल के साथ नित्य भक्षण करे तो असाध्यभी शूलरोग इस खारसे नष्ट होय॥

द्वंद्वजशूललक्षण

बस्तौ हृत्कंठपार्श्वेषु स शूलः कफवातिकः।
कुक्षौ हृन्नाभिमध्येषु स शूलः कफपैत्तिकः॥
दाहज्वरकरो घोरो विज्ञेयो वातपैत्तिकः।

अर्थ–बस्ति (मूत्रस्थान), हृदय, कंठ, पसवाडे इन ठिकाने शूल होय वो (कफवातिक) जानना, कूख में हृदय नाभि और पसवाडे इन में कफपित्त का शूल होय है, दाह ज्वर करनेवाला ऐसा भयङ्कर शूल होय वो वातपित्त का जानना ॥

द्वंद्वजशूलकी सामान्य चिकित्सा

द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ–द्वंद्वज शूलपर स्नेहादिक दो योग योजना करे और त्रिदोषात्मक होय तो तीन योग योजना करे ॥

द्वंद्वजशूलपर क्वाथ

निदग्धिकाबृहत्यौ च कुशकाशेक्षुवालिकाः ।
श्वदंष्ट्रैरंडमूलं च वारिणा सह पाचयेत् ॥
पिबेत्सशर्करक्षौद्रं शूले पित्तानिलात्मिके ।

अर्थ–कटेरी, बडी कटेरी, डाभ, कांस, इक्षुवालिका कांसका भेद, गोखरू, अंड की जड इनके काढे में सहत डालके तथा मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तवातात्मक शूल को नाश करे ॥

पटोलादि क्वाथ

पटोलत्रिफलारिष्टैः शृतं क्षौद्रयुतं पिबेत् ।
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहशूलोपशांतये ॥

अर्थ–पटोलपत्र, त्रिफला और नीम की छाल इन के काढे में सहत डालके पीवे. तो पित्तश्लेष्म ज्वर, छर्दि, दाह और शूल इन को शांति करे ॥

द्राक्षादि क्वाथ

द्राक्षाटरूषयोः क्वाथः श्लेष्मपित्तरुजं जयेत् ।
पित्तश्लेष्मोद्भवं शूलं विरेकवमनैर्जयेत् ॥

अर्थ–दाख और अडूसा इन का काढा कफपित्त शूल को पराजय करे और पित्तश्लेष्मशूल रेचन तथा वमन कराने करके जीते ॥

एरंडमूलादि क्वाथ

एरंडफलमूलानि बृहतीद्वयगोक्षुरैः । पर्णिन्यः सहदेवी च सिंहपुच्छी क्षुरालिका ॥ तुल्यैरेतैः शृतं तोयं यवक्षारयुतं पिबेत् ।
पृथग्दोषभवं शूलं हन्यात्सर्वभवं तथा ॥

अर्थ–अंडी, अंड की जड, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, शालिपर्णी, पृष्ठपर्णी, महाबला, पिठवन, और क्षुरालिका इन सब औषधों को समान भाग ले काढा करे छानके जवाखार मिलायके देवे तो द्वंद्वज शूल का नाश करे ॥

लशुनकल्क

मद्येन नित्यं तु रसोनकल्कं प्रातः पिबेद्वातकफोत्थशूली ।
क्षारोदकं पिप्पलिसैंधवाक्तं पीतं जयेदुर्जयमुग्रशूलम् ॥

अर्थ–वातकफ शूल पर लहसन के कल्क को मद्य के साथ प्रातःकाल पीवे. अथवा खारीजल में पीपल और सैंधानिमक इन का चूर्ण डालके देवे तो यह शूल का नाश करे ॥

सन्निपातशूल के लक्षण

सर्वेषु दोषेषु च सर्वलिंगं विद्याद्भिषक् सर्वभवं हि शूलम् ।
सकष्टमेनं विषवज्रतुल्यं विवर्ज्जनीयं प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ–वातादि सर्व दोषों के लक्षण हुए होंय तो उस को सन्निपातज शूल कहते हैं. वह सन्निपातज शूल विष और वज्र इन के समान दुःसाध्य ऐसा वैद्यलोगों ने कहा है ॥

त्रिदोषशूलचिकित्सा

शङ्खचूर्णं सलवणं सहिंगुव्योषसंयुतम् ।
उष्णोदकेन तत्पीतं शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ–शंखभस्म, सैंधानिमक, हींग और त्रिकुटा इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो त्रिदोष के शूल को नाश करे ॥

विदारिरसयोग

विदारिदाडिमरसः सव्योषलवणान्वितः ।
क्षौद्रयुक्तो जयत्याशु शूलं दोषत्रयोद्भवम् ॥

अर्थ–विदारीकंद, और अनारदाना इन के रस में सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इन का चूर्ण और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषजन्य शूल को नाश करे ॥

अक्षादिस्वरस

अक्षामलकशिवानां स्वरसः सुपक्वलोहजं च रसः ।
सगुडं यद्यपि युक्तं मुंचति शूलं त्रिदोषोत्थम् ॥

अर्थ–बहेडा, आंवले और हरड इन का रस और लोहभस्म इन में गुड डालके देवे तो त्रिदोषज शूल नाश होय ॥

वैश्वानरयोग

भावितं मातुलिंगाम्ले ताम्रं च मरिचं दिनम्। आर्द्रकस्य रसे चैव विषं तुल्यं च चूर्णयेत्॥ पिप्पली पिप्पलीमूलं युक्तं गुंजाद्वयं हितम्। हिंगू करंजबीजं च शुंठी लशुनमौषधम्॥ एरंडतैलसंपिष्टं कर्षैकं भक्षयेदनु। योगो वैश्वानरो नाम शूलं हंति त्रिदोषजम्॥

अर्थ–तांबा, मिरच, सिंगिया विष, पीपल और पीपरामूल इन का समान चूर्ण एकत्र कर बिजोरे के रस में तथा अदरख के रस में एक दिन खरल करके दो रत्ती की मात्रा रोगी को देवे. इस के ऊपर हींग, कंजा के बीज, सोंठ, लहसन इन को अंड के तेल में पीसके इस को एक तोले मात्रा देवे तो यह **वैश्वानरयोग** त्रिदोषजन्यशूल को नाश करे॥

सर्वजशूलपरशास्त्रार्थ

वमनं लंघनं स्वेदः पाचनं फलवर्तयः।
क्षारश्चूर्णानि गुटिकाः शस्यंते शूलनाशनाः॥

अर्थ–वमन, लंघन, पसीने निकालने, पाचन, फलवर्त्ती अर्थात् मलशोधन करने के वास्ते गुदा में तेल लगाके वाती डालते हैं वह, क्षारचूर्ण, गोलियें सब शूलनाशक हैं॥

वाते निरूहबस्तिश्च पित्ते क्षीरं विरेचनम्।
कटुतिक्तकषायाश्च शूले वातकफोद्भवे॥

अर्थ–वातशूल पर निरूहबस्ति, पित्तशूल पर दूध का जुल्लाब और वातकफोत्पन्न शूल पर कटु, तिक्त और कषेली औषध देवे॥

शूले स्वरसमाह

शतावर्याश्च मधुना युक्तः शूलहरो रसः॥

अर्थ–शतावरी का स्वरस सहत के साथ पीवे तो शूल को हरण करे है॥

बीजपूरादिस्वरस

बीजपुररसः पानान्मधुक्षीरयुतो जयेत्।
पार्श्वहृद्बस्तिशूलानि कोष्ठवायुं च दारुणम्॥

अर्थ–बिजोरे का रस, दूध और सहत इन सब को मिलायके पी जावे तो कूख, उर और बस्तिस्थान के शूल को तथा कोठे की वायु को नाश करे ॥

मातुलुंगस्वरस

मातुलिंगरसं सर्पिः सहिंगु लवणान्वितम् । सुखोष्णं पाययेदेतद्वि-ड्विबंधानुलोमनम् ॥ कुक्षिहृत्पार्श्वशूलेषु वेदना चोपशाम्यति ॥

अर्थ–बिजोरे का स्वरस, घी, हींग और सैंधानिमक इन को एकत्र करके कुछ गरम २ पीवे तो मल को अनुलोम करे (निकाले) और कूख, हृदय और पसवाडे इन ठिकाने की शूलव्यथा को शांति करे ॥

बृहत्यादिक्काथ

रिंगणी दुल्लरी बिल्वं बीजपुरांघ्रयोश्मभित् ।
गोक्षीरेणान्वितैरेतैः कृतः क्काथोऽतिशीतलः ॥

अर्थ–कटेरी, दुल्लरी, बेल और बिजोरा, इन की जड और पाषाणभेद लेकर इन का काढा करे उस में गौ का घी डालके शीतल करे. इस के पीने से शूल नाश होवे ॥

एलादिक्काथ

एलाहिंगुयवक्षारसैंधवप्रतिवासितः । पीत एरंडतैलेन कटि-हृद्भवमुद्धतम् ॥ जाठरं नाभिशूलं च पृष्ठकुक्षिगतं तथा ।
शिरःकर्णाक्षिशूलं च नाशयत्यतिवेगतः ॥

अर्थ–इलायची, हींग, जवाखार और सैंधानिमक इन के काढे में अंडी का तेल डालके देवे. तो कमर, हृदय, उदर, नाभि, पीठ, कूख, मस्तक, कान और नेत्र इन स्थानों के शूल को बहुत जल्दी नाश करे ॥

मातुलुंगादिक्काथ

मातुलिंगरसो वापि शिग्रुक्काथस्तथा परः ।
सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्बस्तिशूलहा ॥

अर्थ–बिजोरे का रस अथवा सहजने का काढा जवाखार और सहत इन के साथ पीवे तो कूख, उर और बस्ती इन स्थान के शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि क्काथ

अजमोदा वचा हिंगु लवणं विडपूर्वकम् । शुंठी सुवर्चला कृष्णा

दुल्लारी रिंगणी तथा ॥ बीजपूरस्य बीजानि तुंबरुं समभागतः ।
एतत्क्राथस्य पानेन यांति शूलान्यनेकधा ॥

अर्थ–अजमायन, वच, हींग, बिडनिमक, सोंठ, सोरा, पीपल, दुल्लारी, कटेरी, बिजोरे के बीज, चिरफल ये समान भाग लेवे इन का काढा करके पीवे तो अनेक शूल दूर होवें ॥

एरंडादिक्वाथ

एरंडबिल्वबृहतीद्वयमातुलिंगपाषाणभित्त्रिकटुमूलकृतः कषायः ।
सक्षारहिंगुलवणोरुबुतैलमिश्रः श्रोण्यूरुमेढ्रहृदयस्तनरुक्षु पेयः ॥

अर्थ–अंड, बेल, बडी कटेरी, छोटी कटेरी, बिजोरा इन की जड और पाषाणभेद, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब का काढा जवाखार, हींग, सेंधानिमक, अंडी का तेल इन को मिलायके पीवे तो कमर, ऊरू, लिंगभंग, हृदय, स्तन इन स्थानों में होनेवाले शूल को नाश करे ॥

त्रिफलादि क्वाथ

त्रिफलाक्काथगोमूत्रक्षौद्रक्षीररसैः पृथक् ।
एरंडतैलद्विगुणैर्हितः शूलनिवारणे ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, इन के काढे में गोमूत्र, सहत, दूध और पाषाण भेद इनमें से किसी एक पदार्थ को एक भाग और अंडी का तेल दो भाग एकत्र करके पीवे तो शूलरोग पर हित है. अर्थात् शूलरोग को दूर करे ॥

पथ्यादि क्वाथ

पथ्यासशक्रयवपुष्करमूलयुक्ता निःक्वाथ्य हिंगुजटिलातिविषासमेतम् । पीत्वा सुखोष्णमथ वातकृतं हि शूलमामोद्भवं कफकृतं च निहंति तूर्णम् ॥

अर्थ–हरड, इन्द्रजो, पुहकरमूल, हींग, जटामांसी और अतीस इन का काढा गरम सुहाता २ पीवे तो आम से अथवा कफ से उत्पन्न शूल नाश होय ॥

शूलमात्रपर यवागू

भ्रष्टा दालीकृता मुद्गाः शालिलाजाश्च सैंधवम् । धान्यं जीरं जलं स्निग्धं यवागूरिति कथ्यते ॥ पाचिता क्षुत्करी शूलनाशिनी च त्रिदोषहृत् । गुर्विणी कृशवृद्धानां बालानां च हितावहा ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्यचित्रकनागरैः । यवागूः सेविता सिद्धा दीपनी पाचनी हिता ॥

अर्थ–भुनी हुई मूंग की दाल, शाली चावलों की खील, सैंधानिमक, धनिया और जीरा ये डालके जल में यवागू तयार करे. यह क्षुधाकारक और शूल तथा त्रिदोष को नाश करे तथा गरोदर स्त्री, बालक और वृद्ध इन को हितकारी है पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इन की यवागू करे. इस को पीवे तो दीपन और पाचन करे ॥

रेचन के वास्ते बत्ती

अगारधूमविडरामठदंतिकृष्णाकंकुष्ठसैंधवगुडत्रिफलावृता च । वर्तिर्जलेन च गवां हि गुदे नियुक्ता विट्ग्रंथिजातविरुजं क्षिपति क्षणेन ॥

अर्थ–घर का धूँआ, बिडनिमक, हींग, दंती, पीपल, मुरदासिंग, सैंधानिमक, गुड और त्रिफला इन को पीसके बत्ती बनावे. इस को गोमूत्र में डबोयके गुदा में रक्खे तो मल की गांठ से जो इस प्राणी को दुःख होता है उस को क्षणभर में नाश करे ॥

अश्वीपुरीषरसयोग

तुरंगीपुरीषोदकं हिंगुयुक्तं महाशूलहारि प्रदिष्टं भिषग्भिः । तथा हिंगुविश्वाविडैर्वापितोसौ कुलित्थोद्भवोत्राकषायः प्रदिष्टः ॥

अर्थ–घोडी की लीद को निचोडके रस निकाल लेवे उस में हींग मिलायके पिवावे अथवा कुलथी के काढे में हींग, सोंठ और बिडनिमक इन का चूर्ण डाल के देवे. तो महान् शूलरोग का नाश करे ॥

विश्वजलादिक्काथ

विश्वजलं रुबुतैलं विमिश्रं हिंगुयुतं रुचकेन च युक्तम् । पीतमपि त्वरितं निहंति शूलममूलमिदं हि मया न कथितम् ॥

अर्थ–सोंठ के काढे में अंडी का तेल, हींग और संचरनिमक डालके पीवे तो समूल शूल को नाश करे यह अमूल (अर्थात् अप्रमाण) मैंने नहीं कहा ॥

कुबेरादि चूर्ण

अक्षं नागररामठाभयसमं मज्जाकुबेराक्षजा तुल्या पुष्करतैलप-

क्रमृदिता सेवेत्सदा यो नरः। नानास्थानविशालशूलशमनं ब्रह्मास्त्रमेतत्परं सत्यं श्रीजयदेवसूनुनृहरेर्वक्त्रांबुजान्निःसृतम् ॥

अर्थ--बहेडा १, सौंठ १, हींग १, हरड१ और लता करंज की गोली ३ भाग ले इन का चूर्ण करके अंडी के तेल में पचावे और घोटे फिर रोगी को देवे तो अनेक स्थान के घोर शूल को ब्रह्मास्त्र के समान नष्ट करे इस प्रकार नृहरिनामक जयदेव के पुत्र ने कहा है ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंग्वम्लत्रिपटूग्रषट्कटुशठीवृक्षाम्लदीप्यालकापाठाजाज्यजगंधमूलहपुषाद्विक्षारसाराभयम् ॥ हिक्काध्मानविबंधवर्ध्मकसनश्वासाग्निसादारुचिप्लीहार्शोखिलशूलगुल्मगलहृद्रोगाश्मपांडुप्रणुत् ॥

अर्थ–हींग, बिजोरा, तीनों निमक, वच, सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, कचूर, अमलवेत, अजमायन, कंकोल, पाढ की जड, जीरा, वनतुलसी, मूली, हौऊबेर, जवाखार, सुहागा, अनारदाना और हरड इन का चूर्ण विबंध, हिचकी, अफरा, बद, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, बवासीर, सर्वप्रकार के शूल, गोले का रोग, हृदयरोग, पथरी, पांडुरोग इन को नाश करे ॥

नाराचचूर्ण

कर्षमात्रा भवेत्कृष्णा त्रिवृतं स्यात्पलोन्मितम्। खंडात्पलं च विज्ञेयं चूर्णमेकत्र कारयेत्॥ कर्षोन्मितं लिहेदेतत्क्षौद्रेणाध्माननाशनम्। गाढविट्कोदरकफपित्तशूलानि नाशयेत् ॥

अर्थ–पीपल १ तोले, निसोथ ४ तोले, बिडनिमक ४ तोले इन सब को एकत्र कूठ चूर्ण करे फिर इस को सहत के साथ १ तोले नित्य भक्षण करे तो अफरा, मल का कठिनता से उतरना, उदररोग, कफ, पित्त और शूल इन को नाश करे ॥

क्षारयोग

क्षाराः किंशुकमूलकार्जुनधवापामार्गरंभातिला जीवंतीकनकाह्वया सरजनी कूष्मांडवल्ली तथा। वासासूरणमेवतीव्रदहनैः प्रज्वाल्य भस्मीकृतं तोयेन प्रतिशोध्य निःसृतपयःपानं विधेयं

सकृत् ॥ शूलानाहविबंधगुल्मकफजान् रोगान् जयेत्कामला-न्विद्रध्यो हृदिशूलपाण्डुग्रहणीशोफार्शसंपीनसान् । मंदाग्निं जठरस्य पीनसगुरुप्लीहातिमेहादिकान् पाषाणा ह्युदरे भवंति बहुधा भस्मीकृतास्तत्क्षणात् ॥

अर्थ–पलासपापडा, मूली, कोह, धौ की छाल, ओंगा, केले की जड, तिल, जीवंती, धतूरा, हलदी, कुह्मडे की वेल, अडूसा और सूरण (जमीकंद) इन को एकत्र करके बडी भारी अग्नि से भस्म करे उस राख को जल में घोट के उस नितरते २ जल को छान लेवे इस जल को पीवे तो अफरावायु, मलबंध, गोले का रोग, कफसंबंधी संपूर्ण रोग, कामला, विद्रधि, हृदय का शूल, पांडुरोग, संग्रहणी, सूजन, बवासीर, पीनस वा जुकाम, मंदाग्नि, उदररोग, सरेकमा, प्लीह और प्रमेह इत्यादिकों का नाश करे और पत्थरभी यदि इस प्राणी ने भक्षण करा होवे तो उस को भी यह क्षार भस्म कर देवे ॥

हिंग्वादिचूर्ण

हिंग्वक्षार्द्रकुबेराक्षा वृद्धाः शूलेंबुना सुखाः ।
गुडाभयं वा सघृतो रसोनः शूलनुत्परः ॥

अर्थ–हींग १, बहेडा २, सोंठ ३, लताकरंज ४ इस प्रकार भाग लेकर सब का चूर्ण करे गरम जल के साथ पीवे तो यह शूल को शमन करे तथा गुड, हरड और घी, लहसन ये दो योग शूल को नष्ट करते हैं ॥

तुंबरूआदि चूर्ण

तुंबरुणी त्रिलवणं यवानी पुष्कराह्वयम् । यवक्षाराभयाहिंगुविडंगानि समानि च ॥ त्रिवृत्त्रिभागा विज्ञेया सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । पिबेदुष्णेन तोयेन यवक्काथेन वा पिबेत् ॥ जयेत्सर्वाणि शूलानि गुल्माध्मानोदराणि च ॥

अर्थ-तुंबरू अथवा चिरफल, सैंधानिमक, संचलनिमक, बिडनिमक, अजमोदा, पुहकरमूल, जवाखार, छोटी हरड, भुनी हुई हींग और वायविडंग ये दश औषध समान भाग लेवे तथा निसोथ तीन भाग ले फिर सब औषध का बारीक चूर्ण कर गरम जल के साथ अथवा जों के काढे के संग पीवे तो संपूर्ण शूल और गोला, पेट का फूलना, उदररोग इन सब को दूर करे ॥

पंचसमचूर्ण

शुंठी हरीतकी कृष्णा त्रिवृत्सौवर्चलं तथा। समभागानि सर्वाणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्॥ ज्ञेयं पंचसमं चूर्णमेतच्छूलहरं परम्। आध्मानजठरार्शोघ्नमामवातहरं स्मृतम्॥

अर्थ-सोंठ, जंगी हरड, पीपल, निसोथ, संचरनिमक ये पांच औषध समान भाग लेवे. बारीक चूर्ण करे इस को पंचसमचूर्ण कहते हैं इस चूर्ण के सेवन करने से शूल, पेट का फूलना, मंदाग्नि, बवासीर, आमवात इन रोगों को दूर करे॥

विश्वादिचूर्ण

विश्वोरुबूकदशमूलयवांभसा तु द्विक्षारहिंगुलवणत्रयपौष्कराणाम्। चूर्णं पिबेद्धृदयपृष्ठकटिग्रहामपक्काशयार्तिभृशरुग्ज्वरगुल्मशूली॥

अर्थ-सोंठ, अंड की जड, दशमूल और जों इन के काढे के साथ जवाखार, सुहागा, हींग, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक और पुहकरमूल इन के चूर्ण को पीवे तो उर, पीठ, कमर, आमाशय और पक्काशय इन स्थानों की पीडा, शूल और गोला इन को नष्ट करे॥

विश्वादिचूर्ण

शुंठी सुवर्चलं हिंगुपाठामूलोष्णकं जलम्।
निपीतं नाशयत्येव सर्वशूलानि देहिनाम्॥

अर्थ-सोंठ, सज्जीखार और हींग इन के चूर्ण को गरम जल से पीवे तो क्षणमात्र में प्राणीमात्र के संपूर्ण शूल को नाश करे॥

वचादिचूर्ण

वचा सुवर्चलं हिंगु कुष्टमिंद्रयवा समाः।
चूर्णमुष्णांभसा पीतं सर्वशूलनिकृंतनम्॥

अर्थ-वच, सज्जीखार, हींग, कूठ, इन्द्रजो ये समान भाग लेवे. इन का चूर्ण कर गरम जल से पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे॥

अजमोदादिचूर्ण

अजमोदा वचा कुष्टमम्लवेतससैंधवम्। सर्जिक्षारं तथा पथ्या त्रिकटु ब्रह्मदंडिका॥ मुस्ता सुवर्चला विश्वा लवणं बिडपूर्वकम्। पीतं तक्रान्वितं चूर्णममीषां सर्वशूलहृत्॥

अर्थ-अजमायन, वच, कूठ, अमलवेत, सैंधानिमक, सज्जीखार, हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, नागरमोथा, संचरनिमक, सोंठ, निमक और बिडनिमक इन के चूर्ण को छाछ के साथ पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे ॥

वचादि चूर्ण

वचाबिडाभयाशुंठीहिंगुकुष्ठाग्निदीप्यकान् । द्वित्रिषट्चतुरावष्ट-सप्तपंचांशकाः क्रमात् ॥ चूर्णं मध्वादिभिः पीतं शूलानाहोदरा-पहम् । गुल्मार्शःश्वासकासघ्नं ग्रहणीपांडुरोगहृत् ॥

अर्थ-वच, बिडनिमक, हरड, सोंठ, हींग, कूठ, चित्रक की जड और अजमायन ये क्रमसे २-३-६-४-८-७ और ५ भाग लेवे. इन का चूर्ण कर सहत आदि के संग देवे तो शूल, अफरा, उदर, गोला, बवासीर, श्वास, खांसी, संग्रहणी और पांडुरोग इन को हितकारी है ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानी सैंधवं दारु यवक्षारं सुवर्चलम् । विश्वैरंडशिफाहिंगु-लवणं बिडपूर्वकम् ॥ एतच्चूर्णं समं श्लक्ष्णं गुडूचीक्काथपानतः । सर्वशूलानि नश्यंति महारोगान्न संशयः ॥

अर्थ-अजमायन, सैंधानिमक, देवदारु, जवाखार, सोरा, सोंठ, अंड की जड, हींग और बिडनिमक इन को समान भाग ले चूर्ण करे. इस को गिलोय के काढे से पीवे तो अत्यंत घोर शूल को नाश करे ॥

अजमोदादि चूर्ण

अजमोदाभया पाठा त्रिकटुः समचूर्णकम् ।
भुक्तमुष्णांभसाजीर्णं शूलनिर्मूलनं क्षणात् ॥

अर्थ-अजमायन, हरड, पाढ, सोंठ, मिरच और पीपल इन का समान भाग चूर्ण कर इस को गरम जल के साथ देवे तो अजीर्ण और शूल इन को क्षणमात्र में निर्मूल करे ॥

रुचकादि चूर्ण

चूर्णं समं रुचकहिंगुमहौषधानामुष्णांबुना कफसमीरणसंभवासु ।
हृत्पार्श्वपृष्ठजठरार्तिविषूचिकासु पेयं तथा यवरसेन च विड्विबंधे ॥

अर्थ-संचरनिमक, हींग और सोंठ इन को समान भाग ले चूर्ण करके गरम जल

से देवे. तो कफवात से हृदय, पसवाडा, पीठ और पेट इन के शूल को और विषूचिका इन को नाश करे. तथा मलबद्ध होनेपर जौके काढे से इस चूर्ण को देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगु ग्रंथिकधान्यकाग्निकवचा चव्याग्निपाठा सठी वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्यापुष्करवेतसाम्लहपुषाजाजाज्यगंधैः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसे स्याद्वीजपूरस्य वा ॥ आध्मानग्रहणीविकारगुदजान् गुल्मानुदावर्तकान् वाताध्मानगरोदराश्मरिरुजस्तूनीद्वयारोचकान् । ऊरुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो बाधिर्यमष्ठीलिकां प्रत्यष्ठीलिकश्वासकासमपहृत्तत्पीतमुष्णांबुना ॥ हृत्कुक्षिवंक्षणकटीजठरांतरेषु बस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च । शूलानि नाशयति वातबलासजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमाश्विनिसंहितायाम् ॥

अर्थ—हींग, पीपरामूल, धनिया, चित्रक, वच, चव्य, भिलाये, पाढ, कचूर, चूका, सैंधानिमक, बिडनिमक, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, अनार की छाल, हरड, पुहकरमूल, अमलवेत, हाऊवेर, जीरा, बनतुलसी इन के चूर्ण को अदरख के रस की अथवा बिजोरे के रस की भावना देवे और इस को गरम जल के साथ सेवन करे तो अफरा, संग्रहणी, बवासीर, गोला, उदावर्त्त, वाताध्मान, विष, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रम, अंतःकरण का भ्रम, बहरापना, अष्ठीलिका, प्रत्यष्ठीलिका, श्वास, खांसी, हृदय, कूख, वंक्षण, कमर, पेट, बस्ती, स्तन, कंधे और पसवाडे इन स्थानों के शूल वायु अथवा कफ का होय तो उस का नाश होय. इस को हिंग्वादिचूर्ण कहते हैं. यह प्राचीन है अश्विनीकुमारों ने कहा है ॥

शंखवटी

चिंचाक्षारं पंचपलं लवणानि पलं पलम् । संचूर्ण्यानि क्षिपेत्प्रस्थद्वये जंबीरवारिणि ॥ शंखं दशपलं तप्त्वा निक्षिपेत्सप्तवारतः । तत्समस्तं विशोष्याथ हिंगुव्योषं चतुष्पलम् ॥ बलीसूतविषान्भागैः पलार्धांश्च पृथक् पृथक् । एतत्समस्तं संमर्द्य

जंबीराम्ले दिनत्रयम् ॥ बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्बुधः । एकैकां भक्षयेत्प्रातः कोष्णतोयं पिबेदनु ॥ सर्वशूलं हरेद्गुल्ममजीर्णं परिणामजम् । अतीसारगदं हन्याद् ग्रहणीं च विशेषतः॥

अर्थ-इमली का खार २० तोले, निमक ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, संचरनिमक ४ तोले, बिडनिमक ४ तोले, सुहागा ४ तोले इन के चूर्ण को १२८ तोले नीबू के रस में डालके फिर ४० तोले शंख को अग्नि में तपायके उस रस में बुझाय देवे इस प्रकार सातवार करने से शंख की भस्म हो जावे वह शंख की भस्म और हींग ४ तोले, सोंठ ४ तोले, मिरच ४ तोले, पीपल ४ तोले, गंधक ४ तोले, पारा २ तोले, सिंगियाविष २ तोले इन सब को डालके सब को नीबू के रस में तीन दिन खरल करे फिर बेर की गुठली के बराबर गोली बनाय लेवे इस में से एक २ गोली प्रातःकाल भक्षण करे और ऊपर से गरम जल पीवे तो सर्वप्रकार के शूल, गोले का रोग, अजीर्णरोग, परिणामशूल, अतिसार, संग्रहणी इन को नाश करे ॥

गोमूत्रमंडूर

गोमूत्रसिद्धं मंडूरं त्रिफलाचूर्णसंयुतम् ।
विलिहन्मधुसर्पिभ्यां शूलं हंति त्रिदोषजम् ॥

अर्थ-गोमूत्र में सिद्ध करा हुआ मंडूर, हरड, बहेडा, आंवला इन के चूर्ण को मिलाय इस को सहत और घी इन के साथ सेवन करे तो त्रिदोष का शूल नाश होय ॥

सूर्यप्रभा वटी

व्योषग्रंथिवचा च हिंगु जरणद्वंद्वं विषं निंबुकद्रावैरार्द्रकजै रसैर्विमर्दितं तुल्या मरीचोपमा । कर्तव्या वटिकाथ सा दिनमुखे भुक्ता कवोष्णांबुना शूलं त्वष्टविधं निहंति सहसा सूर्यप्रभानामतः॥

अर्थ-त्रिकुटा, पीपरामूल, वच, हींग, जीरा, काला जीरा, सिंगियाविष ये सब समान भाग लेवे इस को नीबू के रस और अदरख के रस में खरल करके मिरच के बराबर गोली बनावे १ गोली प्रातःकाल गरम जल के साथ भक्षण करे तो आठ प्रकार के शूलों का नाश करे. इस को सूर्यप्रभा वटी कहते हैं ॥

शंखादि चूर्ण

दग्धशंखं करंजं च हिंगुत्र्यूषणसैंधवम् । एतच्चूर्णीकृतं सर्वं पिबेच्चोष्णेन वारिणा ॥ सर्वशूलहरं चूर्णं विख्यातो रविसागरः ॥

अर्थ–शंख की भस्म, कंजे के बीज, हींग, सोंठ, काली मिरच, पीपल और सेंधानिमक इन का समान भाग चूर्ण कर गरम जल से पीवे तो संपूर्ण शूलों का नाश करे इस को **रविसागर** कहते हैं ॥

क्षारयोग

आम्लवेतसनिर्यासः सैंधवं शुंठिरामठम् । सुवर्चलाजमोदा च देवदारुः समांशकम् ॥ स्थाल्यां प्रक्षिप्य तत्सर्वं वह्निमुद्दीपयेदधः । क्षारः स्यादिष्टिकापिष्टः स पीतस्तीव्रशूलहृत् ॥

अर्थ–अमलवेत का गूदा, सेंधानिमक, सोंठ, हींग, सोरा, अजमायन और देवदारु इन का समान भाग चूर्ण खिपडे में डालके चुल्हेपर चढाय अग्नि देवे तो इन सब की राख हो जावे इस को ईंट से बारीक पीसके देवे तो तीव्रशूल को नाश करे ॥

चित्रकादि वटक

चित्रकं लवणं पाठा व्योषं लवणपंचकम् । अजाजी धान्यकं हिंस्रा दीप्यकं ग्रंथिकं तथा ॥ एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् । जंबीरस्य रसेनैव वटकान् कारयेद्बुधः ॥ हृच्छूलं पार्श्वशूलं च आमशूलमरोचकम् । अशीतिं वातजान् रोगान् नाशयेच्चैव तत्क्षणात् ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, निमक, पाढ, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, साम्हरनिमक, खारीनिमक, कालानिमक, कचियानिमक, जीरा, धनिया, जटामांसी, अजमायन और पीपरामूल ये समान भाग लेके बारीक चूर्ण करे सब को एकत्र करके सब को नीबू के रस में खरल करे फिर गाढा होने पर गोली बनाय ले. यह हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि, अस्सी प्रकार की वातव्याधि इन को तत्काल नाश करे ॥

हरीतक्यादि वटी

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिला गंधहिंगु च । सैंधवं च समं सर्वं वटीं कुर्यात्सुखावहाम् ॥ लघुकोलप्रमाणां तां भक्षयेत्प्रातरेव हि । एकैका वटिका भुक्ता जन्मशूलनिवारिणी ॥ ग्रहण्यामतिसारे वाजीर्णे मंदे च पावके । उष्णोदकानुपानेन सुखमाप्नोति नित्यशः ॥

अर्थ-हरड, सोंठ, मिरच, पीपल, कुचला के बीज, गंधक, हींग और सेंधानिमक ये सब समान भाग लेवे. सब का चूर्ण करके जल से आधे २ तोले की गोली बनाय लेवे. प्रातःकाल १ गोली नित्य भक्षण करे तो यह एक ही गोली जन्मशूल को नाश करे. तथा संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मंदाग्नि इन पर गरम जल के संग देवे तो सुख प्राप्त होय ॥

कुबेराक्षवटी

कर्षैकं च कुबेराक्षं कर्षैकं च महौषधम्। सौवर्चलं च कर्षार्धं कर्षार्धं भृष्टहिंगुकम् ॥ शिग्रुमूलरसेनैव रसोनस्य रसेन वा। पिष्ट्वा सर्वं प्रयत्नेन स्वच्छांगारे विपाचयेत् ॥ भुक्त्वा विनाशयेच्चैव शूलमष्टविधं तथा ॥

अर्थ-लताकरंज १ तोला, सोंठ १ तोला, संचरनिमक छः मासे, भूनी हुई हींग छः मासे सब का एकत्र चूर्ण कर सहजने के जड के अथवा लहसन के रस में घोंट स्वच्छ अंगारों पर पचन करके देवे तो आठ प्रकार के शूलों का नाश करे ॥

अगस्तिवटी

दशाभ्रकं हैमवतीसमेतं स्विन्नं तुषोदे विषतिंदुबीजान् । कटुत्रिकक्षारयुगं त्रिदीप्यं कृमिघ्नहिंगुत्रिपटुत्रिबिल्वम् ॥ पृथक् प्लुतं जंभजले वटीयमगस्त्यपूर्वा बदरप्रमाणा। शूलानि गुल्मकृमिमंदवह्निप्लीहामवातान् जयति प्रसह्य ॥

अर्थ-हरड ४ तोले को तुषों के काढे में सिजावे. तथा इसी प्रकार कुचले के बीजों को सिजवावे. इन को और सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सुहागा, अजमायन, अजमोद, खुरासानी अजमायन, वायविडंग, हींग, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक ये प्रत्येक बारह २ तोले ले. सब का चूर्ण एकत्र करके नीबू के रस में उन को खरल कर बेर की बराबर गोली बनावे और रोगी को देवे तो शूल, गोला, कृमिरोग, मंदाग्नि, प्लीहा और आमवातरोग इन को नाश करे ॥

गरलादि वटी

गरलहुतभुग्विश्वाजाजीवचौषणहिंगुभिर्विधिसुमृदितैर्भृंगद्रावे गुटीमथ कृत्यच। हरति विविधं भुक्त्वा शूलं तथानिलमूढतामनलविरतिं सौख्यं भास्वद्वटी भुवि विश्रुता ॥

अर्थ-अफीम, चित्रक, सोंठ, जीरा, वच, मिरच, हींग इन का चूर्ण भांगरे के रस में खरल करके गोली बनाय लेवे. उस को भक्षण करने से शूल, मूढवात, मंदाग्नि, सुप्तिवात इन को नाश करे इसे भास्वद्वटी कहते हैं ॥

वचादिवटी

वचा विश्वाजीरोषणगरलबाल्हीकदहनत्वचा कार्या वट्यश्चणकतुलिता मार्कवरसैः । यथा भानोर्भासस्तिमिरनिकरं कामिनि तथा हरंत्येताः शूलान्यनिलमनलं ग्लानिमपि च ॥

अर्थ-वच, सोंठ, जीरा, मिरच, सिंगिया विष, हींग, चित्रक की छाल और दालचीनी इन का समान भाग चूर्ण करके भांगरे के रस में चने के बराबर गोली करके देवे तो शूल, वादी और मंदाग्नि इन को नाश करे. जैसे सूर्य की किरण अंधकार को नाश करे हैं ॥

कुबेराक्षपाक

धान्याम्ले त्रिदिनं विलाप्य विपचत्यग्नौ कुबेराक्षकं पादांशं पटु संविधाय च पचेद्भित्त्वा च संपूरयेत् । सिंधूत्थं त्रिकटूद्भवेन रजसा संसिच्य बिंदुद्रवैः शुष्कास्ते रुचिरा भवंति च तथा निघ्नंति शूलान् बहून् ॥

अर्थ-लताकरंज को तीन दिन कांजी में भिगो देवे. उन के चतुर्थांश निमक डालके अग्निपर चढायके पचन करे. फिर इन को फोडके भीतर की मिंगी निकाल लेवे और सैंधानिमक, सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डालके ऊपर से थोडी २ बूंद २ टपका कांजी का डालके पचावे. जब सब कांजी सूख जाय तब उतार ले. यह रुचिकारी तथा अनेक शूलों को नाश करे ॥

सप्तविंशतिगुग्गुलु

क्षारद्वयं त्रिकटुकं त्रिफला हरिद्रा रुद्राक्षमुस्तलवणत्रयतुंबरूणि । सग्रंथिकाग्नित्रुटिचित्रकचव्यकुष्ठमाक्षीकपुष्करविडंगविषायुतानि ॥ यावंत्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि तावत्प्रमाणमिति गुग्गुलुसंयुतानि । कृत्वा घृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या वातं च दुग्धजलकांजिकमुद्गयूषैः ॥ हृत्पार्श्वपृष्ठकटि-

वंक्षणकुक्षिकक्षाशूलानि नाशयति कुष्ठकिलासरोगान् । पांड्वा-
मयं क्षयमपस्मृतिमूर्ध्ववातमुन्मादमामपवनं श्वयथुं प्रमेहम् ॥

अर्थ–जवाखार, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, हलदी, रुद्राक्ष, नागरमोथा, सैंधानिमक, बिडानिमक, कचियानिमक, चिरफल, पीपरामूल, चित्रक, छोटी इलायची, चित्रक की छाल, चव्य, कूठ, सुवर्णमाक्षिक की भस्म, पुहकरमूल, वायविडंग, अतीस, गजपीपल ये सब समान भाग लेवे. तथा सब के बराबर गूगल लेय. सब को एकत्र कर घी में सान कूटके गोली बनावे. इस को दूध, जल, कांजी, मूंग का यूष इन में से किसी एक के साथ देवे तो वादी, हृदय, पसवाडा, पीठ, कमर, वंक्षण, कूख इन के शूल को नाश करे तथा कुष्ठ, किलासकुष्ठ, पांडुरोग, क्षय, अपस्मार, ऊर्ध्ववात, उन्माद, आमवायु, सूजन और प्रमेह इन को भी नाश करे ॥

लोहभस्मयोग

मूत्रांतः पाचितां शुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलोपशांतये ॥

अर्थ–हरडों को गोमूत्र में पचाय के सुखाय ले. फिर पीस इस में लोहभस्म मिलायके गुड के साथ देवे तो संपूर्ण शूलों का नाश होय ॥

गंधकरसायन

पलैकं त्रिफलाचूर्णं पलार्धं गंधकस्य तु । लोहभस्म तु कर्षैकं सर्वं संचूर्ण्य मिश्रयेत् ॥ कर्षार्धं मधुसर्पिभ्र्यां लेहयेत्सर्वशूल-
नुत् । वातविस्फोटकान्हंति सेवनात्तु त्रिमासतः॥ गताः केशाः पुनर्यांति गंधकस्य रसायनात् ॥

अर्थ–त्रिफले का चूर्ण ४ तोले, गंधक २ तोले, लोहभस्म १ तोला सब का चूर्ण एकत्र कर मिलाय लेय इस में से आधा तोला सहत और घी के साथ देवे तो संपूर्ण शूल,वायु, विस्फोटक इन को तीन महिनों में नाश करे तथा गये हुए बाल फिर ऊग आवें. इस को गंधकरसायन कहते हैं ॥

शूलकुठाररस

टंकणं पारदं गंधं त्रिफला व्योषतालकम् । विषं ताम्रं च जे-
पालं भृंगस्वरसमर्दितम् ॥ द्विगुंजमात्रा वटिका मरीचेनार्द्रकेण वा । सर्वशूलकुठारोयं विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥

अर्थ-सुहागा, पारा, गंधक, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, हरताल, सिंगिया-विष, ताम्रभस्म, जमालगोटा इन सब को एकत्र करके भांगरे के रस में खरल करे. फिर इस में से दो दो रत्ती की गोली बनावे इन गोलियों को मिरच अथवा अदरख के रस से देवे तो संपूर्ण शूलों को नाश करे. इस को **शूलकुठार रस** कहते हैं ॥

अग्निकुमाररस

सूतेन गंधं सह टंकणेन समं विषं योज्यमिह त्रिभागम् । कपर्दशंखावपि तत्र भागौ मरीचकैरष्टगुणैर्विमिश्रम् ॥ जंबीरनीरेण विमर्दनीयं सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः । देयो हि गुंजाद्वितयं च शूले त्रिदोषजे योजय सानुपानम् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, सुहागा ये समान भाग लेवे तथा सिंगिया विष तीन भाग ले और कौडियों की भस्म २ भाग, शंखभस्म २ भाग, काली मिरच ८ भाग सब का एकत्र चूर्ण कर नीबू के रस से खरल करे इस की दो रत्ती की गोली बनायके देवे तो शूल का नाश करे. इस को **अग्निकुमार रस** कहते हैं ॥

क्षारताम्ररस

पलमितमृतशुल्बं तन्मितं गंधचूर्णं वसुमितपरिमाणं चिंचिणिक्षारचूर्णम्। त्रयमिदमभिदिष्टं क्षारताम्राख्यमेतत् हरति सकलशूलं पीतमुष्णोदकेन ॥

अर्थ-तामे की भस्म ४ तोले, गंधक ४ तोले और इमली का खार ८ तोले इन सब को एकत्र कर उत्तम रीति से खरल करे इस को क्षारताम्र कहते हैं. यह गरम जल के साथ पीवे तो संपूर्ण शूलों को नाश करे ॥

सोमनाथीताम्र

शुल्बं तुल्येन सूतेन बलिना तत्समेन च । तदर्धांशेन तालेन शिलया च तदर्धया॥ विधाय कज्जलीं श्लक्ष्णां भिन्नकज्जलसन्निभाम् । यंत्राध्यायविनिर्दिष्टगर्भयंत्रोदरे क्षिपेत् ॥ कज्जलिं ताम्रपत्राणि पर्यायेण विनिक्षिपेत् । रुद्ध्वा शरावकेणैव तदर्धं लवणं क्षिपेत् ॥ पंचत्रियामपर्यंतं स्वांगशीतं विचूर्णयेत् ॥ तत्तद्रोगहरानुपानसहितं ताम्रं द्विवल्लोन्मितं संलीढं परिणामशूलमुदरं

शूलं च पांडुज्वरन्। गुल्मं प्लीहयकृत्क्षयाग्निसदनं मेहं च शूलामयं दुष्टां च ग्रहणीं हरेत्ध्रुवमिदं तत्सोमनाथाभिधम्॥

अर्थ–पारा, गंधक दोनों समान भाग लेवे इन दोनों से आधी हरताल और चतुर्थांश मनासिल सब को एकत्र करके कजली करे. फिर इस कजली का कंटकवेधी तामे के पत्रों पर दो तीन बार लेप कर देवे फिर उन पत्रों को शरावसंपुट में बीच में निमक बिछाय पत्रों को रख ऊपर से फिर निमक डालके दूसरे शराव से बंद कर देवे और संधियों को बंदकर गर्भयंत्र में तीन प्रहर अग्नि देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके खरल कर लेवे. इस को **सोमनाथीताम्र** कहते हैं. यह ४ रत्ती रोगी को अनुपान के साथ संपूर्ण रोगों पर देवे तो परिणामशूल, उदरशूल, पांडु, ज्वर, गोला, प्लीहा, यकृत, क्षय, मंदाग्नि, प्रमेह, शूल, संग्रहणी इन को नाश करे॥

गदमददहन

नागं वंगं सुताम्रं दरदमनशिला तुत्थताम्राभ्रगंधं भस्म स्यात्स्वर्णतुल्यं रसकमपि रविक्षारघृष्टं सुगोप्यम्। कृत्वा तत्काथयंत्रे लवणविरचिते भावयेदार्द्रकाभिर्वासानिर्गुंडिकाद्भिः सुरसमगधया सेवनीयः क्रमेण॥ पार्श्वे शूलाग्निमांद्ये त्वरुचिसमुदिते औषधं सन्निपाते हृद्रोगे गुल्ममेहे कफपवनजये सर्वरोगे ज्वरेपि। देयो भक्त्या रसेंद्रस्त्रिभुवनरचितो भोगिलोकप्रसिद्धो नागानां वल्लभोयं गदमददहनो रक्तपित्तप्रहंता॥

अर्थ–शीशा, रांगा, तामा, हिंगुल, मनसिल, लीलाथोथा, अभ्रक, गंधक, सुवर्ण इन की भस्म, खपरिया इन सब को एकत्र करके आक के दूध में खरल कर उस का गोला बनावे उस गोले को शराव में निमक भर बीच में इस गोले को रखे. ऊपर निमक डालके दूसरे सकोरे से बंद कर कपड मिट्टी कर देवे इस को गजपुट में रख के फूंक देवे. स्वांगशीतल होने पर निकाल लेवे. फिर इस को अदरख, अडूसा, निर्गुंडी इन के रस की भावना देकर तुलसी का रस और पीपल के संग सेवन करे तो पार्श्वशूल, मंदाग्नि, अरुचि, संनिपात, हृदयरोग, गुल्म, प्रमेह, कफ वादी के सर्वरोग और ज्वर इन को **गदमददहन** नाम सब को प्रिय तथा लोक में प्रसिद्ध रक्तपित्तनाशक है यह नागलोक में प्रसिद्ध है॥

शंखादि चूर्ण

शंखः पीतवराटकास्त्रिकटुकं क्षारत्रयं त्रैफलं संकोचीलवणानि

गंधकमथोजाजो यवानी पृथक् । कर्षद्वंद्वमितानि हिंगुसहिता-न्येलालवंगानले लोहं पारदभस्मकोमृतमथो ताम्रं च कर्ष पृथक् ॥ चूर्णं माषयुगं सुशीतलजलेनासेवितं शूलनुत् गु-ल्मप्लीहमजीर्णमग्निमृदुतामत्यम्लपित्तं जयेत् ॥

अर्थ–शंख, पीरी कौडी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, हरड, बहेडा, आंवला, लजालू, निमक, सुहागा, सेंधानिमक, रेहका निमक, संचल निमक, गंधक, जीरा, अजमायन और हींग प्रत्येक दो २ तोले लेवे तथा इलायची, लौंग, चित्रक, लोहभस्म, पारदभस्म, ताम्रभस्म ये प्रत्येक एक २ तोले लेवे. सब को एकत्र करे इस चूर्ण में से दो मासे शीतल जल के संग सेवन करे तो शूल, गोला, प्लीहा, अजीर्ण, मंदाग्नि और अम्लपित्त इन को नाश करे ॥

विद्याधराभ्रलोह

विडंगमुस्तत्रिफलागुडूचीदंतीत्रिवृच्चित्रकटुत्रिकैव । प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वारि च सोमलस्य ॥ गोमूत्रसिद्धस्य पुरातनस्य किट्टस्य देयानि वराटिकायाः । कृष्णाभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं निश्चंद्रिकं श्लक्ष्णमतीव सूतात् ॥ पादेन कर्षः स्वरसेन खल्वे शिलातले सप्तमुनीदलस्य । संशोष्य पश्चाद-तिशुद्धगंधपाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा सर्पिर्मधुभ्यामिव मर्द्य यत्नात् । निधापयेत्स्निग्धविशुद्ध-भांडे ततः प्रयोज्योस्य रसायनस्य ॥ प्राङ्माषकोवा द्व्यथवा त्रयो वा गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा । पिबेदमुं योग-वरं प्रभूतकालप्रनष्टानलदीपकोयम् ॥ योगो निहन्यात्परि-णामशूलं युक्तं तथान्नद्रवसंज्ञकं च । यक्ष्माम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तकुष्ठम् ॥ नश्यंति चानेन निहंति रोगान्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥

अर्थ–वायविडंग, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, दंती के निसोथ, चित्रक की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल और संखियाविष ये प्रत्येक तोले २ लेवे तथा गोमूत्र की भावना देकर सिद्ध करा हुआ पुराना मंडूर १६ तोले, कौडी की भस्म

१६ तोले, कृष्णाभ्रकभस्म ४ तोले, पारा १ तोला ये सब पदार्थ शुद्ध करे हुएके सब को एकत्र खरल कर अगस्तिया के पत्तों के रस की ७ भावना देवे जब सूख जावे तब इस में १ तोले गंधक का चूर्ण मिलावे और सहत तथा घी इन में घोटके तयार कर चिकने पात्र में भरके धर रखे इस को बलाबल विचारके १-२ अथवा तीन मासे पर्यंत गौ के दूध के साथ अथवा शीतल जल से देवे तो मंदाग्नि, परिणामशूल, अन्नशूल, क्षय, अम्लपित्त, संग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, कुष्ठ इन को नाश करे तथा अन्य अनुपानों के साथ यह योग सेवन करने से अनेक रोगों को नाश करे ॥

पीडारिरस

व्योमपारदगंधाश्मजयपालकटंकणम् । वह्निचंडशशिद्वित्रिभागान् जंभांभसा त्र्यहम्॥ पिष्ट्वा कोलमिता कृत्वा गुडकांजिकतो वटिः। वितरेदामशूलादौ कृमिशूले विशेषतः ॥ पथ्यं तक्रोदनं चात्र स्तंभार्थं शीतलक्रिया ॥

अर्थ—अभ्रकभस्म ३ तोले, पारा १ भाग, गंधक २ तोले, जमाल गोटा २ तोले, सुहागा ३ भाग इस प्रकार सब को लेकर तीन दिन पर्यंत जंबीरी नीबू के रस में खरल करे फिर आधे २ तोले की गोली बनावे इस को कांजी से आमशूल, कृमिशूल इनपर विशेष करके देवे तथा छाछ भात पथ्य में देवे तथा दस्त होने के बंद करने को शीतल क्रिया करनी चाहिये ॥

शुल्बसुंदररस

समं ताम्रदलं गृह्य रसेंद्रेण द्विगंधकम् । मृद्वस्त्रेण समावेष्ट्य पटुयंत्रैः पुटे पचेत् ॥ संचूर्ण्य हेमवातारिचित्रकव्योषजैर्द्रवैः । षोडशांशं विषं दत्त्वा चूर्णयित्वास्य वल्लकम् ॥ प्रागुक्तैरनुपानैश्च सद्योवातं च वातजम् । कफजं पक्तिशूलं च हन्याच्छ्रीशिवशासनात् ॥

अर्थ—तामे के कंटकवेधी पत्र १ तोला, पारा १ तोला, गंधक २ तोले ले प्रथम पारे गंधक की कजली करे उस को तामे के पत्रों पर लेप करे जब सूख जावे तब शराव में निमक भर के बीच में तामे के पत्र धर ऊपर से फिर निमक डालके दूसरे सराव से ढक संधि बंदकर कपडमिट्टी कर देवे और गजपुट में रखके फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकालके खरल करे इस में सब औषधों का षोडशांश सिंगिया विष डालके धतूरे का तेल, अंडी का तेल, चित्रक का तेल, सोंठ, मिरच,

पीपल इन का काढा इन की भावना देवे जब सूख जावे तब इस में से २ रत्ती अनुपान के साथ देवे तो सद्योवात, कफरोग, पक्तिशूल इन को नाश करे ऐसी शिव की आज्ञा है ॥

षण्मुखरस

सूतं गंधं समं शुद्धं सूतांशं मृतताम्रकम् । सुवर्चलं च सूतांशं जंबीरैर्दिनसप्तकम् ॥ मर्दयेदातपे तीव्रे रुद्ध्वा लघुपुटत्रयम् । दत्त्वादाय तु तच्चूर्णं सूतांशं त्रिकटुं क्षिपेत् ॥ षण्मुखोयं रसो नाम त्रिगुंजः सर्वशूलजित् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, ताम्रभस्म, सज्जीखार ये समान भाग लेवे इन को नींबू के रस की सात भावना देवे और तीव्र धूप में रखकर खरल करे जब सूख जावे तब लघुपुट देवे इस प्रकार तीन पुट देय पश्चात् जितना पारा होवे उतना ही त्रिकुटा चूर्ण मिलावे इस को षण्मुखरस कहते हैं. यह तीन रत्ती रोगी को देवे तो सर्व शूल के रोगों को नाश करे ॥

महाशूलहर रस

रसं गंधकं टंकणं श्वेतकाचं मलं भारशृंगं रविस्वं वराटम् । बिडं शंबुकं शृंगमेणस्य शंखं रविस्नुक्पयोभिर्दिनं संविमर्द्यम् ॥ शुष्कं तु पश्चाद्विषव्योषयुक्तं मरीचाज्ययुक्तं तु वल्लं ददीत । महाशूलहर्ता क्षये दुर्निवारो ग्रहण्यां तथा पांडुरोगाग्निमांद्ये ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सुहागा, सपेदकांच, कपूर, साबर का सींग, तामे की भस्म, कौडी की भस्म, बिडनिमक, छोटे शंख की भस्म, हरण के सींग की भस्म, शंखभस्म ये सब समान भाग ले एकत्र कर आक के दूध और थूहर का दूध इन से एक २ दिन खरल करके सुखाय ले फिर इस में सिंगिया विष, सोंठ, मिरच, पीपल, इन का चूर्ण मिलायके घी के साथ १ वल्ल की मात्रा रोगी को देवे तो महाशूल, क्षय, संग्रहणी, पांडुरोग और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

त्रिनेत्ररस पक्तिशूलादिकों पर

टंकणं हारिणं शृंगं स्वर्णं शुल्बं मृतं रसम् । दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पचेत् ॥ त्रिनेत्राख्यरसस्यैकं माषं मध्वाज्यकैर्लिहेत् । सैंधवं जीरकं हिंगु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ॥ पक्तिशूलहरः ख्यातो मासमात्रान्न संशयः ॥

अर्थ-सुहागा, हरिण के सींग की भस्म, सोने की भस्म, तामे की भस्म, पारे की भस्म इन पांच औषधों को अदरख के रस से एक दिन खरल करके मट्टी के शरावसंपुट में रख देवे और कपडमिट्टी करके खाडा खोद, उस में आरने उपलों का सूक्ष्म अग्नि देना, स्वांगशीत होनेपर बाहर निकाल लेवे. इस को त्रिनेत्ररस कहते हैं यह रस एक मासा प्रमाण सहत और घृत इन के साथ एकत्र करके रोगी को देवे, ऊपर सैंधा-निमक, जीरा, भूनी हुई हींग इन तीन औषधों का चूर्ण घृत और सहत के साथ खरल करके देवे. इस माफिक करने से एक महीने का पक्तिशूल नष्ट होता है. इस में कुछ संशय नहीं ॥

गजकेसरी

शुद्धसूतं द्विधा गंधं यामैकं मर्दयेत् दृढम्।द्वयोस्तुल्यं शुद्धताम्रसंपुटे तन्निरोधयेत् ॥ ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भांडे धारयेद्भिषक् । ततो गजपुटे पक्त्वा स्वांगशीतं समुद्धरेत् ॥ संपुटं चूर्णयेत्सूक्ष्मं पर्णखंडे द्विगुंजकम् । भक्षयेत्सर्वशूलार्तो हिंगुशुंठीसजीरकम् ॥ वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत् । असाध्यं नाशयेत् शूलं रसोयं गजकेसरी ॥

अर्थ-शुद्ध करा हुआ पारा एक भाग और गंधक दो भाग दोनों एकत्र कर प्रहरतक खरल करके कजली करे फिर इस कजली के बराबर शुद्ध कंटकवेधी तांबे-के पत्र लेवे. उन का संपुट बनाय उस में कजली रखकर संपुट को बंद करके एक मिट्टी के गगरे में आधा निमक भरके बीच में इस संपुट को रखे ऊपर से फिर निमक भरके उस पात्र के मुख को दूसरे छोटे से गगरे से बंद कर उस की संधियों को कपड-मिट्टी से बंद कर गड्ढा खोद आरने उपलों से भरके बीच में इस पात्र को रख देवे और गजपुट की आंच देवे. जब शीतल हो जावे तब बाहर निकाल संपुट को निकाल बारीक पीस डाले इस को गजकेसरी रस कहते हैं. यह रस दो रत्ती जिस मनुष्य को सर्व प्रकार का शूल हो उस को पान के टुकडे में से खाने को देवे और इस को खायकर उसी वखत इस के ऊपर भूनी हुई हींग १, सोंठ २, जीरा ३, वच ४, काली मिरच ५, इन पांच औषधों का चूर्ण एक तोले खाय ऊपर से गरम जल पीवे तो यह रस असाध्य शूलरोग को भी नाश करे इस में जो संपुट लिखा है वह तामे की डिबिया का नाम है अर्थात् तामे की डिबिया में पूर्वोक्त कजली भरके इस को बनावे ॥

शूलगजकेसरी

रसविषगंधकपर्दक्षाराश्च सिंधुपिप्पलीविश्वैः ।
अहिवल्यंबुविघृष्टाः शूलेभहरिर्द्विगुंजोयम् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सिंगियाविष, कौडी की भस्म, सुहागा, सैंधानिमक, पीपल, सोंठ इन को नागबेलपान के रस में खरल करे तो यह शूलगजकेसरी रस तयार हो. इस की दो रत्ती की मात्रा रोगी को देवे ॥

गजकेसरी

क्षारं कपर्द विषसैंधवं च व्योषान्वितं पर्णरसैर्विमर्द्यम् ।
गुंजैकमात्रोनिलजे विकारे पक्त्यामशूले गजकेसरी स्यात् ॥

अर्थ–कौडी का खार, सिंगिया विष, सैंधानिमक, त्रिकुटा इन को पान के रस में खरल कर १ रत्ती रोगी को देवे तो वातशूल, परिणामशूल और आमशूल इन को सिंह के समान नष्ट करे ॥

पथ्यादि रस

पथ्याटंकणविश्वहिंगुमरिचं वह्निर्बिडं गंधकं तुल्यं सैंधवसंयुतं तु कुचिलं सर्वैः समं संमतम् । शूलाध्मानविबंधगुल्मकसनश्ले-ष्मामवातापहा जीर्णाध्यास्युदरारुचिस्वरहरी शूलद्विपघ्नी वटी ॥

अर्थ–हरड, सुहागा, सोंठ, हींग, मिरच, चित्रक, बिडनिमक, गंधक और सैंधा-निमक ये समान भाग लेवे. तथा सब के समान भाग कुचला के बीज लेवे सब को एकत्र खरल करे फिर गोली बनायके रोगी को देवे तो शूल, पेट का फूलना, मल की कठोरता, गोला, खांसी, कफ, आमवात, अजीर्ण, उदर, अरुचि, स्वरभंग और शूल इन सब रोगों को नाश करने में हाथी को सिंह के समान है ॥

परिणामशूलनिदान

भुक्ते जीर्यति यच्छूलं तदेव परिणामजम् । तस्य लक्षणमप्ये-तत्समासेनाभिधीयते ॥ बलासः प्रच्युतः स्थानाच्छीतेन सह मूर्छितः। वायुमादाय कुरुते शूलं जीर्यति भोजने ॥

अर्थ–आहार पचने के समय जो शूल होय उस को परिणामशूल कहते हैं. उस का निदान संक्षेप से कहता हूं, कफ अपना स्थान छोड कर शीत से संयुक्त हो बढता है वह कफ वायु को साथ ले कर पचने के समय शूल उत्पन्न करता है ॥

शूल के स्थान

स कुक्षौ जठरे पार्श्वे नाभ्यां बस्तौ स्तनांतरे । पृष्ठमूलप्रदेशेषु सर्वेष्वेतेषु वा पुनः॥भुक्तमात्रे तथा वापि जीर्णेन्ने च प्रशाम्यति। षाष्टिकव्रीहिशालीनां भोजने च विवर्धते ॥ तत्परीणामजं शूलं दुर्विज्ञेयं महागदम् । आहाररसवाहीनां स्रोतसां दुष्टिहेतुकम् ॥

अर्थ–वह शूल कुक्षी, पार्श्व, जठर, नाभि, बस्ती, स्तनांतर, पृष्ठमूल इन में पृथक् पृथक् उत्पन्न होता है साठी चावलों को भक्षण करने से वृद्धिंगत होता है. यह परिणामशूल अन्नरस वाहिनी नाडियों को विकार उत्पन्न करता है ॥

वातिकशूल के लक्षण

आध्मानाटोपविण्मूत्रनिबंधारातिवेपनैः ।
स्निग्धोष्णोपशमप्रायं वातिकं तद्वदेद्भिषक् ॥

अर्थ–पेट का फूलना तथा पेट में गुडगुडशब्द, मलमूत्र का अवरोध, अरति (मन का न लगना), कंप यह लक्षण हों और चिकना, गरम, पदार्थ से शांति होय ऐसे शूल को वातिक कहते हैं ॥

पैत्तिकशूल के लक्षण

तृष्णादाहारतिस्वेदकट्वम्ललवणोत्तरम् ।
शूलं शीतशमप्रायं पैत्तिकं लक्षयेद्बुधः ॥

अर्थ–प्यास, दाह, चित्त का न लगना, पसीना यह लक्षण होंय तीखा, खट्टा, नोन का ऐसे पदार्थ खाने से बढनेवाला और शीतपदार्थ के सेवन से शांति होय ऐसा शूल पित्त का जानना ॥

कफजन्य शूलके लक्षण

छर्दिहृल्लाससंमोहं स्वल्परुग्दीर्घसंततिः ।
कटुतिक्तोपशांतं च तच्च ज्ञेयं कफात्मकम् ॥

अर्थ–वमन, ओकारी और संमोह, (इन्द्री और मन को मोह) ये लक्षण जिस में बहुत होंय, पीडा थोडी होय, शूल बहुत दिन रहे, कडुवे और तीखे पदार्थ से शांति होय उस शूल को कफात्मक जानना ॥

द्वंद्वजसन्निपातशूल के लक्षण

संसृष्टलक्षणं यच्च द्विदोषं परिकल्पयेत् ।
त्रिदोषजमसाध्यं तु क्षीणमांसबलानलम् ॥

अर्थ-जिस में दो दोषों के लक्षण मिले हों उस को द्वंद्वज कहते हैं और तीन दोषों के लक्षणों से त्रिदोषज जानना, मांस बल और अग्नि ये जिस के क्षीण हो गये हों ऐसा शूलरोग असाध्य जानना ॥

शूल के उपद्रव

वेदना च तृषा मूर्छा आनाहो गौरवारुची ।
कासश्वासौ च हिक्का च शूलस्योपद्रवाः स्मृताः ॥

अर्थ-शूल, श्वास, मूर्छा, पेट का फुलना, अंगों का जकड जाना, अरुचि, खांसी, श्वास, हिक्का ये शूल के उपद्रव जानना ॥

शूलके असाध्यलक्षण

एकदोषान्वितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ।
सर्वदोषोत्थितो घोरस्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥

अर्थ-एक दोष का शूलरोग साध्य है, दो दोषों का कृच्छ्रसाध्य और तीनों दोषों का भयंकर और बहुत उपद्रवयुक्त होय वह शूल असाध्य जानना ॥

परिणामशूल की सामान्यचिकित्सा

लंघनं प्रथमं कुर्याद्वमनं च विरेचनम् ।
बस्तिकर्म परं चात्र पक्तिशूलोपशांतये ॥

अर्थ-परिणामशूल के दूर करने को प्रथम लंघन करे फिर वमन और विरेचन देवे. फिर बस्तिकर्म करे तो परिणामशूल दूर हो ॥

वातादिकों पर सामान्यचिकित्सा

वातजं स्नेहयोगेन पित्तजं रेचनादिना । कफजं वमनाद्यैश्च प-
क्तिशूलमुपाचरेत् ॥ द्वंद्वजं स्नेहयोगेन तत्रियोगेन सर्वजम् ॥

अर्थ-वातज परिणाम शूलपर स्नेहन देना, पित्तज शूलपर रेचन करना व कफज शूलपर वमन कराना. व द्वंद्वज शूलपर स्नेहन व सन्निपातशूल के ऊपर वमन व विरेचन और स्नेहन ये तीनों उपचार करावे ॥

त्रिफलादि क्काथ

त्रिफलाकृतमालभवं क्कथनं सितया मधुना मिलितं हरति ।
तनुदाहयुतास्रकपित्तरुजः किल पित्तजशूलदरं प्रदरम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, अमलतास का गूदा इन के काढे में सहत और मिश्री डालके देवे तो दाह, रक्तपित्त, पित्तशूल और प्रदर इन को नाश करे ॥

वमन

आकंठं पाययेन्मद्यं क्षीरमिक्षुरसं रसम् ।
मदनारिष्टजं क्काथं सम्यक् पश्चाच्च वामयेत् ॥

अर्थ–वमन करानेवाली औषध देने के प्रथम रोगी को आकंठ पर्यंत मद्य, ईख का रस अथवा दूसरे रसरूप पदार्थ भोजन करायके फिर मैनफल, नीम की छाल इन का काढा देकर वमन करावे ॥

परिणामशूल पर कल्क

विष्णुक्रांताजटाकल्कः सिताक्षौद्रघृतैर्युतः ।
परिणामभवं शूलं नाशयेत्सप्तभिर्दिनैः ॥

अर्थ–विष्णुक्रांता (कोयल) की जड का कल्क करके उस में मिश्री, सहत और घी मिलायके पीवे तो सात दिन में परिणामशूल को नाश करे ॥

शूंठीकल्क

शूंठीतिलगुडैः कल्कं दुग्धेन सह योजयेत् ।
परिणामभवं शूलमामवातं त्र्यहाज्जयेत् ॥

अर्थ–सोंठ, तिल और गुड इन का दूध में कल्क कर पीवे तो परिणामशूल और आमवात इन को नाश करे ॥

विरेचन

त्रिवृता च तथा दंत्या तैलेनैरंडजेन वा ।
दत्तं विरेचनं सद्यः पक्तिशूलनिवारणम् ॥

अर्थ–निसोथ, जमालगोटा अथवा अंडी का तेल इन से कराया हुआ जुल्लाब तत्काल परिणामशूल का नाशक है ॥

वमन

पीत्वा तु क्षीरमाकंठं मदनक्काथसंयुतम् । कांतारकस्य पौंड्र-

स्य कोशकारस्य वा रसम् ॥ कषायं वाथ निंबस्य कटुतुंबीरसं तथा । यथाविधि वमेद्धीमान् पक्तिशूलार्दितो जनः ॥

अर्थ–दूध को मैनफल के काढे में मिलायके कंठपर्यंत पीवे अथवा ईख के रस में मैनफल का काढा मिलायके पीवे अथवा नींब का रस अथवा कडुई तुंबी का रस पीके विधिपूर्वक वमन करे तो परिणामशूल शांत होय ॥

गुडादिचूर्ण

पक्तिशूलं जयत्याशु गुडार्द्रतिलमोदकः । हिंग्वाभयं वचो वेल्लं पीतमुष्णांबुना जयेत् ॥ आनाहशूलहृद्रोगविषूचीगुल्ममारुतान्॥

अर्थ–गुड, अदरख, नील इन का लड्डु परिणाम शूल का नाशक है. हींग, हरड, वच, वायविडंग इन का चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो अफरा, शूल, हृदयरोग, विषूचिका और वायगोला इन को नाश करे ॥

सामुद्रादिचूर्ण

सामुद्रं सैंधवं क्षारौ रुचकं रोमकं बिडम् । दंती लोहरजःकिट्टं त्रिवृत्सूरणकं समम् ॥ वृद्धिगोमूत्रपयसा मंदपावकपाचितम् । तद्यथाग्निबलं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा ॥ जीर्णेजीर्णे च भुंजीत मांसादिघृतसाधितम् । नाभिशूलं च हृच्छूलं गुल्मं प्लीहकृतं जयेत् ॥ विद्रध्यष्ठीलजं हंति कफवातोद्भवं तथा । अन्नद्रवं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ॥ शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम् । परिणामसमुत्थस्य विशेषेणांतकं मतम् ॥

अर्थ–समुद्र का निमक, सैंधानिमक, जवाखार, सुहागा, संचर निमक, रोमकनिमक, बिड निमक, दंती, लोहभस्म, मंडूरभस्म, निसोथ, जमीकंद, दही, गोमूत्र और दूध ये सब एकत्र कर मंदाग्नि से परिपक्व करे तयार होने पर बलाबल विचार इस की मात्रा गरम जल के साथ सेवन करे और भोजन करे हुए के उत्तम पचने पर मांस, घी, दही इत्यादिक भक्षण करे तो नाभिशूल, हृदय शूल, गोला, प्लीहा से उत्पन्न हुआ शूल, विद्रधि, अष्ठीला, कफवात, अन्नद्रव, जरत्पित्त, अजीर्ण, संग्रहणी इन से उत्पन्न शूल इन सब शूलों को नाश करे. इस के सिवाय शूलनाशक दूसरी औषध नहीं है परिणामशूल को तो विशेष करके नाश करे है ॥

इंद्रवारुण्यादि चूर्ण

इंद्रवारुणिकामूलं कटुत्रयसमन्वितम् ।
नरोंबुना हरेत्पीतं शूलमत्यंतदुःसहम् ॥

अर्थ–इन्द्रायन की जड को जल में मिलाय और उस में सोंठ, मिरच, पीपल इन का चूर्ण डाले फिर इस को पीवे तो अत्यंत दुःसह शूल को नाश करे ॥

एरंडादिभस्म योग

एरंडवह्निशंबूकवर्षाभूगोक्षुरं समम् ।
अंतर्दग्ध्वा पिबेदद्भिरुष्णाभिः शूलशांतये ॥

अर्थ–अंड की जड, चित्रक, छोटा शंख, पुनर्नवा, गोखरू ये समान भाग लेवे इन को संपुट में जलायके भस्म कर ले इस भस्म को गरम जल के साथ पीवे तो शूल दूर होय ॥

पिप्पल्यादि योग

समागधिगुडं सर्पिः प्रस्थं क्षीरं चतुर्गुणम् ।
पक्कं पीत्वा जयत्याशु पक्तिशूलं समुद्धतम् ॥

अर्थ–पीपल, गुड इन को डालके ६४ तोले घी, २५६ तोले दूध में पक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब बलाबल विचारके देवे तो घोर उद्धत परिणामशूल तत्काल नाश होय ॥

त्रिपुरभैरवरस

भागो रसस्य भागश्च हेम्नः पिष्टं विधाय च । तथा द्वादश भागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ऊर्ध्वाधो गंधकं दत्त्वा पलमात्रं समंततः । क्षारस्य मृगशृंगस्य चूर्णं योज्यं समंततः ॥ सिंचेन्मत्स्याक्षिनीरेण रुद्ध्वा यामचतुष्टयम् । पचेच्छूलहरः सूतो भवेत्रिपुरभैरवः ॥ माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोस्य परिणामजे । अन्येष्वेरंडतैलेन कटुत्रययुतो हितः ॥

अर्थ–पारा २ भाग, सुवर्ण का चूर्ण १ भाग दोनों की कजली करके बारह भाग तांबे के कंटकवेधी पत्रों पर इस कजली का लेप कर देवे. फिर ऊपर नीचे और चारों तरफ ४ तोले गंधक का चूर्ण बिछाय देवे. फिर जवाखार हरण के सींग इन

के चूर्ण को उस के ऊपर डालके फिर ब्रह्मी का रस अथवा मछेछे का रस उस के ऊपर छिडकके उस पात्र के मुख को बंद करके चार प्रहर की प्रचंड आग्नि देवे तो यह शूलनाशक त्रिपुरभैरवरस सिद्ध होवे. यह उडद के बराबर सहत और घी के साथ देवे तो परिणामशूल को नाश करे अन्य शूलों पर अंडी का तेल और त्रिकुटा के चूर्ण के साथ देवे ॥

शूलदावानलरस

शुद्धसूतं विषं गंधं पलांशं मर्दयेत् दृढम् । मरीचं पिप्पली शुंठी हिंगु सौवर्चलद्वयम् ॥ पलाष्टकं पटूनां च चिंचाक्षारं पलाष्टकम् । सप्तवारं शङ्खभस्म जंबीराम्ले निषेचयेत् ॥ पलाष्टकं च संयोज्यं तत्सर्वं निंबुकद्रवैः । दिनं मर्द्यं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥ अजीर्णोदरमंदाग्निमसाध्यमपि साधयेत् । शूलदावानलाख्योयं रसोजीर्णादिरोगहा ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सिंगियाविष प्रत्येक चार २ तोले और मिरच, पीपल, सोंठ, हींग, संचर निमक प्रत्येक ८ तोले, निमक ३२ तोले. इमली का खार ३२ तोले और शंखभस्म ३२ तोले को गरम कर नींबू के रस में बुझावे, फिर सब औषधों को एकत्र कर नींबू के रस में एक दिन खरल करके बेर के बराबर गोली बनाय भक्षण करे यह अजीर्ण, उदररोग, मंदाग्नि इन असाध्य रोगों को भी दूर करे है. इसे शूलदावानलरस कहते हैं ॥

परिणामशूल पर मंडूर

लोहकिट्टपलान्यष्टौ गोमूत्राढकिके पचेत् ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हंति न संशयः ॥

अर्थ–लोहे की कीटी की भस्म ३२ तोले को २५६ तोले गोमूत्र में औटावे. फिर इस को बलाबल देखके देवे तो परिणामशूल को तत्काल नष्ट करे ॥

तारमंडूर

विडंगं चित्रकं चव्यं त्रिफला त्र्यूषणानि च । नवभागानि चैतानि लोहकिट्टसमानि च ॥ गोमूत्रं त्रिगुणं दत्त्वा मूत्रात् द्विगुणतो गुडः । शनैर्मृद्वाग्निना पक्त्वा सुसिद्धं पिंडितां गतम्॥ स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य भक्षयेत्कोलमात्रया । प्राङ्मध्यांतक्र-

मेणैव भोजनस्य प्रयोजितः॥ योगोयं शमयत्याशु पक्तिशूलं सुदारुणम् । कामलां पांडुरोगं च शोथं मेदोनिलार्शसी ॥ शूलार्तानां कृपाहेतोस्तारया प्रकटीकृतः॥

अर्थ–वायविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, त्रिकुटा ये सब समान भाग लेवे और इन सब की बराबर लोह की कीटी की भस्म लेवे और सब से दुगुना गोमूत्र लेवे तथा गोमूत्र से दुगुना गुड लेवे सब को एकत्र कर मंदाग्नि पर पचावे जब गोलासा बंधने लगे तब उतारके इस को किसी चिकने बासन में भरके रख देवे इस में से छः मासे भोजन करने के प्रथम अथवा भोजन करने के पश्चात् खावे तो घोर दारुण पक्तिशूल शांत करे. उसी प्रकार कामला, पांडुरोग, शोथ, मेद, बवासीर इन को नाश करे यह शूलार्त्त मनुष्यों पर कृपा करके ताराभगवती ने प्रगट करा है॥

भीममंडूर

यवक्षारकणा शुंठी कोलग्रंथिकचित्रकौ। प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ शनैः पचेदयःपात्रे यावद्दर्वीप्रलेपनम् । दत्त्वाष्टगुणगोमूत्रं किट्टात् शुद्धाद्विचक्षणः॥ ततोक्षमात्रान्वटकान् योजयेत्सप्तरात्रतः । आदिमध्यावसानेषु भोजनस्योचितस्य वै॥ स भीमवटको ह्येष परिणामरुगंतकः॥

अर्थ–जवाखार, पीपल, सोंठ, मिरच, पीपरामूल, चित्रक ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे मंडूरभस्म ६४ तोले सब को लोहपात्र में ५९२ तोले गोमूत्र डालके पचावे जब कलछी से चिमटने लगे तब उतारके एक २ तोले की गोली बनावे इस को भोजन के प्रथम अथवा मध्य में किंवा अंत में खाय इस प्रकार सात दिन सेवन करने से परिणामशूल को नाश करे इस को भीमवटक इस प्रकार कहते हैं॥

लोहगुग्गुलु

त्रिफला मुस्तकं व्योषं विडंगं पौष्करं वचा । चित्रकं मधुकं चैव पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम्॥ अयोभस्म पलान्यष्टौ गुग्गुलुस्तावदेव तु। सर्पिषा मेलयित्वाथ कर्षमात्रं वटीकृतम् ॥ अद्यादनुपिबेत्कोष्णं वारि शूलाद्विमुच्यते । जीर्णान्नसंभवात्पांडोः कामलाया हलीमकात् ॥

अर्थ–त्रिफला, नागरमोथा, त्रिकुटा, वायविडंग, पुहकरमूल, वच, चित्रक, मुलहटी इस प्रकार प्रत्येक चार २ तोले ले लोहभस्म ३२ तोले, गूगल ३२ तोले सब को घी में मिलाय एक २ तोले की गोली बनावे गरम जल के साथ भक्षण करे तो परिणामशूल, पांडुरोग, कामला, हलीमक इन रोगों से छूट जावे ॥

नारिकेलक्षार

नारिकेलं सतोयं च लवणेन सुपूरितम् । मृदा च वेष्टितं शुष्कं पक्कं गोमयवह्निना ॥ पिप्पल्या भक्षितं हंति शूलं हि परिणामजम् । वातिकं पैत्तिकं वापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥

अर्थ–जलसमेत सब नारियल ले उस के मुखपर छिद्र करके उस में निमक भर देवे फिर उस के मुख को बंद कर ऊपर से मिट्टी लगायके सुखाय ले फिर आरने उपलों की अग्नि में पकाय लेवे जब परिपक्क हो जावे तब निकालके बारीक पीस डाले और पीपल के चूर्ण के साथ यथाशक्ति इस को भक्षण करे तो परिणाम शूल, वात, पित्त, कफ, संनिपात इन से उत्पन्न हुए शूलों को नाश करे ॥

पथ्याद्य लोह

**पथ्या लोहरजः शुंठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
परिणामभवं हंति वातपित्तकफात्मकम् ॥**

अर्थ–हरड और सोंठ इन के चूर्ण में लोहभस्म मिलायके सहत के साथ सेवन करे तो त्रिदोषजन्य परिणामशूल को नाश करे ॥

लोहादिलेह

लोहस्य रजसो भागास्त्रिफलायास्तथा त्रयः । गुडस्याष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् ॥ एतत्सर्वं च विलिहेद्गुडपाकविधानतः । लिहेच्चैव यथाशक्ति क्षये शूले च पाकजे ॥

अर्थ–लोहभस्म १ भाग, त्रिफला ३ भाग, गुड ८ भाग और गोमूत्र गुड से चौगुना लेवे इन सब को एकत्र करके गुडपाक के समान पाक करे जब इस की अवलेह बन जावे तब रोगी का बलाबल विचारके देवे तो क्षय, अपक्कशूल इन को नाश करे ॥

कृष्णाद्य लोह

**कृष्णाभयालोहचूर्णं विलिहन्मधुसर्पिषा ।
परिणामभवं शूलं सद्यो हंति सुदारुणम् ॥**

अर्थ–पीपल, हरड, लोहभस्म इन का चूर्ण सहत और घी से मिलायके देवे तो तत्काल दारुण परिणामशूल को नाश करे ॥

कृष्णादि लोह

कृष्णाभयालोहचूर्णं गुडेन सह भक्षयेत् ।
पक्तिशूलं निहंत्याशु जठराण्यग्निमंदताम् ॥

अर्थ–पीपल, हरड, लोहभस्म इन को समान भाग ले गुड में मिलायके देवे तो पक्तिशूल, उदर और मंदाग्नि इन को नाश करे ॥

शंबूकादि गुटिका

शंबूकमूषणं चैव पंचैव लवणानि च । समांशैर्गुटिकां कृत्वा कलंबुकरसेन वा ॥ प्रातर्भोजनकाले वा भक्षयेत्तु यथाबलम् । शूलाद्विमुच्यते जंतुः सहसा परिणामजात् ॥

अर्थ–छोटे शंख की भस्म, काली मिरच, निमक, सुहागा, सैंधा निमक, बिड निमक, संचर निमक ये समान भाग लेके कलंबूक नाम की औषधी के रस में घोटके गोली बनाय लेवे. इस में से प्रातःकाल अथवा भोजन के समय यथाशक्ति खाय तो परिणामशूल से मुक्त होवे ॥

चतुःसमलोह

गंधं ताम्रं रसं लोहं प्रत्येकं मारितं पलम् । सर्वमेतत्समाहृत्य विपचेत् कुशलो भिषक् ॥ आज्ये पलद्वादशके दुग्धे शतपले वरे । पक्त्वा तच्च क्षिपेच्चूर्णं संपूतं घनतां व्रजेत् ॥ विडंग-त्रिफलावह्नित्रिकटूनां तथैव च । क्षिप्त्वा पलोन्मितानेतान्य-था संमिश्रतां नयेत् ॥ ततः पिष्ट्वा शुभे भांडे स्थापयेच्च विचक्षणः । आत्मनः शोभने घस्रे पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥ घृतेन मधुना मद्यं भक्षयेन्माषसंमितम् । अष्टौ माषक्रमाद्या-वन्मात्रासंस्थं भवेत्ततः ॥ अन्नपानं च दुग्धेन नारिकेलोदकेन वा । जीर्णशाल्यन्नमुद्गाश्च सिता मांसरसादयः ॥ रसोनमवि-रुद्धानि पलान्नान्यपि भक्षयेत् । हृच्छूलं पार्श्वशूलं च साम-वातं कटिग्रहम् ॥ गुल्मशूलं च सर्वं च यकृत्प्लीहान्विशेषतः ।

अग्निमांद्यं क्षयं कुष्ठं श्वासं कासं विचर्चिकाम् ॥ अश्मरीं मूत्र-कृच्छ्रं च योगेनानेन शाम्यति ॥

अर्थ-गंधक, तामे की भस्म, पारे की भस्म, लोहे की भस्म प्रत्येक पल पल अर्थात् चार २ तोले लेय इन सब को एकत्र करके ४८ तोले घी और ४०० तोले दूध में डालके औटावे फिर वायविडंग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकुटा इन प्रत्येक का चार २ तोले चूर्ण उस पाक में डालके मिलाय देवे. फिर पाक हो जावे तब उतार-के उत्तम पात्र में भरके धर देवे और शुभ लग्न मुहूर्त्त में सूर्य, गुरु की पूजा करके सहत घृत इन के साथ उडद के प्रमाण सेवन करे और नित्य एक २ उडद बढावे इस प्रकार आठ उडद पर्यंत बढावे अनुपान दूध के साथ अथवा नारियल के जल के साथ सेवन करे. तथा पुराने चावलों का भात, मूंग, सक्कर, मांसरस और दूसरे अविरुद्ध फल अन्न भक्षण करे तो हृदयशूल, पार्श्वशूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्म-शूल, यकृत्, प्लीह, मंदाग्नि, क्षय, कुष्ठ, श्वास, खांसी, विचर्चिका, पथरी, मूत्रकृच्छ्र इतने रोग इस योग से शांत होवें ॥

विडंगादि मोदक

विडंगं तंदुलं व्योषं त्रिवृद्दंतिसचित्रकम् । सर्वाण्येतानि संहृत्य सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ गुडेन मोदकान्कृत्वा भक्षयेत्प्रातरु-त्थितः । उष्णोदकानुपानेन दद्यादग्निविवर्धने ॥ जयेत्रिदोषजं शूलं परिणामसमुद्भवम् ॥

अर्थ-वायविडंग, चौलाई, त्रिकुटा, निसोथ, दंती, चित्रक इन सब का चूर्ण कर उस में गुड डालके लड्डू बनाय लेवे प्रातःकाल खाय तो त्रिदोषशूल, परिणामशूल इन को नाश करे और अग्नि को प्रदीप्त करने के वास्ते इसे गरम जल के साथ सेवन करे ॥

तिलादिवटी

तिलनागरपथ्यानां भागं शंबूकभस्मनाम् । द्विभागगुडसंयुक्तं वटीं कृत्वाक्षभागिकाम् ॥ शीतांबुना पिबेत् प्रातर्भक्षयेत् क्षीर-भोजनम् । सायाह्ने रसकं पीत्वा नरो मुच्येत दुर्जरात् ॥ परि-णामसमुत्थाच्च शूलाच्चिरभवादपि ॥

अर्थ-तिल, सोंठ, हरड, शंख की भस्म सब समान भाग ले तथा गुड दो भाग डालके एक २ तोले की गोली बनावे इस गोली को शीतल जल के साथ प्रातःकाल

में सेवन करे तथा दूधभात भोजन करे और सायंकाल में रस पीवे तो दुर्जर और बहुत दिन का परिणामशूल दूर होवे ॥

खंडामलकरस

सुपीडितं च कूष्मांडं तुलार्धं भ्रष्टमाज्यतः । प्रस्थार्धं खंडतुल्यं तु पचेदामलकीरसम् ॥ प्रस्थं सुस्विन्नकूष्मांडरसं प्रस्थं पुटे पचेत् । दर्व्या लेपगते तस्मिन् चूर्णीकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ द्वे द्वे पले कणाजाजिशुंठीनां मरिचस्य च । पलं तालीसधान्याक-चातुर्जातकमुस्तकम् ॥ कर्षप्रमाणं प्रत्येकं प्रस्थार्धं माक्षिकस्य च । पक्तिशूलं निहंत्येतद्दोषत्रयभवं च यत् ॥ छर्द्यम्लपित्तं मूर्छां च कासश्वासावरोचकम् । हृच्छूलं रक्तपित्तं च पृष्ठशूलं च नाशयेत् ॥ रसायनमिदं श्रेष्ठं खंडामलकसंज्ञकम् ॥

अर्थ–२०० तोले पेठे के बारीक टुकडे कर और धोयके खूब दाबके निचोड डाले फिर उस को घी में भून लेवे फिर आमले का रस ३२ तोले, मिश्री ३२ तोले और पेठे का रस ६४ तोले सब को एकत्र कर पचावे जब कलछी से चिपटने लगे तब इस में पीपल, जीरा, सोंठ ये आठ २ तोले, काली मिरच ४ तोले तथा तालीसपत्र, धनिया, दालचीनी, पत्रज, इलायची, नागकेशर, नागरमोथा ये प्रत्येक एक २ तोले, सहत ३२ तोले सब को मिलायके सिद्ध कर लेवे, यह खंडामलकरस रसायन त्रिदोषज पक्तिशूल, वांति, अम्लपित्त, मूर्च्छा, खांसी, श्वास, अरुचि, हृदय का शूल, रक्तपित्त इन सब को नाश करे ॥

जीर्णशूल पर गुड

उटिंटीं शीग्रुमूलं च मयूरं सैंधवं समम् ।
द्विगुडं जीर्णशूलं च यात्येतच्चूर्णभक्षणात् ॥

अर्थ–ऊटंकटेरी, सहजने की जड, सपेद ओंगा, सैंधानिमक ये समान भाग लेकर चूर्ण करे तथा चूर्ण से दुगुना गुड मिलावे इस को भक्षण करे तो अजीर्ण से उत्पन्न हुए शूल को नाश करे ॥

योगांतर

भूमितर्वटमूलं च शूलजित्कोष्णवारिणा ।
सद्योद्भवं हरेत् शूलं लवणं चारनालकम् ॥

घृतेन सैंधवं वाथ उष्णतोयैः सुवर्चलम् ॥

अर्थ–भूइतरवड की जड के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे अथवा निमक कांजी अथवा घी, सैंधव अथवा गरम जल से संचर निमक पीवे तो तत्काल शूल को नाश करे ॥

शंबूकभस्मयोग

शंबूकजं भस्म पीतं जलेनोष्णेन तत्क्षणात् ।
पक्तिजं विनिहंत्याशु शूलं विष्णुरिवासुरान् ॥

अर्थ–छोटे शंख की भस्म को गरम जल के साथ पीवे तो तत्क्षण पक्तिशूल को नाश करे ॥

नाभि पर मदनादि लेप

मदनस्य फलं तिक्तां पिष्ट्वा तिक्तं च वारिणा ।
कोष्णं कुर्यान्नाभिलेपं शूलशांतिर्भवेत्ततः ॥

अर्थ–मैनफल, कुटकी इन को जल में पीसके कुछ गरम कर नाभि पर लेप करे तो शूल को दूर करे ॥

रसादि लेप

रसं गंधं विषं म्लेच्छं मणिमंथं च टंकणम् । सौराष्ट्रं मरिचं नागं हरितालं मनःशिलाम् ॥ जेपालं कौशिकं तुत्थं नवसारं पृथक् समम् । एतत्सर्वं क्षिपेत्खल्वे आरनालेन पेषयेत् ॥ उदरे लेपनं कुर्याच्छीघ्रतः सर्वशूलजित् ॥

अर्थ–पारा, गंधक, सिंगिया विष, ताम्रभस्म, सैंधानिमक, सुहागा, फिटकरी, काली मिरच, शीशे की भस्म, हरताल, मनसिल, जमालगोटा, गूगल, लीलाथोथा, नोसदर ये प्रत्येक समान भाग ले. खरल में कांजी से घोटे. फिर इस का पेट पर लेप करे तो सर्व शूलों का नाश करे ॥

शतपुष्पादि लेप

शतपुष्पसुरद्रुदिनेशपयोगदरामठसिंधुभवं हरति ।
अपि लेपस्थितोऽस्थिगतं कटिशूलं संधिभवं त्रिदिनात्सततम् ॥

अर्थ–सोंफ, देवदारु, आक का दूध, कूठ, हींग और सैंधा निमक, इन का पेट पर लेप करे तो उदरशूल, कमर का शूल और संधिशूल इन को नाश करे ॥

कुबेराक्षयोग

एक एव कुबेराक्षो हंति शूलशतत्रयम्।
किं पुनर्लशुनोपेतः सैंधवेन च हिंगुना॥

अर्थ–एक ही लताकरंज तीन सौ शूलों का नाश करे यदि उस में लहसन, सैंधा निमक और हींग मिलायके सेवन करे तो फिर क्या ही कहना है॥

क्षारयोग

वंध्या लांगलिकामूलं शेषं च द्विगुणं तयोः। त्रयाणां भावये-च्चूर्णं त्र्यहं जंबीरजद्रवैः॥ रुध्वा गजपुटे पाच्यं तत्क्षारं मरिचै-र्घृतैः। कर्षमात्रं पिबेच्छूलात्तत्क्षणान्मुक्तिमाप्नुयात्॥

अर्थ–वंध्याककोडा, कलयारी दोनों समान भाग ले सोंफ २ भाग इन तीनों का चूर्ण कर उस को तीन दिन नीबू के रस की भावना देवे. फिर इस क्षार को निकाल-के काली मिरच और घी इन से १ तोले देवे तो तत्क्षण शूल से मुक्त होवे॥

खंडपिप्पली

कणाचूर्णं तु कुडवं षट्पलं हविषस्तथा। पलं षोडशकं खंडं शतावर्याः पलाष्टकम्॥ क्षीरप्रस्थद्वये सार्धे लेहीभूते तदुद्ध-रेत्। त्रिजातमुस्तधान्याकं शुंठी मांसी द्विजीरकम्॥ अभया-मलकं चैव चूर्णं द्वादशकार्षिकम्। तदर्धं मरिचं भागं सारं खा-दिरमेव च॥ मधुत्रिफलसंयुक्तं खादेत्सिद्धं यथाबलम्। शूला-रोचकहृल्लासच्छर्दिपित्ताम्लरोगनुत्॥ अग्निसंदीपनी हृद्या खं-डपिप्पलिका मता॥

अर्थ–पीपल का चूर्ण ६४ तोले, घी २४ तोले, मिश्री ६४ तोले, शतावर ३२ तोले, दूध १६० तोले सब को एकत्र कर मंदाग्नि पर पक्व करे जब गाढा हो जावे तब उतारके उस में दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागरमोथा, धनिया, सोंठ, जटामांसी, कालाजीरा, सपेदजीरा, हरड, आंवला ये प्रत्येक १२ तोले चूर्ण ले और कालीमिरच, खैरसार, सहत, हरड, बहेडा, आंवला इन प्रत्येक का चूर्ण छः छः तोले ले इन सब को मिलायके सिद्ध करे यह सिद्ध हुई औषध बलाबल देखके भक्षण करे तो शूल, अरुचि, हल्लास, वमन, अम्लपित्त इन को नाश करे इस औषध को खंडपिप्पली कहते हैं. यह अग्निदीपक और हृद्य है॥

मातुलुंगादि घृत

घृताच्चतुर्गुणो देयो मातुलिंगरसो दधि। शुष्कमूलककोलाम्ल-
कषायो दाडिमांभसा॥विडंगं लवणं क्षारं पंचकोलयवानिभिः।
पाठामूलककल्केन सिद्धं शूले घृतं मतम् ॥ हृत्पार्श्वशूलं
वै श्वासं कासं हिक्कां तथैव च । वर्ध्मगुल्मप्रमेहार्शान्वातव्या-
धींश्च नाशयेत् ॥

अर्थ–घी १ भाग और बिजोरे का रस ४ भाग, दही १ भाग, सूखी मूळी, बेर, बिजोरे इन का काढा एक भाग, अनार का रस १ भाग, वायविडंग, सैंधानिमक, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, चित्रक, अजमायन, पाढ, मूली इन का चूर्ण १ भाग इस प्रकार लेकर सिद्ध करा हुआ घी हृदय, कूख इन स्थान का शूल, श्वास, खांसी, हिचकी, बद, गोला, प्रमेह, बवासीर, वातव्याधि, सामान्यशूल इन को नाश करे ॥

तैल

नारायणेन तैलेन बस्तिकर्म हितं तथा ॥

अर्थ–संपूर्ण शूलों पर नारायणतैल से बस्तीकर्म करे तो शूल नष्ट होय ॥

अन्नद्रवशूलनिदान

जीर्णे जीर्यत्यजीर्णे वा यच्छूलमुपजायते ।
पथ्यापथ्यप्रयोगेण भोजनाभोजनेन वा ॥
न शमं याति नियमात्सोन्नद्रव उदाहृतः ॥

अर्थ–भक्षण करा हुवा अन्न जीर्ण होकर वा जीर्ण होने के समय जो शूल उत्पन्न होता है वह पथ्य करने से वा पथ्य न करने से अथवा भोजन करने से वा भोजन न करने से जो शूल शांत नहीं होता उस को अन्नद्रवशूल कहते हैं ॥

अन्नद्रवशूल के लक्षण

अन्नद्रवाख्ये शूले तु न तावत्स्वास्थ्यमश्नुते ।
यावत्कटुकपीताम्लमन्नं न च्छर्दयेत् द्रवम् ॥

अर्थ–अन्नद्रव से जो शूल उत्पन्न भया वह शूल जबतक कटु, पीत, अम्ल ऐसे पदार्थों का वमन नहीं हुवा तबतक रोगी के चित्त को स्वस्थता नहीं देता ॥

वमन-विरेचन

जातमात्रे जरत्पित्ते शूलमाशु विनाशयेत् ।
पित्तांतं वमनं कृत्वा कफांतं च विरेचनम् ॥

अर्थ-जीर्ण पित्त से जो शूल होता है वह तत्काल नाश करे है इसवास्ते पित्त जबतक गिरे तबतक वमन करावे और कफ निकलने पर्यंत विरेचन कराना चाहिये ॥

सामान्ययत्न

अन्नद्रवे च तत्कार्यं जरत्पित्ते यदीरितम् ।
जरत्पित्ते तु तत्पथ्यं प्रोक्तमन्नद्रवे तु यत् ॥
आमपक्काशये शुद्धे गच्छेदन्नद्रवः शमम् ॥

अर्थ-अन्नद्रवशूल पर वो उपचार करने चाहिये जो जरत्पित्त पर कहे हैं और जरत्पित्त शूल पर वो पथ्य करे जो अन्नद्रवशूल पर कही है. आमाशय और पक्काशय के शुद्ध होने से अन्नद्रव शूल शांत होय ॥

माषेंडरी

माषेडरीं सलवणां सुस्विन्नां तैलपाचिताम् ।
तादृशीं सर्पिषा खादेदन्नद्रवनिपीडितः ॥

अर्थ-उडद के बडे सैंधानिमक मिलायके नरम तैलपक्कों को घी के साथ खाय तो अन्नद्रव शूल नाशक है ॥

धात्रीलोह

धात्रीफलभवं चूर्णमयश्चूर्णसमन्वितम् ।
यष्टीचूर्णेन वा युक्तं लिह्यात्क्षौद्रेण तद्गते ॥

अर्थ-आंवले के चूर्ण के साथ अथवा मुलहटी के चूर्ण के साथ लोहभस्म सहत में मिलायके खावे तो अन्नद्रवशूल शांत होय ॥

पायस

श्यामाकतंडुलैः सिद्धं सिद्धं कोद्रवतंडुलैः ।
प्रियंगुतंडुलैः सिद्धं पायसं सहितं हितम् ॥

अर्थ-सामखिया या कोदों अथवा कांगनी इन के चावल डालके बनाइ हुई खीर अन्नद्रवशूल पर हितकारी है ॥

अन्न

गौडिकं सौरणं कंदं कूष्मांडमपि भक्षयेत् ।
कलाययवसक्तून्वा सक्तून्वा जलसंभवान् ॥

अर्थ–ईख, जमीकंद, पेठा, मटर, जों का सत्तू इन के चून अथवा खीलों का चून इतने पदार्थ सेवन करने से हितकारी होवें ॥

अन्न

कुलित्थसक्तूनथवा दध्नाद्याद्वाधिकं वचा ।
चणकानामथो सक्तून् कोद्रवस्यौदनं तथा ॥

अर्थ–कुलथी का चून अथवा वच का चूर्ण अथवा चने के चून को अथवा कोदों का भात दही के साथ खाय तो अन्नद्रवशूल को नाश करे ॥

अन्न

गोधूमं मंडलं तत्र सर्पिषा गुणसंयुतम् ।
ससितं शीतदुग्धेन मृदितं कथितं हितम् ॥

अर्थ–गेहूं का चून घी, गुड डालके पकावे अथवा दूध और खांड डालके मसलकर पचावे. फिर इस को एक मंडल ४८ दिन पर्यंत सेवन करे तो अन्नद्रवशूलों पर हितकारी होय ॥

सामान्यचिकित्सा

अन्नद्रवो दुश्चिकित्स्यो दुर्विज्ञेयो महागदः ।
तस्मात्तस्य प्रशमने परं यत्नं समाचरेत् ॥

अर्थ–अन्नद्रवशूल घोर दुर्घट और परीक्षा करना भी कठिन है. इसी कारण इस के शांति करने के वास्ते बडा भारी यत्न करना चाहिये ॥

सामान्यचिकित्सा

अन्नद्रवे जरत्पित्ते वह्निर्मंदो भवेद्यतः ।
तस्मादत्रान्नपानानि मात्राहीनानि कारयेत् ॥

अर्थ–अन्नद्रव और जरत्पित्त इन दोनों में अग्नि मंद होती है इसीवास्ते इस रोग में जहांतक रोगी से हो सके तहांतक थोडा भोजन करावे ॥

भक्षण

कलाययवगोधूमाः श्यामाकाः कोरदूषकाः । राजमाषाश्च मा-

षाश्च कुलित्थाः कंगुशालयः॥ दधि लुप्तरसं क्षीरं सर्पिर्गव्यं समाहिषम्। वास्तुकं कारवेल्लं च कर्कोटकफलानि च। बर्हिणो हरिणा मत्स्यरोहिताद्याः कपिंजलाः। एतास्मिन्नामये शस्ता मता मुनिचिकित्सकैः॥

अर्थ–मटर, जों, गेहू, सामखिया, कोदों, चौरा, उडद, कुलथी, कांगनी, साली चावल, दही, मथा हुआ दूध, गौ का घी, भैंस का घी, वथुआ, करेला, ककोडा, मोर, हिरण, रोहितादिक मछली, सपेद तीतर ये पदार्थ अन्नद्रवशूल पर उत्तम मुनिवैद्यों के मान्य हैं॥

गुडमंडूर

गुडामलकपथ्यानां चूर्णं प्रत्येकशः पलम्। त्रिपलं लोहकिट्टं स्यात्तत्सर्वं मधुसर्पिषा॥ समालोड्य समश्नीयादक्षमात्रं प्रमाणतः। आदिमध्यावसानेषु भोजनस्य निहंति तत्॥ अन्नद्रवं जरत्पित्तमम्लपित्तं सुदारुणम्। परिणामसमुत्थं च शूलं संवत्सरोत्थितम्॥

अर्थ–गुड, आंमले, हरड इन का चूर्ण प्रत्येक चार तोले, लोहकीट की भस्म १२ तोले लेकर सहत और घी में मिलायके उस में से १ तोले के अनुमान भोजन के प्रारंभ में, मध्य और अंत में सेवन करे तो अन्नद्रव, जरत्पित्त, परिणामशूल, इन से उत्पन्न हुआ शूल एक वर्ष का भी नष्ट होय॥

शतावरीमंडूर

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मंडूरस्य पलाष्टकम्। शतावरीरसस्याष्टौ दध्नस्तु पयसस्तथा॥ पलान्यादाय चत्वारि तथा गव्यस्य सर्पिषः। विपचेत्सर्वमेकत्र यावत्पिडत्वमागतम्॥ सिद्धं तु भक्षयेन्मध्ये भोजनस्याग्रतोपि वा। वातात्मकं पित्तभवं शूलं च परिणामजम्॥ निहंत्येव हि योगोयं मंडूरस्य न संशयः॥

अर्थ–मंडूरभस्म ३२ तोले, सतावर का रस, दही, दूध प्रत्येक ३२ तोले, गौ का घी १६ तोले, सब को एकत्र करके पक्क करे. जब गोला बंधने लगे तब उतारके धर लेवे इस में से यथाशक्ति भोजन के पूर्व अथवा मध्य में खाय तो वातशूल, पित्तशूल, परिणामशूल इन को यह मंडूर का योग नाश करे. इस में संशय नहीं है॥

शूलरोग में पथ्य

छर्दिः स्वेदो लंघनं पायुवर्तिर्बस्तिर्निद्रा रेचनं पाचनं च। अब्दोत्पन्नाः शालयः षष्टिमंडस्तप्तं क्षीरं जांगलानां रसाश्च ॥ पटोलसोभांजनकारवेल्लकं शालिं च पाक्यानि च वास्तुकानि। सामुद्रसौवर्चलहिंगुविश्वं बिडं शताह्वा लशुनं लवंगम् ॥ एरंडतैलं सुरभीजलं च तथांबुजंबीररसोपि कुष्ठम्। लघूनि च क्षाररजांसि चेति वर्गो हितो शूलगदार्दितेभ्यः ॥

अर्थ–वमन, स्वेदन, लंघन, गुदा में बत्ती डालना, निद्रा, जुल्लाब, पाचन, एक वर्ष के पुराने चावल, वाद्यमंड, गरम दूध, जंगली जीवों के मांस का रस, परवल, सहजना, करेले, बैंगन, पके हुए आम, दाख, कैथ, कालानिमक, चिरौंजी, शालिंच शाक, पत्ते के साग, वथुआ, समुद्रानिमक (पाँगा), संचरनिमक, हींग, सोंठ, वायविडंग, सतावर, लहसन, लौंग, अंडी का तेल, गौ का मूत्र, गरम जल, जँभीरी का रस, कूठ और हलके और खार का चूर्ण ये संपूर्ण वस्तु शूलरोगी को हितकारी कही हैं ॥

शूलरोग में अपथ्य

विरुद्धान्यन्नपानानि जागरं विषमाशनम्। रूक्षतिक्तकषायाणि शीतलानि गुरूणि च ॥ व्यायामं मैथुनं मद्यं वैदलं कटुकानि च। वेगरोधं शुचं क्रोधं वर्जयेच्छूलवान्नरः ॥

अर्थ–विरुद्ध अन्न पान, रात्रि में जागना, विषम भोजन, रूखे, कडवे, कषेले, शीतल और भारी ऐसे पदार्थ, दंड कसरत, मैथुन और मद्य ये शूलरोगवाले को वर्जित कहे हैं ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे शूलरोगकर्मविपाक-निदान-चिकित्सा पथ्याऽपथ्यसहिता समाप्ता।

आनाहोदावर्त्तकर्मविपाकः।

देवद्विजक्षेत्रतडागवल्मीककूपादिनां यो भेदनं करोति तं वायसो नाम ग्रहो गृह्णाति तल्लक्षणमाध्मान उदावर्ती ज्वरअरुचिमान्पाददाही च जायते ॥

अर्थ–देवता, ब्राह्मण इन की पृथ्वी को हरण करे तथा तलाव, बांबी, कूआ, बावडी आदि को जो बिगाड करे अर्थात् इन को तोडे उस को वायस नामक ग्रह ग्रहण करे उस के लक्षण ये हैं कि अफरा, उदावर्त्त, ज्वर, अरुचि और पैरों में दाहवान् होता है ॥

ज्योतिःशास्त्र का अभिप्राय

मध्ये पापग्रहयोश्चंद्रे मदने स्थितार्कजे जंतोः ।
श्वासक्षयविद्रधिगुल्मप्लीहादिपीडितः स नरः ॥

अर्थ–जन्मकाल में पाप ग्रहों के मध्य में चंद्रमा और सप्तम स्थान में शनि होय तो श्वास, क्षय, विद्रधि, गोला, प्लीहा इत्यादिक रोगों से पीडित होता है ॥

उदावर्त्तनिदान

वातविण्मूत्रजृंभास्रक्षवोद्गारवमींद्रियैः ।
क्षुत्तृष्णोच्छ्वासनिद्राणां धृत्योदावर्तसंभवः ॥

अर्थ-अधोवायु, विष्ठा, मूत्र, जंभाई, अश्रुपात, छींक, डकार, वमन, शुक्र, भूख, प्यास, श्वास और निद्रा इन तेरह वेगों के रोकने से उदावर्त्तरोग उत्पन्न होय है, तेरह के नियम के करने से यह प्रयोजन है कि क्रोध, लोभ, मन इत्यादि वेगों के धारण करने से रोग उत्पन्न नहीं होय. क्योंकि इन के रोकने में तो स्वस्थता प्राप्त होती है. सब उदावर्त्तों में मुख्य कारण वायु है. उदावर्त्त की निरुक्ति इस प्रकार है. (उद्धृतेन वेगविधारणेन आवृत्तस्य वायोरावर्त्तनमुदावर्त्तः ।) ॥

वातनिरोधजन्य उदावर्त

वातमूत्रपुरीषाणां संगाध्मानं क्लमो रुजः ।
जठरे वातजाश्चान्ये रोगाः स्युर्वातनिग्रहात् ॥

अर्थ–अधोवायु के रोकने से अधोवायु, मल, मूत्र ये बन्द हो जांय, पेट फूल जावे, अनायास, श्रम और पेट में वादी से पीडा होय तथा और वातकृत (तोद शूलादि पीडा) होय ॥

मल रोकने का उदावर्त्त

आटोपशूलौ परिकर्त्तिका च संगः पुरीषस्य तथोर्ध्ववातः ।
पुरीषमास्यादथ वा निरेति पुरीषवेगेऽभिहते नरस्य ॥

अर्थ–मल के वेग रोकने से पेट में गुडगुडाहट होय, शूल होय, गुदा में कतरने की सी पीडा होय, मल उतरे नहीं, डकार आवे, अथवा मल मुख के द्वारा निकले॥

मूत्र रोकने का उदावर्त्त

बस्तिमेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा ।
विनामो वंक्षणानाहः स्याल्लिंगं मूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ–मूत्र के वेग रोकने से बस्ति (मूत्राशय) और शिश्न इंद्रिय इन में पीडा होय, मूत्र कष्ट से उतरे, मस्तक में पीडा, पीडा से शरीर सीधा होय नहीं, पेट में अफरा होय ॥

जंभाई रोकने का उदावर्त्त

मन्यागलस्तंभशिरोविकारा जृंभोपरोधात्पवनात्मकाः स्युः ।
तथाक्षिनासावदनामयाश्च भवंति तीव्राः सह कर्णरोगैः ॥

अर्थ–जंभाई आती हुई के रोकने से मन्या कहिये नाड के पीछे की नस और गला इन का स्तंभ होय और वातजन्य विकार मस्तक में होय, उसी प्रकार नेत्ररोग, नासारोग, मुखरोग और कर्णरोग ये तीव्र होय हैं ॥

अश्रुपात रोकने का उदावर्त्त

आनन्दजं वाप्यथ शोकजं वा नेत्रोदकं प्राप्तममुंचतो हि ।
शिरोगुरुत्वं नयनामयाश्च भवंति तीव्राः सह पीनसेन ॥

अर्थ–आनंद से अथवा शोक से प्रगट अश्रुपातों को जो मनुष्य नहीं त्याग करे, उस के इतने रोग प्रगट होंय. मस्तक भारी रहे, नेत्ररोग और पीनस ये प्रबल हों ॥

छींक रोकने का उदावर्त्त

मन्यास्तंभशिरःशूलमर्दितार्धविभेदकौ ।
इन्द्रियाणां च दौर्बल्यं क्षवथोः स्याद्विधारणात् ॥

अर्थ–मन्या (कहिये नाड के पिछाडी की नस) का स्तंभ (कहिये जकड-जाना), शिर में शूल का चलना, आधा मुख टेढा हो जाना, अर्धांगवात और सब इंद्रिय दुर्बल हो जाना इतने रोग आती हुई छींक रोकने से होते हैं ॥

डकार रोकने का उदावर्त्त

कंठास्यपूर्णत्वमतीव तोदः कूजंश्च वायोरथवाऽप्रवृत्तिः ।
उद्गारवेगेऽभिहते भवंति जंतोर्विकाराः पवनप्रसूताः ॥

अर्थ–आती हुई डकार के वेग के रोकने से वातजन्य इतने रोग होते हैं. कंठ और

मुख भारीसा मालुम होय; अत्यन्त नोचने की सी पीडा होय, अव्यक्तभाषण, (अर्थात् जो समझ में न आवे) ॥

वमन रोकने का उदावर्त्त

कंडुकोठारुचिव्यंगशोथपांड्वामयज्वराः।
कुष्ठहृल्लासवीसर्पाश्छर्दिनिग्रहजा गदाः ॥

अर्थ–जो मनुष्य आती हुई वमन के वेग को रोके उस के अंगों में खुजली चले, देह में चकत्ता हो जाय, अरुचि, मुख पर झाँई सी पडे, सूजन, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, खाली रद्द, विसर्परोग ये होंय ॥

वीर्य रोकने का उदावर्त्त

मूत्राशये वै गुदमुष्कयोश्च शोथो रुजा मूत्रविनिग्रहश्च।
शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्च एते विकाराभिहते च शुक्रे ॥

अर्थ–मैथुन करते समय वीर्य निकलते को जो मनुष्य रोके अथवा और प्रकार से शुक्र के वेग को रोके उस के मूत्राशय में सूजन होय तथा गुदा में और अंडकोशों में पीडा होय, मूत्र बडे कष्ट से उतरे, शुक्राश्मरी (पथरी के निदान में आगे कहेंगे) होय, शुक्र का स्राव होने ऐसे अनेक प्रकार के रोग होंय ॥

भूँक रोकने का उदावर्त्त

तन्द्रांगमर्दावरुचिः श्रमश्च क्षुधाभिघातात्कृशता च दृष्टेः ॥

अर्थ–भूख के रोकने से तन्द्रा, अंगों का टूटना, अरुचि, श्रम और दृष्टि का मन्द होना ये रोग प्रगट होंय. चकार से कृशता और दुर्बलता होय ये अन्य ग्रन्थसे जानना ॥

प्यास रोकने का उदावर्त्त

कंठास्यशोषः श्रवणावरोधस्तृषाभिघाताद्धृदयव्यथा वै ॥

अर्थ–प्यास के रोकने से कंठ और मुख का सूखना, कानों से मन्द सुनना और हृदय में पीडा ये लक्षण होंय ॥

श्वासोच्छ्वास रोकने का उदावर्त्त

श्रांतस्य निःश्वासविनिग्रहेण हृद्रोगमोहावथ वापि गुल्मः ॥

अर्थ–जो मनुष्य हार गया हो और वह श्वास को रोके उस के हृदयरोग, मोह और वायगोला इतने रोग होंय ॥

निद्राविघातजन्य उदावर्त्त

जृंभांगमर्दाक्षिशिरोतिजाड्यं निद्राभिघातादथवापि तंद्रा ॥

अर्थ–आती हुई निद्रा के रोकने से जंभाई, अंगों का टूटना, नेत्र और मस्तक का अत्यंत जड होना और तन्द्रा ये विकार होंय. अब कहते हैं कि वेग रोकने से प्रगट रोगों को कहके अब रूक्षादि कारणों से कुपितवायु से उत्पन्न होनेवाले उदावर्त्त रोगों को कहते हैं ॥

रूक्षादि कुपितवातज उदावर्त्त

वायुः कोष्ठानुगै रूक्षैः कषायकटुतिक्तकैः । भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्त्तं करोति च ॥ वातमूत्रपुरीषाश्रुकफमेदवहानि च । स्रोतांस्युदावर्त्तयति पुरीषं चातिवर्त्तयेत् ॥ ततो हृद्वस्तिशूलार्तो हृल्लासारतिपीडितः।वातमूत्रपुरीषाणि कृच्छ्रेण लभते नरः ॥ श्वासकासप्रतिश्यायदाहमोहतृषाज्वरान् । वमीहिक्काशिरोरोगमनःश्रवणविभ्रमान् ॥ बहूनन्यांश्च लभते विकारान्वातकोपजान् ॥

अर्थ–रूखा, कषेला, तीखा और कडुआ ऐसे भोजन करने से कोष्ठगतवायु, मलमूत्र, अश्रुपात, कफ और मेद इन के वहनेवाली नाडीन के मार्ग को रोक दे और मल को सुखाय दे तब रोगी हृदय-मूत्रस्थान में शूल के होने से बेकल हो, सूखी रद्द, अस्वस्थपना इन से पीडित होय. मलमूत्र और वात ये कष्ट से उतरे और श्वास, खांसी, पीनस, दाह, मोह, प्यास, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मन की भ्रांति, मंद सुने तथा वातकोप से और भी बहुत से विकार होंय ॥

अधोवातजन्य उदावर्त्त की चिकित्सा

अधोवातनिरोधोत्थे ह्युदावर्ते हितं मतम् ।
स्नेहपानं तथा स्वेदो बस्तिर्यच्चानुलोमनम् ॥

अर्थ–जो प्राणी अधोवात (पाद) रोकने से उदावर्त्त करके पीडित होय उस को स्नेहपान, स्नेह, बस्ति और अनुलोमक औषध ये हितकारी हैं ॥

मलनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा

विड्विघातसमुत्थे तु विड्भेद्यन्नं तथौषधम् ।
वर्त्यभ्यंगावगाहाश्च स्वेदो बस्तिर्हितो मतः ॥

अर्थ-मल के रोकने से जो उदावर्त्त रोग होवे उस पर मल को निकालनेवाले अन्न; औषध और अभ्यंगस्नान, स्वेद, बस्ति ये हितकारी हैं ॥

मूत्रनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा

मूत्रावरोधजनिते क्षीरं वारि च ना पिबेत् ।
दुःस्पर्शास्वरसं चापि कषायं ककुभस्य च ॥

अर्थ-मूत्र रोकने से प्रगट हुए उदावर्त्त पर दूध, जल दोनों को मिलायके पीवे अथवा कटेरी का स्वरस अथवा कोहवृक्ष की छाल का काढा पीवे ॥

उर्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवणीकृतम् । सितामिक्षुरसं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ॥ सर्वं चैव प्रकुर्वीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधिम् ॥

अर्थ-खीरा के बीजों को जल में पीस सैंधा निमक डालके पीवे अथवा मिश्री, ईख का रस, दूध अथवा दाख का रस पीवे तथा मूत्रकृच्छ्र और पथरी की विधि करे तो मूत्रजन्य उदावर्त्त दूर होवे ॥

जंभाईनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा

जृंभानिरोधजे स्नेहं स्वेदं चापि प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-जंभाई के रोकने से जो उदावर्त्त होता है उस पर स्नेहपान, पसीने ये उपचार करे ॥

बाष्पावरोधज व छींक के रोकने के उदावर्त्त की चिकित्सा

अन्यानपि प्रयुंजीत समीरणहरान्विधीन् । नेत्रनीरावरोधेत्थे मुंचेदुच्चैर्दृशो जलम् ॥ स्वप्यात्सुखेन तस्याग्रे कथयेच्च शुभाः कथाः । शिक्काविघातजे तीक्ष्णघ्राणनस्यार्कदर्शनैः ॥ प्रवर्तयेत्क्षुतं सक्तां स्नेहस्वेदौ च शीलयेत् ॥

अर्थ-आए हुए अश्रुपातों के रोकने से जो उदावर्त्त होवे उस पर अन्य दूसरे वातहरणकर्त्ता उपचार करे तथा इस अश्रुपात रोकने से प्रगट उदावर्त्त पर नेत्रों से बहुतसा पानी निकालना चाहिये, फिर स्वस्थता पूर्वक सुलावे, उत्तम वार्ता सुनावे. छींक के उदावर्त्त पर तीक्ष्ण पदार्थों के वास से अथवा नस्य, सूर्य के सामने देखना ऐसे उपाय करने से रुकी हुई छींक साफ होवे तथा पसीने निकालके स्नेह पान करे॥

जँभाईजनित उदावर्त्त की चिकित्सा

स्नेहस्वेदैरुदावर्तं जृंभजं समुपाचरेत् ।
अंसमोक्षजजे कार्याः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः ॥

अर्थ–जंभाई के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्तवाले को स्नेहन तथा स्वेदन ये उपचार करे और अंसमोक्षज उदावर्त्त पर निद्रा लेना, मद्य पीना और कर्णप्रिय वार्त्ताओं का सुनना ये उपचार करे ॥

छींकजन्य उदावर्त्त की चिकित्सा

क्षवजे क्षवपत्रेण घ्राणस्थे नानयेत्क्षवम् ।
तथोर्ध्वजत्रुकेभ्यंगः स्वेदो धूमः समाहृतः ॥

अर्थ–छींक के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर ईख इत्यादिक के पत्ते को नाक में डालके छींक लावे तथा गरदन पर मालिस, पसीने निकालना, धूमपान इत्यादिक उपचार करे ॥

उद्गारछर्दिनिरोधज उदावर्त्त की चिकित्सा

उद्गारस्यावरोधे तु स्नैहिकं धूममाचरेत् । छर्दिनिग्रहसंजाते वमनं लंघनं हितम् ॥ विरेचनं चात्र मतं तैलेनाभ्यंजनं हितम् ।
बस्तिशुद्धिकरैः स्निग्धं चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ–डकार के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर स्निग्ध पदार्थ अग्नि में डालके उस का धूंआ पीवे. आई हुई रद्द के वेग को रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर वमन करावे तथा लंघन, विरेचन, तैल की मालिस और बस्तिशुद्धकर्ता औषधों का काढा चतुर्थांश दूध में डालके पिलावे ॥

उद्गार (डकार) जन्य उदावर्त्त पर

हितं वातघ्नमाज्यं च घृतं चोत्तरभक्तिकम् ।
उद्गारजे क्रमोपेतं स्नैहिकं धूममाचरेत् ॥

अर्थ–डकार रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर वातनाशक घृत देवे तथा देह के ऊपर के भाग पर उस घृत को लगावे और स्नेहयुक्त धूमपान करे ॥

छर्दिजन्य उदावर्त्त पर

छर्द्याघातं यथादोषं नस्यस्नेहादिभिर्जयेत् ।
भुक्त्वा प्रच्छर्दनं धूमो लंघनं रक्तमोक्षणम् ॥

अर्थ–वमन रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त को नस्य और स्नेहन इत्यादिक कर्मों से जीते और भोजन करके रद्द करके निकाल देवे तथा धूमपान, लंघन और रुधिर का निकालना ये उपाय करे ॥

क्षुधातृषोत्थ उदावर्त्त पर

क्षुद्विघातसमुद्भूते स्निग्धमुष्णं तथा लघु । रुच्यमल्पहितं भक्ष्यं पुष्पं सेव्यं सुगंधि यत् ॥ तृषाविघातसंभूते शीतः सर्वो विधिर्हितः । कर्पूरशिशिरं स्वल्पं पिबेत्तोयं शनैः शनैः ॥

अर्थ–भूख के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर स्निग्ध, गरम, हलके, रुचिकारी, थोडे, हितकारी ऐसे पदार्थ भक्षण करे. सुगंधित फूलों को सूंघे और तृषा (प्यास) रोकने के उदावर्त्त पर संपूर्ण शीतल उपचार करे तथा कपूर मिलायके शीतल करे जल को धीरे २ पीवे ॥

श्रमनिद्रोत्थउदावर्त्त पर

श्रमश्वासकृते शस्तो विश्रामः सरसौदनः । निद्रावेगविघातोत्थे पिबेत्क्षीरं सितायुतम्॥संवाहनं सुशय्यात्र हितस्वप्नः प्रियाः कथाः ॥

अर्थ–श्रमजन्य उदावर्त्त पर विश्राम लेवे (सस्ताना), मांसरस के साथ भात भोजन करे. निद्रा के रोकने से उत्पन्न उदावर्त्त पर मिश्री मिलाय दूध पीवे और उत्तम शय्या, पैरों को दाबना, प्यारी कहानियों को सुनना, इस प्रकार से निद्रा लानी चाहिये ॥

सामान्य चिकित्सा

रूक्षान्नपानं व्यायामो विरेकश्चात्र शस्यते ।
बस्तिशुद्धिकरं वापि चतुर्गुणजलं पयः ॥

अर्थ–उदावर्त्त व्याधिवाले को रूक्ष अन्न और पान, विरेचन, बस्तिशुद्धकारी औषध देवे और दूध में चौगुना जल मिलायके पिलावे ॥

विधारादि लेप

उदावर्तविनाशाय त्व्युदावर्ते प्रलेपनम् ।
विधारा मृत्तिका चैव करंजा सारिवा तथा ॥
गोमूत्रेण प्रलेपोयमुदावर्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ–विधायरा, गोपीचंदन, कंजा, सारिवा इन को गोमूत्र में पीस उदावर्त्त पर लेप करे तो उस को नाश करे ॥

रसोनादि प्राश

रसोनमद्यं संमिश्र्य पिबेत्प्रातः प्रकांक्षितम् ।
गुल्मोदावर्तशूलघ्नं दीपनं बलवर्धनम् ॥

अर्थ–लहसन और मद्य इन दोनों को मिलाय प्रातःकाल पीवे तो गोला, उदावर्त्त और शूल इन को नाश करे ॥

कदलीफलयोग

दुःस्पर्शस्वरसैर्वापि कषाये कुंकुमस्य च ।
और्वारुबीजं तोयेन पिबेद्वा लवलीफलम् ॥

अर्थ–धमासे का स्वरस केशर के काढे में अथवा खीरे के बीजों में पीस उस को जल में छान लेवे उस में केला मिलायके पीवे तो उदावर्त्त रोग दूर होय ॥

पंचमूलक्षीर

पंचमूलीकृतं क्षीरं द्राक्षारसमथापि वा ।
सर्वथैव प्रयुंजीत मूत्रकृच्छ्राश्मरीविधौ ॥

अर्थ–पंचमूल का काढा अथवा दाख का काढा मूत्रकृच्छ्र और पथरी इन पर देवे ॥

सुवर्चलादि पेय

सुवर्चलाढ्यां मदिरां मूत्रेण च गवां पिबेत् ।
एलां वाप्यथ मद्येन क्षीरेण च पिबेन्नरः ॥

अर्थ–सोरे का चूर्ण डालके मद्य पीवे अथवा गोमूत्र देवे अथवा इलायची मद्य के साथ अथवा दूध के साथ पीवे ॥

धात्रीस्वरस

धात्रीफलानां स्वरसं जलं वापि पिबेत्र्यहम् ।
रसमश्वपुरीषस्य गर्दभस्याथवा पिबेत् ॥

अर्थ–आवलों का स्वरस अथवा काढा तीन दिन पीवे अथवा घोडे की या गधे-की लीद का रस पीवे तो उदावर्त्त दूर होय ॥

वस्त्यादि यूष

वत्स्यायूषेण पिप्पल्या मूलकानां रसेन च ।
भुक्त्वा स्निग्धमुदावर्ताद्वातगुल्माद्विमुच्यते ॥

अर्थ-पीपल का यूष अथवा पीपल के रस में घी डालके पीवे तो उदावर्त्त और वातगुल्म (वायगोला) दूर होवे ॥

शामादि क्काथ

शामा दंती द्रवंती स्नुक् महाशामामृता त्रिवृत् । सप्तला शंखिनी श्वेता राजवृक्षः सबिल्वकः ॥ कंपिल्लकं करंजश्च हेमक्षीरीत्ययं गणः । सर्पिस्तैलं रजःक्काथः कल्कश्चान्यतमं तथा ॥ उदावर्तो-दरानाहविषगुल्मविनाशनम् ॥

अर्थ-हलदी, दंती, द्रवंती (रुदंती), थूहर, काला विधायरा, गिलोय, निसोथ, सातला (थूहर का भेद), संखाहूली, कटेरी, अमलतास का गूदा, बेलगिरी, कबीला, कंजा, गूलर इन सब का काढा अथवा कल्क, घी, तेल अथवा चूर्ण इन में से किसी एक का उपयोग करने से उदावर्त्त, उदर, अफरा, विष और गोला इन को नाश करे ॥

नाराचचूर्ण

खंडं पलं त्रिवृत्ताक्षः कृष्णाकर्षद्वयं चूर्णम् । प्राग्भोजनस्य मधुना बिडालपदकं नरो लिह्यात् ॥ एतद्गाढपुरीषे ज्ञेयं विज्ञैरुदावर्ते । मधुरं नरपतियोग्यं चूर्णं नाराचकं नाम ॥

अर्थ-मिश्री ४ तोले, निसोथ १ तोला, पीपल २ तोले इन का चूर्ण भोजन के प्रथम सहत के साथ १ तोला चाटे तो जिस का मल भीतर कठोर हो गया हो उस को यह दूर करे तथा उदावर्त्त को नाश करे यह मिष्ट है इसी कारण इस को राजा बाबू आदि सुकुमार मनुष्यों को देना चाहिये. इस को **नाराचचूर्ण** कहते हैं ॥

दंत्यादिक वर्ती

विपाच्य मूत्राम्लरसेन दंती पिंडीतकृष्णाबिडकुष्ठधूमैः ।
वर्तिं करांगुष्ठनिभां घृताक्तां गुदे रुजानाहहरीं विदध्यात् ॥

अर्थ-दंती की जड, मैनफल, पीपल, बिड निमक, कूठ, धूंआ इन के चूर्ण को गोमूत्र, नींबू का रस इन में औटायके कपडे में लगाय उस की हाथ के अंगूठे के समान मोटी बत्ती बनावे उस को घी में भिगोय लेवे फिर इस को गुदा में रखे तो पीडा और अफरा इन को नाश करे ॥

हिंग्वादिचूर्ण

हिंगूग्रगंधाबिडशुंठ्यजाजी हरीतकी पुष्करमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदरानाहविषूचिकासु ॥

अर्थ–हींग १, वच २, बिड निमक ३, सोंठ ४, जीरा५, हरड६, पुहकरमूल ७, कूठ ८ इस प्रकार भाग लेकर इन का बारीक चूर्ण करके भक्षण करे तो गोला, उदर, अफरा, विषूचिका इन को नाश करे ॥

भद्रदार्वादि चूर्ण

भद्रदारु घनं मूर्वा हरिद्रा मधुकं तथा ।
कोलप्रमाणं तु पिबेदंतरिक्षेण वारिणा ॥

अर्थ–तेलिया देवदारु, नागरमोथा, मूर्वा, हलदी और मुलहटी इन का चूर्ण तोले भर वर्षा के जल के साथ पीवे तो उदावर्त्त दूर हो ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकी यवक्षारपीलुनी त्रिवृता तथा ।
घृते चूर्णमिदं पेयमुदावर्त्तं विनाशयेत् ॥

अर्थ–छोटी हरड, जवाखार, अखरोट, निसोथ इन का चूर्ण घी के साथ खाय तो उदावर्त्त नाश होय ॥

गुडाष्टक

सव्योषं पिप्पलीमूलं त्रिवृद्दंती च चित्रकम् । तच्चूर्णं गुंजसंयुक्तं भक्षयेत्प्रातरुत्थितः ॥ एतद्गुडाष्टकं नाम्ना बलवर्णाग्निवर्धनम् । उदावर्तप्लीहगुल्मशोथपांड्वामयापहम् ॥

अर्थ–त्रिकुटा, पीपरामूल, निसोथ, दंती, चित्रक इन का चूर्ण कर गुड मिलाय ले फिर इस को प्रातःकाल भक्षण करे इस को गुडाष्टक कहते हैं यह बल, वर्ण, अग्नि इन को बढावे तथा उदावर्त्त, प्लीहा, गोला, सूजन, पांडु इन सब रोगों को दूर करे ॥

शुष्कमूलादि घृत

मूलकं शुष्कमार्द्रं च वर्षाभूः पंचमूलकम् ।
कृतमालफलं चाशु पक्त्वा चैतद्घृतं पचेत् ॥
तत्पीतं शमयेत्क्षिप्रमुदावर्तमशेषतः ॥

अर्थ–सुखी हुई मूली, अदरख, पुनर्नवा, लघु पंचमूल, अमलतास इन के काढे में घी डालके सिद्ध करे. इस के पीने से संपूर्ण उदावर्त्तों का नाश होय ॥

त्रिकट्टकाद्या वर्ति

वर्तिस्त्रिकटुकसैंधवसर्षपग्रहधूमकुष्ठमदनफलैः । मधुनि गुडे वा पक्वैर्निहिता सांगुष्ठपरिमाणा॥ वर्तिरियं दृष्टफलाशनैः प्रणिहिता गुदे घृताभ्यक्ता । आनाहोदावर्तौ शमयति जठरं तथा गुल्मम् ॥

अर्थ–त्रिकुटा, सैंधानिमक, सरसों, घर का धूंआ, कूठ, मैनफल इन के चूर्ण को सहत अथवा घी में भिगोयके बत्ती बनाय ले इस को गुदा में रखे तो अफरा, उदावर्त्त, उदर, गोला इन को दूर करे. यह प्रयोग अनुभव करा (अजमाया हुआ) है ॥

मदनफलादिक फलवर्ति

मदनं पिप्पली कुष्ठं वचा गौराश्च सर्षपाः ।
गुडक्षीरसमायुक्ता फलवर्तिरिहोदिता ॥

अर्थ–मैनफल, पीपल, कूठ, वच, सफेद सरसों और गुड इन को दूध से पीसके कपडे पर लेप देवे फिर इस की बत्ती बनायके गुदा में रखे तो उदावर्त्त नाशक होवे ॥

हिंग्वादि वर्ति

हिंगुमाक्षिकसिंधूत्थैः पक्त्वा वर्तिं सुवर्तिताम् ।
घृताभ्यक्तां गुदे दद्यादुदावर्तविनाशिनीम् ॥

अर्थ–हींग, सहत, सैंधानिमक इन को एकत्र खरल कर कपडे में लगायके उस की बत्ती बनाय लेवे. फिर इस को आंचपर सेक लेवे. फिर घी में भिगोकर गुदा में डाले तो उदावर्त्त को नाश करे ॥

उदावर्त पर पथ्य

उदावर्ते हितं सर्वं पाचनं लघुभोजनम् ॥

अर्थ–उदावर्त्तरोग पर लघु पाचक ऐसे पदार्थ भोजन करना हितकारी है ॥

उदावर्त पर अपथ्य

विष्टंभीनि विरुद्धानि कषायाणि गुरूणि वा ।
उदावर्ते प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥

अर्थ–विष्टंभकारी, भारी, विरुद्ध पदार्थ, कषेले इतने अन्न उदावर्त्त रोग पर मनुष्य को यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये ॥

आनाहरोगनिदान

आमं शकृद्वा निचितं क्रमेण भूयो विबद्धं विगुणानिलेन ।
प्रवर्त्तमानं न यथास्वमेनं विकारमानाहमुदाहरंति ॥

अर्थ-आम अथवा पुरीष क्रम से संचित हो विगुण वायु से वारंवार विबद्ध होकर अपने मार्ग से अच्छी रीति से प्रवृत्त होय नहीं इस विकार को आनाह कहते हैं॥

आमजन्य आनाह

तस्मिन् भवत्यामसमुद्भवे तु तृष्णाप्रतिश्यायशिरोविदाहाः ।
आमाशये शूलमथो गुरुत्वं हृत्स्तंभ उद्गारविघातनं च ॥
स्तंभः कटीपृष्ठपुरीषमूत्रे शूलेऽथ मूर्च्छा शकृतश्च छर्दिः ॥

अर्थ-आम से प्रगट आनाहरोग में प्यास, पीनस, मस्तक में दाह, आमाशय में शूल, देह में भारीपना, हृदय का जकड जाना, शूल, मूर्च्छा, डकार, कमर, पीठ, मल, मूत्र इन का रुकना, शूल, मूर्च्छा और विष्ठा मिली हुई रद्द-॥

पक्काशयज आनाह

श्वासाश्च पक्काशयजे भवंति तथाऽलसोक्तानि च लक्षणानि ॥

अर्थ-श्वास, यह लक्षण होय ॥ पक्काशय में आनाहरोग होने से आलसरोगोक्त लक्षण (आध्मानवातरोधादिक) होते हैं ॥

उदावर्त्त के असाध्य लक्षण

तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरुपद्रुतम् ।
शकृद्वमंतं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत् ॥

अर्थ-प्यास से पीडित, क्लेशयुक्त, क्षीण, शूल से पीडित और मल की रद्द करनेवाला ऐसे उदावर्त्त रोगी को वैद्य त्याग दे ॥

सामान्यविधि

आस्थापनं मारुतजे स्निग्धस्विन्ने विशेषतः ।
पुरीषजे तु कर्तव्यो विधिरानाहकोदितः ॥

अर्थ-आमजनित आनाहरोगवाले रोगी को प्रथम स्नेहन और स्वेद निकालके निरूहबस्ती देवे तथा मलजनित आनाहरोगी को आनाहरोग पर जो विधि कही जावेगी वह करे ॥

आनाहे तु यथायोग्ये सेवयेन्मतिमान् नरः ॥

अर्थ–आनाहरोग में यथायोग्य अन्न, पान, औषधि आदि विचार कर देवे ॥

चिकित्सापरिभाषा

तुल्यकारणकार्यत्वादुदावर्तहरीं क्रियाम् ।
आनाहेपि च कुर्वीत विशेषश्चाभिधीयते ॥

अर्थ–उदावर्त्त और आनाह इन में कारण और कार्य ये दोनों समान हैं इस कारण आनाहरोग पर उदावर्त्त की जो क्रिया लिखी है वह सब करनी चाहिये ॥

आनाह

अन्नाभ्यंगावगाहश्च मदिराश्चरणायुधः ।
शालिपेया निरूहाश्च हितं मैथुनमेव च ॥

अर्थ–उदावर्त्त रोगी को अभ्यंग, जल में स्नान, मद्यपान, मुरगे का मांस, भात का मांड, निरूहबस्ती और मैथुन ये हितकारी हैं ॥

क्षुधाद्योतिहितं स्निग्धं बस्तपलयं च भोजनम् ।
तृष्णाघाते पिबेन्मंथं यवागूं वापि शीतलाम् ॥

अर्थ–क्षुधा करनेवाले, हितकारी, चिकने तथा बकरे के मांसयुक्त भोजन देवे तथा तृषा बढने से मंथ अथवा शीतल यवागू देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

द्विरुत्तरा हिंगु वचा सकुष्ठसुवर्चिका चेति विडंगचूर्णम् ।
सुखांबुनानाहविषूचिकार्तिहृद्रोगगुल्मार्धसमीरणघ्नम् ॥

अर्थ–हींग १, वच २, कूठ ५, सज्जीखार ७, वायविडंग ९ भाग इस प्रकार सब औषध लेकर इन के चूर्ण को सुखोष्ण जल से देवे तो आनाह, विषूचिका, हृदय-रोग, गोला और अर्द्धांगवायु इन को नाश करे ॥

फलचूर्ण

फलं च मूलं च विरेचनोक्तं हिंग्वर्कमूलं दशमूलमग्र्यम् । स्नुक् चित्रकश्चेति पुनर्नवा च तुल्यानि सर्वैर्लवणानि पंच ॥ स्नेहैः समुद्रैः सह जर्जराणि सशंखसंधौ विपचेत्सुलिप्ते । पक्कं सुपिष्टं लवणं तदन्नैः पानैस्तथानाहरुजामयघ्नम् ॥

अर्थ–दस्त करानेवाले फल और मूल, हींग, आक की जड, दशमूल, त्रिफला, थूहर, चित्रक, पुनर्नवा ये सब समानभाग लेवे तथा पांचों निमक, सब औषधों की

बराबर घी और समुद्र निमक और खीलों का चूर्ण करके उस को शंख में भर उस की संधियों को लेप करके बंद कर देवे फिर पुट में धरके फूंक देवे. जब शीतल होय तब निकाल खरल कर लेवे इस को अन्न में मिलायके अथवा जल में मिलायके देवे तो आनाह रोग को शांत करे ॥

तुंबुरुचूर्ण

तुंबुरुश्चाभया हिंगु पौष्करं लवणत्रयम्। यवानी च यवक्षारं विडंगेन समानि च ॥ त्रिवृत्त्रिगुणितं चूर्णं पिबेदुष्णेन वारिणा। आनाहमुदराण्यष्टौ विट्बंधं चापि नाशयेत् ॥

अर्थ–धनिया, हरड, हींग, पुहकर मूल, सैंधानिमक, बिडनिमक, कचियानिमक, अजमायन, जवाखार, वायविडंग ये सामानभाग ले निसोथ तीन भाग इन सब का चूर्ण गरम जल से पीवे तो अफरा, आठ प्रकार के उदर और विट्बंध इन को नाश करे॥

वचादि चूर्ण

वचाभयाचित्रकया च शूकान् सपिप्पलीकातिविषान्सकुष्ठान्। उष्णांबुनानाहविमूढवातान्पीत्वा जलं वा स हि तोदनाशी ॥

अर्थ–वच, हरड, चित्रक, जवाखार, पीपल, अतीस, कूठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ देवे और जलयुक्त उत्तम भोजन करे तो यह अफरा, मूढवात इन को नाश करे ॥

त्रिवृतादि गुटिका

त्रिवृत्कृष्णाहरीतक्यो द्विचतुःपंचभागिकाः। गुडे तु तुल्या वटिका हरत्यानाहमुल्बणम् ॥

अर्थ–निसोथ, पीपल और हरड ये क्रम से दो, चार और पांच भाग ले चूर्ण कर लेवे. इस चूर्ण की बराबर गुड डालके गोली बनाय ले. इस के खाने से दारुण आनाहरोग दूर होय ॥

स्नुह्यादि वटी

त्रिवृद्धरीतकी श्यामा स्नुहिक्षीरेण भावयेत्। वटिका मूत्रपीतास्ताः श्रेष्ठास्त्वानाहनाशनाः ॥

अर्थ–निसोथ, हरड, पीपल इन के चूर्ण में थूहर के दूध की भावना देवे फिर इस की गोली करके गोमूत्र के साथ खाय तो यह अफरा नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

दारुषट्कादि लेप

दारुषट्कादिलेपश्च सोष्णः कांजिकपेषितः ।
आनाहस्य प्रशमनः पूर्ववैद्यैः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ–नीचे लिखा हुआ देवदारु षट्क औषधों को कांजी में पीस गरम २ लेप करे तो आनाह रोग को शमन करे. इस प्रकार पहले वैद्यों ने कहा है ॥

दारुषट्कादि योग

देवदारु वचा कुष्ठं शताह्वा हिंगु सैंधवम् ।
प्रपिष्ट्वा कांजिके लेपादानाहं नाशयत्यपि ॥

अर्थ–देवदारु, वच, कूठ, सतावर, हींग, सैंधानिमक इन का चूर्ण कांजी में पीसके लेप करने से आनाहरोग नाश होय ॥

स्थिरादि घृत

स्थिरादिवर्गस्य पुनर्नवायाः शंपाकभूतीककरंजयोश्च ।
सिद्धः कषायो द्विपलासिकानां प्रस्थो घृतं स्यात् परिवृद्धवाते ॥

अर्थ–सालपर्ण्यादि वर्ग, पुनर्नवा, अमलतास का गूदा, चिरायता, कंजा इन का काढा ८ तोले ले उस में केले का रस ६४ तोले और घी ६४ तोले डालके सिद्ध करे इस घृत को कुपित वात पर वैद्य देवे ॥

उदावर्त्त पर पथ्य

स्नेहस्वेदविरेकाश्च बस्तयः फलवर्त्तयः । अभ्यंगश्च यवाः सर्वसृष्टविण्मूत्रमारुतम् ॥ ग्राम्योदकानूपरसा रुबुतैलं च वारुणी । बालमूलकशम्याकत्रिवृत्तिलसुधादलम् ॥ शृंगवेरं मातुलुंगं यवक्षारो हरीतकी । लवंगं रामठं द्राक्षा गोमूत्रं लवणानि च ॥ अधोवातसमुत्थे तु स्नेहस्वेदाश्च वर्त्तयः । बस्तयोऽन्नानि पानानि समीरणहराणि च ॥ पुरीषजे तथा बस्तिः स्वेदोऽभ्यंगोऽवगाहनम् । फलवर्तिश्च पानानि विड्भेदीन्यशनानि च ॥ मूत्रवेगसमुत्पन्ने त्रिविधं बस्तिकर्म च । स्वेदोऽभ्यंगोवगाहश्च सर्पिषश्चावपीडनम् ॥ उद्गारोत्थे तु हिक्काघ्नं कासजे कासजिद्विधिः । क्षवजे स्वेदनं धूमो घृतं चोत्तरबस्तिकम् ॥ क्षव-

प्रवर्त्तनं नस्यमभ्यंगश्चोर्ध्वजत्रुकः । शीतान्नपानं तृष्णोत्थे जृम्भोत्थे वातजित्क्रिया ॥ निद्रावेगोत्थिते क्षीरं स्वप्नं संवाहनानि च । बुभुक्षोत्थे स्निग्धमल्पमुष्णं च लघुभोजनम् ॥ बाष्पजे बाष्पसंमोक्षः स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः । आमश्वाससमुत्पन्ने विश्रामो वातहारि च ॥ शुक्रोत्थे बस्तिरभ्यंगोऽवगाहश्चरणायुधः । शालयो मदिरा क्षीरं प्रिया यौवनगर्विताः ॥ छर्द्युत्थे लंघनं धूमो भुक्तप्रच्छर्दनं श्रमः । रूक्षाणि चान्नपानानि विरेको रक्तमोक्षणम् ॥ इति पथ्यमुदावर्ते नृणामुक्तं महर्षिभिः ॥

अर्थ–स्नेहन, स्वेदन, विरेक, वर्त्ती, फलवर्त्ती, मालिस, जो, सर्व मलमूत्रादि और अधोवायु का त्यागना, ग्रामसंचारी जीव, जलसंचारी जीव और जलसमीप के जीवों का मांसरस, अंडी का तेल, वारुणी (सराव), नवीन मूल, अमलतास, निसोथ, तिल, चूना, नागरवेल के पान, अदरख, बिजोरा, जवाखार, हरड, लौंग, हींग, दाख, गोमूत्र और निमक. अधोवात के उदावर्त्त में स्नेहन, स्वेदन, बत्ती, बास्तिकर्म और बातहरणकर्त्ता अन्न जल देवे. मलजन्य उदावर्त्त में बास्तिकर्म, स्वेदन, मालिस और स्नान, फलवर्त्ती, दस्त लानेवाले अन्न पान देवे. मूत्रजन्य उदावर्त्त में तीनों प्रकार की बास्तिकर्म, स्वेदन कर्म, मालिस, स्नान, घृतपान पीडन. डकार के उदावर्त्त में हिचकी के नाशक कर्म करे. और खांसी रोकने के उदावर्त्त में खांसी के नाशक कर्म करे. छींक रोकने के उदावर्त्त में धूमपान, घृतपान, उत्तरबस्ती, छींक लानेवाले कर्म करना, मालिस और हसली के ऊपर शोधन करना. प्यास रोकने के उदावर्त्त में शीतल अन्न और जल देवे. जंभाई रोकने के उदावर्त्त में वादीनाशक कर्म करे. निद्रा वेग के उदावर्त्त में दूध पीवे, सोवे और संवाहन बाष्पजन्य उदावर्त्त में बाष्पनाशक क्रिया करे सोवे, मद्यपान और उत्तम २ वार्त्ता कहे. श्रम की श्वास रोकने के उदावर्त्त में विश्राम (तहदली लेना) और वातनाशक कर्म करे. शुक्र के वेग रोकने के उदावर्त्त में स्नान, मुरगे का मांस, शालीचावल, मद्यपान, दूध और यौवनगर्वित स्त्री का आलिंगन करे. वमन के उदावर्त्त में लंघन, धूमपान, भात, वमन, परिश्रम तथा रूखे अन्न और पान, दस्तों का कराना और रुधिर का निकालना यह महर्षियों ने उदावर्त्त रोग में पथ्य कहा है ॥

उदावर्त्त पर अपथ्य

वमनं वेगरोधं च शमीधान्यानि कोद्रवान् । नीलीशाकं च

शालूकं जांबवं कर्कटीफलम् ॥ पिण्याकमालुकं सर्वं करीरं पिष्टवैकृतम् । विष्टंभीनि विरुद्धानि कषायाणि गुरूणि च ॥ उदावर्त्ती प्रयत्नेन वर्जयेत्सततं नरः ॥

अर्थ-वमन करना, मलमूत्रादि के उपस्थित वेगों को रोकना, सेम के धान (मूंग मोठ आदि) वा (छोकरे की फली), कोदों, नाडी का साग, भसीडा, जामन, ककडी, खल, सब प्रकार के करीलफल, पिष्टपदार्थ (चून, मेंदा, पिट्ठी), विष्टंभी, विरुद्ध और भारी पदार्थ इन सब को उदावर्त्त रोगी त्याग देवे उदावर्त्तरोगवाले को यावत् मात्र पदार्थ कहे हैं वे और पाचक तथा लंघन करना ये आनाह (अफरा) रोग में वैद्य योजना करे तथा जो उदावर्त्तरोगी को अपथ्य कह आए हैं उन सब को आनाहरोगवाला यत्नपूर्वक त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे आनाहोदावर्तरोगस्य निदान-चिकित्सा पथ्याऽपथ्यसहिता समाप्ता ।

अथ गुल्मरोगकर्मविपाकः ।

गुरुं प्रत्यर्थितां यातो गुल्मवान् जायते नरः ।
आचरेत्तन्निवृत्त्यर्थं मासमेकं पयोव्रतम् ॥

अर्थ-जो अपने गुरु के पास भीख मांगे वह गुल्मरोगी होय इस के दूर करने-को एक महिने पयोव्रत करे तो गुल्मरोग दूर होय ॥

गुल्मरोगनिदान

दुष्टा वातादयोऽत्यर्थं मिथ्याहारविहारतः ।
कुर्वन्ति पञ्चधा गुल्मं कोष्ठांतर्ग्रंथिरूपिणम् ॥

अर्थ-मिथ्या आहार और मिथ्या विहार करने से अत्यन्त दुष्ट भये वातादि दोष कोष्ठ (पेट) में ग्रंथिरूप (गांठ) पांच प्रकार का गुल्मरोग उत्पन्न करे हैं ॥

गुल्मरोग के स्थान

तेषां पञ्चविधं स्थानं पार्श्वहृन्नाभिबस्तयः ॥

अर्थ-उस गुल्मरोग के पांच स्थान हैं दोनों पसवाडे, हृदय, नाभि और बस्ति ॥

गुल्म का रूप

हृन्नाभ्योरन्तरे ग्रन्थिः संचारी यदि वाऽचलः ।
वृत्तश्चयोपचयवान्स गुल्म इति कीर्तितः ॥

अर्थ-हृदय और नाभि तथा बस्ति (मूत्रस्थान) इन में चलायमान अथवा निश्चल गोल कभी घटे कभी बढे ऐसी ग्रन्थि (गांठ) होय उस को गुल्म गोला का रोग कहते हैं. इस श्लोक में नाभि शब्दसे बस्तिका ग्रहण करा है ॥

संप्राप्ति

स व्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपि चोच्छ्रितैः ।
पुरुषाणां तथा स्त्रीणां ज्ञेयो रक्तेन चापरः ॥

अर्थ-कुपित भये दोषों से पृथक् २ और सब दोष मिलकर एक ये चार प्रकार के गुल्म पुरुषों के होते हैं और स्त्रियों के रक्त (रज) के दोष से एक प्रकार का गुल्म होय है, परंतु प्रथम जो लिख आये हैं कि गुल्मरोग पांच प्रकार का है सो इस का निश्चय नहीं है, क्योंकि रक्तगुल्म स्त्रियों के होय है पुरुषों के नहीं होय, धातुरूप रक्तजगुल्म जो है सो स्त्री पुरुष दोनों के होय है, यह क्षीरपाणी का मत है. पांच प्रकार का गुल्म है इस पर बहुत शास्त्रार्थ और मतमतांतर हैं, जिन को देखने की इच्छा हो सो मधुकोश और आतंकदर्पण टीका में देख लेवें ॥

पूर्वरूप

उद्गारबाहुल्यपुरीषबंधस्तृप्त्यक्षमत्वांत्रविकूजनानि ।
आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिरासन्नगुल्मस्य वदन्ति चिह्नम् ॥

अर्थ-डकार बहुत आवें, मल का अवरोध होय, अरुचि अन्न में होय, सामर्थ्य का नाश होना, आंत बोले, पेट में पीडा होय और अफरा होय, तथा पेट का जकड जाना, मंदाग्नि होना यह लक्षण होय तो जानना कि गुल्म (गोला) रोग शीघ्र प्रगट होना चाहता है ॥

गुल्म के साधारण रूप

अरुचिः कृच्छ्रविण्मूत्रं वातेनांत्रविकूजनम् ।
आनाहश्चोर्ध्ववातत्वं सर्वगुल्मेषु लक्षयेत् ॥

अर्थ-अरुचि, मलमूत्र कष्ट से उतरे, वादी से आंत बोले, पेट फूल आवे, ऊर्ध्ववात होय, यह लक्षण सब गुल्मों में होय है. सब गुल्मरोग में वात कारण है सो चरक और सुश्रुत में भी लिखा है ॥

वातगुल्म के लक्षण

रूक्षान्नपानं विषमातिमात्रं विचेष्टनं वेदविनिग्रहश्च । शोका-भिघातोऽतिमलक्षयश्च निरन्नता चानिलगुल्महेतुः ॥ यः स्था-नसंस्थानरुजो विकल्पं विड्वातसङ्गं गलवक्त्रशोषम् । श्यावारु-णत्वं शिशिरज्वरं च हृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरोरुजं च ॥ करोति जीर्णेऽप्यधिकं च कोपं भुक्ते मृदुत्वं समुपैति पश्चात् । वातात्स गुल्मो नच तत्र रूक्षं कषायतिक्तं कटुनोपसेवयेत् ॥

अर्थ–रूखा, विषम और अतिमात्र ऐसे अन्नपान सेवन करने से, बलवान् पुरुष से लढना, मलमूत्र आदि वेगों के धारण करने से, शोक और अभिघात (लकडी आदि की चोट) विरेचन आदि से मल का क्षय करना, उपवास ये सब वातगुल्म के कारण हैं. जो गुल्म कभी नाभी, कभी बस्ती, कभी पसवाडे में चला जाय तथा कभी लंबा कभी मोटा गोल अथवा छोटा होय, तथा उस में पीडा कभी थोडी, कभी बहुत होय, तोदभेद (सुई चुभाने की सी पीडा) होय अथवा अनेक प्रकार की पीडा होय, मल की और अधोवायु की अच्छी रीति से प्रवृत्ति होय नहीं, गला और मुख सूखे, शरीर का वर्ण नीला अथवा लाल होय, शीतज्वर, हृदय, कूख, पसवाडे, कंधा और मस्तक इन में पीडा होय और गोला जीर्ण होने पर अधिक कोप करे और भोजन करने के पिछाडी नरम हो जाय, वह गोला वादी से प्रगट होय है. उस से रूखा, कषेला, कडुआ, तीखा पदार्थ खाने से सुख नहीं होय॥

वातगुल्म पर साधारणक्रिया

प्रागेव वातजे गुल्मे सुस्निग्धं स्वेदितं नरम् । रेचितं स्नेहरेकैश्च निरूहैः सानुवासकैः ॥ उपाचरेद्भिषक् प्राज्ञो मात्रां काले विशेषतः ॥

अर्थ–वातगुल्मरोगी को प्रथम घृतपानादि कों से स्निग्ध करके पसीने निकाले, स्निग्ध रेचन, निरूहवस्ति और अनुवासनबस्ति देकर फिर औषध करे ॥

सामान्य चिकित्सा

स्नेहस्वेदविरेकैस्तु गुल्मः शैथिल्यमाप्नुयात् ।
तस्मादनेन विधिना गुल्मरोगमुपाचरेत् ॥

अर्थ–स्नेह, पसीने, रेचन इत्यादि क्रिया से गुल्म शिथिल होता है इसी से प्रथम उन क्रियाओं को करके फिर औषध करे ॥

सामान्य उपचार

वातगुल्मप्रतीकारे प्रकुप्यति यदा कफः । शस्तमुल्लेखनं तत्र चूर्णाद्याश्च कफापहाः ॥ यदि कुप्यति वा पित्तं विरेकस्तत्र भेषजम् । दोषघ्नैरप्यशांते च गुल्मे शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ-वातगुल्म पर उपचार करने से यदि कफ कुपित होवे तो लेखन और कफनाशक चूर्णादिक औषध देवे और पित्त कुपित होय तो उस को रेचक औषध देवे यदि ऐसा करने पर दोषशांति नहीं होय तो उस का रुधिर निकाले ॥

मातुलुंगादि योग

मातुलिंगरसो हिंगु दाडिमं बिडसैंधवम् ।
सुरामंडेन पातव्यं वातगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ-बिजोरे का रस, हींग, अनारदाना, बिडनोन और सैंधा निमक इन को एकत्र कर सुरामंड के साथ सेवन करने से वातगुल्म को नाश करे ॥

शून्यादि योग

नागरार्धपलं पिष्टं द्विपले लुंगकस्य च ।
तिलस्यैकं गुडपलं क्षीरेणोष्णेन पाययेत् ॥
वातगुल्ममुदावर्तं योनिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ-सोंठ का चूर्ण २ तोले, बिजोरे का चूर्ण ८ तोले, तिलों का चूर्ण ४ तोले और गुड ४ तोले इन सब को एकत्र करके चूर्ण करे. इस को गरम जल के साथ पीवे तो वातगुल्म, उदावर्त्त और योनिशूल इन को नाश करे ॥

केतकीक्षारयोग

स्वर्जिकाकुष्ठसहितः क्षारः केतकिसंभवः ।
पीतस्तैलेन शमयेद्वातगुल्मं सुदारुणम् ॥

अर्थ-सज्जीक्षार, कूठ और केतकी का क्षार ये समान भाग लेवे. सब का एकत्र चूर्ण कर तिल के तेल से सेवन करे तो कठिन भी वातगुल्म को शमन करे ॥

वारुणीमंडयोग

पिबेदेरंडतैलं वा वारुणीमंडमिश्रितम् ।
तदेव तैलं पयसा वातगुल्मी पिबेन्नरः ॥

अर्थ-वातगुल्मरोगवाला अंडी के तेल को सुरामंड से अथवा दूध से पीवे तो वातगुल्म को नाश करे ॥

वातगुल्म पर हबुषादि घृत

हपुषाजाजिपृथ्वीकापिप्पलीमूलचित्रकैः । क्षीरमूलककोलानां रसैश्च विपचेद्धृतम् ॥ वातगुल्मारुचिश्वासशूलानाहज्वरार्शसाम् । ग्रहणीयोनिदोषाणां घृतमेतन्निवारणम् ॥

अर्थ-हौऊबेर, जीरा, काला जीरा, पीपरामूल और चित्रक इन के काढे और विदारीकंद और बेर इन का रस इन में घी मिलायके पचावे वह घी वातगुल्म, अरुचि, श्वास, शूल, पेट का फूलना, ज्वर, बवासीर, संग्रहणी और योनिदोष इन पर देवे ॥

चित्रकादि घृत

चित्रकं व्योषसिंधूत्थपृथ्वीकाचव्यदाडिमैः । दीप्यकग्रंथिकाजाजीहपुषाधान्यकैः समैः ॥ दध्यारनालबदरमूलकस्वरसैर्घृतम् । पक्त्वा पिबेद्वातगुल्मदौर्बल्याटोपशूलनुत् ॥

अर्थ-चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधा निमक, विदारीकंद, चव्य, अनारदाना, अजमायन, पीपरामूल, जीरा, हौऊबेर और धनिया ये समान भाग ले काढा कर लेवे और इस काढे में घी, दही, कांजी, बेर और मूली इन का रस ये सब पदार्थ मिलायके पचावे. इस घृत के सेवन करने से वायगोला, दुर्बलता, पेट में गुडगुडाहट, शब्द होना इन को नाश करे ॥

हिंग्वादि घृत

हिंगु सौवर्चलं त्र्यूषं सिंधुजं दाडिमाक्षकैः । पुष्कराजाजिधान्याकैरम्लवेतसचित्रकैः॥ अश्वगंधा वचा चैव निर्गुंडी सकचूरकैः । प्रतिचूर्णैः कर्षमितैः प्रस्थं चैव घृतं ददेत् ॥ पाच्यं घृतावशेषं च पलार्धमनु शीलयेत् । वातगुल्मं च शूलं च आनाहं च विनाशयेत् ॥

अर्थ-हींग, संचरनिमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधा निमक, अनारदाना, पुहकरमूल, जीरा, धनिया, अमलवेत, चित्रक, असगंध, वच, निर्गुंडी और कचूर ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे. इन के काढे में ६४ तोले घी डालके घृत शेष रहे इस प्रकार औटावे फिर इस को उतारके वह घी दो तोले लेके अनुपान के साथ देवे तो वायगोला, शूल और अफरा इन को नाश करे ॥

त्र्यूषणादि घृत

त्र्यूषणं त्रिफलाधान्यविडंगचव्यचित्रकैः ।
कल्कैरेतैर्घृतं सिद्धं सक्षीरं वातगुल्मनुत् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, धनिया, वायविडंग, चव्य और चित्रक इन के कल्क में घृत, दूध मिलायके सिद्ध करे यह घृत वायगोले को नाश करे ॥

तैल

राजवृक्षस्य तैलं च निष्कं पीतं तु गुल्मजित् ॥

अर्थ–अमलतासवृक्ष का तेल आधा तोला पीवे तो संपूर्ण गुल्मों को नाश करे ॥

कुष्ठादि तैल

श्वेतकुष्ठं तथा हिंगु प्रतिनिष्कद्वयं द्वयम् । क्षारं तत्रिफलाचूर्णं दशभागं सुचूर्णितम् ॥ कल्कं गोक्षीरतः पिष्ट्वा पूर्वं तैलं स्नुहिस्नुतम् । पचेत्तैलावशेषं तु पिबेन्निष्कद्वयं द्वयम् ॥ विरेकांते तु तक्रेण शाल्यन्नं भोजयेल्लघु । चतुर्दिनांते दातव्यमिदं तैलं न नित्यशः ॥ गुल्मं जलोदरं प्लीहां शूलं च श्वयथुप्रणुत् ॥

अर्थ–सपेद कुष्ठ १, हींग १, जवाखार १ और त्रिफला का चूर्ण १० भाग इन को गोमूत्र में कल्क करके उस में तेल और थूहर का दूध मिलायके तेल शेष रहने पर्यंत पचावे जब तैयार हो जाय तब उतार लेय इस में से १ तोले देवे जब दस्त हो जावे तब छाछभात का हलका भोजन देवे. इस प्रकार चार २ दिन में दस्त करावे नित्य न करावे. यह कुष्ठादि तेल गोला, जलोदर, प्लीहा, शूल और सूजन इन को दूर करे ॥

विडंगादि कल्क

विडंगं दाडिमं हिंगु सैंधवैलासुवर्चलम् ।
मातुलिंगरसे पीत्वा कर्षैकं सुरया सह ॥
वातगुल्मं हरेत्पीत्वा प्राणनाथो रसोपि वा ॥

अर्थ–वायविडंग, अनारदाना, हींग, सैंधानिमक, इलायची और संचरनिमक इन सब को बिजोरे के रस में बारीक पीस यह कल्क एक तोले को दारु मिलायके पीवे तो वादी का गोला नाश करे अथवा प्राणनाथरस देय ॥

गुग्गुलयोग

गुग्गुलं वा गवां मूत्रैः पिबेद्गुल्मार्तिशूलनुत् ॥

अर्थ-गूगल को गोमूत्र में मिलायके देवे तो गोला और शूल इन को नाश करे ॥

कुलत्थादि क्काथ

कुलित्थं जांगली शाली क्षीरं वा तक्रमुस्तकम् ।
तर्कारी च हितं पथ्या धान्यांबु क्कथितं पिबेत् ॥

अर्थ-कुलथी, कपूरकचरी, भात, दूध, छाछ, दही का पानी, अरनी, हरड, धनिया और नेत्रवाला इन का काढा करके देवे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगुसैंधववृक्षाम्लराजिकानागरैः समैः ।
चूर्णं गुल्मप्रशमनं स्यादेतद्धिंगुपंचकम् ॥

अर्थ-हींग, सैंधा निमक, तंतडीक, राई, सोंठ इन सब का समभाग चूर्ण करे यह हींगपंचक सेवन करने से वायुगोले को शांत करे ॥

वातगुल्म पर विरेचन

वातारितैलेन पयोयुतेन पथ्यासमेतेन विरेचनं हि ।
संस्वेदनं स्निग्धमतिप्रशस्तं प्रभंजनक्रोधकृते तु गुल्मे ॥

अर्थ-अंडी के तेल में दूध और छोटी हरड का चूर्ण डालके देवे और देह में तैलादिक स्निग्ध पदार्थ की मालिस करके पसीने निकाले यह क्रिया वातगुल्म पर उत्तम है ॥

शिखिवाडवरस

मारितं सूतताम्राभ्रं गंधकं माक्षिकं समम् । मर्दयेच्चित्रकद्रावे-र्यवक्षारयुतं दिने ॥ त्रिगुंजं भक्षयेन्नित्यं नागवल्लीदलेन च । वातगुल्महरः ख्यातो रसोयं शिखिवाडवः ॥

अर्थ-पारे की भस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, गंधक, सुवर्णमाक्षिक, जवाखार थे एकत्र कर उस में चित्रक के रस की भावना देवे और इस में से तीन रत्ती पान में रखके खाय तो यह शिखिवाडवरस सर्व वातगुल्मों को नाश करे ॥

पथ्य

तित्तिरांश्च मयूरांश्च कुक्कुटान् क्रौंचवर्तिकान् ।
सर्पिश्शालिप्रसन्नाश्च वातगुल्मे च योजयेत् ॥

अर्थ–तीतर, मोर, मुरगा, क्रौंच और बटेर इन पक्षियों का मांसरस, घी भात, मद्य अथवा सुरामंड ये वातगुल्म पर पथ्य देना चाहिये ॥

पित्तगुल्म के लक्षण

कट्वम्लतीक्ष्णोष्णविदाहिरूक्षक्रोधातिमद्यार्कहुताशसेवा । आमाभिघातो रुधिरं च दुष्टं पैत्तस्य गुल्मस्य निमित्तमुक्तम् ॥ ज्वरः पिपासा वदनाङ्गरागः शूलं महज्जीर्यति भोजने च । स्वेदो विदाहो व्रणवच्च गुल्मः स्पर्शासहः पैत्तिकगुल्मचिह्नम् ॥

अर्थ–कटु, खट्टा, तीक्ष्ण रस, दाहकारक (वंशकरीलादिक), रूखा ऐसे भोजन करने से, क्रोध से, अति मद्यपान, सूर्य की धूप में डोलने से, अग्नि के समीप रहने से, विदग्ध अजीर्ण से दुष्ट भया रस उस से अभिघात कहिये लकडी आदि लगने से, रुधिर का बिगडना ये पित्तगुल्म के कारण कहे हैं. ज्वर, प्यास, मुख और अंगों में लालपना, अन्न पचने के समय अत्यन्त शूल होय, पसीना आवे, जलन होय, फोडा के समान स्पर्श सहा न जाय ये पित्तगुल्म के लक्षण हैं ॥

द्राक्षादि चूर्ण

द्राक्षाभयारसं गुल्मे पैत्तिके सगुडं पिबेत् ।
सशर्करं वा विलिहन् त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ॥

अर्थ–पित्तगुल्म पर दाख के रस से छोटी हरड के चूर्ण को गुड मिलायके देवे अथवा त्रिफला के चूर्ण में खांड मिलायके देवे तो पित्तगुल्म दूर होवे ॥

पित्तगुल्म पर विरेचन

पित्तगुल्मे त्रिवृच्चूर्णं पातव्यं त्रिफलांबुना । विरेकाय सितायुक्तं कंपिल्लं वा समाक्षिकम् ॥ अभयां द्राक्षया खादेत् पित्तगुल्मी गुडेन वा ॥

अर्थ–पित्तगुल्म पर त्रिफले के काढे में निसोथ का चूर्ण मिलायके देवे अथवा कपिल मधु (सहत) के साथ देवे अथवा छोटी हरड के चूर्ण को दाख अथवा गुड के साथ सेवन करे ये योग दस्त करानेवाला है ॥

पित्तगुल्म पर पथ्य

शालिगोछागदुग्धं च पटोलं घृतमिश्रितम्। द्राक्षां परूषकं धात्रीं खर्जूरं दाडिमं सिताम्॥ पथ्यार्थं पैत्तिके गुल्मे बला- तोयं प्रयोजयेत्॥

अर्थ-शालीचावलों का भात, गौ अथवा बकरी इन का दूध, परवल, घी, दाख, फालसे, आंवले, खिजूर, अनार, मिश्री, खिरेटी ये पदार्थ पित्तगुल्म पर पथ्य हैं इस वास्ते देवे॥

द्राक्षादि घृत

द्राक्षामधुकखर्जूरं विदारी च शतावरी। परूषकाणि त्रिफलां साधयेत्पलसंमिताम्॥ जलाढके पादशेषे रसमामलकस्य च। घृतमिक्षुरसं क्षीरमभयाकल्कपादिकम्॥ साधयेच्च घृतं सिद्धं शर्कराक्षौद्रपादिकम्। प्रयोगः पित्तगुल्मघ्नः सर्वगुल्मविकारनुत्॥

अर्थ-दाख, मुलहटी, खजूर, विदारीकंद, सतावर, फालसे और त्रिफला ये प्रत्येक चार २ तोले तथा जल २५६ तोले में डालके काढा करे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय और इस में आमले का रस, ईख का रस, हरड का कल्क, और घी ये काढे के चतुर्थांश डालके पचन करे तो घृत सिद्ध होय. इस में चतुर्थांश मिश्री मिलायके तथा सहत डालके सेवन करने को देवे यह योग पित्तगुल्म तथा संपूर्ण गुल्मविकारों को नाश करे॥

आमलक्यादि घृत

रसेनामलकेक्षूणां घृतपादं विपाचयेत्।
पथ्यायाश्च पिबेत्सर्पिस्तत्सिद्धं पित्तगुल्मनुत्॥

अर्थ-आंवले का, ईख का और छोटी हरड के रस में चतुर्थांश घी डाल पचा- वे तो घृत सिद्ध होय इस के पीने से पित्तगुल्म का नाश होय॥

त्रायमाणादि घृत

जले दशगुणे साध्यं त्रायमाणचतुःपलम्। पंचभागान्वितं पूतं कल्के संयोज्य कार्षिकैः॥ रोहिणी कटुका मुस्ता त्रायमाणा दुरालभा। द्राक्षा तामलकी वीरा जीवंती चंदनोत्पलम्॥

रसस्यामलकानां च क्षीरस्य च घृतस्य च । पलानि पृथग-ष्टाष्टौ सम्यक् दत्त्वा विपाचयेत् ॥ पित्तगुल्मं रक्तगुल्मं विसर्पं पित्तजं ज्वरम् । हृद्रोगं कामलां कुष्ठं हन्यादेतद्घृतोत्तमम् ॥

अर्थ—त्रायमाण १६ तोले को १६० तोले जल में डालके औटावे जब पंचमांश जल रहे तब उतारके कपडे में छान लेवे. फिर छोटी हरड, कुटकी, नागरमोथा, त्रायमाण, धमासा, दाख, भूयआवला, घीगुवार, गिलोय, चंदन और कमल इन औषधों का एक २ तोले कल्क अदरख का रस, दूध और घी ये आठ २ पल ले उस काढे में डालके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके देवे तो पित्तगुल्म, रक्तगुल्म, विसर्प, पित्तज्वर, हृदयरोग, कामला और कुष्ठ इन को नाश करे ॥

कफगुल्मनिदान और लक्षण

शीतं गुरु स्निग्धमचेष्टनं च संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च । गुल्मस्य हेतुः कफसंभवस्य सर्वस्तु दुष्टो निचयात्मकस्य ॥ स्तैमित्य-शीतज्वरगात्रसादहृल्लासकासारुचिगौरवाणि । शैत्यं रुगल्पा कठिनोन्नतत्वं गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य ॥

अर्थ—शीतल, भारी, चिकने ऐसे पदार्थ के सेवन से तृप्ति की अपेक्षा, अधिक भोजन करना, दिन में सोना ये कफोत्पन्न गुल्म होने का कारण है. और जो वात-जादि तीनों गुल्मों के कारण कहे हैं, वे सब सन्निपातगुल्म के कारण जानने· देह का गीलापना, शीतज्वर, शरीर की ग्लानि, सूखी रद्द (उबाकी), खांसी, अरुचि, भारीपना, शीत का लगना, थोडी पीडा होय, गुल्म (गोला) कठिन होय और ऊंचा होय इतने ये सब कफात्मकगुल्म के लक्षण हैं ॥

सामान्य चिकित्सा

योगैश्च वातगुल्मोक्तैः श्लेष्मगुल्ममुपाचरेत् ।
अपरैश्च बलासघ्नैर्युक्तियुक्तैः समं नयेत् ॥

अर्थ—कफगुल्म पर वातगुल्मोक्त योग देवे तथा और भी कफनाशक योग युक्ति-पूर्वक योजना करके शमन करे ॥

यवानीचूर्ण

यवानीचूर्णितं तक्रे बिडेन लवणीकृतम् ।
श्लेष्मगुल्मे पिबेद्वा तन्मूत्रवर्चोऽनुलोमनम् ॥

अर्थ—अजमायन का चूर्ण और बिड निमक इन को छाछ में डालके कफगुल्म में देवे तो मलमूत्र का अनुलोमन होकर मल और मूत्र साफ होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगुग्रंथिकधान्यजीरकवचा चव्याग्निपाठा शठी वृक्षाम्लं लवणत्रयं त्रिकटुकं क्षारद्वयं दाडिमम् । पथ्या पौष्करवेतसाम्लहपुषाजाज्यस्तदेभिः कृतं चूर्णं भावितमेतदार्द्रकरसैः स्याद्वीजपूरद्रवैः ॥ गुल्माध्मानगुदांकुरग्रहणिकोदावर्तसंज्ञौ गदौ प्रत्याध्मानगदोदराश्मरियुतास्तूनीद्वयारोचकान् । ऊरुस्तंभमतिभ्रमं च मनसो बाधिर्यमष्ठीलिकां प्रत्यष्ठीलिकया सहापहरते प्राक्पीतमुष्णांबुना ॥ हृत्कुक्षिवंक्षणकटीजठरांतरेषु बस्तिस्तनांसफलकेषु च पार्श्वयोश्च । शूलानि नाशयति वातबलासजानि हिंग्वाद्यमाद्यमिदमाश्विनसंहितोक्तम् ॥

अर्थ—हींग, पीपरामूल, धनिया, जीरा, वच, चव्य, चित्रक, पाढ, कचूर, अमलवेत, सैंधा निमक, बिड निमक, कचिया निमक, सोंठ, मिरच, पीपल, सज्जीखार, जवाखार, हरड, पोहकरमूल, इमली, हाऊबेर और काला जीरा इन को समान भाग ले चूर्ण करे फिर इस को अदरख के रस की तथा बिजोरे के रस की भावना देवे तो चूर्ण तैयार हो. इस को गरम जल के साथ सेवन करने से गोला, पेट का फूलना, बवासीर, संग्रहणी, उदावर्त्त, प्रत्याध्मान, उदर, पथरी, तूनी, प्रतूनी, अरुचि, ऊरुस्तंभ, मतिभ्रंश, बहेरपना, अष्ठीला, प्रत्यष्ठीला और हृदय का कूख का, वंक्षण, कमर, पेट, बस्ति, स्तन, कंधे, पसवाडे इन के शूल तथा वातकफ संबंधी शूल इन को नाश करे यह अश्विनीकुमार ने कहा है ॥

पंचकोलादि घृत

पिप्पली पिप्पलीमूलं चव्याचित्रकनागरैः । पलिकैः सयवक्षारैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ क्षीरप्रस्थेन तत्सर्पिर्हंति गुल्मं कफात्मकम् । ग्रहणीपांडुरोगघ्नं प्लीहकासज्वरापहम् ॥

अर्थ—पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ ये चार २ तोले लेवे इन का अष्टमांश क्काथ करे फिर इस में १ शेर घृत, जवाखार ४ तोले और दूध सेरभर

डालके पचावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार लेवे. यह वी कफगुल्म, संग्रहणी, पांडुरोग, प्लीहा, खांसी और ज्वर इन को नाश करे ॥

कफगुल्म पर पथ्य

कुलित्थाञ्जीर्णशालींश्च षष्टिकान्यवजांगलान् ।
मद्यं तैलं घृतं तक्रं कफगुल्मे प्रयोजयेत् ॥

अर्थ-पुराने कुलथी, पुराने साठी चावल, जों, जंगली जीवों का मांस, मद्य, तेल, घृत और छाछ ये पदार्थ कफगुल्म पर पथ्यार्थ देवे ॥

तिलादि लेप और सेक

तिलैरंडातसीबीजं सर्षपं च विपेषयेत् ।
तेन लिप्तोदरं स्वेद्यमर्कपत्रैः सुकल्पितैः ॥

अर्थ-तिल, अंड और अलसी इन के बीज तथा सरसों इन सब को एकत्र पीसके इस का पेट पर लेप करे और आक के पत्तों से पेट को सेके तो कफगुल्म नष्ट होय ॥

सेक

एरंडार्कदलैर्वाथ सोष्णैः स्विद्यन्मुहुर्मुहुः ॥

अर्थ-अंड अथवा आक इन के गरम २ पत्तों करके वारंवार सेके तो कफगुल्म दूर होय ॥

दशमूलादि तेल

दशमूलकणा द्राक्षा श्यामा धात्री पलं पलम् ।
प्रस्थमेरंडतैलस्य प्रस्थषट्कं गवां पयः ॥
पचेत्तैलावशेषं तु तत्तैलं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ-दशमूल, पीपल, दाख, हरड और आंवले ये चार २ तोले लेवे इन के करे काढे में ६४ तोले अंडी का तेल और गौ का दूध ३८४ तोले सब को एकत्र कर तेल शेष रहने पर्यंत पचावे यह तेल कफगुल्म का नाश करे ॥

त्रिवृत्तादि घृत

त्रिवृत्ता त्रिफला दंती दशमूलं पलोन्मितम् । जले चतुर्गुणे पक्त्वा चतुर्भागावशेषिते ॥ सर्पिरेरंडतैलं च क्षीरं चैकत्र साधयेत् । संसिद्धो मिश्रकः स्नेहः सक्षौद्रं कफगुल्मनुत् ॥

अर्थ–निसोथ, हरड, बहेडा, आंवला, जमालगोटे की जड (दंती) और दशमूल ये सब एक २ पल लेवे. चौगुने जल में इस का काढा कर चतुर्थांश रहने पर उतार लेवे. छानके इस में घी, अंडी का तेल और दूध ये सब एकत्र करके अग्नि पर पचावे. जब तेल और घृत शेष रहे तब उतार ले यह मिश्रकघृत है. इस को सहत में मिलायके खाय तो कफगुल्म को नाश करे ॥

विद्याधररस

गंधकं तालकं ताप्यं मृताभ्रं च मनःशिलाम् । शुद्धसूतं च तुल्यांशं मर्दयेद्भावयेद्दिनम् ॥ पिप्पल्यास्तु कषायेण वज्रीक्षीरेण भावयेत् । निष्कार्धं भक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मप्लीहादिकं जयेत् ॥ रसो विद्याधरो नाम गोमूत्रं च पिबेदनु ॥

अर्थ–गंधक, हरताल, सुवर्णमाक्षिक, अभ्रकभस्म, मनसिल और शुद्धपारा ये समान भाग लेवे. इस को पीपल का काढा और थूहर के दूध की एक एक दिन भावना देवे. यह विद्याधररस सहत के साथ तीन मासे देवे और ऊपर से गोमूत्र पीवे तो गुल्म और प्लीहा इन को नाश करे ॥

नाराचरस

शुद्धसूतं समं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेषयेत्क्षौद्रैर्निष्कं गुल्महरं लिहेत् ॥
गुल्मोदरहरः ख्यातो नाराचोयं रसोत्तमः ॥

अर्थ–शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन सब को एकत्र खरल करे इस में से छः मासे यह **नाराचरस** सहत के साथ देवे तो गोला और उदर इन को नाश करनेवाला प्रसिद्ध है ॥

द्वंद्वजगुल्मनिदान और लक्षण

निमित्तलिङ्गान्युपलभ्य गुल्मे संसर्गजे दोषबलाबलं च ।
व्यामिश्रलिङ्गानपरांश्च गुल्मांस्त्रीनादिशेदौषधकल्पनार्थम् ॥

अर्थ–द्वंद्वज गुल्म में कारण, लक्षण और दोषों का बलाबल जानकर चिकित्सा करने के वास्ते, मिश्र लक्षण के और तीन गुल्म समझने चाहिये अर्थात् एक दोष बलवान् होय तौ चिकित्सा करनी चाहिये और द्विदोष बलवान् वा त्रिदोष बलवान् होय तौ चिकित्सा न करे ॥

द्राक्षादि कल्क

द्राक्षाचंदनयष्ट्याह्वा पद्मकं तंदुलोदकैः ।
पिष्ट्वा क्षीरविदारीं च सक्षौद्रां पाययेदनु ॥
पंचवक्त्रो रसो देयो गुल्मे तु कफवातजे ॥

अर्थ-कफवातगुल्म पर दाख, चंदन, मुलहटी, पद्माख और दूध निकलनेवाला विदारीकंद इन को चांवलों के धोवन के साथ पीसके इस कल्क को सहत डालके देवे और ऊपर से पंचवक्त्र रस देवे ॥

सैंधवादि तैल

सैंधवं चित्रकं दंतिशक्राह्वं च पलं पलम् । द्वात्रिंशत्पलगोमूत्रैः पचेदष्टावशेषकैः ॥ कषायस्य समं तैलं पिष्ट्वा तं च विपाचयेत् । तैलावशेषमुत्तार्य अनुपानैः पिबेत्सदा ॥

अर्थ-सैंधा निमक, चित्रक, जमालगोटा और इन्द्रजो ये प्रत्येक चार २ तोले लेय इन को १२८ तोले गोमूत्र में अष्टमांश काढा करे. इस में इन पूर्वोक्त औषधों का कल्क और जितना काढा होवे उतना ही तैल मिलायके सिद्ध करे जब तेल मात्र शेष रहे तब उतार ले छानके धर रखे फिर इस को गुल्मादिरोगों पर अनुपान के साथ देवे ॥

नाराच रस

पित्तश्लेष्मस्थिते गुल्मे देयो नाराचको रसः ॥

अर्थ-पित्तश्लेष्मज गुल्म पर नाराचरस को देवे ॥

करंजादि पुटपाक

करंजवटपत्राणि चव्यं वह्निः कटुत्रयम् । इंद्रवारुणिकामूलं पुटे पाच्यं ससैंधवम् ॥ तद्भावे वारिणा पीतं पलार्धं मधुनापि वा । हंति गुल्मोदरं पांडुं द्वंद्वजं श्वयथुं तथा ॥

अर्थ-चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और इन्द्रायन की जड और सैंधा निमक ये बारीक पीसके कंजा और बड के पत्तों में लपेट कर पुटपाक की विधि से पाक करे फिर इस को जल से पीस दो तोले सहत डालके देवे तो गोला, उदर, पांडुरोग, द्वंद्वज व्याधि इन सब को नाश करे ॥

सन्निपातगुल्म

महारुजं दाहपरीतमश्मवद्घनोन्नतं शीघ्रविदाहदारुणम्।
मनःशरीराग्निबलापहारिणं त्रिदोषजं गुल्ममसाध्यमादिशेत्॥

अर्थ–भारी पीडा करनेवाला, दाह करके व्याप्त, पत्थर के समान कठिन, तथा ऊंचा और शीघ्र दाह करके भयंकर, मन, शरीर, अग्नि और बल इन का नाश करनेवाला, (अर्थात् मन को विकल करनेवाला, शरीर को कृश करनेवाला और विवर्ण करनेवाला, अग्निवैषम्यादिकारक, असामर्थ्य करनेवाला) ऐसा त्रिदोषज गुल्म असाध्य जानना॥

सामान्य

धीमानुपाचरेत् गुल्मं प्रत्याख्याय त्रिदोषजम्।
सन्निपातोत्थिते गुल्मे त्रिदोषघ्नो विधिर्हितः॥

अर्थ–बुद्धिमान पुरुष को त्रिदोषजन्य गुल्म को असाध्य जानके उपचार करे. सन्निपात गुल्म पर त्रिदोषघ्न औषधि हितकारी कही है॥

वरुणादि क्काथ

वरुणादिकषायस्तु गुल्मदोषत्रयोत्थितम्।
हंति हृत्पार्श्वशूलाढ्यं सोपद्रवं न संशयः॥

अर्थ–वरुणादिक औषधों का काढा त्रिदोषजगुल्म का नाश करे और हृदय तथा पार्श्व इन के उपद्रवयुक्त शूल को नाश करे॥

वरुणक्काथ मध्यविद्रधि पर

वरुणादिगणक्काथमपक्के मध्यविद्रधौ।
रुषकादिरसैर्युक्तं पिबेच्छमनहेतवे॥

अर्थ–वरुणादिक औषधों का गण आगे कहा हुआ उस का काढा करके तथा रुषकादिक औषध का चूर्ण आगे कहा है उस को उस काढे में डालके पीवे तो पक्क नहीं हुआ विद्रधि अर्थात् कुछ २ कच्चे विद्रधिरोग को दूर करे॥

वरुणादि क्काथ

वरुणो बकपुष्पं च बिल्वापामार्गचित्रकाः। अग्निमंथद्वयं शिग्रुद्वयं च बृहतीद्वयम्॥ सैरेयकत्रयं मूर्वा मेषशृंगी किरातकः।

अजशृंगी च बिंबं च करंजश्च शतावरी ॥ वरुणादिगणक्काथः कफमेदोहरः स्मृतः । हंति गुल्मं शिरःशूलं तथाभ्यंतरविद्रधीन् ॥

अर्थ–वरना, वकपुष्प, बेलगिरी, ओंगा, चित्रक, दो प्रकार की अरनी (छोटी, बडी), दो प्रकार का सहजना (मीठा और कडुआ), कटेरी और बडी कटेरी, तीन प्रकार की कटसरैया (पीला, काला और सपेद), मूर्वा, काकडासिंगी, चिरायता, मेढासिंगी, कंदूरी की जड अथवा पत्ते, कंजा, सतावर इन सब औषधों का काढा करके पीवे तो कफ, मेदरोग तथा मस्तक का शूल और गोला ये दूर होवें. अंतर्विद्रधि नाम करके जो रोग होता है वह दूर होवे मूल में 'तथा विद्रधिपीनसान्' ऐसा भी पाठ है इस का यह अर्थ है कि विद्रधि और पीनसरोग को दूर करे ॥

जयंत्यादि दो क्काथ

जयंत्या वा जयाया वा गुडैः सोष्णजलं पिबेत् ।
त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं रसो वानंदभैरवः ॥

अर्थ–जयंती या जया इन का गरम काढा गुड डालके देवे तो त्रिदोषोत्थगुल्म नष्ट होवे ॥

राजवृक्षादि पुटपाक

राजवृक्षस्नुही भानुकरजांकुलजंबुकम् । पाटला रजनी चिंचा पिप्पली च पुनर्नवा ॥ अपामार्गस्य मूलानि समं रुध्वा पुटे पचेत् । द्विनिष्कं पलगोमूत्रैर्जयेद्गुल्मं त्रिदोषजम् ॥

अर्थ–अमलतास, थूहर, आक, कंजा, अंकोल, जामुन, पाढ, हलदी, इमली, पीपल, पुनर्नवा और ओंगा इन की समान भाग जड लेके पुटपाक की विधि से पचावे इस में से एक तोले लेके आठ तोले गोमूत्र से देवे तो त्रिदोषगुल्म को नाश करे ॥

अभयादि योग

अभया सैंधवं तक्रं भोजनांते पिबेदनु । त्रिफलां सुवर्चलाक्षीरं तुल्यं गुंजैककं भक्षयेत् ॥ त्रिदोषोत्थं हरेद्गुल्मं त्रिफलासंचलं तथा । उष्णे तक्रे पिबेत्कर्षं मुंडीमूलं च वारिणा ॥

अर्थ–हरड, सैंधानिमक इन के चूर्ण को छाछ में मिलाय भोजन करने के पश्चात पीवे तथा हरड, बहेडा, आवला और संचर निमक इन का चूर्ण एक रत्ती भक्षण करे किंवा गोरखमुंडी की जड जल में पीस छाछ में मिलायके १ तोले पीवे तो त्रिदोषोत्पन्न गुल्मरोग का नाश होय ॥

संप्राप्तिपूर्वक स्त्रीगुल्म

नवप्रसूताऽहितभोजना या या चामगर्भं विसृजेदृतौ वा । वायुर्हि तस्याः परिगृह्य रक्तं करोति गुल्मं सरुजं सदाहम् ॥ पित्तस्य लिङ्गेन समानलिङ्गं विशेषणं चाप्यपरं निबोध । यः स्पंदते पिंडित एव नाङ्गैश्चिरात्स शूलः समगर्भलिङ्गः ॥ स रौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः ॥

अर्थ–नई प्रसूत भई स्त्री के अपथ्य सेवन करने से अथवा अपक्व गर्भपात होने से अथवा ऋतुकाल के समय अपथ्य भोजन करने से, वायु कुपित होकर उस स्त्री के रुधिर (जो ऋतुसमय निकले उस को) लेकर गुल्म करे वह गुल्म पीडायुक्त व दाहयुक्त होय है और पित्तगुल्म के जो लक्षण कहे हैं वे सब इस में होंय, और इस में दूसरे विशेष लक्षण होते हैं उन को कहता हूं सुनो. यह गुल्म बहुत देर में गोल गोल हिले, अवयव कहिये हाथ पैर के साथ नहीं हिले, शूलयुक्त होय गर्भ के समान सब लक्षण मिलें, (अर्थात् मुख से पानी छूटे, मुख पीला पड जाय, स्तन का अग्रभाग काला हो जाय और दोहदादि लक्षण सब मिलें. ये सब लक्षण व्याधि के प्रभाव से होते हैं. जैसे खई रोगवाले को स्त्रीरमण की इच्छा और काले नख तात्वादिक होते हैं) यह रक्तजगुल्म स्त्रियों के होय है, दश महीना व्यतीत हो जाय तब इस रक्तगुल्म की चिकित्सा करनी चाहिये. कोई कहते हैं कि यह गर्भ है अथवा रक्तगुल्म है, यह शंका जानकर माधवाचार्य ने (दश महिना व्यतीत होने पर) ऐसा कहा है. कारण इस का यह है कि नववां और दशवां महीना यह प्रसूत होने का समय है * **शंका–क्यौंजी (यः स्पंदते पिंडित एव नांगैः)** इत्यादिक विशेषणों से स्पष्ट प्रतीति होय है क्योंकि गर्भ तो निरंतर प्रत्येक अवयव के साथ शूलरहित फडकता है और रक्तगुल्म के इस से विपरीत लक्षण हैं, फिर दश महीने व्यतीत होने पर चिकित्सा करना चाहिये ये क्यौं कहा ? * उत्तर–इस का कारण इस प्रकार है कि इस रोग में जब तो दश महीना व्यतीत हो जाय जब चिकित्सा करे तौ सुखसाध्य होय है, कुछ प्रसव के नियम से नहीं कहा क्योंकि प्रसव ग्यारह बारह महीनों में भी होय है, सो चरक में भी लिखा है " **तं स्त्री प्रसूते सुचिरेण गर्भं स्पष्टो यदा वर्षगणैरपि स्यात्**" जैसे जीर्णज्वर होने पर दूध पीना और दस्त का लेना हितकारक होय है । इसी से ग्रन्थान्तरों में भी लिखा है " **रक्तगुल्मे पुराणत्वं सुखसाध्यस्य लक्षणम्** " इस रक्तगुल्म को दस महीने व्यतीत होने पर पुरानापना होय है और जेज्जट ने भी

कहा है कि दस महीनों के पहले मर्दनादि क्रिया करने से गर्भाशय को विकार होय है क्योंकि रुधिर उस ठिकाने पर जमा होय है और ग्यारह महीने में गुल्म का गोला बहुत अच्छा जम जाता है, इसी से ग्यारहवें महीने स्नेहादिक करके सब शरीर मृदु (नरम) करने से भेदन क्रिया करे तो गर्भाशय भले प्रकार अच्छा रहे ॥

दंत्यादि वटी

दंतिहिंगुयवाक्षारालाबुबीजं कणा गुडः । स्नुहिक्षीरेण गुटिका सर्वेषां कर्षमात्रिका ॥ भक्षिता रक्तगुल्मघ्नी रुधिरस्रावकारिणी ॥

अर्थ–दंती की जड, हींग, जवाखार, कडुई धीया के बीज, पीपल, गुड इन को थूहर के दूध में खरल करके २ तोले की गोली बनावे एक गोली खाय तो रक्त-गुल्म की नाशक और रुधिर के स्राव करनेवाली है (परंतु बलाबल विचारके मात्रा देवे)॥

पलाशघृत

पलाशक्षारयोगेन सर्पिः सिद्धं पिबेद्वधूः ॥

अर्थ–पलास (ढाक) के क्षार के योग से घृत को सिद्ध करके यह स्त्री को पीना चाहिये ॥

शताह्वादि कल्क

शताह्वाचिरबिल्वत्वग्दारुभार्ङ्गीकणोद्भवः ।
कल्कः पीतो हरेद्गुल्मं तिलक्काथेन रक्तजम् ॥

अर्थ–शतावर, कंजा की छाल, दारुहलदी, भारंगी, पीपल इन के चूर्ण को तिल के काढे के साथ पीवे तो रक्तगुल्म का नाश होय ॥

तिलक्काथ

तिलक्काथो गुडघृतव्योषभार्ङ्गीरजोन्वितः ।
पीतो रक्तभवे गुल्मे नष्टे शुक्रे च योषितः ॥

अर्थ–तिल के काढे में गुड, घी और सोंठ, मिरच, पीपल, भारंगी इन का चूर्ण डालके पीवे तो रक्तगुल्म और स्त्रियों का जो शुक्र नष्ट होता है उस पर परमोत्तम है ॥

भार्ग्यादि चूर्ण

भार्ङ्गीकृष्णाकरंजत्वग्ग्रंथिकामरदारुजम् ।
चूर्णं तिलानां क्काथेन रक्तगुल्मरुजापहम् ॥

अर्थ–भारंगी, पीपल, कंजे की छाल, पीपरामूल, देवदारु इन के चूर्ण को तिल के काढे में मिलायके पीवे तो रक्तगुल्म का नाश करे ॥

तिलमूलादि चूर्ण

तिलमूलं च शिग्रुं च ब्रह्मदंडीयमूलकम् । मधुयष्टी त्रिकटुकै-र्युतं चूर्णमुपासते ॥ पुष्परोधे वातगुल्मे स्त्रीणां सद्यः सुखावहम् ॥

अर्थ–तिल की जड, सहजने की जड, ब्रह्मदंडी की जड, मुलहटी, सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण सेवन करने से स्त्रियों का नष्टपुष्प, वायगोला इन को तत्काल सुखदाई होय ॥

मुंड्यादि चूर्ण

मुंडीरोचनिकाचूर्णं शर्करामाक्षिकान्वितम् । विदधीतास्यगु-ल्मिन्यां मलसंरेचनाय च ॥ उष्णैर्वा भेदयेद्भिन्ने विधिर्वा-सृग्धरो हितः । अतिप्रवृत्तमस्रं तु भिन्ने गुल्मे निवारयेत् ॥

अर्थ–मुंडी और वंशलोचन इन का चूर्ण मिश्री और सहत इन से रक्तगुल्म पर रेचन देवे. अथवा गरम औषधों से गुल्म को तोडे. जब गोला टूट जावे तब रक्त-गुल्म के ऊपर जो यत्न लिखे हैं वे उपाय करे. यदि गोला टूटने से रुधिर अधिक निकलने लगे तो उस को उसी दम बंद करे ॥

गुल्म के असाध्यलक्षण

सञ्चितः क्रमशो गुल्मो महावास्तुपरिग्रहः । कृतशूलः शिरा-नद्धो यदा कूर्म इवोन्नतः ॥ दौर्बल्यारुचिहृल्लासकासच्छर्द्य-रतिज्वरैः । तृष्णातंद्राप्रतिश्यायैर्युज्यते न स सिद्ध्यति ॥ गृहीत्वा सज्वरं श्वासं च्छर्द्यतीसारपीडितम् । हृन्नाभिबस्तिपा-देषु शोथः क्षिपति गुल्मिनम् ॥ श्वासः शूलं पिपासान्नविद्वेषो ग्रन्थिमूढता । जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनां मरणाय वै ॥

अर्थ–क्रमक्रम से बढा गुल्म जब सब उदर (पेट) में फैल जाय और धातु-ओं में उस का मूल जाय पहुंचे, तथा उस पर नाडियों का जाल लिपट जाय और कछुआ की पीठ के समान गुल्म ऊंचा होय, तब इस रोगी के निःसत्वपना, अरुचि, सूखी रद्द, खांसी, वमन, अरति और ज्वर तथा प्यास, तन्द्रा और पीनस ये लक्षण होंय, ऐसा रोगी असाध्य है वमन और अतिसार इन से पीडित ऐसा

गुल्मरोगी का हृदय, नाभी, हाथ, पैर इन ठिकाने सूजन होय और ज्वर, दमा जिस के होय ऐसे लक्षण होने से रोगी बचे नहीं. श्वास, शूल, प्यास, अन्न में अरुचि और गुल्म की गांठ का एकाएकी नष्टसा हो जाना और दुर्बलता ये लक्षण होने से जानना कि गुल्मरोगवाले की मृत्यु समीप है. शंका–क्योंजी अंतर्विद्रधि और गुल्म रोग इन में क्या भेद है इन दोनों के स्थान और स्वरूप तो एक से हैं फेर भेद क्या है ? उत्तर–तुम ने कहा सो ठीक है अन्तर्विद्रधि पचता है और गुल्म नहीं पचे है इस का कारण यह है कि गुल्म तौ निराश्रय है सो सुश्रुत ने कहाभी है ॥

दूसरे लक्षण

न निबंधोस्ति गुल्मस्य विद्रधिः सनिबंधनः । गुल्मस्तिष्ठति दोषे स्वे विद्रधिर्मांसशोणिते ॥ विद्रधिः पच्यते तस्माद्गुल्मश्चापि न पच्यते ॥

अर्थ–गुल्म का निर्बंध नहीं है और विद्रधि का निर्बंध है, गुल्म अपने दोषों में रहता है और विद्राधि का ठिकाना मांस रुधिर में है, इसी से विद्राधि का पाक होय है और गुल्म का पाक नहीं होय, गुल्म मुट्ठी के समान बडा है और विद्रधि इस से कुछ जीयादा बडा होय है ॥

तीसरा लक्षण

ग्रंथिनाशः श्वासशूलतृष्णान्नद्वेषणादयः । गुल्मिनो दुर्बलत्वं च मरणाय विनिर्दिशेत् ॥ शिरावनद्धः सुकठोर उन्नतो व्याप्तोदरो भूरिफलोपि गुल्मः । हृल्लासकासारुचिकार्श्यतृष्णाछर्दिज्वरार्तश्च न सिद्धिमेति ॥ ज्वरः श्वासकासप्रतिश्यायतंद्रावमिभ्रांतियुक्तं त्यजेद्गुल्मिनं तम् । गुदे नाभिहृद्धस्तिपादेषु शूनं कृशं सातिसारं तृषाशूलयुक्तम् ॥

अर्थ–जिस गुल्मरोगवाले के गुल्मग्रंथी का नाश, श्वास, शूल, प्यास, अन्नद्वेष और दुर्बलता ये लक्षण हों वह असाध्य है. जो गुल्म नसों से कठिन, ऊपर उठा हुआ, जिस ने पेट व्यापा, वेगवान्, मुंह से जल गिरे, खांसी, अरुचि, कृशता, प्यास, कै और ज्वर, श्वास इन लक्षणों से युक्त गुल्मरोगवाला अच्छा नहीं होता. ज्वर, श्वास, खांसी, प्रतिश्याय, तंद्रा, कै, भ्रांति और गुदा, नाभी, हृदय, हाथ, पांव इन पर अफरा होवे, कृशता, अतिसार, प्यास और शूल इन लक्षणोंवाले गुल्मरोगी को वैद्य को छोड देना चाहिये ॥

पुनर्नवादि कल्क

श्वेतं पुनर्नवामूलं तुल्यं सैंधवचूर्णितम्।
सघृतं लेहयेद्गुल्मी क्षौद्रैर्वाथ जलोदरी॥

अर्थ–सपेद पुनर्नवा (विषखपरा) की जड में बराबर का सैंधा निमक डालके पीसके कल्क करे. उस में घी मिलायके गुल्म पर देवे. तथा सहत डालके जलोदर पर देवे॥

चित्रकादि क्काथ

चित्रकग्रंथिकैरंडशुंठीक्काथः परं हितः।
शूलानाहविबंधेषु सहिंगुबिडसैंधवः॥

अर्थ–चित्रक, पीपरामूल, अंड की जड और सोंठ इन का काढा हिंग, बिड-निमक और सैंधा निमक डालके देवे तो गुल्म, शूल, अफरा और विबंध इन पर अत्यंत हितकारी है॥

नादेयादिक्काथ

नादेयीकुठजार्कशिग्रुबृहतीस्नुग्वेल्लभल्लातकव्याघ्रीकिंशुकपा-रिभद्रकुटजापामार्गनीपाग्निनाम्। वासामुष्ककपाटलां सलवणां दग्धां जले पाचितं हिंग्वादिप्रतिवापमेतदुदितं गुल्मोदराष्ठीलिषु॥

अर्थ–भूंयजामुन, कुडा की छाल, आक, सहजना, कटेरी, थूहर, काली मिरच, भिलाए, बडी कटेरी, पलास, नीम, इंद्रजो, औंगा, कदव, चित्रक, अडूसा, मोखावृक्ष की छाल, पाढ और भुना हुआ निमक इन का काढा कर उस में हींग डालके गुल्म, उदर और अष्ठीला इन पर देवे॥

पारदादि वटी

पारदं शिखितुत्थं च जेपालं पिप्पलीसमम्।
आरग्वधफलं मज्जां वज्रीक्षीरेण मर्दयेत्॥
माषमात्रां वटीं खादेत्स्त्रीणां गुल्मोदरप्रणुत्॥

अर्थ–पारा, गंधक, लीलाथोथा, जमालगोटा, पीपल, अमलतास का गूदा ये समान भाग ले इन को थूहर के दूध में खरल करे फिर एक २ मासे की गोली बनावे वह सब स्त्रियों के गोले तथा उदर इन को नाश करे॥

मूलिकादि धारण

लांगल्या वापमार्गोत्थैरिंद्रवारुणिकापि वा ।
शूलं योनिगतं स्त्रीणां धारणं पुष्परोधनुत् ॥

अर्थ–कलियारी, ओंगा अथवा इन्द्रायन इन की जड को योनि में धारण करे तो योनिशूल और पुष्पावरोध इन को नाश करे ॥

निंबादि वटी

निंबैरंडस्य बीजानि पिष्ट्वा निंबदलद्रवैः ।
गुटिकांतर्गता योनौ लेपोयं भगशूलनुत् ॥

अर्थ–नीम की निबोरी और अंडी इन को पीस नीम के पत्तों के रस में गोली बनावे इस गोली को योनि में रखे तो अथवा इस का योनि में लेप करे तो योनिशूल का नाश करे ॥

सठ्यादि कांकायनवटी

सठी पुष्करमूलं च दंतिचित्रकमाढकम् । शृंगबेरं वचां चैव पलिकानि समाहरेत् ॥ त्रिवृतायाः पलं चैव कुर्यात्त्रीणि च हिंगुलुः । यवक्षारः पले द्वे च द्वे पले चाम्लवेतसम् ॥ यवान्यजाजिमरिचं धान्यकं चेति कार्षिकम् । उपकुल्याजमोदाभ्यां तथा चाष्टमिकामपि ॥ मातुलिंगरसोपेतां गुटिकां कारयेद्भिषक् । तासां त्वेका पिबेद्द्वे वा तिस्रो वाथ सुखांबुना ॥ अम्लैश्च मद्यैर्यूषैश्च घृतेन पयसाथवा । एषा कांकायनेनोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी ॥

अर्थ–कचूर, पुहकरमूल, दंती, चित्रक ये २५६ तोले और सोंठ, वच ये चार २ तोले निसोथ ४ तोले और हींगलू ३ तोले, जवाखार ८ तोले, अमलवेत ८ तोले और अजमायन, जीरा, काली मिरच और धनिया ये एक २ तोले और पीपल, अजमोद ये ३२ तोले ले इस प्रकार सब औषध लेकर चूर्ण करे. इस को बिजोरे के रस में खरल करके गोली बनाय ले इस में से १ । २ अथवा ३ गोली गरम जल के साथ, खटाई से, सहत से, यूष से, घृत से किंवा दूध के साथ देवे तो यह कांकायनोक्त गुटिका गुल्मरोग को नाश करे ॥

यवान्यादि गुटिका

यवानी जीरकं धान्यं मरिचं गिरिकर्णिका । अजमोदोपकुंची च

चतुःशाणः पृथक् पृथक् ॥ हिंगु षट्शाणकं कार्यं शाणो लवणपंचकम् । त्रिवृच्चाष्टमितैः शाणैः प्रत्येकं कल्पयेत्सुधीः ॥ दंती शठी पौष्करं च विडंगं दाडिमं शिवा । चित्राम्लवेतसः शुंठी शाणैः षोडशभिः पृथक् ॥ बीजपूररसेनैषां गुटिकां कारयेद्बुधः । घृतेन पयसा चाम्लरसैरुष्णोदकेन वा ॥ पिबेत्काकायनप्रोक्ता गुटिका गुल्मनाशिनी । मद्येन वातिकं गुल्मं गोक्षुरेण च पैत्तिकम् ॥ मूत्रेण कफगुल्मं च दशमूलैस्त्रिदोषजम् । उष्ट्रीदुग्धेन नारीणां रक्तगुल्मं निवारयेत् ॥ हृद्रोगं ग्रहणीशूलं कृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥

अर्थ—अजमायन, जीरा, धनिया, काली मिरच, सारिवा, अजमोद, कलौंजी ये प्रत्येक चार २ तोले, हींग ६ तोले, पांचों निमक एक २ तोले, निसोथ ८ तोले, जमालगोटा, कचूर, पोहकरमूल, वायविडंग, अनारदाना, आवला, पीपल, अमलवेत और सोंठ ये प्रत्येक सोलह २ तोले ले सब को एकत्र कर बिजोरे के रस में उन को खरल करके गोली बनाय लेवे इन को घी, दूध, खट्टे रस अथवा गरम जल के साथ देवे तो गुल्मरोगनाश होय. वातजन्य गुल्म पर मद्य के साथ, पैत्तिक गुल्म में गोखरू के साथ, कफगुल्म पर गोमूत्र से, त्रिदोषगुल्म पर दशमूल के काढे के साथ, स्त्रियों के रक्तगुल्म पर ऊंटनी के दूध से और हृदयरोग, संग्रहणी, शूल, कृमि और बवासीर इन पर अनुपान के साथ देवे इस प्रकार काकायनऋषि ने कहा है ॥

स्वर्जिकावटी

स्वर्जिका शाणमाना स्यात्तावदेव गुडो भवेत् ।
उभयोर्वटिकां खादेद्गुल्मामयविनाशिनीम् ॥

अर्थ—सज्जीखार ३ मासे और गुड तीन मासे इन की गोली बनायके सेवन करे तो रक्तगुल्म का नाश करे ॥

प्रवालपंचामृत

प्रवालमुक्ताफलशंखशुक्तिकपर्दिकानां च समांशभागम् । प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोज्यं सर्वैः समांशं रविदुग्धमेव ॥ एकीकृतं तत्खलु भांडमध्ये क्षिप्त्वा मुखे बंधनमत्र योज्यम् । पुटं च दद्या-

दतिशीतले च उद्धृत्य तद्भस्म क्षिपेत्करंडे ॥ नित्यं हि वारं प्रतिपाकयुक्तं वल्लप्रमाणं हि नरेण सेव्यम् । आनाहगुल्मोदरप्लीहकासश्वासाग्निमांद्यान् कफमारुतोत्थान् ॥ अजीर्णमुद्गारहृदामयघ्नं ग्रहण्यतीसारविकारनाशम् ॥ मेहामयं मूत्ररोगं मूत्रकृच्छ्रं तथाश्मरीम् । नाशयेन्नात्र संदेहो सत्यं गुरुवचो यथा ॥ पथ्याश्रितं भोजनमादरेण समाचरेन्निर्मलचित्तवृत्त्या । प्रवालपंचामृतनामधेयो योगोत्तमः सर्वगदापहारी ॥

अर्थ–मूंगा, मोती, शंख, मोती की सीप, कौडी ये सब समान भाग लेवे परंतु मूंगा की भस्म दूनी लेवे तथा सब की बराबर आक का दूध डालके सब को एकत्र पीसके किसी पात्र में भरके ऊपर से ढके और कपडमिट्टी करके संपुट में रखके फूंक देवे जब शीतल हो जावे तब निकाल शीशी में भरके रख देवे. यह भस्म १ वल्ल रोगी को खाने के वास्ते देवे तो पेट का फूलना, गोला, उदर, प्लीहा, खांसी, श्वास, मंदाग्नि, कफवातसंबंधी रोग, अजीर्ण, हृदयरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी इन को नाश करे इस प्रकार गुरु ने कहा है इस में उत्तम पथ्य करे चित्त की वृत्ति निर्मल रखे. इस योग को **प्रवालपंचामृत** कहते हैं. यह योग उत्तम होने से संपूर्ण रोगों का नाश करे है ॥

हिंग्वादि घृत

हिंगुपुष्करमूलानि तुंबरूणि हरीतकी । श्यामा बिडं सैंधवं च यवक्षारं महौषधम् ॥ यवक्षारोदकेनैतत्घृतप्रस्थं तु पाचयेत् । तेनास्य भिद्यते गुल्मः सशूलः सपरिग्रहः ॥

अर्थ–हींग, पुहकरमूल, तुंबरू, हरड, पीपल, बिड निमक, सैंधा निमक, जवाखार और सोंठ ये समान भाग ले चूर्ण करे. इस को जवाखार के जल में मिलायके १ सेर घी मिलायके अग्नि पर पक्क करे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके छान ले इस को सेवन करे तो गुल्म फूटकर अच्छा होवे तथा शूलादिक रोग शांत होवें ॥

धात्रीघृत

धात्रीफलानां स्वरसैर्विडंगं विपचेद्घृतम् ।
शर्करासैंधवोपेतं तत्सिद्धं सर्वगुल्मनुत् ॥

अर्थ–आवलों के स्वरस में वायविडंग का कल्क और घी डालके घृत सिद्ध करे इस में मिश्री और सैंधा निमक डालके देवे तो संपूर्ण गुल्मों का नाश होय ॥

षट्पलघृत

षड्भिः पलैर्मगधजाफलमूलचव्यं विश्वौषधज्वलनयावककल्कपक्वम् । प्रस्थं घृतस्य दशमूलयरुबूकभार्ङ्गी क्वाथोप्यथो पयसि वा दधिषट्पलाख्यम् ॥ गुल्मोदरारुचिभगंदरवह्निमांद्यकासज्वरक्षयशिरोग्रहनिर्विकारान् । सद्यः शमं नयति ये च कफानिलोत्था भार्ङ्ग्याख्यषट्पलमिदं प्रवदंति तज्ज्ञाः ॥

अर्थ–पीपल, पीपरामूल, चव्य, सोंठ, चित्रक और जवाखार ये बत्तीस २ तोले लेवे. इन का कल्क कर घी ६४ तोले, दशमूल, अंड की जड और भारंगी इन का काढा, दूध और दही ये २४ तोले ले सब को एकत्र करके घृत को पचावे. यह घृत गोला, उदर, अरुचि, भगंदर, मंदाग्नि, खांसी, ज्वर, क्षई, मस्तकशूल और कफवातोत्पन्न व्याधि इन सब को यह षट्पलनामक घृत दूर करे ॥

दधिकयोग

बिडदाडिमसिंधूत्थहुतभुग्व्योषजीरकैः । हिंगुसौवर्चलक्षारचुक्रवृक्षाम्लवेतसैः ॥ बीजपूररसोपेतैः सर्पिर्दधि चतुर्गुणम् । साधितं दधिकं नाम्ना गुल्महृत्प्लीहनुत्परम् ॥

अर्थ–बिड निमक, अनारदाना, सैंधा निमक, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हींग, संचरनिमक, चूका, इमली, अमलवेत और बिजोरे का रस ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे और घी तथा दही चार २ तोले सब को एकत्र कर पचावे. इस को दधि नामक घृत कहते हैं. यह गोला और प्लीहा इन को नाश करे ॥

स्नुहिक्षीराद्य घृत

स्नुहिक्षीरं पले द्वे तु प्रस्थार्धं चैव सर्पिषः । कंपिल्लं पलमेकं तु पलार्धं सैंधवस्य च ॥ त्रिवृत्तायाः पलं चैकं धात्र्याः कुडवमेव च । तोयप्रस्थेन विपचेच्चैवं मृद्वग्निना भिषक् ॥ कर्षप्रमाणं दातव्यं जठरप्लीहगुल्मिने । तथा कच्छपरोगेषु युंजीत मतिमान् भिषक् ॥ एतद्गुल्मान् ससमीरान् निहंति सपरिग्रहान् ।

निहंत्येष प्रयोगो हि वायुर्जलधरानिव ॥ पंचगुल्मवधोपायं सर्पिरेतत्प्रकीर्तितम् । सर्वासुरवधार्थाय यथा वज्रं स्वयंभुवा ॥

अर्थ-थूहर का दूध ८ तोले, घी ३२ तोले, कवीला ४ तोले, सैंधा निमक २ तोले, निसोथ ४ तोले और आवला १६ तोले इस प्रकार सब को ले ६४ तोले जल में डालके मंदाग्नि से पचावे. यह स्नुह्यादि घृत एक तोले देवे तो उदर, प्लीहा, कच्छपरोग, गोला, वायगोला और पांच प्रकार के गुल्म इन को नाश करे. जैसे संपूर्ण दैत्यों के वध के वास्ते वज्र रचा है उसी प्रकार संपूर्ण रोगों के नाश करने को ब्रह्मदेव ने यह घृत उत्पन्न करा है ॥

अग्निमुखचूर्ण

हिंगुभागो भवेदेको वचा च द्विगुणा भवेत् । पिप्पली त्रिगुणा ज्ञेया शृंगबेरं चतुर्गुणम् ॥ यवानिका पंचगुणा षड्गुणा च हरीतकी । चित्रकं सप्तगुणितं कुष्ठं चाष्टगुणं भवेत् ॥ एतद्वातहरं चूर्णं पीतमात्रं प्रसन्नया । पिबेद्दध्ना मस्तुना वा सुरया कोष्णवारिणा ॥ उदावर्तमजीर्णं च प्लीहानमुदरं तथा । अंगानि यस्य शीर्यंते विषं वा येन भक्षितम् ॥ अर्शोहरो दीपनं च शूलघ्नो गुल्मनाशनः । कासं श्वासं निहंत्याशु तथैव क्षयनाशनः ॥ चूर्णो ह्यग्निमुखो नाम्ना न क्वचित्प्रतिहन्यते ॥

अर्थ-हींग १, वच २, पीपल ३, सोंठ ४, अजमायन ५, हरड ६, चित्रक ७ और कूठ ८ इन भागों को क्रम वृद्धि से ले चूर्ण करे. यह वातहारक चूर्ण मद्य, दही का जल, मद्य अथवा गरम जल इन के साथ पीवे. यह उदावर्त्त, अजीर्ण, प्लीहा, उदर, अंगपाक, भोजन करा हुआ विष और बवासीर इन सब को नाश करे तथा यह दीपन, शूलनाशक और गुल्मनाशक है और खांसी, श्वास और क्षय इन को नाश करे यह अग्निमुखचूर्ण कदाचित् खाली नहीं जाता ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पली पिप्पलीमूलं चित्रकाजाजिसैंधवम् ।
पीतं तु सुरया हंति गुल्ममाशु सुदुस्तरम् ॥

अर्थ-पीपल, पीपरामूल, चित्रक, जीरा और सैंधा निमक इन का चूर्ण करके सहत से देवे तो तत्काल गुल्मरोग का नाश होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगूग्रगंधाबिडशुंठ्यजाजीहरीतकीपुष्करमूलकुष्ठम् ।
भागोत्तरं चूर्णितमेतदिष्टं गुल्मोदराजीर्णविषूचिकासु ॥

अर्थ–हींग, वच, बिडनिमक, सोंठ, जीरा, हरड, पुहकरमूल और कूठ ये सब औषध भागोत्तरवृद्धि से लेकर चूर्ण करे. यह गोला, उदर, अजीर्णरोग और विषूचिका (हैजा) इन को दूर करे ॥

चित्रकादि चूर्ण

चित्रको नागरं हिंगु पिप्पली पिप्पलीजटा । चव्याजमोदा मरिचं प्रत्येकं कर्षसंमितम् ॥ स्वर्जिका च यवक्षारः सिंधु सौवर्चलं बिडम् । सामुद्रकं रोमकं च कोलमात्राणि कारयेत् ॥ एकीकृत्याखिलं चूर्णं भावयेन्मातुलिंगजैः । रसैर्दाडिमजैर्वापि शोषयेदातपेन च ॥ एतच्चूर्णं जयेद् गुल्मं ग्रहणीमामजां रुजम् । अग्निं च कुरुते दीप्तं रुचिकृत्कफनाशनम् ॥

अर्थ–चित्रक, सोंठ, भूनी हींग, पीपल, पीपरामूल, चव्य, अजमोद और मिरच ये आठ औषध एक २ कर्ष लेवे तथा सज्जीखार, जवाखार, सैंधानिमक, संचरनिमक, बिडनिमक, सामुद्रनिमक, पांगानिमक ये सात क्षार एक २ कोलप्रमाण लेवे फिर सब औषधों का चूर्ण कर बिजोरे के रस की पुट देवे अथवा अनारदाने के रस की पुट देवे फिर इस को धूप में सुखाय लेवे इस चूर्ण के सेवन करने से गोला, संग्रहणी, आमवात दूर होवे तथा अग्नि प्रदीप्त हो, मुख में रुचि आवे तथा कफ दूर होय ॥

त्रिफलादि चूर्ण

त्रिफला कांचनक्षीरी सतला नीलिनी वचा । त्रायंती हपुषा तिक्ता त्रिवृत्सैंधवपिप्पली ॥ पिबेद्धि चूर्णं कोष्णेन वारिमांसरसादिभिः । सर्वगुल्मोदरप्लीहकुष्ठार्शःशोथवारणम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, चोक, सातला (थूहर का भेद), नीली, वच, त्रायमाण, हऊबेर, कुटकी, निसोथ, सैंधानिमक और पीपल इन के चूर्ण को गरम जल के साथ अथवा गरम मांसरस के साथ देवे तो गोला, उदर, प्लीहा, कोढ, बवासीर और सूजन इन को नाश करे ॥

कुमारीयोग

गुल्मी कुमारिकामांसं कर्षार्धं गोघृतान्वितम् ।
गिलेद्व्योषाभयासिंधुसूक्ष्मचूर्णावधूलितम् ॥

अर्थ-घीगुवार का गूदा छः मासे, गौ का घी, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड और सैंधा निमक इन को मिलायके सेवन करे तो गुल्मरोग शांत होय ॥

नाराचचूर्ण

शतपुष्पा वचा कुष्ठकारवीजाजिधान्यकम् । द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं सठ्युग्रा चोपकुंचिका ॥ स्वर्णक्षीरीवाजिगंधाविशालाचित्रकाः समाः । त्रिवृद्दंती सतला च एषां द्वित्रिगुणानपि ॥ नाराचकमिदं ख्यातं चूर्णं श्रेष्ठं विरेचनम् । गुल्मानाहविषाजीर्णश्वासकासगलग्रहम् ॥ शोफार्शोग्रहणीदोषं गुल्मान् पंचविधानपि ॥

अर्थ-सोंफ, वच, कूठ, कलौंजी, जीरा, धनिया, सुहागा, जवाखार, पीपरामूल, कचूर और बडा जीरा, चोक, असगंध, इंद्रायन और चित्रक ये समान भाग लेवे. और निसोथ २, जमालगोटा ३ और सातला ३ भाग इस प्रमाण से लेकर चूर्ण कर लेवे. इस को **नाराचचूर्ण** कहते हैं. यह रेचनविषय में उत्तम है तथा गोला, अफरा, विष, अजीर्ण, श्वास, खांसी, गलग्रह, सूजन, बवासीर, संग्रहणी और पांच प्रकार के गोला इन को नाश करे ॥

पूतिकादि चूर्ण

पूतीकपत्रगजचिर्भटचव्यवह्निव्योषं च युक्तरचितं लवणोपधानम् । दध्ना विचूर्ण्य दधिमस्तुयुतं प्रयोज्यं गुल्मोदरश्वयथुपांडुगदोद्भवेषु ॥

अर्थ-कंजे के पत्ते, कचरिया, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल और निमक इन के चूर्ण को दही में घोटे. फिर इस को दही के जल में मिलाय देवे तो गोला, उदर, सूजन और पांडुरोग इन को दूर करे ॥

हस्तिकर्णादि चूर्ण

तर्कजंल्लोदरहरी हस्तिकर्णी च कर्षिका । तिलमूलकषायेण ब्रह्मदंड्यास्तु मूलकम् ॥ यष्टी त्रिकटुचूर्णं च युक्तं पानेथ गुल्मजित् ॥

अर्थ–हस्तिकर्णी के कंद को छाछ में पीसके १ तोले जलोदरवाले रोगी को देवे. तथा तिल की जड का काढा करके उस में ब्रह्मदंडी की जड, मुलहठी, सोंठ, मिरच और पीपल इन का चूर्ण डालके खाने को देवे तो गुल्म का नाश करे ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगु त्रिकटुकं पाठा हपुषा चाभया शठी। अजगंधा यवानी च तिंत्रिणी फलवेतसम्॥ सारिवा पौष्करं धान्यमजाजी चित्रको वचा। अभ्रकं तीक्ष्णकं ताप्यं लवंगं तुंबरूणि च॥ द्वौ क्षारौ लवणे द्वे च चव्यमेकत्र चूर्णयेत्। चूर्णमेतत्प्रयोक्तव्यमन्नपानेषु प्रत्यहम्॥ प्रातरद्याच्च चूर्णोयं मद्येनोष्णोदकेन वा। पार्श्वहृद्बस्तिशूलेषु गुल्मवातबलासके॥ आनाहे मूत्रकृच्छ्रे च गुदे योनौ च पीडिते। ग्रहण्यर्शोविकारेषु प्लीहपांड्वामयेरुचौ॥ उरोविबंधे हिक्कायां कासे श्वासे गलग्रहे। भावितं मातुलिंगस्य दाडिमस्य रसेन च॥ बहुशो गुटिका कार्या आर्द्रकस्य रसेन वा। नाम्ना हिंग्वादिकं चूर्णं शूलगुल्मविनाशनम्॥

अर्थ–हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, पाढ, हाऊबेर, हरड, कचूर, वनतुलसी, अजमायन, तंतडीक, अमलवेत, सारिवा, पोहकरमूल, धनिया, जीरा, चित्रक, वच, अभ्रकभस्म, पोलादलोह की भस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, लौंग, तुंबरू, सज्जीखार, जवाखार, सैंधा निमक, साम्भरनिमक और चव्य इन को समान भाग ले चूर्ण करे. इस को अन्न के साथ, जल के साथ अथवा प्रातःकाल मद्य के साथ अथवा गरम जल से देवे तो पार्श्वशूल, हृदय, बस्ति इन का शूल, गोला, वातकफ, अफरा, मूत्रकृच्छ्र और गुदा, योनि इन का शूल, संग्रहणी, बवासीर, प्लीहा, पांडुरोग, अरुचि, छाती का भारी होना, हिचकी, खांसी, श्वास, गलग्रह, इन को नाश करे. इस चूर्ण को अनारदाने के अथवा अदरख के रस में घोटके गोली बनाय लेवे और रोगी को देय. यह हिंग्वादि चूर्ण शूल, गोला इन को नाश करे ॥

विद्याधररस

सूतो गंधस्तालकस्ताम्रताप्यं तुत्थं सर्वं खल्वमध्ये तु पिष्ट्वा।
कृष्णाक्काथैः स्नुहिक्षीरैर्भावितं वास्तैर्मूत्रैर्नाम विद्याधरः स्यात्॥

निष्कार्धोयं श्लेष्मगुल्मं निहन्यात्पथ्यं युक्तं सर्वरोगे प्रशस्तम् ।
आदौ गुल्मे रक्तमोक्षं विधाय प्रौढः कार्यो यो विधिः सर्वजे वा ॥

अर्थ—पारा, गंधक, हरताल, ताम्रभस्म, सुवर्णमाक्षिक और लीलाथोथा इन सब को खरल कर पीपल के काढे में थूहर के दूध तथा बकरे के मूत्र में इन को खरल करे. इस को विद्याधर रस कहते हैं. इस को तीन मासे कफगुल्म पर देवे और सर्व रोगोक्त पथ्य देवे तो उस का नाश करे. रक्तगुल्म पर प्रथम रुधिर निकाले तथा जीर्ण होने पर देवे और सन्निपातज गुल्म का प्रतिकार करे ॥

वडवानलरस

तिक्तक्काथं पिबेदाज्यं भार्ङ्गीव्योषगुडान्वितम् ।
पुष्परोधे रक्तगुल्मे स्त्रीभिर्विद्याधरो रसः ॥

अर्थ—स्त्रियों के पुष्पावरोध (ऋतुधर्म न होने) पर भारंगी, सोंठ, मिरच, पीपल इन का काढा गुड डालके पीवे अथवा विद्याधर रस भक्षण करे ॥

गुल्मोदरगजारातिरस

सूतगंधकणापथ्यातुत्थारग्वधकान्द्दढम् । मर्दयेद्द्विदुग्धेन माषार्धं खादयेद्दिनम् ॥ गुल्मोदरगजारातिनाम्ना भैरवनिर्मितः । स्त्रीणां जलोदरं हंति पथ्यं शाल्योदनं दधि ॥ चिंचाफलरसस्यापि पानमस्मिन्प्रयोजयेत् ॥

अर्थ—पारा, गंधक, पीपल, हरड, नीलाथोथा, अमलतास का गूदा इन को समान भाग ले चूर्ण करे फिर थूहर के दूध से खरल करे. इस में से नित्य ४ रत्ती देवे. इसे गुल्म और उदररूप गज का शत्रु गुल्मोदरगजाराति इस नाम से भैरव ने उत्पन्न करा है. यह स्त्रियों के जलोदर का नाश करे इस पर दही भात पथ्य में देवे और इमली का रस पान करे ॥

उद्दामाख्य रस

सूतः कर्षः शांखवृक्षस्य नीरैः सर्पाक्ष्याद्भिः पेषयेदस्त्रमेकम् ।
भूमेः कुक्षौ पंचधैवं पुटित्वा गुंज्यत्तुल्यं चारुजेपालगर्भात् ॥
उद्दामाख्यः स्याद्रसः सर्पिषा यो गुंज्यायुग्मं पित्तगुल्मं निहंति ।
द्राक्षापथ्याक्काथ एवानुपानं वर्ज्यं सर्वं पित्तलं दाहकारि ॥

अर्थ—पारा १ तोला लेकर शंखपुष्पी के तथा सरफोका के रस में एक दिन खरल करे फिर इस को जमालगोटे की लुगदी में रखके अग्नि की पांच पुट देवे तो उद्दामनामक रस बने. यह दो रत्ती लेकर घी के साथ देवे तो गुल्मरोग का नाश करे. पित्तव्याधि पर दाख और हरड इन के काढे के अनुपान से देवे तथा पथ्य में संपूर्ण पित्तकारक और दाहकारक पदार्थ वर्जित है ॥

नाराच रस

शुद्धसूतसमं गंधं जेपालं त्रिफलासमम् ।
त्रिकटुं पेषयेत्क्षौद्रमिश्रं गुल्मं लिहन्हरेत् ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोयं रसोत्तमः ॥

अर्थ—पारा, गंधक, जमालगोटा, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल ये एकत्र खरल कर सहत में मिलाय के चाटे ऊपर से गरम जल पीवे तो गोले का नाश होय. इस को **नाराचरस** कहते हैं ॥

गुल्मकुठाररस

नागवंगाभ्रकं कांतं समं ताम्रं समांशकम् । जंबीरस्वरसैर्घृष्ट्वा वटी गुंजाप्रमाणिका ॥ मधुनार्द्रकनीरेण क्षारयुग्मेन सेविता । अजीर्णमम्लपित्तं च हृत्पार्श्वोदरशूलकम् ॥ नाम्ना गुल्मकुठारोयं सर्वान् गुल्मान्व्यपोहति ॥

अर्थ—शीशे की भस्म, रांगे की भस्म, अभ्रकभस्म और कांतलोह की भस्म ये समान भाग ले तथा सब की बराबर ताम्रभस्म लेवे. सब को जंभीरीनींबू के रस में १ रत्ती की गोली करे. इस को सहत और अदरख के रस में जवाखार और सुहागा डालके देवे तो अजीर्ण, अम्लपित्त और हृदय, पसवाडा और पेट इन के शूल को नाश करे. इस को गुल्मकुठाररस कहते हैं ॥

गुल्मभदेभसिंहरस

रसगंधवराटताम्रशंखविषवंगाभ्रककांततीक्ष्णमुंडम् । अहिहिंगुलटंकणं समांशं सकलं तत्रिगुणं पुराणकिट्टम् ॥ पशुमूत्रविशोधितं सुभृष्ट्वा त्रिफलाभृंगतथार्द्रकोत्थनीरैः । सुविशोष्य वरामृतालिवासास्वरसैरष्टगुणैः पुनर्नवोत्थैः ॥ पृथगग्निधृतं घनं विपाच्य गुटिका गुंजयुता निजानुपानैः । ज्वरपांडुतृषास्रपैत्त्य-

गुल्मक्षयकासस्वरमाग्निमांद्यमूर्छाः॥ पवनादिषु दुस्तराष्टरोगान् सकलान् पित्तहरं गदावृतं च। बहुना किमसौ यथार्थनामा सकलव्याधिहरो मदेभसिंहः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, कौडी, ताम्रभस्म, शंख, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, कांतलोह की भस्म, तीक्ष्णलोह, मुंडलोह, शीशा इन की भस्म, हींगलू, सुहागा ये सब समान भाग लेवे. तथा सब से तिगुनी त्रिफला और भांगरा इन की भावना देकर तैयार करी हुई पुरानी कीटी सब को एकत्र करके त्रिफला, गिलोय, कमलकंद और सोंठ इन सब का अठ गुना स्वरस लेकर पृथक् २ अग्नि पर रखके भावना देवे. जब गाढी हो जावे तब इस की एक एक रत्ती की गोली बनावे. इस गोली को रोगोक्त अनुपान के साथ देवे तो ज्वर, पांडु, श्वास, रक्तपित्त, गोला, क्षय, खांसी, स्वरभंग, मंदाग्नि, मूर्च्छा, वादी से आदि ले घोर अष्ट महारोग और संपूर्ण पित्त के रोग इन को नाश करे. बहुधा करके यह संपूर्ण व्याधि को नाश करे. इस को सर्वव्याधिहर रस कहते हैं. जैसे सिंह मत्त हाथी को नाश करे है उसी प्रकार यह रस संपूर्ण व्याधियों को नाश करे ॥

वज्रक्षार

सामुद्रं सैंधवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम्। टंकणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ अर्कक्षीरैः स्नुहिक्षीरैर्लालितं च विभावयेत्। अर्कपत्रं लिपेत्तेन रुद्ध्वा भांडे पुटे पचेत् ॥ तत्क्षारं चूर्णयित्वाथ त्र्यूषणं त्रिफलारजः। जीरकं रजनी वह्निर्नवकस्य च भागतः ॥ क्षारार्धं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत्। वज्रक्षारमिमं पूर्वं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना॥ सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलशोफेषु योजयेत्। अग्निमांद्ये त्वजीर्णे च भक्ष्यं निष्कद्वयं तथा॥ वाताधिके जले कोष्णे घृते पित्ताधिके हितः। कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनाले त्रिदोषनुत् ॥

अर्थ–समुद्रनिमक, सैंधानिमक, काचियानिमक, जवाखार, सोरा, सुहागा, सज्जी ये सब बराबर लेवे. सब का चूर्ण करके आक और थूहर के दूध में खरल कर फिर इस कजली की मिट्टी को आक के पत्तों पर लेप करके इन को एक हांडी में भरके मुख को बंद कर देवे. फिर इस को लघु पुट देकर निकाल लेवे बारीक पीसके

इस में आधा सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, जीरा, हलदी, चित्रक इन का चूर्ण डालके फिर खरल करके धर रखे. इस को वज्रक्षार कहते हैं. यह प्रथम शिव ने कहा है. यह सर्व उदर, गोला, शूल, सूजन और अग्निमांद्य, अजीर्ण इन पर आठ मासे खाय, वाताधिक्य होय तो गरम जल के साथ सेवन करे, पित्ताधिक्य होय तो घी के साथ और त्रिदोषाधिक्य में कांजी के साथ सेवन करे ॥

गुल्मरोग पर क्षार

स्वर्जिका यावशूकश्च क्षारयुग्ममुदाहृतम्। ज्ञेयौ वह्निसमौ क्षारौ स्वर्जिकायावशूकौ ॥ क्षाराश्चान्येपि गुल्मार्शोग्रहणीरुक्छिदः सराः। पाचनाः कृमिपुंस्त्वघ्नाः शर्कराश्मरिनाशनाः ॥

अर्थ–सज्जीखार और जवाखार ये दोनों क्षार अग्नि के समान देदीप्यमान हैं तथा आक, इमली, ओंगा, थूहर, केला, सहजना इत्यादिक जो और औषधों के क्षार वे सब गोला, बवासीर और संग्रहणी को दूर करते हैं. तथा दस्तावर होकर अग्नि को प्रदीप्त करे तथा कृमिरोग और पुरुषत्व (पुरुषार्थ) और शर्करा तथा पथरी इन को नाश करे हैं ॥

बत्ती

वातवर्चोनिरोधेषु सामुद्रार्द्रार्कसर्षपैः।
कृत्वा पायौ विधातव्या वर्तयो मरिचान्वितैः ॥

अर्थ–वायु और मल इन का रोध होने से समुद्रनिमक, अदरख, आक का दूध, सरसों और मिरच इन से कपडे को भिगोय बत्ती बनायके गुदा में रखे तो मल और वायु निकले ॥

चविकासव

चविकायास्तुलार्धं तु तदर्धं चित्रकस्य च। बाष्पिका पौष्करं मूलं षट्ग्रंथा हपुषा सठी ॥ पटोलमूलं त्रिफला यवानी कुटजत्वचः। विशाला धान्यकं रास्ना दंती दशपलोन्मिता ॥ कृमिघ्नमुस्तमंजिष्ठा देवदारु कटुत्रिकम् । भागान्पंचपलानेतानष्टद्रोणेंभसः पचेत् ॥ द्रोणे शेषे रसे पूते देयं गुडशतत्रयम् । धातक्या विंशतिपलं चातुर्जातं पलाष्टकम् ॥ लवंगव्योषकंकोलं पादिकानि प्रकल्पयेत्। निदध्यान्मासमेकं तु घृत-

भांडे सुसंस्कृते॥चतुःपलां पिबेन्मात्रां प्रातः पीता नियच्छति। सर्वगुल्मविकारांश्च प्रमेहांश्चैव विंशतिम्॥प्रतिश्यायं क्षयं कासमष्ठीलां वातशोणितम्। उदराण्यंत्रवृद्धिं च चविकाख्यो महासवः॥

अर्थ—चव्य २ तोले, चित्रक १ तोले, रुदंती, पुहकरमूल, वच, हाऊबेर, कचूर, पटोल की जड, त्रिफला, अजमायन, कूडा की छाल, इन्द्रायन, धनिया, रास्ना और दंती ये प्रत्येक दश २ पल लेवे. वायविडंग, नागरमोथा, मजीठ, देवदारु, सोंठ, मिरच, पीपल ये प्रत्येक पांच २ पल ले इस को जवकुट करके १४ मन २५ सेर जल में डालके औटावे जब एक द्रोण अर्थात् २०४८ तोले जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे और इस में ८० धाय के फूल, ३२ तोले चातुर्जात, लौंग और कंकोल ये आठ २ तोले डाले फिर घी के चिकने बासन में इन सब को भरके एक महीने पर्यंत धरा रहने देवे तो आसव सिद्ध होय इस की मात्रा ४ तोले की है. प्रातःकाल इस को पीवे तो संपूर्ण गुल्म के विकार, वीस प्रकार के प्रमेहरोग, प्रतिश्याय (सरेकमा), क्षय, खांसी, अष्ठीला, वातरक्त, उदररोग और अंत्रवृद्धि इन सब को यह चविकाख्य आसव दूर करे यह महाआसव है॥

कुमारीआसव

कुमार्याश्च रसद्रोणे गुडं पलशतं तथा। तुलांघ्रिसंख्या विजया क्वाथयेत जलार्मणे॥ चतुर्थांशावशेषे तु पूते तस्मिन्निधापयेत्। मधुनश्चाढकं दत्त्वा धातक्याः पलषोडशम्॥स्निग्धभांडे विनिक्षिप्य कल्कं चैव प्रदापयेत्। जातीफलं लवंगं च कंकोलं च कबाबकम्॥ जटिला चव्यचित्रं च जातीपत्री सकर्कटम्। अक्षं पुष्करमूलं च प्रत्येकं च पलं पलम्॥ मृतशुल्वं तथा लोहशुक्तिमात्रं प्रदापयेत्। भूम्यां वा धान्यराशौ वा स्थापयेद्दिनविंशतिः॥ ततोद्धृत्य पिबेन्मात्रां यथाचाग्निबलाबलम्। पंचकासं तथा श्वासं क्षयरोगं च दारुणम्॥ उदराणि तथाष्टौ च षडर्शांसि च नाशयेत्। वातव्याधिमपस्मारमन्यान् रोगान्सुदुस्तरान्॥ जाठरं कुरुते दीप्तं कोष्ठशूलं च नाशयेत्। गुल्माष्टकं नष्टपुष्पं नाशयेत्पक्षमेकतः॥ कुमारिकासवो ह्येष बृहस्पतिविनिर्मितः॥

अर्थ–घीगुवार का रस २०४८ तोले, गुड ४०० तोले भांग १०० तोले और जल १०२४ तोले ले इन का काढा करे. जब चतुर्थांश रहे तब उतार के छान लेवे और इस में २५६ तोले सहत, ६४ तोले धाय के फूल डालके घी के चिकने बासन में भरके उस के मुख पर जायफल, लौंग, कंकोल, कबाबचीनी, जटामांसी, चव्य, चित्रक, जावित्री, कांकडासिंगी, बहेडा, पुहकरमूल इन प्रत्येक का कल्क चार २ तोले और तामे की भस्म, लोहभस्म ये दो दो तोले डालके मुख बंद कर धरती में अथवा धान की राशि में २० दिन गाढ देवे. फिर इस को निकाल लेवे. यह कुमार्यासव रोगी का बलाबल और अग्नि को विचारके देना चाहिये. यह ५ प्रकार की खांसी, श्वास, असाध्य क्षयरोग, ८ प्रकार के उदर, ६ प्रकार की बवासीर इन को नाश करे. यह वातव्याधि, अपस्मार (मृगी) और जो अन्य रोग इन पर देवे तो जठराग्नि को प्रदीप्त करे, पेट के शूल को नष्ट करे, आठ प्रकार के गुल्म, नष्टपुष्प इन सब रोगों को १५ दिन में नाश करे. यह कुमारिकासव बृहस्पति ने कहा है ॥

दंतीहरीतकी लेह

जलद्रोणे विपक्तव्या विंशतिः पंच चाभया । दंत्याः पलानि तावंति चित्रकस्य तथैव च ॥ तेनाष्टभागशेषेण पलैर्दंतीसमं गुडम् । ताश्चाभयास्त्रिवृच्चूर्णतैले चापि चतुःपले ॥ पलमेकं कणाशुंठ्योः सिद्धे लेहे सुशीतलम् । क्षौद्रे तैलसमं दद्याच्चातुर्जातपलं तथा ॥ ततो लेहः पलं लीढ्वा जग्ध्वा चैकां हरीतकीम् । सुखं विरिच्यते स्निग्धो दोषप्रस्थप्रनामयः ॥ प्लीहश्वयथुगुल्मार्शोहृत्पांडुग्रहणीगदाः । शाम्यंति क्लेशविषमज्वरकुष्ठान्यरोचकम् ॥

अर्थ–हरड १०० तोले, दंती १०० तोले, चित्रक की छाल १०० तोले इन का काढा करके उस में गुड १०० तोले तथा उसी काढे में हरड १६ तोले, निसोथ का चूर्ण १६ तोले, तेल १६ तोले और पीपल, सोंठ ये चार २ तोले इस प्रमाण सब को एकत्र कर लेह सिद्ध करे. जब यह शीतल हो जावे. तब इस में सहत १६ तोले और दालचीनी, इलायची, पत्रज और नागकेशर इन सब का चूर्ण चार २ तोले लेके डाले तो यह अवलेह तयार हो. इस में से चार तोले अवलेह सेवन करने से और एक हरड खाय तो स्निग्ध कोठा होकर सुखपूर्वक दस्त हों तथा प्लीहा, सूजन, गोला, बवासीर, हृद्रोग, पांडुरोग, संग्रहणी, विषमज्वर, कोढ, अरुचि ये शान्त हों ॥

चिंचाशंखवटी

चिंचाक्षारं स्नुहिक्षारमर्कक्षारं पलं पलम् । द्विपलं शंखभूतिं च रामठं च पलार्धकम् ॥ लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत् । क्षारद्वयं पलार्धं च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ जंबीरकरसैर्मर्द्यमनलस्य दिनत्रयम् । भृंगराजस्य निर्गुंडीमुंड्योश्चैव पृथग्द्रवैः ॥ आर्द्रकस्य रसेनैव प्रत्येकं मर्दयेद्दिनम् । बदरीबीजमात्रां तु वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ एकैकां भक्षयेत्प्रातः पंच गुल्मान्व्यपोहति । सर्वशूलं निहंत्याशु ह्यजीर्णं च विषूचिकाम् ॥ मंदाग्निं नाशयेच्छीघ्रं पथ्यं तैलाम्लवर्जितम् । चिंचाशंखवटीनामा ग्रहणीरोगहृत्परा ॥

अर्थ–इमली, थूहर, आक इन का खार चार २ तोले, शंखभस्म ८ तोले, हींग २ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, कालानिमक, कचियानिमक, बिडनिमक, साह्मरनिमक, खारीनिमक, सैंधानिमक, मट्टी का निमक, सूर्यखार, ये सब चार २ तोले, सज्जीखार, जवाखार दो दो तोले इस प्रमाण से ले एकत्र चूर्ण करे और जंभीरी के रस में खरल करे. फिर चित्रक के काढे में तीन दिन खरल करे. फिर भांगरा, निर्गुंडी, गोरखमुंडी और अदरख इन के रस में एक २ दिन पृथक् २ खरल करे. फिर बेर की गुठली के बराबर गोली बनावे. प्रातःकाल एक एक भक्षण करे तो पांच प्रकार के गोले, सर्व शूल, अजीर्ण, विषूचिका, मंदाग्नि इन को शीघ्र नाश करे. इस का खानेवाला पथ्य में तेल, खटाई न खाय. इस को चिंचाशंखवटी कहते हैं. यह संग्रहणीरोग का नाश करे ॥

क्षारादि चूर्ण

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपंचकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ–सुहागा, जवाखार, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, नील और पांचों निमक, इन सब का चूर्ण एकत्र करके घी के साथ सेवन करे तो संपूर्ण गुल्म और उदररोग इन को नष्ट करे ॥

सूर्यपुट से शंखद्राव

प्रस्थं जंबीरनीरं पलसुपरिमितं काकतुंडस्य मूलं कर्षार्धं स्व-

जिकायास्त्रिपटुपलयुतं नव्यसारं पलार्धम् । तत्सर्वं सूर्यतापे मुनिदिनयुगुलं काचकुप्यां निधाय हन्याद् गुल्मं सुतीव्रं जठरमलरुजं शंखकद्रावसंज्ञः ॥

अर्थ–जंभीरीनींबू का रस १ सेर, लाल काकडोडी की जड ४ तोले, सज्जीखार छः मासे, हरड, बहेडा, आंवला चार २ तोले, नोसद्दर २ तोले इन सब को एकत्र शीशी में भर १४ दिन पर्यंत धूप में रक्खा रहने देवे. इस को शंखद्राव कहते हैं. यह घोर तीव्र गोला, उदर, मल की कठोरता इन पर देवे ॥

द्वितीयशंखद्राव

फटकीपलमेकं च सैंधवं पलमेव च । द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसागरम् ॥ चतुःपलं सुराक्षारं पलार्धं कासिसं तथा । डमरूयंत्रयोगेन चूल्यां वै बदरींधनैः ॥ साधयेल्लाघवात्तूर्णं शंखद्रावरसः परः । गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥

अर्थ–फटकरी ४ तोले, सैंधानिमक ४ तोले, जवाखार ८ तोले, नोसद्दर ८ तोले, सोरा १६ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सब क्षारों को डमरूयंत्र में भरके चूल्हे पर चढाय नीचे बेर की लकडी की अग्नि देवे और बडी होशयारी के साथ इस में से तेजाब को खींच लेवे. इस को शंखद्राव कहते हैं. यह द्राव उत्तम है. इस को गुल्मादिक सर्व रोग पर देवे तो सुख होय ॥

तीसरा शंखद्राव

सैंधवं च यवक्षारं नव्यसारं तथैव च । प्रत्येकं द्विपलं ग्राह्यं सुराक्षारं चतुःपलम् ॥ फटकीफलमेकं च पलार्धं कासिसं तथा । सर्वमेकत्र संयोज्यं डमरूयंत्रमध्यगे ॥ चूल्यां प्ररोहयेत्तत्तु ज्वालयेत्खदिरेंधनैः । द्रावितं तत्समादाय तेजोरूपं जलप्रभम् ॥ द्रावयेदखिलान् धातून् वराटांश्च न संशयः । शंखद्रावरसो नाम गुल्मोदरहरः परः ॥

अर्थ–सैंधानिमक, जवाखार, नौसद्दर ये प्रत्येक आठ २ तोले, सोरा १६ तोले, फटकरी ४ तोले, हीराकसीस २ तोले इन सब को एकत्र कर डमरूयंत्र में भर ऊपर से कपडमिट्टी करके चूल्हे पर चढावे नीचे खैर की लकडियों की आंच देवे. इस में से जो द्रव (तेजाब) खींचे उस को अलग धर देवे यह जल के समान स्वच्छ

होता है . यह संपूर्ण धातुओं को द्राव करे है तथा कौडी को इस में डाले तो कौडी गल जावे इस में क्या संदेह है. इस को शंखद्राव कहते हैं. यह गुल्म और उदर को नाश करे॥

क्षाराष्टक

पलाशवज्रशिखरीचिंचार्कतिलनालजः । यावकः स्वर्जिका चेति क्षाराश्चाष्टौ प्रकीर्तिताः॥ गुल्मशूलहराः क्षारा अजीर्णस्य च पाचनाः ॥

अर्थ-पलास (ढाक), थूहर, ओंगा, इमली, आक और तिलों की नाल इन की राख से निकाले हुए क्षार और जवाखार तथा सज्जीखार ये आठ क्षार गुल्म, शूल इन को नाश करे तथा अजीर्ण को पचावे ॥

शरपुंखक्षार

शरपुंखस्य लवणं पथ्याचूर्णं समं द्वयम् ।
शाणप्रमाणमश्नीयाच्चूर्णं गुल्मगदापहम् ॥

अर्थ-सरफोके का क्षार और हरड का चूर्ण ये दोनों चार २ मासे लेवे इन को भक्षण करे तो गुल्मरोग को नाश करे ॥

गुल्मरोग पर पथ्य

स्नेहः स्वेदो विरेकश्च बस्तिर्बाहुशिराव्यधः । लंघनं वर्त्तिरभ्यंगः स्नेहः पक्के तु पाटनम् ॥ संवत्सरसमुत्पन्नाः कलमा रक्तशालयः। खंडः कुलत्थयूषश्च धन्वमांसरसः सुरा ॥ गवामजायाश्च पयो मृद्वीका च परूषकम् । खर्जूरं दाडिमं धात्री नागरं चाम्लवेतसम् ॥ तक्रमेरंडतैलं च लशुनं बालमूलकम् । पत्तूरो वास्तुकं शिग्रु यवक्षारो हरीतकी ॥ रामठं मातुलुंगं च त्र्यूषणं सुरभीजलम् । यदन्नं स्निग्धमुष्णं च बृंहणं लघु दीपनम् ॥ वातानुलोमनं चैव पथ्यं गुल्मे नृणां भवेत् ॥

अर्थ-स्नेहन, स्वेदन, विरेचन, बस्तिकर्म, बाहु (हाथ) की फस्त खोलना, लंघन, वर्त्ती, तेल आदि की मालिस, पके गुल्म को उखाडना, एक वर्ष के पुराने कलमी और लाल चावल, खांड, कुलथी, यूष, जंगली जीवों का मांस रस, गौ का

और बकरी का दूध, दाख, फालसे, खिजूर, अनार, आंवले, नारंगी, अमलवेत, छाछ, अंडी का तेल, लहसन, कच्ची मूली का साग, पत्तों का साग, वथुआ, सहजना, जवाखार, हरड, हींग, बिजोरा, त्रिकुटा, गोमूत्र और जो अन्न चिकना, गरम, बलकर्त्ता, हलका, दीपन, बात को अनुलोम करनेवाला है वह सब गुल्म (गोले) के रोग में मनुष्यों को पथ्य होता है ॥

गुल्मरोग पर अपथ्य

माषादयः शमीधान्यं शूकधान्यं यवादयः । वातकारीणि सर्वाणि विरुद्धान्यशनानि च ॥ वल्लूरं मूलकं मत्स्यं मधुराणि फलानि च । शुष्कशाकं शमीधान्यं विष्टंभीनि गुरूणि च ॥ अधोवायुशकृन्मूत्रश्रमश्वासाश्रुधारणम् । वमनं लंघनं पानं गुल्मरोगे विवर्जयेत् ॥

अर्थ—उडद आदि फली के धान और जों से आदि ले शूकधान्य, संपूर्ण वात करनेवाली वस्तु, विरुद्ध पदार्थ का भोजन, सूखा हुआ मांस, मूली, मछली, मीठे २ फल, सूखे साग, फली से प्रगट होनेवाले धान, विष्टंभकारी, भारी पदार्थ का सेवन, अधोवायु (पाद), मल, मूत्र, श्रम के श्वास को और आंसुओं को रोकना, वमन करना, लंघन करना और अधिक जल का पीना गुल्म (गोले) के रोग में वर्जित है ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे गुल्मरोगस्य निदान-चिकित्सा समाप्ता ।

हृद्रोगकर्मविपाकः ।

उदक्या वीक्षितं भुक्त्वा जायते कृमिलोदरः ।
गोमूत्रयावकाहारः सप्तरात्रेण शुध्यति ॥

अर्थ—रजोदर्शनवाली स्त्री के देखे हुए अन्न को जो प्राणी भोजन करता है उस के उदर में कृमि उत्पन्न होती है. इस को सात दिन गोमूत्र और जों इन का आहार करे तो शुद्धि होवे ॥

अभक्ष्यभक्षणे चैव जायंते कृमयो हृदि ।
अथवा तद्विशुद्ध्यर्थमुपोष्यं भीष्मपंचकम् ॥

अर्थ—जो प्राणी अभक्ष पदार्थ को भक्षण करता है उस के उदर में कृमि उत्पन्न होती हैं वह प्राणी कार्तिक के महीने में भीष्मपंचकव्रत करे तो शुद्ध होय ॥

गजे च निहते वाश्वे कृमिकुक्षिस्तु जायते ॥

अर्थ–जो प्राणी हाथी अथवा घोडे को मारता है वह इस पाप से उदर में कृमिरोगवाला होता है ॥

मृते भर्तरि या नारी नीलीवस्त्रं प्रधारयेत् ।
सा मृता नरकं याति कृमिकुक्षिस्ततः परम् ॥

अर्थ–पति के मरने पर जो स्त्री नीले रंग के वस्त्र को धारण करे वह मरने पर नरकों में जाय और फिर दूसरे जन्म में उस के पेट में कृमि होवें ॥

ज्योतिःशास्त्रद्वारा निर्णय

पाटितहृदयाचिहिबुके निर्वाहनबांधवार्तिसतिसौख्यम् ।
बाल्यो व्याधितदेहो नखरोमधरो भवेत् शौरः ॥

अर्थ–जन्मकाल में चतुर्थस्थान में जिस के पापग्रह होवें तो उस को उरःक्षत, बंधुपीडा, बाल्य अवस्था में ही शरीर को व्याधि तथा नख केश इन का धारण करनेवाला होवे ॥

हृद्रोगनिदान

अत्युष्णगुर्वम्लकषायतिक्तैः श्रमाभिघाताध्ययनप्रसंगैः ।
संचिन्तनैर्वेगविधारणैश्च हृदामयः पंचविधः प्रदिष्टः ॥

अर्थ–अति गरम, अति भारी, अति खट्टा, अति कषेला, अति कडुवा ऐसे पदार्थ सेवन करने से श्रम (धनुष आदि का खेंचना), अभिघात (हृदय में चोट लगना) और भोजन के ऊपर भोजन नित्य करने से, संचिंतन (राजा के भय से चिंता) मलमूत्र आदि वेगों के रोकने से, वातादिक के क्षय और सन्निपात करके तथा कृमि से हृदय का रोग होय है वह पांच प्रकार का है ॥

संप्राप्ति

दूषयित्वा रसं दोषा विगुणा हृदयं गताः ।
हृदि बाधां प्रकुर्वन्ति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥

अर्थ–कुपित भये दोष रस को (हृदय में जो रहता है) दुष्ट करके हृदय में अनेक प्रकार की पीडा करे उस को हृदयरोग कहते हैं ॥

वातजन्य हृदयरोग

आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा ।
निर्मथ्यते दीर्यते च स्फोट्यते पाट्यतेपि च ॥

अर्थ–वातज हृदयरोग में हृदय ईंचासरीखा, सुई से चोटनेसरीखा, फोरनेसरीखा, दो टुकडा करने के समान, मथने के समान, कुहाडी से फारने के समान पीडा करे है॥

पंचमूलक्काथ

वातोपसृष्टे हृदये वामयेत्स्निग्धमातुरम् ।
द्विपंचमूलिकाथेन सस्नेहलवणेन वा ॥

अर्थ–वातजन्य हृदयरोग पर स्नेहपान करके वमन कर देवे अथवा दशमूल के काढे में स्नेह और सैंधव डालके पीवे ॥

पिप्पल्यादि चूर्ण

पिप्पल्येला वचा हिंगु यवक्षारोथ सैंधवम् । सौवर्चलमथो शुंठी दीप्यश्चेति विचूर्णितम् ॥ पलं धान्याम्लकौलित्थदधिमद्यव-सादिभिः । पाययेच्छुद्धदेहस्य वातहृद्रोगशांतये ॥

अर्थ–पीपल, इलायची, वच, हींग, जवाखार, सैंधानिमक, संचरनिमक, सोंठ, अजमायन इन का चूर्ण तोले २ भर ले तथा कांजी अथवा कुलथी का जल अथवा दही अथवा मद्य अथवा मांस स्नेह इन में से किसी एक के साथ वमन अथवा रेचन से शुद्धि हुए मनुष्य को पिलावे तो वातहृदयरोग शांत होवे ॥

पुष्करादि कल्क

सुपुष्कराख्यं फलपूरमूलं महौषधं शठ्यभया च कल्कः ।
क्षीराम्लसर्पिर्लवणैर्विमिश्रः स्याद्वातहृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ–पुहकरमूल, बिजोरे की जड, सोंठ, कचूर, हरड इन का कल्क दूध अथवा कांजी अथवा घी अथवा सैंधानिमक मिलायके खाय तो वातहृद्रोगनाश होय ॥

पुनर्नवादितैल

पुनर्नवादारुसपंचमूलरास्नायवाकोलकपित्थबिल्वम् ।
पक्त्वा जले तेन पचेच्च तैलमभ्यंगपानेनिलहृद्ग्रहघ्नम् ॥

अर्थ–पुनर्नवा, दारुहलदी, पंचमूल, रास्ना, यव, घी, बेर, कैथ, बेलफल इन के काढे के साथ सिद्ध करे हुए तेल को मालिस करे अथवा पीवे तो वातजन्य हृदय-रोग नष्ट होय. इस को पुनर्नवादि तैल कहते हैं ॥

पित्तजन्यहृदयरोगनिदान

तृष्णोष्णदाहमोहाः स्युः पैत्तिके हृदयक्लमः ।
धूमपानं च मूर्च्छा च स्वेदः शोषो मुखस्य च ॥

अर्थ-पित्त के हृदयरोग में प्यास, किंचित् दाह, मोह और हृदय की ग्लानि, धूआं निकलतासा मालूम होय, मूर्च्छा, पसीना और मुख का सूखना ये लक्षण होय हैं ॥

सामान्यचिकित्सा

शीताः प्रदेहाः परिषेचनं च तथा विरेको हृदि पित्तदुष्टे ॥

अर्थ-पित्तजन्य हृदयरोग पर शीतल लेप, जल का छिडकना, रेचन ये उपचार करे ॥

द्राक्षादि चूर्ण

द्राक्षासिताक्षौद्रपरूषकैः स्याच्छुद्धे च पित्तापहमन्नपानम् ॥

अर्थ-पित्तजन्य हृदयरोग पर जुल्लाब करायके शुद्ध होने पर दाख, मिश्री, सहत, फालसे इन को एकत्र करे हुए ऐसे अन्न और पान देने चाहिये ॥

श्रीपर्ण्यादि रेचन और वमन

श्रीपर्णी मधुकं क्षौद्रं सिता गुडजलैर्वमेत् ।
पित्तोपसृष्टे हृदये विरेकः प्रोक्तो हि हृद्रोगहरो नराणाम् ॥

अर्थ--कायफल, मुलहटी, सहत, मिश्री, गुड और जल इन का वमन देवे अथवा विरेचन देवे तो पित्तजन्य हृदयरोग शांत होय ॥

हारहूरादि चूर्ण

हारहूराहरीतक्योस्तुल्यं शर्करया रजः ।
पीतं हिमांबुना हंति पित्तहृद्रोगमंजसा ॥

अर्थ-काली दाख, हरड इन के चूर्ण के साथ मिश्री लेकर एकत्र कर शीतल जल के साथ पीवे तो पित्तजन्य हृदयरोग को तत्काल नाश करे ॥

अर्जुनादि क्षीर

अर्जुनस्य त्वचा सिद्धं क्षीरं पित्तहृदर्तिजित् ।
सितया पंचमूल्या वा बालया मधुकेन वा ॥

अर्थ-अर्जुन (कोह) वृक्ष की छाल के काढे के अथवा लघुपंचमूल के काढे के साथ अथवा मुलहटी इन के साथ सिद्ध करा हुआ दूध पित्तहृदयरोगनाशक जानना ॥

कसेरुकादि क्वाथ

कसेरुकाशैवलशृंगवेरप्रपौंडरीकं मधुकं बिसं च ।
ग्रंथिश्च सर्पिः पयसा पचेत्तैः क्षौद्रान्वितं पित्तहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ-कचूर, काई, सोंठ, पुंडरीकवृक्ष, मुलहटी, कमल की डंडी, बांस की गांठ इन के चूर्ण को घृत, दूध इन को एकत्र औटायके सहत डालके पीवे तो पित्तहृदय-रोगनाश करे ॥

कफजहृद्रोगनिदान

गौरवं कफसंस्रावोऽरुचिः स्तंभोग्निमार्दवम् ।
माधुर्यमपि चास्यस्य बलासा वर्त्तते हृदि ॥

अर्थ-कफ से हृदय व्याप्त होने से भारीपना, कफ का गिरना, अरुचि, हृदय जकड जाय, मंदाग्नि, मुख में मिठास ये लक्षण होते हैं ॥

कफजन्यहृद्रोग पर सामान्य चिकित्सा

हृद्रोगे कफजे स्विन्नं सुवातं लंघितं नरम् ।
कफघ्नैर्भेषजैर्युंज्याज्ज्ञात्वा दोषं बलाबलम् ॥

अर्थ-कफजन्य हृदयरोग पर पसीने निकाले, वमन कराय, लंघन करायके मनुष्य के दोषों का बलाबल विचारके कफघ्न उपचार करे ॥

त्रिवृतादि चूर्ण

त्रिवृच्छठी बला रास्ना शुंठी पथ्या सपौष्करा ।
चूर्णिता वा शृता मूत्रे पातव्या कफहृद्गदे ॥

अर्थ-निसोथ, कचूर, खिरेटी, रास्ना, सोंठ, हरड और पुहकरमूल इन का काढा अथवा चूर्ण को गोमूत्र के साथ पीवे तो हृदयरोग को नाश करे ॥

सूक्ष्मैलादि चूर्ण

सूक्ष्मैला मागधीमूलं प्रलीढं सर्पिषा सह ।
नाशयेदाशु हृद्रोगं कफजं सपरिग्रहम् ॥

अर्थ-छोटी इलायची, पीपरामूल इन का चूर्ण घी के साथ चाटे तो उपद्रवस-हित कफजन्य हृदयरोग को नाश करे ॥

सन्निपातज हृदयरोगनिदान

विद्यात्त्रिदोषं त्वपि सर्वलिङ्गम् ॥

अर्थ–जिस में सब लक्षण मिलते होंय वह त्रिदोष का हृद्रोग जानना, इस में कुछ भी अपथ्य होने से गांठ उत्पन्न होती है, उस गांठ से कृमि पैदा होय हैं, ऐसे चरक में कहा है ॥

त्रिदोषजहृद्रोग की चिकित्सा

त्रिदोषजे लंघनमादितः स्यादन्नं तु सर्वेषु हितं विधेयम् ।
चूर्णानि सर्पींषि च वक्ष्यमाणान्यत्र प्रयोज्यानि भिषग्भिराशु ॥

अर्थ–त्रिदोषजन्य हृदयरोग पर प्रथम लंघन करे तथा संपूर्ण हृदयरोगों पर हितकारी अन्न भोजन करे तथा आगे लिखे हुए चूर्णों को घी में मिलायके त्रिदोष जन्य हृदयरोग पर देवे ॥

कृमिजहृद्रोगनिदान

तीव्रार्तितोदं कृमिजं सकण्डूं ॥ उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृ-
ल्लासकस्तमः । अरुचिः श्यावनेत्रत्वं शोषश्च कृमिजे भवेत् ॥

अर्थ–तीव्र पीडा करके तथा नोचने की सी पीडा करके तथा खुजली करके युक्त ऐसा हृद्रोग कृमिजन्य जानना. उत्क्लेद (ओकारी आने के समान मालूम हो), थूकना, तोद (सुई चुभाने की सी पीडा), शूल, हृल्लास, अंधेरा आवे, अरुचि, नेत्र काले पड जांय और मुखशोष यह लक्षण कृमिज हृदयरोग में होते हैं. जय्यट का यह मत है कि (उत्क्लेद से लेकर तम पर्यंत) त्रिदोष के लक्षण कहे हैं जैसे तोद, शूल ये वादी से होंय. उत्क्लेद, हृल्लास और ष्ठीवन ये कफ से और तम ये पित्त से लक्षण होते हैं और अरुचि से लेकर शोषपर्यन्त कृमिज हृद्रोग के लक्षण जानने, इस विषय में प्रत्येक आचार्यों के भिन्न भिन्न मत हैं ॥

हृदयरोग के उपद्रव

क्लोमसादो भ्रमः शोषो ज्ञेयास्तेषामुपद्रवाः । कृमिजे कृमिजा-
तीनां श्लेष्मकाणां च ये मताः ॥ संस्तंभः सज्वरं घोरं रूक्ष-
स्पर्शासहं गुरु । आध्मानकुक्षिहृत्कंठवातविण्मूत्ररोधता ॥
तंद्रारोचकशूलानि तस्य लिंगानि निर्दिशेत् ॥

अर्थ–क्लोम कहिये पिपासा (प्यास) स्थान उस में ग्लानि होय, भ्रम, शोष ये सब उन हृद्रोगों के उपद्रव जानने और कफ का कृमिरोग के उपद्रव पिछाडी कह आये हैं सोही कृमिज हृद्रोग के लक्षण होते हैं. और स्तंभ, घोर ज्वर और हृदय रूक्ष भारी होता है और उस का स्पर्श सहा नहीं जाता. आध्मान होता है, कुक्षी, हृदय, अपानवायु, विष्ठा, मूत्र इन का निरोध, तंद्रा, अरोचक, शूल ये लक्षण होते हैं ॥

कृमिहृद्रोग की सामान्यचिकित्सा

हृद्रोगे कृमिजे कार्यं लंघनं चापतर्पणम् ।
पश्चात्कृमिहरं कर्म कृमिरोगोक्तमाचरेत् ॥

अर्थ—कृमिजन्य हृदयरोग पर लंघन, रेचन ये प्रथम करके पश्चात् कृमिरोग पर कहे ऐसे कृमिनाशक उपचार करे ॥

गोमूत्रपान

कृमिजे च पिबेन्मूत्रं विडंगामयसंयुतम् ।
हृदि स्थिताः पतंत्येव ह्यसाध्याः कृमयो नृणाम् ॥

अर्थ—कृमिजहृदयरोग पर गोमूत्र में वायविडंग और कूठ का चूर्ण डालके पीवे तो पेट में से असाध्य भी कृमि गिर जाँयगे ॥

दुग्धपान

चतुर्विंशतिपलं क्षीरं गवामथ पचेच्छनैः । द्विरष्टपलकं याव-त्तावत्कुर्यात्तु शीतलम् ॥ सिता क्षौद्रं घृतं तस्मिन् दुग्धे चार्ध-पलं क्षिपेत् । कर्षकं पिप्पलीचूर्णं क्षिप्त्वा पेयं हितं परम् ॥ स-र्वदोषोत्थहृद्रोगं ज्वरं कासं क्षयं जयेत् ॥

अर्थ—छियाणवे ९६ तोले गौ के दूध को मंदाग्नि पर धरके अधौटा करे फिर उतारके शीतल कर लेवे और इस में मिश्री, सहत, घी ये दो दो तोले डालके तथा पीपल का चूर्ण एक तोला डालके पीवे तो सर्वदोषजन्य हृदयरोग, ज्वर, खांसी, क्षय इन को पराजय करे ॥

पौष्करादिक्काथ

क्काथः कृतः पौष्करमातुलिंगपलाशभूतीकसठीसुराह्वैः ।
सनागराजाजिवचायवाह्वः सक्षार उष्णो लवणेन पेयः ॥

अर्थ—पुहकरमूल, बिजोरा, पलास, अजमायन, कचूर, देवदारु, सोंठ, जीरा और वच इन का काढा कर उस में जवाखार, सज्जीखार, सैंधानिमक, संचरनिमक ये डालके गरम २ पीवे तो हृदयरोग अच्छा होय ॥

दशमूलादि क्काथ

दशमूलकृतः क्काथः सयवक्षारसैंधवः ।
हृद्रोगगुल्मशूलार्ति कासं श्वासं च नाशयेत् ॥

अर्थ-शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, बेलगिरी, अरनी, टेंटू, कंभारी, पाढ, इन दशों की जड लेवे इन का काढा करे उस में जवाखार और सैंधा निमक डालके पीवे तो इस से उर में जो रोग होता है वह तथा गोले का शूल तथा श्वास, खांसी इन का नाश करे ॥

एरंडादिक्काथ

पवनारिजटा द्विपलाष्टगुणे सलिले पचिता यवजेन युतम् ।
क्कथनं हृदयोद्भवपार्श्वकटीशूलविदारणसिंहनखम् ॥

अर्थ-अंड की जड ८ तोले को अठगुने जल में डालके औटावे इस में जवाखार डालके पीवे तो हृदयरोग, कूख, कमर इन के शूल को विदारण करने में सिंह के नख के समान है ॥

बाह्लीकादि क्काथ

बाह्लीकविश्वदहनायवयावशूकैः पथ्याभयाविडकणारुचकैर्निहन्यात् । क्काथः सपुष्करजटाभववारि पीतो हृद्रोगमग्निविकलत्वमतिप्रबद्धम् ॥

अर्थ-हींग, सोंठ, चित्रक की छाल, जवाखार, हरड, कूठ, बिडनिमक, पीपल, संचरनिमक और पुहकरमूल इन का काढा पीवे तो हृदयरोग, मंदाग्नि और मलबद्धता इन को नाश करे ॥

नागरादिक्काथ

नागरस्य पिबेदुष्णं कषायं चाग्निवर्धनम् ।
कासश्वासानिलहरं शूलहृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ-सोंठ का गरम २ काढा पीवे तो जठराग्नि बढे तथा श्वास, खांसी, वादी, शूल और हृदयरोग इन को नाश करे ॥

नागबलादि दुग्धपान

मूलं नागबलायास्तु गोदुग्धेन च पाचयेत् । हृद्रोगश्वासकासघ्नं कुंकुमायाश्च वल्कलम् ॥ रसायनं परं बल्यं वातजिन्मासयोजितम् । संवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं ध्रुवम् ॥

अर्थ-गंगेरन की जड को गौ के दूध में औटावे इस को पीवे तो श्वास, खांसी, इन को नाश करे तथा सेमर की छाल दूध में सिजायके एक महीने पर्यंत पीवे.

यह रसायन अत्यंत बलकारक और वातनाशक है. इसी को एक वर्ष पर्यंत पीवे तो सौ वर्ष पर्यंत जीवे इस में संदेह नहीं ॥

हिंगुपंचकचूर्ण

विश्वौषधेन रुचकेन सदाडिमेन स्याच्चाम्लवेतसयुतः कृतहिं-
गुभानुः । तद्धिंगुपंचकमिदं हृदयामयघ्नं भेडाभिधानमुनिना
गदितं मुनीनाम् ॥

अर्थ–सोंठ, संचरनिमक, अनार की छाल, अमलवेत और भुनी हुई हींग इन का समान भाग चूर्ण करे यह हिंगुपंचक पहले रोगग्रस्त मुनियों को देख हृद्रोगनाशनार्थ भेड मुनीश्वरने कहा है ॥

पुष्करचूर्ण

चूर्णं पुष्करजं लिह्यान्माक्षिकेण समायुतम् ।
हृद्रोगश्वासकासघ्नं क्षिप्रं हिक्कानिवारणम् ॥

अर्थ–पोहकरमूल के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो हृदयरोग, श्वास, खांसी, हिचकी इन को तत्काल दूर करे ॥

हरिणशृंगभस्म

शरावसंपुटे दग्ध्वा शृंगं हरिणजं पिबेत् ।
गव्येन सर्पिषा पिष्टं हृच्छूलं नाशयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ–हिरण के सींगों के छोटे २ टुकडे सरवा में रख ऊपर से दूसरे सरवा को ढक देवे और उस की कपडमिट्टी करके संधियों को लेप कर देवे. अग्नि में रखके फूंक देवे. जब भस्म हो जावे तब चूर्ण कर गौ के घी में मिलायके पीवे तो हृदय का शूल नष्ट होय ॥

हिंग्वादि चूर्ण

हिंगूग्रगंधाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ।
पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराख्यं यवांभसा शूलहृदामयघ्नम् ॥

अर्थ–हींग, वच, बिडनिमक, सोंठ, पीपल, कूठ, हरड, चित्रक, जवाखार, संचरनिमक और पोहकरमूल इन का चूर्ण जों के काढे के साथ पीवे तो हृदयरोग को नाश करे॥

ककुभत्वक्चूर्ण

घृतेन दुग्धेन गुडांभसा वा पिबंति चूर्णं ककुभत्वचोत्थम् ।
हृद्रोगजीर्णं ज्वररक्तपित्तं जित्वा भवेयुश्चिरजीविनस्ते ॥

अर्थ—घी, दूध, गुड का जल इन में से किसी एक के साथ कोहवृक्ष की छाल का चूर्ण जो पीते हैं वह हृदयरोग, जीर्णज्वर, रक्तपित्त इन को जीतकर चिरंजीव होते हैं ॥

कटुक्यादि चूर्ण

पिष्ट्वा वा कटुका पेया सयष्टी वा सुखांबुना ।
जीर्णज्वरं रक्तपित्तं हृद्रोगं च व्यपोहति ॥

अर्थ—कुटकी और मुलहटी इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो जीर्णज्वर, रक्तपित्त, हृदयरोग इन को नाश करे ॥

हरीतक्यादि चूर्ण

हरीतकीवचारास्नापिप्पलीनागरोद्भवम् ।
शठीपुष्करमूलोत्थं चूर्णं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ—हरड, वच, रास्ना, पीपल, सोंठ, नागरमोथा और पुहकरमूल इन का चूर्ण हृदयरोगनाशक है ॥

पाठादि चूर्ण

पाठा वचा यवक्षारमभयासाम्लवेतसम् । दुरालभां चित्रकं च त्र्यूषणं च फलत्रिकम् ॥ शुंठी पुष्करमूलं च तित्तिडीकं सदाडिमम् । मातुलिंगस्य मूलानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ उष्णोदकेन मद्यैर्वा हृतान्येतानि पाययेत् । आर्शं शूलं च हृद्रोगं गुल्मं चाशु व्यपोहति ॥

अर्थ—पाठ की जड, वच, जवाखार, हरड, अम्लवेत, धमासा, चित्रक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, पुहकरमूल, इमली, अनारदाना, बीजोरे का जड इन सब को समान भाग ले बारीक चूर्ण करे. फिर इस को गरम जल के साथ पीवे अथवा मद्य से पीवे तो हृदयरोग, मूलव्याधि, शूल और गोला इन को नाश करे ॥

गोधूमादि चूर्ण

गोधूमककुभचूर्णं पक्वमजाक्षीरगव्यसर्पिभ्याम् ।
मधुशर्करासमेतं शमयति हृद्रोगमुद्धतं पुंसाम् ॥

अर्थ—गेहूं, कोहवृक्ष की छाल इन के चूर्ण को बकरी के दूध में गौ का घी डालके औटावे जब सीज जावे तब उतार सहत, मिश्री डालके पीवे तो मनुष्यों का घोर हृदयरोग शांत होवे ॥

वल्लभघृत

शताधर्मभयानां तु सौवर्चलपलद्वयम् । पचेत्कल्कैर्घृतप्रस्थं दत्त्वा क्षीरं चतुर्गुणम् ॥ घृतं वल्लभकं नाम्ना श्रेष्ठं हृद्रोगनाशनम् ॥

अर्थ–पचास हरड, संचरनिमक ८ तोले इन के चूर्ण को ६४ तोले घी और घी से चौगुना दूध एकत्र कर पक्क करे इस को वल्लभघृत कहते हैं. यह हृदयरोगनाशक है ॥

यष्टयादि घृत

यष्टीनागबलोदिच्यार्ज्जुनैः सर्पिः सुसाधितम् ।
हृद्रोगक्षयपित्तास्रश्वासकासज्वरार्तिजित् ॥

अर्थ–मुलहटी, नागबला, खस, कोहवृक्ष की छाल इन को डालके घृत सिद्ध करे. यह घृत हृदयरोग, क्षय, पित्तरक्त, श्वास, खांसी, ज्वर इन की पीडा को जीते ॥

बलादि घृत

घृतं बलानागबलार्जुनानां क्काथेन कल्केन च यष्टिकायाः ।
सिद्धं निहन्याद्धृदयामयं हि सवातरक्तक्षतरक्तपित्तम् ॥

अर्थ–खिरेटी, नागबला और कोहवृक्ष की छाल इन के काढे के साथ और मुलहटी के चूर्ण के साथ सिद्ध करा हुआ घृत हृदयरोग, वातरक्त, रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

हृदयार्णवरस

सूतार्कगंधं क्काथेन वराया मर्दयेद्दिनम् । काकमाच्या वटीं कृत्वा चणमात्रां तु भक्षयेत् ॥ हृदयार्णवनामायं हृद्रोगदलनो रसः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, तामे की भस्म, इन को हरड, बहेडा, आवला इन के काढे में एक दिन खरल कर फिर काकमाची (मकोय) के काढे में एक दिन खरल कर चने के बराबर गोली बनायके खाय तो हृदयरोग का नाश होय. इस को **हृदयार्णवरस** कहते हैं ॥

रसायन

रसगंधाभ्रभस्मानि पार्थवृक्षत्वगंबुना । एकविंशतिधा घर्मे भावितानि विधानतः ॥ माषमात्रमिदं चूर्णं मधुना सह लेहयेत् । वातजं पित्तजं श्लेष्मसंभूतं वा त्रिदोषजम् ॥ कृमिजं चापि हृद्रोगं निहंत्येव न संशयः ॥

अर्थ-पारा, गंधक, अभ्रक इन की भस्म समान भाग ले कोहवृक्ष की छाल के रस में अथवा प्याज के रस में धूप में रखके इसे भावना देवे. फिर इस चूर्ण को सहत के साथ एक मासे खाय तो वात, पित्त, कफ, त्रिदोष इन से होनेवाले हृदय रोग अथवा कृमिजन्य हृदयरोग इन सब को नाश करे ॥

हृद्रोग पर पथ्य

स्वेदो विरेको वमनं च लंघनं बस्तिर्विलेपी चिररक्तशालयः । मृगद्विजाजांगलसंज्ञयान्विता यूषा रसा मुद्गकुलत्थसम्भवाः ॥ रागाः खडा कांबलिकाश्च खांडवा भव्यं पटोलं कदलीफलान्यपि । पुराणकूष्मांडरसालदाडिमं शम्याकशाकं नवमूलकान्यपि ॥ एरंडतैलं गगनाम्बु सैंधवं द्राक्षा च तक्रं च पुरातनो गुडः । शुंठी यवानी लशुनं हरीतकी कुष्ठं च कुस्तुंबुरुकृष्णमार्द्रकम् ॥ सौवीरशुक्तं मधुवारुणीरसः कस्तूरिका चंदनकं प्रपानकम् । तांबूलमप्येष गणः सखा भवेन्मर्त्यस्य हृद्रोगनिपीडितात्मनः ॥

अर्थ-स्वेदन, वमन, विरेचन, लंघन, बस्तिकर्म, विलेपी, पुराने लाल चांवल, मृग (जंगली जीव हरिण आदि), पक्षी (तोता मैना आदि), यूष (सप्तमुष्टिक आदि), मूंग, कुलथी आदि के रस, राग (पीने का पदार्थ), खांड, कांबलिक, खांडव, नागरमोथा, परवल, केला की गहर, पुराना पेठा, आंम, अनार, अमलतास की फलियों का साग, नई मूली, अंडी का तेल, वर्षा का जल, सैंधानिमक, दाख, छाछ, पुराना गुड, सोंठ, अजमायन, लहसन, हरड, कूठ, धनिया, पीपल, अदरख, कांजी, सिर्का, सहत, मद्य, कस्तूरी, चंदन, पने और पान के बीडा ये सब हृदयरोग पीडित प्राणी को हितकारी होते हैं ॥

हृद्रोग पर अपथ्य

तृट्छर्दिमूत्राऽनिलशुक्रकासोद्गारश्रमश्वासविडश्रुवेगान् । सह्याद्रिविंध्याद्रिनदीजलानि मेषीपयो दुष्टजलं कषायम् ॥

अर्थ-प्यास, वमन, मूत्र, अधोवायु, वीर्य, खांसी, डकार, श्रमजन्य श्वास, मल और आंसू इन के उपस्थित वेगों को रोकना, सह्यपर्वत, विंध्याचल पर्वत इन के जल, भेड का दूध, दूषित (बिगडा हुआ) जल, कषेले रस, विरुद्ध पदार्थ, गरम

भारी, कडवा, खट्टा और पुराने पदार्थ एवं पत्ते का शाक, खार, महुआ, दांतन करना, फस्त खोलना इन सब कर्मों को हृदयरोगवाला प्राणी त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे हृद्रोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूत्रकृच्छ्रकर्मविपाकः ।

गुरुजायाभिगमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।
तेनापि निष्कृतिः कार्या शास्त्रदृष्टेन वर्त्मना ॥

अर्थ–गुरुस्त्री के साथ गमन करने से मूत्रकृच्छ्रव्याधि उत्पन्न होती है, उस की शांति के अर्थ शास्त्र में कहे प्रमाण उस की निष्कृति (शांति) करे ॥

पशुयोनौ च गमनान्मूत्रकृच्छ्रं प्रजायते ।
तिलपात्रत्रयं चैव स दद्यादात्मशुद्धये ॥

अर्थ–जो प्राणी पशु (बकरी, घोडी, कुत्ती आदि) से मैथुन करता है उस के मूत्रकृच्छ्र रोग होता है उस को आत्मशुद्धि के वास्ते ३ तिलपात्र दान करना चाहिये॥

तिलपूर्णं ताम्रपात्रं सहिरण्यं द्विजातये ।
प्रातर्दत्त्वा तु विधिवद्दुःस्वप्नं प्रतिहंति सः ॥

अर्थ–प्रातःकाल तिलों से भरे हुए तांबे के पात्र को दक्षिणासहित ब्राह्मण को देता है उस का दुःस्वप्न का नाश होय तथा मूत्रकृच्छ्ररोग शांत होय ॥

ज्योतिष

जन्मकाले यदा यस्य स्मरे भवति भास्करिः ।
राहुर्दुष्टः प्रकुरुते मूत्रकृच्छ्रादिकां रुजम् ॥

अर्थ–जिस प्राणी के जन्मसमय सप्तम स्थान में शनैश्चर और राहु पडे होवें उस के मूत्रकृच्छ्रादिक रोग होते हैं ॥

मूत्रकृच्छ्रनिदान

व्यायामतीक्ष्णौषधरूक्षमद्यप्रसंगनित्यद्रुतपृष्ठयानात् ।
अनूपमत्स्याध्यशनादजीर्णात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राणि नृणामिहाष्टौ ॥

अर्थ–व्यायाम (दंड कसरत आदि), तीक्ष्णौषध (राई आदि), रूखा पदार्थ और नित्यप्रति मद्यपान करना और निरंतर घोडे पर चढने से और जलसमीप

रहनेवाले पक्षी (हंस, सारस, चकवा आदि) का मांस खाने से और मछली, भोजन के ऊपर भोजन करने से और कच्चे पदार्थ इत्यादिकों के खाने से मनुष्यों के आठ प्रकार का मूत्रकृच्छ्ररोग होय है. पृथक् दोषों से ३, सन्निपात से १, चोट लगने का १, मल रोकने के २, वीर्य रोकने का १ और पथरी का १ ये सब मिल करके आठ भये ॥

संप्राप्ति

पृथङ्मलाः स्वैः कुपिता निदानैः सर्वेऽथ वा कोपमुपेत्य बस्तौ।
मूत्रस्य मार्गं परिपीडयंति यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात् ॥

अर्थ–अपने कारण से कुपित भये जो वातादिक दोष अथवा सब दोष बस्ति में कुपित होकर मूत्र के मार्ग को पीडित करें, तब मनुष्य को बडे कष्ट से मूत्र उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्रनिदान

तीव्रार्तिरुग्वंक्षणबस्तिमेढ्रे स्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात् ॥

अर्थ–वात के मूत्रकृच्छ्र से वंक्षण (जांघ और ऊरु इन की संधि) मूत्राशय और इन्द्रिय इन में पीडा होय और मूत्र वारंवार थोडा थोडा उतरे ॥

वातमूत्रकृच्छ्र पर सामान्ययत्न

अभ्यंजनं स्नेहनिरूहबस्तिः स्वेदोपनाहोत्तरबस्तिसेकान् ।
स्थिरादिभिर्वातहरैश्च सिद्धान् दद्याद्रसांश्चानिलमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–स्नेह की मालिस, स्नेहपान, निरूहबस्ति, पसीने निकालना, उपनाह, उत्तरबस्ति, जल का छिडकना, स्थिरादि वातनाशक क्काथ इत्यादि उपचार वातमूत्रकृच्छ्र पर करे ॥

क्काथ

अमृता नागरं धात्री वाजिगंधा त्रिकंटकम् ।
निष्क्काथ्य प्रपिबेत्क्काथं मूत्रकृच्छ्रे समीरजे ॥

अर्थ–गिलोय, सोंठ, आवला, असगंध, गोखरू इन का काढा करके वातमूत्रकृच्छ्र पर देवे ॥

त्रिकंटकादि क्काथ

त्रिकंटकारग्वधदर्भकाक्षयवासधात्रीगिरिभेदपथ्याः ।
निघ्नंति पीता मधुनाश्मरीं च समीपमृत्योरपि मूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ–गोखरू, अमलतास, डाभ, कांस, धमासा, आवला, पाषाणभेद और हरड इन का काढा सहत डालके पीवे तो आसन्नमृत्यु भी हो तथापि उस की पथरी और मूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

एलादि चूर्ण

एलाश्मभेदकशिलाजतुगोक्षुराणामेर्वारुबीजलवणोत्तमकुंकुमानाम्। चूर्णानि तंदुलजले लुलितानि पीत्वा प्रत्यक्षमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥

अर्थ–इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, गोखरू, कांकडी के बीज, सैंधानिमक, केशर इन के चूर्ण को चांवलों के धोवन के साथ पीवे तो आसन्नमृत्युवाला भी मूत्रकृच्छ्री रोगी होय तो भी बच जावे ॥

पित्तमूत्रकृच्छ्रनिदान

पीतं सरक्तं सरुजं सदाहं कृच्छ्रं मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात् ॥

अर्थ–पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र से पीला, कुछ लाल, पीडायुक्त, अग्नि के समान वारंवार कष्ट से मूत्र उतरे ॥

कुशकाशादि काथ

कुशकाशं शरो दर्भ इक्षुश्चेति तृणोद्भवम्। पित्तकृच्छ्रहरं पंचमूलं बस्तिविशोधनम् ॥ एतैः सिद्धं पयः पीतं मेढ्रगं हंति शोणितम् ॥

अर्थ–कुश, कास, डाभ, रामशर (सरपता), ईख इन की जड का काढा पित्तमूत्रकृच्छ्रनाशक और बस्तिशोधक है तथा इस पंचमूल से सिद्ध करा हुआ दूध पीवे तो शिस्न (लिंग) के नीचे को सूजन जो दुष्ट रुधिर से हुई है उस का नाश हो ॥

शतावरीक्काथ

शतावरीकासकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम् ।
क्वाथं सुशीतं मधुशर्कराभ्यां युक्तं पिबेत्पैत्तिकमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–शतावर, कांस, कुश, गोखरू, विदारीकंद, शालीचावल, ईख, कसेरू इन की जड का काढा शीतल होने पर सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एर्वारुबीजपान

एर्वारुबीजं मधुकं सदार्वीं पित्ते पिबेत्तंदुलधावनेन ।
दार्वीं तथैवामलकीरसेन समाक्षिकं पित्तकृतेथ कृच्छ्रे ॥

अर्थ-खीरे के बीज, मुलहटी, दारुहलदी इन का चूर्ण चांवलों के धोवन के साथ मिलायके पीवे अथवा दारुहलदी का चूर्ण आवले के रस के साथ सहत डालके पीवे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र नष्ट होय ॥

द्राक्षादि कल्क

द्राक्षासितोपलाकल्कं कृच्छ्रघ्नं मस्तुना युतम् ।
पिबेद्वा कामतः क्षीरमुष्णं गुडसमायुतम् ॥

अर्थ-दाख, मिश्री इन को एकत्र कूट दही के जल के साथ पीवे अथवा दूध को गरम करके उस में गुड़ डालके यथेष्ट पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

नारिकेलजलपान

नारिकेलजलं योज्यं गुडधान्यसमन्वितम् ।
सदाहमूत्रकृच्छ्रं च रक्तपित्तं निहंति च ॥

अर्थ-नारियल का जल, गुड, धनिया इन को मिलायके पीवे तो यह दाहसहित मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त इन को नाश करे ॥

रक्तनारिकेलजलपान

रक्तस्य नारिकेलस्य जलं कतकसंयुतम् ।
शर्करैलासमायुक्तं मूत्रकृच्छ्रहरं विदुः ॥

अर्थ-लाल नारियल का जल, निर्मली के बीज, मिश्री, इलायची इन को एकत्र पीसके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्रनिदान

बस्तेः सलिंगस्य गुरुत्वशोथौ मूत्रं सपिच्छं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-कफ के मूत्रकृच्छ्र में लिंग और मूत्राशय भारी हो तथा सूजन होय और मूत्र चिकना होय ॥

कफजन्य मूत्रकृच्छ्र की सामान्य चिकित्सा

क्षारोष्णतीक्ष्णौषधमन्नपानं स्वेदोपवासं वमनं निरूहः ।
तक्रं च तिक्तोषणसिद्धतैलं बास्तिश्च शस्ताः कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-खारा, तीखा, गरम ऐसे औषध, अन्न, पान तथा स्वेदन, लंघन, वमन, निरूहबस्ति, छाछ और कडुए, चरपरे, ऐसी औषधों से सिद्ध करे हुए तेलों से बस्तिकर्म इत्यादि कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

एलादि चूर्ण

मूत्रेण सुरया वापि कदलीस्वरसेन वा।
कफकृच्छ्रविनाशाय सूक्ष्मां कृत्वा त्रुटिं पिबेत् ॥

अर्थ-गोमूत्र, मद्य, केले का रस इन में से किसी एक के साथ इलायची के चूर्ण को पीवे यह कफमूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

सितदारुकादि चूर्ण

तक्रेण युक्तं सितवारुकस्य बीजं पिबेत्कृच्छ्रविघातहेतोः।
पिबेत्तथा तंदुलधावनेन प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ-छाछ के साथ सपेद खीरा के बीजों को कूटकर पीवे अथवा चांवलों के धोवन के साथ मूंगा की भस्म पीवे तो कफमूत्रकृच्छ्र पर हितकारी है ॥

सन्निपातमूत्रकृच्छ्रनिदान

सर्वाणि रूपाणि तु सन्निपाताद्भवन्ति तत्कृच्छ्रतमं हि कृच्छ्रम् ॥

अर्थ-सन्निपात से सर्व लक्षण होते हैं यह मूत्रकृच्छ्र कष्टसाध्य है ॥

सर्वं त्रिदोषप्रभवे तु कृच्छ्रे यथाबलं कर्म समीक्ष्य कार्यम्।
तत्राधिके प्राग्वमनं कफे स्यात्पित्ते विरेकः पवने तु बस्तिः ॥

अर्थ-त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र पर बलाबल विचार सर्व उपचार करे और विशेष इतना है कि कफ अधिक होय तो प्रथम वमन देवे, पित्त अधिक होय तो जुल्लाब देवे और वात अधिक होय तो बस्तिकर्म करे इस प्रकार प्रथम करे ॥

बृहत्यादि क्वाथ

बृहतीधावनीपाठायष्टीमधुकलिंगकान्।
पक्त्वा क्वाथं पिबेन्मर्त्यो कृच्छ्रे दोषत्रयोद्भवे ॥

अर्थ-त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र पर कटेरी, बडी कटेरी, पाढ की जड, मुलहटी और इन्द्रजों इन का काढा करके पीवे ॥

शतावर्यादि क्वाथ

शतावर्यास्तु मूलानां क्वाथश्च ससितो मधुः ।
मूत्रदोषं निहंत्याशु वातपित्तकफोद्भवम् ॥

अर्थ–शतावर के काढे में मिश्री और सहत डालके पीवे तो त्रिदोषज मूत्रकृच्छ्र को नाश करे ॥

दुग्धयोग

गुडेन मिश्रितं दुग्धं कदुष्णं कामतः पिबेत् ।
मूत्रकृच्छ्रेषु सर्वेषु शर्करावातरोगनुत् ॥

अर्थ–जिस में गुड मिला हो और कुछ गरम ऐसा दूध पीवे तो सर्व मूत्रकृच्छ्र, शर्करा और वातरोग ये दूर होंय ॥

यवक्षार

सपादशाणतुलितो यवक्षारः सितायुतः ।
भक्षितो नाशयत्येव मूत्रकृच्छ्रं न संशयः ॥

अर्थ–जवाखार ५ मासे को मिश्री मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

गोकंटकादि लेह

गोकंटकं सदलमूलफलं गृहीत्वा संकुट्टितं पलशतं क्वथितं सुबोधैः । पादस्थितेन च जलेन पलानि दत्त्वा पंचाशते परिपचेदथ शर्करायाः॥ तप्त्वा घृतत्वमुपगच्छति चूर्णितानि दद्यात्पलद्वयमितानि सुभेषजानि । शुंठीकणात्रुटिजवाग्रजकेसराणि संयाति कोशककुभत्रपुषीफलानि॥ वंशीपलाष्टकमिह प्रणिधाय नित्यं लिह्यात्सुसिद्धममृतं पलसंमितेन । हंत्याशु मूत्रपरिदग्धविबंधकृच्छ्रं मूत्राश्मरीरुधिरमेहमधुप्रमेहान् ॥

अर्थ–गोखरू के पंचांग को जवकुट करके ४०० तोले जल में डालके काढा करे जब जल चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. फिर इस में २०० तोले मिश्री मिलाय घृत के समान होने पर्यंत पचावे. इस में सोंठ, पीपल, छोटी इलायची, जवाखार, नागकेशर, जावित्री, कोहवृक्ष की छाल, खीरा और वंशलोचन ये प्रत्येक ३२ तोले लेवे. सब का चूर्ण मिलाय ढकके रख देवे. इस में से नित्य

चाटा करे तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, मूत्र का न उतरना, पथरी, मूत्रकृच्छ्र और रक्तप्रमेह इन को नाश करे ॥

शल्यज मूत्रकृच्छ्र

मूत्रवाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु च। मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जायते भृशदारुणम्॥ वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्य लिंगानि लक्षयेत्॥

अर्थ–मूत्र वहनेवाले स्रोत(मार्ग) शल्य (तीर आदि) से विंध जाय अथवा पीडित होय तौ उस घात से भयंकर मूत्रकृच्छ्र होय है इस के लक्षण वातमूत्रकृच्छ्र के समान होंय॥

सामान्यक्रम

मूत्रकृच्छ्रेभिघातोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया हिता।
पंचवल्कलकल्कलेपः कवोष्णोत्र प्रशस्यते ॥

अर्थ–चोट लगने से उत्पन्न हुए मूत्रकृच्छ्र पर वड, पीपल, पाखर, आंब, जामुन इन की छाल का कुछ २ गरम २ लेप करे तो उत्तम है ॥

लोहभस्मयोग

अयोभस्म श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजितम्।
मूत्रकृच्छ्रं निहंत्याशु त्रिभिर्लेपैर्न संशयः ॥

अर्थ–लोहभस्म को बारीक पीसके सहत के साथ देवे तो तीन दिन सेवन करने से निःसंदेह मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

रसपान

रसं वल्लं यवक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि हन्यंते पानतो जवात् ॥

अर्थ–पारा २ रत्ती, जवाखार, मिश्री इन को एकत्र खरल कर छाछ के साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्र नाश होय ॥

पुरीषज मूत्रकृच्छ्र

शकृतस्तु प्रतीघाताद्वायुर्विगुणतां गतः।
आध्मानवातशूलौ च मूत्रकृच्छ्रं करोति च ॥

अर्थ–मल के (विष्ठा के) अवरोध होने से वायु विगुण (उलटा) होकर अफरा, वात, शूल और मूत्रनाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय ॥

सामान्यचिकित्सा

स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगो बस्तयः स्युः पुरीषजे ।
कृच्छ्रे तत्र विधिः कार्यो सर्वशुक्रविबंधजित् ॥

अर्थ–मल की उपस्थित बाधा के रोकने से जो मूत्रकृच्छ्र होता है उस पर पसीने निकालने, चूर्ण का खाना, अभ्यंग, बस्ति ये उपचार करे तथा शुक्रविबंधनाशक उपचार करे ॥

गोक्षुरक्काथ

क्काथो गोक्षुरबीजानां यवक्षारयुतः सदा ।
पीतः प्रशमयत्येव मूत्रकृच्छ्रं चिरोत्थितम् ॥

अर्थ–गोखरू के काढे में जवाखार डालके पीवे तो निश्चय बहुत दिनों का मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

आमलक्यादि क्काथ

गुडेनामलकीक्काथं श्रमघ्नं तर्पणं परम् ।
पित्तासृग्दाहशूलघ्नं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

अर्थ–आवलों के काढे में गुड मिलायके देवे तो रक्त, दाह और शूल इन करके युक्त मूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

एलाचूर्ण

पिबेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा ।
शितिवारकबीजं वा तक्रे श्लक्ष्णं च चूर्णितम् ॥

अर्थ–मद्य अथवा आंवले का रस इन के साथ छोटी इलायची के चूर्ण को पीवे अथवा सपेद खीरा के बीजों को बारीक पीसके छाछ के साथ पीवे ॥

खर्जूरादि चूर्ण

खर्जूरामलबीजानि पिप्पली च शिलाजतु । एलामधुकपाषाणं चंदनौर्वारुबीजकम् ॥ धान्याकं शर्करायुक्तं पातव्यं ज्येष्ठवारिणा । अंगदाहं लिंगदाहं गुदवंक्षणशुक्रजम् ॥ शर्कराश्मरिशूलघ्नं बल्यं वृष्यकरं परम् ॥

अर्थ–खजूर, आंवला, पीपल, शिलाजित, इलायची, मुलहटी, पाषाणभेद, चंदन, खीरा के बीज और धनिया इन के चूर्ण में मिश्री मिलाय मुलहटी के काढे से सेवन

करे तो अंग, गुदा, वंक्षण, शुक्र इन स्थानों के दाह को, शर्करा, पथरी का शूल इन का नाश करे. बल, वृष्यकर्त्ता है ॥

त्रिफलादि कल्क

त्रिफलायाः सुपिष्टायाः कल्कं कोलसमन्वितम्।
वारुणी लवणीकृत्य पिबेन्मूत्ररुजापहम् ॥

अर्थ–त्रिफले का चूर्ण कर उस में वरने का कंकोल का और सैंधे निमक का चूर्ण मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्ररोग को नाश करे ॥

अश्मरीजन्यमूत्रकृच्छ्र

अश्मरीहेतुतत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्रमुदाहरेत् ॥

अर्थ–पथरी के योग से जो मूत्रकृच्छ्र होय उस को पथरी का मूत्रकृच्छ्र कहते हैं॥

अश्मरीजन्य मूत्रकृच्छ्र

अश्मरीजे मूत्रकृच्छ्रे स्वेदाद्या वातजित्क्रिया ॥

अर्थ–पथरी के कारण से हुए मूत्रकृच्छ्र पर स्वेदादिक वातनाशक क्रिया करे ॥

क्वाथ

पाषाणभेदक्वाथस्तु कृच्छ्रमश्मरिजं जयेत् ॥

अर्थ–पथरीजन्य मूत्रकृच्छ्र पर पाषाण भेद का काढा करके देवे ॥

एलादि क्वाथ

एलोपकुल्यामधुकाश्मभेदकौंतीश्वदंष्ट्रावृषकोरुबूकैः।
शृतं पिबेदश्मजतुप्रगाढं सशर्करं साश्मरिमूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–इलायची, पीपल, मुलहटी, पाषाणभेद, रेणुकबीज, गोखरू, अडूसा, अंड की जड इन के काढे में पाषाणभेद अथवा मिश्री डालके पीवे तो पथरीमूत्रकृच्छ्र का नाश करे ॥

शुक्रज मूत्रकृच्छ्र

शुक्रे दोषैरुपहते मूत्रमार्गे विधारिते।
सशुक्रं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्बस्तिमेहनशूलवान् ॥

अर्थ–दोषों के योग से शुक्र (वीर्य) दुष्ट होकर मूत्रमार्ग में गमन करे तब उस मनुष्य के मूत्राशय और लिंग इन में शूल हो और मूत्र के संग वीर्यपतन होय ॥

सामान्यचिकित्सा

कृच्छ्रे शुक्रविबंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् । सक्षीरं ससितं सर्पिः प्रभाते प्रपिबेन्नरः ॥ शुक्रदोषविशुद्ध्यर्थं समदां प्रमदां श्रयेत् ॥

अर्थ–वीर्य रोकने से उत्पन्न मूत्रकृच्छ्र पर सहत के साथ शिलाजीत अथवा दूध मिश्री और घृत इन को मिलायके पीवे और शुक्र दोष दूर होने के वास्ते मदोन्मत्त स्त्री का सेवन करे अर्थात् उस के साथ मैथुन करे ॥

तृणपंचमूलघृत

तृणपंचकमूलेन सिद्धं सर्पिः पिबेदपि ॥

अर्थ–ईख, डाभ, काश, सरपता, कुशा इन के काढे के साथ सिद्ध करे हुए घृत को पीवे ॥

बलादि क्षीर

बलाहिंगुयुतं क्षीरं सर्पिर्मिश्रं पिबेन्नरः ।
मूत्रदोषविशुद्ध्यर्थं शुक्रदोषहरं च यत् ॥

अर्थ–खिरेटी, हींग, दूध, घी इन को एकत्र करके पीवे तो मूत्रदोष और शुक्र दोष दूर होय ॥

पथरी और शर्करा का निदान

अश्मरी शर्करा चैव तुल्यसम्भवलक्षणे । विशेषणं शर्करायाः शृणु कीर्त्तयतो मम ॥ पच्यमानाऽश्मरी पित्ताच्छोष्यमाणा च वायुना । विमुक्तकफसंधाना क्षरंती शर्करा मता ॥ हृत्पीडा वेपथुः शूलं कुक्षावग्निश्च दुर्बलः । तथा भवति मूर्च्छा च मूत्रकृच्छ्रं च दारुणम् ॥

अर्थ–अश्मरी (पथरी) और शर्करा इन दोनों की संप्राप्ति और लक्षण समान हैं परंतु इन में थोडासा भेद है उस को कहता हूं, पित्त से पकनेवाली और वायु से शुष्क होनेवाली ऐसी पथरी कफ से बंधी न होय, तब मूत्र के मार्ग से रेत के समान झरने लगे उस को शर्करा कहते हैं. उस शर्करायोग से हृदय में पीडा, कम्प, कूख में शूल, मंदाग्नि, मूर्च्छा और भयंकर मूत्रकृच्छ्र ये रोग होंय ॥

मूलपंचकयोग

मूलानि कुशकाशेक्षुशराणां चेक्षुवालुका ।
मूत्राघाताश्मरीकृच्छ्रं पंचमूलीतृणात्मिका ॥

अर्थ—कुश, काश, ईख, सरपता, डाभ इन पांचों के जड का काढा मूत्राघात, मूत्राश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इन को नाश करे ॥

शिलाजत्वश्मभित्कृष्णात्रुटीनां वा पिबेद्रजः ॥

अर्थ—शिलाजित, पाषाणभेद, पीपल, इलायची इन के चूर्ण को जल के साथ पीवे तो मूत्रकृच्छ्र को दूर करे ॥

हरिद्रा मधुकं मूर्वा मुस्तकं देवदारु च ।
पिबेदक्षसमं कल्कं पयसा मूत्रपीडितः ॥

अर्थ—हलदी, मुलहटी, मूर्वा, नागरमोथा, देवदारु इन का चूर्ण एक तोले को दूध के साथ मूत्रकृच्छ्ररोगी को पिलाना चाहिये ॥

एलाश्मभेदसशिलाजतु पिप्पलीनां चूर्णानि तंदुलजलैर्लुलितानि पीत्वा । यद्वा गुडेन सहितान्यवलेह्य धीमानासन्नमृत्युरपि जीवति मूत्रकृच्छ्री ॥

अर्थ—इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पीपल इन के चूर्ण को चांवलों के धोवन के साथ पीवे अथवा गुड में मिलायके खाय तो मूत्रकृच्छ्री आसन्नमृत्यु भी होय तो भी बच जावे ॥

अंकोलतिलकाष्ठानां क्षारः क्षौद्रेण संयुतः ।
दधिवार्य्यनुपानेन मूत्ररोधं नियच्छति ॥

अर्थ—अंकोल, तिल की लकडी इन का खार सहत और दही के जल से पीवे तो मूत्ररोध को नाश करे ॥

दाडिमादि रसपान

दाडिमाम्लयुतां तृव्या शंबूजीरकसंयुताम् ।
पीत्वा सुरां सलवणां मूत्रकृछ्रात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ—खट्टे अनार का रस, इलायची, शंख, जीरा इन के चूर्ण के साथ मद्य अथवा सैंधानिमक डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र से मुक्त होय ॥

निदग्धिकारसपान

सितातुल्यो यवक्षारः सर्वकृच्छ्रनिवारणः ॥

अर्थ—मिश्री और जवाखार समान भाग लेकर खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

निदग्धिकारसो वापि सक्षौद्रः कृच्छ्रनाशनः ॥

अर्थ—कटेरी का रस सहत के साथ सेवन करे मूत्रकृच्छ्र नष्ट करे ॥

यवक्षारपान

यवक्षारसमायुक्तं पिबेत्तक्रं च कामतः ।
मूत्रकृच्छ्रविनाशाय तथैवाश्मरिनाशनम् ॥

अर्थ–जवाखार को छाछ में मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, पथरी इन को नाश करे ॥

यवक्षारपान

माषमेकं यवक्षारं कूष्मांडस्वरसं पलम् ।
शर्कराकर्षसंयुक्तं मूत्रकृच्छ्रनिवारणम् ॥

अर्थ–जवाखार १ मासे को पेठे के ४ तोले रस में १ तोले मिश्री मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

पाषाणभेदक्काथ

पाषाणभेदस्त्रिवृता च पथ्या दुरालभा पुष्करगोक्षुरं च ।
पलाशशृंगाटककर्कटीनां बीजं कषायः सानिरुद्धमूत्रे ॥

अर्थ–पाषाणभेद, निसोथ, हरड, धमासा, पुहकरमूल, गोखरू, पलासपापडा, सिंघाडे, ककडी बीज इन का काढा मूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

हरीतक्यादि क्काथ

हरीतकीगोक्षुराजवृक्षपाषाणभिद्धन्वयवासकानाम् ।
क्काथं पिबेन्माक्षिकसंप्रयुक्तं कृच्छ्रे सदाहे सरुजे विबंधे ॥

अर्थ–हरड, गोखरू, अमलतास, पाषाणभेद, धमासा इन के काढे में सहत डालके पीवे तो दाह, पीडा इन करके युक्त मूत्रकृच्छ्र पर उत्तम है ॥

पाषाणभेदादि क्काथ

पाषाणभेदकृतमालकधन्वयासपथ्यात्रिकंटककषायनिषेवणेन ।
मध्वन्वितेन सहसा विरहं प्रयाति रुग्दाहबंधसहितं किल मूत्रकृच्छ्रम् ॥

अर्थ–पाषाणभेद, अमलतास का गूदा, धमासा, छोटी हरड, गोखरू ये समान भाग ले काढा करे. उस में सहत डालके पीवे तो पीडा, दाह, इन करके युक्त जो मूत्रकृच्छ्र अर्थात् पेसाब का पीडा के साथ उतरना दूर होय ॥

गोक्षुरादि क्काथ

समूलगोक्षुरक्काथः सितामाक्षिकसंयुतः ।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि तथा चोष्णसमीरणम् ॥

अर्थ–जडसहित गोखरू के वृक्ष का काढा करके उस में मिश्री और सहत डाल के पीवे तो मूत्रकृच्छ्र तथा उष्णवात (सोजाक) दूर होय ॥

हरीतक्यादि क्वाथ

हरीतकीदुरालंभाकृतमालकगोक्षुरैः । पाषाणभेदसहितैः क्वाथो माक्षिकसंयुतः ॥ विबंधे मूत्रकृच्छ्रे च सदाहे सरुजे हितः ॥

अर्थ–छोटी हरड, धमासा, अमलतास का गूदा, गोखरू, पाषाणभेद इन पांच औषधों का काढा करके उस में सहत मिलायके पीवे तो दाह तथा पीडा एवं वायु का अवरोध ये उपद्रव हैं जिस में ऐसा मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

यवादि क्वाथ

यवोरुबूकं तृणपंचमूलीपाषाणभेदैः सशतावरीभिः ।
कृच्छ्रेषु गुल्मेष्वभयाविमिश्रैः कृतः कषायो गुडसंप्रयुक्तः ॥

अर्थ–जो अंड की जड, डाभ, काश, सरपता, कुशा, ईख, पाषाणभेद, सतावर और हरड इन के काढे में गुड डालके मूत्रकृच्छ्र और गुल्मरोग इन पर देवे ॥

कंटकादि घृत

त्रिकंटकैरंडकुशाद्यभीरुकैरौर्वारुकेक्षुस्वरसेन सिद्धम् ।
सर्पिर्गुडार्धांशयुतं प्रपेयं कृच्छ्राश्मरीमूत्रविघातहारि ॥

अर्थ–गोखरू, अंड की जड, कुश, काश, डाभ, सरपता, महाशतावर, खीरा, इख इन के रस के साथ सिद्ध करा हुआ घी उस में गुड मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, पथरी, मूत्राघात इन को नाश करे ॥

शतावर्यादि घृत

घृतप्रस्थं शतावर्य्या रसस्यार्धाढके पचेत् । अजाक्षीरेण संयुक्तं चतुःप्रस्थान्वितेन तु ॥ द्विगोक्षुरामृतानंताकाशकंटकनीरसान् । कुडवार्धं पृथक् दत्त्वा पिष्टैर्यष्टिकटुत्रयैः ॥ श्वदंष्ट्राफलनीदुग्धाशिलाजत्वश्मभेदकैः । त्रिसुगंधान्वितैरर्धपलांशैस्तद्धृतं पुनः ॥ शर्कराद्विपलोपेतं क्षौद्रं पादसमन्वितम् । हंति कृच्छ्राणि सर्वाणि मूत्रदोषाश्मशर्कराः ॥ शतावरीघृतं चैतत् प्रोक्तं प्राज्ञचिकित्सकैः ॥

अर्थ–घी ६४ तोले, शतावर का रस १२८ तोले बकरी का दूध १२८ तोले सब को एकत्र कर पचावे. फिर गोखरू, छोटे गोखरू, गिलोय, धमासा, काश, कटेरी इन को पृथक् २ आठ २ तोले लेके डाले तथा मुलहटी, त्रिकुटा, गोखरू, फलनी, दुद्धी, शिलाजीत, पाषाणभेद, दालचीनी, इलायची, पत्रज इन के चूर्ण प्रत्येक तीन तीन तोले ले मिश्री ८ तोले इन सब पदार्थों को मिलायके एकत्र कर फिर पचावे यह घी संपूर्ण मूत्रकृच्छ्र, मूत्रदोष, शर्करा इन का नाशक है. इस को **शतावरीघृत** कहते हैं. यह बडे भारी बुद्धिवान् वैद्य का कहा हुआ है ॥

त्रिकंटकादि गुग्गुलु

त्रिकंटकानां क्वथितेष्टनिघ्ने पुरं पचेत्पाकविधानयुक्त्या । फलत्रिकव्योषपयोधराणां चूर्णं पुरेण प्रमितं विदध्यात् ॥ वटी प्रमेहं च समूत्रघातं सवातकृच्छ्रं च तथाश्मरीं च । शुक्रस्य दोषान् सकलांश्च वातान् निहंति मेघानिव वायुवेगः ॥

अर्थ–गोखरू के काढे में गूगलपाक की विधि से गूगल पचावे. फिर त्रिफला, त्रिकुटा, नागरमोथा इन का चूर्ण गूगल के बराबर डाल गोली बनावे. फिर एक एक गोली सेवन करने से प्रमेह, मूत्राघात, वातकृच्छ्र, पथरी, शुक्रदोष, सर्व वात के रोग इन सब को नाश करे जैसे वायु का वेग मेघों को नाश करे है ॥

गोक्षुरादि लेप

पिष्ट्वा श्वदंष्ट्राफलमूलिकाभिरुर्वारुबीजानि सकांजिकानि ।
आलिप्यमानानि समानि बस्तौ मूत्रस्य संशुद्धिकराणि सद्यः ॥

अर्थ–गोखरू को जड सहित ले और गोखरू की बराबर खीरे के बीज ले इन को कांजी में पीस बस्ति पर लेप करे तो तत्काल मूत्र की शुद्धि होय ॥

किंशुकस्वेद

बस्तावैरंडतैलेन स्निग्धायां किंशुकस्तरोः ।
स्विन्नपुष्पैर्ददेत्सेकं मूत्रकृच्छ्रोपशांतये ॥

अर्थ–मूत्रकृच्छ्र की शांति के वास्ते अंडी के तेल से प्रथम बस्ति को शुद्ध करे फिर पलास (ढाक) के फूलों को औटाकर वाफ देवे ॥

आखुविट्कल्क

कोष्णाखुविट्कल्कलेपो बस्तेरुपरि कृच्छ्रिणः ॥

अर्थ–मूत्रकृच्छ्री मनुष्य को बस्ति के ऊपर मूंसे (चूहे) की लैंडी को पीस मंदोष्ण लेप करे ॥

त्रपुसादि बीजपूररस

त्रपुसीबीजलेपो वा धारा वा किंशुकांभसः। ज्वलच्छिद्रे चेंदुदानं लेपो वा चटकाविशः ॥ मेघनादशिलालेपः स्वेदो वा कर्कटांभसा। पातो वा कोष्णतैलस्य धारा वा कोष्णवारिणा ॥ नवैते पादिका योगा मूत्रकृच्छ्रहरा मताः ॥

अर्थ–खीरे के बीजों का लेप अथवा पलास के फूलों के जल की धारा अथवा छिद्रों में जलन होने से कपूर का लेप अथवा चिडैया के मैंगनी का लेप अथवा चौलाई का लेप अथवा शिलाजीत का लेप अथवा ककडी के जल से स्वेद अथवा किंचित् गरम तेल की धारा अथवा गरम जल की धारा डालना इतने उपाय बस्ति पर करने से मूत्रकृच्छ्ररोग का नाश होता है ये नौ योग श्लोक के एक २ पाद में समाप्त हुए हैं ये सब मूत्रकृच्छ्रनाशक हैं ॥

मंथादि योगत्रय

मंथं पिबेद्वा ससितं च सर्पिः श्रितं पयो वार्द्धसितं प्रदेयम्। धात्रीरसे चेक्षुरसं पिबेद्वा कृच्छ्रे सदाहे मधुना विमिश्रम् ॥

अर्थ–दाहयुक्त मूत्रकृच्छ्र पर मिश्रीयुक्त मंथ अथवा औटाया हुआ दूध, घी करके युक्त बराबर की मिश्री मिलाय अथवा आंवले की और ईख के रस को एकत्र कर उस में सहत डालके पिलावे ॥

और्वारुबीजयष्ट्याव्हदार्वी वा तंदुलांभसा। तोयेन कल्कं द्राक्षायाः पिबेत्पर्युषितेन वा ॥ पिबेन्मद्येन सूक्ष्मैलां धात्रीफलरसेन वा ॥

अर्थ–खीरे के बीज, मुलहटी, दारुहलदी इन सब को चावलों के धोवन में पीसके पीवे अथवा बासे पानी में दाखों को पीसके पीवे अथवा इलायची का चूर्ण मद्य के साथ अथवा आंवले के रस से पीवे तो मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

हरिद्रादि योग

हरिद्रागुडकर्षैकं चारनालेन वा पिबेत्। वंध्याकर्कोटकाकंदं भक्षेत्क्षौद्रसितायुतम् ॥ अश्मरीं हंति नो चित्रं रहस्यं हि शिवोदितम् ॥

अर्थ–हलदी, गुड इन को मिलायके एक तोले कांजी में पिलावे अथवा वांझ ककोडे का कंद १ तोले सहत में मिलाय सहत के साथ खाय तो पथरी का नाश करे इस में आश्चर्य नहीं है यह रहस्य शिव ने कहा है ॥

भृष्टेक्षुरसपान

भृष्टेक्षुस्वरसं ग्राह्यमाखुविड्विहितं पिबेत् ।
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणि सद्य एव न संशयः ॥

अर्थ–ईख को भूनके उस के रस को निकाल लेवे उस में मूसे की वींट (लैंडी) मिलायके पीवे तो तत्काल मूत्रकृच्छ्र का नाश करे इस में संशय नहीं है ॥

कुटजयोग

पिष्ट्वा गोपयसा श्लक्ष्णं कुटजस्य त्वचं पिबेत् ।
तेनोपशाम्यते क्षिप्रं मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥

अर्थ–गौ के दूध में कूडा की छाल को बारीक पीस कल्क करे इन को पीवे तो भयंकर मूत्रकृच्छ्र तत्काल दूर होय ॥

लघुलोकेश्वर

रसभस्म च भागैकं चतुर्भागं तु गंधकम् । पिष्ट्वा वराटकान् पूर्याद्रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरेण पिष्ट्वा रुध्वास्यं भांडे रुध्वा पुटे पचेत् । स्वांगशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ चतुर्गुंजो घृते देयो मरीचैकोनविंशतिः । जातीमूलं पलैकं तु ह्यजाक्षीरेण पाचयेत् ॥ शर्कराभावितं चानु पीतं कृच्छ्रहरं परम् ॥

अर्थ–पारद की भस्म १, गंधक ४ भाग, दोनों को एकत्र खरल कर कौडी में भर देवे फिर कजली से चतुर्थांश सुहागा ले उस को दूध में खरल कर उन कौडियों के मुख को बंद कर देवे फिर इन कौडियों को मटके में रख मुख को बंद करके संपुट फूंक देवे जब स्वांगशीतल हो जावे तब सावधानी से निकाल ले खरल कर ४ रत्ती के अनुमान इस को घृत के साथ देवे इसे लघुलोकोश्वररस कहते हैं. फिर १९ मिरच और ४ तोले चमेली की जड को बकरी के दूध में औटाय उस में मिश्री मिलायके देवे तो अत्यंत कृच्छ्रहारक है ॥

चंद्रकलारस

प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात्सूतं ताम्रं तथाभ्रकम् । द्विगुणं गंधकं चैव

कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ॥ मुस्तादाडिमदूर्वोत्थैः केतकीस्तनजद्रवैः । सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटस्य च वारिणा ॥ रामशीतलिकातोयैः शतावर्या रसेन च । भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक् ॥ तिक्ता गुडूचिकासत्वं पर्पटोशीरमाधवी । श्रीगंधं सारिवा चैषां समानं सूक्ष्मचूर्णितम् ॥ द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत् । ततः पात्राश्रयं कृत्वा वट्यः कार्याश्चणोपमाः॥ अथ चंद्रकलानाम्ना रसेंद्रः परिकीर्तितः । सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥ अंतर्बाह्यमहादाहविध्वंसनमहाघनः । ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥ कुरुते नाग्निमांद्यं च महातापज्वरं हरेत् । भ्रमं मूर्छां निहंत्याशु स्त्रीणां रक्तं महास्रवम्॥ ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च रक्तवांतिं विशेषतः । मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥

अर्थ—पारदभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, प्रत्येक एक २ तोले और गंधक २तोले ले इन की कजली करके नागरमोथा, अनार, दूब, केतकी की कोपल, सहदेई, घीगुवार, पित्तपापडा, आरामशीतला और शतावर इन के रस की पृथक् २ भावना देकर फिर कुटकी, गिलोयरस पित्तपापडा, खस, मधुमालती, बेलफल, चंदन, सारिवा इन का बारीक चूर्ण कर उस में दाख के काढे की सात भावना देवे फिर इस को पूर्वोक्त चूर्ण में मिलाय लेवे फिर किसी उत्तम चीनी वा शीशे के पात्र में भरके सब को मिलाय चने के बराबर गोली बनावे. इस को चंद्रकलारस कहते हैं. यह वातपित्त के रोग, भीतर और बाहर का दाह इन को नाश करनेवाला है. गरमी की ऋतु में और शरदऋतु में विशेष करके प्रशस्त यह मंदाग्नि नहीं करे तथा संताप, ज्वर, भ्रम, मूर्च्छा, स्त्रियों के रुधिर का जाना, ऊर्ध्वरक्तपित्त, रुधिर की उलटी होना, अधोगत रक्तपित्त, सर्व प्रकार के मूत्रकृच्छ्र इन को नाश करे. इस में संदेह नहीं है ॥

सूतं स्वर्णं च वैक्रांतं शृतं तुल्यं च मर्दयेत् । चांडालीराक्षसीद्रावैर्दिनयामांते च गोलकम् ॥ शुष्कं रुध्वा पुटेच्चानु करीषाग्नौ महापुटे॥

अर्थ—पारे की भस्म, सुवर्णभस्म, वैक्रांतभस्म ये समान भाग लेवे इन को शिवलिंगी और मोरमांसी इन दोनों के रस में दो प्रहर खरल कर गोली बनाय ले जब

सूख जावे तब किसी मिट्टी के पात्र में भर उस के मुख को बंद कर देवे फिर आरने उपलों के संपुट में रखके फूंक देवे तो यह औषधी सिद्ध होय इस को अनुपान के साथ बलाबल विचारके खाय तो मूत्रकृच्छ्र को नाश करे ॥

बृहद्गोक्षुराद्य लेह

गोकंटकं पलशतं कुशमूलं तथैव च । पाषाणभेदोष्टपलं गुडूचीपलपंचकम् ॥ एरंडो भीरुरष्टौ च मूलं दशपलं पृथक् । पद्ममूलं चाश्वगंधा प्रत्येकं पलविंशतिः ॥ सर्वमेकत्र संकुत्य जलद्रोणे विपाचयेत् । पादशेषं तु संग्राह्य वस्त्रपूतं समाक्षिपेत् ॥ गव्याज्यं प्रस्थमेकं तु शिलाजं च तथा स्मृतम् । घनीभूते तु संजाते द्रव्याणीमानि दापयेत् ॥ तालमूली शताह्वा च त्रिकटु त्रिफला तथा । सूक्ष्मैला भूतकेशी च ह्रीबेरं नागकेशरम् ॥ पद्मकं जातिपत्रत्वक्मधुयष्टिसरोचना । जातीफलमुशीरं च त्रिवृता रक्तचंदनम्॥ धान्याकं कटुका क्षारौ नागवल्ली च शृंगिका । पुष्कराह्वं शठी दारु शीसं लोहं च वंगकम् ॥ द्रव्याणीमानि संगृह्य प्रत्येकं पलमात्रकम् । खादेद्बलाग्निं संप्रेक्ष्य पथ्यं सेवेत्तु मानवः ॥ स्निग्धभांडे निधायाथ नित्यं लिह्यात्पलोन्मितम् । अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रं च मूत्राघातं विबंधताम् ॥ प्रमेहं विंशतिं चैव शुक्रदोषं तथैव च । धातुक्षये चोष्णवाते वातकुंडलिकादयः ॥ ते सर्वे प्रशमं यांति भास्करेण तमो यथा । नातः परतरं किंचित्कृष्णात्रेयेण पूजितः ॥

अर्थ—गोखरू ४०० तोले, कुशा की जड ४०० तोले, पाषाणभेद ३२ तोले, गिलोय २० तोले, अंड की जड और शतावर ७२ तोले, कमल का कंद और असगंध ये ८० तोले लेवे सब को एकत्र कूट १०२४ तोले जल में चढायके औटावे जब चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे इस जल में गौ का घी ६४ तोले, शिलाजीत ६४ तोले डालके पचावे जब गाढा हो जावे तब इस में काली मूसली, शतावर, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, छोडी इलायची, जटामांसी, खस, नागकेशर, पद्माख, जावित्री, दालचीनी, मुलहटी, वंशलोचन, जायफल, नेत्र-

वाला, निसोथ, लाल चंदन, धनिया, कुटकी, जवाखार, सुहागा, नागरवेल, काकडासिंगी, पुहकरमूल, कचूर, दारुहलदी, शीशे की भस्म, लोहभस्म, वंगभस्म ये प्रत्येक चार २ तोले लेवे. सब का चूर्ण करके उस में मिलाय देवे जब गाढा हो जावे तब उतारके शीतल कर उत्तम चिकने बासन में भरके धर रखे इस को बलाबल विचारके ४ तोले के अनुमान खाय तथा पथ्य से रहे तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, मूत्रबंध, २० प्रकार के प्रमेहरोग, शुक्रदोष, नष्टशुक्र, अम्लपित्त, धातुक्षय, उष्णवात (सुजाक), वातकुंडली ये सब सूर्योदय होने से जैसे अंधकार नष्ट होवे उसी प्रकार नष्ट हो. इस गोकंटकादि लेह से परे दूसरा लेह उत्तम नहीं है इस प्रकार कृष्णात्रेय ने कहा है ॥

मूत्रकृच्छ्र पर पथ्य

वातोद्भवेऽभ्यंगनिरूहबस्तिः स्नेहावगाहोत्तरबस्तिसेकः । पैत्तेवगाहः शिशिरप्रदेहा ग्रैष्मो विधिर्बस्तिविधिर्विरेकः ॥ श्लेष्मोद्भवे स्वेदविरेकबस्तिः क्षारायवान्नानि च तीक्ष्णमुष्णम् । त्रिदोषजेऽभ्यंगपुरःसराणि सर्वाण्यमूनि विमलोदितानि ॥ मूत्रघातविकारोत्थे वातकृच्छ्रक्रिया मता । लेहः शुक्रविबंधोत्थे शिलाजतु समाक्षिकम् ॥ स्वेदचूर्णक्रियाभ्यंगबस्तयः स्युः पुरीषजे । अथो यथादोषमयं गणोऽपि पुरातना लोहितशालयश्च ॥ तक्रं पयो दध्यपि गोप्रभूतं धन्वामिषं मुद्गरसाः सिता च । पुराणकूष्मांडफलं पटोलं महार्द्रकं गोक्षुरकः कुमारी ॥ एर्वारुखर्जूरकनारिकेरं तालद्रुमाणां च शिरांसि पथ्या । तालास्थिमज्जात्रपुषं त्रुटिश्च शीतानि पानान्यशनानि चैव ॥ प्रतीरनीरं हिमवालुका च मित्रं नृणां स्यात्सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–वातजन्य मूत्रकृच्छ्र रोग में मालिस करना, निरूहण बस्ति, स्नेहन कर्म, उत्तरबस्ति, सेचनकर्म ये करें पित्तजन्य मूत्रकृच्छ्र में जल में धसके स्नान, शीतलप्रदेह तथा जो गरमियों में करना चाहिये वह विधि, दस्त कराने ये कर्म करें. कफजन्यमूत्रकृच्छ्र में स्वेदन, वमन, विरेचन, बस्तिकर्म, क्षार, यव के पदार्थ, तीक्ष्ण और गरम पदार्थ देने चाहिये. त्रिदोषजन्य मूत्रकृच्छ्र में प्रथम मालिस करना और जो तीनों दोषों पर कर्म करने लिखे वह करें. मूत्राघातविकार में वातजन्य मूत्रकृच्छ्र पर जो क्रिया लिखी है वह करे. शुक्र के रुकने से प्रगट मूत्रकृच्छ्र में शिलाजीत और

सहत मिलायके अवलेह देवे. पुरीष (मल) जन्य मूत्रकृच्छ्र में स्वेदन कर्म, चूर्ण क्रिया, मालिस और बस्तिकर्म करे. ये पूर्वोक्त गण यथारोगानुसार देवे तथा पुराने लाल चावल, गौ की छाछ, दूध, दही, जंगली जीवों का मांस, मूंग का रस, खांड, पुराना पका पेठा, परवल, अदरख, गोखरू, घीगुवार, सुपारी, खिजूर, नारियल, ताड की शिरा, हरड, ताड का गूदा, खीरा, इलायची छोटी, शीतल पीने के पदार्थ और भोजन, नदी कांठ का जल और शीतल वालू ये सब पदार्थ मूत्रकृच्छ्ररोगी को परम हितकारी हैं ॥

मूत्रकृच्छ्र पर अपथ्य

मद्यं श्रमं निधुवनं गजवाजियानं सर्वं विरुद्धमशनं विषमाशनं च । तांबूलमत्स्यलवणार्द्रकतैलभृष्टं पिण्याकहिंगुतिलसर्षप-मूत्रवेगान् ॥ माषान् करीरमपि तीक्ष्णविदाहि रूक्षमम्लं प्रमुं-चतु जनः सति मूत्रकृच्छ्रे ॥

अर्थ–मद्यपान, परिश्रम, स्त्रीसंग, हाथी घोडे की सवारी, संपूर्ण विरुद्ध भोजन और विषमाशन, तांबूल, निमक, अदरख और तेल की भुनी मछली, खल, हींग, तिल, सरसों, मूत्र के वेग को रोकना, उडद, करील और तीक्ष्ण वस्तु तथा दाहका-री पदार्थ, रूक्ष पदार्थ और खटाई इन को मूत्रकृच्छ्र रोगवाला त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे मूत्रकृच्छ्रनिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मूत्राघातनिदानचिकित्सा ।

जायन्ते कुपितैर्दोषैर्मूत्राघातास्त्रयोदश ।
प्रायो मूत्रविघाताद्यैर्वातकुण्डलिकादयः ॥

अर्थ–मूत्र के वेग रोकने से (आदिशब्द से मल शुक्रादि वेग रोकना और रूक्ष, भोजन आदि जानना) कुपित भये दोषों से वातकुण्डलिकादिक तेरह प्रकार के मूत्राघातरोग को करे ॥

मूत्राघात के १२ भेद

वातकुंडलिकाष्ठीला वातबस्तिस्तथैव च । मूत्रातीतः सजठरो

मूत्रोत्संगक्षयस्तथा ॥ मूत्रग्रंथिर्मूत्रशुक्रमुष्णवातस्तथैव च ।
मूत्रासादो विड्विघातो रोगा द्वादश कीर्तिताः ॥

अर्थ–वातकुंडलिका, अष्ठीला, वातबस्ति, मूत्रातीत, मूत्रजठर, मूत्रोत्संग, मूत्र-क्षय, मूत्रग्रंथि, मूत्रशुक्र, उष्णवात, मूत्रसाद और विड्वात ये बारह प्रकार के मूत्राघात कहे जाते हैं ॥

वातकुंडलिका के लक्षण

रौक्ष्याद्वेगविघाताद्वा वायुर्बस्तौ सवेदनः । मूत्रमाविश्य चरति विगुणः कुण्डलीकृतः ॥ मूत्रमल्पाल्पमथ वा सरुजं संप्रवर्त्तते । वातकुण्डलिकां तां तु व्याधिं विद्यात्सुदारुणाम् ॥

अर्थ–रूखे पदार्थ खाने से अथवा मलमूत्रादि वेगों के धारण करने से, कुपित भई जो वायु सो बस्ति (मूत्राशय) में प्राप्त हो पीडा करे और मूत्र से मिलकर मूत्र के वेग को विगुण (उलटा) करके वहां आप कुण्डल के आकार (गोलाकार) मूत्राशय में विचरे तब मनुष्य उस वात से पीडित हो मूत्र को वारंवार थोडा थोडा पीडा के साथ त्याग करे इस दारुण व्याधि को वातकुण्डलिका रोग कहते हैं ॥

अष्ठीला के लक्षण

आध्मापयन्बस्तिगुदं रुध्वा वायुश्चलोन्नतः ।
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलां मूत्रमार्गावरोधिनीम् ॥

अर्थ–बस्ति (मूत्राशय) और गुदा इन में यह वायु अफरा करे तथा गुदा की वायु को रोककर चञ्चल और उन्नत (ऊंची) ऐसी अष्ठीला (पत्थर की पिण्डी के सदृश) को प्रगट करे यह मूत्र के मार्ग को रोकनेवाली और भयंकर पीडा करनेवाली है ॥

वातबस्ति के लक्षण

वेगं विधारयेद्यस्तु मूत्रस्याकुशलो नरः । निरुणद्धि मुखं तस्य बस्तेर्बस्तिगतोऽनिलः ॥ मूत्रसंगो भवेत्तेन बस्तिकुक्षिनिपी-डितः । वातबस्तिः स विज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्रप्रसाधनः ॥

अर्थ–जो मनुष्य अड (जिद्द) से मूत्र बाधा को रोके उसकी बस्ति (मूत्राशय) का वायु बस्ति के मुख को बन्द कर दे तब उस का मूत्र बंद हो जाय और वह वायु बस्ति में और कूख में पीडा करे उस व्याधी को वातबस्ति से कहते हैं. यह बडे कष्ट से साध्य होय ॥

मूत्रातीत के लक्षण

चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्त्तते ।
मेहमानस्य मन्दं वा मूत्रातीतः स उच्यते ॥

अर्थ–मूत्र को बहुत देर रोकने से पीछे वह जल्दी नहीं उतरे और मूतते समय धीरे धीरे उतरे इस रोग को **मूत्रातीत** कहते हैं ॥

मूत्रजठर के लक्षण

मूत्रस्य वेगेऽभिहते तदुदावर्त्तहेतुकः । अपानः कुपितो वायुरुदरं पूरयेद्भृशम् ॥ नाभेरधस्तादाध्मानं जनयेत्तीव्रवेदनम् ।
तन्मूत्रजठरं विद्यादधोबस्तिनिरोधजम् ॥

अर्थ–मूत्र के वेग रोकने से मूत्रवेगधारणजनित और उदावर्त्त का कारणभूत ऐसा अपानवायु कुपित होकर पेट बहुत फूल जाय और नाभि के नीचे तीव्र वेदनासंयुक्त अफरा करे, अधोबस्तिका रोध करनेवाला ऐसे इस रोग को **मूत्रजठर** ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रोत्संग के लक्षण

बस्तौ वाप्यथवा नाले मणौ वा यस्य देहिनः। मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत सरक्तं वा प्रवाहतः ॥ स्रवेच्छनैरल्पमल्पं सरुजं वाथ नीरुजम् ।
विगुणानिलजो व्याधिः स मूत्रोत्संगसंज्ञितः ॥

अर्थ–प्रवृत्त भया मूत्र बस्ति में अथवा शिश्न में (लिंग में) अथवा शिश्न के अग्र भाग में अटक जाय और बल से मूत्र को करे भी तो वादी से बस्ति को फाडकर जो मूत्र निकले वह मंद मंद थोडा थोडा पीडा के साथ अथवा पीडारहित रुधिरसहित निकले ऐसी विगुण वायु से उत्पन्न हुई इस व्याधि को **मूत्रोत्संग** कहते हैं॥

मूत्रक्षय के लक्षण

रूक्षस्य क्लांतदेहस्य बस्तिस्थौ पित्तमारुतौ ।
मूत्रक्षयं सरुग्दाहं जनयेतां तदाह्वयम् ॥

अर्थ–रूखा भया अथवा श्रांत (थक गया) देह जिस का ऐसे पुरुष के बस्ति (मूत्राशय) में रहे जो पित्त और वायु सो मूत्र का क्षय करे और पीडा तथा दाह होता है उस को **मूत्रक्षय** ऐसे कहते हैं ॥

मूत्रग्रंथी के लक्षण

अन्तर्बस्तिमुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत्।
अश्मरीतुल्यरुग्ग्रन्थिर्मूत्रग्रन्थिः स उच्यते॥

अर्थ–बस्ती के मुख में गोल स्थिर छोटी सी गांठ अकस्मात् होय उस में पथरी के समान पीडा होय इस रोग को मूत्रग्रन्थि ऐसे कहते हैं॥

मूत्रशुक्र के लक्षण

मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतम्। स्थानाच्च्युतं मूत्रयतः प्राक्पश्चाद्वा प्रवर्तते॥ भस्मोदकप्रतीकाशं मूत्रशुक्रं तदुच्यते॥

अर्थ–मूत्रबाधा को रोकके जो मनुष्य स्त्रीसङ्ग करे उस के वायु शुक्र को उडाय स्थान से भ्रष्ट करे, तब मूतने के पहिले अथवा मूतने के पीछे शुक्र गिरे और उस का वर्ण राख मिला पानी के समान होय, उस को मूत्रशुक्र ऐसे कहते हैं॥

उष्णवात के लक्षण

व्यायामाध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्यानिलायुतम्। बस्तिं मेढ्रं गुदं चैव प्रदहेत्स्रावयेदधः॥ मूत्रं हरिद्रमथवा सरक्तं रक्तमेव च। कृच्छ्रात्पुनः पुनर्जंतोरुष्णवातं वदंति तम्॥

अर्थ–व्यायाम (दंड, कसरत), अति मार्ग का चलना और धूप में डोलना इन कारणों से कुपित भया जो पित्त सो बस्ती में प्राप्त हो वायु से मिल बस्ति अंडकोश और गुदा इन में दाह करे और हलदी के समान अथवा कुछ रक्त से युक्त वा लाल ऐसा मूत्र का स्राव वारंवार कष्ट से होय, उस को उष्णवात रोग कहते हैं॥

मूत्रसाद के लक्षण

पित्तं कफो वा द्वौ वापि संहन्येतेऽनिलेन चेत्। कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतं रक्तं श्वेतं घनं स्रवेत्॥ सदाहं रोचनाशंखचूर्णवर्णं भवेत्तु तत्। शुष्कं समस्तवर्णं वा मूत्रसादं वदंति तम्॥

अर्थ–पित्त अथवा कफ वा दोनों वायु करके बिगडे हुए होंय तब मनुष्य पीला, लाल, सफेद, गाढा ऐसा कष्ट से मूते और मूतने के समय दाह होय और जब वह मूत्र पृथ्वी में सूख जाय तब गोरोचन, शंख के चूर्ण सा वर्ण होय अथवा सर्व वर्ण का होय इस रोग को **मूत्रसाद** कहते हैं॥

विड्विघातलक्षण

रूक्षदुर्बलयोर्वातेनोदावर्तं शकृद्यदा । मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत विड्विसृष्टं तदा नरः ॥ विड्गंधं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ–रूक्ष और दुर्बल पुरुष के शकृत् (मल) जब वायु करके प्रेरित उदावर्त्त को प्राप्त हो तब वह मल मूत्र के मार्ग में आवे उस समय मनुष्य मूतने लगे तौ बडे कष्ट से मूत्र उतरे और उस के मूत्र में विष्ठा की सी दुर्गंध आवे, उस को **विड्विघात** कहते हैं ॥

मूत्राघात के असाध्यलक्षण

मूत्राघातः कफोत्पन्नो न सिध्यति कथंचन ।
शोषगौरवयुक्स्निग्धं श्वेतं मेहति यो घनम् ॥

अर्थ–जिस के कफ से उत्पन्न मूत्राघात हुआ है और रोगी यदि शोष और जडत्व से युक्त हो और चिकना, सपेद और घन मूते तो असाध्य है ॥

बस्तिकुंडलिका के लक्षण

द्रुताध्वलंघनायासैरभिघातात्प्रपीडनात्।स्वस्थानाद्बस्तिरुद्वृत्तः स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत् ॥ शूलस्यन्दनदाहार्तो बिन्दुं बिन्दुं स्रवत्यपि । पीडितस्तु सृजेद्धारां संरंभोद्वेष्टनार्तिमान् ॥ बस्तिकुंडलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमम् । पवनप्रबलं प्रायो दुर्निवारमबुद्धिभिः ॥ तस्मिन्पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्रविवर्णता । श्लेष्मणा गौरवं शोथः स्निग्धं मूत्रं घनं सितम् ॥

अर्थ–जल्दी जल्दी चलने से, लंघन करने से, परिश्रम से, लकडी आदि की चोट लगने से, पीडा से बस्ती अपने स्थान को छोड ऊपर जाय, मोटी होकर गर्भ के समान कठिन रहे, उस से शूल, कम्प और दाह ये होंय. मूत की एक एक बून्द गिरे, यदि बस्ती जोर से पीडित होय तौ बडी धार पडे, बस्ती में सूजन होय, पेट में पीडा होय इस रोग को बस्तिकुण्डल ऐसे कहते हैं. यह शस्त्र के समान जल्दी प्राणनाशक और विष के समान कालांतर में प्राण का नाश कर्त्ता भयंकर है. इस में प्रायः वायु प्रबल है, मन्दबुद्धिवाले वैद्यों से इस का निवारण (चिकित्सा) करना कठिन है. इस को अन्य दोषों का सम्बन्ध होने से जो लक्षण होते हैं उन को कहता हूं वही बस्तिकुंडल पित्तयुक्त होने से दाह और मूत्र का बूरा रंग होय और कफयुक्त होने से जडत्व, सूजन, मूत्र चिकना, गाढा, सपेद ऐसा होय ॥

साध्यासाध्यत्वकथन

श्लेष्मरुद्धगलो बस्तिः पित्तोदीर्णो न सिद्ध्यति । अविभ्रांत-बिलः साध्यो न च यः कुण्डलीकृतः ॥ स्याद्बस्तौ कुंडलीभूते तृण्मोहः श्वास एव च ॥

अर्थ–कफ करके जिस का मुख बन्द होय ऐसा और पित्त करके व्याप्त भई ऐसी बस्ती साध्य नहीं होय और जिस बस्ती का मुख खुला होय तथा जो कुण्ड-लीकृत होय नहीं सो साध्य है. बस्ती कुण्डलीभूत होने से प्यास, दाह और श्वास यह लक्षण होंय ॥

मूत्राघात की सामान्यचिकित्सा

स्नेहस्वेदोपपन्नस्य हितं स्नेहविरेचनम् ।
दद्यादुत्तरबस्तिं च मूत्राघाते सवेदने ॥

अर्थ–पीडायुक्त मूत्राघात पर स्नेहन, पसीने निकालना इत्यादि करके स्नेहयुक्त विरेचन देवे अथवा उत्तरबस्ती इत्यादिक उपचार करे ॥

मूत्रकृच्छ्राश्मरीरोगे भेषजं यत्प्रकीर्तितम् ।
मूत्राघातेषु सर्वेषु तत्कुर्याद्देशकालवित् ॥

अर्थ–मूत्रकृच्छ्र, मूत्राश्मरी इन पर जो औषध कही है वह देश और काल जान-नेवाले मनुष्यों को संपूर्ण मूत्राघात पर करना चाहिये ॥

गोक्षुरादि वटी

त्रिकटु त्रिफलातुल्यं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरक्काथसंयुक्ता गुटिकाः कारयेद्भिषक् ॥ दोषकालबलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमि-काम् । न चात्र परिचारोस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ प्रमेहान् वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चाशु नाशयेत् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आवला ये समान भाग ले तथा सब के बराबर गूगल ले. सब को गोखरू के काढे से खरल कर गोली बनावे यह दोष, काल, बल इन को विचार कर देवे. इस पर किसी प्रकार के खाने पीने आदि का निषेध नहीं है यथेष्ट आचरण करे. यह प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्राघात, मूत्रदोष, और प्रदर इन सब को नष्ट करे ॥

पयादि

शृतं शीतं पयो मांसी चंदनं तंदुलांबुना ।
पिबेत्सशर्करं श्रेष्ठमुष्णवाते सशोणिते ॥

अर्थ-औटायकर शीतल करा हुआ दूध, जटामांसी, चंदन, चांवलों का धोवन मिश्री इन को एकत्र कर पीवे तो रक्तसहित उष्णवात पर श्रेष्ठ है ॥

ऐर्वारुबीजादि कल्क

कल्कमैर्वारुबीजानामक्षमात्रं ससैंधवम् ।
धान्याम्लयुक्तं पीत्वैव मूत्राघाताद्विमुच्यते ॥

अर्थ-खीरे के बीज १ तोला लेके पीसे फिर इस कल्क में सैंधानिमक डालके कांजी में मिलायके देवे तो मूत्राघातरोग से छूट जावे ॥

सामान्ययत्न

दद्यादुत्तरबस्तिं वा मूत्राघाते सवेदने ।

अर्थ-वेदनायुक्त मूत्राघात पर उत्तरबस्ती देवे ॥

अतिमैथुन करने से रुधिर गिरे उस पर यत्न

स्त्रीणामतिप्रसंगेन शोणितं यस्य सिच्यते ।
मैथुनोपरमस्तस्य बृंहणीयो विधिर्हितः ॥

अर्थ-अतिमैथुन के योग से जिस का रुधिर लिंग के द्वारा निकले उस को मैथुन न करना चाहिये और पौष्टिक औषधों को सेवन करे ॥

देयः पाषाणभेदोत्रानुपानैः कृच्छ्रनाशनः ।
शीतोपचारं बहुलं कुर्याल्लिंगोद्भवे गदे ॥

अर्थ-पाषाणभेद को अनुपान के साथ देवे तो मूत्रकृच्छ्र को नाश करे और लिंग में होनेवाले रोग पर अत्यंत शीतल उपचार करे ॥

पिबेच्छिलाजतुक्वाथे गणे वीरतरादिके ।
रसं दुरालभाया वा कषायं वासकस्य वा ॥

अर्थ-वीरतर्वादिगण के काढे में शिलाजीत मिलायके पीवे अथवा जवासा अथवा अडूसा इन के काढे को पीवे ॥

त्रिकंटकैरंडशतावरीभिः सिद्धं पयो वातमये सशूले ।
गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥

अर्थ–गोखरू, अंड की जड, शतावर इन का काढा वातजन्य शूलयुक्त मूत्राघात पर उत्तम है तथा गुड, घी, दूध इन को एकत्र कर मूत्रकृच्छ्रादिक रोगों पर प्रशस्त है॥

वीरतर्वादि क्वाथ

वीरतरुर्वृक्षवंदाकाशः सहचरत्रयम् । कुशद्वयनलो गुंद्रा बकपुष्पोग्निमंथकः ॥ मूर्वा पाषाणभेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा । अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणो वरः ॥ वीरतर्वादिरित्युक्तः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा । मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि ॥

अर्थ–कोहवृक्ष की छाल १, बांदा २, कांस ३, सपेद पीयावासा ४, पीला पीयावांसा ५, काला पीयावांसा ६, छोटी डाभ ७, बडी डाभ ८, नरसल ९, गुंद्रा (पटेरे) १०, बकपुष्प ११, अरनी १२, मूर्वा १३, पाषाणभेद १४, स्योनाक (टेंटू) १५, गोखरू १६, ओंगा १७, कमल १८, ब्रह्मी के पत्ते १९ इन उन्नीस औषधों का काढा करके पीवे तो शर्करा, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और वादी के रोग ये सब दूर हों ॥

सशूलमूत्राघात पर

नलकुशकाशेक्षुशिफाक्वथितं प्रातः सुशीतलं ससितम् ।
पिबतः प्रयाति नियतं मूत्राघातः सवेदनः पुंसः ॥

अर्थ–नरसल, कुश, काश, ईख इन की जड का काढा कर शीतल होने पर मिश्री मिलायके पीवे तो पीडायुक्त मूत्राघात को शमन करे ॥

त्रिफलादि क्वाथ

वरांबु लवणं चैव ससूतं यः पिबेन्नरः ।
तस्य नश्यंति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥

अर्थ–त्रिफले के काढे में निमक और पारा डालके जो पीवे उस के तेरह प्रकार के मूत्रकृच्छ्र नष्ट होवे ॥

गोधावन्यादि क्वाथ

गोधावन्यामूलं क्वथितं घृततैलगोरसोन्मिश्रम् ।
पीतं विरुद्धमचिरात् भिनत्ति मूत्रस्य संघातम् ॥

अर्थ–ऋषभक, पिठवन इन की जड का काढा घी, तेल, दूध डालके पीवे तो तत्काल मूत्रसंघात को फोडके निकाल दे ॥

दशमूलादि क्वाथ

दशमूलीशृतं पीत्वा सशिलाजतुशर्करम् ।
वातकुंडलिकाष्ठीलावातबस्तौ प्रयुज्यते ॥

अर्थ–दशमूल के काढे में शिलाजीत और मिश्री डालके पीवे तो वातकुंडलिका, अष्ठीला, वातबस्ती ये नष्ट होवें ॥

गोक्षुरादि क्वाथ

पीतो गोकंटकक्वाथः सशिलाजतुकौशिकः ।
मूत्रक्षयान्मूत्रशुक्रान्मूत्रोत्संगाद्विमुच्यते ॥

अर्थ–गोखरू का काढा शिलाजीत और गूगल डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्रशुक्र, मूत्रोत्संग इन से छूट जावे ॥

प्रकारांतर

क्वाथं समूलपत्रस्य गोक्षुरोः सफलस्य च ।
पिबेन्मधुसितायुक्तं मूत्रकृच्छ्ररुजापहम् ॥

अर्थ–गोखरू के पंचांग का काढा करके उस में सहत और मिश्री डालके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र की पीडा शांत होय ॥

वरुणादि क्वाथ

वरुणगोक्षुरविश्वभृतं जलं गुडयवाग्रजकल्कसमन्वितम् ।
जयति साश्मरिमूत्रविनिग्रहं विरजमप्यतिविस्तरसंचयम् ॥

अर्थ–वरना, गोखरू और सोंठ इन के काढे में गुड और जवाखार मिलायके पीवे तो पथरी, मूत्रनिग्रह, मूत्रशर्करा इन को नाश करे ॥

शतावर्यादि स्वरस

वरीगोक्षुरभूधात्रीमूलानां स्वरसं पलम् । माषमेकं यवक्षारं सौरं माषद्वयं तथा ॥ द्विगुंजं टंकणक्षारं सर्वमेकत्र मेलयेत् । पिबेत्तत्तु विनाशाय मूत्राघाते सुदारुणे ॥

अर्थ–शतावर, गोखरू, भूयआवला इन की जड का स्वरस चार २ तोले, जवाखार १ मासे, सोरा २ मासे, सुहागा २ रत्ती ये सब एकत्र कर घोर दारुण मूत्राघात के नाश करने के विषय में देवे ॥

तिलक्षारयोग

दुग्धमाक्षिकयुता सखे यदा सेविता तु तिलकोलभूतिका।
मूत्रघातजनितव्यथा तदा दाहवत्यपि नृणां न तिष्ठति॥

अर्थ–तिलों की राख को दूध में मिलाके उस में थोडासा सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात अर्थात् मूतने के समय दाह हो वह सब इस के पीने से शांत होकर मूत्र अत्यंत उतरे॥

तालस्य मूलमपि तंदुलवारिपिष्टम्।
मूत्रोष्णवारिशमनं सितया समेतम्॥

अर्थ–ताडवृक्ष की जड को चावलों के धोवन के जल में पीस उस में मिश्री मिलायके देवे तो मूत्र की उष्णता को शमन करे॥

कर्पूरवर्ती

कर्पूररजसा युक्ता वस्त्रवर्तिः शनैः शनैः।
मेढ्रमार्गांतरे न्यस्ता मूत्राघातं व्यपोहति॥

अर्थ–कपूर के चूर्ण को कपडे में मिलाय बत्ती बनाय लेवे फिर उस को धीरे २ शिस्न (लिंग) में प्रवेश करे तो मूत्राघात नष्ट होय॥

निदग्धिकास्वरस

निदग्धिकायाः स्वरसं पिबेद्वा तक्रमिश्रितम्।
जले कुंकुमकल्कं वा सक्षौद्रमुशितं निशि॥

अर्थ–कटेरी का स्वरस छाछ के साथ पीवे अथवा रात्रि के समय जल में केशर भिगोय देवे प्रातःकाल उस में सहत मिलायके पीवे तो मूत्राघात नष्ट होय॥

शिलाजतुयोग

सशर्करं सशीतं च लीढं शुद्धं शिलाजतु।
निहंति मूत्रजठरं मूत्रातीतं च देहिनाम्॥

अर्थ–शुद्ध करा हुआ शिलाजीत, मिश्री, कपूर इन को एकत्र करके खाय तो मनुष्यों का मूत्रजठर और मूत्रातीत इन को नाश करे॥

कर्कटीबीजादि चूर्ण

कर्कटीबीजसिंधूत्थत्रिफलासमभागिकम्।
पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत्॥

अर्थ-ककडी के बीज, सेंधानिमक, हरड, बहेडा, आवला इन को समान भाग ले किया हुआ चूर्ण गरम जल के साथ पीवे तो मूत्ररोगों को नाश करे ॥

भद्रादि चूर्ण

सदा भद्राश्मभिन्मूलं शतावर्याश्च चित्रकम् । रोहिणीकोकिलाख्यौ च क्रौंचस्थूलत्रिकंटकम् ॥ श्लक्ष्णं पिष्टं सुरापीतं मूत्राघातनिषूदनम् ॥

अर्थ-लाल शिवनी, पाषाणभेद, शतावर की जड, चित्रक, कुटकी, कांकोली, कमलाक्ष, बडे गोखरू इन का बारीक चूर्ण कर मद्य के साथ पीवे तो मूत्राघात को नाश करे ॥

स्वगुप्तादि चूर्ण

स्वगुप्ताफलमृद्वीकाकृष्णेक्षुरसितारजः । समानमर्धभागानि क्षीरक्षौद्रघृतानि च ॥ सर्वं सम्यग्विमर्द्याक्षमात्रां लीढ्वा पयः पिबेत् । हंति शुक्रक्षयोत्थांश्च दोषान्वंध्यासुतप्रदम् ॥

अर्थ--सपेद लजालू के फल मनुक्कादाख, काली ईख, नील इन के समभाग चूर्ण और दूध, सहत, घी ये आधे २ भाग लेवे. सब को एकत्र मर्दन करके १ तोले सेवन करे ऊपर से दूध पीवे तो शुक्रक्षय में उत्पन्न हुए दोषों का नाश करे तथा वंध्यास्त्रियों को पुत्र देवे ॥

उशीरादि चूर्ण

उशीरं वालकं पद्मं कुष्ठं धात्री च मौसली । एला हरेणुकं द्राक्षां कुंकुमं नागकेशरम् ॥ पद्मकेसरकं चैव कर्पूरं चंदनद्वयम् । व्योषं मधुकलाजाश्च अश्वगंधा शतावरी ॥ गोक्षुरं कर्कटाख्यं च जाती कंकोलचोरकम् । एतानि समभागानि द्विगुणामृतशर्करा ॥ मत्स्यंडिकामधुभ्यां च प्रातरेव बुभुक्षितः । क्षयं च रक्तपित्तं च पाददाहमसृग्दरम् ॥ मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं रक्तस्रावं च नाशयेत् । अशीतिर्वातजान् रोगान् विशेषान् मेहनुत्परम् ॥

अर्थ-खस, नेत्रवाला, कमलगट्टा, कूठ, आवला, सपेद मूसली, इलायची, रेणुकाद्रव्य, दाख, केशर, नागकेशर, कमल की केशर, कपूर, चंदन, लाल चंदन, त्रिकुटा, खील, असगंध, शतावर, गोखरू, कांकडासिंगी, चमेली, कंकोल, गठोना ये सब औषध

समान भाग लेवे सब का चूर्ण कर और एक भाग चूर्ण, दो भाग घी तथा मिश्री इस प्रकार मिलायके सेवन करे अथवा मिश्री और सहत इन के साथ प्रातःकाल सेवन करे तो क्षय, रक्तपित्त, पाददाह, असृग्दर, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, रक्तस्राव, अस्सी प्रकार-का वायु, विशेष करके प्रमेह इन को नाश करे॥

क्षौद्राद्यघृत

क्षौद्रार्धभागः कर्तव्यो भागः स्यात्क्षीरसर्पिषोः। शर्करायाश्च चूर्णं च द्राक्षाचूर्णं च तत्समम्॥ स्वयंगुप्ताफलं चैव तथैवेक्षुरकस्य च। पिप्पलीनां तथा चूर्णं समभागं प्रदापयेत्॥ तदेकस्थं मेलयित्वा खल्वेनोन्मथ्य च क्षणम्। तस्य पाणितलं चूर्णं लिहेत्क्षीरं ततः पिबेत्। एतत्सर्पिः प्रयुंजानः शुद्धदेहो नरः सदा॥ शुक्रदोषाञ्जयेत्सर्वानेवातिभृशदुर्जयान्। जयेच्छोणितदोषांश्च वंध्या स्त्री गर्भमाप्नुयात्॥

अर्थ-सहत आधा भाग, दूध, घी एक २ भाग, मिश्री का चूर्ण और दाख ये एक एक तोला, कौच के बीज, तालमखाने, पीपल का चूर्ण ये समान भाग लेय. सब को एकत्र मिलाय खरल में थोडी देर पीसके इस में से १ तोला और घी इन को चाटके ऊपर से दूध पीवे तो संपूर्ण शुक्रदोष, रक्तदोष इन का नाश होय. यदि स्त्री इस को सेवन करे तो गर्भ धारण करे॥

धान्यकादिघृत

धान्यगोक्षुरकक्काथं कल्कसिद्धं घृतं हितम्॥
मूत्राघातेषु कृच्छ्रेषु शुक्रदोषे च दारुणे॥

अर्थ-धनिया, गोखरू इन के काढे में अथवा कल्क में सिद्ध करा हुआ घृत सेवन करे तो मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, दारुण शुक्रदोष इन को दूर करे॥

चित्रकाद्यघृत

चित्रकं सारिवा चैव बला काला च सारिवा। द्राक्षा विशल्या पिप्पल्यस्तथा च त्रिफला भवेत्॥ तथैव मधुकं दद्याद्द्यादामलकानि च। घृताढकं पचेदेतैः कल्कैरक्षसमन्वितैः॥क्षीरद्रोणे जलद्रोणे तत्सिद्धमवतारयेत्। शीतं परिश्रुतं चैव शर्कराप्रस्थसं-

युतम् ॥ तुंगाक्षिर्या च तत्सर्वं मतिमान्परिमिश्रयेत् । ततो मितं पिबेत्काले यथादोषं यथाबलम् ॥ मूत्रग्रंथिं मूत्रसादमुष्णवातमसृग्दरम् । विड्विघातं निहंत्येतद्बस्तिकुंडलिमप्यलम् ॥ सर्पिरेतत्प्रयुंजाना स्त्री गर्भं लभते चिरात् । असृक्दोषे योनिदोषे शुक्रदोषे तथैव च ॥ प्रयोक्तव्यमिदं सर्पिश्चित्रकाद्यं सदा बुधैः॥

अर्थ—चित्रक, सारिवा, खिरेटी, नीली, छोटी सारिवा, दाख, गिलोय, पीपल, हरड, बेहडा, आवला, मुलहटी, भूयआवला इन प्रत्येक को एक २ तोले ले सब का कल्क कर उस में २५६ तोले घृत मिलाय १०२४ तोले जल तथा इतना ही दूध मिलायके घी को सिद्ध करे. जब यह शीतल हो जावे तब इस में मिश्री २५६ तोले तथा इतना ही वंशलोचन डालके मिलाय देवे. फिर दोष और बल बिचारके मात्रा देवे तो मूत्रग्रंथी, मूत्रसाद, उष्णवात (सोजाक), रक्तप्रदर, मूत्राघात, बस्तिकुंडली इन को नाश करे. इस घृत को भक्षण करनेवाली स्त्री को गर्भ रहे और रुधिर का दोष, मूत्रदोष इन पर इस चित्रकादिघृत को बुद्धिवान् वैद्य देवे ॥

मूत्राघात पर पथ्य

अभ्यंजनं स्वेदविरेकबस्तिः स्वेदोवगाहोत्तरबस्तयश्च । पुरातना लोहितशालयश्च मांसानि धन्वप्रभवानि मद्यम् ॥ तक्रं पयो दध्यतिमाषयूषः पुराणकूष्मांडफलं पटोलम् । उर्वारुखर्जूरकनारिकेलतालद्रुमाणामपि मस्तकानि । यथाबलं सर्वमिदं च मूत्राघातातुराणां हितमादिशंति ॥

अर्थ—उबटना, स्नेहन, विरेचन, बस्तिकर्म, पसीने निकालना, जल में प्रवेश कर न्हाना, पुराने लाल चावल, सांठी चावल, जंगलीजीवों का मांस, मद्य, छाछ, दूध, दही, उडदों का यूष, पुराना पेठा, परवल, अदरख, ताल की डंडी और गूदा, हरड, नया नारियल, घीगुवार, खिजूर, तालवृक्ष की कोपल ये सब यथा दोषानुसार मूत्राघात रोगीको पथ्य कहे हैं ॥

मूत्राघात पर अपथ्य

विरुद्धान्नानि सर्वाणि व्यायामं मार्गशीलितम् ।
रूक्षं विदाहि विष्टंभि व्यवायं वेगधारणम् ॥
करीरं वमनं चापि मूत्राघाती विवर्जयेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण विरुद्ध पदार्थ, दंड कसरत का करना, रस्ते का बहुत चलना, रूखे, दाहकारी, विष्टंभी पदार्थों का सेवन, मैथुन करना, मलमूत्रादि वेगों का धारण करना, करील और वमन करना ये सब मूत्राघातवाले रोगी को वर्जित हैं ॥

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे मूत्राघातस्य निदान-चिकित्सा समाप्ता ।

अश्मरीरोगकर्मविपाकः ।

परस्त्रीगामी अपस्मारी भवत्यश्मरीवान् ॥

अर्थ—परस्त्री गमन करनेवाला पुरुष अपस्मार (मृगी) अथवा अश्मरी मूत्रकृच्छ्रवाला होय है ॥

शांति

स्वर्णदानं कार्यं तस्य सर्वरोगे दानमुक्तत्वात् ॥

अर्थ—संपूर्ण रोगों में सुवर्णदान कहा है इसी कारण पथरीरोगवाला सुवर्ण दान करे ॥

ज्योतिःशास्त्र का मत

शूलप्रमेहपीडितमश्मर्योपहतमानसं सितो जनयति रविणा दृष्टो जीवग्रहे चंद्रजः पुरुषम् । गुरुग्रहवर्तमानरविदृष्टबुधजनिताश्मरीरोगप्रतीकारपूर्वकं बुधप्रीतये पूर्वोक्तमेव जपादिकं कुर्यात् ॥

अर्थ—जिस प्राणी के जन्म के समय गुरु के घर में बुध बैठा हो तथा सूर्य उस को देखता होय तो शूल, प्रमेह तथा पथरी रोग उत्पन्न होय वह प्राणी बुध के प्रसन्न करने को पूर्वोक्त जपादिक करे ॥

अश्मरी (पथरी) निदान

वातपित्तकफैस्तिस्रश्चतुर्थी शुक्रजा मता ।
प्रायः श्लेष्माश्रयाः सर्वा अश्मर्यः स्युर्यमोपमाः ॥

अर्थ—वात, पित्त, कफ इन से ३ चौथी शुक्र से अश्मरीरोग (**पथरी**) होय है ये पथरी विशेष करके कफाश्रित हैं, ‘ **यमोपमा** ’ कहिये अच्छी चिकित्सा न होय तौ यह अवश्य प्राणनाशक है ॥

संप्राप्ति

विशोषयेद्वस्तिगतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफं वा।
यदा तदाऽश्मर्युपजायते तु क्रमेण पित्तेष्विव रोचना गोः॥

अर्थ–वायु बस्ती में प्राप्त होय, शुक्रयुक्त अथवा पित्तयुक्त मूत्र अथवा कफ को सुखावे तब उस स्थान में पथरी प्रगट होती है. जैसे गऊ के पित्त में गोरोचन जमे है उसी प्रकार बस्ती में वीर्य से पथरी होय है॥

अश्मरी का पूर्वरूप

नैकदोषाश्रयाः सर्वा अश्मर्यः पूर्वलक्षणम्। बस्त्याध्मानं तदासन्नदेशेषु परितोऽतिरुक्॥ मूत्रे बस्तसगंधत्वं मूत्रकृच्छ्र-ज्वरोऽरुचिः॥

अर्थ–सब अश्मरी (पथरी) एक दोष के आश्रय नहीं हैं अर्थात् अनेक दोषाश्रित हैं, बस्ती का फूलना, बस्ती के आसपास अत्यंत पीडा होनी, मूत्र में बकरे के पेशाब की सी दुर्गंध आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, अरुचि ये पथरी के पूर्वरूप जानने॥

अश्मरी के सामान्यलक्षण

सामान्यलिंगं रुङ् नाभिसेवनीबस्तिमूर्धसु। विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तया मार्गनिरोधनं॥ तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदकोपमम्। तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत्॥

अर्थ–नाभिसेवनी (अंडकोश के समीप का भाग) और बस्ती का अग्रभाग इन में शूल होय, पथरी के योग से मूत्रमार्ग रुकने से मूत्र की धार फटी निकले, पथरी मूत्रमार्ग के पास से हट जाय तो मूत्र अच्छी रीति से उतरे और स्वच्छ गोमेदमणी के समान होय, अश्मरी (पथरी) के योग से बस्ती में घाव होने से रुधिर मिला मूत्र उतरे और मूतते समय जोर करने से बडा क्लेश और पीडा होय ये सामान्य लक्षण जानना॥

वाताश्मरी के लक्षण

तत्र वाताद्भृशं व्याप्तो दन्तान्खादति वेपते। मथ्नाति मेहनं नाभिं पीडयत्यनिशं कुणन्॥ सानिलं मुंचति शकृन्मुहुर्मेहति बिन्दुशः। श्यावा रूक्षाऽश्मरी चास्य स्याच्चिता कंटकैरिव॥

अर्थ–वायु की पथरी से रोग अत्यंत पीडा करके व्याप्त होय, दांतों को चबावे,

कांपे, लिंग को हाथ से रगडे, नाभि को रगडे और रातदिन दुःख से रोवे और मूत्र आने के समय पीडा होने के कारण अधोवायु को परित्याग करे, मूत्र वारंवार टपक टपक गिरे उस की पथरी का रंग नीला और रूखा होय उस के ऊपर कांटे होंय॥

अश्मरी की सामान्यचिकित्सा

वाताश्मरीपूर्वरूपे स्नेहपानं प्रशस्यते ॥

अर्थ-वाताश्मरी के पूर्वरूप पर स्नेहपान करना उचित है ॥

शुंठ्यादिचूर्ण

शुंठ्यग्निमंथपाषाणभिद्धुग्वरुणगोक्षुरैः । अभयारग्वधफलैः क्वाथं कृत्वा विचक्षणः ॥ रामठक्षारलवणैः पूर्णं दत्त्वा पिबेन्नरः । वाताश्मरीं हंति कृच्छ्रं मांद्यमग्नेश्च तद्रुजः ॥ कट्यूरुगुदमेढ्रस्थं वृषणस्थं च मारुतम् ॥

अर्थ-सोंठ, अरनी, पाषाणभेद, कूठ, बरना, गोखरू, हरड और अमलतास इन के काढे में हींग, जवाखार, सैंधानिमक इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो बाताश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मंदाग्नि इन के उपद्रव, कमर, ऊरु, गुदाद्वार, मेढ्र, वृषण इन की वादी को नाश करे ॥

यवादिघृत

यवकोलकुलित्थानि कतकस्य फलानि च । चतुर्थांशकषायेण पाच्यमेतच्छृतं घृतम् ॥ शमयेद्वातसंभूतामश्मरीं क्षिप्रमेव च ॥

अर्थ-जो, बेर, कुलथी और निर्मली के बीज इन के चतुर्थांश काढे में घृत डालके सिद्ध करे यह वातोत्पन्न पथरी को नाश करे ॥

वीरतर्वादिक्वाथ

वीरतर्वादिकः क्वाथः पूर्वोक्तो वातजाश्मरीम् ।
सद्यो हंति यवक्षारगुडयुक्तो न संशयः ॥

अर्थ-वीरतर्वादिकाढा, जवाखार, गुड इन को मिलायके पीवे तो तत्काल वातपथरी को नाश करे ॥

अन्न

क्षारान्यवागूं पेयांश्च कषायाणि पयांसि च ।
भोजनार्थं प्रयोज्यानि वाताश्मरिरुजां नृणाम् ॥

अर्थ-खार, कांजी, पेया, काढा, दूध ये वाताश्मरीवाले रोगियों को भोजन में देवे ॥

वरुणमूलक्काथ

क्काथो वरुणमूलस्य तस्य कल्केन संयुतम् ।
शिग्रुमूलस्य च क्काथः कदुष्णश्चाश्मरीं जयेत् ॥

अर्थ-वरना की मूल का काढा तथा उसी जड का कल्क मिलायके पीवे अथवा अमलतास की जड का काढा किंचिन्मात्र गरम करके पीवे तो पथरी को नष्ट करे ॥

पित्ताश्मरी

पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमान इवोष्मवान् ।
भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्ता पीता सिताश्मरी ॥

अर्थ-पित्त की पथरी से रोगी के बस्ती में दाह होय और खार से जैसा दाह होय ऐसी वेदना होय, बस्ती के ऊपर हाथ धरने से गरम मालूम होय और भिलाए की मींगी के समान होय, लाल, पीली, काली होय ॥

पाषाणभेदिक्काथ

पीत्वा पाषाणभित्क्काथं सशिलाजतुशर्करम् ।
पित्ताश्मरीं निहंत्याशु वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥

अर्थ-पाषाणभेद के काढे में शिलाजीत, मिश्री मिलायके पीवे तो पित्ताश्मरी को दूर करे ॥

कफ की पथरी का लक्षण

बस्तिर्निस्तुद्यत इव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः ।
अश्मरी महती श्लक्ष्णमधुवर्णाथवा सिता ॥

अर्थ-कफ की पथरी से बस्ती में नोचने की सी पीडा होय, शीतलपना होय और पथरी बडी मुरगी के अंडे समान, स्वच्छ और मद्य (दारू) के रंग की सी अर्थात् कुछ पीरीसी होय. यह कफ की पथरी बहुधा बालकों के होती है ॥

इस का बालकों के होना

एता भवंति बालानां तेषामेव च भूयसा ।
आश्रयोपचयाल्पत्वाद् ग्रहणाहरणे सुखाः ॥

अर्थ-पूर्वोक्त त्रिदोषजा अश्मरी (पथरी) विशेष करके बालकों के होय है कारण उन का भारी, मीठा, शीतल, चिकना आहार है और उन की बस्ती छोटी,

तथा पुष्टता थोडी होय है इसी से वैद्यों को उस का चीरना, फाडना, काटना, निकालना कठिन नहीं होय सो (सुश्रुत) ने भी कहा है ॥

शिग्रुक्काथ

क्काथो निपीतः सक्षारः शिग्रुत्वग्वरुणत्वचोः ।
कफजामश्मरीं हंति शक्राशनिरिव द्रुमम् ॥

अर्थ–सहजने की छाल और वरना की छाल इन के काढे में जवाखार मिलायके पीवे तो कफ की पथरी को नाश करे जैसे इन्द्र की अशनि (वज्र) वृक्ष को नाश करे ॥

शुक्राश्मरीनिदान

शुक्राश्मरी तु महतां जायते शुक्रधारणात् ।
स्थानाच्च्युतममुक्तं हि मुष्कयोरन्तरेऽनिलः ॥
शोषयत्युपसंहृत्य शुक्रं तच्छुष्कमश्मरी ॥

अर्थ–शुक्राश्मरी यह शुक्र (वीर्य) के रोकने से बडे मनुष्यों को ही होती है. मैथुन करने के समय अपने स्थान से चलायमान हो गया हुआ वीर्य उस समय मैथुन न करे तब शुक्र (वीर्य) बाहर नहीं निकले, भीतर ही रहे तब वायु उस शुक्र को उठाकर सुखा देता है उसी को शुक्रजाश्मरी कहते हैं ॥

शुक्राश्मरी के कार्य

बस्तिरुक्कृच्छ्रमूत्रत्वं मुष्कश्वयथुकारिणी ।
तस्यामुत्पन्नमात्रायां शुक्रमेति विलीयते ॥

अर्थ–इस करके अंडकोषों में सूजन, वस्ति में पीडा और मूत्रकृच्छ्रता होती है और शुक्राश्मरी होने पर उस की जगह घसने से वह शुक्र में ही मिल जाती है ॥

शुक्राश्मरी की सामान्यचिकित्सा

शुक्राश्मर्यां तु सामान्यो विधिरश्मरिनाशनः ॥

अर्थ–शुक्राश्मरी पर अश्मरीनाशक सामान्य यत्न करने चाहिये ॥

यवक्षारयोग

यवक्षारगुडोन्मिश्रं पिबेत्पुष्पफलोद्भवम् ।
रसं मूत्रविबंधघ्नं शुक्राश्मरिविनाशनम् ॥

अर्थ–जवाखार, गुड इन को मिलाय मूत्ररोधनाशक पुष्प का अथवा फल का रस पीवे तो शुक्राश्मरी नष्ट होय ॥

कुटजयोग

पिबतः कुटजं दध्ना पथ्यमन्नं च खादतः ।
निपतत्यचिरादस्य निश्चितं मेढ्रशर्करा ॥

अर्थ–कूडे की छाल को दही में मिलायकर पीनेवाले और पथ्य के करनेवाले के मेढ्र (लिंग) से शर्करा निश्चय बहुत जल्दी गिर जावे ॥

शर्कराश्मरीनिदान

पीडिते त्ववकाशेस्मिन्नश्मर्यैव च शर्करा। अणुशो वायुना भिन्ना सा तस्मिन्ननुलोमगे ॥ निरेति सह मूत्रेण प्रतिलोमे विबध्यते । मूत्रस्रोतःप्रवृत्ता सासक्ता कुर्यादुपद्रवान् ॥ दौर्बल्यं सदनं कार्श्यं कुक्षिशूलमथारुचिम् । पांडुत्वमुष्णवातं च तृष्णां हृत्पीडनं वमिम् ॥

अर्थ–शुक्राश्मरी की आदि में लिंग और अंडकोष, पेडू इन में पीडा होती है. वीर्य के नाश होने के कारण पथरी की नाई शर्करा उत्पन्न होती है. वायु बस्ती में अनुलोमगति से प्रवेश होय तौ वह शर्करा वायु कर छोटे छोटे इकट्ठी होकर मूत्र के साथ बाहर निकले और यदि वायु प्रतिलोम होय तौ मूत्रमार्ग को रोक दे, यदि मूत्रमार्ग में प्राप्त होय तौ मूत्र के वहनेवाले छिद्रों को रोक दे, फिर इतने उपद्रवों को प्रगट करे दुर्बलता, ग्लानि, कृशता, कूख में शूल, अरुचि, पाण्डुरोग, उष्णवात, प्यास, हृदय में पीडा, वमन ये सब उपद्रव होंय ॥

शर्करा के असाध्य लक्षण

प्रशूननाभिवृषणं बद्धमूत्रं रुजान्वितम् ।
अश्मरी क्षपयत्याशु शर्करा सिकतान्विता ॥

अर्थ–जिस की नाभि और वृषण सूज जाय, मूत्र उतरे नहीं, पीडा होय ऐसे पुरुष के शर्करा और सिकतायुक्त पथरी प्राणनाश करे ॥

पाषाणभेदरस

शुद्धसूतं द्विधा गंधं श्वेतपौननंवद्रवैः । मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्ध्वाधो भूधरे पचेत्॥पाषाणभेदसंयुक्तं पिष्ट्वा चूर्णं प्रकल्पयेत् । भक्षयेदश्मरीं हंति रसः पाषाणभेदकः ॥

अर्थ—शुद्ध करा हुआ पारा १ भाग, गंधक २ भाग दोनों को सपेद पुनर्नवाके रस में १ दिन खरल कर भूधरयंत्र में पक्क करे फिर इस की बराबर पाषाणभेद का चूर्ण मिलाय एकत्र खरल करे. फिर शक्तिप्रमाण भक्षण करे तो पथरी को नाश करे इस को **पाषाणभेदी रस** कहते हैं ॥

त्रिविक्रमरस

ताम्रभस्म त्वजाक्षीरे पाच्यं तुल्ये घृते पचेत् । तत्ताम्रं शुद्धसूतं च गंधकं च समं समम् ॥ निर्गुंडयुत्थद्रवैर्मर्द्यं दिनं तद्गोलमाहरेत् । यामैकं वालुकायंत्रे पाच्यं योज्यं द्विगुंजकम् ॥ बीजपूरस्य मूलं तु सजलं चानुपाययेत् । रसस्त्रिविक्रमो नाम्ना सिकता चाश्मरीप्रणुत् ॥

अर्थ—ताम्रभस्म को बकरी के दूध में डालके और घी मिलायके पक्क करे. उस तामे की बराबर गंधक और पारा ये निर्गुंडी के रस में १ प्रहर खरल कर वालुकायंत्र में पचावे फिर इस में से २ रत्ती की मात्रा देवे और बिजोरे की जड का काढा अनुपान में देवे तो यह त्रिविक्रमरस संपूण शर्करा और पथरी इन का नाश करे ॥

रसभस्मयोग

विदारीगोक्षुरुर्यष्टिकेशरं च समं भवेत् । तं कषायं पिबेत्क्षौद्रे रसभस्मयुतं पुनः ॥ मूत्रकृच्छ्राद्विमुच्येत साध्यासाध्यान्न संशयः ॥

अर्थ—विदारीकंद, गोखरू, मुलहटी, नागकेशर इन को समान भाग लेके काढा करे उस में सहत तथा पारे की भस्म मिलायके पीवे तो साध्य अथवा असाध्य ऐसा मूत्रकृच्छ्र दूर होय ॥

लघुलोकेश्वररस

मृतं रसस्य भागैकं चत्वारः शुद्धगंधकम् । पिष्ट्वा वराटिकां तेन रसपादं च टंकणम् ॥ क्षीरे पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा तासां तांश्च धमेत्पुटे । स्वांगशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो रसः ॥ सितासह इदं खादेन्मूत्रकृच्छहरं परम् ॥

अर्थ–पारे की भस्म १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग इन को खरल कर उस कजली को पीली कौडियों में भरे उन के मुख को तीन मासे सुहागे को दूध में पीसके लगाय देवे. फिर इन कौडियों को किसी मिट्टी की हंडिया में बंद कर मुख को कपडमिट्टी से बंद कर देवे. फिर इस को गजपुट में रखके फूंक देय जब स्वांगशीतल हो जावे तब निकालके कौडियों को पीस लेय. इस को लघुलोकेश्वर रस कहते हैं. इस को खांड के साथ सेवन करे तो मूत्रकृच्छ्र को नष्ट करे ॥

गंधर्वादि कल्क

गंधर्वहस्तबृहतीव्याघ्रीगोक्षुरकेक्षुकात् ।
मूलकल्कं पिबेदध्ना मधुरेणाश्मभेदनम् ॥

अर्थ–सपेद अंड, कटेरी, बडी कटेरी, गोखरू, काली ईख इन की जड को मीठे दही में पीसके पीवे तो अश्मरी को तोड डाले ॥

तिलादिक्षार

तिलापामार्गकदलीपलाशयवसंभवः ।
क्षारः पेयो विमूत्रेण शर्करास्वश्मरीषु च ॥

अर्थ–तिल, ओंगा, केला, पलास (ढाक), जौ इन का खार भेड के मूत्र के साथ पीवे तो मूत्राश्मरी, मूत्रशर्करा इन पर प्रशस्त है ॥

शिलाजतुयोग

अश्मर्यां चाश्मरीकृच्छ्रे शिलाजतु समाक्षिकम् ।
यवक्षारं गोक्षुरं च खादेद्वा चाश्मरीहरम् ॥

अर्थ–अश्मरी और अश्मरीयुक्त मूत्रकृच्छ्र इन में सहत मिलायके शिलाजित सेवन करे अथवा जवाखार और गोखरू खाय ॥

हिंग्वादि योग

हिंग्वेलाक्षीरसर्पिस्तु मूत्रशुक्रामयापहम् ॥

अर्थ–हींग, इलायची, दूध, घी इन को एकत्र करके पीवे तो मूत्ररोग, शुक्ररोग इन को नाश करे ॥

शृंगवेरादि कल्क

शृंगबेरयवक्षारपथ्याकालीयकांजनम् ।
आजं दधि भिनत्त्युग्रामश्मरीमाशु पातनम् ॥

अर्थ–अदरख, जवाखार, हरड, दारुहलदी, काला सहजना इन को बकरी के दूध में पीसके पीवे तो शुक्राश्मरी फूटकर निकल जावे ॥

आनंदभैरवीवटी

तिलापामार्गकांडे च कारवल्या यवस्य च। पलाशकाष्ठसंयुक्तं सर्वं तुल्यं दहेत्पुटे॥ तन्निष्कैकमजामूत्रे वटीं चानंदभैरवीम्। पाययेदश्मरीं हंति सप्तवारान्न संशयः॥

अर्थ–तिल, ओंगा, करेला, जो इन की डंडी, पलास की लकडी ये सब समान भाग ले सब को मटके में भरके पुट देकर जलाय ले फिर इस में से चार मासे राख को बकरी के मूत्र में पीस गोली करके खाय इस प्रकार सात वार खाय तो पथरी का पाचन होकर नाश होय इस में संदेह नहीं है॥

मंजिष्ठादि चूर्ण

मंजिष्ठा त्रपुसं बीजं जीरकः शतपुष्पिका। धात्रीफलं बदरकं गंधकं च मनःशिला॥ एतेषां समभागानां चूर्णं टंकमितं नरः। भक्षयेन्मधुना सार्धं पतेत्तस्याश्मरी ध्रुवम्॥

अर्थ–मजीठ, खीरा के बीज, जीरा, सोंफ, आवला, बेर, गंधक, मनसिल ये समान भाग लेकर चूर्ण करे इस में से १ तोले के प्रमाण ले सहत में मिलायके सेवन करे तो उस की पथरी अवश्य गिर जावे॥

त्रिकंटकादि चूर्ण

त्रिकंटकस्य बीजानां चूर्णं माक्षिकसंयुतम्।
आविक्षीरेण सप्ताहं पिबेदश्मरिभेदनम्॥

अर्थ–गोखरू के चूर्ण को सहतयुक्त भेड के दूध में मिलायके ७ दिन पीवे तो पथरी के टुकडे २ होकर गिर जावें॥

केशरयोग

पुराणाज्येन संपिष्टं पीतं सम्यग्दिनत्रयम्।
कुंकुमं नाशयत्याशु देहिनां मेढ्रशर्करा॥

अर्थ–पुराने घी में केशर को खरल कर तीन दिन सेवन करे तो मेढ्रशर्करा नष्ट होय॥

पाषाणभेदीरस

आदौ व्यथा स्यात्कटिकुक्षिदेशे ततो निरोधाज्ज्वलितं च मूत्रम् ।
इत्यश्मरीलक्ष्मरसोत्र युक्तः पाषाणभेदी स निरूप्यतेथ ॥

अर्थ–प्रथम कमर, कूख इन में पीडा, फिर रोध होय इस कारण मूत्र गरम होता है ये पथरी के चिन्ह कहे. इस वास्ते पथरी पर योग्य पाषाणभेदी रस को पीछे लिख आये हैं वह देवे तो यह रोग दूर होय ॥

तिलपुष्पक्षारयोग

क्षारो निपीतस्तिलपुष्पजातः समाक्षिकः क्षीरयुतस्त्रिरात्रम् ।
हंत्यश्मरीं सिंधुविमिश्रितं वा निपीयमानं रुचकं प्रयत्नात् ॥

अर्थ–तिलों के फूलों का क्षार, सहत, दूध इन को एकत्र कर तीन दिन पीवे अथवा सैंधानिमक और बिजोरे के रस का सेवन करे तो पथरी दूर होय ॥

गोपालकर्कटीमूलयोग

गोपालकर्कटीमूलं पिष्टं पर्युषितांभसा ।
पीयमानं त्रिरात्रेण पातयत्यश्मरीं हठात् ॥

अर्थ–कचरिया की जड को बासे पानी में पीसके पीवे तो तीन ही दिन में पथरी गिर जावे ॥

अर्कपुष्पीकल्क

गव्येन पिष्ट्वा पयसार्कपुष्पी निपीयमाना त्रिदिनं प्रभाते ।
विदार्य वीर्येण निजेन तीव्रामप्यश्मरीं या कुरुते च दाहम् ॥

अर्थ–अर्कपुष्पी को गौ के दूध में पीसके प्रातःकाल तीन दिन पीवे तो अपनी सामर्थ्य से दाहयुक्त तीव्र पथरी के टुकडे २ करके नाश करे ॥

शतावरीमूलरस

शतावरीमूलरसो गव्येन पयसा समः ।
पीतो निपातयत्याशु ह्यश्मरीं चिरजामपि ॥

अर्थ–शतावर का रस और इस के बराबर गौ का दूध इन को मिलायके पीवे तो बहुत दिन की भी पथरी को तत्काल नाश करे ॥

वरुणादि क्वाथ

वरुणस्य त्वचं श्रेष्ठां शुंठीगोक्षुरसंयुताम् । यवक्षारगुडं दत्त्वा क्वाथं

कृत्वा पिबेद्धिमम् ॥ अश्मरीशर्करामूत्रकृच्छ्राघातरुजापहम् ॥

अर्थ-वरना की छाल, सोंठ, गोखरू, जवाखार, गुड इन के काढे को शीतल करके देवे तो मूत्राश्मरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात इन सब रोगों को नाश करे ॥

एलामधुकगोकंटरेणुकैरंडवासकः। कृष्णाश्मभेदसहिताः क्वाथ एषां सुसाधितः॥ शिलाजतुयुतः पेयः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥

अर्थ-इलायची १, मुलहटी २, गोखरू ३, रेणुकबीज ४, अंड की जड ५, अडूसा ६, पीपल ७, पाषाणभेद ८ इन आठ औषधों का काढा करके उस में शिलाजीत मिलायके पीवे तो शर्करा, पथरी और मूत्रकृच्छ्र इन को दूर करे ॥

क्वाथ

वरुणत्वक्कषायस्तु पीतो गुडसमन्वितः ।
अश्मरीं पातयत्याशु बस्तिशूलं च नाशयेत् ॥

अर्थ-वरना की छाल के काढे में गुड डालके पीवे तो अश्मरी (पथरी), बस्तिशूल (मसाने का दर्द) इन को नाश करे ॥

शिग्रुमूलक्वाथ

क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कदूष्णोश्मरिपातनः ।
क्षीरान्नभुग्बर्हिशिखामूलं वा तंदुलांबुना ॥

अर्थ-सहजने की जड का काढा चरपरा उष्ण और पथरी को गेरनेवाला है इस वास्ते इस को पीवे अथवा गठोना की जड चांवलों को धोवन में पीसके पीवे और दूधभात भोजन करे तो पथरी नष्ट होय ॥

तुषकषाय

यः पिबेद्रजनीं सम्यक् सगुडां तुषवारिणा ।
तस्याशु चिररूढापि यात्यस्तं मेढ्रशर्करा ॥

अर्थ-सोंठ के काढे में हलदी और गुड डालके पीवे तो उस की बहुत दिनों की शर्करा लिंग से गिर जावे ॥

शुंठ्यादि क्वाथ

शुंठ्यग्निमंथापामार्गशिग्रुवरुणगोक्षुरैः ।
अभयारग्वधफलैः क्वाथं कुर्याद्विचक्षणः ॥

रामठक्षारलवणचूर्णं दत्त्वा पिबेन्नरः ।
अश्मरीमूत्रकृच्छ्रघ्नं दीपनं पाचनं परम् ॥

अर्थ–सोंठ, अरनी, चिरचिरा, सहजना, बरना, गोखरू, हरड, अमलतास का गूदा इन का काढा कर बुद्धिवान् वैद्य मूत्राश्मरी, मूत्रकृच्छ्र इन पर हींग, जवाखार, सैंधानिमक डालके पिलावे तो यह अत्यंत दीपन पाचन है ॥

आकल्लकादि क्काथ

आकल्लगोक्षुरजटातुलसीशिलाभिरेरंडमूलमगधामधुकैः प्रयुक्तः। तक्राह्वमूलसुरसासुरपुष्पशुंठीक्काथो निहंति बहुलाप्रतिवापितोयम्॥ सप्ताहमेव पिबतां नियमेन पुंसां घोराश्मरीमतिरुजं सहशर्करां च । आवीपयो मधुविमिश्रितमाशु तद्वत् चूर्णं त्रिवृत्कुटजबीजभवं वदंति ॥

अर्थ–अकरकरा, गोखरू की जड, तुलसी का रस, पाषाणभेद, अंड की जड, पीपल, मुलहटी, कैथ की जड, निर्गुंडी, लौंग, सोंठ इन औषधों का काढा करके इस में इलायची का चूर्ण डालके पीवे इस प्रकार सात दिन करने से घोर पीडाकारक पथरी और मूत्र में जो रेतीसी निकले वह दूर होवे उसी प्रकार भेड का दूध सहत मिलायके देवे अथवा निसोथ, इन्द्रजो इन का चूर्ण करके दूध अथवा चावलों के धोवन से देवे ॥

पाषाणभेदादि क्काथ

पाषाणभिद्वरुणगोक्षुरकोरुबूकक्षुद्राद्वयं क्षुरकमूलकृतः कषायः ।
दध्ना युतो जयति मूत्रविबंधशुक्रमुग्राश्मरीमपि च शर्करया समेतम् ॥

अर्थ–पाषाणभेद, वरना, गोखरू, अंड, कटेरी, बडी कटेरी, तालमखाने इन का काढा दही मिलायके पीवे तो मूत्रविबंध, शुक्राश्मरी, शर्करा इन को नाश करे ॥

कुलित्थक्काथ

पलद्वयमिते कोष्णे कुलित्थस्य शृते त्वपः । लवणं शरपुंखेन सार्धं माषद्वयोन्मितम् ॥ क्षिप्त्वा पिबेत्पतेत्तस्य मूत्रेण सममश्मरी । शर्करा सिकता चापि दृष्टमेतदनेकधा ॥

अर्थ–कुलथी का काढा ८ तोले, सरफोके का चूर्ण और सैंधानिमक २ मासे डालके पीवे तो मूत्र के साथ गिरनेवाली पथरीशर्करा और सिकता निकल जावे ॥

कूष्मांडस्वरस

कूष्मांडकरसं हिंगुयवक्षारयुतं पिबेत्।
बस्तौ मेढ्रे शूलयुक्ते चाश्मरीं शर्करां जयेत् ॥

अर्थ–पेठे का रस, हींग, जवाखार इन को एकत्र करके पीवे तो बस्ति और शिश्न इन का शूल, पथरी, शर्करा इन को जीते ॥

वरुणादि घृत

वरुणस्य तुलां क्षुण्णां जलद्रोणे विपाचयेत्। पादशेषं परिश्राप्य घृतप्रस्थं विपाचयेत् ॥ वारुणी कदली बिल्वं तृणजं पंचमूलकम्। अमृता त्वश्मजं देयं बीजं च त्रपुसस्य च ॥ शतपर्वातिलक्षारः पलाशक्षार एव च। यूथिकायाश्च मूलानि कर्षकानि समर्पयेत् ॥ अस्य मात्रां पिबेज्जंतुर्देशकालाद्यपेक्षया। जीर्णे चानुपिबेत्सर्वमजीर्णे मस्तुमेव च ॥ अश्मरीं शर्करां चैव मूत्रकृच्छ्रं च नाशयेत् ॥

अर्थ–बरना की छाल ४०० तोले को कूट १०२४ तोले जल में औटावे. जब चतुर्थांश जल रहे तब उतारके जल को छान लेवे. इस में ६४ तोले घी डालके औटावे जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके इस में वारुणी, केला, बेल, कुश, काश, ईख, रामशर, मूंज, गिलोय, शिलाजीत, खीरे के बीज, काली दूब, तिलों का खार, पलास का खार, जुही ये सब औषध एक २ तोले लेके उस में डाल देवे. फिर देश काल को विचारके और बलाबल विचार इस की मात्रा खाय जब औषध पच जावे तब जो इच्छा होय सो भोजन पान करे और न पचे तो दही का जल पीवे यह औषध पथरी, मूत्रकृच्छ्र, शर्करा इन को नाश करे ॥

पाषाणभेदपाक

अश्मभेदात्प्रस्थमेकं चूर्णितं वस्त्रगालितम्। गव्ये दुग्धाढके क्षिप्त्वा पाचयेन्मृदुवह्निना ॥ दर्व्या संघट्टयेत्तावद्यावद्घनतरं भवेत्। एला लवंगमगधा यष्टी मध्वमृताभया ॥ कौंती श्वदंष्ट्रा वृषकं शरपुंखा पुनर्नवा। यावशूकोनिलघ्नश्च मांसिसत्तांगुलोत्पलम् ॥ वंगं लोहं तथाभ्रं च कर्पूरं पर्पटं सठी। पत्रेभ-

केशरं त्वक्च संशुद्धं च शिलाजतु ॥ पृथगर्धपलं चूर्णं चूर्णिता सितशर्करा । सार्धप्रस्थमिता ग्राह्या दुग्धे लेहत्वतां गते ॥ सर्वं तन्निक्षिपेत्तत्र स्वांगशीतलतां नयेत्।मधुनः प्रस्थकं दद्यात्स्निग्धभांडे विनिक्षिपेत् ॥ कर्षार्धं भक्षयेत्प्रातस्तीक्ष्णं तैलादिकं त्यजेत् । पंचाश्मरीभेदनं स्यान्मूत्रकृच्छ्रं खुडं तथा ॥ मूत्राघातान्प्रमेहांश्च नाशयेन्मधुमेहजान् । अधोगं रक्तपित्तं च बस्तिकुक्षिगदं तथा ॥ तीव्राश्मरीपरीतानां विशेषेण हितं हि तत् । यत् ब्रह्मणा विरचितं च्यवनाय निवेदितम् ॥

अर्थ—पाषाणभेद ६४ तोले लेकर कपडछान चूर्ण कर लेवे. फिर इस को २५६ तोले गौ के दूध में डाल मंदाग्नि से परिपक्क करे और कलछी से टारता २ गाढा करे फिर इलायची, लौंग, पीपल, मुलहटी, गिलोय, हरड, रेणुकबीज, गोखरू, अडूसा, सरफोका, पुनर्नवा, जवाखार, बहेडा, जटामांसी, सतांगुल, कमल, वंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, कपूर, कचूर, पत्रज, नागकेशर, दालचीनी, शिलाजीत ये प्रत्येक औषध दो दो तोले लेकर चूर्ण करे. मिश्री ९६ तोले. सब का चूर्ण कर दूध के गाढे होने पर सब को डाल दे और मिलायके एक जीव कर देय. फिर उतार शीतल होनेपर ६४ तोले सहत मिलायके चिकने बासन में भरके धर रखे प्रातःकाल इन में से आधा तोला नित्य सेवन करे. इस पर तीखे पदार्थ और तेल न खाय तो पांच प्रकार की पथरी, मूत्रकृच्छ्र, खुड, मूत्राघात, प्रमेह, मधुमेह, अधोरक्त, बस्तिगत, कुक्षिगत पित्त इन का नाशक, अत्यंत तीव्र पथरी करके पीडित मनुष्यों को विशेष करके हितकारी है. जो ब्रह्मदेव ने रची और च्यवन ऋषि को कही वही यह औषध है ॥

वरुणादि गुड

नो जग्धं कृमिभिर्घनं सुतरुणं स्निग्धं शुचिस्थानजं घस्रे पुण्यनिरीक्षिते वरुणकं छित्त्वा तुलां ग्राहयेत् । संग्राह्यासु चतुर्गुणासु विपचेत्पादावशेषं जलं तत्तुल्येन गुडेन वै दृढतरे भांडे पचेत्तत्पुनः॥ ज्ञात्वैवं घनतां गुडे परिणते प्रत्येकमेषां पलं शुंठ्योर्वारुकबीजगोक्षुरकणापाषाणभिच्छीतला । कूष्मांडं खलु साक्षबीजकुनटीवास्तूकसौभांजनद्राक्षैलागिरिजाभयाक्रमिहृतां चूर्णी-

कृतानां क्षिपेत् ॥ पथ्याशी प्रतिवासरं गुडममुं योग्यप्रमाणं नरः खादेत्तस्य समस्तदोषजनिताश्मर्यः पतंति द्रुतम् ॥

अर्थ–जो कीडों ने न खाया हो, नवीन, मोटा, रसयुक्त, पवित्रस्थान का, उत्तम दिन देखके लाया हुआ वरना का काष्ठ अथवा जड ४०० तोले ले उस को चौगुने जल में चढायके औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान ले फिर इस काढे के समान गुड डालके फिर पाक करे जब गाढा हो जावे तब सोंठ, खीरे के बीज, गोखरू, पीपल, पाषाणभेद, पद्माख, पेठा, बहेडा, मनसिल, वथुआ, सहजना, दाख, इलायची, छोटा पाषाणभेद, हरड, वायविडंग इन का चूर्ण प्रत्येक चार २ तोले उस में डालके बलाबल विचारके नित्य भक्षण करे इस प्रकार करने से उस प्राणी की सर्व दोषजन्य पथरी शीघ्र गिर जावे ॥

अश्मरी (पथरी) पर पथ्य

कुलित्था मुद्गगोधूमा जीर्णशालियवा हिताः । धन्वामिषं तंदुलीयं जीर्णं कूष्मांडकं फलम् ॥ आर्द्रकं यावशूकश्च पथ्यमश्मरिरोगिणाम् ॥

अर्थ–कुलथी, मूंग, गेहूं, पुराने शाली चावल, सत्तु, निर्जल देश के जीवों का मांस, तंदुलीय, पुराना पेठा, अदरख, जवाखार इतने पदार्थ अश्मरीरोगवाले को पथ्यकारक हैं ॥

पथ्य

बस्तिर्विरेको वमनं च लंघनं स्वेदोऽवगाहोऽपि च वारिसेचनम् । यवा कुलित्थाश्च पुराणशालयो मद्यानि धन्वांडजसंभवा रसाः॥ पुराणकूष्मांडफलं कसेरुकं गोकंटको वारुणशाकमार्द्रकम् । पाषाणभेदो यवशूकरेणवश्छिन्ना समाकर्षणमश्मनामपि ॥ एतानि सर्वाणि भवंति सर्वदा मुदेऽश्मरीरोगनिपीडितात्मनाम् ॥

अर्थ–बस्तिकर्म, जुल्लाब, वमन, लंघन, पसीने निकालना, जल में धसके न्हाना, जल पीना, जों, कुलथी, पुराने शाली चावल, मद्य, जंगली जीवों के अंडों का सोरुआ, पुराना पेठा, कसेरू, गोखरू, जल में उत्पन्न होनेवाले साग, अदरख, पाषाणभेद, जों के आगे के कांटे, रेणुका, गिलोय, पथरी को कृशकारी कर्म ये सब पदार्थ पथरीरोगपीडित मनुष्यों को सदैव आनंद के देनेवाले हैं ॥

अश्मरी पर अपथ्य

मूत्रस्य शुक्रस्य च वेगमम्लं विष्टंभि रूक्षं गुरु चान्नपानम्।
विरुद्धपानाशनमश्मरीमान् विवर्जयेत्संततमप्रमत्तः ॥

अर्थ—मूत्र और शुक्र के उपस्थित वेग को रोकना, खटाई, विष्टंभी, रूखे और भारी ऐसे अन्न, जल का सेवन, विरुद्ध पान और भोजन इन सब को पथरीरोगवाला सावधानी के साथ परित्याग कर देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे अश्मरीरोगनिदानचिकित्सा समाप्ता।

प्रमेहरोगकर्मविपाकः।

चांडालीगमनात्सर्वप्रमेहव्याधिमान् भवेत्। क्षुत्पिपासातुरश्चैव जायते तस्य निष्कृतिः ॥ चांद्रायणत्रयं कुर्याद्यवमध्यं तथापरे। जुहुयात्सर्पिषा चैतान् जपेन्मंत्रान्समाहितः ॥ इदमापः प्रवहत इति द्वयोर्मेधातिथिर्ऋषिः ॥

अर्थ—चांडाली (भंगिन) के साथ गमन करने से प्रमेह का रोग होता है अथवा क्षुधा (भूंख), तृषा (प्यास) इन से आतुर होवे. उस का प्रायश्चित कहते हैं. उस को यवमध्य चांद्रायण तीन करने तथा दूसरे दिन " इदमापः प्रवहत " इस का मेधातिथि ऋषि इत्यादि अंगन्यास करन्यास करके जप करे और इसी मंत्र से घृत का होम करे ॥

सशूलप्रमेह का कर्मविपाक

तिर्यग्गामी सशूलेन प्रमेहेन युतो भवेत्।
कुर्यात्सांतपनादीनि प्रायश्चित्तं यथाविधि ॥

अर्थ—तिर्यग्गामी अर्थात् गैया, बकरी, घोडी इत्यादिक से जो मैथुन करता है उस पुरुष के पीडायुक्त प्रमेह का रोग होता है. उस को प्रायश्चित्त यह है कि वह सांतपन व्रत करे ॥

वातप्रमेहकर्मविपाक

पर्वव्यवायो मनुजः कन्यागामी तथैव च।
वातप्रमेहयुक्तः स्यात्कुर्याच्चांद्रायणव्रतम् ॥

अर्थ–अमावास्या, पूर्णमासी आदि पर्व तिथियों में जो स्त्रीगमन करता है अथवा कन्या गमन करे वो वातप्रमेहवाला होता है उस को चांद्रायणव्रत तीन करने चाहिये॥

मधुमेह का कर्मविपाक

मधुमेही मातृगामी सततं जायते नरः । पितृभार्याभिगामी च जलमेही नराधमः॥ यो गच्छेद्भगिनीं नित्यमिक्षुमेही भवेन्नरः। प्रायश्चित्तं क्रमादत्र षड्वर्षाण्यथ पंच च ॥ त्र्यब्दमित्याचरेत्सम्यक् ततो रोगात्प्रमुच्यते ॥

अर्थ–मातृगमन अथवा सौतेली माता से गमन करे तो जलमेही होय. उस का क्रम से प्रायश्चित्त कहते हैं. जो प्राणी भगनी (बहन) से गमन करता है वह इक्षुप्रमेही होवे वह छः वर्ष अथवा पांच वर्ष अथवा तीन वर्ष चांद्रायणादि व्रत करे तो प्रमेहरोग दूर होय ॥

प्रमेहनिदान

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्योदकानूपरसाः पयांसि। नवान्नपानं गुडवैकृतं च प्रमेहहेतुः कफकृच्च सर्वम् ॥

अर्थ–बैठने के सुख से, निद्रा के सुख से अथवा स्वप्नसुख कहिये स्वप्न में स्त्रीप्रसंग आदि सुख से, दही, ग्राम के संचारी जीव भेड बकरी आदि, जल के संचारी जीव मच्छी कछुआ आदि, अनूप (जलसमीप) के रहनेवाले जीव हंस चकवा आदि ऐसे प्राणियों के मांसरस, दूध, नया अन्न और नया जल तथा शर्करा गुड आदि के पदार्थ अथवा गुड के विकार ये और जितने कफकारक पदार्थ हैं सो सब प्रमेह होने के कारण हैं ॥

कफादि प्रमेहों की संप्राप्ति

मेदश्च मांसं च शरीरजं च क्लेदं कफो बस्तिगतः प्रदूष्य । करोति मेहान्समुदीर्णमुष्णैस्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि ॥ क्षीणेषु दोषेष्ववकृत्य धातून्संदूष्य मेहान्कुरुतेऽनिलश्च ॥

अर्थ–बस्ति (मूत्रस्थान) गत कफ, मेद, मांस और शरीर के क्लेद को बिगाड कर प्रमेह को उत्पन्न करे है उसी प्रकार गरम पदार्थ से पित्त कुपित होकर पूर्वोक्त मेद मांस को बिगाडकर प्रमेह को उत्पन्न करे और वायु यह दोष क्षीण होने से धातु (वसा मज्जादिक) को ईंचकर (बस्ती के मुखपर लायकर) प्रमेह को प्रगट करे॥

कफादिजन्य प्रमेहों का साध्यासाध्यत्व

साध्याः कफोत्था दश पित्तजाः षट् याप्या न साध्या पवनाश्चतुष्काः । समक्रियत्वाद्विषमक्रियत्वान्महाक्रियत्वाच्च यथाक्रमं ते ॥

अर्थ–कफ से प्रगट दस प्रमेह साध्य हैं कारण इस का यह है कि कफदोष और मेदःप्रभृति दूष्य इन पर कटुतिक्तादि क्रिया समान है इस रोग में रोग का ही प्रभाव ऐसा है कि इस में तुल्यदूष्य को साध्यत्व कहा है और प्रमेह के विना और रोगों को अतुल्य (असमान) दूष्यत्व साध्य का हेतु होय है. पित्त की छः प्रमेह विषम चिकित्सा करने से याप्य होय हैं अर्थात् पित्त हरण करनेवाले जे शीत मधुर आदि द्रव्य वे मेद को बढानेवाले हैं और मेद हरणकर्त्ता उष्ण कटुकादि द्रव्य वे पित्तकर्त्ता हैं ऐसे क्रिया विषम है. वादी से प्रगट चार प्रमेह मज्जादि गंभीर धातु के आकर्षण करने से अत्यंत पीडाकर्त्ता हैं और इन की विषम ही क्रिया है इसी से ये चार असाध्य हैं ॥

प्रमेहों में दोष और दूष्य तथा संख्या

कफः सपित्तः पवनश्च दोषा मेदश्च शुक्रांबुवसालसीकाः ।
मज्जारसौजं पिशितं च दूष्याः प्रमेहिणीं विंशतिरेव मेहाः ॥

अर्थ–कफ, पित्त और वादी ये दोष और मेद, रुधिर, शुक्र, जल, मांस, स्नेह (चर्बी), लसिका (मांस का जल), मज्जारस, ओज और मांस ये दूष्य जानने इन दोष और दूष्य दोनों से वीस प्रकार के प्रमेह होते हैं ॥

पूर्वरूप

दंतादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः ।
दाहश्चिक्कणता देहे तृट्श्वासश्च प्रजायते ॥

अर्थ–दांतों में आदिशब्द से जिव्हा तालु आदि का ग्रहण है, इन में मैल बहुत रहे, हाथ पैर में दाह, अंग का चिकनापना, प्यास, श्वास, चकार से केशों (बालों) का आपस में लिपट जाना और नखों का बढाना ये प्रमेह के पूर्वरूप होते हैं ॥

प्रमेह के सामान्यलक्षण

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता । दोषदूष्याविशेषेपि तत्संयोगाविशेषतः ॥ मूत्रवर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते । सम्यक्चेदं परिज्ञाय क्रिया कार्या भिषग्वरैः ॥

अर्थ–बहुत और गाढा मूत्र उतरे ये प्रमेह के सामान्य लक्षण हैं. दोष और दूष्य इन के भेद होने से. परंतु दोष और दूष्य इन के संयोग भेद से मूत्र वर्णादि भेद करके प्रमेह में भेद होय है दस छः चार इत्यादिक दोष (वात पित्त कफ) दूष्य (मांस मेदा मज्जादि) जैसे सफेद पीला काला तामे के रंग का और श्याम इन पांच रंगों के संयोग करने से पिंगल पाटलादि अनेक वर्णभेद होते हैं इसी प्रकार दोषादिकों के संयोग से नाना प्रकार के प्रमेह होते हैं संयोग भेद की कैसे प्रतीति हो ऐसे कोई पूछे तो उस के वास्ते कहते हैं मूत्र के वर्णादि भेद से समान कारणों के भेद कल्पना करने चाहिये. जैसे घट (घडा) बनाने के समय मृत्तिकादि कारण सामग्री में भेद नहीं है परंतु कुम्भकारादि (कुह्मारआदि) संयोग भेद करके घडा सरवा मटकना आदि अनेक जातिभेद हो जाते हैं. इन भेदों को अच्छी तरह जानके महावैद्य को इन की चिकित्सा करनी चाहिये॥

प्रमेह के वीस भेद

उदकश्चेक्षुसांद्रश्च सुराह्वो पिष्टकस्तथा। शुक्राह्वः सिकताह्वश्च शीतमेहः शनैस्तथा॥ लालामेहस्तथा क्षारो नीलमेहोथ कारकः। हरिद्रमेहो मांजिष्ठो रक्तमेहस्तथापरः॥ षोडशोथ वसा मेहो मज्जामेहस्तु कीर्तितः। क्षौद्रमेहश्च हस्ती च मेहानां विंशतिः क्रमात्॥

अर्थ–उदकमेह, इक्षुमेह, सुरामेह, सांद्रमेह, पिष्टकमेह, शुक्रमेह, सिकतामेह, शीतमेह, शनैर्मेह, लालामेह, क्षारमेह, नीलमेह, कालप्रमेह, हारिद्रमेह, मांजिष्ठमेह, रक्तमेह, वसामेह, मज्जामेह, क्षौद्रमेह, हस्तिमेह ऐसे प्रमेह वीस प्रकार के हैं॥

कफजन्य उदकादि दश प्रमेह

अच्छं बहुसितं शीतं निर्गंधमुदकोपमम्। मेहत्युदकमेहेन किंचिदाविलपिच्छिलम्॥ इक्षो रसमिवात्यर्थं मधुरं चेक्षुमेहतः। सांद्रीभवेत्पर्युषितं सान्द्रमेहेन मेहति॥ सुरामेही सुरातुल्यमुपर्यच्छमधोघनम्। संहृष्टरोमा पिष्टेन पिष्टवद्बहुलं सितम्॥ शुक्राभं शुक्रमिश्रं वा शुक्रमेही प्रमेहति। मूत्राणून् सिकतामेही सिकतारूपिणो मलान्॥ शीतमेही सुबहुशो मधुरं भृशशीतलम्। शनैः शनैः शनैर्मेही मन्दं मन्दं प्रमेहति॥ लालातंतुयुतं मूत्रं लालामेहेन पिच्छिलम्॥

अर्थ–१ उदकप्रमेह करके–स्वच्छ बहुत सपेद शीतल गंधरहित, पानी के समान कुछ गाढा और चिकना मूते है. २ इक्षुप्रमेह से–ईख के रससमान अत्यंत मीठा ऐसा मूत्र होय. ३ सांद्रप्रमेह से–रात्र में पात्र में धरने से जैसा होवे ऐसा मूत्र होय. ४ सुराप्रमेह से–दारू के समान ऊपर निर्मल और नीचे गाढा ऐसा मूते. ५ पिष्टप्रमेह से–पीसे चावलों के पानीसमान सपेद और बहुत मूते तथा मूतते समय रोमांच होय. ६ शुक्रप्रमेह से–शुक्र(वीर्य) के समान अथवा शुक्रमिला मूत्र होय. ७ सिकतामेह से–मूत्र के कण और वालू रेत के समान मलके रवा गिरें. ८ शीतमेह से–मधुर तथा अत्यंत शीतल ऐसा वारंवार बहुत मूते. ९ शनैर्मेह से–धीरे धीरे और मंद मंद मूते. १० लालाप्रमेह से–लार के समान तारयुक्त और चिकना मूत्र होय है ॥

पित्तप्रमेह के छः भेद

क्षारमेही नीलमेही कालहारिद्रमेहनः ॥
मांजिष्ठो रक्तमेहश्च मेहाः षट् पित्तजाः स्मृताः ॥

अर्थ–क्षारप्रमेह, नीलप्रमेह, कालप्रमेह, हारिद्रप्रमेह, मांजिष्ठप्रमेह, रक्तप्रमेह ऐसे छः प्रकार के प्रमेह पित्त से उत्पन्न होते हैं ॥

क्षारादि प्रमेहों के लक्षण

गंधवर्णरसस्पर्शैः क्षारेण क्षारतोयवत् । नीलमेहेन नीलाभं कालमेही मषीनिभम् ॥ हरिद्रमेही कटुकं हरिद्रासन्निभं दहेत् । विस्रं मांजिष्ठमेहेन मंजिष्ठासलिलोपमम् ॥ विस्रमुष्णं सलवणं रक्ताभं रक्तमेहतः ॥

अर्थ–११ क्षारप्रमेह से– खारी जल के समान गंध वर्ण रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है.१२ नीलप्रमेह से– नीले रंग का अर्थात् पपैया पक्षी के पंख के सदृश मूते. १३ कालप्रमेह से–स्याई के समान काला मूते. १४ हारिद्रप्रमेह से–तीक्ष्ण हलदी के समान और दाहयुक्त मूते.१५ मांजिष्ठप्रमेह से–आम दुर्गंध और मजीठ के समान मूते.१६ रक्तप्रमेह से–दुर्गंधयुक्त गरम खारी और रुधिर के समान लाल मूत्र करे ॥

वातजन्यमेह

चत्वारस्तु वसामज्जाहस्तिमध्वनिलात्मजाः ॥

अर्थ–वसाप्रमेह, मज्जाप्रमेह, हस्तिप्रमेह, क्षौद्रप्रमेह ऐसे चार प्रकार के प्रमेह वायु से उत्पन्न होते हैं ॥

वसादि मेहों के लक्षण

वसामिश्रं वसामेही वसाभं मूत्रयेन्मुहुः । मज्जाभं मज्जमिश्रं वा मज्जामेही मुहुर्मुहुः ॥ कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहं वदेद्बुधः । हस्ती मत्त इवाजस्रं मूत्रं वेगविवर्जितम् ॥ सालसीकं विबुद्धं च हस्तिमेहेन मेहति ॥

अर्थ–१७ वसाप्रमेही–वसा (चर्बी) युक्त अथवा वसा के समान मूते. १८ मज्जाप्रमेही–मज्जा के समान अथवा मज्जा मिला वारंवार मूते. १९ क्षौद्रप्रमेही–कषेला मीठा और चिकना ऐसा मूते. २० हस्तिप्रमेही–मस्त हाथी के समान निरंतर वेगरहित जिस में तार निकले और ठहर ठहरके मूते ॥

कफप्रमेहों के उपद्रव

अविपाकोऽरुचिश्छर्दिर्ज्वरः कासः सपीनसः ।
उपद्रवाः प्रजायन्ते मेहानां कफजन्मनाम् ॥

अर्थ–अन्न का परिपाक न होय अरुचि वमन ज्वर खांसी पीनस ये कफप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

पित्तप्रमेहों के उपद्रव

बस्तिमेहनयोः शूलं मुष्कावदरणं ज्वरः ।
दाहस्तृष्णाम्लिका मूर्च्छा विड्भेदःपित्तजन्मनाम् ॥

अर्थ–बस्ती और लिंग इन में पीडा होय, अंडकोशों का पककर फटना, ज्वर, प्यास, खट्टी डकार, मूर्च्छा और पतला दस्त होय ये पित्तप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

वातप्रमेहों के उपद्रव

वातजानामुदावर्तः कंठहृद्ग्रहलोलताः ।
शूलमुन्निद्रता शोषः कासः श्वासश्च जायते ॥

अर्थ–उदावर्त्त, गला हृदय इन का रुकना, लोलता (सर्वरस भक्षणेच्छा), शूल, निद्रानाश, शोष, सूखी खांसी, श्वास ये वातप्रमेह के उपद्रव हैं ॥

असाध्यलक्षण

यथोक्तोपद्रवाविष्टमतिप्रस्रुतमेव च ।
पिडिकापीडितं गाढं प्रमेहो हन्ति मानवम् ॥

अर्थ–ऊपर कह आये जो अविपाकादि उपद्रव वे सब होंय, जिस के मूत्र का स्राव बहुत हुआ होय, शराविका आदि जो पिडिका आगे कहेंगे वे होंय, रोग अंग में प्रवेश हो गया हो ऐसे लक्षण होने से वह प्रमेह मनुष्य को मार डाले ॥

स्त्रियों के प्रमेह न होने में कारण

रजः प्रवर्तते यस्मान्मासि मासि विशोधयन् ।
सर्वान् शरीरदोषांश्च न प्रमेहोस्त्यतस्त्रियाः ॥

अर्थ–हर मास में रजःप्रवृत्ति होने से स्त्रियों के शरीरसंबंधी सब दोष शुद्ध होते हैं इसी से स्त्रियों के प्रमेह नहीं होता है ॥

प्रमेह के असाध्यलक्षण

जातः प्रमेही मधुमेहिना यो न साध्यरोगः स हि बीजपोषात् ।
ये चापि केचित्कुलजा विकारा भवन्ति तांश्च प्रवदन्त्यसाध्यान् ॥

अर्थ–मधुमेही पुरुष से उत्पन्न भया जो प्रमेहवान् पुरुष का रोग बीजदोष के कारण से साध्य नहीं होय इस जगह मधुमेहशब्द से साधारण प्रमेह जानना. इस जगह भी मधुकोशटीकावाले ने मधुमेहशब्द पैं बहुतसा शास्त्रार्थ लिखा है जो कोई कुष्ठादिक कुलपरंपरागत विकार हैं वे सब असाध्य हैं अब कहते हैं कि सर्व प्रमेहों की उपेक्षा करने से मधुमेहत्व को प्राप्त होते हैं ॥

मधुमेहोत्पत्ति और कारण

सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रतिकारिणः ।
मधुमेहत्वमायांति तदाऽसाध्या भवंति हि ॥

अर्थ–सब प्रमेह औषध के विना काल करके मधुमेह को प्राप्त होते हैं तब वे असाध्य हो जाते हैं ॥

दो प्रकार के मधुमेहों के कारण

मधुमेहे मधुसमं जायते स किल द्विधा ।
क्रुद्धे धातुक्षयाद्वायौ दोषावृतपथेऽथवा ॥

अर्थ–मधुमेह में मूत्र मधु (सहत) के समान होय है सो दो प्रकार का है एक तो धातुक्षय होने से वायु कुपित होकर होय और दूसरा दोषों करके पवन का मार्ग आवृत (ढकने) करके होय है ॥

आवरण के लक्षण

आवृतो दोषलिंगैस्तु सोऽनिमित्तं प्रदर्शयन् ।
क्षीणः क्षणात्पुनः पूर्णो भजते कृच्छ्रसाध्यताम् ॥

अर्थ–आवृत वायु से प्रगट मधुमेह जिस पित्तादि दोष करके आच्छादित होय उस के लक्षण अकस्मात् दीखें क्षणभर में क्षीण होय क्षण में पूर्ण होय वह कष्टसाध्य जानना ॥

मधुमेहप्रवृत्तिनिमित्त

मधुरं यच्च मेहेषु प्रायो मध्विव मेहति ।
सर्वेऽपि मधुमेहाख्यां माधुर्याच्च तनोरतः ॥

अर्थ–प्रमेहों में रोगी प्रायशः मधु (सहत) के समान मीठा मूते और सब शरीर को मीठा कर दे इसी से सर्व प्रमेह को मधुप्रमेहसंज्ञा दी है और अमृतसागर में जो छः प्रमेह आत्रेय के मत से लिखी हैं वह प्रमाणरहित है और प्रसिद्ध में भी प्रमेह वीस प्रकार के हैं इसी से हम ने छोड दीने हैं ॥

लोध्रादि क्वाथ

लोध्राभयाकट्फलमुस्तकानां विडंगपाठार्जुनधन्वकानाम् ।
कदंबशाखार्जुनदीप्यकानां विडंगदार्वीघनशाल्मलीनाम् ॥
चत्वार एते मधुना कषायाः कफप्रमेहेषु निषेवणीयाः ॥

अर्थ–लोध, हरड, कायफल, नागरमोथा. वायविडंग, पाढ, कोह की छाल, धमासा. कदंब, कोह, अजमायन. वायविडंग, दारुहलदी, नागरमोथा, सेमर का गोंद इन चार क्वाथ में से किसी एक को सहत डालके कफप्रमेह पर देवे ॥

कफजन्यमेहों पर क्रम से दश क्वाथ

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्राः पाठाविडंगार्जुनधन्वयासाः । उभे हरिद्रे तगरं विडंगं कदंबशालार्जुनदीप्यकाश्च ॥ दार्वी विडंगं खदिरो धवश्च सुराह्वकुष्ठार्जुनचंदनानि । दार्व्यग्निमंथौ त्रिफला सपाठा पाठा च मूर्वा च तथाश्वदंष्ट्रा ॥ यवान्युशीराण्यभयागुडूचीजंबूशिवाचित्रकसप्तपर्णाः । पादैः कषायः कफमेहिनां ते दशोपदिष्टा मधुसंप्रयुक्ताः ॥ जलप्रमेहेक्षुरसप्रमेहे सांद्रप्रमेहे च

सुराप्रमेहे । पिष्टप्रमेहेपि च शुक्रमेहे क्रमादमी स्युः सिकताप्रमेहे ॥ शीतप्रमेहे च शनैःप्रमेहे लालाप्रमेहेपि सुखाय तेषाम् ॥

अर्थ-हरड, कायफल, नागरमोथा, लोध, इन का; पाढ, वायविडंग, कोह, धमासा इनका; दारुहलदी, हलदी, तगर, वायविडंग इन का; कदंब, शाल, कोह, अजमायन इन का; दारुहलदी, वायविडंग, खैर, धों इन का; देवदारु, कूठ, चंदन, कोह इन का; दारुहलदी, अरनी, त्रिफला, पाढ इन का; पाढ, मूर्वा, गोखरू इन का; अजमायन, खस, हरड, गिलोय इन का; जामुन, आंवला, चित्रक, सतोना इन का क्काथ ये दश काढे श्लोक के एक एक पाद में समाप्त हुए हैं इन से एक २ को कफप्रमेह पर देवे. उन को क्रम करके कहते हैं. जलप्रमेह, इक्षुप्रमेह, सांद्रप्रमेह, सुराप्रमेह, पिष्टप्रमेह, शुक्रप्रमेह, सिकताप्रमेह, शीतप्रमेह, शनैःप्रमेह, लालाप्रमेह इन प्रमेहों पर क्रम से देवे तो रोगी को सुख होय ॥

शनैर्मेह

शनैर्मेहिनां त्रिफलागुडूचीकषायम् ॥

अर्थ-शनैःप्रमेह पर त्रिफला और गिलोय का क्काथ करके देवे ॥

पिष्टप्रमेह

पिष्टमेहिनां हरिद्राद्वितयकषायम् ॥

अर्थ-पिष्टप्रमेह पर हलदी, दारुहलदी का क्काथ करके देवे ॥

सिकताप्रमेह

सिकतामेहिनां निंबकषायम् ॥

अर्थ-सिकताप्रमेह पर नीम की छाल का क्काथ करके पीवे ॥

उदकप्रमेह

उदकमेहिनां पारिजातकषायं पाययेत् ॥

अर्थ-उदकप्रमेही को पारिजात (हरसिंगार)का क्काथ करके पिलावे ॥

सांद्रप्रमेह

सांद्रमेहिनां सप्तपर्णकषायम् ॥

अर्थ-सांद्रप्रमेह पर सतोना की छाल का काढा करके पीवे ॥

लालाप्रमेह

लालामेहिनां त्रिफलारग्वधमृद्वीकाकषायं पाययेत् ॥

अर्थ–लालाप्रमेहवाले को त्रिफला, अमलतास और दाख इन का काढा करके पिलावे ॥

शुक्रमेह

शुक्रमेहिनां दूर्वाशैवलप्लवकारंजकसेरुककषायम् । ककुभचंदनकषायं वा ॥

अर्थ–शुक्रप्रमेह पर दूब, काई, भद्रमोथा, कंजा, कसेरू इन का क्वाथ करके देवे अथवा कोह की छाल और चन्दन इन का काढा करके देवे ॥

शीतप्रमेह

शीतमेहिनां पाठागोक्षुरकषायम् ॥

अर्थ–शीतप्रमेह पर पाढ, गोखरू इन का काढा करके पीवे ॥

इक्षुप्रमेह

इक्षुमेहिनां निंबकषायम् ॥

अर्थ–इक्षुप्रमेही मनुष्य को नींब की छाल का काढा करके देवे ॥

सुराप्रमेह

सुरामेहिनां शाल्मलीकषायम् ॥

अर्थ–सुराप्रमेह पर सेमर का गोंद (मोचरस) का काढा करके देय ॥

पित्तप्रमेह पर चार क्काथ

लोध्रार्जुनोशीरकुचंदनानामरिष्टसव्यामलकाभयानाम् । धात्र्यर्जुनारिष्टकवत्सकानां नीलोत्पलाजाजिनिशार्जुनानाम् ॥ चत्वार एते विहिताः कषायाः पित्तप्रमेहेषु मधुप्रयुक्ताः ॥

अर्थ–कोह, कोह की छाल, खस, पतंग इनका; नींब, नेत्रवाला, आवला और हरड इन का; आवला, कोह, नीम की छाल, कूडा की छाल इन का; काला कमल, जीरा, हलदी और कोह इन का काढा ये चार काढे सहत डालके पित्तप्रमेहों पर पृथक् २ देवे ॥

पित्त की छः प्रमेहों पर क्रम से छः क्काथ

उशीरलोध्रासुरचंदनानां उशीरमुस्तामलकाभयानाम् । पटोलनिंबामलकामृतानां मुस्ताभयापुष्करवृक्षकानाम् ॥ लोध्रांबु-

कालीयकधातकीनां विश्वार्जुनानां मिशितोत्पलानाम्। मांजिष्ठहारिद्रकनीलक्षारं कृष्णाख्यरक्ते क्रमशः कषायाः ॥

अर्थ—नेत्रवाला, लोध, असगंध, चंदन, इन का काढा; वाला, नागरमोथा, आंवला, हरड इन का; पटोलपत्र, नीम की छाल, आवला, गिलोय इन का; नागरमोथा, हरड, पुहकरमूल इन का; लोध, नेत्रवाला, दारुहलदी, धाय के फूल इन का; सोंठ, कोहवृक्ष की छाल, सोंफ, कमल इन का काढा ये छः क्वाथ क्रम करके मांजिष्ठ, हारिद्र, नील, क्षार, काल, रक्त इन छः पित्त की प्रमेहों पर देना उत्तम है ॥

क्षारप्रमेह

क्षारमेहिनां त्रिफलाकषायम् ॥

अर्थ—क्षारमेहवाले मनुष्य को त्रिफले का काढा पिलावे ॥

हरिद्रामेह

हरिद्रामेहिनां राजवृक्षकषायम् ॥

अर्थ—हरिद्राप्रमेहवाले को अमलतास के गूदे का काढा करके देवे ॥

मांजिष्ठप्रमेह

मांजिष्ठमेहिनां मंजिष्ठाचंदनकषायम् ॥

अर्थ—मांजिष्ठप्रमेहवाले को मंजीठ और लालचंदन का काढा करके देवे ॥

शोणितप्रमेह

शोणितमेहिनां गुडूचीतिंदुकास्थिकाश्मर्यखर्जूरकषायं मधुमिश्रं पाययेत् ॥

अर्थ—शोणितप्रमेहवाले को गिलोय, तेंदू के बीज, कंभारी के फल, खजूर इन के काढे में सहत मिलायके पिलावे ॥

दुष्टरक्तज प्रमेह

क्वाथः खर्जुरकाश्मर्यतिंदुकास्थ्यमृताकृताः ॥
सुहिमः पीतमात्रस्तु सक्षौद्रो रक्तमेहहा ॥

अर्थ—खजूर, कंभारी के फल, तेंदू के फल के भीतर की गिरी, गिलोय इन के काढे को शीतल करके पीवे तो रक्तप्रमेह दूर होय ॥

नीलप्रमेह

नीलमेहिनां सालसादिकषायं अश्वत्थकषायं वा ॥

अर्थ–नीलमेहवाले मनुष्य को सालकादि क्वाथ अथवा पीपल का काढा देवे ॥

सर्पिप्रमेह वातजन्य

सर्पिर्मेहिनां कुष्ठकुटजपाठाहिंगुकटुरोहिणीकल्कम्,
गुडूचीचित्रककषायं पाययेत् ॥

अर्थ–सर्पिप्रमेहवाले मनुष्य को कूठ, पाढ, हींग, कुटकी इन का चूर्ण अथवा गिलोय, चित्रक इन का काढा देवे ॥

छिन्नादि क्वाथ

छिन्नावह्निकषायं वा पाठाकुटजरामठम् ।
तिक्ता कुष्ठं च संपूर्णं सर्पिर्मेहे पिबेन्नरः ॥

अर्थ–गिलोय और चित्रक इन का अथवा पाढ, कूडे की छाल, हींग, कुटकी, कूठ इन सब का काढा सर्पिप्रमेहनाशनार्थ पीवे ॥

हस्तिमेह

हस्तिमेहिनां तिंदुककपित्थकशिरीषपालाशपाठामूर्वा-
दुःस्पर्शकषायं मधुमिश्रम् ॥

अर्थ–हस्तिप्रमेह पर तेंदू, कैथ, सिरस, पलास, पाढ, मूर्वा और धमासा इन का काढा सहत मिलायके पीवे ॥

हस्तिमेह पर क्षार

हस्त्यश्वशूकरखरोष्ट्रास्थिक्षारं चेति ॥

अर्थ–हाथी, घोडा, वन का सूअर, गधा और ऊंट इन की हड्डी का क्षार हस्तिमेहनाशक है ॥

वसा मेह और हस्तिमेह पर क्वाथ

अग्निमंथकषायं तु वसामेहे प्रयोजयेत् । पाठाशिरीषदुस्पर्शमूर्वाकिंशुकतिंदुकैः ॥ कपित्थेन भिषक् कुर्यात् क्वाथं हस्तिप्रमेहके ॥

अर्थ–अरनी का काढा वसाप्रमेह पर देवे और पाढ, सिरस, धमासा, मूर्वा, पलास, तेंदू, कैथ इन का काढा करके वैद्य हस्तिप्रमेह पर देवे ॥

क्षौद्रमेह और सर्पिमेह पर क्वाथ

पूगारिमेदयोः क्वाथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् । छिन्नावह्निकषा-

येण पाठाकुटजरामठम् ॥ तिक्ता कुष्ठं च संचूर्ण्य सर्पिर्मेहे पिबेन्नरः ॥

अर्थ–सुपारी, सपेद कत्था इन के काढे में सहत डालके पीवे तो क्षौद्रप्रमेह दूर होय और गिलोय, चित्रक इन के काढे में पाढ, कूडा, हींग, कुटकी, कूठ इन का चूर्ण मिलायके पीवे तो सर्पिप्रमेह दूर होय ॥

द्वितीययोग

चांगेरीमेदयोः क्काथः सक्षौद्रः क्षौद्रमेहिनाम् ॥

अर्थ–क्षौद्रप्रमेहवाले रोगी को चूका और मेदा इन के काढे में सहत डालके पीना चाहिये ॥

वसामेह

वसामेहिनां अग्निमंथकषायं शिंशपाकषायं वा ॥

अर्थ–वसाप्रमेह पर अरनी का अथवा काली सीसों का काढा करके देवे ॥

कफपित्तप्रमेह पर

कंपिल्लसप्तच्छदशालजानि बिभीतरोहीतककौटजानि । पुष्पाणि दध्नश्च विचूर्णितानि क्षौद्रेण लिह्यात्कफपित्तमेहे ॥

अर्थ–कबीला, सतोना, कोह की छाल, बहेडा, लाल रोहिडा, कूडा इन के फूलों को दही में पीस सहत डालके चाटे तो कफपित्तप्रमेह पर उत्तम है ॥

कफवातजन्य प्रमेह पर

हरीतकीकट्फलमुस्तलोध्रकुचंदनोशीरकृतः कषायः ।
क्षौद्रेण युक्तः कफवातमेहं निहंति पीतारजसा च पीतः ।

अर्थ–हरड, कायफल, नागरमोथा, लोध, लाल चंदन, खस इन के काढे में सहत डालके अथवा हलदी के चूर्ण के साथ पीवे तो कफवातप्रमेह को नाश करे ॥

पित्तवातज प्रमेह

विडंगरजनीद्वंद्वं खदिरोशीरपूगजः ।
क्काथः पीतः प्रगे हंति मेहं पित्तानिलोद्भवम् ॥

अर्थ–वायविडंग, दारुहलदी, हलदी, कत्था, खस, सुपारी इन का काढा प्रातःकाल पीवे तो पित्तवात से प्रगट प्रमेह को नाश करे ॥

त्रिफलादि क्काथ

त्रिफलादारुदार्व्यब्दक्काथः क्षौद्रेण मेहहा ।
गुडूच्याः स्वरसः पीतो मधुना सर्वमेहजित् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहलदी, नागरमोथा इन का काढा सहत डालके अथवा गिलोय का स्वरस सहत डालके पीवे तो सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

त्रिफलादि क्काथ दूसरा

फलत्रिकं दारु निशा विशाला मुस्ता च निष्क्काथ्य निशासमेतम् ।
पिबेत्कषायं मधुना प्रयुक्तं सर्वप्रमेहेषु समुत्थितेषु ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, देवदारु, दारुहलदी, इन्द्रायन, नागरमोथा इन के काढे में हलदी, सहत डालके सर्व प्रमेहों पर देवे ॥

पलाशपुष्पक्काथ

पलाशतरुपुष्पाणां क्काथः शर्करया युतः ।
निषेवितः प्रमेहाणि हंति नानाविधान्यपि ॥

अर्थ–पलासपुष्प (केसूला के फूलों) का काढा मिश्री मिलायके पीवे तो अनेक प्रकार के प्रमेह दूर हों ॥

प्रमेहनाशक योगत्रय

धात्र्याः कषायं मधुरात्रियुक्तं वटांकुराणां समधुं कषायम् ।
पाषाणभेदं मधुमिश्रमेतत्त्रयं प्रमेहापहमामनंति ॥

अर्थ–आवलों का काढा करके उस में सहत और हलदी का चूर्ण मिलायके देवे अथवा बड के अंकुरों का काढा कर सहत डालके पीवे अथवा पाषाणभेद के चूर्ण को सहत में मिलायके देवे ये तीन योगों से प्रमेह दूर होय ॥

विडंगादि क्काथ

विडंगरजनीयष्टीनागरागोक्षुरैः कृतः ।
कषायो मधुना हंति प्रमेहान् दुस्तरानपि ॥

अर्थ–वायविडंग, हलदी, मुलहटी, सोंठ, गोखरू इन का काढा कर उस में सहत डालके पीवे तो दुस्तरप्रमेह को नाश करे ॥

प्रकारांतर

कुटजासनदार्व्यब्दफलत्रयभवोथ वा ॥

अर्थ–कूडा की छाल, विजेसार, नागरमोथा और त्रिफला इन का काढा सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

चणकयोग

द्विनिशात्रिफलाकल्कमातपे धारयेत्त्र्यहम् । मृद्भांडे दोलिका यंत्रे चणकान्मुष्टिमात्रकान् ॥ अहोरात्रोषितान्खादेद्वर्धमानं दिने दिने । असाध्यं साधयेन्मेहं सिद्धयोग उदाहृतः ॥

अर्थ–हलदी, दारुहलदी, हरड, बहेडा, आवला इन के कल्क को मिट्टी के बरतन में भरके उस को डोलायंत्र करके तीन दिन धूप में रखे फिर एक मुट्ठी चनों को एक दिन रात्र उस में ढांक देवे फिर उन को भक्षण करे इस प्रकार नित्य बढावे अर्थात् पहले दिन १ मुट्ठी दूसरे दिन २ और तीसरे दिन ३ इस प्रकार बढाया करे तौ असाध्य प्रमेह को भी नाश करे यह सिद्ध योग कहा है ॥

योगचतुष्टय

मधुना त्रिफलाचूर्णमर्धं वाश्मजतूद्भवम् ।
लोहजं वा मलोत्थं वा लिह्यान्मेहनिवृत्तये ॥

अर्थ–सहत में मिलायके त्रिफले का चूर्ण सेवन करे अथवा सहत के साथ शिलाजीत देवे अथवा लोह की भस्म देवे अथवा मंडूर देवे तो प्रमेह नष्ट होय ॥

शालादि कल्क

शालमुस्तककंपिल्लकल्कमक्षसमं पिबेत् ।
धात्रीरसेन सक्षौद्रं सर्वमेहहरं परम् ॥

अर्थ–कोह की छाल, नागरमोथा, कवीला इन का कल्क १ तोला आवले का रस और सहत इन सब को मिलायके देवे तो संपूर्ण प्रमेहों को नाश करे ॥

वंग तथा नागभस्म

गुडूचीरसमधुना वंगभस्म प्रमेहनुत् ।
नागभस्म तथैवापि सर्वमेहनिवारणम् ॥

अर्थ–गिलोय के रस को सहत में मिलायके और इस में वंगभस्म मिलायके सेवन करे तो प्रमेह नष्ट होय उसी प्रकार नाग (शीशे) की भस्म सर्व प्रमेहों को नाश करे ॥

द्विनिशादि हिम

द्विनिशा त्रिफलायुक्तं रात्रौ पर्युषितं जलम् ।
प्रभाते मधुना पीतं मेहशूलं निकृंतति ॥

अर्थ–दारुहलदी, हलदी, हरड, बहेडा, आंवला इन को जवकुट कर रात्रिके समय जल में भिगोय देवे प्रातःकाल उस को मसलकर जल को कपडे से छान लेवे इस में सहत मिलायके पीवे तो प्रमेह की जड को उखाडके पटक देवे ॥

गुडूची तथा धात्रीरसयोग

यथामृतारसः क्षौद्रयुक्तः सर्वप्रमेहजित् ।
हरिद्राचूर्णयुक्तो वा रसो धात्र्याः समाक्षिकः ॥

अर्थ–जैसे गिलोय का स्वरस सहतयुक्त सर्व प्रमेहों को जीतनेवाला है उसी प्रकार हलदी का चूर्ण और सहत मिलायके आंवले का स्वरस सर्व मेहहारी जानना॥

अंकोल्यादि योग

अंकोलीमुकुलं धात्री हरिद्रा मधुना लिहेत् ।
विंशतिं च प्रमेहानां हंति सत्यं न संशयः ॥

अर्थ–अंकोल की कली, आंवले, हलदी इन के चूर्ण को सहत के साथ चाटे तो वीस प्रकार के प्रमेहों को नाश करे इस में संदेह नहीं है ॥

भूधात्र्यादि योग

भूधात्रीपत्रिगंधानां मरीचानां च विंशतिः ।
असाध्यान्साधयेन्मेहान् सप्तरात्रान्न संशयः ॥

अर्थ–भूयआवला, दालचीनी, इलायची, पत्रज, वीस काली मिरच इन सब को एकत्र पीसके सेवन करे तो असाध्य प्रमेह भी सात दिन में नष्ट होय इस में संदेह नहीं ॥

कतकबीजयोग

कर्षप्रमाणं कतकस्य बीजं तक्रेण पिष्ट्वा सह माक्षिकेन।
प्रमेहजालं विनिहंति सद्यो रामो यथा रावणमाजघान ॥

अर्थ–निर्मली के बीज एक तोले छाछ में पीसके उस में सहत डालके पीवे यह प्रमेह के समुदाय को तत्काल नाश करे जैसे राम ने रावण को मारा ॥

शाल्मलीस्वरस

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वंगभस्म हरेन्मेहान् पंचानन इव द्विपान् ॥

अर्थ-सेमर की छाल का रस, सहत और हलदी का चूर्ण तथा वंगभस्म इन सब को मिलायके खाय तो जैसे सिंह को हाथी नाश करे इस प्रकार प्रमेहों को नाश करे ॥

एलादि चूर्ण

एलाशिलाजतुकणापाषाणभेदनिर्मितं चूर्णम् ।
तंदुलजलेन पीतं प्रमेहरोगं हरत्याशु ॥

अर्थ-इलायची, शिलाजीत, पीपल, पाषाणभेद इन के चूर्ण को चावलों के धोवन के साथ पीवे तो प्रमेह को तत्काल नाश करे ॥

कर्कट्यादि चूर्ण

कर्कटीबीजसिंधूत्थत्रिफलासमभागिकम् ।
पीतमुष्णांभसा चूर्णं मूत्ररोधं निवारयेत् ॥

अर्थ-ककडी के बीज, हरड, बहेडा, आंवला इन का चूर्ण, सैंधानिमक ये सब समान भाग ले कूट गरम जल में मिलायके पीवे तो मूत्ररोध को निवारण करे ॥

त्रिफलाचूर्ण

एका हरीतकी योज्या द्वौ च योज्यौ बिभीतकौ । चत्वार्यामलकान्येव त्रिफलैषा प्रकीर्तिता ॥ त्रिफला शोथमेहघ्नी नाशयेद्विषमज्वरान् । दीपनी श्लेष्मपित्तघ्नी कुष्ठहंत्री रसायनी ॥ सर्पिर्मधुभ्यां संयुक्ता सेव्या नेत्रामयाञ्जयेत् ॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आंवला इन तीन औषधों का चूर्ण करे तहां एक हरड, २ बहेडे और तीन आंवले मिलाने से त्रिफला होता है इस के सेवन करने से प्रमेह और सूजन तथा विषमज्वर, कफ तथा पित्त और कुष्ठ ये दूर हों, अग्नि प्रदीप्त हो, यह त्रिफला रसायन है तथा घी और सहत को एकत्र कर उस में त्रिफले का चूर्ण मिलाय सेवन करे तो नेत्र के संपूर्ण रोग दूर होवें ॥

गुग्गुलु

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुग्गुलुं च समांशकम् । गोक्षुरक्काथसंयुक्तां वटिकां कारयेद्बुधः ॥ देशकालबलापेक्षी भक्षयेच्चानुलोमिकाम् । नचात्र परिहारोऽस्ति कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ॥ प्रमेहा-

न्वातरोगांश्च वातशोणितमेव च । मूत्राघातं मूत्रदोषं प्रदरं चापि नाशयेत् ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, नागरमोथा और गूगल ये समान भाग ले गोखरू के काढे में गोली बनाय देश, काल, बल को विचार भक्षण करे. यह अनुलोमक है. इस पर पथ्य नहीं है. यथेच्छ कर्म करे. प्रमेह, वातरोग, वातरक्त, मूत्रावात, मूत्रदोष, प्रदर इन को नाश करे ॥

गोक्षुरादि गुग्गुल

अष्टाविंशतिसंख्यानि पलान्यानीय गोक्षुरान् । विपचेत्षड्गुणे नीरे क्काथो ग्राह्योर्द्धशेषितः ॥ ततः पुनः पचेत्तत्र पुरं सप्तपलं क्षिपेत् । गुडपाकसमाकारं ज्ञात्वा तत्र विनिक्षिपेत् ॥ त्रिकटु-त्रिफलामुस्तं चूर्णितं पलसप्तकम् । ततः पिंडीकृतं चास्य गुटि-कामुपयोजयेत् ॥ हन्यात्प्रमेहं कृच्छ्रं च प्रदरं मूत्रघातकम् । वतास्रं वातरोगांश्च शुक्रदोषं तथाश्मरीम् ॥

अर्थ–गोखरू २८ पल को जोकुट कर छःगुने जल में डालके औटावे जब आधा जल शेष रहे तब उतारके छान ले. फिर इस में शुद्ध करी हुई गूगल ७ पल डालके औटावे जब गुडपाक के समान गाढी हो जावे तब इस में सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला और नागरमोथा ये सात औषध एक २ पल ले. सब का चूर्ण करके उस पाक में मिलाय देवे. फिर एक पिंड करके खरल में कूट एक जीव करके गोली बनाय लेवे. इस को सेवन करे तो प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, प्रदररोग और मूत्राघात, वातरक्त, वादी के रोग, धातु का विकार और पथरीरोग इन सब को दूर करे ॥

चंद्रकलावटी

एलासकर्पूरशिला सधात्री जातीफलं गोक्षुरशालमली च । सूतेंद्रवंगायसभस्म सर्वमेतत्समानं परिभावयेच्च ॥ गुडूचिकाशाल्मलिकाकषायैर्निष्काधमाना मधुना ततश्च । बद्धा वटी चंद्रकलेति संज्ञा सर्वप्रमेहेषु नियोजयेत्ताम् ॥

अर्थ–इलायची, भीमसेनी कपूर, शिलाजीत, आंवले, जायफल, गोखरू, मोच-रस, पारा, वंगभस्म और लोहे की भस्म सब समान भाग लेवे. सब को गिलोय

और सेमर के काढे की भावना देकर दो २ मासे की गोली बनावे. इस को सहत के साथ सर्व प्रमेहों पर देवे. इस को चंद्रकलावटी कहते हैं ॥

चंद्रप्रभावटी

वेल्लव्योषफलत्रिकं त्रिलवणं द्विक्षारचव्यानलश्यामापिप्पलिमूलमुस्तकसठीमाक्षिकधातुत्वचः । षड्ग्रंथामरदारुवारणकणाभूनिंबदंतीनिशापत्रैलातिविषापिचुप्रतिमिता लोहस्य कर्षाष्टकम् ॥ त्वक्क्षीरीपलिकापुराद्दशपलान्यष्टौ शिलाजन्मनो मानात्कर्षसमाकृतेति गुटिका संयोज्य सर्वं भिषक् ।तत्रैव प्रतिवासरे सहघृतं क्षौद्रेण लिह्यादिमां तक्रं मस्तु च गोघृतं मधुरसं पश्चात्पिबेन्मात्रया ॥ अर्शांसि प्रदरं ज्वरं च विषमं नाडीव्रणानश्मरीं कृच्छ्रं विद्रधिमग्निमांद्यमुदरं पांड्वामयं कामलाम् । यक्ष्माणं सभगंदरं सपिटिकां गुल्मप्रमेहारुची रेतोदोषमुरःक्षतं कफमरुत्पित्तार्तिमुग्रां जयेत् ॥ वृद्धं संजनयेद्युवानमसमोजस्कं बलं वर्धयेदेतस्मान्न निषिद्धमन्नमसकृन्नाध्वागमो मैथुनम् । विख्याता गुटिकेयमंचतितरां चंद्रप्रभानामतो सांद्रानंदकरी तनोति च रुचिं चंद्रेण तुल्यां तनौ ॥

अर्थ–काली मिरच, त्रिकुटा, त्रिफला, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, सेंधानिमक, काला निमक और कचियानिमक, चव्य, चित्रक, सारिवा, पीपरामूल, नागरमोथा, कचूर, सुवर्णमाक्षिक, दालचीनी, वच, देवदारु, गजपीपल, चिरायता, दंती, हलदी, पत्रज, इलायची, अतीस ये सब एक एक तोले लेवे तथा लोहभस्म ८ तोले, वंशलोचन ४ तोले, गूगल शुद्ध ४० तोले, शिलाजीत ३२ तोले इन सब को एकत्र कर दश २ मासे की गोली बनावे. इस को सहत और घी इन में मिलायके नित्य सेवन करे. ऊपर से छाछ, दही का जल अथवा गौ का घी सेवन करे तो बवासीर, प्रदर, ज्वर, विषमज्वर, नाडीव्रण, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, विद्रधि, मंदाग्नि, उदर, पांडुरोग, कामला, क्षयरोग, भगंदर, पिडिका, गोला, प्रमेह, अरुचि, शुक्रदोष, उरःक्षत, कफ, वात, पित्त इन को नाश करे. तथा वृद्ध को तरुण करे और बलवान् करे. इस पर अन्न का निषेध नहीं है तथा मार्ग चलना, मैथुन करना वर्जित है यह चंद्रप्रभा गुटिका सर्वत्र प्रसिद्ध है तथा आनंद करनेवाली, कांति देनेवाली और चंद्रमा के समान तेज देनेवाली है ॥

सिंहामृतघृत

कंटकार्या गुडूच्याश्च संहरेच्च शतं शतम् । संकुट्योलूखले वि-द्वांश्चतुर्द्रोणेंभसः पचेत् ॥ तच्च पादावशेषेण घृतप्रस्थं विपाच-येत् । त्रिकटुत्रिफलारास्नाविडंगान्यथ चित्रकम् ॥ काश्मर्याणां च मूलानि पूतिकस्य त्वगस्य च। कुट्टयेच्चापि सर्वाणि श्लक्ष्णपि-ष्टानि कारयेत् ॥ अस्य मात्रां पिबेत्प्राज्ञः शालिभिः पयसा प्लुतैः। प्रमेहं मधुमेहं च मूत्रकृच्छ्रं भगंदरम्॥ आलस्यं चांत्रवृद्धिं च कुष्ठरोगं विशेषतः । क्षयं चापि निहंत्येतन्नामसिंहामृतं घृतम् ॥

अर्थ–केटरी १०० तोले को जल में डालके औटावे. जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे. उस में ६४ तोले घी और त्रिकुटा, त्रिफला, रास्ना, वायविडंग, चित्रक, कंभारी की जड, कंजे की जड और छाल इन को बारीक कूटके चूर्ण करे. इस को उसी काढे के जल में डाल देवे. फिर मंदाग्नि से घृत सिद्ध करे. फिर इस को बलाबल विचार दूध भात के साथ भोजन करे तो प्रमेह, मधुमेह, मूत्रकृच्छ्र, भगंदर, आलस्य, अंत्रवृद्धि, विशेष करके कुष्ठरोग, क्षय इन का नाश करे इस को सिंहामृत घृत कहते हैं ॥

हरिद्रादि तैल

निशारसं चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थक्षीरसंयुतम् । कुष्ठाश्वगंधालशु-ननिशापिप्पलिकल्कितम् ॥ विपक्वं तिलजप्रस्थं मेहानां विं-शतिं जयेत् । एतन्मध्ये कार्पासास्थिबीजमाकूलीमूलत्वक् ॥ तत्पुष्पं केतकीबीजं हरीतकी एतेषां चतुर्गुणं जलं दत्त्वा पा-दांशं कषायं मेलयित्वा केतकीस्वरसं मेलयित्वा पाकं ज्ञात्वा-वतारयेत् ॥ तस्य मात्रा कर्षप्रमाणा ॥

अर्थ–हलदी का काढा २५६ तोले, दूध १२८ तोले, कूठ, असगंध, लहसन, हलदी, पीपल इन का कल्क, तिल का तेल ६४ तोले सब को मिलायके मंदाग्नि से परिपक्व करे और इस में कपास के बीज (बिनोले) की गिरी, अंकोल के जड की छाल और आकुली के फूल, निर्मली के बीज, हरड इन सब औषधों से चौगुना जल डालके काढा करे फिर इस काढे को और निर्मली के रस को उस में मिलायके फिर उस तेल को पक्व करे. इस में से १ तोले को सेवन करे तो वीस प्रकार के प्रमेहों को नाश करे॥

सुपारीपाक

हेमांभोधरचंदनं त्रिकटुकं धात्री प्रियाला कुहूलंज्जालुस्त्रिसुगंधि जीरकयुगं शृंगाटकं वंशजम् । जातीकोशलवंगधान्यबहुलां प्रत्येकमक्षोन्मितां पूगस्याष्टपलं विचूर्ण्य च पयःप्रस्थत्रये संपचेत् ॥ गोसर्पिः कुडवं सितार्धकतुला धात्रीवरीब्धंजली मंदाग्नौ विपचेद्भिषक् शुभदिने सुस्निग्धभांडे क्षिपेत् । तं खादेत्तु यथाग्नि वासरमुखे मेहांश्च जीर्णज्वरं पित्तं साम्लमसृक्स्रुतिं च गुदजान्वक्राक्षिनासासु च ॥ मंदाग्निं च विजित्य पुष्टिमतुलां कुर्याच्च शुक्रप्रदो योगो गर्भकरस्तथामहरणः स्त्रीणामसृग्दोषजित् ॥

अर्थ—नागकेशर, नागरमोथा, चंदन, त्रिकुटा, आंवला, चिरोंजी, कोकिलाक्ष, लजालू, दालचीनी, इलायची, पत्रज, काला जीरा, सिंघाडे, वंशलोचन, जावित्री, लौंग, धनिया ये प्रत्येक एक २ तोले, दक्षिणी सुपारी ३२ तोले इस प्रकार सब को लेकर चूर्ण कर लेवे. फिर ९६ तोले दूध में डालके औटावे और गौ का घी १६ तोले डाल जब खोहा हो जावे तब २०० तोले मिश्री की चासनी करके उस में खोहे को मिलाय दे और आंवले १६ तोले, शतावर १६ तोले ले चूर्ण करके उस में डालके पाक बनाय ले फिर शुभ दिन देखके चिकने बासन में भर धर देवे. शक्तिप्रमाण प्रातःकाल सेवन करे तो प्रमेह, जीर्णज्वर, अम्लपित्त, रक्तस्राव, बवासीर, मंदाग्नि इन को नाश करे और पुष्टी, वीर्य, गर्भ इन को देवे मदनाशक स्त्रियों के रक्तदोष को दूर करे है ॥

असगंधपाक

पलान्यष्टावश्वगंधां विपाच्य गोदुग्धे षट्शेरके मंदवह्नौ । दर्वीलेपो यावदास्ते सुपक्वश्चातुर्जातं क्षिप्य कर्षप्रमाणम् ॥ जातीजातं केशरं वंशसत्वं मोचं मांसी चंदनं कृष्णसारम् । पत्री कृष्णापिप्पली मूलदेवपुष्पं कंकोल्लाविकाक्षोटसारम् ॥ भल्लीबीजं शृंगटं गोक्षुराख्यं सिंदूराभ्रं नागवंगं च लोहम् । कर्षार्धार्धं सर्वचूर्णं प्रकल्प्य संशोष्याथो शर्करापक्वपाके ॥ पक्त्वा शीतं कारयेदश्वगंधापाकश्चायं हंति मेहानशेषान् । ज्वरं जीर्णं शोषगुल्मान्वि-

कारान्पैत्तान्वातान् शुक्रवृद्धिं करोति ॥ पुष्टिं दद्यादग्निसंदीपनोयं कांतिं कुर्यात्सौमनस्यं नराणाम् ॥

अर्थ–असगंध ३२ तोले, गौ का दूध ६ सेर, दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, प्रत्येक तोले २ लेवे. जायफल, केशर, वंशलोचन, मोचरस, जटामांसी, चंदन, लाल चंदन, जावित्री, पीपल, पीपरामूल, लौंग, कंकोल, मेढासिंगी, अखरोट की छाल, भिलाये, सिंघाडे, गोखरू, रससिंदूर, अभ्रकभस्म, वंगभस्म, लोहभस्म ये सब तीन २ मासे डालके मंदाग्नि से पक्क करके कजली जमाय ले; इस को बलाबल विचारके सेवन करे तो सर्व प्रमेह, जीर्णज्वर, शोष, गोला, पित्तरोग, वादी के रोग इन को नाश करे तथा शुक्रवृद्धि, पुष्टि, अग्निदीप्ति, कांति, अंतःकरण की प्रसन्नता इन को करे ॥

शाल्मलीपाक

क्षीरद्रोणयुते सशाल्कुडवं मंदाग्निना पाचितं यावत्पाकमुपाव्रजेत्परिहितं प्रस्थं गुडं निक्षिपेत् । चातुर्जातलवंगजातिफलकैर्मुस्तातुगाधान्यकैः शुंठीमागधिकोषणाश्वमभयालोहैश्च मिश्रीकृतम् ॥ हृद्रोगक्षयशोषमारुतगदान्हिक्कामसृक्शोषणं विंशन्मेहशिरोविकारशमनो रोगानशेषाञ्जयेत् ॥

अर्थ–दूध१०२४तोले, कोहवृक्ष की छाल का चूर्ण १६ तोले दोनों को एकत्र कर मंदाग्नि पर पक्क करे फिर उस में ६४ तोले गुड और दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, लौंग, जायफल, नागरमोथा, वंशलोचन, धनियां, सोंठ, मिरच, पीपल, असगंध, हरड, लोहे की भस्म, ये सब उस में मिलायके सेवन करे तो हृदयरोग, क्षय, शोष, वातरोग, हिचकी, रुधिरशोष, वीस प्रकार की प्रमेह, शिरोविकार इत्यादि सर्व रोगों को नष्ट करे ॥

द्राक्षापाक

द्राक्षा दुग्धसिता पृथक् परिमिता प्रस्थेन संपाचिता युक्त्या वैद्यवरेण चूर्णमधुना देयं पलार्धं पृथक् । चातुर्जातकटुत्रयं मृगमदं लोहाभ्रकं केशरं पत्री जातिफलं मृगांकरजतं कुस्तुंबरी चंदनम् ॥ सम्यक् जातरसं प्रभातसमये सेव्यं द्विकर्षोन्मितं स्निग्धं शुक्रकरं प्रमेहशमनं पित्तामयध्वंसनम् । मूत्राघातवि-

बंधकृच्छ्रशमनं रक्तार्तिनेत्रार्तिहृत्पादे पाणितले विदाहशमनं सौख्यप्रदं प्राणिनाम् ॥

अर्थ—दाख, दूध, मिश्री प्रत्येक ६४ तोले सब को एकत्र करके पक्क करे फिर इस में दालचीनी, इलायची, पत्रज, नागकेशर, त्रिकुटा, कस्तूरी, लोहे की भस्म, अभ्रक भस्म, केशर, जावित्री, जायफल, कपूर, रूपे की भस्म, धनिया, चन्दन ये प्रत्येक दो २तोले ले चूर्ण करके विधिपूर्वक पक्क करे जब तैयार हो जावे तब प्रातःकाल इस में से २ तोले नित्य सेवन करे यह स्निग्ध, वीर्य का बढानेवाला, प्रमेह को नाश करे, पित्त-रोगनाशक, मूत्राघात, विड्बंध, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपीडा, नेत्रपीडा, हृदय, पैर, हाथ इन का दाह इन को नाश करे तथा यह द्राक्षादि पाक प्राणियों को सौख्यप्रद है ॥

अभ्रकयोग

निश्चंद्रमभ्रकं भस्म सवराजनीरजः ।
मधुना लीढमचिरात् प्रमेहान् विनिवर्तयेत् ॥

अर्थ—उत्तम निश्चन्द्र अभ्रक की भस्म, त्रिफला, हलदी इन के चूर्ण को सहत मिलायके चाटे तौ तत्काल प्रमेह को दूर करे ॥

नागभस्मयोग

शुद्धस्य च मृतस्याहिरजो मल्लमितं लिहेत् ।
सनिशामलकाक्षौद्रं सर्वमेहप्रशांतये ॥

अर्थ—उत्तम शीशे की भस्म दो रत्ती, हलदी, आंवले और सहत इन के साथ सेवन करे तौ सर्व प्रमेह शान्ति होवे ॥

गंधकयोग

गंधकं गुडसंयुक्तं कर्षं भुक्त्वा पयः पिबेत् ।
विंशतिस्तेन नश्यंति प्रमेहाः पिटिका अपि ॥

अर्थ—गंधक को गुड में मिलायके १ तोले सेवन करे और ऊपर से दूध पीवे तो वीस प्रकार के प्रमेह और पिटिका नाश होवे ॥

शिलाजतुयोग

शिलाजतुरजः पीत्वा प्रातः क्षीरसितायुतम् ।
मुच्यते सर्वमेहेभ्यास्त्रिःसप्तदिवसैर्नरः ॥

अर्थ—शिलाजीत के चूर्ण को प्रातःकाल दूध और मिश्री के साथ पीवे तो २१ दिन में सर्व प्रमेह दूर हो ॥

स्वर्णमाक्षिकभस्मयोग

माक्षिकं मधुना लीढं मेहं हरति सर्वथा ।
गुडूचीसत्वसंयुक्तं पित्तमेहं व्यपोहति ॥

अर्थ–सुवर्णमाक्षिक की भस्म सहत के साथ चाटे तो संपूर्ण प्रमेहों को हरण करे तथा गिलोय के सत्त्व के साथ माक्षिकभस्म खाय तो पित्त के प्रमेहों को नाश करे ॥

बहुमूत्रमेह का निदान

कार्श्यं स्वेदोंगगंधः करपदरसनानेत्रकर्णोपदाहः कासः शैथिल्यमंगेरुचिरपि पिटका कंठताल्वोष्ठशोषः । दाहः शीतप्रियत्वं धवलिमतनुता श्रांतता पीतमूत्रं मूत्रस्था मक्षिकाद्याश्चिरमपि बहुमूत्राख्यरोगे प्रवृद्धे ॥

अर्थ–कृशता, पसीना, देह से बदबू आना, हाथ, पांव, जीभ, आंखें, कान इन का दाह होना, शरीर शिथिल होना, अरुचि, पिटिका, कंठ, तालु, ओंठ इन में शोष और दाह, थंडे पदार्थ की इच्छा, पांडुरता, अतिकृशत्व, थक जाना, मूत पीला होना और जहां मूते वहां मक्खियों और चींटियों का आ जाना ये लक्षण बहुमूत्र-रोग के बढने पर होते हैं ॥

दूसरा प्रकार

स्वेदोंगगंधः शिथिलत्वमंगे शय्यासनस्वप्नसुखाभिलाषः । हृन्नेत्रजिव्हाश्रवणोपदाहो घनांगता केशनखातिवृद्धिः ॥ शीतप्रियत्वं गलतालुशोषो माधुर्यमास्ये करपाददाहः । भविष्यतो मेहगणस्य लिंगं मूत्रेभिधावंति पिपीलिकाश्च ॥ तृष्णा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद्द्विविधो विकारः । संपूरणा वा कफसंभवा स्यात्क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मकेन ॥संपूर्णरूपाः कफपित्त मेहाः क्रमेण ये वातकृताश्च मेहाः । साध्या न ते पित्तकृतास्तु याप्याः साध्यस्तु मेहो यदि नातिदुष्टः ॥

अर्थ–पसीना, अंग से बदबू आना, शरीर शिथिल होना, सेज आसन और निद्रा के सुख की इच्छा, हृदय, नेत्र, जिव्हा, कान इनका दाह, अंग जड होना, केश और नख की वृद्धि, थंडे पदार्थों की चाह, कंठ और तालु में शोष, मुँह मीठा, हाथ और पांव का दाह, मूत की ओर चींटियां या मक्खियों का आ जाना, प्यास,

मूत मीठा, चिकना और सहत की समान, अनेक प्रकार के उपद्रव, दोष के क्षीण होने पर कफ की प्राबल्य ये लक्षण होते हैं, न बढा हुआ कफमेह साध्य है, पित्त-मेह याप्य है, वातमेह असाध्य है ॥

त्रिफलादि योग

त्रिफलावेणुपत्राब्दपाठामधुयुतैः कृतः ।
कुंभयोनिरिवांभोधिं बहुमूत्रं तु शोषयेत् ॥

अर्थ–त्रिफला, बांस के पत्ते, नागरमोथा, पाढ की जड इनके काढे में सहत डालके पिलावे तो अगस्त्यऋषि ने जैसे समुद्र को शोष लिया उसी प्रकार यह बहु-मूत्र को शोष करे ॥

देवदार्व्यारिष्ट

तुलार्धं देवदारु स्याद्वासा च पलविंशतिः । मंजिष्ठेंद्रयवा दंती तगरं रजनीद्वयम् ॥ रास्ना कृमिघ्नं मुस्तं च शिरीषं खदिरा-र्जुनौ । भागान्दशपलान् दद्याद्यवान्या वत्सकस्य च ॥ चंद-नस्य गुडूच्याश्च रोहिण्याश्चित्रकस्य च । भागानष्टपलानेता-नष्टद्रोणेंभसः पचेत् ॥ द्रोणशेषे कषाये च पूते शीते प्रदापयेत्। धातक्याः षोडशपलं माक्षिकस्य तुलात्रयम्॥ व्योषस्य द्विपलं दद्यात् त्रिजातं च चतुःपलम् । चतुःपलं प्रियंगुश्च द्विपलं नाग-केशरम् ॥ सर्वाण्येतानि संचूर्ण्य घृतभांडे विधारयेत् । मासा दूर्ध्वं पिबेदेनं प्रमेहं हंति दुर्जयम् ॥ वातरोगान् ग्रहण्यर्शो मूत्र-कृच्छ्राणि नाशयेत् । देवदार्व्यादिकोरिष्टः कंडूकुष्ठविनाशनः ॥

अर्थ–देवदारु आधे तुलाप्रमाण, अडूसा २० पल, मजीठ, इन्द्रजो, दंती की जड, तगर, हलदी, दारुहलदी, रास्ना, वायविडंग, नागरमोथा, शिरस, कत्थे की छाल, कोहवृक्ष की छाल ये बारह औषध दश २ पल लेवे. अजमोद, कूडा की छाल, सपेद चंदन, गिलोय, कुटकी, चित्रक ये छः औषध आठ २ पल लेवे. फिर इन सब औषधों को थोडी कूट आठ द्रोण जल में डालके औटावे. जब १ द्रोण जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे जब शीतल हो जावे तब इतनी औषध और डाले. धाय के फूल १६ पल और सहत ३ तुला तथा सोंठ, मिरच, पीपल इन तीनों को २ पल मिलायके और दालचीनी, इलायची, पत्रज ये तीन औषध चार पल लेय,

फूल प्रियंगु ४ पल तथा नागकेशर दो पल इन सब औषधों को चूर्ण करके उस काढे के जल में डाल देवे तथा सहत कहे हुए प्रमाण से डाल सब को एकत्र करे और घी के चिकने बासन में भरके उस के मुख पर मुद्रा देकर एक महीने पर्यंत धरा रहने दे. फिर मुद्रा को दूर करके इस को निकाले इसे देवदार्व्याद्यरिष्ट कहते हैं. यह अरिष्ट पीवे तो घोर दुर्घट प्रमेह दूर हो तथा वादी का रोग, बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, खुजली, कोढ ये सब रोग दूर हों ॥

लोध्रासव

लोध्रं शठी पुष्करमूलमेलां मूर्वां विडंगं त्रिफला यवानि। चव्यं प्रियंगुं क्रमुकं विशालां किराततिक्तं कटुरोहिणीं च ॥ भंडीनतं चित्रकपिप्पलीनां मूलं सकुष्ठातिविषां सपाठाम्। कलिंगकाकेसरमिंद्रसाह्वं नखं सपत्रं मरिचं प्लवं च ॥ द्रोणेंभसः कर्षसमानि पक्त्वा पूते चतुर्भागजलावशेषे। रसेन भागो मधुनः प्रदाय पक्षं विधेयो घृतभाजनेच्छे ॥ लोध्रासवोयं कफपित्तमेहान्क्षिप्रं निहन्याद्द्विपलप्रयोगात्। पांड्वामयार्शांस्यरुचिं ग्रहण्यां शेषं किलासं विविधं च कुष्ठम् ॥

अर्थ—लोध, कचूर, पुहकरमूल, इलायची, मूर्वा, वायविडंग, त्रिफला, अजमायन, चव्य, प्रियंगु, सुपारी, इन्द्रायन की जड, चिरायता, कुटकी, निसोथ, तगर, चित्रक, पीपरामूल, कूठ, अतीस, पाढ, काकडासिंगी, नागकेशर, इन्द्रजो, नख (सुगंधद्रव्य), पत्रज, मिरच, भद्रमोथा ये प्रत्येक एक २ तोला लेवे सब को कूट १०२४ तोले जल में डालके औटावे जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे फिर इस काढे के बराबर सहत डालके चिकने बासन में भरके १५ दिनतक मुख मूंदकर धर देवे पश्चात् इस में से निकाल ६ तोले के प्रमाण सेवन करे तो कफ, पित्त, प्रमेह, पांडु, बवासीर, संग्रहणी, अरुचि, किलास, कुष्ठ, अन्यकुष्ठ इन को शीघ्र नाश करे. इस को **लोध्रासव** कहते हैं ॥

तालकेश्वररस

मृतं सूतं मृतं वंगं मृतं लोहाभ्रकं समम्। मर्दयेन्मधुना सार्धं रसोयं तालकेश्वरः ॥ माषैकं भक्षयेत्क्षौद्रे बहुमूत्रापनुत्तये ॥

अर्थ—पारे की भस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म ये समान ले सहत से खरल करे इस को **तालकेश्वररस** कहते हैं. इस को बहुमूत्र के नाश करने के वास्ते १ मासे भर सहत में मिलायके खाय ॥

वंगेश्वररस

शुद्धसूतं समं गंधं वंगं च द्विगुणं भवेत् । एकत्र मर्दयेत्सर्वं वल्लमेकं प्रमेहिणाम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तं पथ्यं च क्षारवर्जितम् । एष वंगेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृंतनः ॥

अर्थ—पारा १, गंधक १, वंगभस्म २ भाग इस प्रकार लेकर एकत्र खरल कर १ वल्ल सहत और मिश्री के साथ प्रमेहवाला खाय इस पर खारी पदार्थ खाना निषेध है. इस को **वंगेश्वररस** कहते हैं यह सर्व प्रमेहों को नष्ट करता है ॥

आनंदभैरवरस

विषोषणकणाटंकाहिंगुलैः समचूर्णिकः ।
आनंदभैरवस्यास्य गुंजातीसारमेहनुत् ॥

अर्थ—विषसिंगिया, काली मिरच, पीपल, सुहागा, हींगूल ये समान भाग ले एकत्र चूर्ण करे इसको **आनंदभैरवरस** कहते हैं. १ रत्ती सेवन करने से प्रमेह और अतिसार को नाश करे ॥

प्रमेहबद्धरस

भस्मसूतं मृतं कांतं मुंडभस्म शिलाजतु । तुत्थं ताप्यं शिला व्योषं त्रिफलां कोलबीजकम् ॥ कपित्थं रजनीचूर्णं भृंगराजेन भावयेत् । विंशद्वारं विशोष्याथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥ निष्कमात्रं हरेन्मेहान्मेहबद्धरसो महान् । महानिंबस्य बीजानि पिष्ट्वा षट्संमितानि च ॥ पलं तंदुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च । एकीकृत्य पिबेच्चानुहंति मेहं चिरंतनम् ॥

अर्थ—पारे की भस्म, कांतलोह की भस्म, लोह भस्म, शुद्ध शिलाजित, सुवर्णमाक्षिक भस्म, मनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, कंकोल के बीज, कैथ का फल और हलदी ये पंधरह औषध समान भाग ले भस्म से पृथक् जो औषध हैं उन का चूर्ण करके भस्म और चूर्ण को एकत्र मिलाय लेवे. फिर भांगरे के रस की बीस पुट देवे. इस को प्रमेहबद्धरस कहते हैं. यह रस १ निष्क ले सहत में मिलाय सेवन करे तो घोर प्रमेहों को दूर करे तथा बकायन के बीज नग ६ का चूर्ण करके और चावलों का धोवन १ पल लेवे. इस में पूर्वोक्त चूर्ण और दो निष्क घी मिलाय इस में यह मेहबद्धरसायन मिलायके सेवन करे तो बहुत दिन की भी प्रमेह दूर होय ॥

हरिशंकररस

सूताभ्रमामलजलैः सप्तवारं विभावयेत् ।
हरिशंकरसंज्ञः स्याद्रसः सर्वप्रमेहनुत् ॥

अर्थ–पारे की भस्म, अभ्रकभस्म इन दोनों को आवलों के रस में खरल करके सात भावना देवे तो यह हरिशंकररस सिद्ध होय. यह सर्व प्रमेहनाशक है ॥

मेघनादरस

सूतं कांतं गंधतीक्ष्णं ताप्यं व्योषं फलत्रिकम् । शिलाजतु शिलां कोलबीजं रात्रिकपित्थकम् ॥ त्रिःसप्तकृत्वा भृंगाद्भि- र्भावयेन्निष्कमानकम् । मधुना मेघनादोयं सर्वमेहान्विनाशयेत् ॥

अर्थ–पारे की भस्म, कांतलोह की भस्म, गंधक, तीक्ष्णलोह की भस्म, सुवर्ण- माक्षिकभस्म, त्रिकुटा, त्रिफला, शिलाजीत, मनसील, अंकोल के बीज, हलदी, कैथ ये औषध समान भाग ले चूर्ण करे फिर भांग के काढे की २१ वार खरल कर भावना देवे. फिर तीन मासे इस रस को सहत में मिलायके सेवन करे तो यह मेघनादरस संपूर्ण प्रमेहों को नाश करे ॥

निंबबीजकल्क

महानिंबस्य बीजानि पेषयेत्तंडुलांबुना ।
सघृतान्यचिराद्धन्युः पानान्मेहांश्चिरोत्थितान् ॥

अर्थ--बकायन के फलों को चावलों के धोवन से पीस घी मिलाय सेवन करे तो तत्काल चिरकाल के प्रमेहों को नाश करे ॥

मेहारिरस

वंगभस्म मृतं सूतं तुल्यं क्षौद्रे विमर्दयेत् ।
द्विगुंजं लेहयेन्नित्यं हंति मेहान् चिरंतनान् ॥

अर्थ–वंगभस्म, पारे की भस्म समान भाग लेवे सहत में खरल कर नित्य दो रत्ती चाटा करे तो बहुत दिन की प्रमेह नष्ट होय ॥

चंद्रोदयरस

अभ्रकं गंधकं सूतं वंगभस्म समांशकम् । एलां शिलाजतुं चैव रंभासारेण मर्दयेत्॥ प्रमेहान् विंशतिं हन्यात् कामलापित्तनाशनः॥

अर्थ–अभ्रकभस्म, गंधक, पारा, वंगभस्म, इलायची, शिलाजीत ये समान भाग लेवे इन को केले के सार के साथ खरल कर खावे तो वीस प्रकार के प्रमेह, कामला, पित्त इन को नाश करे ॥

वंगेश्वररस

रसमेकं त्रयो वंगं वंगसाम्यं तु गंधकम् । मर्दयेद्दिनमेकं तु कुमार्याः स्वरसे बुधः ॥ संस्थाप्य गोलकं भांडे रोधयेत्तु दृढं मुखम् । पाचयेद्वालुकायंत्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ स्वांगशीतलमादाय संपूज्य द्विजदेवताः।पिप्पलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ क्षीरान्नं योजयेत्पथ्यमनलपक्षारवर्जितम् । रसो वंगेश्वरो नाम सर्वमेहनिकृंतनः ॥

अर्थ–पारा १ भाग, वंग३, गंधक ३ भाग इन को घींगुवार के रस में खरल करके किसी हांडी में अथवा शीशी में भर मुख को बंद कर वालुकायंत्र में एक दिन उत्तम अग्नि देवे. जब परिपक्क हो जावे तब शीतल होने पर रस को निकाल ले और देव ब्राह्मण का पूजन कर सहत पीपल के साथ सर्व प्रमेहों पर देवे. दूधभात का पथ्य है, खटाई और निमक न खाय इस को वंगेश्वररस कहते हैं यह सर्व प्रमेह नाशक है ॥

मेहकुंजरकेसरी रस

रसगंधायसाभ्राणि नागवंगौ सुवर्णकम्। वज्रकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ शतावरीरसेनैव गोलकं शुष्कमातपे । बद्ध्वा शुष्कं तमुद्धृत्य शरावे सुदृढे क्षिपेत् ॥ संधिलेपं मृदा कुर्याद्गर्तायां गोमयाग्निना । पुटेद्यावच्चतुर्याममुद्धृत्य स्वांगशीतलम् ॥ श्लक्ष्णं खल्वे विनिःक्षिप्य गोलं तं मर्दयेद्दृढम् । देवब्राह्मणपूजां च कृत्वा धृत्वा च कूपिकाम् ॥ खादेद्वल्लद्वयं प्रातः शीतं चानुपिबेज्जलम् । अष्टादशप्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥ तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिं च दारुणम् । अग्नेर्बलं वितनुते मेहकुंजरकेसरी ॥ दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नात्र कार्या विचारणा ॥

अर्थ–पारा, गंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, शीशे की भस्म, वंगभस्म, सुवर्णभस्म, हीरे की भस्म, मोती की भस्म सब को एकत्र कर शतावर के रस में खरल करे फिर धूप में सुखाय सराव में रख दूसरे सराव से ढक कपडमिट्टी कर देवे. फिर एक गड्ढे में आरने उपलों को भर बीच में इस संपुट को रख देवे. इस में चार प्रहर की अग्नि देवे. जब शीतल हो जावे तब निकाल खरल करके बारीक छान लेवे. देव, ब्राह्मण, अतिथी इन को पूजन कर शीशी में भरके रख देवे. इस में से नित्य प्रातःकाल ४ रत्ती खाय ऊपर से शीतल जल पीवे. इस प्रकार एक महीना भर करे तो अठारह प्रकार के प्रमेहों को जीते तथा तुष्टि, तेज, बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अग्निवृद्धि को करे. इस को **मेहकुंजरकेसरीरस** कहते हैं. यह बडी भारी रसायन है इस में संदेह नहीं ॥

पंचलोहरसायन

मृताभ्रं कांतलोहं च नागवंगौ विशोधितौ। यथोत्तरं भागवृद्ध्या खल्वमध्ये विनिक्षिपेत्॥तलपोटेन वाराह्या शतावर्या हिमांबुना। भावनात्र प्रकर्तव्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ चणमात्रां वटीं कृत्वा नवनीतेन सेवयेत्। प्रातरुत्थाय विधिना सर्वमेहकुलांतकः॥ शाल्यन्नं सपटोलं च तंदुलीयकवास्तुकम्। मत्स्याक्षीमुद्गयूषं च अपक्वं कदलीफलम् ॥ अर्शांसि ग्रहणीदोषमूत्रकृच्छ्राश्मरीप्रणुत्। कामलापांडुशोफं च अपस्मारं क्षतक्षयान् ॥ रक्तकासविनाशाय पंचलोहरसायनम् ॥

अर्थ–अभ्रकभस्म, कांतलोह की भस्म, शीशे की भस्म, वंगभस्म ये सब भस्म १-२-३-४ भाग क्रम से लेवे. फिर ताड, नरसल, वाराहीकंद, शतावर, लाल चंदन इन का काढा करके पृथक् २ भावना एक २ प्रहर देवे और खरल करे. फिर चने के बराबर गोली बनाय लेवे. १ गोली को मक्खन के साथ भक्षण करे तो प्रमेह को नाश करे तथा शाली का भात, परवल, चौलाई, बथुआ, मछेछी, मूंग का मंड, हरे केले ये पथ्य में देवे तो बवासीर, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, कामला, पांडुरोग, सूजन, मृगी, क्षतक्षय, रुधिरविकार और खांसी इन के नाश करने को यह पंचलोहरसायन उत्तम है ॥

महावंगेश्वररस

वंगं कांतं च गगनं हेमपुष्पं समं समम् ॥ कुमारीरसतो भाव्यं

सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ एष वंगेश्वरो नाम प्रमेहान्विंशतिं जयेत् ॥ मूत्रकृच्छ्रं सोमरोगं पांडुरोगं महाश्मरीम् ॥ रसायनवरश्रेष्ठो नागार्जुनविनिर्मितः ॥

अर्थ—वंगभस्म, कांतलोह की भस्म, अभ्रक भस्म, पीले जपा के फूल ये सब समान भाग ले घीगुवार के रस की सात भावना देवे तो यह वंगेश्वर नामक रस वीस प्रकार की प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग, पांडुरोग, पथरी इन को नाश करे यह रसायन श्रेष्ठ नागार्जुन ने कही है ॥

वंगभस्म

वंगं शिलाजतुयुतं तु मतं प्रमेहे धातुक्षये दुर्बलनष्टशुक्रयोः । अभ्रेण युक्तं तु सुतप्रदं स्याज्जातीफलार्ककरहाटलवंगयुक्तम् ॥

अर्थ—वंगभस्म और शिलाजीत इन को एकत्र करके खाय तो प्रमेह, धातुक्षय, दुर्बलता, नष्टशुक्र इन को नाश करे और अभ्रक की भस्म, जायफल, अर्कपुष्पी, पद्मकंद, लौंग इन के साथ सेवन करे तो पुत्र होय ॥

वसंतकुसुमाकररस

पृथक् द्वौ हाटकं चंद्रं त्रयो वंगा हि कांतजम् । चत्वारः सूतमभ्रं च प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ भावना गव्यदुग्धेक्षुवासाश्रीद्विजलैर्निशा । मोचकंदरसैः सप्त क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक्॥ शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुसुमैस्तथा । पश्चान्मृगमदैर्भाव्यः सुसिद्धो रसराट् भवेत् ॥ कुसुमाकरविख्यातो वसंतपदपूर्वकः। वल्लद्वयमितः सेव्यः सिताज्यमधुसंयुतः ॥ वलीपलितहृन्मेध्यः कामदः सुखदः सदा । मेहघ्नः पुष्टिदः श्रेष्ठः परं वृष्यो रसायनः ॥ आयुर्वृद्धिकरं पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् । क्षयकासतृषोन्मादश्वासरक्तविषार्तिजित् ॥ सिताचंदनसंयुक्तमम्लपित्तादिरोगजित् । हंति पांड्वामयान् शूलान्मूत्रघाताश्मरीं हरेत् ॥ योगवाहि त्विदं सेव्यं कांतिश्रीबलवर्धनम् । सुसात्म्यमिष्टभोजी च रमयेत्प्रमदाशतम् ॥ मदनं मदयन्मदमुज्वलयन्प्रमदानिवहानतिविह्वलयन् । सुरतैः सुखदैर्गतिविव्यचनैर्भवसारजुषामयमेव सुहृत् ॥

अर्थ–सुवर्णभस्म २ भाग, रौप्यभस्म २ भाग, वंगभस्म ३ भाग, शीशे की भस्म ३ भाग, कांतलोह की भस्म ३ भाग, पारा ४ भाग, अभ्रकभस्म ४ भाग, मूंगा की भस्म ४ भाग, मोती की भस्म ४ भाग इस क्रम से सब वस्तु लेके उस को गौ का दूध, ईख का रस, अडूसे का रस, चंदन, खस, नेत्रवाला, हलदी, केले का कंद इन के काढे की, कमल का रस, चमेली की कलियों का रस इन की पृथक् २ सात २ भावना देवे. फिर कस्तूरी के कल्क की भावना देवे तो यह **वसंतकुसुमाकर** संपूर्ण रसों का राजा बनके तैयार होवे. इस में से ४ रत्ती रस सहत, घी, मिश्री इन में मिलायके सेवन करे तो बुढापे को दूर करे. पवित्र, कामसुख इन को देवे तथा प्रमेहनाशक, पुष्टिकारक, वृष्य, रसायन, आयुष्य और प्रजा इन को देवे तथा क्षय, खांसी, तृषा, उन्माद, श्वास, रुधिरविकार, विष, पांडुरोग, शूल, मूत्राघात, पथरी इन को नष्ट करे तथा मिश्री, चंदन इन के साथ सेवन करने से अम्लपित्तादि रोगों को जीते. यह योगवाही है. कांति, श्री, बलवर्द्धक ऐसा है. इस का सेवन करने के उपरांत यथेष्ट भक्षण करे पथ्य की कुछ जरूरत नहीं है. इस का सेवन करनेवाले मनुष्य को सौ स्त्रियों से रमण करने की शक्ति होवे, कामदेव को भी लज्जित करे और मदोन्मत्त होकर स्त्रियों को विव्हल करे. संसारी मनुष्यों का यह परम सुहृत् है ॥

जलजामृतरस

तवक्षीरं शिलाधातुर्वंगं कुंडलिसत्वकम् । मेहारिबीजसंयुक्तं विदारीजीवनीरसैः ॥ भावयेत्तत्रिवारं तु सितोपलसमन्वितम् । जलजामृतविख्यातो रसोयं मेहकृच्छ्रनुत् ॥

अर्थ–तवाखीर, शिलाजीत, गिलोय का सत्त्व, वंगभस्म, सपेद सारिवा के बीज और मिश्री इन सब को एकत्र कर विदारीकंद के रस की तीन भावना देवे तो यह जलजामृत रस मेहकृच्छ्र को नाश करे ॥

प्रमेह की उपेक्षा से प्रमेह पिटकाओं का होना।

प्रमेहाणां प्रजायंते पिटिकाः सर्वसंधिषु । शराविका कच्छपिका जालनी विनताऽलजी ॥ मसूरिका सर्षपिका पुत्रिणी सविदारिका । विद्रधिश्चेति पिटिकाः प्रमेहापेक्षया दश ॥ संधिमर्मसु जायन्ते मांसलेषु च धामसु ॥

अर्थ–प्रमेहसंबंधी दश प्रकार की पिटिकायें सब संधियों में होती हैं. १ शरा-

विका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका, १० विद्रधी ये इन के नाम हैं. प्रमेह की उपेक्षा करने से ये शराविकादि दश पिटिका संधिमर्म और मांसल ठिकाने में होती हैं ॥

पिटिका के कारण

ये यन्मयाः स्मृता मेहास्तेषामेतास्तु तन्मयाः । विना प्रमेहमप्येता जायन्ते दुष्टमेदसः ॥ तावच्चैता न लक्ष्यन्ते यावद्वास्तुपरिग्रहः ॥

अर्थ—जो प्रमेह जिस दोष करके उल्बण होय है तिस करके तिसी दोष के उल्बण करके पिटिका होय है ये पिटिका प्रमेह के विना दुष्टमेद के होने से प्रगट होती है जबतक इन की गांठ नहीं बधे तबतक नहीं दीखे (ये यन्मयाः स्मृता मेहाः) इस पद के ऊपर मधुकोशवाले ने शास्त्रार्थ लिखा है ग्रन्थ बढने के भय से हम ने नहीं लिखा ॥

दश पिटिकाओं के लक्षण

अंतोन्नता च तद्रूपा निम्नमध्या शराविका। सदाहा कूर्मसंस्थाना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः ॥ जालनी तीव्रदाहा तु मांसजालसमावृता । अवगाढरुजोत्क्लेदा पृष्ठे वाप्युदरेऽपि वा ॥ महती पिटिका नीला सा बुधैर्विनता स्मृता । रक्ता सिता स्फोटवती दारुणा त्वलजी भवेत् ॥ मसूरदलसंस्थाना विज्ञेया तु मसूरिका । गौरसर्षपसंस्थाना तत्प्रमाणा च सर्षपी ॥ महत्यल्पचिता ज्ञेया पिडिका चापि पुत्रिणी। विदारीकंदवद्वृत्ता कठिना च विदारिका ॥ विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ता ज्ञेया विद्रधिका तु सा ॥

अर्थ—१ शराविका—ये पिटिका ऊपर के भाग में ऊंची और मध्य में बैठी सी होय जैसा मट्टी का शराव होय है ऐसी होय है. २ कच्छपिका—ये कछुए के पीठ के समान कुछ दाहयुक्त ऐसी होय है. ३ जालनी—ये तीव्र दाह करके संयुत और मांस के जाल से व्याप्त होय है. ४ विनता—ये फुन्शी पीठ में अथवा पेट में होय है इस की पीडा बहुत होय, ठंडी होय तथा बडी और नीले रंग की होय है. ५ अलजी—लाल काली बारीक फोडों करके व्याप्त भयंकर होय है. ६ मसूरिका—मसूर की दाल के समान बडी होय है. ७ सर्षपिका—सफेद सरसों के समान बडी होय है. ८ पुत्रिणी—ये बीच में

एक बडी फुन्सी होय उस के चारों ओर छोटी छोटी फुन्सी और होय उस को पुत्रि-णी कहते हैं. ९ विदारिका—ये विदारीकंद के समान गोल और करडी होय है. १० विद्रधिका—ये विद्रधि के लक्षण करके युक्त होय है. भोज और सुश्रुत के मत से नौ पिटिका हैं और चरक के मत से सात ही हैं ॥

असाध्य पिटिका

गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्ठे मर्मसु चोत्थिताः ।
सोपद्रवा दुर्बलाग्नेः पिडिकाः परिवर्जयेत् ॥

अर्थ—गुदा में हृदय में शिर में कंधा में पीठ में और मर्मस्थान में उठी पिटिका और उपद्रव युक्त हो तथा दुर्बलाग्नि पुरुष की पिटिका त्याज्य है ॥

प्रमेह के साध्य लक्षण

प्रमेहिणो यदा मूत्रमनाविलमपिच्छिलम् ।
विशदं तिक्तकटुकं तदारोग्यं विनिर्दिशेत् ॥

अर्थ—जब प्रमेहरोगवाले का मूत न मैला और न चिकना होय किंतु स्वच्छ, तीखा और कडुवा हो तब रोगी को आरोग्य होवेगा ऐसा कहना ॥

पिडिका के उपद्रव

तृट्श्वासमांससंकोचमोहहिक्कामदज्वराः ।
विसर्पमर्मसंरोधाः पिटिकानामुपद्रवाः ॥

अर्थ—प्यास, श्वास, मांस का सकोडना, मेह, हिक्का, मद, विसर्प, मर्मस्थान में पीडा ये पिटिका के उपद्रव हैं ॥

पिडिका की सामान्यचिकित्सा

प्रमेहपिटिकानां तु प्राक्कार्यं रक्तमोक्षणम् ।
पाटनं तु विपक्कानां तासां पानं प्रशस्यते ॥

अर्थ—प्रमेहपिटकाओं का प्रथम रुधिर निकाले और जब पक जावे तब पाटन करे तथा इन पर कषाय इत्यादिक सेवन करना उत्तम है ॥

क्वाथो व्रणघ्नोत्र बस्तिर्मूत्रलो रक्तमोक्षणम् ।
व्रणस्य प्रक्रिया सर्वा कार्यात्रापि भिषग्वरैः ॥

अर्थ—व्रणनाशक क्वाथ, बस्तिकर्म, मूत्र लानेवाले उपचार, फस्त खोलना और संपूर्ण व्रणरोग में जो क्रिया कही है वह इस जगह करनी चाहिये ॥

न्यग्रोधादि चूर्ण

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थस्योनाकारग्वधासनम् । आम्रं कपित्थं जंबू च प्रियालं ककुभं धवम् ॥ मधूकं मधुकं रोध्रं वरुणं पारिभद्रकम् । पटोलं मेषशृंगी च दंती चित्रकमाटकी ॥ करंजत्रिफलाशक्रभल्लातकफलानि च । एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ न्यग्रोधाद्यमिदं चूर्णं मधुना सह योजयेत् । फलत्रयरसं चानुपिबेन्मूत्रविशुद्धये ॥ एतेन विंशतिर्मेहा मूत्रकृच्छ्राणि यानि वा । प्रशमं यांति वेगेन पिटिकासु च योजयेत् ॥

अर्थ—वड, गूलर, पीपर, टेंटू, अमलतास, विजेसार, आम, कैथ, जामुन, चिरौंजी, कोह, धौ, महुआ, मुलहटी, लोध, वरना, नीम, पटोलपत्र, मेढासिंगी, दंती, चित्रक, अरहर, कंजा, हरड, बहेडा, आवला, कूडा और भिलाए ये सब समान भाग लेके बारीक चूर्ण करे. इस को न्यग्रोधादि चूर्ण कहते हैं. इस को सहत में मिलायके चाटे ऊपर से हरड, बहेडा, आवला इन का काढा मूत्र शुद्ध होने को पीवे तो वीस प्रकार के प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र ये तत्काल शांत होवे तथा इस को पिटिकारोग पर देवे ॥

पिटिकाओं पर लेप

क्षीरमौदुंबरं यत्नाद्वाकुचं वा प्रयोजयेत् ।
पिटिकासु समस्तासु लेपनं संप्रशांतये ॥

अर्थ—गूलर का दूध अथवा बावची का दूध संपूर्ण पिटिकाओं पर लेप करे तो सब पिटिका दूर हों ॥

प्रमेह पर पथ्य

प्राग्लंघनानि वमनानि विरेचनानि प्रोद्वर्त्तनानि शमनानि च दीपनानि । नीवारकंगुयवबैणवकोरदूषश्यामाकचूर्णकुरुविंदककुष्ठकाश्च ॥ गोधूमशालिकलमाश्चिरजाः कुलित्था मुद्गाढकीचणकयूषरसास्तिलाश्च । लाजा पुरातनसुरा मधु वाट्यमंडस्तक्रं च रासभजलं माहिषीजलं च ॥ लट्वाकपोतशशतित्तिरलावबर्हिव्याघ्रैणवर्त्तकशुकादिकजांगलाश्च । सौभांजनं च कुलकं च

कठिल्लकं च कर्कोटकं तलकमप्यथ वार्हतं च॥औदुंबराणि लशु-
नानि नवीनमोचं पत्तूरगोक्षुरकमूषकपर्णशाकम् । मंदारपत्रम-
मृता त्रिफला कपित्थं जंबूकसेरुकमलोत्पलकंदबीजम्॥खर्जूर-
लांगलिकतालतरूत्तमांगं व्योषं च तिंदुकफलं खदिरं कलिं-
गम् । तिक्तानि चापि सकलानि कषायकाणि हस्त्यश्ववाहन-
मतिभ्रमणं रवित्विट् ॥ व्यायाम इत्यपि गणो भवति प्रकामं
मित्रं प्रमेहगदपीडितमानवानाम् ॥

अर्थ-प्रथम लंघन, वमन, विरेचन, उबटना तथा प्रमेह शमन करते और दीपन करते पदार्थों को सेवन करे, पुराने तृणधान्य, कांगनी, जों, बांस के चावल, कोदों, सामखिया, ज्वार, नागरमोथा, मोठ, गेहूं, शालीचावल, कलमीचावल, पुराने कुलथी, मूंग, अरहर, चना इन के यूषरस और तिल, खील, पुरानी दारू, सहत, वाद्यमंड, छाछ, गधे का और भैंस का मूत्र, लट्वा (कबूतर की जाति), पिंडुकिया, शशे, तीतर, लवा, मोर, वघेरा, काला हिरण, बटेर, तोता आदि जंगली जीव, सहजना, परवल, करेला, ककोडा, तिलक, कटेरी, गूलर, लहसन, नवीन केला की फली, पत्तूर, गोखरू, मूषाकरणी का साग (पत्तों का साग), आक के पत्ते, गिलोय, त्रिफला (हरड, बहेडा, आंवला), कैथ, जामुन, कसेरू, कमल, भसीडा, कमल-गट्टा, खिजूर, कलियारी, तालफल, सोंठ, मिरच, पीपल, तेंदू, खैर, इन्द्रजो (तरमूज), संपूर्ण कडवे पदार्थ और कषेले पदार्थ, हाथी, घोडे की सवारी, अत्यंत डोलना, सूरज की धूप और दंड कसरत करना ये संपूर्ण पदार्थ प्रमेहरोगपीडित मनुष्यों को हितकारी जानने ॥

प्रमेहरोग में अपथ्य

वेगरोधं धूमपानं स्वेदं शोणितमोक्षणम् । सदासनं दिवानिद्रां
नवान्नानि दधीनि च ॥ आनूपमांसं निष्पावं पिष्टान्नानि च मै-
थुनम् । सौवीरकं सुरासूक्तं तैलं क्षीरं गुडं घृतम् ॥ तुंबीं ता-
लास्थिमज्जां च विरुद्धान्यशनानि च । कूष्मांडमिक्षुदुष्टांबु
स्वाद्वम्ललवणानि च ॥ अभिष्यंदि च यत्नेन प्रमेही परिवर्जयेत् ।

अर्थ-मलमूत्रादि वेगों का रोकना, धूमपान, पसीने निकालना, रुधिर निकालना, अष्टप्रहर भोजन, दिन में सोना, नये अन्न और दही, अनूपदेश के जीवों का मांस

चौरा, पीसे हुए अन्न, मैथुन, कांजी, दारु, सिर्का, तेल, दूध, गुड, घी, तूंबा, ताल के भीतर का गूदा, विरुद्ध भोजन, नवीन पेठे का फल, ईख (गंडे), दुष्टजल, स्वादु, खट्टे, निमकीन पदार्थ और अभिष्यंदी पदार्थ ये सब प्रमेहरोगवाले को यत्नपूर्वक त्याग देने चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे प्रमेहपिटिकानिदानचिकित्सा समाप्ता ।

मेदोरोगनिदानचिकित्सा।

मेदरोगनिदान

अव्यायामदिवास्वप्नश्लेष्मलाहारसेविनः ।
मधुरोऽन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदो विवर्द्धते ॥

अर्थ–दंड कसरत के न करने से, दिन में सोने से और कफकारी पदार्थ के सेवन करने से ऐसी रीति से वर्त्तनेवाले पुरुष का अन्नरस केवल मधुर कहिये आमरूप हो स्नेह करके मेद को बढावे ॥

संप्राप्ति

मेदसावृतमार्गत्वात्पुष्यंत्यन्येन धातवः ।
मेदस्तु चीयते यस्मादशक्तः सर्वकर्मसु ॥

अर्थ–मेद करके मार्ग बंद होने से अन्य धातु हाड मज्जा वीर्य आदि पुष्ट नहीं होंय और मेद बढे तब वह पुरुष सर्व कर्म करने को अशक्त होय ॥

बढी हुई मेद के उपद्रव

क्षुद्रश्वासतृषामोहस्वप्नक्रथनसादनैः ।
युक्तः क्षुत्स्वेददौर्गंध्यैरल्पप्राणोल्पमैथुनः ॥

अर्थ–क्षुद्रश्वासः रूक्षायासोद्भव इत्यादिक पिछाडी कह आये सो तृषा मोह निद्रा अकस्मात् श्वास का रोकना अंगग्लानि भूख पसीना और दुर्गंधि इन लक्षणों करके वह पुरुष युक्त होय उस की शक्ति घट जाय और मैथुन करने में उत्साह न होय॥

मेद रहने के स्थान

मेदस्तु सर्वभूतानामुदरेष्वास्थिषु स्थितम् ।
अत एवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत् ॥

अर्थ–मेद यह सब प्राणिमात्रों के उदर और हड्डियों में रहे है इसी से मेदवाले पुरुष का पेट बढा करता है ॥

मेदरोग में जठराग्नि प्रदीप्त होने में कारण

मेदसावृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः । चरन्संधुक्षयत्यग्नि-माहारं शोषयत्यपि ॥ तस्मात्स शीघ्रं जरयत्याहारं चापि कांक्षति । विकारांश्चाश्नुते घोरान्कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥

अर्थ–मेद से मार्ग रुक जाने से कोठे में पवन का संचार विशेष होय तब अग्नि को यह पवन बढावे. भोजन करे आहार को तुरन्त शोषण करे तब वह आहार शीघ्र पचकर फेर जेमने की इच्छा को प्रगट करे और भोजन करने में काल का व्यतिक्रम होने से भयंकर वात के रोग उत्पन्न होंय ॥

बढी मेद नाश का कारण होती है यह कथन

एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ ।
देहं हि दहतः स्थूलं वनं दावानलो यथा ॥

अर्थ–यह अग्नि और वायु बडा उपद्रव करे हैं जैसे दावानल (अग्नि) वन को जरावे है उसी प्रकार ये दोनों उस स्थूल (मोटे) पुरुष को जराते हैं ॥

अत्यंत मेद बढने का परिणाम

मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः ।
विकारान् दारुणान् कृत्वा नाशयंत्याशु जीवितम् ॥

अर्थ–मेद अत्यन्त बढने से वायु आदि अकस्मात् भयंकर प्रमेहपिटिका, ज्वर, भगंदर, विद्रधि, वातरोग इत्यादि उत्पन्न करके शीघ्र ही जीव का नाश करे ॥

स्थूललक्षण

मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः ।
अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥

अर्थ–मेद और मांस ये अत्यंत बढने से जिस पुरुष के कूले, पेट और स्तन ये थल थल हलें और उस के शरीर की स्थूलता बडी होय अर्थात् जैसी चाहिये तैसी न होय तथा उत्साह (हुशयारी) न रहे ऐसे मनुष्य को अति स्थूल कहते हैं ॥

उवटना

हरीतकीलोध्रमरिष्टपत्रपूतत्वचो दाडिमवल्कलं च ।
एषोंगरागः कथितोंगनानां जंब्वाः कषायश्च नराधिपानाम् ॥

अर्थ–हरड, पठानी लोध, नीम के पत्ते, कंजा की छाल, अनार का वक्कल इन को पीसके उवटना करे और जामुन का काढा पीवे यह स्त्रियों को और राजाओं को उत्तम है ॥

सामान्ययोग

गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा ।
तक्रारिष्टप्रयोगश्च प्रयोगो माक्षिकस्य च ॥

अर्थ–गिलोय, भद्रमोथा, त्रिफला, छाछ, नींम के पत्ते ये सब योग दुर्गंधिनाशक है. उसी प्रकार सहत दुर्गंधिनाशक है ॥

चव्यादि चूर्ण

सचव्यजीरकव्योषहिंगुसौवर्चलानलाः ।
मधुना सक्तवः पीता मेदोघ्ना वह्निदीपनाः ॥

अर्थ–चव्य, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, संचरनिमक और चित्रक इन का चूर्ण सहत में मिलायके चाटे तो मेदरोग नष्ट होय ॥

फलत्रिकादि चूर्ण

फलत्रयं त्रिकटुकं सतैलं लवणान्वितम् ।
षण्मासमुपभुक्तं चेत्कफमेदोनिलापहम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आवला, सोंठ, मिरच, पीपल, तेल, सैंधानिमक ये सब औषध एकत्र करके छः महीने पर्यंत सेवन करे तो कफ, मेद और वादी इन को नाश करे ॥

मेद पर सामान्यचिकित्सा

अस्वप्नं च व्यवायं च व्यायामं चिंतनानि च ।
स्थौल्यमिच्छन् परित्यक्तुं क्रमेणातिप्रवर्तयेत् ॥

अर्थ–अल्प सोना, मैथुन करना, दंड-कसरत, चिंता ये जिस को स्थूलता दूर करने की इच्छा होय उस को क्रम करके ये बढाने चाहिये ॥

नवकगुग्गुलु

व्योषाग्निमुस्तत्रिफलाविडंगं गुग्गुलुः समम्। खादन्सर्वान् जयेद्व्याधीनामवातभवान् गदान् ॥ क्षौद्रेण त्रिफलाक्काथः पीतो मेदोहरः स्मृतः ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रक, नागरमोथा, हरड, बहेडा, आवला, वायविडंग, गूगल ये समान भाग ले एकत्र चूर्ण करके खाय तो संपूर्ण रोगों की जय होय और आम से उत्पन्न हुए रोगों का पराजय होय. सहत के साथ हरड, बहेडा और आवला इन का काढा करके पीवे तो मेद को हरण करे ॥

मेद पर उपचार

शीतीभूतं तथोष्णांबु मेदोहृत्क्षौद्रसंयुतम् ।
उष्णं भक्तस्य मंडं वा पिबन्कृशतनुर्भवेत् ॥

अर्थ–गरम जल को शीतल करके उस में सहत डालके पीवे तो मेदरोग को नाश करे उसी प्रकार चावलों का माढ गरमागरम पीवे तो देह कृश होय ॥

तालपत्र का क्षार

क्षारं वा तालपत्रस्य हिंगुयुक्तं पिबेन्नरः ।
मेदोवृद्धिविनाशाय भक्तमंडसमन्वितम् ॥

अर्थ–ताड के पत्तों का क्षार, हींग इन को भात के माढ से पीवे तो उस प्राणी की मेदवृद्धि नाश होय ॥

मोचरसादि लेप

हितो मोचरसो युक्तश्चूर्णैरुदधिफेनजैः ।
प्रलेपेन निहंत्याशु देहदुर्गंधमुत्कटम् ॥

अर्थ–मोचरस और समुद्रफेन इन को एकत्र खरल कर लेप करे तो अत्यंत देह की दुर्गंध को नष्ट करे ॥

हरीतक्यादि उद्वर्तन

हरीतकीं तु संपिष्य गात्रमुद्वर्त्तयेन्नरः ।
पश्चात्स्नानं प्रकुर्वीत देहस्वेदप्रशांतये ॥

अर्थ–हरड को पीसके देह में उवटना करके स्नान कर डाले तो देह में पसीने निकलना बंद होवे ॥

चंद्राशु शीतलं लोध्रं शिरीषोशीरकेशरैः ।
उद्वर्तनं भवेद् ग्रीष्मे स्वेदोद्गमनिवारणम् ॥

अर्थ–कंकोल, लोध, शिरस, वाला, कमल के केशर इन का उवटना करना यह पसीने का निवारण करता है ॥

उवटना

शिरीषलामज्जकहेमलोध्रैस्त्वग्दोषसंस्वेदहरः प्रघर्षः ।
प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गंध्यहरः प्रदिष्टः ॥

अर्थ–सिरस, पीला रोहिषतृण, नागकेशर और लोध इन का कल्क करके देह में मालिस करे अथवा फूलप्रियंगु, लोध, खस, चंदन इन का कल्क देह में मालिस करे तो त्वचा के दोष, पसीने, शरीर की दुर्गंधी इन को नाश करे ॥

क्काथ

क्षौद्रेण त्रिफलाक्काथः पीतो मेदोहरः स्मृतः ॥

अर्थ–त्रिफला के काढे में सहत डालके पीवे तो मेदरोग दूर होय ॥

त्र्यूषणाद्य लेह

त्र्यूषणं त्रिफला चव्यं चित्रकं बिडमौद्भिदम् । बाकुची सैंधवं चैव सौवर्चलमयोरजः ॥ माषमात्रमतश्चूर्णं लिह्यादाज्यमधुप्लुतम् । अतिस्थौल्यमिदं चूर्णं निहंत्यग्निविवर्धनम् ॥ मेदोघ्नं मेहकुष्ठघ्नं श्लेष्मव्याधिनिबर्हणम् । नाहारे नियमश्चात्र विहारे वा विधीयते ॥ त्र्यूषणाद्यमिदं चूर्णं रसायनमनुत्तमम् ॥

अर्थ–त्रिकुटा, त्रिफला, चव्य, चित्रक, बिडनिमक, सोरा, बावची, सैंधानिमक, संचरनिमक, लोहभस्म इन सब का चूर्ण एक मासे को घी और सहत के साथ सेवन करे तो अतिस्थूलता नाश होय. अग्निवृद्धि, मेद, प्रमेह, कुष्ठ, कफरोग इन को नाश करे. इस पर किसी प्रकार का परहेज नहीं है. इस को त्र्यूषणाद्य चूर्ण कहते हैं॥

उवटना

प्रियंगुलोध्राभयचंदनानि शरीरदौर्गंध्यहरं प्रदिष्टम् ॥

अर्थ–फूलप्रियंगू, लोध, हरड और चंदन इन का उवटना करे तो देह की संपूर्ण दुर्गंधी नाश होय ॥

बब्बूलादि उद्वर्तन

बब्बूलस्य दलैः सम्यक् वारिणा परिपेषितैः । गात्रमुद्वर्तयेत्पश्चाद्धरीतक्या सुपिष्टया ॥ भूय उद्वर्तनं कृत्वा पश्चात्स्नानं समाचरेत् । प्रस्वेदान्मुच्यते क्षिप्रं ततस्त्वेवं समाचरेत् ॥ जंबूदलार्जुनतरुप्रसवैः सकुष्ठैरुद्वर्तनं प्रकुरुते प्रतिवासरं यः । प्रस्वेदबिंदुकणिकानिकराणि पंगोर्दुर्गंधिता वपुषि तस्य पदं दधाति ॥

अर्थ–बबूर के पत्तों को जल में पीस अंग में मालिस करे फिर हरड को पीसके लगावे पश्चात् गरम जल से स्नान करे तो पसीनों का आना दूर होय, फिर इस प्रकार करे जामून के पत्ते और कोहवृक्ष के पत्ते, कूठ इन के चूर्ण को जल में पीस जो नित्यप्रति देह में मालिस करता है उस के देह में पसीने और दुर्गंध नहीं रहे ॥

वासादि लेप

वासादलरसैर्लेपः शंखचूर्णावचूर्णितः ।
बिल्वपत्ररसो वापि गात्रदौर्गंध्यनाशनः ॥

अर्थ–अडूसे के पत्तों का रस, शंखचूर्ण इन को पीसके लेप अथवा बेल के पत्तों को रस का लेप देह की दुर्गंध को नाश करे ॥

त्रिफलादि तैल

त्रिफलातिविषामूर्वात्रिवृच्चित्रकवासकैः । निंबारग्वधषड्ग्रंथासप्तपर्णनिशाह्वयैः ॥ गुडूचींद्रयवाकृष्णाकुष्ठसर्षपनागरैः । तैलमेभिः समं पक्वं सुरसादिरसप्लुतम् ॥ पानाभ्यंजनगंडूषनस्यबास्तिषु योजितम् । स्थूलतालस्यकंड्वादि जयेत्कफकृतान्गदान् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, अतीस, मूर्वा, निसोथ, चित्रक, अडूसा, नीम की छाल, अमलतास, वच, सतोना, हलदी, गिलोय, इन्द्रजो, पीपल, कूठ, शिरस और सोंठ ये औषध और निर्गुंडी, इत्यादिकों के कफघ्न रस इन करके युक्त तेल को पकावे. जब सिद्ध हो जावे तब उतारके धर रखे. इस को पीना, अंजन करना, कुरला करना, नस्य, बस्ति, मालिस इन ठिकाने उपयुक्त करने से स्थूलता, आलस्य, खुजली इत्यादि कफ के रोगों को जीते ॥

महासुगंधितैल

चंदनं कुंकुमोशीरं प्रियंगुशठिरोचनम् । तुरुष्कागरुकस्तूरी कर्पूरो जातिपत्रिका ॥ जातीकंकोलपूगानां लवंगस्य फलानि च। नलिका नलदं कुष्ठं हरेणुतगरं प्लवम् ॥ नखं व्याघ्रं नखं स्पृक्का वालो दमनकं तथा । प्रपौंडरीकं कर्चूरं समांशैः शाणमात्रकैः॥ महासुगंधमित्येतत्तैलं प्रस्थेन साधयेत् । प्रस्वेदमलदौर्गंध्यकंडुकुष्ठहरं परम् ॥ अनेनाभ्यक्तगात्रस्तु वृद्धः सप्ततिकोपि वा । युवा भवति शुक्राढ्यः स्त्रीणामत्यंतवल्लभः ॥ सुभगो दर्शनीयश्च गच्छेद्वै प्रमदाशतम् । वंध्यापि लभते गर्भं षंढोपि पुरुषायते ॥ अपुत्रः पुत्रमाप्नोति जीवेच्च शरदां शतम् ॥

अर्थ–चंदन, केशर, खस, प्रियंगु, कचूर, गोरोचन, शिलारस, अगर, कस्तूरी, कपूर, जावित्री, जायफल, कंकोल, सुपारी, लौंग, गुलछबू, नेत्रवाला, कूठ, रेणुकबीज, तगर, भद्रमोथा, नखद्रव्य, व्याघ्रनख, स्पृक्का, पीला नेत्रवाला, दौना, मरुआ, पुंडरीकवृक्ष और कपूरकचरी ये प्रत्येक चार २ मासे लेवे इन का ६४ तोले तेल में डालके तेल सिद्ध करे यह पसीने, दुर्गंध, खुजली, कोढ इन को नाश करे· इस तेल का जो मालिस करे तो सत्तर वर्ष का भी बुढ्ढा होय तो भी तरुण, अतिवीर्यवान्, स्त्रियों को प्रिय ऐसा होय और उत्तम पुष्ट, देखने योग्य, सौ स्त्रियों से गमन करनेवाला ऐसा होवे और वंध्या स्त्री के पुत्र होय, नपुंसक पुरुष को पुरुषार्थ प्राप्ति होय, जिस के पुत्र न होय उस के पुत्रप्राप्ति होय, सौ वर्ष पर्यंत जीवे इतने गुण इस **महासुगंधितैल** में हैं ॥

वडवाग्निरस

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं तालं बोलं समं समम् । अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं क्षौद्रैर्लेह्यं द्विगुंजकम्॥वडवाग्निरसो नाम स्थौल्यवृंदं नियच्छति। पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं पिबेत्सदा ॥

अर्थ-पारा, गंधक, ताम्रभस्म, हरतालभस्म, लाल बोल ये सब समान भाग लेवे· इन को आक के दूध में एक दिन खरल करे फिर सहत के साथ दो रत्ती चाटे· इस को **वडवाग्निरस** कहते हैं· यह स्थूलता को नाश करे इस के ऊपर चार तोले जल और चार तोले सहत मिलायके पीवे ॥

रसभस्मयोग

रसभस्म वल्लमात्रं लीढ्वा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।
कोष्णांबुना समेतं तत्स्थौल्यं मेदकृतं जयति ॥

अर्थ-पारे की भस्म दो रत्ती सहत में मिलायके चाटे ऊपर से सहत को गरम जल में मिलायके पीवे तो मेद से प्रगट स्थूलता को दूर करे ॥

त्रिमूर्तिरस

सूतं गंधमयोभस्म समं संमेल्य भावयेत् । निर्गुंडीपत्रतोयेन मुसलीकंदवारिणा॥ततः सिद्धममुं माषमात्रं रसमनुत्तमम् । लोध्रक्षौद्रेण चाश्नीयाच्चूर्णं माषोन्मितं हितम्॥षट्कटु त्रिफला पंच लवणा वल्गुजस्य तत् । मेदशोथाग्निमांद्यामवातश्लेष्मगदप्रणुत् ॥

अर्थ-पारा, गंधक, लोहभस्म सब समान भाग लेय. फिर निर्गुंडी के रस में तथा मूसली के कंद के रस की एक २ भावना देवे, तो यह रस सिद्ध होय यह रस १ मासे और लोध का चूर्ण १ मासे तथा सहत १ मासे सब को मिलायके खाय. ऊपर से सोंठ, मिरच, पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, त्रिफला, पांचों निमक, बावची इन का चूर्ण खाय तो मेद, सूजन, मंदाग्नि, आमवात, कफरोग इन को नष्ट करे ॥

मेद पर सामान्य उपचार

श्रमचिंताव्यवायाध्वक्षौद्रजागरणस्त्रियः ।
हंत्यवश्यमतिस्थौल्यं यवश्यामाकभोजनम् ॥

अर्थ-परिश्रम, चिंता, मैथुन, मार्ग चलना, सहत पीना, स्त्रीसेवन, जौं, सामखिया का भोजन ये कर्म स्थूलनाशक हैं ॥

मेदरोग पर पथ्य

चिंता श्रमं जागरणं व्यवायं प्रोद्वर्त्तनं लंघनमातपश्च । हस्त्यश्वयानं भ्रमणं विरेकः प्रच्छर्दनं चाप्यपतर्पणं च ॥ पुरातना वेणवकोरदूषश्यामाकनीवारप्रियंगुजूर्णाः । यवाः कुलत्थाश्चणका मसूरा मुद्गास्तुवर्यश्च मधूनि लाजाः ॥ कटूनि तिक्तानि कषायकाणि तक्रं सुरा पिंगलमत्स्य एव । दग्धानि वार्त्ताकफलानि चापि फलत्रयं गुग्गुलुरायसं च ॥ शिरीषलोध्रद्रुहरीतकीनां

चूर्णेन गात्रस्य विलेपनं च । कटुत्रयं सर्षपतैलमेला रूक्षाणि सर्वाणि च मुख्यतैलम् ॥ पत्रोत्थशाकोगुरुलेपनानि प्रतप्तनीराणि शिलाजतूनि । एतानि सर्वाणि निषेवितानि मेदोगदं सत्वरमुत्क्षिपंति ॥

अर्थ-चिंता करना, परिश्रम, जागना, मैथुन करना, उवटना, लंघन, धूप में डोलना, हाथी घोडे की सवारी, डोलना, जुल्लाब, वमन, अपतर्पण (कृशकर्त्ता पदार्थों का सेवन), पुराने बांस के चावल, कोदों, सामखिया, पसाई, प्रियंगु, ज्वार, जों, कुलथी, चना, मसूर, मूंग, अरहर की दाल, सहत, खील, कडवे, चरपरे, कषेले पदार्थ, छाछ, मद्य, चिंगल जाति की मछली, बैंगन का भुरता, हरड, बहेडा, आंवला, गूगल, लोहभस्म, शिरस, लोध और हरड इन के चूर्ण को देह में मालिस करना, सोंठ, मिरच, पीपल, सरसों का तेल, इलायची, संपूर्ण रूखे पदार्थ, तिल्ली का तेल, पत्ते के साग, अगर का लेप, गरम जल और शिलाजीत ये संपूर्ण पदार्थों का सेवन करना मेदरोग को तत्काल दूर करते हैं ॥

मेदरोग पर अपथ्य

स्नानं रसायनं शालीन् गोधूमान् सुखशीतलान् । क्षीरेक्षुविकृतीन् माषान्सौहित्यं स्वेदनानि च॥मत्स्यं मांसं दिवा निद्रा स्त्रग्गंधान्मधुराणि च । सर्वस्य भोजनस्यांते जलपानं विशेषतः ॥ अतिमात्रं तूपचितो विशेषाद्वमनक्रियाम् । स्वभावस्थत्वमन्विच्छन्मेदस्वी वर्जयेदिमान् ॥

अर्थ-स्नान करना, रसायन पदार्थों का सेवन, गेहूं, सुख से रहना, दूध के पदार्थ, ईख के पदार्थ, उडद, सौहित्य (पेट भरके भोजन करना), मछली, मांस, दिन में सोना, फूलमाला, चंदन का धारण, मीठे पदार्थ, सब भोजनों के अंत में जल का पीना, अत्यंत देह को पुष्टकारी पदार्थ और वमन करना, जो मनुष्य मुटापे को दूर कर देह को ठीक रखना चाहे वह इन सब को त्याग देवे ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे मेदरोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

उदररोगकर्मविपाकः।

योब्रह्मविष्णुरुद्राणां मध्ये चैकं विभावयेत्।
साधयेदुदरं व्याधिं युक्तो भवति मानवः॥

अर्थ–जो पुरुष ब्रह्मा, विष्णु, शिव इन में से एक को विशेष माने वह अपने वास्ते उदररोग का साधन करे है अर्थात् वह उदररोगी होय॥

शांति

कुर्यात्कृच्छ्रं चातिकृच्छ्रं चांद्रायणमथापरम्।
सहस्रकलशस्नानमीश्वरस्य तु कारयेत्॥

अर्थ–उस प्राणी को कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, चांद्रायणव्रत करने चाहिये और शिव को सहस्र कलश स्नान करावे॥

जलोदर का कर्मविपाक

राज्ञा वा तु नियुक्तेन नियुक्तो धर्मनिश्चये। पुरोहितः प्राड्विवाकः सचिवो वान्यथाचरेत्॥ जलोदरत्वं प्राप्नोति तस्य वक्ष्यामि निष्कृतिम्॥

अर्थ–धर्मनिश्चय करने को राजा अथवा राजा ने मुकरीर करा पुरोहित अथवा पुरोहित ने किसी दूसरे को निश्चय करा होय यदि वह धर्म के कार्य को विपरीत करे तो उस के जलोदर व्याधि होती है उस के प्रायश्चित्त के वास्ते शांति कहता हूं॥

शांति

पयसा वर्तयेन्मासत्रितयं व्रतमुत्तमम्। सहस्रकलशस्नानं महादेवस्य चैव हि॥ भोजयेच्च शतं विप्रान्मुच्यते किल्बिषात्ततः॥

अर्थ–उस जलोदरव्याधि की शांति करने को तीन महीने पर्यंत पयोव्रत करे और महादेव को सहस्र कलश स्नान करावे तथा सौ ब्राह्मणभोजन करावे तो वह पुरुष उस पापसे छूट जाय॥

प्रकारांतर

गर्भपातनजा रोगा यकृत्प्लीहजलोदराः।
तेषां प्रशमनार्थाय प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम्॥

अर्थ–ग्रंथांतर में लिखा है कि जो गर्भपात करता है वह यकृत्, प्लीहा, जलोदररोगी होय है इस के दूर करने को प्रायश्चित्त कहते हैं ॥

शांति

एतेषु दद्याद्विप्राय जलधेनुं विधानतः ।
सुवर्णरौप्यताम्राणां पलत्रयसमन्विताम् ॥

अर्थ–ऊपर कहे हुए रोगों के शमन करने को ब्राह्मण को विधिपूर्वक सुवर्ण, चांदी अथवा ताम्र ये प्रत्येक चार २ तोले लेकर जलधेनु दान करे ॥

प्लीहोदरकर्मविपाक

भृतकाध्यापको यस्तु कन्यादूषणतत्परः ।
प्लीहावान् संभवेद्विप्रो जपेच्छ्रीसूक्तमेष हि ॥

अर्थ–जो प्राणी वेतन (तनखा) लेकर पढाता है अथवा कन्या को दूषित करता है वह प्लीहरोगी होय है उस को इस पाप के दूर करने को श्रीसूक्त का जप करना चाहिये ॥

शांति

अयुतत्रयसंख्याकं प्लीहोदरविमुक्तये ।
प्रत्यृचं च भवेद्धोमश्चरूणां सर्पिषा पृथक् ॥

अर्थ–जिस के प्लीहोदर हुआ हो उस को ३० हजार श्रीसूक्त का पाठ करना और प्रतिऋचा के साथ चरु और घी का हवन पृथक् पृथक् करे ॥

उदरनिदान

रोगाः सर्वेऽपि मंदेऽग्नौ सुतरामुदराणि च ।
अजीर्णान्मलिनैश्चान्नैर्ज्जायंते मलसंचयात् ॥

अर्थ–अग्नि मन्द होने से सब रोग होते हैं और उदर तौ विशेष करके होय है कारण यह है कि अग्निमांद्य यह त्रिदोषजनक है और अजीर्ण से मलिन अन्न से (विरुद्ध अध्यशनादिक) और मल (दोष तथा पुरीषादिक) इन के संचय से उदररोग होय है. इस जगह उदरशब्द करके उदरस्थित रोग जानने सो ग्रंथान्तर में लिखा है॥

उदररोग की संप्राप्ति

रुध्वा स्वेदांबुवाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः ।
प्राणाग्न्यपानान् संदूष्य जनयंत्युदरं नृणाम् ॥

अर्थ–वातादिदोष स्वेद (पसीना) वहनेवाली और जल को वहनेवाली नाडियों के मार्ग को रुद्ध (रोक) कर और वे दोष बढकर प्राणवायु अग्नि और अपानवायु इन को अत्यन्त दुष्ट कर मनुष्यों के उदररोग उत्पन्न करे है. उदररोग का पूर्वरूप सुश्रुत में लिखा है–तत्पूर्वरूपं बलवर्णकांक्षा वलीविनाशो जठरे तु राज्यः । जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो बस्तौ रुजः पादगतश्च शोथः ॥

उदररोगों का सामान्यलक्षण

आध्मानं गमनेऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलान्विता । शोफः सदनमंगानां संगो वातपुरीषयोः ॥ दाहस्तंद्रा च सर्वेषु जठरेषु भवंति हि॥

अर्थ–अफरा, चलने की शक्ति का नाश, दुर्बलता, मंदाग्नि, सूजन, अंगग्लानि, वायु का तथा मल का रुकना, दाह, तन्द्रा ये लक्षण सब उदर में होते हैं ॥

उदर की संख्या

पृथक् दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः ।
संभवंत्युदराण्यष्टौ तेषां लिंगं पृथक् शृणु ॥

अर्थ–पृथक् दोषों से (अर्थात् वात पित्त कफ) सन्निपात से (सन्निपातोदर) प्लीहोदर १, बद्धोदर १, क्षतोदर १ और जलोदर १ सब मिलायकर ८ भये उन के लक्षण पृथक् पृथक् कहते हैं ॥

वातोदर के लक्षण

तत्र वातोदरे शोथः पाणिपन्नाभिकुक्षिषु । कुक्षिपार्श्वोदरकटीपृष्ठरुक्पर्वभेदनम् ॥ शुष्ककासोऽगमर्दोऽधोगुरुता मलसंग्रहः । श्यावारुणत्वगादित्वमकस्माद्वृद्धिह्रासवत् ॥ सतोदभेदमुदरं तनुकृष्णशिराततम् । आध्मातदृतिवच्छब्दमाहतं प्रकरोति च ॥ वायुश्चात्र सरुक्छब्दो विचरेत्सर्वतोगतिः ॥

अर्थ–वातोदर में हाथ, पैर, नाभि और कूख इन में सूजन होय, संधियों का टूटना तथा कूख, पसवाडे, पेट, कमर, पीठ इन में पीडा, सूखी खांसी, अंगों का टूटना, कमर से नीचे भाग में भारीपना, मल का संग्रह होना, त्वचा, नख, नेत्रादिक का काला लाल होना पेट अकस्मात् (निमित्त के विना) बडा हो जाय छोटा हो जाय सुई चुभाने की सी तथा नोचने की सी पीडा होय, पेट में चारों तरफ बारीक काली

शिरा (नाडियों) से व्याप्त होय, चुकटी मारने से फूली पखाल के समान शब्द होय इस उदर में वायु चारों तरफ डोलकर शूल करे तथा गूंजे ॥

वातोदर का सामान्य यत्न

उक्तपमेद्भिषग्दोषबलकालविशेषवित् । स्थिरादिसर्पिषः पानं स्नेहं स्वेदं विरेचनम् ॥ वेष्टनं वाससा ग्लानौ शाल्वलं चोपनाहनम् । पेया यूषरसान्नं च योज्यं वातोदरे क्रमात् ॥

अर्थ–बल और काल को भले प्रकार जाननेवाला वैद्य वातोदर पर स्थिरादि घृत का पान करे तथा स्वेदन स्नेहन और विरेचन इत्यादिक उपचार करे. इन उपचारों के करने से यदि ग्लानि उत्पन्न हुई होय तो उस को कपडों से लपेट देवे अथवा कोमल हरे तृण पीडित स्थान पर धरे, उपनाहकर्म, पेया, यूष और रस ये भोजन को देवे ॥

तक्रपान

वातोदरी पिबेत्तक्रं पिप्पलीलवणान्वितम् । शर्करामरिचोपेतं स्वादु पित्तोदरी पिबेत्॥यवानीसैंधवाजाजीव्योषयुक्तं कफोदरी। सन्निपातोदरी तक्रं त्रिकटुक्षारसैंधवैः ॥

अर्थ–वातोदरी होवे तो उस को पीपल, सैंधानिमक, मिलायके छाछ पिलावे, और पित्तोदरवाले को मिश्री और काली मिरचयुक्त मीठी छाछ पिलावे. उसी प्रकार अजमायन, सैंधानिमक, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल इन करके युक्त; कफोदरवाले रोगी को छाछ पिलावे तथा सन्निपातोदरी होवे तो उस को सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, सैंधानिमक इन का चूर्ण मिलायके छाछ पीनी चाहिये ॥

चूर्णकषाय

एरंडतैलं दशमूलमिश्रं गोमूत्रयुक्तं त्रिफलारजो वा ।
निहंति वातोदरशोथशूलं क्वाथः समूत्रो दशमूलजश्च ॥

अर्थ–अंडी का तेल दशमूल के चूर्ण में मिलायके खाय अथवा गोमूत्र में हरड, बहेडा, आंवला इन का चूर्ण मिलायके खावे अथवा दशमूल का काढा गोमूत्र में मिलायके पीवे तो वातोदर, सूजन, शूल इन को नाश करे ॥

शिलाजतुचूर्ण

दशमूलकषायेण क्षीरयुक्तं शिलाजतु ।
सद्यो वातोदरी क्षीरमौष्ट्रमाजं च केवलम् ॥

अर्थ–वातोदर पर दशमूल के काढे में दूध और शिलाजीत डालके पीवे अथवा ऊंट का अथवा बकरी का केवल दूध पीवे ॥

कुष्ठादि चूर्ण

कुष्ठं दंती यवक्षारं व्योषं त्रिलवणं वचा । अजाजी दीप्यकं हिंगुस्वर्जिकाचव्याचित्रकैः ॥ शुंठीं चोष्णांभसा पीत्वा वातोदररुजापहाम् ॥

अर्थ–कूठ, जमालगोटा, जवाखार, सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधानिमक, बिडनिमक, काचिया निमक, वच, जीरा, अजमायन, हींग, सुहागा, चव्य, चित्रक और सोंठ इन के चूर्ण को गरम जल के साथ पीवे तो वातोदर को नाश करे ॥

समुद्रादि चूर्ण

सामुद्रसौवर्चलसैंधवानां क्षारो यवानामजमोदभागः । सपिप्पलीचित्रकशृंगबेरं हिंगूविडंगं च समानि कुर्यात् ॥ एतानि चूर्णानि घृतप्लुतानि भुंजीत पूर्वं कवलैः प्रशस्तम् । वातोदरं गुल्ममजीर्णभुक्तं वातप्रकोपग्रहणीं च दुष्टाम् ॥ अर्शांसि दुष्टानि च पांडुरोगं भगंदरं चापि निहंति सद्यः ॥

अर्थ–समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैंधानिमक, जवाखार, अजमायन, पीपल, चित्रक की छाल, सोंठ, हींग और वायविडंग ये समान भाग लेकर चूर्ण करे. इस को घी भात के साथ भक्षण करे तो वातोदर, गोला, अजीर्ण पर भोजन, वादी का प्रकोप, संग्रहणी, बवासीर, पांडुरोग और भगंदर इन को शीघ्र नाश करे ॥

वातोदर पर घृत

दशमूलकषायेण रास्नानागरदारुभिः ।
पुनर्नवाभ्यां च घृतं सिद्धं वातोदरापहम् ॥

अर्थ–दशमूल, रास्ना, सोंठ, देवदारु और लाल तथा सपेद पुनर्नवा इन के काढे में घृत सिद्ध करे यह वातोदर को नाश करे ॥

पित्तोदर के लक्षण

पित्तोदरे ज्वरो मूर्च्छा दाहस्तृट्कटुतास्यता । भ्रमोतिसारः पीतत्वं त्वगादावुदरं हरित् ॥ पीतताम्रशिरानद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते । धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्रपाकं प्रदूयते ॥

अर्थ-पित्त के उदररोग में ज्वर, मूर्च्छा, दाह, प्यास, मुख में कडुआ सा, भ्रम, अतिसार, त्वगादिक (नख नेत्र) इन में पीलापना, पेट हरा होय, पीली तामे के रंग की नाडियों से उदर व्याप्त हो, पसीना आवे, गरमी से सब देह में दाह होय, आंतों से धूंआंसा निकलता दीखे, हाथ के स्पर्श करने से नरम मालूम हो, शीघ्र पाक होय अर्थात् जलोदरत्व को प्राप्त होय और उस में घोर पीडा होय ॥

पित्तोदर का सामान्य यत्न

पित्तोदरे च बलिनं पूर्वमेव विरेचयेत् ।
पयसा त्रिवृताकल्केनोरुबूकशृतेन वा ॥

अर्थ-पित्तोदरवाला रोगी बलवान् होवे तो प्रथम उस को दूध में निसोथ का कल्क अथवा अंड की जड का काढा देकर दस्त करावे ॥

सातलादि घृत

सातलात्रायमाणाभ्यां दातेनारग्वधेन च ।
घृतं पित्तोदरे पेयं मधुरौषधसाधितम् ॥

अर्थ-सातला(थूहर), त्रायमाण, अमलतास का गूदा इन का काढा और मधुर औषध इन से सिद्ध करा हुआ घृत पित्तोदर पर प्राशनार्थ देवे ॥

त्रिवृतादि घृत

स्यात्त्रिवृत्रिफलासिद्धं सर्पिःपानं विशुद्धये । पृश्निपर्णीबला-व्याघ्रीलाक्षानागरसाधितम् ॥ क्षीरं पित्तोदरं हंति जठरं कति-भिर्दिनैः ॥

अर्थ-निसोथ, हरड, बहेडा और आंवला इन के काढे में सिद्ध करा हुआ घृत अथवा पिठवन, खिरेटी, कटेरी, लाख और सोंठ इन से सिद्ध करा हुआ दूध देवे तो कुछ दिन में पित्तोदर का नाश करे ॥

कफोदर के लक्षण

श्लेष्मोदरेऽगसदनं स्वापः श्वयथुगौरवम् । निद्रोत्क्लेदोऽरुचिः श्वासः कासशुक्लत्वगादिता ॥ उदरं स्तिमितं स्निग्धं शुक्लरा-जीततं महत् । चिराभिवृद्धिकठिनं शीतस्पर्शं गुरु स्थिरम् ॥

अर्थ-कफ के उदररोग में हाथ, पैर आदि अंगों में शून्यता हो और जिकड जाय, सूजन होय, अंग भारी हो जाय, निद्रा आवे, वमन होयगी ऐसा मालूम होय,

अरुचि होय, श्वास, खांसी होय, त्वचा, नख, नेत्रादिक सपेद हों, पेट निश्चल चिकना सपेद नाडियों से व्याप्त होय, इन की वृद्धि बहुत काल में होय, पेट करडा और शीतल मालूम होय तथा भारी और स्थिर होय ॥

कफोदर का यत्न

श्लेष्मोदरिणं सुपिप्पल्या सिद्धेन सर्पिषा स्नेहं नीत्वा स्नुहिक्षीरेणानुलोम्य त्रिकटुकमूत्रतैलमुस्तादिक्वाथेनास्थापयेदनुवासयेत् किट्टसर्षपामलकबीजैश्चोपनाहयेदुदरम् । भोजयेच्चैनं त्रिकटुकप्रगाढेन कुलित्थयूषेण पयसा वा स्वेदयेच्चाभीक्ष्णम् ॥ व्योषयुक्तकुलित्थांबु पयो वा भोजने हितम् । गोमूत्रारिष्टपानैश्च चूर्णायस्कृतिभिस्तथा ॥ सक्षीरतैलपानैश्च समये तु कफोदरम् ॥

अर्थ–कफोदरी रोगी को पीपल के कल्क से सिद्ध करा हुआ घी पिलायके फिर थूहर के दूध से दस्त करावे फिर सोंठ, मिरच, पीपल, गोमूत्र, अंड का तेल और नागरमोथा इन के काढे से अनुवासनबास्ति करे तथा लोह की कीटी, सरसों, आंवले के बीज, इन को पीसके उदर पर लेप करे तथा कुलथी के काढे में सोंठ, मिरच, पीपल डालके उस के साथ भोजन देवे तथा जल से वारंवार पेट को सेके तथा कुलथी के काढे से त्रिकुटा का चूर्ण डालके अथवा कुलथी की दाल भोजन में देवे तो हितकारी होय अथवा पीने के वास्ते गोमूत्र का काढा, आयसादि चूर्ण अथवा दूध में अंडी का तेल डालके पीवे इन सब उपायों के करने से कफोदर शांत होता है ॥

सन्निपातोदर का निदान

स्त्रियोऽन्नपानं नखरोममूत्रविडार्तवैर्युक्तमसाधुवृत्ताः । यस्मै प्रयच्छंत्यरयो गरांश्च दुष्टांबुदूषीविषसेवनाद्वा ॥ तेनाशुरक्तं कुपिताश्च दोषाः कुर्युः सुघोरं जठरं त्रिलिंगम् ॥

अर्थ–खोटे आचरणवाली स्त्री जिस पुरुष को नख केश (वार) मल मूत्र आर्त्तव (रजोदर्श का रुधिर) मिला अन्नपान देय अथवा जिस का शत्रु विष देवे, अथवा दुष्टांबु (जहर मिला मछली तिन का पत्ता आदि औटा हुआ ऐसा जल) और दूषीविष (मन्दविष) इन के सेवन करने से रुधिर और वातादिक दोष शीघ्र कुपित होकर अत्यन्त भयंकर त्रिदोषात्मक उदररोग उत्पन्न करे हैं ॥

सन्निपातोदर

सन्निपातोदरे कार्य एष एव क्रियाविधिः । हरीतक्यभयाकल्को गोमूत्रेण विभावितः ॥ पीतः सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ—सन्निपातोदर पर यही क्रिया करे कि हरड और थूहर इन का कल्क करके गोमूत्र से देवे तो संपूर्ण उदर, प्लीहा, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और गोला इन को नाश करे ॥

नागरादि तैल

नागरत्रिफलाप्रस्थं घृतं तैलं तथाढकम् । मस्तुना साधयित्वा तु पिबेत्सर्वोदरापहम् ॥ कफमारुतसंभूतं गुल्मं चैव विनाशयेत् ॥

अर्थ—सोंठ, हरड, बहेडा, आंवला ये प्रत्येक ६४ तोले लेवे काढा करके इस काढे में तेल २५६ तोले तथा छाछ का जल ये पदार्थ एकत्र कर तेल सिद्ध करे इस के सेवन करने से संपूर्ण उदर, कफ, वादी इन से उत्पन्न हुआ गुल्म इन को नाश करे ॥

दूष्योदरसंज्ञा

तच्छीतवाते भृशदुर्दिने वा विशेषतः कुप्यति दह्यते च । स चातुरो मूर्च्छति हि प्रसक्तं पांडुः कृशः शुष्यति सेवया च ॥ दूष्योदरं कीर्तितमेतदेव—॥

अर्थ—वे शीतकाल में अथवा शीतल पवन चले उस समय अथवा जिस दिन वर्षा का झड लगे उस दिन विशेष करके कोप को प्राप्त हो और दाह होय (इस का कारण ये है कि उस समय दूषीविष का कोप होय है) वह रोगी निरन्तर विष के संयोग से मूर्छित होय, देह का पीला वर्ण तथा कृश होय और परिश्रम करने से शोष होय तो इस को दूष्योदर ऐसे कहते हैं ॥

शंखिनीघृत

समूलशंखिनीसिद्धं घृतं चात्र विशोधनम् ।
दंतिद्रवंतिफलजं तैलं दुष्योदरी पिबेत् ॥

अर्थ—संनिपातोदरी को जड सहित संखाहूली के रस में सिद्ध करा हुआ घृत पीना चाहिये यह रेचक है अथवा दंती, द्रवंती इन के फल के काढे में अथवा कल्क में सिद्ध करा हुआ तेल पीना चाहिये ॥

प्लीहोदर

–प्लीहोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ विदाह्यभिष्यंदिरतस्य जंतोः प्रदुष्टमत्यर्थमसृक्कफश्च । प्लीहाभिवृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ प्लीहोत्थमेतज्जठरं वदन्ति ॥ तद्वामपार्श्वे परिवृद्धिमेति विशेषतः सीदति चातुरोऽत्र । मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिंगैरुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपांडुः ॥

अर्थ–अब प्लीहोदर के लक्षण कहता हूं तू सुन. विदाही (वंश करीरादि) अर्थात् दाह करनेवाली और अभिष्यंदी (दध्यादि) अर्थात् स्रोत (छिद्र रोकनेवाली) ऐसे अन्न निरंतर सेवन करनेवाले पुरुष के अत्यंत दुष्ट भये जे रुधिर और कफ बढकर प्लीहा (तापतिल्ली) को बढावे इस उदर को प्लीहोत्थ उदर कहते हैं, ये वाई तरफ बढता है इस अवस्था में रोगी बहुत दुःख पाता है, देह में मंदज्वर होय, मंदाग्नि होय तथा कफपित्तोदर के लक्षण इस में मिलते हों, बल क्षीण होय अत्यंत पीला वर्ण होय ॥

प्लीहोदर पर सामान्य यत्न

स्नेहस्वेदविकारा दिविधेयं प्लीहरोगिणाम् । वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥ विध्येत्प्लीहविनाशाय यकृन्नाशाय दक्षिणे । मणिबंधे समुत्पन्नं वाममंगुष्ठमीरितम् ॥ दहेच्छिरां शरेणाशु वैद्यः प्लीहप्रशांतये ॥

अर्थ–प्लीह (पिलही) रोगी को स्नेहन, स्वेदन, रेचन इत्यादि उपचार करे और वाये हाथ के कूर्पर के भीतर की नाडी को वेधन करे और यकृत् के नाश करने के वास्ते दहने हाथ के कूर्पर के भीतर की नस का वेध करे अथवा पहुचे में वाये अंगूठे की शिरा को वेध करे ॥

शरपुंखामूलकल्क

**शरपुंखमूलकल्कः पीतस्तक्रेण नाशयत्यचिरात् ।
बहुतरकालसमुत्थं प्लीहानं रूढमवगाढम् ॥**

अर्थ–सरफोका के मूल का कल्क छाछ के साथ पीने को देवे तो बहुत जल्दी बहुत दिन का बढा हुआ प्लीहा का नाश करे ॥

तक्र

पिबेत्प्लीहोदरी तक्रं पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम् ।

अर्थ–प्लीहोदररोगी को पीपल और सहत डालके छाछ पिलावे ॥

रोहितादि कल्क

रोहीतकाभयाकल्को गोमूत्रेण विभावितः ।
पीतः सर्वोदरप्लीहमेहार्शःकृमिगुल्मनुत् ॥

अर्थ–लालरोहितक और हरड इन का कल्क गोमूत्र में मिलायके पीवे तो सर्व उदर, प्लीहा, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग, गोला इन को नाश करे ॥

पिप्पल्यादि क्वाथ

शोफं प्लीहोदरं हंति पिप्पलीमरिचान्वितः ।
आम्लवेतससंयुक्तः शिग्रुक्वाथः ससैंधवः ॥

अर्थ–सहजने की छाल, पीपल, काली मिरच और अमलवेत इन का काढा करके उस में सैंधानिमक मिलायके देवे तो सूजन, प्लीहोदर इन को नाश करे ॥

शाल्मलीपुष्पपाक

सुस्विन्नं शाल्मलीपुष्पं निशापर्युषितं नरः ।
राजिकाचूर्णसंयुक्तं ह्यद्यात्प्लीहोपशांतये ॥

अर्थ–प्लीहोदर के नाश करने को सेमर के फूल को औटायके रात्रि में ओस में रख देवे प्रातःकाल इस बासे फूल में राई का चूर्ण मिलायके पीवे ॥

लवणादि तक्र

लवणं रजनी राजी प्रत्येकं पलपंचकम् । चूर्णितं निक्षिपेद्भांडे तक्रं शतपलोन्मितम् ॥ त्रिदिनं मुद्रितं रक्षेत् पश्चात्पंचपलं सदा । पीत्वा विनाशयेत्प्लीहं त्रिःसप्ताहं न संशयः ॥

अर्थ–सैंधानिमक २० तोले, हलदी २० तोले, राई २० तोले इन के चूर्ण को छाछ ४०० तोले बासन में भरके मुख बांधके तीन दिन धरा रहने दे. फिर २० तोले प्रमाण नित्य पीवे तो इक्कीस दिन में प्लीहोदर का नाश होय इस में संदेह नहीं है ॥

शुक्तिक्षारयोग

पातव्यो शुक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः ।
पयसा वा प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहनाशनाः ॥

अर्थ–समुद्र की सीपों के खार को दूध के साथ युक्ति से पीवे अथवा दूध के साथ पीपल खाय तो प्लीह को नाश करे ॥

एरंडभस्मयोग

समूलपत्रमैरंडं रुध्वा भांडे पुटे पचेत् ।
तत्कर्षं पलगोमूत्रं पीतं प्लीहविनाशनम् ॥

अर्थ–जड और पत्ते सहित अंड के दरखत को टुकडे करके किसी पात्र में धरे. फिर उस का मुख बंद करके संपुट में रखके फूंक देवे. फिर उस को कूट १ तोले को चार तोले गोमूत्र के साथ पीवे तो प्लीहोदर नष्ट होय ॥

भल्लातकादि मोदक

भल्लातकाभयाजाजीगुडैश्च कृतमोदकः ।
सप्तरात्रान्निहंत्येष प्लीहानमतिदारुणम् ॥

अर्थ–भिलाए, हरड, जीरा, गुड़ इन सब को कूट पीस लड्डू बनावे, १ लड्डू नित्य सेवन करे तो सात दिन में अतिदारुण प्लीहा नष्ट होय ॥

लशुनादि

लशुनपिप्पलीमूलमभयां चैव भक्षयेत् ।
पिबेद्गोमूत्रगंडूषं प्लीहरोगविमुक्तये ॥

अर्थ–लहसन, पीपरामूल, हरड इन को एकत्र कूटके खाय ऊपर से गोमूत्र का १ घूंट पीवे तो प्लीहरोग दूर होय ॥

सौभांजनकयोग

सौभांजनकनिर्यूहं सैंधवाग्निकणान्वितम् ।
पलाशक्षारयुक्तं वा यवक्षारं प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–सहजने के रस में सैंधानिमक, चित्रक की छाल, पीपल, पलास का खार और जवाखार इन का चूर्ण डालके पीवे ॥

रक्तस्राव और दाग

रक्तस्राऽवेर्कदुग्धं च सैंधवं लेपयेत्तथा ।
अग्निदाहं च कुर्याद्वा प्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ–रुधिर को निकालके उस पर आक का दूध और सैंधानिमक का लेप करे अथवा अग्निदाह अर्थात् दाग देवे तो प्लीहोदर नष्ट करे ॥

प्लीहोदर पर शंखनाभिचूर्ण

सुपक्कजंबीररसेन शंखनाभीरजः पीतमवश्यमेव ।
कर्षप्रमाणं शमयेदवश्यं प्लीहामयं कूर्मसमानमाशु ॥

अर्थ—उत्तम पके हुए नींबू के रस में शंख की भस्म नौ दश मासे डालके पीवे तो निश्चय कछुए के समान बढी हुई प्लीहारोग नष्ट होय ॥

कुष्ठादि चूर्ण

कुष्ठं वचा शृंगबेरं चित्रकं च यवानिकम् । पाठा चैवाजमोदा च पिप्पल्यः समचूर्णिताः ॥ ततो बिडालपदकं पिबेदुष्णेन वारिणा । प्लीहोदरमुदावर्तं सर्वमेतेन शाम्यति ॥

अर्थ—कूठ, वच, सोंठ, चित्रक की छाल, अजमायन, पाढ, अजमोद और पीपल इन का समान भाग चूर्ण एकत्र कर दश २ मासे गरम जल के साथ देवे तो प्लीहोदर, उदावर्त्त के संपूर्ण विकार दूर होवे ॥

लघुहिंग्वादि चूर्ण

हिंगु त्रिकटुकं कुष्ठं यवक्षारोथ सैंधवम् । मातुलुंगरसेनैव प्लीहशूलहरं परम् ॥ वायुः प्लीहानमुद्धूय कुपितो यस्य तिष्ठति ॥

अर्थ—भूनी हुई हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, कूठ, जवाखार, सैंधानिमक इन के चूर्ण को बिजोरे के रस से देवे तो प्लीह, शूल इन को नाश करे ॥

सिंध्वादि चूर्ण

सिंधुमगधाग्निचूर्णं शिग्रुशिलाजाजिकरसनिपीतम् ।
प्रबलमपि योगराजः प्लीहानं नाशयत्याशु ॥

अर्थ—सैंधानिमक, पीपल, चित्रक, शिलाजीत, जीरा इन के चूर्ण को सहजने के रस से खाय तो यह योगराज उग्र प्लीहा को शीघ्र नाश करे ॥

नागवटी

तिलैरंडद्रवस्तस्य क्षारो भल्लातकं कणा । एषां भागं समं कृत्वा तत्तुल्यस्तु गुडो मतः ॥ खादेदग्निबलं मत्वा पावकस्य विवृद्धये । जयेत्प्लीहानमत्युग्रं यकृद्गुल्मं तथैव च ॥

अर्थ—तिलों की डंडी, अंड की जड इन की भस्म का जल निकालके खार बनाय ले यह खार और भिलाए, पीपल, ये समान भाग तथा सब की बराबर गुड

डालके उस की गोली बनाय लेवे. इस को अग्निबल विचारके देवे तो अग्निवृद्धि करे तथा बडी हुई प्लीहा, यकृत, गोला इन को नाश करे ॥

विडंगादि चूर्ण

विडंगानि यवानी च चित्रकश्चेति तत्समम् । द्विगुणं देवदारुं च नागरं सपुनर्नवम् ॥ त्रिवृद्भागाश्च चत्वारि तत्सर्वं कल्कपेषितम् । क्षीरेणोष्णेन पातव्यं श्रेष्ठं प्लीहविनाशनम्॥अथ चैतानि चूर्णानि गवां मूत्रेण पाययेत् । उदरीभूतमप्येवं प्लीहानं संप्रणाशयेत् ॥

अर्थ–वायविडंग, अजमायन, चित्रक की छाल ये समान भाग लेवे तथा इन से दुगुनी देवदार, सोंठ, पुनर्नवा और निसोथ ४ भाग ले इन सब औषधों को कूठ पीस, कल्क करके गरम जल से देवे तो प्लीहनाश करने में श्रेष्ठ है अथवा इन के चूर्ण को गोमूत्र के साथ देवे तो उदर के समान बढे हुए प्लीहा को नाश करे ॥

यवान्यादि चूर्ण

यवानिकाचित्रकयावशूकषड्ग्रंथदंतीमगधोद्भवानाम् ।
प्लीहानमेतद्विनिहंति चूर्णमुष्णांबुना मस्तुसुरासवैर्वा ॥

अर्थ–अजमायन, चित्रक की छाल, जवाखार, वच, जमालगोटा और पीपल इन का चूर्ण गरम जल से, छाछ के जल से, मद्य अथवा आसव इन के साथ देवे तो प्लीहा को नाश करे ॥

वज्रक्षार

सौवर्चलं यवक्षारं सामुद्रं काचसैंधवम् । टंकणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यमेकत्र चूर्णयेत् ॥ अर्कदुग्धैः स्नुहीदुग्धैर्भावयेदातपे त्र्यहम्। ऊर्ध्वाधस्थैः क्रमात्तस्य तत्तुल्यैरर्कपल्लवैः ॥ भांडे संस्थाप्य मृल्लिप्ते रुध्वा गजपुटे पचेत् । स्वांगशीतं तु संचूर्ण्य चूर्णमेषां तु मेलयेत् ॥ त्र्यूषणं च विडंगं च राजिकां त्रिफलामपि । चव्यं च हिंगु संभृष्टं तक्रेणाद्याद्यथाबलम् ॥ वज्रक्षाराभिधं चूर्णमुदराणि विनाशयेत् । शोथं गुल्मं तथाष्ठीलां मंदाग्निमरुचिं तथा॥ प्लीहानं यकृदाल्याख्यमुदरं च विशेषतः ॥

अर्थ-संचरनिमक, जवाखार, समुद्रनिमक, कचियानिमक, सैंधानिमक, सुहागा, सज्जी ये सब समान भाग लेवे. सब को एकत्र कर आक का दूध और थूहर के दूध में भिगोय तीन दिन धूप में रखा रहने देवे. फिर एक मिट्टी के पात्र में ऊपर नीचे आक के पत्ते बिछायके पूर्वोक्त औषध को भर देवे और पात्र को ढक संधियों को बंद कर गजपुट में रखके फूंक देवे. शीतल होने पर निकास चूर्ण कर ले फिर इस में सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, राई, हरड, बहेडा, आंवला, चव्य, भूनी हींग इन का चूर्ण मिलाय देवे. इस को **वज्रक्षार** कहते हैं इस को अग्नि बल विचारके छाछ से देवे तो सर्व उदर, सूजन, गोला, अष्ठीला, मंदाग्नि, अरुचि, प्लीहा, यकृत इन का नाश करे ॥

क्षारादि योग

क्षारं वा बिडकृष्णाभ्यां पूतिकस्यांबुमिश्रितम् ।
यकृत्प्लीहप्रशांत्यर्थं पिबेत्प्रातर्यथाबलम् ॥

अर्थ-कंजे की राख का खार, बिडनिमक और पीपल इन का चूर्ण बलाबल विचारके प्रातःकाल देवे तो यकृत और प्लीह इन को शांत करे ॥

क्षारभावितपिप्पली

पलाशक्षारतोयेन पिप्पली परिभाविता ।
गुल्मप्लीहार्तिशमनी वह्निदीप्तिकरी मता ॥

अर्थ-पलास के क्षार के पानी में पीपल को डालके देवे तो गोला, प्लीहा इन को शांत करे तथा विशेष करके अग्नि को प्रदीप्त करे ॥

अर्कपत्रक्षार

अर्कपत्रं सलवणमंतर्धूमं विपाचयेत् ।
मस्तुना तं पिबेत्क्षारं प्लीहोदरहरं परम् ॥

अर्थ-आक के पत्ते, सैंधानिमक इन को हांडी में भर मुख बंद कर जलाय देवे. उस खार को दही के जल के साथ सेवन करे तो अत्यन्त प्लीहानाशक है ॥

अग्निमुखलवण

चित्रकं त्रिवृता दंती त्रिफलारुचकैः समैः । यावंत्येतानि चूर्णानि चूर्णमात्रं तु सैंधवम् ॥ भावयित्वा स्नुहिक्षीरैः स्नुक्कांडे प्रक्षिपेत्ततः । मृत्पंकेनानुलिप्त्वाथ प्रक्षिपेज्जातवेदसि ॥ सुदग्धं

च ततो ज्ञात्वा शनैर्वैद्यः समुद्धरेत् । तक्रेण पीतं तच्चूर्णं यकृत्प्लीहोदरापहम् ॥ एतदग्निमुखं नाम्ना लवणं वह्निवर्धनम् ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, निसोथ, दंती, हरड, बहेडा, आंवला और संचरनिमक ये सब समान भाग लेवे तथा सब चूर्ण के बराबर सैंधानिमक डालके एकत्र करे. इस थूहर के दूध में भिगोयके थूहर की पोली लकडी में भरे. ऊपर से कपडमिट्टी कर देवे. फिर अग्नि में फूंक देवे. जब राख हो जावे तब निकाल उस के भीतर से युक्ति पूर्वक राख को निकास ले, यह भस्म छाछ के साथ देवे तो यकृत, प्लीहा इन को नाश करे तथा अग्नि को बढावे, इस को अग्निमुखनाम लवण कहते हैं ॥

रोहितकघृत

रोहीतकात्पलशतं संक्षुद्य बदराढकम् । साधयित्वा जलद्रोणे चतुर्भागावशेषिते ॥ घृतप्रस्थं समावाप्य छागक्षीरं चतुर्गुणम् । तस्मिन्द्रव्याणि सर्वाणि प्रदद्यात्कार्षिकाणि च ॥ व्योषं फलत्रिकं हिंगु यवानी तुंबरुं बिडम् । विडंगं चित्रकं चैव हपुषा चविकं वचा ॥ अजाजिकृष्णलवणं दाडिमं देवदारु च । पुनर्नवा विशाला च यवक्षारं सपौष्करम् ॥ एतैर्घृतं विपक्कं तु विदद्ध्याद्दृढभाजने । पाययेच्च पलं मात्रां रसयूषपयोंबुभिः ॥ यकृत्प्लीहोदरं शूलमग्निमांद्यं च नाशयेत् । कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं कटिशूलमरोचकम् ॥ विड्बंधशूलं शमयेत्पांडुरोगं सकामलम् । छर्द्यतीसारशमनं तंद्राज्वरनिवारणम् ॥ महारोहितकं नाम्ना प्लीहघ्नं तु विशेषतः ॥

अर्थ–लाल रोहिडा ४०० तोले और बेर २५६ तोले इन दोनों को १०२४ तोले जल में चढाय काढा करे जब चतुर्थांश जल रहे तब उस में ६४ तोले घी, २५६ तोले बकरी का दूध और सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा, आंवला, हींग, अजमायन, धनियां, बिडनिमक, वायविडंग, चित्रक, हौऊबेर, चव्य, वच, जीरा, साह्मरनिमक, अनारदाना, देवदारु, पुनर्नवा, इन्द्रायन, जवाखार, पुहकरमूल ये प्रत्येक तोले २ भर लेवे. इन का कल्क करके उस काढे में मिलाय देवे और मंदाग्नि से पचावे. जब तैयार हो जावे तब उत्तम चिकने बासन में भरके रखे. इस को ४ तोले पर्यंत रस, यूष, दूध अथवा मूत्र इन के साथ देवे तो यकृत, प्लीह, उदर,

शूल, मंदाग्नि, कूख का दर्द, पसवाडे का दर्द, कमर का दर्द, अरुचि, मलबद्धता, शूल, पांडुरोग, कामला, वमन, अतिसार, तंद्रा और ज्वर इन को नाश करे यह महारोहितक नाम घृत प्लीहा और कृमि इन को नाश करे ॥

चित्रकाद्य घृत

चित्रकस्य तुलाक्काथे घृतप्रस्थं विपाचयेत् । आरनालं च द्विगुणं दधिमंडं चतुर्गुणम्॥ पंचकोलकतालीसं क्षारौ च पटुपंचकम् । यवान्यौ द्वे च जरणे मरिचं चाक्षसंमितम् ॥ एतैर्युक्त्या घृतं सिद्धं मात्रया च पिबेत्प्रगे । प्लीहशोफोदरार्शोघ्नं विशेषादग्निदीपनम् ॥

अर्थ–चित्रक की जड का काढा ४०० तोले में ६४ तोले घी १२८ तोले कांजी और दही का तोड २५५ तोले तथा पीपल, पीपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, तालीसपत्र, जवाखार, सुहागा, समुद्रनिमक, संचरनिमक, सैंधानिमक, कचियानिमक और खारीनिमक, अजमायन, अजमोद, जीरा, काला जीरा, मिरच ये प्रत्येक तोले २ डालके युक्ति से पचावे. जब घृत मात्र शेष रहे तब उतारके प्रातःकाल भक्षण करे तो प्लीहा, सूजन, उदर, बवासीर इन को नाश करे तथा विशेष करके अग्नि को दीपन करे ॥

रक्तस्राव

प्लीह्निः पृष्ठदेशे तु रक्तस्रावं तु कारयेत् ॥

अर्थ–प्लीहवालेरोगी के पीठ का रुधिर निकलवाना चाहिये ॥

शिरावेध

वामबाहौ च मोक्तव्या कूर्पराभ्यंतरे शिरा ॥

अर्थ–प्लीहनाश करने को वाये हाथ के कूर्पर भाग के भीतर की नस तोडे ॥

यकृतोदर

सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रदुष्टे ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥

अर्थ–दहने तरफ जो यकृत कहिये कलेजा है वह दुष्ट कहिये रोगयुक्त होने से प्लीहोदर के समान उदर होय उस को यकृद्दाल्युदर कहते हैं दोषों करके यकृत का भेद होय है इसी से यकृद्दालिउदर कहते हैं ॥

दोषसंबंध

उदावर्त्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ।
गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्र मलान्क्रमात् ॥

अर्थ-उदावर्त्त, शूल, अफरा इन से वायु, मोह, प्यास, ज्वर इन से पित्त और भारीपना, अरुचि, कठिनता इन से कफ ऐसे क्रमपूर्वक दोषों का संबंध जानना ॥

यकृद्दाल्युदर

लवणं राजिकाचूर्णं समं गोमूत्रमिश्रितम् ।
त्रिशाणं हंति पीतं चेद्यकृत्प्लीहोदराण्यपि ॥

अर्थ-सैंधानिमक, राई ये समान भाग लेवे सब को एकत्र कूटकर गोमूत्र के साथ १ तोले पीवे तो यकृत, प्लीहा, उदर इन को नाश करे ॥

पिप्पलीकल्क

पिप्पलीकल्कसंयुक्तं घृतं क्षीरं चतुर्गुणम् ।
पक्त्वा पिबेद्यथावह्नि यकृद्दाल्युदरापहम् ॥

अर्थ-पीपल का कल्क, घी और चौगुना दूध डालके औटावे जब घृत मात्र शेष रहे तब उतार ले. इस को अग्निबल विचारके देवे तो यकृद्दाल्युदर को नाश करे ॥

सामान्ययकृतोपचार

प्लीहोद्दिष्टाः क्रियाः सर्वा यकृतः संप्रकल्पयेत् ।
कार्यं च दक्षिणे बाहौ तत्र शोणितमोक्षणम् ॥

अर्थ-जो क्रिया प्लीहरोग पर कही है वह सब यकृतरोग पर करे तथा दहने हाथ की नस वेध करके रुधिर निकाले ॥

बद्धगुदोदर

यस्यांत्रमन्नैरुपलेपिभिर्वा बालाश्मभिर्वा पिहितं यथावत् । सं-
चीयते यस्य मलः सदोषः शनैः शनैः संकरवच्च नाड्याम् ॥
निरुध्यते तस्य गुदे पुरीषं निरेति कृच्छ्रादति चाल्पमल्पम् ।
हृन्नाभिमध्ये परिवृद्धिमेति तस्योदरं बद्धगुदं वदन्ति ॥

अर्थ-जिस पुरुष की आंत उपलेपे कहिये गाढे अन्न करके (शाकादिक) अथवा बाल तथा बारीक पत्थर के टुकडे करके बद्ध हो जाय उस पुरुष का दोषयुक्त मल धीरे धीरे आंतडी के नली में होकर जैसे बुहारी से झारा तृण धूर आदि क्रम से बढे है, उसी प्रकार बढे और वह मल बडे कष्ट से गुदद्वारा थोडा थोडा निकले, जब मल का निकलना बंद हो जाय तब मल दोषों करके गुदा से ऊपर आवे इसी से उदर बढे है अर्थात् हृदय और नाभि के मध्य अन्नपाकस्थान की वृद्धि

होय इसी से इस उदर को बद्धगुदोदर कहते हैं अथवा गुदा के ऊपर आंतों को बद्ध होने से बद्धगुद कहते हैं यह चरक का मत है ॥

हपुषादि चूर्ण

बद्धोदरी तु हपुषादीप्यकाजाजिसैंधवम् ॥

अर्थ–बद्धगुदोदरी से हाऊबेर, अजमायन, जीरा और सैंधानिमक इन का चूर्ण सेवन करे ॥

बस्तिप्रकार

स्विन्ने बद्धोदरे योज्यो बस्तिस्तीक्ष्णैस्तु भेषजैः ।
सतैललवणश्चापि निरूहश्चानुवासनम् ॥

अर्थ–बद्धगुदोदरवाले रोगी के प्रथम सेक देकर तीक्ष्ण औषध अथवा तेल, निमक इन से निरूहबस्ती और अनुवासनबस्ती करे ॥

उत्तरबस्ति

उदावर्तहरं सर्वं प्रकर्तव्यं चिकित्सितम् ।
वर्तयो विविधाश्चात्र पायौ शस्ताः प्रकीर्तिताः ॥

अर्थ–बद्धगुदोदरवाले रोगी के संपूर्ण उदावर्त्तनाशक क्रिया करे और गुदा में अनेक प्रकार की बत्ती बनायके डाले ये उपचार उत्तम कहे हैं ॥

तीक्ष्णैर्विरेचनं चात्र शस्यते तु विशेषतः ।
वातहंता विधिः सर्वो विधातव्यो विजानता ॥

अर्थ–बद्धगुदोदर पर तीक्ष्ण औषध से जुल्लाब करावे और संपूर्ण वातनाशक क्रिया करे ये उत्तम है ॥

क्षतोदर

शल्यं तथान्नोपहितं यदंत्रं भुक्तं भिनत्त्यागतमन्यथा वा ।
तस्मात्स्रुतोऽन्त्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वै गुदतस्तु भूयः ॥
नाभेरधश्चोदरमेति वृद्धिं निस्तुद्यते दाल्यति चातिमात्रम् ।
एतत्परिस्राव्युदरं प्रदिष्टम् ।

अर्थ–कांटा धूल आदि अन्न के साथ मिलकर पेट में चला जाय अर्थात् पक्काशय में विलोम (टेढा तिरछा) चला जाय तब आंतों को काटे और सीधा जाय तो नहीं काटे अथवा जंभाई अति अशन करने से अर्थात् रोकने से आंत फट जाय

सो चरक में लिखा भी है उन फटे आंतों से गलित पानी के समान स्राव पुनः२ गुदा के मार्ग होकर झरे, नाभि के नीचे का भाग बढे नोचने की सी तथा भेद (चीरने) की सी पीडा से अत्यंत व्यथित होय इस क्षतोदर को ग्रन्थांतर में परिस्रावि उदर कहते हैं और इसी को छिद्रोदर कहते हैं यह गयदास का मत है॥

वेधक्रिया तथा पाटनक्रिया

छिद्रांत्रबद्धसंज्ञेषु जठरेषु प्रयोगवित्।
लब्धानुज्ञो भिषक् कुर्यात्पाटनव्यधनक्रियाम्॥

अर्थ–क्षतोदर तथा बद्धगुद संज्ञक उदरों पर प्रयोग जाननेवाला वैद्य रोगी के संबंधियों की आज्ञा लेकर पाटन (चीरना) और बेधक्रिया करे॥

तथा जातोदकं सर्वमुदरं व्यधयेद्भिषक्।
पृष्ट्वा ज्ञातींश्च सुहृदो दारांश्च नृपतिं गुरुम्॥

अर्थ–संपूर्ण जातोदक उदररोगी को वैद्य रोगी, जाति के सुहृद, स्त्रीजन, राजा और गुरु इन की आज्ञा लेकर फिर शस्त्रकर्म करे अर्थात् चीरना फाडना करे॥

वेधस्थान

अनुज्ञाप्य भिषक् कर्म विदध्यात्संशयं ध्रुवम्।
सुवेष्टितं त्वधो नाभेर्वामतश्चतुरंगुलात्॥

अर्थ–वैद्य रोगी से प्रथम कह देवे कि वेध करनेसे कि तो तू अच्छा हो जावेग अथवा तू मर जावेगा यदि इस कहने पर रोगी आज्ञा देवे तो उदर को ढकके और लपेट के नाभी के नीचे चार अंगुल पर बाईं तरफ वेध करे॥

वेध करने का प्रकार

अंगुल्योदरमात्रं तु व्रीहिवक्रेण भेदयेत्।
नाडीमुभयतोद्वारां संयोज्यापहरेज्जलम्॥

अर्थ–ऊंगली में धानके कांटे के समान मुखवाले शस्त्र को लेकर उस से छेद करे उस छिद्र में द्विमुख नली डालके उस में से पानी को निकाले॥

जल निकालने में नियम

न चैकस्मिन्दिने सर्वदोषं त्वपहरेत्तथा। कासश्वासज्वरस्तृष्णा गात्रभंगश्च वेपथुः॥ अतिसारश्च सुतरां पूर्यते जठरं तथा। तृतीयपंचमाद्येषु दिवसेष्वल्पशः पुनः॥

अर्थ–एक ही दिन में संपूर्ण दोषों को न निकाले. एक ही दम निकालने से खांसी, श्वास, ज्वर, प्यास, गात्रभंग, कंप, अतिसार, और प्रथम के समान फिर पेट का भर जाना ये विकार होते हैं इस वास्ते तीसरे अथवा पांचवें दिन फिर वारंवार निकाले ॥

जल निकालने पर व्रण पर लेप

स्रावयेदुदकं तैललवणाभ्यां दृढव्रणम् । बध्नीयाद्विषतो दोषे रक्तं प्राक् प्रतिपूर्य च ॥ संवेष्टयेद्गाढतरं कौशेयादिकचर्मणा ॥

अर्थ–उदर का जल निकालने के पश्चात् व्रण में दोषप्रवेश होने के प्रथम ही तेल और निमक रुधिर के साथ रेसमी अथवा चमडा इन से दृढ बांधे ॥

जलोदर लक्षण

जलोदरं कीर्तयतो निबोध ॥ यः स्नेहपीतोप्यनुवासितो वा वांतो विरक्तोऽप्यथवा निरूढः । पिबेज्जलं शीतलमाशु तस्य स्रोतांसि दुष्यन्ति हि तद्वहानि ॥ स्नेहोपलिप्तेष्वथवापि तेषु जलोदरं पूर्ववदभ्युपैति । स्निग्धं महत्तत्परिवृद्धनाभि भृशोन्नतं पूर्णमिवांबुपानात् ॥ यथादृतिः क्षुभ्यति कंपते च शब्दायते चाप्युदकोदरं तत् ॥

अर्थ–अब जलोदर कैसे होय है उस को कहते हैं जिस ने स्नेह (घृत तैलादि) पान करा होय, अथवा अनुवासनबस्ति करी हो, वमन करा हो अथवा दस्त करे हो अथवा निरूह बस्ति करी होय ऐसा पुरुष शीतल जल पीवे तब उस की जल वहनेवाली नसों के मार्ग तत्काल दुष्ट होय हैं, वे उदक वहनेवाले स्रोत (मार्ग) स्नेह से उपलिप्त (चीकने) होने से पूर्ववत् (अर्थात् अन्नरस उपस्नेहन्याय करके अर्थात् इन को बाहर लायकर उदर को उत्पन्न करे) जलोदर होय है उस में चिकनापन दीखे, ऊंचा होय, नाभि के पास बहुत ऊंचा होय, चारों ओर तनासा मालूम होय, पानी की पोट भरी सी होय, जैसी पानी से भरी पखाल में जल हले है उसी प्रकार हले, गुड गुड शब्द करे, कांपे. इन को जलोदर अर्थात् जलंधर कहते हैं ॥

छाछ

त्र्यूषणक्षारलवणैर्युक्तं तु सलिलोदरी ॥

अर्थ--जलोदरवाले को सोंठ, मिरच, पीपल और निमक का चूर्ण डालके छाछ पिलावे ॥

जलोदरारिरस

पिप्पली मरिचं ताम्रं कांचनीचूर्णसंयुतम् । स्नुहिक्षीरैर्दिनं मर्द्य तुल्यं जैपालबीजकम् ॥ निष्कयुक्तं विरेकेण सत्यं हंति जलोदरम् ॥

अर्थ–पीपल, काली मिरच, तामे की भस्म, हलदी ये समान भाग लेवे इन सब के बराबर जमालगोटा लेवे. सब को थूहर के दूध में खरल कर इस में से छः २ मासे खाने को देवे तो दस्त कर जलोदर को नाश करे यह सत्य कहता हूं ॥

जलोदर पर रेचन

जलोदरेषु विश्राव्यं जातं जातं विरेचनैः ॥

अर्थ–जलंधर में भीतर जल होने से जुल्लाब देकर जल को निकाल डाले ॥

पेट फूलने पर यत्न

विरक्तजठराध्मानं स्नेहाद्यैर्बस्तिभिर्जयेत् ।
निःश्रुतो लंघितो पेयामस्नेहलवणां पिबेत् ॥

अर्थ–जल निकलने के उपरान्त पेट फूला होय तो स्नेहविधि, बस्तिकर्म इन करके उपचार करे तथा जल निकलने के पीछे लंघन करायके घृत और निमक के विना पेया देवे ॥

छः महीने तक नियम

अतःपरं तु षण्मासं क्षीरवर्ती भवेन्नरः ।
त्रीन्मासान्पयसा पेयं पिबेत्त्रींश्चापि योजयेत् ॥

अर्थ–इस प्रकार उदर में जल की कमी होने से छः महीने पर्यंत दूध पीवे, अन्न न देय, फिर तीन महीने दूध में पेया करके देवे. इसी प्रकार आगे भी तीन महीने पर्यंत उसी प्रकार उपचार करे ॥

अन्न

सकोरदूष्यश्यामाकपयसा लवणं लघु ।
नरः संवत्सरेणैव जयेदाशु जलोदरम् ॥

अर्थ–कोदो, सामखिया, दूध, निमक, हलके अन्न इस प्रकार उपचार करने से एक वर्ष में जलोदर को जीते ॥

साध्यासाध्यविचार

जन्मनैवोदरं सर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं विदुः ।
बलिनस्तदजातांबु यत्नसाध्यं नवोत्थितम् ॥

अर्थ–सर्व प्रकार के उदर जन्म से ही प्रायः अत्यन्त कष्टसाध्य होते हैं, बलवान् पुरुष के नवीन प्रगट भया हो और उस में पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसा बडे यत्न से साध्य होय, पानी नहीं प्रगट भया हो ऐसे उदर के लक्षण चरक में कहे हैं ॥

पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा ।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रांत्रं चोदरं नृणाम् ॥

अर्थ–बद्धगुदोदर १५ दिवस के पिछाडी असाध्य होय है, उसी प्रकार सब प्रकार के उदक (पानी) उत्पन्न होने से नाशकारक होय है, और छिद्रांत्रोदर ये प्रायः नाशक होय है. कदाचित् शल्य अथवा शस्त्रचिकित्सा जैसी होनी चाहिये ऐसी होय तो उदक (पानी) प्रगट भया उदररोग छिद्रांत्र अथवा बद्धगुद साध्य होय है ये ' प्रायः ' इस पद से सूचना करी ॥

असाध्यलक्षण

शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम् ।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणं च वर्जयेत् ॥

अर्थ–जिस उदररोगी के नेत्रों पर सूजन होय, लिंग टेढा हो गया हो, पेट की त्वचा गीली तथा पतली हो गयी होय, बल, रुधिर, मांस और अग्नि ये जिस के क्षीण हो गये हों ऐसा रोगी त्याज्य है ॥

यः क्लिन्नत्वक्तनूभूतनेत्रः कुटिलभ्रूकर्णः । बलशोणितमांसाग्निक्षीणकोष्ठामयी स्मृतः ॥ शोफातिसारपार्श्वार्तिभक्तद्वेषनिपीडितम् । विरेचितं चोदरिणं पूर्यमाणं विरेचयेत् ॥

अर्थ–जिस की त्वचा गीली, आंखें छोटीं, भौं और कान टेढे, बल, रक्त, मांस, अग्नि और कोठा क्षीण, अफरा, अतिसार, पार्श्वशूल और अन्नद्वेष इन से युक्त और रेचकादिकों से पेट खाली करने पर भी फिर भर जावे ऐसे लक्षणोंवाले उदररोगी को छोड देवे ॥

असाध्यलक्षण

पार्श्वभंगान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितम् ।
विरक्तं चाप्युदरिणं पूर्यमाणं विवर्जयेत् ॥

अर्थ–पार्श्वभंग (पसरियों में पीडा), अन्न में अरुचि, शोथ, अतिसार इन से पीडित और दस्त कराने से जिस का पेट फेर पानी से भर जाय, ऐसे उदररोगी को वैद्य त्याग देय ॥

यत्न

रेचनं वमनं कुर्यात्सर्वत्र पाचनानि च ॥

अर्थ–संपूर्ण उदरों में रेचन (जुल्लाब), वमन और पाचन कर्म करे ॥

रेचन

उदाराणां मलाढ्यत्वाद्बहुशः शोधनं हितम् ।
क्षीरेणैरंडजं तैलं पिबेन्मूत्रेण वासकृत् ॥

अर्थ–संपूर्ण उदर प्रायः करके मल से परिपूरित होते हैं इस वास्ते उन को शोधन करना हितकारक है उस को दूध के साथ अथवा गोमूत्र के साथ वारंवार अंड का तेल पिलावे॥

ज्योतिष्मतीतैल

ज्योतिष्मत्याः पिबेत्तैलं पयसा वा दिने दिने ॥

अर्थ–उदररोगी को मालकांगनी का तेल प्रतिदिन दूध में मिलायके पिलावे ॥

गोमूत्रयोग

मूत्राण्युदरिणां सेके पाने चैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–गोमूत्रादिक मूत्र उदररोगी को सेचन विषय में और पीने में देने चाहिये ॥

उदर पर यत्नांतर

हरीतकीसहस्रं वा गोमूत्रेण यथा जुषः। सहस्रं पिप्पलीनां वा स्नु-क्क्षीरेण सुभावितम् ॥ पिप्पलीवर्धमानं वा क्षाराशी वा शिला-जतु । तद्वद्वा गुग्गुलं क्षीरतुल्यार्द्रकरसैस्तथा ॥ चित्रकामर-दारुभ्यां कल्कं क्षीरेण वा पिबेत् ॥

अर्थ–उदररोगी को गोमूत्र के साथ हजार पीपल देवे अथवा थूहर के दूध की भावना दीनी हुई हजार पीपल देवे अथवा वर्द्धमान पीपल देवे अथवा दूध के साथ शि-लाजीत देकर दूध को ही अन्न की ऐवज देवे अथवा दूध और दूध की बराबर अदरख का रस इन में गूगल मिलायके देवे अथवा चित्रक, देवदारु इन का कल्क दूध से देवे॥

वर्द्धमानपीपल

त्रिभिरथ परिवृद्धं पंचभिः सप्तभिर्वा दशभिरथ विवृद्धं पिप्पली-

वर्धमानम् । इति पिबति युवा यस्तस्य न श्वासकासज्वरजठ-
रगुदार्शोवातरक्तक्षयाः स्युः ॥

अर्थ–तीन, पांच, सात अथवा दश इस वृद्धि से जो पीपलों को सेवन करता है, उस के श्वास, खांसी, ज्वर, उदर, बवासीर, वातरक्त, क्षय ये रोग कदाचित् नहीं हों ॥

मूत्राण्यष्टावुदरिणां पानसेके प्रयोजयेत् ।
पिप्पली वर्धमानं वा पयसैव प्रयोजयेत् ॥

अर्थ–आठ प्रकार के गोमूत्रादिक मूत्रों के पीने की, बफारो देने की उदररोग में योजना करे, अथवा वर्द्धमानपीपल दूध के साथ देवे ॥

उष्ट्रीक्षीरं पिबेज्जीर्णे निरन्नो जठरामयी ।
पक्षं मासमृतुं वापि नच पानीयमाचरेत् ॥

अर्थ–ऊंटनी का दूध पचे तो उदररोगवाला इस को पंद्रह दिन अथवा १ महीने अथवा छः महीने पर्यंत जल पीने को त्यागके सेवन करे ॥

सामुद्रशुक्तिकाक्षारो यवक्षारः ससैंधवः ।
गोदध्ना संप्रयुज्येत सर्वोदरविनाशनः ॥

अर्थ–समुद्र की सीपियों का खार, जवाखार, सैंधानिमक इन को गौ के दूध के साथ सेवन करे. यह सर्व उदररोगों का नाशक है ॥

विशाला शंखिनी दंती त्रिवृन्नीली फलत्रयम् ।
निशा विडंगकंपिल्लं मूत्रेणोदरनुत्पिबेत् ॥

अर्थ–इन्द्रायन, संखाहुली, दंती, निसोथ, नील, हरड, बहेडा, आंवला, हलदी, वायविडंग और कवीला इन सब को कूट पीस गोमूत्र के साथ उदरनाशनार्थ पीवे ॥

जलोदर पर योग

पयो वा चव्यदंत्यग्निविडंगं व्योषकल्कितम् । पेयं वा शृंगवेरांबु कषायो दारुवह्निजः ॥ चव्यविश्वसमुत्थो वा पेयो जठरशांतये ॥

अर्थ–चव्य, जमालगोटा, चित्रक, वायविडंग, सोंठ, मिरच और पीपल इन का कल्क दूध से अथवा अदरख के रस अथवा देवदारु, चित्रक की छाल इन का काढा अथवा चव्य, सोंठ इन के काढे को उदररोगशांति के अर्थ देवे ॥

देवदार्व्यादि लेप

देवदारुपलाशार्कहस्तिपिप्पलिशिग्रुकैः ।
साश्वगंधैः सगोमूत्रैः प्रलिंपेदुदरं शनैः ॥

अर्थ-देवदारु, केसूला के फूल, आक की जड, गजपीपल, सहजना, असगंध इन को गोमूत्र में पीसके पेट पर लेप करे ॥

प्रयोगांतर

पयसा शृंगबेरांबुकषायो दारुवह्निजः।
चव्यमुस्तासमुत्थो वा पेयो जठरशांतये ॥

अर्थ-जल के साथ अदरख का रस अथवा देवदारु, चित्रक इन का काढा अथवा चव्य, नागरमोथा इन का काढा उदरनिवृत्ति के वास्ते पीवे ॥

चव्यादि क्काथ

चव्यचित्रकविश्वानां साधितो देवदारुणा।
क्काथस्त्रिवृच्चूर्णयुतो गोमूत्रेणोदरं जयेत् ॥

अर्थ-१ चव्य,२चित्रक,३ सोंठ,४ देवदारु इन चार औषधों का काढा करके उस में निसोथ का चूर्ण डालके और गोमूत्र में मिलायके पीवे तो संपूर्ण उदररोग दूर होंय॥

यः सप्तरात्रं विलिपेत्सुधायाः क्षीरेण चूर्णं मृदितं कणायाः।
लिह्यात्प्रकामं मधुरं च भुंक्ते तस्योदरव्याधिरुपैति शांतिम् ॥

अर्थ-थूहर के दूध में पीपल का चूर्ण खरल कर उस का सात दिन लेप करे और खाय ऊपर से मिष्ट आहार करे तो उस का उदररोग शांत होय ॥

देवद्रुमादि

देवद्रुमं शिग्रु मसूरकं च गोमूत्रपिष्टामथ वाश्वगंधाम्।
पीत्वाशु हन्यादुदरं प्रवृद्धं कृमीन्सशोफानुदरं च दुष्यम् ॥

अर्थ-देवदारु, सहजना, मसूर और असगंध इन को गोमूत्र में पीस खाने को देवे तो घोर बढा हुआ उदररोग, कृमिरोग, सूजन और दूष्योदर इन को शीघ्र नाश करे ॥

नारायणचूर्ण

चित्रकत्रिफलाव्योषं जीरकं हपुषा वचा। यवानीपिप्पलीमूलं शतपुष्पाजगंधिका ॥ अजमोदा शठी धान्यं विडंगं स्थूलजीरकम्। हेमाह्वा पौष्करं मूलं क्षारौ लवणपंचकम् ॥ कुष्ठं चेति समांशानि विशाला स्याद् द्विभागिका। त्रिवृत्रिभागा विज्ञेया दंत्या भागत्रयं भवेत्॥चतुर्भागा सातला स्यात्सर्वाण्येकत्र चूर्णयेत्। पाचनस्नेहनाद्यैश्च स्निग्धकोष्ठस्य रोगिणः॥ दद्याच्चूर्णं

विरेकाय सर्वरोगप्रणाशनम् । हृद्रोगे पांडुरोगे च कासे श्वासे भगंदरे ॥ मंदेऽग्नौ च ज्वरे कुष्ठे ग्रहण्यां च गलग्रहे । दद्याद्युक्तानुपानेन तथाध्माने सुरादिभिः ॥ गुल्मे बदरनीरेण विट्संगे दधिमस्तुना । उष्णांबुभिरजीर्णे च वृक्षाम्लैः परिकर्तिषु ॥ उष्ट्रीदुग्धेनोदरेषु तथा तक्रेण वा गवाम् । प्रसन्नया वातरोगे दाडिमांभोभिरर्शसि ॥ द्विविधे च विषे दद्याद्घृतेन विषनाशनम् ॥

अर्थ–चित्रक की छाल, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा, हाऊबेर, वच, अजमायन, पीपरामूल, सोंफ, वनतुलसी, अजमोद, कचूर, धनिया, वायविडंग, कलौंजी, चोख, पुहकरमूल, सज्जीखार, जवाखार, पांचों निमक, (सैंधा, कचिया, काला, समुद्र, बिड) और कूठ ये सब समान भाग लेवे और इन्द्रायन की जड और औषधों से दूनी ले निसोथ तिगुनी, दंती के तीन भाग, थूहर ४ भाग ले सब को एकत्र करके चूर्ण करे. प्रथम पाचन और स्नेहादिक करके जिस का कोठा चिकना हो गया हो उस को दस्त होने के वास्ते यह चूर्ण देवे यह सब रोगों को नष्ट करे हृदयरोग, पांडुरोग, खांसी, श्वास, भगंदर, मंदाग्नि, ज्वर, कोढ, संग्रहणी, गलग्रह इन रोगों में पृथक् २ अनुपानों के साथ देवे. अफरा रोग में मद्य के साथ देवे, गुल्मरोग में बेर के काढे के साथ देवे और मल रुक रहा होवे तो इस चूर्ण को दही के जल के साथ देवे, अजीर्णरोग में गरम जल के संग देवे, गुदा में कतरने की सी पीडा होती होय तो उस को इमली के छाल के काढे में देवे, उदररोगवाले को ऊँटनी के दूध के संग देवे अथवा गौ की छाछ के साथ देवे तो इस से संपूर्ण रोग दूर होवें वादी के रोग में इस चूर्ण को प्रसन्ना जो मद्य का भेद है उस के साथ देवे, बवासीर रोग में अनार के जल के साथ देना चाहिये, यह चूर्ण घी में मिलाय खाय तो स्थावरविष (पुष्पपत्रादिक) और जंगमविष (सर्पादिक का) ये दोनों प्रकार के विष दूर होवें इस चूर्ण को **नारायणचूर्ण** कहते हैं. इस चूर्ण से संपूर्ण दुष्ट रोग दूर हों ॥

हपुषादि चूर्ण

हपुषा त्रिफला चैव त्रायमाणा च पिप्पली । हेमक्षीरी त्रिवृच्चैव सातला कटुका वचा ॥ नीलिनी सैन्धवं कृष्णलवणं चेति चूर्णयेत् । उष्णोदकेन मूत्रेण दाडिमात्रिफलारसः ॥ तथा मांसरसेनापि यथायोग्यं पिबेन्नरः । अजीर्णे प्लीह्नि गुल्मेषु शोफार्शोविषमाग्निषु ॥ हलीमकामलापांडुकुष्ठाध्मानोदरेष्वपि ॥

अर्थ–हाऊबेर, हरड, बहेडा, आवला, त्रायमाण, पीपल, चोक, निसोथ, सातला (पीली थूहर यह न मिले तो इस की प्रतिनिधि में थूहर डाले), कुटकी, वच,नील, सैंधानिमक,काला निमक इन चौदह औषधों का चूर्ण करके गरम जल अथवा गोमूत्र में अथवा अनार के रस में अथवा त्रिफला के काढे से अथवा जंगली जीवों के मांसरस के साथ सेवन करे परंतु जिस रोगी को जो अनुपान हितकारी होवे उसी के साथ देवे तो अजीर्ण और प्लीहा, गोला, सूजन, बवासीर, मंदाग्नि, हलीमकरोग, कामला, पांडुरोग, कोढ, पेट का फूलना, उदररोग ये संपूर्ण रोग दूर होवें ॥

उदररोग पर चूर्ण

क्षारद्वयानलव्योषनीलीलवणपंचकम् ।
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥

अर्थ–जवाखार, सुहागा, चित्रक की छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, गजपीपल, पांचों निमक इन के चूर्ण को सेवन करे तो सर्व गुल्मरोग तथा उदररोग इन को नाश करे ॥

पटोलादि चूर्ण

पटोलमूलं रजनी विडंगं त्रिफलात्वचः । कंपिल्लकं नीलिनी च त्रिवृता चेति चूर्णयेत् ॥ षडाद्यान्कर्षिकानंत्यांस्त्रींश्च द्वित्रिचतुर्गुणान् । कृत्वा चूर्णं ततो मुष्टिं गवां मूत्रेण वा पिबेत् ॥ विरिक्तो मृदु भुंजीत भोजनं जांगलै रसैः । मंडं पेयां च पीत्वा वा सव्योषं षडहं पयः ॥ शृतं पिबेत्ततश्चूर्णं पिबेदेवं पुनः पुनः । हंति सर्वोदराण्येतच्चूर्णं जातोदकान्यपि ॥ कामलां पांडुरोगं च श्वयथुं चापकर्षति ॥

अर्थ–कडुए पडवल की जड, हलदी, वायविडंग, हरड, बहेडा, आंवला ये सब एक २ तोले, दालचीनी २ तोले, कवीला, नीलनी और निसोथ ये क्रम से ३–४ ५–भाग लेवे इन सब का चूर्ण करके चार तोले की मात्रा गोमूत्र से देवे. जब दस्त हो चुके जंगली जीवों के मांस के रसों से नरम ऐसे भोजन करावे अथवा मंड, पेया किंवा छः दिन सोंठ, मिरच, पीपल इन के चूर्ण को डाल औटा हुआ दूध देवे फिर दूसरे दिन चूर्ण डालके उसी क्रम से दूध पिलावे. इस प्रकार वारंवार करे तो यह चूर्ण संपूर्ण उदर जातोदक होय तो उस को भी नष्ट करे तथा कामला, पांडुरोग और सूजन इन को दूर करे ॥

उदर पर बिंदु घृत

अर्कक्षीरं पले द्वे तु स्नुहिक्षीरपलानि षट् । पथ्या कंपिल्लकं

श्यामा शम्याकं गिरिकर्णिका ॥ नीलिनी त्रिवृता दंतीशंखिनी चित्रकं तथा।एषां च पलिकैर्भागैर्घृतप्रस्थं विपाचयेत्॥अथास्य मलिने कोष्ठे बिंदुमात्रं प्रदापयेत् । यावदस्य पिबेद्बिंदूंस्तावद्वेगान्विरिच्यते ॥ कुष्ठं गुल्ममुदावर्तं श्वयथुं सभगंदरम् । शमयत्युदराण्यष्टौ वृक्षमिंद्राशनिर्यथा ॥ एतद्बिंदुघृतं नाम येनाभ्यक्तो विरिच्यते ॥

अर्थ–आक का दूध ८ तोले, थूहर का दूध २४ तोले और हरड, सपेद निसोथ, पीपल, अमलतास का गूदा, सपेद सारिवा, लघुनीली, निसोथ, जमालगोटे के बीज, शंखपुष्पी और चित्रक ये सब चार २ तोले ले. इन के काढ तथा कल्क में ६४ तोले घी डालके पचावे यह बिंदुघृत मलिन कोठेवाले को १ बूंद डालने से दस्त कराता है. इस की जितनी बूंद डाले उतने ही दस्त होवें यह कुष्ठरोग, गोला, उदावर्त, सूजन, भगंदर और आठ प्रकार के उदररोग इन को शमन करे इस घृत को देह में लगाने से भी दस्त कराता है ॥

पंचमूलघृत

द्वे पंचमूल्यौ त्रिवृतानिकुंभे ससप्तलं चित्रकशिग्रुमूलम् । कुरंटबीजं त्रिफलां गुडूचीमेरंडमूलं मदयंतिकां च ॥ पाठां सभार्ङ्गीं सुषविं सुनीलां सरोहिषायासकुचेलिकां च । पृथक् समाहृत्य पलं जलस्य द्रोणे पचेत्तच्चरणांशशेषम् ॥ घृतं हि पक्वं सकषाययुक्तं निहंति पीतं सकलोदराणि ॥

अर्थ–दशमूल, निसोथ, जमालगोटा, सातला, थूहर का भेद, चित्रक, सहजने की जड, सपेद पीयावांसे के बीज, हरड, बहेडा, आंवला, गिलोय, अंड की जड, मदयंतिका, पाढ, भारंगी, कलौंजी, नीली, रोहिषतृण, धमासो, ये औषध चार २ तोले लेवे. १०२४ तोले जल में औटावे जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेवे इस में घी डालके फिर पक्क करे जब जल जरके घृत मात्र शेष रहे तब उतार ले इसे पीवे तो संपूर्ण उदरों का नाश करे ॥

नाराचघृत

त्रिफला चित्रको दंती बृहती कंटकारिका । स्नुहिसार्कविडंगानि घृतस्य कुडवं पचेत्॥तस्य मृद्वग्निसिद्धस्य कर्षार्धं पाययेन्नरम्।

शोफगुल्मोदरानाहप्लीहोदरजलोदरान् ॥ नाशयत्युल्बणानेतान् सर्पिर्नाराचसंज्ञितम् ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आंवला, चित्रक, जमालगोटा, कटेरी, थूहर, आंक, वायविडंग इन के काढे में १६ तोले घृत डालके मंदाग्नि पर सिद्ध करे. इस में से छः मांसे मनुष्य भक्षण करे तो सूजन, गोला, उदर, अफरा, प्लीहोदर, जलोदर इन को नाश करे. इस को **नाराचघृत** कहते हैं ॥

बिंदुघृत

चित्रकः शंखिनी पथ्या कंपिल्लस्त्रिवृतायुगम् । वृद्धदारुश्च शम्याको दंती दंतीफलं तथा ॥ कोशातकी देवदाली नीली च गिरिकर्णिका । सातला पिप्पलीमूलं विडंगं कटुकी तथा ॥ हेमक्षीरी च विपचेत्कल्कैरेतैः पिचून्मितैः । घृतप्रस्थं स्नुहीक्षीरे षट्पले तु पलद्वये ॥ अर्कक्षीरस्य मतिमान् तत्सिद्धं गुल्मकुष्ठनुत् । हंति शूलमुदावर्तं शोथाध्मानं भगंदरम्॥ शमयत्युदराण्यष्टौ निपीतं बिंदुसंख्यया । गोदुग्धेनोष्ट्रदुग्धेन कौलत्थेन शृतेन वा ॥ उष्णोदकेन वा पीत्वा बिंदुवेगैर्विरिच्यते । एतद्बिंदुघृतं नाम नाभिलेपाद्विरेचयेत् ॥

अर्थ–चित्रक, शंखपुष्पी, कवीला, निसोथ, काली निसोथ,विधायरा, अमलतास का गूदा, दंती, जमालगोटा, कडुई तोरई, वंदाल, नील, कोयल, सातला, (पीली थूहर), पीपरामूल, वायविडंग, कुटकी, चौक इन सब औषधों को एक २ तोले ले कल्क करे. फिर एक सेर घृत इस में डाल कल्क को मिलायके फिर थूहर का दूध २४ तोले डाले और कल्क का पाक उत्तम होने के वास्ते उस में घी से चौगुना जल डालके घृत शेष रहे तबतक पाक करे. फिर घी को छान लेय इसे **बिंदुघृत** कहते हैं इस घृत को पीवे तो गुल्म, कुष्ठ, शूल, उदावर्त्त, सूजन, अफरा, भगंदर, आठ प्रकार के उदर रोग ये सब दूर हों. इस का अनुपान गौ का दूध अथवा ऊंटनी का दूध अथवा कुलथी का काढा अथवा गरम जल इन में से किसी अनुपान के साथ रोग का तारतम्य देखके देवे. जितनी बूंद डालके पीवे उतने ही दस्त होवें तथा इस घृत का नाभि पर लेप करे तो दस्त होवे ॥

त्रिवृतादि घृत

**पयस्यष्टगुणे सर्पिः प्रस्थं स्नुकपयसः पलम् ।
त्रिवृतापलकल्केन सिद्धं जठरगुल्मनुत् ॥**

अर्थ–घी ६४ तोले, दूध ५१२ तोले, थूहर का दूध ४ तोले और निसोथ४ तोले इन के कल्क में घृत को सिद्ध करे तो उदर और गोला इन को नाश करे ॥

हिंग्वादि घृत

हिंग्वारसोनार्द्रकशिग्रुपथ्याषड्ग्रंथिदंतीदशमूलतोयैः ।
द्विक्षारपंचोषणकल्कपादैः सिद्धं घृतं तज्जठरे प्रशस्तम् ॥

अर्थ–हींग, लहसन, अदरख, सहजने की छाल, हरड का वक्कल, पीपरामूल, दंती, दशमूल इन के काढे में सुहागा, जवाखार, पंचोषण इन का चतुर्थांश कल्क एकत्र करके इस में सिद्ध करा हुआ घृत उदररोग पर उत्तम है ॥

उदर पर वंगेश्वररस

सूतभस्म वंगभस्म पलैकैकं प्रयोजयेत् । मृतं ताम्रं गंधकं च प्रत्येकं च पलं पलम्॥अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम्। रुद्ध्वा तद्भूधरे पक्त्वा पुटैकेन समुद्धरेत् ॥ एष वंगेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदरं जयेत् । घृते गुंजाद्वयो लेह्यो निष्कश्वेतपुनर्नवैः ॥

अर्थ–पारे की भस्म ४ तोले, वंगभस्म ४ तोले, तामे की भस्म ४ तोले और गंधक ४ तोले लेकर आक के दूध में खरल कर गोला बनावे. फिर भूधरयंत्र में पक्क करके निकाल ले इस को वंगेश्वररस कहते हैं यह प्लीहा, गोला, उदर इन को जीते, सपेद पुनर्नवा ४ मासे और घी इन दोनों के साथ इस रस को दो रत्ती चाटे॥

त्रैलोक्यडंबर

रसगंधकताम्राणि लोहमभ्रं विषं तथा । टंकणं सर्जिकाक्षारं दरदं च कपर्दिकम् ॥ अर्कक्षीरेण खल्वे च वज्रिक्षीरेण भावयेत् । निर्गुंडीभृंगराजेन चार्द्रद्रावेण भावयेत् ॥ गुल्मे जलोदरे रोगे शोथे पांडौ क्षये तथा । शूले विषूचिकायां च ह्यनुपानैः प्रयोजयेत् ॥ त्रैलोक्यडंबरो नाम कथितो रोगशांतये । वल्लमात्रप्रमाणेन त्रिःसप्ताहं प्रदापयेत् ॥ अत्रोदयाख्यमार्तंडो देय इत्येव ते जगुः ॥

अर्थ–पारा, गंधक, तामे की भस्म, अभ्रकभस्म, सिंगियाविष, सुहागा, सज्जी, हींगलू, कौडी की भस्म ये समान भाग लेवे इन को आक, थूहर इन का दूध, निर्गुंडी, भांगरा और अदरख इन के रस की पृथक् २ भावना देवे तौ त्रैलोक्यडंबररस बने. यह गोला, जलोदर, सूजन, पांडुरोग, क्षय, शूल, विषूचिका इन में अनुपान के

साथ देवे. दो दो रत्ती इक्कीस दिन देवे अथवा रोग होय तबतक देवे तथा इस रोग पर उदरमार्त्तंडरस भी देय ॥

रेचन

अष्टटंकणतुल्यं तु मरिचं च रसं समम् । गंधकं पिप्पली शुंठी द्वौ द्वौ भागौ विचूर्णयेत् ॥ सर्वतुल्यं क्षिपेद्दंतीबीजं सर्वमकल्मषम् । द्विगुंजं रेचनं चैतदुदराणि व्यपोहति ॥

अर्थ–भूने सुहागे का चूर्ण, काली मिरच, पारा ये समान भाग ले और गंधक, पीपल, सोंठ ये दो दो भाग ले तथा सब के बराबर जमालगोटे के बीज लेवे सब को खरल करे इस में से दो रत्ती देवे तो दस्त करायके उदररोग को दूर करे ॥

इच्छाभेदीरस

शुंठी मरिचसंयुक्ता रसगंधकटंकणा । जेपालो त्रिगुणः प्रोक्तो सर्वमेकत्र मर्दितम् ॥ इच्छाभेदी रसो ह्यस्य द्विगुंजं ससितं पिबेत् । यावच्च चूलकाः पीतास्तावद्वेगैर्विरिच्यते ॥ तक्रौदनं च दातव्यं पथ्यमत्र विजानता ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पारा, गंधक, सुहागा ये समान भाग ले और जमालगोटा तीन भाग सब को एकत्र कर खरल करे. यह इच्छाभेदीरस दो रत्ती लेकर मिश्री के साथ खाय इस के ऊपर जल के जितने चुल्लू पीवे उतने ही दस्त होंय. इस पर छाछभात पथ्य है ॥

शोफोदर

पुनर्नवानिंबपटोलशुंठीतिक्तामृतादार्व्यभयाकषायः ।
सर्वांगशोथोदरकासशूलश्वासान्वितं पांडुगदं निहंति ॥

अर्थ–पुनर्नवा, नीम की छाल, पटोलपत्र, सोंठ, चिरायता, गिलोय, दारुहलदी, हरड इन के काढे को पीवे तो सर्वांगसूजन, उदर, खांसी, शूल, श्वास, पांडुरोग इन को नाश करे ॥

हरीतक्यादि क्वाथ

हरीतकीनागरदेवदारुपुनर्नवाछिन्नरुहाकषायः ।
सगुग्गुलुर्मूत्रयुतश्च पेयः शोफोदराणां प्रवरः प्रयोगः ॥

अर्थ–हरड, सोंठ, देवदारु, पुनर्नवा, गिलोय इन के काढे में गूगल और गोमूत्र डालके पीवे. यह शोथोदर पर उत्तम प्रयोग है ॥

पुनर्नवादि योग

पुनर्नवादार्व्यभयागुडूचीं पिबेत्समूत्रां महिषाक्षयुक्ताम् ।
त्वग्दोषशोथोदरपांडुरोगस्थौल्यप्रसेकोर्ध्वकफामयेषु ॥

अर्थ–पुनर्नवा, दारुहलदी, हरड, गिलोय इन के काढे में गोमूत्र डालके तथा गूगल डालके देवे तो त्वचा के दोष, सूजन, उदर, पांडुरोग, स्थूलता, लालास्राव, ऊपर का कफरोग इन सब को नाश करे ॥

पुनर्नवादि क्वाथ

पुनर्नवामृतादारुपथ्यानागरसाधितः ।
गोमूत्रगुग्गुलुयुतः क्वाथः शोथोदरापहः ॥

अर्थ–पुनर्नवा, गिलोय, देवदारु, छोटी हरड और सोंठ इन पांच औषधों का काढा करके उस में गूगल और गोमूत्र मिलायके पीवे तो सूजन जिस उदररोग में होय वह इस क्वाथ के पीने से दूर होय ॥

शोथोदरचिकित्सा

पुनर्नवा दारुमहौषधांबु गोमूत्रसिद्धः श्वयथुं निहंति। तथा कणाशुंठिगुडोत्थचूर्णं शोफामशूलघ्नमजीर्णहारि।।गवां क्षीरं वरामिश्रं शोफोदरविनाशनम् । गोमूत्रेण समायुक्तं महिषीणां पयोथ वा ॥

अर्थ–सपेद पुनर्नवा, देवदारु, सोंठ इन औषधों को कूट गोमूत्र मिलायके काढा करे. इस के पीने से सूजन दूर होय. उसी प्रकार पीपल और सोंठ इन के चूर्ण में गुड मिलायके भक्षण करे तो सूजन, आमशूल, अजीर्ण ये दूर हों. एवं त्रिफले के चूर्ण को गौ के मूत्र के साथ पीवे तो शोफोदर दूर होय अथवा भैंस के मूत्र से त्रिफला को पीवे ॥

गोमूत्रयुक्तं महिषीपयो वा क्षीरं गवां वा त्रिफलाविमिश्रम् ।
क्षीरान्नभुक्केवलमेव गव्यं मूत्रं पिबेद्वा श्वयथूदरेषु ॥

अर्थ–शोफोदररोगवाले को गोमूत्र के साथ अथवा त्रिफला के साथ गौ का अथवा भैंस का दूध पिलावे. अथवा गोमूत्र पीकर ऊपर से दूधभात का भोजन करे ॥

माहिषमूत्रपान

सप्ताहं माहिषं मूत्रं पयसा चांबुवर्जितम् ।
पिबन्नोष्ट्रं पयो मासं श्वयथूदरनाशनम् ॥

अर्थ–शोथरोगवाला रोगी सात दिन पर्यंत दूध के साथ भैंस का मूत्र पीवे अथवा ऊंटनी का दूध एक महीने पर्यंत पीवे परंतु इस के ऊपर अन्न जल को त्याग देवे ॥

बिल्वादि क्काथ

बिल्वाग्निचव्यार्द्रकशृंगवेरक्काथेन कल्केन च सिद्धमाज्यम्।
सच्छागदुग्धं ग्रहणीगदोत्थशोफाग्निसादारुचिहृं वरिष्ठम् ॥

अर्थ–बेल की जड, चित्रक की छाल, अदरख और सोंठ इन के काढे में और कल्क में सिद्ध करे हुए घृत को बकरी के दूध से पीवे तो संग्रहणी का विकार, सूजन, मंदाग्नि, अरुचि इन के नाश करने में श्रेष्ठ है ॥

उदररोग पर पथ्य

विरेचनं लंघनमब्दसंभवाः कुलत्थमुद्गारुणशालयो यवाः। मृगद्विजा जांगलसंज्ञयान्विताः सितासुरामाक्षिकसीधुमाध्विकाः ॥ तक्रं रसोनो रुबुतैलमार्द्रकं शालिंचशाकं कुलकं कठिल्लकम् । पुनर्नवा शिग्रुफलं हरीतकी तांबूलमेलायवशूकमायसम्॥अजागवोष्ट्रीमहिषीपयो जलं लघूनि तीक्ष्णानि च दीपनानि। वस्त्रेण संवेष्टनमग्निकर्म विषप्रयोगोत्र युतो यथायथम् ॥ विशेषतः प्लीहसमुद्भवे गदे वामेग्रबाहौ धमनीव्यधः परम्। बद्धाह्वये चोदरजे क्षतोत्थिते नाभेरधः शस्त्रविधिर्यथाविधिः ॥ समीरणोत्थे घृतपानमादितः साभ्यंजनं चाप्यनुवासनं तथा। यथामलं पथ्यगणोयमाश्रितो सखा नृणां स्यादुदरामये सति ॥

अर्थ–जुल्लाब, लंघन, वर्षदिन के पुराने कुलथी, मूंग, लाल चावल, जौं, मृग, पक्षी, जंगली जीवों का मांस, मिश्री, खांड, दारु, सहत, सीधु (मद्य का भेद), माध्विक (सहत महुए की बनी दारु), छाछ, लहसन, अंडी का तेल, अदरख, शालिंच शाक, परवल, करेले, सांठ (विसखपरे का भेद), सहजने की फली, हरड, पान, इलायची, जौं, लोहभस्म (कीटी), बकरी, गौ, ऊंटनी और भैंस इन का दूध और मूत्र, हलके पदार्थ, चरपरे, दीपनकारी पदार्थ, कपडे से लपेटना, दागना, विषभक्षण ये यथायोग्य करे विशेष करके प्लीहोदर में बाईं भुजा के अग्रभाग में धमनी नाडी की फस्त खोले बद्धोदर में क्षतोदर में नाभि के नीचे यथाविधि शस्त्रकर्म (चीरा आदि देना) करे. वादी के उदररोग में प्रथम घी पिलावे, उबटना, अनुवासनबस्ती ये सब दोषों के अनुसार करे. ये उदर (जलंदर) रोगवाले को कल्याणकारी जानने ॥

दोषाः कुक्षौ हि संपूर्णे वह्निर्मंदत्वमृच्छति ।
तस्मात्सर्वप्रभोज्यानि दीपनानि लघूनि च ॥

अर्थ–कूख में दोषों के पूर्ण होने पर अग्नि मंद होता है इसलिये बहुत प्रयत्न से दीपन, हलके अन्न रोगी को खिलावे ॥

शालिषष्टिकगोधूमयवनीवारभोजनम् ।
विरेकास्थापनं श्रेष्ठं सर्वेषु जठरेषु च ॥

अर्थ–शाली चांवल, गेहूं, जौं, नीवार इन का भोजन, रेचक औषधि और निरूहबस्ति ये उपचार सब उदररोगों में उत्तम हैं ॥

उदररोग पर अपथ्य

अंबुपानं दिवा स्वापं गुर्वभिष्यंदि भोजनम् ॥ संस्नेहनं धूमपानं जलपानं शिराव्यधः । छर्दियानं दिवास्वप्नं व्यायामं पिष्टवैकृतम् ॥ औदकानूपमांसानि पत्रशाकास्तिलानपि । उष्णानि च विदाहीनि लवणान्यशनानि च ॥ महेन्द्रगिरिजातानां सरितां सलिलानि च । शमीधान्यं विरुद्धान्नं दुष्टनीरं गुरूणि च ॥ विष्टंभीनि विशेषात्तु स्वेदं विष्टंभसंभवे । वर्जयेदुदरव्याधौ वैद्यो रक्षन्निजं यशः ॥

अर्थ–जल पीना, दिन में सोना, भारी पौष्टिक अन्न खाना, व्यायाम और रास्ता चलना इन को उदररोगवाले को त्यागना चाहिये· स्नेहनकर्म, धूमपान, जलपान, फस्त खोलना, वमन, रास्ता चलना, दिन में सोना, दंड कसरत, पीसे अन्न के पदार्थ (मैदा, चून आदि), जल और जलकिनारे रहनेवाले जीवों का मांस, पत्ते के साग, तिल, गरम और दाह कर्त्ता, निमक के पदार्थ भक्षण, महेन्द्रपर्वत से निकली नदियों का जल, फली के धान्य (उडद मूग आदि) विरुद्ध पदार्थ, दुष्ट जल, भारी पदार्थ, विष्टंभकारी पदार्थ, और विष्टंभ से हुए उदररोग में पसीने निकालना ये सब कर्म उदररोग में अपने यश की रक्षा करनेवाले वैद्य को त्याग देना चाहिये ॥

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे उदररोगस्य निदानचिकित्सा समाप्ता ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना, कल्याण–मुंबई.